पंजाब, प्रान्त

सम्पादक

रामनारायण मिश्र, बी० ए०

प्रकाशक

"भूगोल"-कार्यालय, प्रयाग

भूमिका

पंजाब-प्रान्त का प्रकाशन पाकिस्तान बनने के पूर्व ही प्रारम्भ हो गया था। अतः इसमें पूर्वी पश्चिमी पंजाब दोनों शामिल हैं। संक्षिप्त वर्णन करने पर भी इस ग्रन्थ का आकार बहुत बढ़ गया आरम्भ में समूचे पंजाब प्रान्त का दिग्दर्शन है। फिर अलग अलग जिलों का परिचय है। आशा भगोल कार्यालय का यह प्रयास हिन्दी भाषा भाषी जनता के लिये उपयोगी सिद्ध होगा। यदि हुई तो अगले संस्करण में पूर्वी और पश्चिमी पंजाब का वर्णन पृथक कर दिया जायगा।

—सम्पादक

विषय-सूची

—(❀)—

२३] आषाढ़ सम्वत् २००३, जुलाई १९४६ [सं० १-३

पंजाब प्रान्त

पंजाब-प्रान्त, पंचनद या पांच नदियों का देश
है। यह प्रान्त वास्तव में भारतवर्ष का मुकुट है।
जब इस प्रान्त ने अपना सिर ऊंचा रक्खा तब

पंजाब के प्राकृतिक विभाग

समस्त भारतवर्ष की रक्षा हुई। जब पंजाब झुका
भारतवर्ष को भी झुकना पड़ा। वैदिक सभ्यता
का विकास पंजाब की नदियों के किनारे पर ही
हुआ। पंजाब में शायद ही कोई ऐसी महत्वपूर्ण
ऐतिहासिक घटना हुई हो जिसका प्रभाव भारतवर्ष
पर न पड़ा हो वास्तव में पंजाब का इतिहास एक
बड़े अंश में भारतवर्ष का इतिहास है।

पंजाब प्रान्त २७°३९ और ३५°२ अक्षांशों के
बीच में स्थिति है। इस प्रकार वह समूचा प्रान्त
उष्ण कटिबन्ध के बाहर शीतोष्ण कटिबन्ध में
स्थित है। यह ६९°२५ और ७८°२५ पूर्वी देशान्तरों

के बीच में घिरा हुआ है। उत्तर-पूर्व से दक्षिण पश्चिम तक पंजाब की अधिक से अधिक लम्बाई ५३० मील है। उत्तर-पश्चिम से दक्षिण-पूर्व की ओर इसकी चौड़ाई ५१० मील है। पंजाब का क्षेत्र-फल १,३६,९६४ वर्ग मील और जन संख्या लगभग ढाई करोड़ है। जो अक्षांश रेखा पंजाब की उत्तरी सीमा बनाती है वही अक्षांश मध्य चीन, मध्य जापान को पार करती हुई संयुक्त राष्ट्र अमरीका के

पञ्जाब की प्रधान नहरें

दो विषम भाग करती है। पश्चिम की ओर यही अक्षांश रेखा अफ़गानिस्तान, ईरान, सिरिया, टर्की, दक्षिणी यूनान (ग्रीस) होती हुई सिसली द्वीप को काटती है।

पंजाब प्रान्त में प्रायः $\frac{1}{4}$ भाग देशी राज्यों से घिरा हुआ है। क्षेत्र फल की दृष्टि से भारतवर्ष में पंजाब का स्थान आठवाँ है। जन-संख्या में इसका स्थान पांचवाँ है। जन-संख्या की सघनता में इसका स्थान छठा है। पंजाब का क्षेत्र फल स्काट चौगुना, इंगलैंड से ढाई गुना, डेनमार्क तथा लैंड से दस गुना, वेल्जियम से वारह गुना, तथा फ्रांस के प्रायः बरावर और जापान या का प्रायः $\frac{3}{5}$ है।

पंजाब की जन संख्या संयुक्त प्रान्त की अफ़गानिस्तान से चौगुनी ईरान (फारस) से गुनी, आस्ट्रेलिया से पचगुनी, मिस्र से दु टर्की से दुगुनी, इंगलैंड की दो तिहाई की $\frac{4}{5}$, नार्वे से आठगुनी और पोलैंड के बरावर है।

पंजाब के उत्तर में काश्मीर राज्य है। और तिब्बत, यमुना नदी और संयुक्त प्रा इसके दक्षिण में सिन्ध सतलज नदी और है। पश्चिम की ओर उत्तरी-पश्चिमी सी और बलोचिस्तान है।

पंजाब के नाम से ही प्रगट होता है कि यह पांच नदियों का देश है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि अधिकांश पंजाब सिन्ध की प्रधान पांच सहायक नदियों का द्वाबा है। पर वर्तमान पंजाब में इनके अतिरिक्त और भी प्रदेश शामिल हैं:—

(१) सिन्ध सागर द्वाब—
यह सिन्ध नदी और झेलम नदी के बीच का प्रदेश है।

(२) झच द्वाब झेलम और चनाब के बीच का द्वाब है।

(३) रचना द्वाब रावी और चनाब नदियों के बीच का द्वाब है।

(४) बारी द्वाब यह व्यास और रावी नदियों के बीच का द्वाब है।

(५) जलन्धर द्वाब व्यास और सतलज के बीच का द्वाब है। यह सब से छोटा है।

(६) सतलज पार सतलज नदी के पूर्व में यमुना तक का सारा प्रदेश पहले संयुक्त प्रान्त में शामिल था। सरस्वती इस प्रदेश की वैदिक कालीन प्रधान नदी थी। १८५७ के गदर के बाद यह सब भाग पंजाब में शामिल कर दिया गया। सरस्वती और इसकी सहायक घग्घर के बीच का प्रदेश ब्रह्मावर्त कहलाता था। सतलज और यमुना के बीच का ऊंचा प्रदेश प्रायः सरहिन्द भी कहलाता है।

पंजाब का प्रायः ⅔ भाग कछारी मैदान है जिसे सिन्ध और उसकी सहायक नदियों ने अपनी बाढ़ के साथ बारीक उपजाऊ मिट्टी लाकर बनाया है। यह मैदान बड़ा उपजाऊ है।

सिन्ध प्रांत की सीमा के पास दक्षिणी-पश्चिमी पंजाब और उत्तरी सिन्ध की भूरचना में कोई अन्तर नहीं है। यहां पञ्जाब का कछारी मैदान पूर्व की ओर [illegible] हैं। पश्चिम उत्तर की ओर सिन्ध और झेलम नदियों के बीच में नमक की पर्वत श्रेणी (साल्ट रेंज) है। काला बाग के पास यह श्रेणी सिन्ध नदी को पार कर के दूसरी ओर प्रान्त के बाहर चली गई है। यह प्रदेश सूखे नालों द्वारा बहुत ही कटा फटा है। इसके बीच बीच में पहाड़ियां हैं। रावल पिंडी के पठार को प्रायः पोतवार कहते हैं। यह वास्तव में सिन्ध की एक छोटी सहायक सोआन नदी का प्रवाह प्रदेश है। यह सिन्ध तट से झेलम तक चला गया है। यह प्रदेश सिन्ध-गङ्गा मैदान के तल से १००० फुट ऊंचा है इसका क्षेत्रफल ७००० वर्ग मील है। यहां सिवालिक की मुलायम तहों को नालों ने गहरा काट दिया है। इस पठारी मैदान के उत्तर में मरगला की पर्वत श्रेणियां हैं। जो पूर्व से पश्चिम की ओर चली गई है। अटक के दक्षिण में यह पहाड़ियां उत्तरी पंजाब में फैली हुई हैं। यह इतनी मुड़ी हुई है कि इनकी दिशा ठीक ठीक निश्चित नहीं की जा सकती है।

साल्ट रेंज या नमक की पर्वत श्रेणी भारतवर्ष की भूगर्भ रचना में अनोखा स्थान रखती है। यह प्रायद्वीप प्राचीन भाग का भग्नावशेष है। यह हिमालय की नई और अर्वली की प्राचीन शिलाओं के बीच में एक प्रकार की सीमा बनाती है। इस नमकीन पहाड़ी की तलहटी में नमकीन मिट्टी है। नई चट्टानें ऊपरी भाग में हैं। चूने का पत्थर सब कहीं मिलता है। लाल पत्थर अधिकतर भागों में मिलता है। कहीं कहीं काला पत्थर मिलता है। पश्चिमी भाग में सागर जन्य प्रस्तरी भूत प्राचीन शिलायें मिलती हैं। पूर्वी श्रेणी के कुछ भागों में अप्रस्तरी भूत शिलायें मिलती हैं। कुछ भागों में खेवड़ा के पास ५५० फुट ऊंची और मोटी शुद्ध नमक की शिलायें हैं। अशुद्ध नमक की शिलायें १००० फुट तक मोटी हैं। इसमें २७५ फुट शुद्ध नमक है। यहां का काटा हुआ नमक एकदम सीधे मंडियों को

के बीच में घिरा हुआ है। उत्तर-पूर्व से दक्षिण पश्चिम तक पंजाब की अधिक से अधिक लम्बाई ५३० मील है। उत्तर-पश्चिम से दक्षिण-पूर्व की ओर इसकी चौड़ाई ५१० मील है। पंजाब का क्षेत्र-फल १,३६,९६४ वर्ग मील और जन संख्या लगभग ढाई करोड़ है। जो अक्षांश रेखा पंजाब की उत्तरी सीमा बनाती है वही अक्षांश मध्य चीन, मध्य जापान को पार करती हुई संयुक्त राष्ट्र अमरीका के

स्थान छठा है। पंजाब का क्षेत्र फल स्काट चौगुना, इंगलैंड से ढाई गुना, डेनमार्क तथा लैंड से दस गुना, बेल्जियम से बारह गुना तथा फ्रांस के प्रायः बराबर और जापान या का प्रायः $\frac{3}{5}$ है।

पंजाब की जन संख्या संयुक्त प्रान्त की अफ़गानिस्तान से चौगुनी ईरान (फारस) गुनी, आस्ट्रेलिया से पचगुनी, मिस्र से
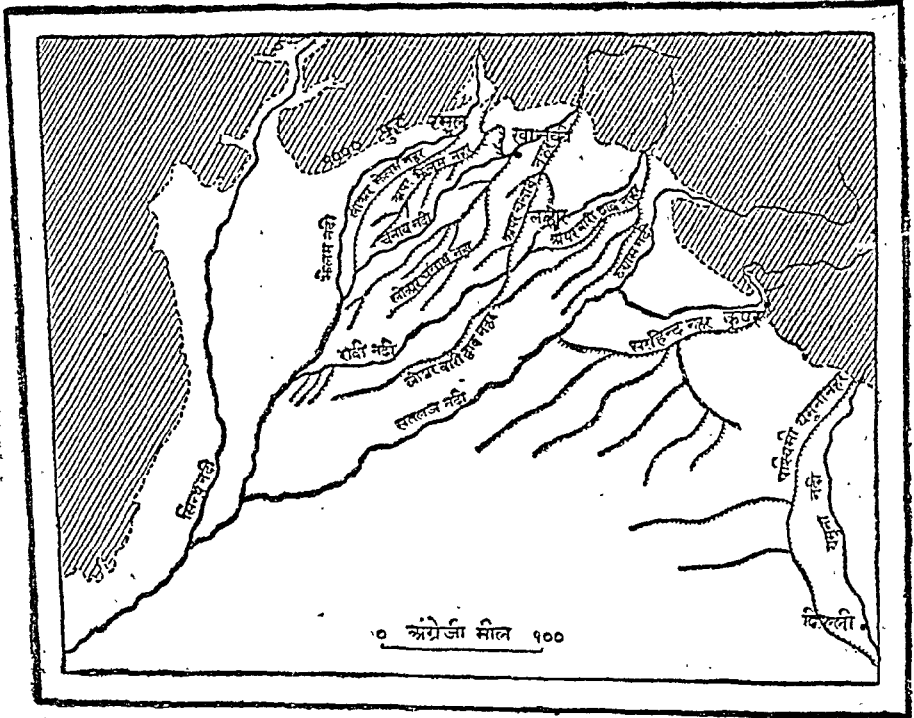
पञ्जाब की प्रधान नहरें

दो विषम भाग करती है। पश्चिम की ओर यही अक्षांश रेखा अफ़गानिस्तान, ईरान, सिरिया, टर्की, दक्षिणी यूनान (ग्रीस) होती हुई सिसली द्वीप को काटती है।

पंजाब प्रान्त में प्रायः $\frac{1}{4}$ भाग देशी राज्यों से घिरा हुआ है। क्षेत्र फल की दृष्टि से भारतवर्ष में पंजाब का स्थान आठवाँ है। जन-संख्या में इसका स्थान पांचवाँ है। जन-संख्या की सघनता में इसका

टर्की से दुगुनी, इंगलैंड की दो तिहाई, की $\frac{4}{5}$, नार्वे से आठगुनी और पोलैंड के बराबर है।

पंजाब के उत्तर में काश्मीर राज्य है। और तिब्बत, यमुना नदी और संयुक्त इसके दक्षिण में सिन्ध सतलज नदी और है। पश्चिम की ओर उत्तरी-पश्चिमी और बलोचिस्तान है।

———

पंजाब के नाम से ही प्रगट होता है कि यह पांच नदियों का देश है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि अधिकांश पंजाब सिन्ध की प्रधान पांच सहायक नदियों का द्वाबा है। पर वर्तमान पंजाब में इनके अतिरिक्त और भी प्रदेश शामिल हैं:—

(१) सिन्ध सागर द्वाब—
यह सिन्ध नदी और झेलम नदी के बीच का प्रदेश है।

(२) झच द्वाब झेलम और चनाब के बीच का द्वाब है।

(३) रचना द्वाब रावी और चनाब नदियों के बीच का द्वाब है।

(४) बारी द्वाब यह व्यास और रावी नदियों के बीच का द्वाब है।

(५) जलन्धर द्वाब व्यास और सतलज के बीच का द्वाब है। यह सब से छोटा है।

(६) सतलज पार सतलज नदी के पूर्व में यमुना तक का सारा प्रदेश पहले संयुक्त प्रान्त में शामिल था। सरस्वती इस प्रदेश की वैदिक कालीन प्रधान नदी थी। १८५७ के गदर के बाद यह सब भाग पंजाब में शामिल कर दिया गया। सरस्वती और इसकी सहायक घग्घर के बीच का प्रदेश ब्रह्मावर्त कहलाता था। सतलज और यमुना के बीच का ऊंचा प्रदेश प्रायः सरहिन्द भी कहलाता है।

पंजाब का प्रायः ⅘ भाग कछारी मैदान है जिसे सिन्ध और उसकी सहायक नदियों ने अपनी बाढ़ के साथ बारीक उपजाऊ मिट्टी लाकर बनाया है। यह मैदान बड़ा उपजाऊ है।

सिन्ध प्रांत की सीमा के पास दक्षिणी-पश्चिमी पंजाब और उत्तरी सिन्ध की भूरचना में कोई अन्तर नहीं है। यहां पञ्जाब का कछारी मैदान पूर्व की ओर राजपूताने के रेगिस्तान से घिरा हुआ है। पश्चिम की ओर सीमा से दूर सुलेमान पर्वत श्रेणी है। उत्तर की ओर सिन्ध और झेलम नदियों के बीच में नमक की पर्वत श्रेणी (साल्ट रेंज) है। काला बाग़ के पास यह श्रेणी सिन्ध नदी को पार कर के दूसरी ओर प्रान्त के बाहर चली गई है। यह प्रदेश सूखे नालों द्वारा बहुत ही कटा फटा है। इसके बीच बीच में पहाड़ियां हैं। रावल पिंडी के पठार को प्रायः पोतवार कहते हैं। यह वास्तव में सिन्ध की एक छोटी सहायक सोआन नदी का प्रवाह प्रदेश है। यह सिन्ध तट से झेलम तक चला गया है। यह प्रदेश सिन्ध-गङ्गा मैदान के तल से १००० फुट ऊंचा है इसका क्षेत्रफल ७००० वर्ग मील है। यहां सिवालिक की मुलायम तहों को नालों ने गहरा काट दिया है। इस पठारी मैदान के उत्तर में मरगला की पर्वत श्रेणियां हैं। जो पूर्व से पश्चिम की ओर चली गई है। अटक के दक्षिण में यह पहाड़ियां उत्तरी पंजाब में फैली हुई हैं। यह इतनी मुड़ी हुई है कि इनकी दिशा ठीक ठीक निश्चित नहीं की जा सकती है।

साल्ट रेंज या नमक की पर्वत श्रेणी भारतवर्ष की भूगर्भ रचना में अनोखा स्थान रखती है। यह प्रायद्वीप प्राचीन भाग का भग्नावशेष है। यह हिमालय की नई और अर्वली की प्राचीन शिलाओं के बीच में एक प्रकार की सीमा बनाती है। इस नमकीन पहाड़ी की तलहटी में नमकीन मिट्टी है। नई चट्टानें ऊपरी भाग में हैं। चूने का पत्थर सब कहीं मिलता है। लाल पत्थर अधिकतर भागों में मिलता है। कहीं कहीं काला पत्थर मिलता है। पश्चिमी भाग में सागर जन्य प्रस्तरी भूत प्राचीन शिलायें मिलती हैं। पूर्वी श्रेणी के कुछ भागों में अप्रस्तरी भूत शिलायें मिलती हैं। कुछ भागों में खेउड़ा के पास ५५० फुट ऊंची और मोटी शुद्ध नमक की शिलायें हैं। अशुद्ध नमक की शिलायें १००० फुट तक मोटी है। इसमें २७५ फुट शुद्ध नमक है। यहां का काटा हुआ नमक एकदम सीधे मंडियों को भेज दिया जाता है। इसको अलग से साफ करने

की आवश्यकता नहीं पड़ती है। नमकीन लाल चिकनी मिट्टी में भी नमक का मात्रा काफी है। नमक के अतिरिक्त इस में जिप्सम, मेंग्नेशिया चूना आदि कई पदार्थ हैं। कुछ स्थानों में ज्वालामुखी के चिन्ह मिलते हैं। कहीं कहीं लाल और गुलाबी बलुआ पत्थर है। इसकी तहें कुछ इंच से लेकर ६ फुट तक मोटी हैं। नमक की तहों के ऊपर प्रायः सब कहीं बलुआ पत्थर की तहें हैं। पूर्वी भाग में कुछ काली धुंधली तहें हैं। पूर्वी साल्ट रेंज में कई रंग का विचित्र बलुआ पत्थर पाया जाता है। बलुआ पत्थर के ऊपरी भाग में प्रस्तरी भूत चट्टानें हैं। जिन जीवों और पेड़ों की प्रस्तरी भूत चट्टानें बन गई हैं वे कई युगों की हैं।
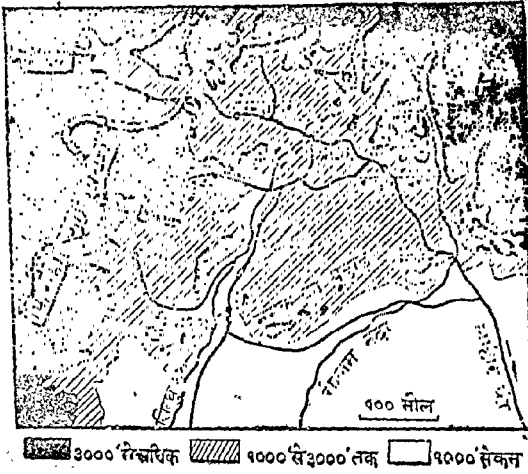
पंजाब का पहाड़ी भाग

अर्वली पर्वत का उत्तरी सिरा गुरगांव जिले को पार करता हुआ दिल्ली में पहुँचता है और यमुना के किनारे समाप्त हो जाता है। अर्वली की पहाड़ियां बहुत ही छोटी हैं। पर वे अत्यन्त पुरानी हैं और लाखों वर्ष तक लगातार घिसने से ही वे इतनी छोटी हो गई हैं। वे छोटी छोटी कांटेदार झाड़ियों से ढकी हुई हैं।

पंजाब प्रान्त में हिमालय की तीन प्रधान श्रेणियां हैं। यह उत्तरी पश्चिम की ओर चली गई हैं। यह सतलज के उद्गम से सिन्ध नदी के उद्गम तक फैली हुई है। पश्चिमी हिमालय जांस्कर श्रेणी या बारा लाचा श्रेणी के नाम से प्रसिद्ध है। मध्यवर्ती हिमालय श्रेणी पीर पंजाल कहलाती है। तीसरी श्रेणी बाहरी हिमालय की है। यह सब से कम ऊंची है। इन तीन प्रधान श्रेणियों से अनेक उप श्रेणियां इधर उधर फैली हुई हैं। इनके बीच बीच में घाटियों का जाल सा बिछा है। पूर्वी सिरे पर लाहोल से होशियार पुर के सिवालिक तक पर्वतीय प्रदेश की चौड़ाई ९० मील है। पश्चिमी सिरे पर काश्मीर के आर पार इसकी चौड़ाई १५० मील है।

पश्चिमी हिमालय या जांस्कर श्रेणी ऊपरी सिन्ध घाटी को इसकी पांच सहायक नदियों से प्रथक करती है। सिन्ध नदी का मार्ग इस पर्वत श्रेणी के उत्तर में है। यह सतलज के उद्गम से उत्तर की ओर चली गई है। कनावार, बशहर, स्पिति लाहोल और (चम्बा) पागी होती हुई यह काश्मीर को चली गई है। सिन्ध नदी नंगा पर्वत के पास इसे काटती है। इसके आगे यह पामीर और हिन्दुकुश से मिल गई है यहीं कुआंर और गिलगिट नदियों का निकास है। यह श्रेणी तिब्बत के भोटिया लोगों को भारतवर्ष के आर्य लोगों से प्रथक करती रही है इसके उत्तर में मध्यएशिया का अत्यन्त ठंडा खुश्क और वृक्षरहित स्टेपी प्रदेश है। इसके दक्षिण में हरा भरा भारतवर्ष है। इसकी औसत ऊंचाई १९,००० फुट है जो अमरीका, योरुप और अफ्रीका के पर्वतों की औसत ऊंचाई से कहीं अधिक है। इसकी चोटियों की औसत ऊंचाई २०,७७० फुट है। हिम रेखा (जहां सदा बरफ रहती है) की ऊंचाई दक्षिणी ढालों पर १९००० फुट और उत्तरी ढालों पर १८५०० फुट है।

मध्य हिमालय या पीर पंजाल पर्वत श्रेणी उत्तर को ओर लाहोल और काश्मीर की घाटियों को दक्षिण की ओर स्थित कुलू, प्लाच और चम्पा की घाटियों से अलग करती है। यह श्रेणी उत्तर-पश्चिम की ओर चली गई है। हजारा जिले (सीमा प्रान्त) की महावन चोटी के पास इसका अन्त हो जाता है।

सतलज, चनाब और झेलम नदियों ने इसे तीन खंडों में बांट दिया है। इस श्रेणी की औसत ऊंचाई १७०,००० फुट है। इसके शिखर १९,००० फुट और दर्रे १५,५२० फुट ऊंचे हैं। उत्तरी ढालों पर हिम रेखा की ऊंचाई १६,००० फुट और दक्षिणी ढालों पर १७,००० फुट है।

बाहरी हिमालय संकेत और मंडी होता हुआ कांगड़ा और चम्बा के बीच में ३०० मील तक फैला हुआ है। हजारा जिले में गन्दगढ़ की चोटी के पास इसका अन्त हो जाता है। यह बाहरी श्रेणी मंडी में व्यास नदी के मोड़ के पास आरम्भ होती है। रावी, चनाब, पूंच, और झेलम नदियों ने इसी पांच खंडों में बांट दिया है। पूर्वी सिरे पर व्यास और रावी नदियों के बीच में धवलाधर की सपाट श्रेणी है। पहाड़ी कुलू और मंडी तथा कांगड़ा और चम्बा के बीच में प्राकृतिक सीमा बनाती है। यही इस श्रेणी का सबसे अधिक ऊंचा भाग है। इसकी औसत ऊँचाई १५,००० फुट है। इसकी लम्बाई ८० मील है। धर्मशाला और डलहौजी के पहाड़ी सैर करने के स्थान यहीं स्थित हैं। दूसरा खंड रावी नदियों के बीच में ५५ मील लम्बा है। यह चम्बा और बद्रवार (काश्मीर) को घेर लेता है। इसकी औसत ऊंचाई १२,००० फुट है।

इस श्रेणी का मध्यवर्ती भाग रत्न पंजाल कहलाता है। यह चनाब नदी से पूंच नदी के दक्षिण मोड़ तक ८० मील की लम्बाई में फैला हुआ है। इसकी ऊंचाई ७७०० फुट से ११.००० फुट तक की है। चौथा खंड पूंच नदी से झेलम के किनारे धनगाली तक २५ मील लम्बा है। धनगाली में ही प्राचीन धक्कड़ राजधानी थी। पांचवाँ पश्चिमी खंड झेलम नदी से सिन्ध नदी तक ७० मील लम्बा है। इसकी ऊंचाई १७,००० फुट से अधिक है। इस बाहरी हिमालय श्रेणी में शीतकाल में जहां तहां बरफ हो जाती है। पर ग्रीष्म काल में बरफ टिकने नहीं पाती है। इस लिये इस कम ऊँची बाहरी श्रेणी पर स्थायी हिम रेखा का अभाव है।

शिमला की पहाड़ियां—यह पहाड़ियां सतलज के इस पार सतलज और यमुना के ऊपरी मार्गों के बीच में स्थित है। यह गङ्गा और सिन्ध के बीच में जल विभाजक बनाती हैं। इन्हीं पर शिमला का प्रसिद्ध पहाड़ी स्थान बस गया है। जहां पंजाब प्रान्त और भारत सरकार की ग्रीष्म कालीन राजधानी बन जाती है।

सिवालिक की छोटी छोटी पहाड़ियां प्रधान हिमालय की तलहटी में गंगातट से व्यास नदी के किनारे तक फैली हुई है। यह पहाड़ियाँ बहुत ही कम ऊँची हैं। सिवालिक की पहाड़ियां और हिमालय श्रेणी के बीच में दून की घाटियां हैं। इस ओर की पहाड़ियां जङ्गलों से ढकी हुई हैं।

मैदान—हिमालय के दक्षिण में मैदान है। पंजाब का ⅚ भाग मैदान है। साल्टरेंज और अर्वली के छोटे भाग को छोड़कर हिमालय के दक्षिण की ओर पंजाब में सब कहीं मैदान हैं। यमुना से लेकर सिन्ध नदी तक यह मैदान प्रायः समतल दिखाई देता है। जहां नदियां बहती हैं वहीं यह कटा फटा है। इस का ढाल उत्तर-पूर्व से दक्षिण-पश्चिम की ओर है। सब से नीचा भाग सेह तक हिसार और सिरसा के समीप है। इस विशाल मैदान में सब कहीं उपजाऊ मिट्टी है। पत्थर का नाम नहीं है। कुछ भागों में कंकड़ अवश्य मिलते हैं। नदियों के पड़ोस में बालू है। एक दम चिकनी मिट्टी का प्रायः अभाव है। मैदान के अधिकतर भागों में बालू मिली हुई चिकनी मिट्टी पाई जाती है। केवल कुछ गढ़ों में लगातार एकत्रित होते होते चिकनी मिट्टी के कण इतनी अधिक मात्रा में भर गये हैं कि वे सूखने पर कड़े डलों के रूप में दिखाई देते हैं। पर्याप्त पानी मिलने पर उनमें धान की खेती भी हो सकती है। पर ऐसे आखात या गढ़े पंजाब में बहुत ही कम हैं। दक्षिण की ओर झेलम-चनाब और सिन्ध के बीच में विशाल थाल या थार रेगिस्तान है। राजपूताना की सीमा के पास यह और भी विकराल रूप धारण कर लेता है यहां उड़ती हुई बालू के रेतीले टीले हैं। इसका आकार हवा की दिशा के साथ बदलता रहता है। इस ओर पानी की बड़ी कमी है। कुओं में अधिक गहराई पर पानी मिलता है। अक्सर पानी खारा मिलता है। मीठा पानी भाप बनकर उड़ता रहता है। इसलिये नमक की मात्रा बढ़ रही है। कुछ भागों में मीलों तक सफेद रेह बिछ गया है

जहां किसी प्रकार की वनस्पति नहीं हो सकती है। लेकिन जहां रेत और बालू नहीं है वहाँ की भूमि बड़ी उपजाऊ है। वर्षा होने पर अथवा सिंचाई हो जाने पर इसमें बढ़िया फसलें पैदा होती हैं। पर पश्चिमी भाग में जहां वर्षा या सिंचाई नहीं होती है वहां सूखे झाड़, ऊटों और ढोरों के चराने के काम आते हैं। नदियों और पहाड़ियों के समीप कुओं में १० फुट से लेकर ३० फुट तक पानी मिल जाता है। पर इनसे दूर पानी डेढ दो सौ फुट तक की गहराई पर मिलता है। जो पानी मिलता है वह इतना खारा होता है कि वह वनस्पति और पशु दोनों के लिये हानिकारक होता है। मैदान का पूर्वी भाग अधिक उपजाऊ है यहाँ साधारण वर्षा हो जाती है सिंचाई के भी साधन उपलब्ध हैं। इस लिये यहाँ खेती अधिक होती है।

पूर्वी मैदान चार भागों में बाँटा जा सकता है। (१) हिमालय के समीप का मैदान पहाड़ के समानान्तर चला गया है। यह मैदानी पेटी २० मील से ३० मील तक चौड़ी है। इस में होकर ऊपरी सतलज, व्यास, रावी नदियां, वारीद्वाब नहर और कई छोटी छोटी धारायें बहती हैं। यह नदियाँ यहाँ अपनी बाढ़ के साथ बारीक उपजाऊ मिट्टी ला ला कर बिछाती रहती हैं। कुओं से खेतों को सींचना सब कहीं सुगम है कुछ वर्षा भी हो जाती है फिर भी यहाँ की भूमि अधिक उपजाऊ नहीं है। इस लिये इस भाग की जनसंख्या अधिक घनी नहीं है।

(२) दूसरा भाग पूर्व की ओर यमुना के समानान्तर चला गया है। इसकी चौड़ाई ३५ से ४० मील है। यमुना के पड़ोस की जमीन नीची है। कुओं से सिंचाई सुगम है। कुछ वर्षा हो जाती है। सरस्वती और उसकी सहायक नदियाँ अपने पड़ोस में बाढ़ लाती हैं। पश्चिमी यमुना नहर और आगरा नहर से काफी बड़े भाग में सिंचाई की सुविधा है। इसलिये इस भाग में अकाल का डर नहीं रहता है।

(३) पूर्वी मैदान का अधिकतर दक्षिणी भाग राजपूताना की मरुस्थली सीमा के पास है। इस भाग की भूमि अच्छी नहीं है। वर्षा बहुत ही कम होती है। इसका भी कोई निश्चय नहीं रहता है कि इस भाग की चौड़ाई चालीस या पचास मील है। हिसार जिले के कुछ भाग में पश्चिमी यमुना नहर और सिरसा में सतलज से कुछ सिंचाई हो जाती है। सरहिन्द नहर यहाँ की प्रधान नहर है फिर भी इस प्रदेश के बहुत बड़े भाग को अकाल का डर लगा रहता है।

पूर्वी मैदान के मध्यवर्ती भाग में सिक्ख रियासतें हैं। उत्तर-पूर्व और पश्चिम की ओर भूमि अच्छी है वर्षा भी काफी हो जाती है। मध्य और दक्षिण की ओर भूमि अच्छी नहीं है। वर्षा की भी कमी है। उत्तर-पूर्व की ओर घग्घर की सहायक छोटी छोटी पहाड़ी नदियों से सिंचाई होती है। उत्तरी सीमा और सतलज के पड़ोस में कुओं से सिंचाई होती है। इस प्रकार पूर्वी मैदान प्रान्त की सब से अधिक उपजाऊ धनी और घना बसा हुआ भाग है। वास्तव में यह भाग पूरे पंजाब का अन्नागार है। इसी भाग में अमृत सर लाहौर आदि पंजाब के बड़े बड़े शहर बसे हैं।

जो देशान्तर रेखा लाहौर को पार करती है उसके पूर्व में पूर्वी मैदान और पश्चिम में पश्चिमी मैदान स्थिति है। पश्चिमी मैदान में मानसूनी हवायें अन्त में पहुँचती हैं। इसलिये वे यहाँ बहुत कम पानी बरसाती हैं। यहां बिना सिंचाई के कोई फसल नहीं हो सकती। भेड़, बकरी, गाय, बैल और ऊंटों को पालने का काम होता है। खेती केवल वहीं होती है जहां सिंचाई की सुविधा है। साधारण वर्षा में कमी हो जाने पर केवल घास कम होती है। फसल पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। ढोर चराने वाले प्रायः घुमक्कड़ हैं जो घास की खोज में अपने ढोरों को एक स्थान से दूसरे स्थान को ले जाते हैं। पश्चिमी मैदान में होकर सिन्ध, झेलम चनाव, रावी और सतलज बड़ी बड़ी पाँच नदियां बहती हैं। इन नदियों के दोनों ओर कुछ मील तक नदी का कछारी भाग है जिसमें होकर नदी प्रायः अपना मार्ग बदलती रहती है। ऊंचे किनारों के बीच में यह कछारी भाग बाढ़ के समय प्रायः डूब जाता है। ग्रीष्म काल में जब हिमालय की बरफ पिघलती है तभी यहां बाढ़ आती है। यहीं निचले भागों में कुओं में निकट पानी निकल आता है। इन कछारी भागों को छोड़ कर नदियों के

ऊंचे किनारों के बाहर सब कहीं ऊंचा और सूखा मैदान है। सिन्ध नदी के आगे झेलम और सतलज के बीच में जहां कहीं सिंचाई की सुविधा है वहां की भूमि बड़ी उपजाऊ है। केवल कुछ भागों में सतलज के उत्तर में सफेद रेह बिछा हुआ है जहां कोई फसल नहीं हो सकती है। सिन्ध नदी से लेकर सतलज के दक्षिण तक नदी तट से दूर यहां प्रायः सब कहीं बालू के लहरदार टीले मिलते हैं। टीले के बीच वाले निचले भाग में बालू के नीचे कहीं कहीं असली भूमि दिखाई देती है। यह टीले हवा के साथ प्रायः अपना आकार बदलते रहते हैं। सुलेमान पर्वत की ओर से असंख्य बरसाती नाले आकर सिन्ध नदी में मिलते हैं। इनमें कभी पानी रहता है। पर प्रायः वे सूखे पड़े रहते हैं। सतलज, लोअर (निचली) चनाब, अपर (ऊपरी) झेलम से कई नहरें निकली हैं। जिनमें समीपवर्ती भागों में खेती होने लगी है। थाल (रेतीले मरुस्थल) और बार (कड़ी मिट्टी के सूखे भागों) से कहीं कहीं खेतों को सींचने के लिए कुएं भी खोद लिये गये हैं। जहां बाढ़, नहर या कुओं के पानी से सिंचाई सम्भव नहीं है वहाँ प्रायः सूखी मुरझाई हुई झाड़ी या छोटी घास उगती है। कुछ झाड़ियां नमकीन होती हैं। यहां ऊँट और भेड़ बकरी के झुंड चरा करते हैं। घुमक्कड़ लोग पानी और चारों की खोज में इधर उधर घूमा करते हैं। पश्चिमी मैदान का क्षेत्रफल ६०,८७२ वर्ग मील है पर इसकी जन संख्या बहुत ही कम है केवल मुल्तान एक बड़ा नगर है। कार बार और व्यापार की भी कमी है। इस प्रदेश का प्रधान पेशा पशुओं का पालना है। इस प्रदेश में नदियों से आने जाने में अधिक बाधा नहीं पड़ती है। शीत काल में वे प्रायः पांज हो जाती हैं। मनुष्य उन्हें बिना नाव के पैदल ही पार कर सकते हैं। ग्रीष्म काल में बरफ के पिघलने पर उनमें बाढ़ आती है।

नदियां

यमुना नदी संयुक्त प्रान्त की नदी है। पर यमुना और उसकी सहायक टोंस नदी २२० मील तक पंजाब की पूर्वी सीमा बनाती है। और इस प्रान्त को संयुक्त प्रान्त से अलग करती है। यमुना से कुछ मील पश्चिम की ओर गंगा और सिन्ध का जल विभाजक है। इस ऊँचे जल विभाजक में होकर मार्कण्ड सरस्वती और घग्घर और दूसरी पहाड़ी नदियां बहती हैं। इनमें घग्घर अधिक बहती है। यह इस जल विभाजक में होकर पश्चिम की ओर बहती है। राजपूताना के मरुस्थल में बहते बहते यह घटती जाती है और अन्त में वहीं समाप्त हो जाती है। फिर भी यह नदी अपने मार्ग में जीवन प्रदान करती जाती है। इस जल विभाजक के पश्चिम में भी पहाड़ और मैदान दोनों में वह प्रदेश है जहां का वर्षा जल या बरफ का पिघला हुआ जल पश्चिम की ओर सिन्ध नदी में सीधे अथवा सहायक नदी के मार्ग से पहुँचता है। अन्त में यह जल अरब सागर में पहुँचता है। इस जल विभाजक के पूर्व में गंगा का क्षेत्र है। यहां का जल पूर्व की ओर बहता है और सीधे अथवा सहायक नदी द्वारा गंगा नदी में पहुँचता है। वहां से फिर यह जल बंगाल की खाड़ी में पहुँचता है।

सिन्ध नदी हिमालय के पर्वतीय प्रदेश को पीछे छोड़कर तारबेला के पास निचले प्रदेश में प्रवेश करती है। कुछ दूर तक यह पंजाब को सीमा प्रान्त के पेशावर और कोहाट जिलों से अलग करती है। काला बाग के पास यह साल्टरेंज को काटती है। यहां से यह ठीक दक्षिण की ओर बहती है। सुलेमान पर्वत यहां से पन्द्रह से लेकर तीस मील तक दूर रह जाता है। दोनों एक दूसरे के समानान्तर है काबुल नदी पेशावार घाटी और स्वात का जल लाकर अटक के पास सिन्ध नदी में गिरती है। संगम के पास ही पुराना किला बना हुआ है। आध मील की दूरी पर रेलवे लाइन पुल के ऊपर से सिन्ध नदी को पार करती है। पूर्व की ओर पंच नद (झेलम, चनाब, रावी, व्यास और सत-

लज का संयुक्त जल सिन्ध में आकर मिलता है। इन्हीं पंच नद (आब) या जल के मिलने से प्रान्त का नाम पंजाब पड़ गया है। यह सभी नदियां पश्चिम से पूर्व की ओर बहती हैं।

सतलज वेद कालीन शतद्र नदी है। यह चीनी तार तारी में निकलती है और बशहर राज्यों में पहुंचकर पंजाब प्रान्त में प्रवेश करती है। पहाड़ी रियासतों को पार करके रुपए के पास यह अम्बाला के मैदान में पहुंचती है। यहां से १२० मील ठीक पश्चिम की ओर बह कर फीरोज पुर में पहुंचती है। इसके पास ही सतलज में व्यास नदी आ मिलती है। व्यास के संगम से सतलज नदी २७० मील तक दक्षिण-पश्चिम की ओर बहती है। यहां इसमें झेलम चनाब और रावी का संयुक्त जल गिरता है। इस प्रकार सतलज पांच नदियों का जल लेकर मिटान कोट के पास सिन्ध नदी में गिरती है। यहां से सिन्ध प्रान्त की सीमा केवल ७० मील दूर रह जाती है।

चनाब नदी—काश्मीर में हिम से घिरे हुये हिमालय से निकलती है। यह चन्द्रा और भागा नदियों के मिलने से बनती है। यह हिमालय की लाहोल घाटी का पानी बहा लाती है। चम्बा राज्य और काश्मीर के दक्षिणी-पूर्वी भाग को पार करते समय यह प्रायः पश्चिम की ओर बहती है। जम्मू नगर के नीचे यह फिर दूसरी बार पंजाब प्रान्त में प्रवेश करती है। यह स्थान नदी के मार्ग के प्रायः मध्यवर्ती भाग में पड़ता है। इसी में तावी नदी आकर मिलती है। पहले चनाब दक्षिण-पश्चिम की ओर बहती है। फिर यह मुड़ कर दक्षिण की ओर बहने लगती है। ३०० मील बहने के बाद यह सतलज से मिल जाती है। जहां यह सतलज में मिलती है वहां से सतलज और सिन्ध का संगम ४० मील दूर रह जाता है। मैदान के मध्यवर्ती भाग में तिम्मू के पास उत्तर की ओर से झेलम नदी चनाब में गिरती है। झेलम और चनाब के संगम से ५० मील नीचे की ओर फिर रावी नदी सतलज से आ मिलती है। गुजरान वाला के आगे चनाब नदी झंग के रेगिस्तान में प्रवेश करती है। यहां इसकी घाटी २० मील

सिन्ध नदी का प्रवाह प्रदेश

चौड़ी है। इस चौड़ी घाटी में नदी प्रायः अपना मार्ग बदलती रहती है। वजीराबाद के पास चनाब पर रेल का पुल बना है।०

रावी का प्राचीन नाम इरावदी है। यह कांगड़ा जिले में कुलू प्रदेश से निकलती है और कुछ ही दूर बहने के बाद चम्बा राज्य में प्रवेश करती है। फिर यह जम्मू के बसौली नगर के सामने गुरुदासपुर जिले में पहुंचती है। शाहपुर में इसका पर्वतीय मार्ग छूट जाता है। फिर भी यह ऊंचे किनारों के बीच घिरी हुई बहती है। मधुपुर के पास इस नदी से रावी द्वाब नहर निकलती है। इसके आगे यह कछारी मैदान में बहती है। इसके किनारे नीचे हो जाते हैं। मार्च अप्रैल में उसकी गहराई एक फुट से अधिक नहीं होती है। लेकिन जून और सितम्बर में इसकी गहराई १५ या २० फुट हो जाती है। लाहोर जिले में यह कई धारायें फेंक देती है। आगे चलकर यह धारायें फिर मिल जाती हैं। लाहोर नगर नदी से १ मील दूर है। मांटगोमरी जिलों में इसकी सहायक डेग नदी उत्तर-पश्चिम की ओर से इसमें आ मिलती है। फिर यह मुल्तान जिले में पहुंचती है और १४५ मील बहने के बाद चनाब नदी में मिल जाती है। रावी नदी की घाटी अधिक चौड़ी नहीं है। इसकी बाढ़ किनारों से एक दो मील तक पहुंचती है। इससे खेती को बड़ा लाभ होता है।

व्यास नदी शिमला के आगे कुलू में कोटगढ़ के ठीक सामने हिमालय पर्वत से निकलती है। पञ्जाब की अन्य नदियों की भांति यह उत्तर-पश्चिम की ओर बढ़ती है। मंडी और कांगड़ा में पहाड़ी प्रदेश के पार करने के बाद यह होशियार पुर ज़िले में मैदान में प्रवेश करती है। ७० मील रहने के बाद यह सतलज में मिल जाती है।

झेलम—यह नदी प्राचीन समय में वितस्ता नाम से प्रसिद्ध थी। यह नदी काश्मीर राज्य में हिमालय पर्वत से निकलती है। पीर पंजाल से निकलने वाली प्रायः सभी छोटी पहाड़ी नदियाँ इसमें आ मिलती हैं। श्री नगर के पड़ोस में यह कई झीलों को पार करती है। मार्ग बड़ा ही सुन्दर हो जाता है। वुलर झील में प्रवेश करने से पहले इसमें (छोटी) सिन्ध नाम की एक पहाड़ी नदी उत्तर की ओर से आ मिलती है। बार मूला दर्रे के पास यह हिमाच्छादित पीर पंजाल श्रेणी को पार करती है। मुजफ्फराबाद के पास में किशन गंगा नदी झेलम में मिलती है। किशन गंगा बाल्ति स्तान के बर्फीले प्रदेश से निकलती है। संगम के पास इसका पानी झेलम से कहीं अधिक ठंडा रहता है। कोहाला के पास इसके ऊपर लोहे का पुल बना है। रावलपिंडी में प्रवेश करने के बाद यह नाव चलाने योग्य हो जाती है। इससे पूर्व इसमें केवल लट्ठे बहाये जाते हैं। इसकी तेज धार में नावें नहीं चल सकती। झेलम जिले में पहुंच कर यह साल्टरेंज का चक्कर लगाती है। झेलम शहर के पास यह मैदान में प्रवेश करती है। झेलम शहर झेलम नदी के उद्गम से २५० मील दूर है। झेलम शहर के आगे नदी की घाटी चौड़ी हो जाती है। इसके मार्ग में द्वीप निकल आते हैं। १०० मील तक झेलम नदी झेलम जिले और गुजरात, शाहपुर जिलों के बीच में सीमा बनाने के बाद शाहपुर जिले में प्रवेश करती है। यह दक्षिण की ओर बहने लगती है। इसकी चौड़ाई यहां बाढ़ के समय ८०० गज (प्रायः आध मील) हो जाती है। शीतकाल में यह घट कर आधी (४०० गज) रह जाती है। अन्त में यह झंग जिले में पहुंचती है और तिम्मू के पास चनाब में मिल जाती है। तिम्मू से शाहपुर ७० मील दूर हो जाती है। झेलम शहर के पास नदी के ऊपर रेल का पुल बना हुआ है।

पञ्जाब की सातों बड़ी बड़ी नदियाँ (यमुना, सतलज व्यास, रावी, चनाब झेलम, और सिन्ध) पञ्ज अपने किनारों के पास पञ्जाब प्रान्त की अच्छी जमीन लगातार काटती रहती हैं। इनके अतिरिक्त बाढ़ के समय घग्घर नदी भी अपने किनारों को तेजी से काटती है। अटक की सोहन और सिल नदियाँ भी अपने किनारों के पास की भूमि बहुत काटती हैं। पञ्जाब प्रान्त में सात बड़ी नदियों की लम्बाई १८४० मील है। इनके मार्ग की औसत चौड़ाई दो मील है। इस प्रकार इन्होंने अभी तक पञ्जाब की ३६८० वर्ग मील भूमि नष्ट कर दी है जो समस्त प्रान्त का ३½ फी सदी है।

इन नदियों में पहाड़ी भाग से इतनी कांप

(मिट्टी) आती है कि इनकी तली ऊँची हो जाती हैं और बाढ़ आने का भय बढ़ जाता है। इससे इनके किनारों को मिट्टी की भी कटने का डर बढ़ जाता है। यदि पहाड़ी भाग में ऊँचे बांध बन जावें। तो मैदान में कम कांप आवेगी मैदानी भाग में सपाट किनारों को काटकर उनका ढाल क्रमशः किया जा सकता है। फिर उन पर घास पेड़ और लग जाने से भविष्य में कटने का अधिक डर न रहेगा।

पंजाब प्रान्त की जलवायु विषम या महाद्वीपीय है। ग्रीष्म ऋतु में विकराल गरमी पड़ती है। शीत काल में कड़ा जाड़ा पड़ता है। पर यह प्रान्त बहुत बड़ा है। धरातल की उंचाई और भूरचना के अनुसार यह चार भिन्न भिन्न भागों में बटा हुआ है। इसलिये जलवायु के अनुसार प्रान्त चार निम्न भागों में बांटा जा सकता है।

१—हिमालय प्रदेश की जलवायु का नमूना, पंजाब के शिमला और मरी नगरी से मिलता है।

२—हिमालय की तलहटी का प्रदेश। अम्बाला, अधियात्रा स्यालकोट और रावल पिंडी इस प्रदेश के प्रधान नगर हैं।

३—सिन्ध-गङ्गा-मैदान का पश्चिमी भाग। लाहौर इसका मध्यवर्ती नगर है। दिल्ली इसके एक किनारे पर है।

४—दक्षिणी पश्चिमी खुश्क प्रदेश खुशाब मांटगोमरी मुल्तान और सिरसा इसके आदर्श नगर हैं।

पंजाब प्रान्त दूसरे प्रान्तों की अपेक्षा अधिक भीतर की ओर है और जलवायु को समशीतोष्ण बनाने वाले समुद्र के प्रभाव से दूर पड़ जाता है। अधिकतर प्रदेश की मिट्टी बलुई है। इसीलिये ग्रीष्म में अधिक गरमी और शीतकाल में जाड़ा अधिक पड़ता है। शीतकाल में भी दिन में दोपहर के समय काफी गरमी हो जाती है। रात को कड़ी सरदी हो जाती है। यह जलवायु बड़ी स्वास्थ्य कर है।

इसने पंजाबियों को वीर सिपाही बना दिया है। लड़ाई के अवसर पर पंजाबी सिपाही शीतकाल में हालैंड की कीचड़ और ग्रीष्म में मेसोपोटा और लिबिया रेगिस्तानी प्रदेश की धूप में जलवायु की विषमता की कुछ भी चिन्ता न करके वीरता पूर्वक लड़ते थे।

साधारणतया पंजाब में वर्ष भर में दो ऋतुओं में वर्षा होती है। उत्तरी पूर्वी मानसूनी हवाओं से बड़े दिन के पड़ोस में वर्षा होती। मैदानी भाग में पानी बरसता है। पंजाब के पहाड़ी भाग में हिम वर्षा होती है यह क्रम दिसम्बर से फर्वरी के अन्त अथवा मार्च के आरम्भ तक चलता है। दूसरी वर्षा ऋतु जून के अन्त से आधे सितम्बर तक रहती है। इस समय दक्षिणी-पश्चिमी मानसूनी हवायें पानी लाती हैं। इस ऋतु में शीतकाल से कहीं अधिक वर्षा होती है। हिमालय प्रदेश में सब से अधिक वर्षा होती है। धर्मशाला में एक वर्ष १२६ इंच वर्षा हुई। हिमालय प्रदेश में ३६ इंच से कम वर्षा किसी वर्ष नहीं हुई।

पंजाब के मैदानी भाग में जैसे जैसे हिमालय से दूर पहुँचते हैं वैसे ही वर्षा की मात्रा भी कम हो जाती है। हिमालय की तलहटी वाले रावलपिंडी और स्यालकोट आदि प्रदेश में औसत से ३०० और ४० इच के बीच में वर्षा होती है। पंजाब के पूर्वी मैदान में दिल्ली और लाहौर के बीच में प्रायः २४ इंच पानी बरसता है यमुना की घाटी में दूसरे भागों से अधिक वर्षा होती है। पंजाब के पश्चिम और दक्षिण-पश्चिम की ओर खुश्क प्रदेश स्थित है। यहाँ वर्षा बहुत ही कम और अनिश्चित होती

है। ग्रीष्म ऋतु में यहाँ अत्यन्त गरमी पड़ती है। हवा भी बहुत खुश्क हो जाती है।

सिन्ध और काठियावाड़ की ओर से आने वाली साधारण दक्षिणी-पश्चिमी मानसूनी हवायें इस भाग के चारों ओर चक्कर तो लगाती हैं पर इसके भीतर घुसकर वे वर्षा करती हैं। बंगाल की खाड़ी की ओर से आने वाले तूफान यहाँ कभी कभी प्रबल वर्षा कर देते हैं। पंजाब के मैदानी भाग की जलवायु समुद्र से दूर स्थित होने के कारण बड़ी विकराल रहती है। शीतकाल में यहाँ ऐसा कड़ा जाड़ा पड़ता है जैसे सिन्ध-गङ्गा के मैदान के और किसी भाग में नहीं पड़ता है। जनवरी और फर्वरी महीनों में रात्रि के समय तापक्रम हिमांश के समीप पहुँच जाता है खुली छप्पर रक्खा हुआ पानी पर बरफ का पतला परत जम जाता है। दिन के समय दोपहर का तापक्रम ७५ अंश फारेन हाइट हो जाता है। सरदी के चार महीनों में पंजाब की जलवायु आदर्श रहती है। दिन में धूप खूब होती है। हवा ठंडी और लाभप्रद होती है।

ग्रीष्म में यहाँ अत्यन्त गरमी होती है। हवा खुश्क रहती है। जून में दोपहर का तापक्रम १२१ अंश तक पहुँच जाता है। रात्रि का तापक्रम ७९ रहता है। दिसम्बर से आधे मार्च तक ऋतु प्रायः अस्पष्ट रहती है। इन दिनों अचानक आने वाले तूफानों से मैदान में पानी और पहाड़ पर बरफ गिर जाती है। पहले आकाश के बादल घिरने लगते हैं। बादलों के घिरे होने पर रात्रि का तापक्रम पाँच से पन्द्रह अंश तक बढ़ जाता है। तूफान के निकल जाने पर आकाश निर्मल हो जाता है पर तापक्रम प्रायः घट जाता है और पाला पड़ता है। हवा की दिशा भी बदल जाती है। इस समय पहाड़ी स्थानों का तापक्रम घटकर १८ या १९ अंश रह जाता है। पहाड़ों पर बरफ गिरने पर ही यह तापक्रम गिरता है। इस ऋतु में पानी लाने वाले तूफान पश्चिम से पूर्व की ओर चलते हैं। इसलिये उत्तर-पश्चिम की ओर सिन्ध घाटी में अधिक वर्षा होती है दक्षिण और दक्षिण-पूर्व की ओर वर्षा की मात्रा बहुत घट जाती है।

फर्वरी से मई तक औसत तापक्रम प्रतिमास १० अंश बढ़ता रहता है। अप्रैल में ग्रीष्म ऋतु का राज्य हो जाता है। अप्रैल से जून तक प्रायः वर्षा भी नहीं होती है। कभी कभी तूफान आने पर ओले गिर जाते हैं। ओले गिरने पर दो चार दिन तापक्रम कुछ कम हो जाता है। फिर वहां पुरानी झुलसाने वाली पछुआ हवा चलने लगती है। तापक्रम ९५ अंश से ११५ अंश हो जाता है। यह पछुआ हवायें जून के अन्त में बन्द होने लगती है। कुछ दिनों तक कोई हवा नहीं चलती है। वातावरण शान्त रहता है। लू चलने पर भी झुलसाने वाली गरमी में कोई अन्तर नहीं पड़ता है। जून के अन्त में दक्षिण-पूर्व की ओर से हवा चलने लगती है। बंगाल की खाड़ी से आने वाली इन हवाओं के साथ बादल भी आने लगते हैं और प्रबल वर्षा आरम्भ हो जाती है। दक्षिणी पूर्वी पंजाब में सिंध काठियावाड़ और मध्यराजपूताना में होती हुई अरब सागर की हवायें आती हैं। पर इस ऋतु में वर्षा लगातार नहीं होती है न पूरे प्रान्त में एक साथ वर्षा होती है। दक्षिण और पश्चिम की ओर वर्षा बहुत कम होती है। दो तीन दिन तक वर्षा हो जाने के बाद तेज धूप निकल आती है और असह्य गरमी पड़ने लगती है। आधे सितम्बर तक वर्षा का यही क्रम रहता है।

सितम्बर के अन्त में वर्षा ऋतु एकदम समाप्त हो जाती है। आकाश निर्मल हो जाता है। मार्च और अप्रैल में जब अधिक ओले गिरते हैं तब फसल को बड़ी हानि होती है।

पंजाब प्रान्त को सात बड़ी बड़ी नदियाँ पार करती हैं पर इन नदियों में भयानक बाढ़ बहुत कम आती है प्रायः ग्रीष्म ऋतु में हिमालय की बरफ पिघलने से ही इनमें बाढ़ आती है। बरसाती बाढ़ बहुत कम आती है। जो बाढ़ आती है वह नदी के ऊँचे किनारों के बीच में ही सीमित रहती है। तटों के बाहर दूर तक नहीं पहुँचने पाती है। केवल धुर दक्षिणी सिरे पर मुल्तान मुजफ्फरगढ़ और डेरा-गाजी खाँ जिलों के निचले भाग चनाब और सिन्ध नदियों की बाढ़ से डूब जाते हैं। कुछ स्थानों पर बाढ़ रोकने के लिये बाँध बनाये जाते हैं पर प्रबल बाढ़ प्रायः बाँधों को तोड़ देती है। प्रबल बाढ़

जुलाई या अगस्त मास में आती है। १८५६ ई० में झेलम की वाढ़ से शाहपुर बह गया। १८५६ और १८७८ ई० में सिन्ध नदी इतनी वढ़ी कि मुज़फ्फरगढ़ और डेरा गाजी खाँ नगर डूब गये और इन जिलों के कई भागों में वाढ़ का पानी भर गया। १८९२,१८९३ और १९०५ के चनाव और झेलम में जोर की वाढ़ आई १८९३ ई० में झेलम ने काश्मीर का कोहाला पुल तोड़कर वहा दिया।

एक योरुपीय लेखक ने पंजाब की जलवायु का इस प्रकार वर्णन किया है।

भारतवर्ष के शेष भागों की तरह पञ्जाव में भी ३ ऋतु होती है। ग्रीष्म वर्षा और शीत। ग्रीष्म ऋतु अप्रैल से आरम्भ होती है। पर मार्च में ही इतनी गरमी पड़ने लगती है कि गेहूँ और जौ की फसल पक जाती है और इनकी कटाई हो जाती है। अप्रैल से जून तक प्रायः वर्षा नहीं होती है। पछुआ हवा चलती है। सिन्ध नदी के मरुस्थल की ओर से आती है। इसके सामने चलने से ऐसा जाना पड़ता है मानों कोई खुली हुई विशाल आग की पट्टी के सामने जा रहा हो। छाया में थर्मामीटर का पारा ऊपर उठकर १२२ अंश फारेनहाइट तक पहुँच जाता है इस ऋतु में हवा का आनन्द लेने के लिये प्रायः ४ या पांच वजे उठना चाहिये सूर्य के उदय होते ही गरमी आरम्भ हो जाती है। ७ बजने के बाद आवश्यकता पड़ने पर ही गोरा मनुष्य अपने घर के बाहर जाता है। धूप में वाहर जाने पर उसे छाता या टोपी से अपने सिर की रक्षा कर लेनी चाहिये। प्रातः पाँच वजे या सूर्योदय के बाद शीघ्र ही सब दरवाजे बन्द कर लेने चाहिये। नहर वालों से मिलने जुलने के लिये एक छोटे दरवाजा थोड़ा खोलना चाहिये। इस प्रकार यह घर एक जेल की तरह अंधेरा हो जाता है। वाहर जब तक हवा तेज चलती रहती है। तब तक खस की टट्टी से घर के कमरे कुछ ठंडे रक्खे जा सकते हैं। इन टट्टियों पर लगातार पानी छिड़कना पड़ता है। रात्रि में पंखा चलता है। जिसके यहां पंखा या टट्टी नहीं होती है। उसे गरमी की असह्य वेदना सहनी पड़ती है। घर के भीतर तापक्रम ९५ अंश और ११३ अंश के बीच में रहता है। इस गरमी में मनुष्य और पशु दोनों की दम फूलने लगती है। धीरे धीरे गोरे मनुष्य की भूख और नींद कम हो जाती है। उसका वल और उत्साह भी छूट जाता है। वनस्पति नष्ट हो जाती है। सभी चीजें झुलस कर सूख जाती हैं। घास जड़ तक जली हुई सी दिखाई देती है। झाड़ियाँ और पेड़ मरे हुये से मालूम होते हैं। मिट्टी सूखकर कड़ी हो जाती है। कहीं कहीं इसमें दरारें पड़ जाती है। सब कहीं उजाड़, उदासी सी छाई रहती है। अन्त में जून मास में लूक चलना बन्द हो जाता है। कुछ समय तक कोई हवा नहीं चलती है। यह गरमी और भी अधिक भीषण हो जाती है। इन दिनों खस की टट्टियों से भी कोई लाभ नहीं होता है। सब लोग वर्षा के लिये तरसने लगते हैं। पर वर्षा का कोई चिन्ह दिखाई नहीं देता है। फिर दक्षिण-पूर्व की ओर से हवा चलने लगती है। और वर्षा आरम्भ हो जाती है। फिर भी समस्त प्रान्त में वर्षा नहीं होती है लाहोर में बहुत थोड़ा पानी वरसता है। मुल्तान में और भी कम वर्षा होती है। पश्चिमी पञ्जाव के किसान को कृत्रिम सिंचाई के वल पर ही फसल उगानी पड़ती है। यहाँ वर्षा का कोई भरोसा नहीं रहता है।

दक्षिण और पूर्व से आने वाली हवाओं के साथ पहले तूफान और वादल आते हैं। यह तूफानी वर्षा प्रति दिन या दूसरे तीसरे दिन होती है। हिमालय प्रदेश में जुलाई मास में वर्षा आरम्भ होती है आधे सितम्बर तक प्रायः समूचे प्रान्त में वर्षा का अन्त हो जाता है। जुलाई में वृक्षों में नये हरे पत्ते निकल आते हैं। घास हरी हो जाती है। कहीं हरियली इतनी तेजी से वढ़ती है कि वह अपनी सीमा के भीतर नहीं रहती है। इस समय किसान को हल जोतने वोने और नराने में वड़ा परिश्रम करना पड़ता है। धान की फसल तो जून में वो दी जाती है।

चार छः सप्ताह की वर्षा के वाद कभी कभी दो तीन दिन तक लगातार पानी वरसता है। फिर आकाश साफ हो जाता है। कभी कभी कई सप्ताह तक खुला रहता है। और वर्षा नहीं होती है। इसके वाद एक दो सप्ताह तक फिर वर्षा ऋतु रहती

है अन्त में वर्षा ऋतु समाप्त हो जाती है। वर्षा होने से जितनी ही ठंडक हो जाती है धूप निकल आने पर फिर उतनी ही असह्य नम गरमी पड़ती है। रात को मच्छड़ सताते हैं। तरह तरह के कीड़े पतंगे निकलने लगते हैं। मेंढक घर के भीतर तक चले आते हैं। इनके साथ साथ बिच्छू और सांप भी कभी कभी आ जाया करते हैं। इसी से इन दिनों अंधेरे में निकलना ठीक नहीं रहता है। वर्षा के अन्त में हवा में बहुत अधिक नमी रहती है। इस से जो पीड़ा होती है। उसका अनुभव योरुप की जलवायु में रहने वाले नहीं कर सकते। लकड़ी फूल जाती है। दरवाजे और खिड़कियां कठिनाई से बन्द होती हैं। जूतों और चमड़े की दूसरी चीजों पर फफूंदी छा जाते हैं। किताबों में नमी से कीड़े लगने लगते हैं। सूती कपड़े भीगे हुये से जान पड़ते हैं। चूल्हे में आग बड़ी कठिनाई से जलती है।

वर्षा ऋतु के बीतने पर अक्टूबर तक मौसम बहुत खराब रहता है। भीगी वनस्पति अचानक धूप पाने से सड़ने लगती है। इससे बुखार और हैजा फैलता है। बादलों के लुप्त हो जाने से कुछ खुशी मालूम होती है। पर गरमी इतनी कष्टप्रद हो जाती है कि मनुष्य शीतकाल की इच्छा करने लगता है। सभी लोग पश्चिम और उत्तर की ओर आनेवाली ठंडी हवाओं की प्रतिक्षा करते हैं। अक्तूबर में यह हवायें चलने लगती हैं। इनके लगातार चलने से बादल दूर हो जाते हैं और नीला आकाश निकल आता है। यह नीला आकाश बड़ा सुहावना लगता है अक्टूबर से सितम्बर के अन्त तक मौसम बड़ा सुन्दर रहता है। आकाश निर्मल रहता है। हवा एकदम शुद्ध और स्वास्थ्य कर होती है। फल समाप्त हो जाते हैं। पर बगीचों में सुन्दर फूल फूलने लगते हैं। दिसम्बर और जनवरी में कमरों को गरम रखने के लिये दिन भर अंगीठी जलती रहती है। प्रातः और सायंकाल को यह आंच बड़ी अच्छी लगती है। रात के समय विशेष रूप से ठंड होती है। खुले हुये पानी पर बरफ का परत जम जाता है। और पाला पड़ता है।

इस समय यदि सफेद पाले से ढकी हुई भूमि पर थर्मामीटर रख दिया जावे तो भूमि का तापक्रम केवल २३ अंश फारेनहाइट रह जाता है। शीतकाल के अन्तिम भाग में कुछ वर्षा हो जाता है। इससे गेहूँ और जौ की फसल को लाभ होता है। बिना इस वर्षा के यह फसल बड़ी कमजोर रहती है। फर्वरी मास में थोड़े दिन तक बसन्त ऋतु रहती है। तरह तरह के फूल खिलने लगते हैं। वृक्षों में नई पत्तियां निकल आती है। मार्च में ग्रीष्म ऋतु का फिर आगमन हो जाता है। केवल धूल भरी आंधियों के कभी कभी आ जाने से गरमी कुछ कम हो जाती है। जब धूल भरी आंधी आती है तब दिन के समय में भी अंधेरा छा जाता है।

पञ्जाब के प्रमुख स्थानों की जलवायु का संक्षिप्त वर्णन आगे दिया जाता है।

रावलपिंडी समुद्र तल से १७०० फुट की ऊँचाई पर साल्टरेंज के आगे बाहरी हिमालय से कुछ ही मील दूर स्थित है। यहां से पेशावर केवल ९ मील दूर है। पर रावल पिंडी पेशावर से कहीं कम खुश्क है। पेशावर की अपेक्षा यहां दुगुनी तिगुनी वर्षा होती है। जुलाई अगस्त महीनों में यहां १४ इंच वर्षा हो जाती है। शीतकाल और बसन्त में भी यहां पेशावर से अधिक वर्षा होती है। कभी कभी शहर के बाहर तीन या चार इँच बरफ भी गिर जाती है। झेलम के पश्चिम और साल्टरेंज के उत्तर में पञ्जाब का पठार प्रायः २००० फुट ऊंचा है। यहां की जलवायु पूर्व की ओर वाले मैदानी भाग से अधिक ठंडी रहती है।

रावलपिंडी से ११० मील पूर्व की ओर स्यालकोट है। यह चनाब के पूर्व में हिमालय से १५ मील की दूरी पर कुछ ऊँची भूमि पर बसा है। औसत से स्यालकोट शीतकाल और बसन्त में रावलपिंडी की अपेक्षा ४ अंश अधिक गरम रहता है। मानसूनी हवाओं के चलने पर रावलपिंडी और स्यालकोट के तापक्रम में कोई विशेष अन्तर नहीं रहता है। रावलपिंडी से यहाँ गरमी की ऋतु में मानसूनी वर्षा ६ इंच अधिक होती है। पर शीतकाल में रावलपिंडी से यहाँ २ इंच कम वर्षा होती है। अधिक वर्षा होने पर पानी बरसने के दिन स्यालकोट में रावलपिंडी से कम (३) होते हैं। यहाँ की छावनी बड़ी स्वास्थ्यकर है।

लाहोर नगर स्यालकोट से ६४ मील ठीक दक्षिण की ओर है। हिमालय से अधिक दूरी और रेगिस्तान के सिरे पर बारीद्वाब के ऊँचे भाग में रावी के किनारे पर बसा हुआ लाहोर नगर स्यालकोट से कहीं अधिक खुश्क है। स्यालकोट से दो तीन अंश सदा अधिक गरम रहता है। औसत से गरमी में यहां ११७ अंश तापक्रम रहता है! किसी किसी वर्ष यहां का तापक्रम १२० अंश तक हो गया है। शीतकाल में यहां का औसत तापक्रम ३४ अंश रहता है। यहां की हवा खुश्क है। औसत आर्द्रता ५० प्रतिशत रहती है। मई में हवा की आर्द्रता केवल ३३ प्रतिशत रह जाती है। यहां की वार्षिक वर्षा २२ इंच है। जो स्यालकोट और रावल पिंडी दोनों ही से कम है। औसत से वर्ष भर में यहाँ केवल ३७ दिन ऐसे होते हैं जब पानी बरसता है। नगर के चारों ओर कृत्रिम सिंचाई हो जाने के कारण यहाँ बाग और पेड़ अधिक दिखाई देते हैं पर लाहोर से कुछ मील दक्षिण की ओर जाने से रेगिस्तानी रूप दिखाई देने लगता है। लाहोर और मुल्तान के बीच में चंगा मंगा का कृत्रिम वन ३२ वर्ग मील है। यहाँ बारीद्वाब नहर सिंचाई करके शीशम के पेड़ लगा दिये गये हैं। पेड़ औसत से ४० फुट ऊँचे हैं पर यहाँ केवल १६ इंच वर्षा होती है।

लुधियाना—लाहोर से ९० मील पूर्व की ओर लुधियाना नगर सतलज के बायें किनारे से ३ मील दूर पर स्थित है। यह हिमालय से ५० मील दूर है। स्यालकोट की अपेक्षा हिमालय से अधिक दूर दक्षिण की ओर स्थित होने पर भी दोनों के तापक्रम में १ अंश से अधिक अन्तर नहीं रहता है। वर्ष का औसत तापक्रम समान रहता है। शीतकाल में लुधियाना में हवा अधिक खुश्क रहती है। बादल कम रहते हैं। औसत से स्यालकोट से वर्षा कम होती है। शेष बातों में दोनों की जलवायु एक है।

सिरसा-लाहोर से १५० मील दक्षिण पूर्व की ओर है। दिल्ली से इतनी दूर पश्चिम की ओर है। यह यमुना और सतलज के मध्य में बीकानेर की सीमा के पास स्थित है।

शीतकाल में सिरसा का तापक्रम दिल्ली से ३० अंश कम रहता है। ग्रीष्म काल में ५ अंश अधिक हो जाता है। दैनिक तापक्रम भेद दिल्ली से ८ या ९ अंश अधिक रहता है। नवम्बर दिसम्बर में दिन और रात के तापक्रम में ३६ अंश का भेद हो जाता है। हवा की आर्द्रता भी कम है। सिरसा की हवा औसत आर्द्रता ४७ प्रतिशत है। मई में केवल ३६ प्रतिशत रह जाती है। जुलाई में ६० प्रतिशत हो जाती है। सिरसा की औसत वार्षिक वर्षा १५ इंच है। आधी वर्षा जुलाई और अगस्त मास में हो जाती है।

मुल्तान नगर सतलज और सिन्ध नदी के संगम से कुछ ऊपर प्रान्त का अत्यन्त खुश्क स्थान है। वर्ष भर में यहाँ केवल १५ दिन ऐसे होते हैं जब यहाँ कुछ वर्षा होती है। वर्ष भर की वर्षा का योग केवल ७ इंच होता है। अप्रैल मास का तापक्रम १०० अंश हो जाता है। मई मास में यह १०४ के ऊपर पहुँचता है। जून यहाँ का सब से अधिक गरम और खुश्क महीना है। खुश्की और वर्षा की कमी में यह सिन्ध के समान है।

मरी

पश्चिमी पञ्जाब का पहाड़ी सैर करने का स्थान मरी है। जिस तरह पूर्वी पञ्जाब का शिमला है। मरी उस पहाड़ी चोटी पर स्थित है। जो झेलम घाटी को पाटवार (साल्टरेंज के पठार) से प्रथक करता है मैदान की ओर को छोड़कर इसको घेरने वाली पहाड़ियां जंगलों से ढकी हैं। यह स्थान समुद्र तल से ७५०० फुट ऊँचे हैं। इसको घेरने वाली पहाड़ियाँ भी अधिक ऊँची नहीं हैं। मरी स्टेशन नैनीताल और मन्सूरी से अधिक खुश्क है पर समीपवर्ती मैदान से अधिक नम है। अतः वहाँ दिन रात के तापक्रम में बहुत कम अन्तर रहता है। वार्षिक तापक्रम भेद भी बहुत थोड़ा होता है। जनवरी का औसत तापक्रम ५६° फर्वरी का ३९° और जून का ७१° अंश फारेन हाइट रहता है। इनके आगे तापक्रम घटता जाता है। सितम्बर का तापक्रम ६५ अंश रह जाता है। सबसे कम तापक्रम फर्वरी मास का होता है एक वर्ष यहां का तापक्रम २४ अंश रह गया। १८८६ ई० में सब से कम ताप-

क्रम १६° हो गया था। इसी प्रकार जून मास का तापक्रम एक बार ९८ अंश तक पहुँच गया।

मरी में जून से नवम्बर तक शिमला की हवा अधिक खुश्क रहती है। अगस्त मास में आर्द्रता सबसे अधिक (८० प्रतिशत रहती है। मार्च मास में भी बादल बहुत छा जाते हैं। मार्च से मई तक औसत से ही तीसरे दिन वर्षा होती है। वर्षा प्रायः ३/१० इंच होती है। जून मास में वर्षा बहुत कम होती है जुलाई में वर्षा की मात्रा फिर बढ़ जाती है। जुलाई अगस्त में आधे से अधिक दिन ऐसे होते हैं। जिनमें पानी बरसता है। वसन्त ऋतु की अपेक्षा इधर वर्षा की मात्रा भी अधिक होती है। औसत से प्रतिदिन ३/४ इंच वर्षा होती है। वर्ष भर में वर्षा के दिन कमसे कम ७१ और अधिक से अधिक १२३ होते हैं। वर्षा की मात्रा भी ३९ इंच और ७१ इंच के बीच में होती है। अक्टूबर, नवम्बर में आकाश निर्मल रहता है।

शिमला—चक्करदार सड़क द्वारा मैदान से ५८ मील और सीधी रेखा में केवल २३ मील दूर है। शिमला की पहाड़ी समुद्र तल से ७००० फुट ऊँची है यह सतलज और यमुना-टोंस के बीच में जल विभाजक बनाती है। तारा देवी की पहाड़ी शिमला के सामने आ जाती है और उसके सामने से मैदान को आड़ में कर देती है। उत्तर-पूर्व की ओर जाको पहाड़ी ८०४८ फुट ऊंची है। शिमला का कुछ भाग जाको के उत्तरी भाग में स्थित है। यहां से एक पहाड़ी सतलज की ओर चली गई है।

यहां देवदारु और सिन्दूर के पेड़ बहुत हैं। पर कुछ पहाड़ियां एक दम नंगी हैं। इन पर पेड़ों का नाम नहीं है। इनके सपाट ढालों पर केवल घास मिलती हैं। जहां ढाल क्रमशः है वहां जीने दार खेत है। पहाड़ी चोटी से २००० फुट नीचे सब ओर को सपाट ढाल है।

मरी की अपेक्षा शिमला में अधिक पानी बरसता है। हवा भी अधिक आर्द्र रहती है। शिमला का औसत तापक्रम ५५ अंश फारेनहाइट है जो मरी के प्रायः समान है। इतना ही तापक्रम उत्तरी इटली के मिलान नगर का रहता है। जनवरी फर्वरी का तापक्रम ४१ अंश और जून का ६७ अंश हो जाता है। अल्प तापक्रम बरफ के जमने के बिन्दु और इससे भी नीचे तक पहुँच जाता है। परम तापक्रम कभी कभी अप्रैल मई में ८४ अंश तक हो गया है। प्रातः और दोपहर के तापक्रम में २० अंश का अन्तर पड़ जाता है। अगस्त मास में यह अन्तर केवल ११ अंश रह जाता है। दिसम्बर यहाँ का सब से अधिक खुश्क मास है। इस मास में हवा की आर्द्रता केवल ४७ अंश रह जाती है। मई मास की आर्द्रता ४९ प्रतिशत होती है। वर्षा होने पर यह और अधिक बढ़ जाती है। जुलाई-अगस्त में प्रबल वर्षा होती है। तभी हवा की आर्द्रता भी प्रायः ९० प्रतिशत हो जाती है। इन दिनों शिमला में बादल और कुहरा छाया रहता है। आधे सितम्बर से वर्षा समाप्त हो जाती है और शीतकाल आरम्भ हो जाता है। सितम्बर के अन्त से नवम्बर तक आकाश निर्मल रहता है। दिसम्बर में बड़े दिन की छुट्टियों के समीप बादल फिर इकट्ठे हो जाते हैं। आरम्भ में आंधियों के आने पर जनवरी फर्वरी में बरफ गिरती है। कुछ बरफ दिसम्बर और मार्च में भी गिरती है। मार्च के आगे तापक्रम इतना ऊँचा हो जाता है कि यहां बदली होने पर पानी बरसता है। बरफ नहीं गिरती है। मई जून की आंधियों में बिजली बहुत चमकती है। और ओले गिरते हैं। जब वर्षा होने के बाद तेज धूप निकलती है तब तापक्रम बहुत अधिक बढ़ जाता है।

शिमला की वार्षिक वर्षा औसत से ७० इन्च होती है। वर्ष में ९९ दिन पानी बरसने वाले होते हैं। प्रबल वर्षा के वर्ष में १३६ दिन ऐसे हुये जिनमें कुछ वर्षा हुई। जनवरी फर्वरी में कई बार (प्रायः ८ दिन) बरफ गिरती है। किसी किसी बार चार पांच फुट गहरी बरफ गिरी है।

शिमला में हवायें प्रायः मन्दगति से चलती हैं। उत्तर और उत्तर-पश्चिम की ओर से आने वाली हवायें खुश्क होती है। हवायें ही स्वास्थ्यकर होती हैं।

बाजरा की खेती प्राय: पूरे पञ्जाब में होती है। रावलपिंडी कमिश्नरी में यह सब से अधिक होती है। प्रान्त की ढाई तीन हज़ार वर्ग मील भूमि बाजरा उगाने के काम आती है। ज्वार की अपेक्षा इसे कम नमीं की आवश्यकता होती है। इसका चारा कम अच्छा होता है। ज्वार की खेती भी प्रान्त भर में होती है। प्राय: ३००० वर्ग मील से कुछ अधिक भूमि ज्वार उगाने में लगी है। चरी को केवल चारे के लिये वोते हैं और ज्वार के वीज वहुत घने वोये जाते हैं।

धान की खेती कांगड़ा, होशियारपुर, कर्नाल, और अम्बाला जिलों में अधिक होती हैं। लाहोर और मुलतान जिलों में भी कुछ खेतों में धान उगाया जाता है। प्राय: ११०० वर्ग मील भूमि में यहां धान उगाया जाता है। धान मार्च से अगस्त तक बोया जाता है और सितम्बर—अक्टूबर में काटा जाता है।

रागी, मंडुवा, कंगनी के उगाने में केवल २०० वर्गमील भूमि घिरी है।

कपास की खेती प्रान्त में बढ़ रही है। १८०० वर्ग मील भूमि कपास उगाने के काम आती है। मार्च से जुलाई तक कपास बोई जाती है। अक्टूबर से दिसम्बर तक इसके टेंटों की चुनाई होती रहती है। कपास के अधिकतर खेत सींच दिये जाते हैं। कई कस्बों में कपास ओटने के कारखाने हैं १० सेर कपास में ३ सेर अच्छी रुई निकलती है।

कपास प्राय: छोटे रेशे की होती है। पर इसकी बड़ी मांग है। सरसों, तिल, आदि तिलहन १२०० वर्ग मील भूमि घेरे हुये हैं। सरसों को रवी की फसल और तिल खरीफ की फसल के साथ बोते हैं।

अदरख और लाल मिर्च को बोने में प्रान्त की ४० वर्ग मील भूमि लगी हुई है। अदरख पहाड़ी भागों में और लाल मिर्च मैदानी जिलों में बोते हैं।

सन या सनई रस्सा बनाने के काम आती है। प्राय ८० वर्ग मील भूमि सन बोने के काम आती है।

ईख रोहतक, कर्नाल, जालनन्धर, होशियारपुर, अमृतसर, गुरदासपुर, स्यालकोट, गुजरानवाला और झंग जिलों में बोई जाती है। प्रान्त की प्राय: ६०० वर्ग मील भूमि गन्ना या ईख उगाने के काम आती है। प्राय: ८० प्रतिशत खेत सींचे जाते हैं। ईख के खेतों की जुताई फर्वरी मास से आरम्भ हो जाती है। मार्च अप्रैल में गन्ने के टुकड़े गाड़ दिये जाते हैं दिसम्बर मास से ईख काटी जाती हैं। इस प्रकार ईख की फसल प्राय: एक वर्ष ले लेती है।

किसान लोग प्राय: हर जिले में अपने पीने के लिये तम्बाकू उगाते हैं। तम्बाकू मार्च में बोई जाती है और जून में काटी जाती है। तम्बाकू के छोटे खेत प्राय: गांव के पास होते हैं। इनमें खूब खाद दी जाती है। प्रान्त को प्राय: ८० वर्ग मील भूमि तम्बाकू के खेतों से घिरी है।

नील की खेती बहुत कम हो गई है। इस समय ८० वर्ग मील से अधिक भूमि नील की खेती में नहीं लगी है। अधिकतर नील मुल्तान और मुजफ्फरगढ़ में होता है।

पोस्ता या अफीम की खेती और भी कम हो गई है। प्राय: २० वर्ग मील भूमि पोस्त उगाने के काम आती है। सितम्बर से जनवरी मास तक बोया जाता है। अप्रैल मई में इसकी बोड़ी (फली) से दूध या रस निकालकर इकट्ठा करते हैं।

चाय पहाड़ी प्रदेश (कांगड़ा) शिमला जिलों और मंडी और सिरमौर के पहाड़ी राज्यों में होती है। कांगड़ा में ११२ चाय के बगीचे हैं। यह प्राय: १६ वर्ग मील क्षेत्रफल घेरे हुये है। इनमें एक तिहाई बगीचे गोरे लोगों के हाथ में है। प्रति वर्ष इन बगीचों से १० लाख पौंड चाय (पत्तियाँ) बाहर भेजी जाती है।

जिन गांव के खेतों में बहुत अधिक खाद मिल जाती है। उनमें मूली गाजर, आलू, चुकन्दर आदि तरकारियां उगाते हैं। प्राय: ६०० वर्ग मील भूमि तरकारियों के उगाने के काम आती है। कांगड़ा और शिमला के पहाड़ी आलू बहुत प्रसिद्ध हैं। आम के बगीचे थोड़े बहुत कई जिलों में है। पर होशियारपुर जालन्धर मुल्तान और मुजफ्फरगढ़ जिलों में आम के बगीचों से बड़ा लाभ होता है। मुल्तान और मुजफ्फरगढ़ में खजूर भी बहुत होता है।

डेरागाज़ी खां में भी खजूर बहुत होते हैं। सब मिलाकर प्रान्त में १५ लाख से ऊपर खजूर हैं। इनसे प्रतिवर्ष १० लाख मन खजूर मिलता है। यह उत्तरी भारत में ही खर्च हो जाता है और दूसरे भागों को नहीं पहुँचने पाता है। कुलू से नाशपाती, सेब, और दूसरे विलायती फल बाहर भेजे जाते हैं।

पंजाब में फसलें अदल बदल कर बोई जाती है। मक्का, नील, या सन की फसल उगाने के बाद उसी खेत में गेहूँ बोया जाता है। ज्वार काट लेने पर मसूर या चना बोते हैं। धान के खेत में फसल कट जाने पर मसूर, मटर और जौ बोते हैं। कपास के खेत में दूसरे वर्ष मक्का बोते हैं। अंग्रेज़ों के अधिकार में आजाने के बाद पञ्जाब में आलू, चाय और विलायती फल उगाये जाने लगे।

लायलपुर का कृषि कालेज और अनुसन्धान तथा प्रयोगशाला प्रान्त में कृषि की उन्नति में सहायता देता है और शिक्षक तथा शिक्षित किसान तयार करता है।

पञ्जाब में कई नस्ल की गाय होती हैं। हिमालय प्रदेश में पहाड़ी गाय हैं। यह कद में छोटी होती है। इन का रंग प्रायः धुंधला होता है। अधिक ऊँचाई पर काली या लाल गाय मिलती है। धन्नी या साल्टरेंज (नमक के पहाड़) की गाय क़द में इसी तरह की होती हैं। इसका रंग कुछ सफेद होता है। मैदानी जिलों में मांटगोमरी, मालवा, हरियाना और अच्छी नसल बहुत प्रसिद्ध हैं। पञ्जाब के दक्षिणी (हिसार, रोहतक, गुरगांव, कर्नाल) जिलों के गाय, बैल बहुत प्रसिद्ध हैं। इन्हीं जिलों के सांड़ और बैल दूसरे जिलों में जाते हैं। पहले पञ्जाब में जंगली भैंसे मिलते थे। आज कल यहां पालतू भैंस बड़ी कीमती होती है। अच्छी भैंस पचीस या तीस सेर दूध देती हैं। भैंस के दूध में गाय की अपेक्षा घी अधिक निकलता है। इनके चमड़े और हड्डियों से भी लाभ होता है। हड्डियां बाहर भेज दी जाती हैं। अमृतसर, जेहाजगढ़, (रोहतक) गुलशाह, (स्यालकोट) हिसार में गाय, बैल और भैंस की बिक्री के मेले लगते हैं। बलोच या धन्नी घोड़े प्रान्त भर में प्रसिद्ध हैं। सरगोधा (शाहपुर जिला) डेरागाज़ी खां, रावलपिंडी, गुजरात, अमृतसर, मुल्तान और जलालाबाद (फीरोजपुर जिला) में घोड़ों को बेचने के लिये मेले लगते हैं।

दक्षिणी-पश्चिमी पञ्जाब में भेड़ें बहुत पाली जाती हैं। इनके ऊन से बड़ा लाभ होता है। दुम्बा या मोटी दुम (पूंछ) वाली भेड़ साल्टरेंज के प्रदेश में पाली जाती हैं। हिमालय की भेड़ों की ऊन विलायती ऊन की तरह होती है। खादू भेड़ सर्वोत्तम गिनी जाती है बकरियां दूध के लिये पाली जाती हैं। इनके बाल से भी रस्सी या ऊनी कपड़ा बनाये जाते हैं। ऊँट पञ्जाब के समस्त मैदानी भाग में पाये जाते हैं। पर दक्षिणी-पश्चिमी भाग में यह सबसे अधिक हैं। सवारी करने, बोझा ढोने और हल जोतने के काम आते हैं। अबोहर और भिवानी (हिसार) में ऊँटों की बिक्री के लिये मेले लगते हैं। गधे रावलपिंडी और चनाब के पश्चिम की ओर वाले जिलों में अच्छे होते हैं। कई जिलों में विदेशों से आये हुये गधों की सहायता से खच्चर तयार किये जाते हैं।

हिमालय के पहाड़ी प्रदेश में उत्तरी कागज़ की पहाड़ियों में सुरागाय (याक) पाली जाती हैं। ग्रीष्म ऋतु में यह १७,००० फुट की उंचाई तक चढ़ जाती हैं। शीत काल में यह ८००० फुट की उंचाई पर चरती है। हिमालय के ऊंचे भागों में नर याक हल जोतने और बोझा ढोने के काम आते हैं। निचली पहाड़ियों पर दोगले याक मिलते हैं।

वन—पंजाब के मैदानी भाग में सूखे जंगल हैं। इनमें कीकर या बबूल, फराश, करील आदि के पेड़ पाये जाते हैं। इस प्रकार के पेड़ लाहोर, मांटगोमरी, मुल्तान, चनाब, झेलम और शाहपुर से सूखे भागों में मिलते हैं। इस प्रकार के जंगलों से पंजाब की ४००० वर्ग मील ज़मीन घिरी है। पंजाब के मध्यवर्ती भाग में ढाक का बन फैला हुआ है। हिमालय के निचले भागों में पतझड़ वाले पेड़ पाये जाते हैं। नदियों, सड़कों और नहरों के किनारों पर शीशम के पेड़ मिलते हैं। अम्बाला के कलेसर भाग में साल का बन है। सिरमौर राज्य और कांगड़ा के समीप वाले भागों में भी साल के पेड़ पाये जाते हैं। सालटरेंज और काला चिट्टा के

कुछ भाग खुले हुये वन से ढके हैं। यहां एक प्रकार का जैतून और फुलाही का पेड़ बहुत होता है।

पहाड़ियों में ३००० फुट की उंचाई तक बांस और कांटेदार झाड़ियां होती हैं। कांगड़ा के बांस के वन बहुत प्रसिद्ध हैं। ढाई हजार से ५ हजार फुट की उंचाई तक चील देवदार होता है। कांगड़ा मरी और कहौता (रावलपिंडी जिला) में यही वन मिलता है। कुलू, बशहर और सिर मौर के निचले भागों में यही वन है। असली देवदार ५००० और ८००० फुट के बीच वाले भागों में मिलता है। पार्वती घाटी और व्यास की सहायक नदियों के उद्गम के पास इसी प्रकार वन है। रावी के दोनों ओर चम्बा में, चनाव के किनारे पंगी में सतलज यमुना की सहायक नदियों के समीप बशहर और जब्बाल में देवदारू का वन है। ८००० से ऊपर ९००० से और १२५०० फुट की उंचाई तक पत्ती छोड़ने वाले कई प्रकार के पहाड़ी पेड़ मिलते हैं। इसके आगे वृक्ष की सीमा समाप्त हो जाती है। यहां शीतकाल में बरफ और ग्रीष्म में घास मिलती है। इस घास को चराने के लिये पहाड़ी ग्वाले अपनी गाय और गड़रिये भेड़ें देवदार को नियन्त्रण वन-विभाग के हाथ में है। इनके आदेशानुसार प्रति वर्ष प्रायः ७१४० पेड़ काटे जाते हैं। इनके लट्ठे नदियों द्वारा बहाकर नीचे लाये जाते हैं यहां कुछ रेलवे सलीपरों के लिये रेलवे को बेंच दिये जाते हैं। कुछ सर्व साधारण के हाथ बेंच दिये जाते हैं। कांगड़ा के चील के वनों से वार्निश के लिये राल (रेजिन) इकट्ठी की जाती है। लकड़ी की बिक्री और चरागाहों से भी आमदनी होती है। बांस भी प्रति वर्ष बिक जाते हैं। इनसे २५००० रुपये से ऊपर वार्षिक आय होती है। मैदान की सूखी लकड़ी जलाने के काम आती है। लाहोर जिले के चंगा मंगा स्थान में ८८७२ एकड़ भूमि में शीशम और शहतूत के पेड़ लगाये गये हैं। शाहदरा जलन्धर, लुधियाना और जगाधरी में भी शीशम के पेड़ लगाये गये हैं।

ग्रीष्म ऋतु में वन में कभी कभी आग लगने से बड़ी हानि हो जाती है। फिर भी सब खर्च निकाल कर वन से पंजाब की सरकार को प्रायः १० लाख रुपये की वार्षिक आय होती है।

कला-कौशल

सूत कातना पञ्जाब प्रान्त का एक बड़ा घरेलू धन्धा है। प्रायः प्रत्येक बड़े उत्सव में हाथ से कपड़ा बुन लिया जाता है। १९०१ ई० की मनुष्य गणना में यहां ८ लाख जुलाहे थे। इनमें सवा तीन लाख मनुष्य बुनने का काम करते थे। शेष उनके आश्रित थे। यहां मोटा मजबूत खद्दर और गाढ़ा बहुत बुना जाता है। बढ़िया बारीक कपड़ा बहुत कम बुना जाता है। रोहतक की तंजेब, लुधियाना की गब्रून, मुल्तान और शाहपुर की लुंगी, गुरदास पुर की गर्बी प्रसिद्ध है। गर्बी में एक धागा सूत का और दूसरा ऊन का रहता है। जलन्धर की घाटी या बुलबुल चश्म प्रसिद्ध है। लाहौर और अम्बाला में दरी और शतरंजी बुनी जाती है। मुल्तान की सूती कालीनें भी प्रसिद्ध हैं। खेस और दुसूती बुनने का काम कई स्थानों में होता है।

कपड़ा रंगने का काम कई स्थानों में होता है। रंगाई के लिये कोट कमालिया सुल्तानपुर और लाहोर अधिक प्रसिद्ध है। छपाई का काम हाथ से लकड़ी के ठप्पों की सहायता से किया जाता है। यहां का छपा हुआ कुछ कपड़ा योरुप और अमरीका को भी जाता है।

मैदान में जो भेड़ें पाली जाती हैं उनकी ऊन से कम्बल और कालीनें बुनी जाती हैं। डेरा गाजी खां और भेड़ा में रंगीन नमदा तैयार किया जाता है। हिसार और पश्चिमी जिलों की ऊन बड़ी बढ़िया होती है। धारी वाल के ऊनी कारखाने के लिये कुछ ऊन आस्ट्रेलिया से आती है। भूटिया बकरी की चश्म, काश्मीर, कुलू और बशहर के मार्ग से आती है। इससे लुधियाना, शिमला, कांगड़ा, अमृतसर और गुजरात के कारीगर बढ़िया ऊनी कपड़ा तयार

करते हैं। यह कारबार उन्नीसवीं शताब्दी से आरम्भ होता है, इस समय कुछ काश्मीरी कारीगर अकाल से वाध्य होकर काश्मीर से पंजाब में आ गये। कुछ भागों में बकरी के मोटे बालों और ऊंट के बालों से रस्सी और कम्बल और बोरी तयार की जाती हैं।

कच्चा रेशम चीन से आता है। पंजाब में रेशमी कपड़ा बुनने के प्रसिद्ध स्थान अमृतसर, लाहौर, पटियाला, बटाला, मुल्तान, बहावलपुर, और जालन्धर हैं। इन कपड़ों में कुछ कपड़े शुद्ध रेशम के होते हैं। कुछ में ऊन और सूत मिलाकर बुनते हैं कुछ में रेशमी धागे से सूती या रेशमी कपड़ों की किनारी काढ़ी जाती है। इन स्थानों के साफा और लुंगी बहुत प्रसिद्ध हैं। फूलकारी का काम कई जिलों में अच्छा होता है। टोपी, जूता, बेल्ट, साफा आदि में गोटे का काम होता है। अमृतसर की कालीनें प्रसिद्ध हैं। अच्छी कालीनें पश्म से बुनी जाती हैं।

पंजाबी स्त्रियों को जेवर पहनने का बड़ा शौक है। कहा जाता है अकेले अमृतसर शहर में १ करोड़ से अधिक मूल्य के जवाहिरात हैं। प्रान्त में सोना चाँदी का जेवर बनाने वाले सुनारों की संख्या लुहारों की संख्या से कहीं अधिक है। सोने के आभूषण केवल अधिक धनी घरों में विशेष अवसरों पर पहने जाते हैं। साधारण स्थिति की स्त्रियां चांदी के आभूषण बराबर पहने रहती हैं। साधारण आभूषण सभी नगरों में बनते हैं। बढ़िया आभूषण अमृतसर में बनते हैं।

लोहा गलाने और साफ़ करने का काम कांगड़ा और शिमला जिलों में होता है। बहुत सा लोहा बाहर से आता है। पहले लाहौर में बढ़िया हथियार बहुत बनते थे। गदर के बाद यह कला लुप्त हो गई। गुजरात वाला, भेड़ा (शाहपुर) में चाकू, कैंची आदि सामान बनता है। स्यालकोट आदि गुजरात जिलों में लोहे के सामान पर सुनहला तार चढ़ाने का काम होता है। खेती के औज़ार प्राय: सभी गांवों में लुहार बनाते हैं। लाहौर में रेलवे वर्कशाप के खुल जाने से लोहे का कारबार बहुत उन्नत हो गया है। बटाला में कुट्टी काटने की मशीनें बहुत बनाई जाती हैं।

पहले कूलू की पहाड़ियों और हिमालय के कुछ स्थानों में कच्चा तांबा और जस्ता बहुत निकाला जाता था। कुछ तांबा काबुल से आता था। फिर विलायती तांबा इतना सस्ता आने लगा कि देशी तांबे की मांग एकदम बन्द हो गई। अब भी हाल में इन खदानों के खुलने की कोई आशा नहीं है। तांबे और पीतल के बर्तन प्राय: चद्दरों को कूटकर बनाये जाते हैं। कुछ ढाले जाते हैं। रिवाड़ी, जगाधरी, पानीपत गुजरानवाला, अमृतसर, पिंडदादना खां और पसरूर (स्याल कोट) पीतल और तांबे के बर्तन बनाने के प्रधान केन्द्र हैं।

साधारण मिट्टी के बर्तन प्रान्त के प्राय: सभी स्थानों में बनते हैं। अच्छे बर्तन, झज्जर, पानीपत, जालन्धर और टांडा में बनते हैं। चमकीले चिकने मिट्टी के बर्तन मुल्तान में बनते हैं। पहले यहां अच्छे खपरैल ही बनते थे। अब फूलदान, गमले आदि कई तरह के सामान बनने लगे हैं। चीनी मिट्टी के बर्तन हिमालय के कुछ स्थानों में बनते हैं। शीशे की चूड़ियां प्रान्त के कई स्थानों में बनती हैं। बोतल, गिलास, दर्पण, चिमनी, आदि शीशे का सामान कर्नाल, कांगड़ा, होशियारपुर और लाहौर में बनता है।

लकड़ी पर नकाशी करने का काम प्रान्त में बहुत पुराना है। पहाड़ी भागों में कई प्रकार का लकड़ी का काम होता है। जो लकड़ी का काम मैदान में होता है उसकी तीन शैलियां हैं। हिन्दू शैली बहुत पुरानी है। दूसरी शैली मुसलमानी है। तीसरी सिक्ख शैली है।

पच्चीकारी का काम प्रान्त में शायद अरब से मुसलमानों के साथ आया। होशियार पुर और चिनिओट इसके प्रधान केन्द्र हैं। कलमदान, छड़ी, छोटी चौकी आदि बड़ी बढ़िया होती है। यह शीशम की लकड़ी की बनाई जाती है फिर इन पर हाथी दांत या पीतल की सुन्दर जड़ाई कर दी जाती है। पाकपट्टन और फीरोज़पुर में लकड़ी की रंगाई और लाख का काम अच्छा होता है। मेज़, कुर्सी,

आल्मारो आदि नये ढंग का सामान पंजाब के प्राय: सभी बड़े नगरों में बनने लगा है।

हाथी दांत का बढ़िया काम अमृतसर और पटियाला में होता है। अमृतसर में कंघे बहुत बनते हैं। हाथी दांत की चूड़ियां गुजरान वाला, मुल्तान और लाहोर में बनती हैं। लुधियाना में बिलियार्ड खेलने की गेंदें बनती हैं।

हाथ से कागज़ बनाने का काम आज कल प्राय: जेलों में ही होता है। मुगल और सिक्ख शासन-काल में स्यालकोट का कागज़ बहुत प्रसिद्ध था। चटाई, रस्सी, टोकरी आदि बनाने का काम प्रान्त के प्राय: सभी स्थानों में होता है।

धारीवाल में इजर्टन वुलेन मिल १८८० ई० में योरुपीय पूंजी और योरुपीय देख भाल में १२ लाख रुपये से आरम्भ हुई यह प्रान्त भर में सब से बड़ा ऊनी कारखाना है। यहाँ का बना हुआ ऊनी सामान प्रान्त के बाहर भी बिकता है। यहां लोई, शाल, कम्बल, मोजे, कती हुई ऊनी लच्छी आदि सभी प्रकार का ऊनी सामा । तयार होता है।

पञ्जाब प्रान्त में कालीन का कारबार

पंजाब प्रान्त में कालीनों के कारबार का प्रधान केन्द्र अमृतसर है नई दिल्ली में वायसराय के भवन और पंजाब प्रान्त के गवर्नर की कोठी को अमृतसर की बनी हुई कालीनें ही सुशोभित करती हैं। अमरीका और इंगलैंड के बड़े बड़े भवनों को सजाने का श्रेय अमृतसर की कालीनों को ही प्राप्त है।

कालीन बनाने का आरम्भ सम्भवत: पहले पहल मिस्र देश में हुआ। यहां प्राचीन मिस्री लोग अपने धार्मिक संस्कारों में कालीनों के आसनों का प्रयोग करने लगे। प्राचीन बेबिलोनियन लोग अपनी कालीनों में मनुष्य देवी देवताओं और भीषण पशुओं के चित्र बुनने लगे। यहां की बनी हुई कालीनें रोम और भूनान में पहुँचने लगीं। बेबिलान से ३० मील की दूरी पर स्थित बगदाद में असीरियन कला से पूर्ण कालीनें बनने लगीं। फारस में कालीनों के प्रसिद्ध कारबार की नींव यहीं से पड़ी। शाह अब्बास (१५८२ से १६२८ तक) के शासनकाल में फारस में कालीनों की कला अपनी उन्नति के शिखर पर पहुँच गई। स्पेन और इटली में भी इस कारबार का प्रवेश हुआ। इसी समय मुगल साम्राज्य के साथ भारतवर्ष में ईरानी ढांचे पर कालीनों के कारबार का प्रवेश हुआ।

काश्मीर में मध्य एशिया से आने वाले कारीगरों ने १४२३ ई० में ही कालीन बुनने का काम आरम्भ कर दिया था। सम्राट अकबर ने कालीनों के काम को बड़ा प्रोत्साहन दिया। मुगलों के पहले कालीन बुनने की कला भारतवर्ष में अधिक उन्नत न थी। खम्भात में कालीन बुनने का काम पहले भी होता था। मुगल काल में आगरा, फतेहपुर और लाहोर कालीन बुनने के प्रधान केन्द्र थे। शाहजहां के समय में इस कला ने बड़ी उन्नति की। १६३४ ई० में गर्डलर्स की कम्पिनी को एक कालीन भेंट का गई जो इस समय भी लन्दन में गर्डलर्स हाल विशाल कमरे को सुशोभित करती है। यह कालीन ईरानी ढंग पर लाहोर के शाही कारखाने में बनी थी।

व्यापार

पंजाब प्रान्त का सर्व प्रधान निर्यात गेहूँ है। प्रति वर्ष प्राय: १० लाख टन गेहूँ बाहर भेजा जाता है। इसी से पंजाब को सब से अधिक आय होती है। पहले यह गेहूँ अधिकतर योरुप को जाता था। युद्ध काल में यह सोना के काम आने लगा। आज कल देश में अन्न की इतनी कमी है कि यह यहीं खर्च हो जाता है फिर भी मांग पूरी नहीं हो पाती है। गेहूँ और कपास के बाद दूसरा स्थान रुई का है। दूसरे अन्न भी बाहर जाते हैं।

बाहर से आने वाले सामान (आयात) में प्रथम स्थान सूती कपड़े का है। पहले प्राय: ३ करोड़ रुपये का विलायती कपड़ा यहां खप जाता था। फिर देशी कपड़े की मात्रा बढ़ने लगी। आज कल विलायती कपड़ा शायद ही कहीं मिलता है। देशी मिलों और खद्दर से ही प्रान्त का काम किसी तरह चल जाता है। कपड़े के बाद फिर लोहे और फौलाद का सामान शक्कर, ऊनी कपड़ा और ऊन, बोरे टाट, रंग, चमड़ा कमाने का मसाला और शराब भी बाहर से आती हैं। दुर्भिक्ष के समय यहां गेहूँ और चना भी बाहर से आता है।

गेहूँ, के व्यापार से रोहतक, कैथल, भटिंडा और अबोहर की मंडियां प्रसिद्ध हो गईं। चनाब कलोनी में गोजरा, लायलपुर, साँगला चिनिओट रोड तो बाटेक सिंह प्रसिद्ध व्यापारिक केन्द्र हो गये। फीरोजपुर का व्यापार कसूर ने छीन लिया। बाहर से आने वाले सामान को प्रान्त में वितरण करने के लिये लाहोर, अमृतसर, मुल्तान और दिल्ली प्रमुख नगर हैं। आज कल दिल्ली इस प्रान्त के बाहर है।

मध्य वर्ती और उत्तर पंजाब का व्यापार खत्री लोगों के हाथ में है। पूर्वी भाग में बनिया और पश्चिमी भाग में आरोड़ा व्यापार को लिये हुये हैं। गांव का व्यापारी गांव का माल इकट्ठा करके मंडी में बेचने को ले जाता है और बाहर का सामान मंडी से लाकर अपनी दुकान पर बेचने के लिये रखता है। बहुत से किसान खेती का काम न रहने पर अपनी बैलगाड़ियों में गेहूँ अथवा दूसरी उपज को लाद कर सीधे स्वयं ही मंडी को ले जाते हैं। कुछ लोग अपना सामान सीधे स्टेशन ले जाते हैं। इससे वे म्यूनिसिपेलिटी की चुंगी से भी बच जाते हैं। प्रान्त का अधिकतर ९० प्रतिशत से ऊपर) व्यापार रेल द्वारा होता है। कुछ व्यापार नाव द्वारा होता है। बाहरी व्यापार का प्रधान बन्दरगाह कराची हैं। कराची द्वारा प्रान्त का प्राय: ६० प्रतिशत व्यापार होता है। ३० प्रतिशत व्यापार कलकत्ता और बम्बई के बन्दरगाहों से होता है। कराची बन्दरगाह को गेहूँ, कपास, तिलहन, चमड़ा, ऊन और कुछ मोटे अन्न जाते हैं। उधर से ऊनी सूती कपड़े, शक्कर, धातु का सामान, रेलवे इंजिन और रेल का दूसरा सामान आता है। बम्बई को रुई बहुत जाती है। और बम्बई से रेशम चाय और तम्बाकू आती है। चमड़ा, खाल, रंग और चमड़ा कमाने का मसाला कलकत्ते को जाता है। कलकत्ते से ऊनी सूती कपड़ा और जूट आता है। संयुक्त प्रान्त को गेहूँ, ऊनी सूती कपड़ा जाता है उधर से बंगाल का कोयला, शक्कर, घी, चना और दाल आती है। काश्मीर का व्यापार रेल द्वारा होता है। कुछ सीधा सड़क के मार्ग से होता है। यह सीधा व्यापार गुरुदासपुर, स्यालकोट, गुजरात, झेलम, और रावलपिंडी जिलों से होता है। यही जिले काश्मीर से आने वाली सड़कों के सिरों पर स्थित हैं। कुछ दूर तक रेल से भी सहायता ली जाती है। लद्दाख का व्यापार या तो काश्मीर होकर आता है या बारा लाचा दर्रे होकर सीधा कुलू (कांगड़ा) आता है। काश्मीर से चावल, घी, लकड़ी, तिलहन, ऊनी कपड़े, कच्चा रेशम, चमड़ा और फल आते हैं। काश्मीर को पंजाब से सूती कपड़े गेहूँ, धातु का सामान, चाय, शक्कर, नमक और तम्बाकू जाती है। लद्दाख से अधिकतर चरस, सुहागा और टट्टू आते हैं। लद्दाख को धातु का सामान और सूती कपड़े जाते हैं। भारत वर्ष की सीमा के बाहर पंजाब का व्यापार अधिक नहीं है। कुछ व्यापार चीन और तिब्बत से होता है। कुछ व्यापार डेरागाजी खां के मार्ग से काबुल (अफ़गानिस्तान) से होता है। चीन

और तिब्बत का व्यापार हिन्दुस्तान तिब्बत सड़क से शिमला आता है अथवा लद्दाख होकर कूलू को आता है अथवा स्पिती के मार्ग से आता है। ऊन और सुहागा प्रधान आयात है। सूती कपड़ा और धातु का सामान निर्यात है। काबुल से मेवा, ऊन और घी आता है। कपड़ा, चावल, चमड़ा और चीनी काबुल को जाती है। काबुल से जो व्यापार सीधे प्रधान मार्ग होकर अथवा, तीराह, स्वात, दीर, बाजौर, और बुनेर द्वारा होता है उसका लेखा सीमा प्रान्त में रक्खा जाता है।

आने जाने के मार्ग

पंजाब प्रान्त में रेलवे लाइनें अच्छी संख्या में फैली हुई हैं। प्रान्त का स्वाभाविक बन्दरगाह कराची है जो सिन्ध प्रान्त में सिन्ध के मुहानों के पास स्थित है। कराची से नार्थ वेस्टर्न रेलवे की बड़ी लाइन लाहोर को आती है। दूसरी लाइन कराची से दिल्ली को आती है। छोटी लाइन रिवाड़ी और मेड़ता रोड जंकशन होती हुई नार्थ वेस्टर्न रेलवे से मिल जाती है। दक्षिणी पंजाब की बड़ी लाइन समरसाटा के पास कराची लाइन से मिल जाती है। कराची से एक लाइन मैकलिओड गंज और फीरोज पुर होती हुई लुधियाना से मिल जाती है। प्रान्त का उत्तरी पश्चिमी कोना कई शाखा लाइनों द्वारा प्रधान कराची लाइन से जुड़ा हुआ है। एक शाखा लाइन कैम्बेलपुर के पास फूटती है। एक गोलारा से आती है। एक लाला मूसा से आती है। तीनों लाइन कुन्दियान के पास मिल जाती है। कुन्दियान से नार्थ वेस्टर्न रेलवे की सिन्धसागर (द्वाब) शाखा सिन्ध नदी के पूर्वी किनारे से चलती है और शेरशाह के पास प्रधान लाइन से मिल जाती है। वजीराबाद—खानेवाल लाइन लायलपुर और शोरकोट होती हुई मुल्तान के आगे कराची लाइन से मिल जाती है। यह लाइन रचना द्वाब में चनाब कलोन की उपज को कराची पहुँचाती है जच द्वाब की लाइन सिन्ध सागर द्वाब की मलकवाल स्टेशन से आरम्भ होती है और वजीराबाद खानेवाल लाइन की शोरकोट स्टेशन पर समाप्त हो जाती है। एक छोटी लाइन लाहोर से ३ मील उत्तर की ओर शाहदरा से सांगलाहिल को जाती है।

प्रान्त के पूर्वी भाग में रेलवे लाइनों का और भी घना जाल बिछा हुआ है। इनमें दिल्ली—अम्बाला कालका, शिमला लाइन गरमी की ऋतु में सरकारी दफ्तरों को शिमला पहाड़ी पर पहुँचाने में बड़ी सहायता करती है। कालका शिमला लाइन बहुत छोटी है।

राजपुर भटिंडा—भटिंडा, फीरोजपुर, और लुधियाना धुरी जाखल लाइनें भी बड़े काम की हैं। रिवाड़ी भटिंडा—फाजिल्का लाइन छोटी मीरगेज है और बीबी एण्ड सी० आई लाइन से मिलाती है।

एक छोटी साखा लाइन मलकवाल से खेवड़ा की नमक की खानों को जाती है। एक शाखा महमूद कोट से गाजी घाट को जाती है। यहीं से डेरा गाजी खां पहुँचना सुगम है। वजीरा बाद से एक शाखा लाइन स्यालकोट होती हुई जम्मू (तावी) को चली गई है। अमृतसर से एक लाइन बटाला होती हुई। पठानकोट को गई है। पठानकोट से एक लाइन बैजनाथ पपरोला होती हुई जोगीन्द्र नगर को गई है। अमृतसर से एक लाइन कसूर, पाक पट्टन होती हुई लोधरान को गई है।

जलन्धर से एक लाइन होशियार पुर को एक लाइन नकोदर को, एक लाइन मुकरियान को और एक लाइन नवा शहर द्वावा होती हुई जाजोन द्वावा को चली गई है। फीरोज पुर से एक लाइन जलन्धर को एक मैकाली ओड गंज को जाती है। फीरोजपुर से एक लाइन लुधियाना को जाती है। लुधियाना से एक लाइन धुरी जाखल होती हुई हिसार को जाती है। लुधियाना से एक फिल्लोर और नकोदर होती हुई लोहियान खास को जाती है। एक लाइन सरहिन्द से रूपड़ को जाती है एक लाइन रोहतक से झींद को जाती है। एक लाइन भटिंडा से राजपुरा को जाती है। एक लाइन नरवाना से कुरुक्षेत्र को

जाती है। एक लाइन लायलपुरसे सरगोधा होती हुई खुशाब को जाती है।

एक प्रधान लाइन दिल्ली से सहारनपुर होती हुई जगाधरी और अम्बाला आती है और राजपुरा, सर हिन्द, लुधियाना, जलन्धर, अमृतसर, लाहोर, वजीराबाद, लाला मूसा, झेलम रावलपिंडी, तक्षशिला, कैम्पबेल पुर और अटक को जाती है। यहां यह सिन्ध नदी को पुल के ऊपर से पार कर के सीमा प्रान्त होती हुई खैबर दर्रे तक चली जाती है। दिल्ली से एक लाइन पानीपत, कुरुक्षेत्र होती हुई अम्बाला को आती है। अम्बाला से प्रधान लाइन लुधियाना को जाती है। शाखा लाइन कालका और शिमला को चली गई है। सहारनपुर से लाहोर को आने वाली प्रधान लाइन पर इतनी भीड़ रहती है कि यह लाइन दुहरी बना दी गई है। जो लाइन लाहोर से वेविन्य मान्ट गोमरी होती हुई खानेवाल को आती है वे भी रैविन्द तक दुहरी है।

१८६२ ई० में अमृतसर से लाहोर तक लाइन बनी। प्रान्त की यही रेलवे लाइन सब से अधिक पुरानी है। १८६२ ई० में लाहोर और मुल्तान के बीच की रेलवे लाइन बनी। १८७८ ई० में यह लाइन उत्तर पश्चिम की ओर बढ़ी। १८८३ ई० में पेशावर तक पूरी हो गई इस प्रकार रेल द्वारा बम्बई और कलकत्ता बन्दरगाह पंजाब प्रान्त से जुड़ गये। इसी बीच में अमृतसर और रिवाड़ी नगर रेल द्वारा दिल्ली से जोड़ दिये गये। १८९१ में प्रान्त में रेलवे लाइनों की समस्त लम्बाई लगभग २००० मील थी। आज कल यह लम्बाई ३००० मील से कहीं अधिक ऊपर है। इससे प्रायः ३००० मील बड़ी (ब्राडगेज) लाइन, ४०० मील मीटर गेज लाइन और २०० मील नेरोगेज (अति छोटी) लाइन है। राजपुराभटिंडा रेलवे पटियाला राज्य के रुपये से बनी। लुधियाना धुरी जाखल लाइन में मलेर कोटला और जींद राज्यों का धन लगा। जम्मू काश्मीर रेलवे काश्मीर राज्य के धन से बनी। पर इन सब रेलवे लाइनों का प्रबन्ध नार्थ वेस्टर्न रेलवे को सौंप दिया गया। १९०७ ई० की १ जनवरी से कालका शिमला रेलवे का प्रबन्ध नार्थवेस्टर्न रेलवे को मिला है।

डेरागाज़ी खां, कांगड़ा और होशियारपुर जिलों के भीतरी पहाड़ी भागों को छोड़कर पंजाब के शेष सभी जिलों में रेलवे लाइन है। औसत से प्रति ४० वर्ग मील क्षेत्रफल में २ मील लम्बी रेलवे लाइन है। नार्थवेस्टर्न रेलवे प्रधानतः सैनिक महत्व की रेलवे है। यह संकट के समय उत्तरी पश्चिमी सीमा तक सेना और सैनिक सामग्री पहुँचाने के लिये बनाई गई। इसी लिये यह लाइन बहुत घाटे से चली। नहरों के खुल जाने से गेहूँ, तिलहन और कपास की उपज पहले से कहीं अधिक बढ़ गई। इन चीजों को कराची बन्दरगाह तक पहुँचाने में यह लाइन बड़ी सहायता देती है।

पंजाब की प्रधान सड़क ग्रांडट्रंक सड़क है। यह कलकत्ते से दिल्ली को आती है। दिल्ली से आगे यह पंजाब प्रान्त में प्रवेश करती है। और करनाल, अम्बाला, लुधियाना, जलन्धर, अमृतसर, लाहोर, झेलम, रावलपिन्डी, अटक होती हुई सिन्ध नदी को पार कर के सीमा प्रान्त में पेशावर को चली जाती है। इस ओर इसकी लम्बाई ५८० मील है। यह सब कहीं पक्की है। इसके मार्ग में नदी नालों के ऊपर पुल बने हैं। लुधियाना से कर्नाल तक यह सड़क १८५२ ई० में बनी। फिल्लौर से व्यास नदी तक सड़क १८६०-६१ में पूरी हुई लेकिन व्यास से लाहोर तक सड़क का भाग १८५३ में पूरा हो गया। लाहोर से पेशावर तक सड़क १८६३-६४ में पूरी हुई। यह सड़क रेलवे के प्रायः समानान्तर चलती है इस पर बैल गाड़ियां और लारियां बराबर चलती रहती हैं प्रान्त की दूसरी सड़कें रेलवे स्टेशनों तक बनी हैं और रेल से सामान और मुसाफिरों को रेलवे से दूर स्थित स्थानों तक पहुँचाने के लिये बनाई गई हैं। उत्तर की ओर हिन्दुस्तान तिब्बत सड़क प्रधान हैं। यह चीन प्रजातन्त्र की सीमा के पास शिपकी दर्रे से चलती है और रेलवे की अन्तिम स्टेशन शिमला और कालका तक चली आती है। कांगड़ा घाटी की सड़क पहाड़ी भाग की चाय और दूसरा पहाड़ी सामान पठान कोट स्टेशन तक पहुँचा देती है।

एक सड़क डल हौजी-से पठान कोट को आती है। जो सड़क रावलपिण्डी से मरी को जाती है वही आगे बढ़कर काश्मीर को चली गई है। श्रीनगर और रावलपिण्डी के बीच में यही प्रधान राज मार्ग है।

लाहोर से एक सड़क चक्कर काटती हुई लाहौर से कसूर. फीरोजपुर होकर लुधियाना में फिर ग्रांडट्रंक रोड से मिल जाती है। दूसरी सड़कें छोटी हैं। और होशियारपुर कपूर्थला आदि स्थानों से रेलवे स्टेशनों तक आती है। फिर भी पक्की सड़कों की समस्त लम्बाई २ हजार मील से कुछ ही अधिक है। कच्ची सड़कें २१ हजार मील हैं। अधिकतर गांवों में देहाती लोग बैलगाड़ियों पर सामान लाद कर इन्हीं कच्ची सड़कों पर एक स्थान से दूसरे स्थान को ले जाते हैं। बैलगाड़ियां धीरे धीरे प्रायः २ मील प्रति घंटे की चाल से चलती हैं। दिन भर में वे पन्द्रह बीस मील चली जाती हैं। केवल पहाड़ी और रेगिस्तानी भागों में बैल गाड़ियों का चलना कठिन हो जाता है। रेगिस्तान (सिन्ध सागर द्वाब, साल्टरेंज, और बीकानेर के पास वाले भागों) में ऊँट और पहाड़ी भाग में टट्टू से काम लिया जाता है। अधिक ऊँचे पहाड़ी भागों में याक बड़ा उपयोगी होता है। वर्षा ऋतु में पञ्जाब की सभी नदियां नांव चलने योग्य हो जाती हैं। सिन्ध नदी में साल भर नावें चलती हैं झेलम, चनाब और सतलज के निचले भागों में साल भर नावें चल सकती हैं। सिन्ध को छोड़ कर पञ्जाब की सभी नदियों के मार्ग से इमारती लकड़ी के लट्ठे पहाड़ी भाग से पानी के ऊपर मैदान को बहा लाये जाते हैं। सिन्ध नदी के मार्ग से सिन्ध प्रान्त का बहुत सा व्यापार होता है। जहां रेलवे लाइन नदियों को पार करती है वहां पर नदियों के ऊपर पुल बने हैं। ग्रांडट्रंक रोड रावी झेलम और सिन्ध नदियों को रेलवे पुल के ऊपर से पार करती है। चनाब के ऊपर सड़क का पुल अलग है। खुशाल गढ़, डेरा इसमाइल खां और डेरा गाजी खां के पास सिन्ध नदी में नावों का पुल बना है। गरमी ऋतु में बाढ़ आने पर डेरा इस्माइल खां और डेरा गाजी खां में सिन्ध नदी में स्टीमर चला करते हैं।

जन संख्या

क्षेत्रफल की दृष्टि से पंजाब का भारत वर्ष में आठवां स्थान है। पर यदि पंजाब के देशी राज्यों को भी पंजाब प्रान्त में मिला लें तो भारतवर्ष के प्रान्तों में पंजाब का चौथा स्थान है। जन संख्या की दृष्टि से इसका पांचवां स्थान है। जन संख्या की सघनता में उसका छठा स्थान है।

देशी राज्यों को छोड़ कर पंजाब का क्षेत्र फल ९९२६५ वर्ग मील और जन संख्या २.३६,००,००० है। जन संख्या की सघनता २३८ प्रति वर्ग मील है। पंजाब के देशी राज्यों का क्षेत्रफल ५५९२ वर्ग मील और जनसंख्या ४.३८,००० है। पंजाब के राज्यों की एजेन्सी का क्षेत्रफल ३२४०७ वर्ग मील और जन संख्या ४५ लाख है। पंजाब की जनसंख्या में वृद्धि हो रही है। लायलपुर का जिला इस वृद्धि का अच्छा नमूना है। अब से ५५ वर्ष पहले इस जिले में जनसंख्या की सघनता प्रति वर्ग मील में केवल १५ थी। इस समय इस जिले की जनसंख्या की सघनता ३७० के ऊपर है। पंजाब के सभी जिलों में जनसंख्या एक समान नहीं बढ़ी है। फिर भी नहरों के बढ़ जाने से पंजाब में जनसंख्या लगातार बढ़ती जा रही है।

पंजाब का मैदानी भाग घना बसा हुआ है। अमृतसर और जलन्धर जिलों में जनसंख्या सब से अधिक (६४० प्रति वर्ग मील) सघन है। हिमालय की तलहटी के भागों की सघनता ३००० (प्रति वर्ग मील) है। स्यालकोट जिले का स्थान सघनता की दृष्टि से पंजाब में तीसरा है। उत्तरी-पश्चिमी सूखे भाग में जनसंख्या प्रति वर्ग मील में केवल ९६ है।

हिमालय के पहाड़ी प्रदेश में मरु प्रदेश से भी कम जनसंख्या है। हिमालय-प्रदेश में जनसंख्या की सघनता ७७ है जो पंजाब भर में सब से कम है। हिमालय के चम्बा राज्य में प्रति वर्ग मील में केवल ४० मनुष्य रहते हैं।

पंजाब में केवल २ शहर ऐसे हैं जिनमें प्रत्येक शहर की जनसंख्या १ लाख से ऊपर है। यह शहर लाहोर और अमृतसर हैं। यहां ५३ कस्बे हैं जिनमे प्रत्येक की जनसंख्या १०,००० से ऊपर है। ९९ कस्बों की जनसंख्या १० हजार से कम पर ५ हजार से ऊपर है। प्रधान नगर रावलपिंडी (६०.०००) मुल्तान (८८,०००) अम्बाला (८०,०००) जलन्धर (७०,०००) स्यालकोट (६०,०००) और पटियाला (५५,०००) है। इस प्रान्त में ४३,६६० गांव हैं प्रत्येक गांव की जनसंख्या ५०० या इससे अधिक है। पंजाब के मैदानी भाग में घर पास पास एक दूसरे से मिले हुये बने हैं। अराजकता के समय में इस ढंग से गांव सरलता पूर्वक अपनी रक्षा कर सकते थे दक्षिणी-पश्चिमी भाग और पहाड़ी भाग में घर इधर उधर बिखरे हुये बसे हैं।

दूसरे प्रान्तों की अपेक्षा पंजाब की जन संख्या कुछ कम होने के कई कारण हैं। बाहरी हमलों के धक्के पञ्जाब को पहले सहने पड़े। कभी कभी तो पूरे के पूरे नगर एक दम उजड़ गये। पञ्जाबी लोग व्यापार के काम से या सेना में भरती होकर यूगांडा हांग कांग, बोर्नियो, केलिफोर्निया आदि विदेशों में जाने से नहीं हिचकते हैं इससे जन संख्या में कुछ कमी तो अवश्य हो जाती है पर देश में वीरता का संचार होता है। कुछ धन भी बढ़ जाता है। पञ्जाब में दूसरे प्रान्तों से पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों की संख्या कम है। पर पञ्जाब में दूसरे प्रान्तों की अपेक्षा औसत उम्र कुछ अधिक होती है। पुरुषों की औसत उम्र २५ वर्ष की और स्त्रियों की २४ वर्ष होती है। दूसरे देशों की तुलना में पञ्जाब की भी औसत उम्र बहुत छोटी होती है। पञ्जाब में सब से अधिक मनुष्य बुखार से मरते हैं। कुछ अन्य बीमारियों से भी मरते हैं। कुछ भागों में हैजा भी हो जाता है कभी कभी प्लेग भी फैलती है। पञ्जाब में बहु विवाह की प्रथा अधिक प्रचलित नहीं है। प्रति १००० मनुष्यों में ११ मुसलमान एक से अधिक स्त्रियों से विवाह करते हैं।

हिन्दू और सिक्खों में अधिक धनी लोग बहु विवाह कर लेते हैं। औसत से प्रति १००० हिन्दू और सिक्खों में ६ मनुष्य एक से अधिक विवाह करते हैं। हिमालय प्रदेश के कुछ भूटिया लोगों में एक स्त्री अपने पति के अतिरिक्त सगे देवर और ज्येष्ट के साथ भी विवाह सम्बन्ध रखती है। तलाक की प्रथा हिन्दुओं में तो है ही नहीं। मुसलमानों में भी बहुत कम तलाक दी जाती है।

भाषायें

हिमालय स्थिति, लाहोल और ऊपरी कनावर में भूटिया भाषा की अपभ्रंश बोली जाती है। पञ्जाब के शेष भागों में आर्य भाषा है। इनमें ५३,००० मनुष्य पश्तो, ४२००० बलूची और ३००० फारसी बोलते हैं। अटक जिले में बसे हुये पठान पश्तो बोलते हैं। मियां वली जिले की ईसा खेल तहसील में सिन्ध के किनारे जो पठान आ गये हैं वे भी पश्तो बोलते हैं। बलूची भाषा डेरागाजी खां जिले में बोली जाती है। बहावलपुर राज्य के कुछ भागों में भी बलूची बोलने वाले लोग बस गये हैं। जो थोड़े से परिवार ईरान और अफ़गानिस्तान से पञ्जाब में आ गये हैं वे फारसी बोलते हैं। पश्चिमी पञ्जाबी सिन्ध की घाटी और इसके पूर्व में चनाब की घाटी तक बोली जाती है। यहां इसकी सीमा गुजरान-वाला, मांटगोमरी होती हुई बहावल पुर तक चली गई है। इसके पूर्व में सर हिन्द तक पूर्वी पञ्जाबी बोली जाती है। सर हिन्द के पूर्व में पश्चिमी हिन्दी बोली जाती है। पश्चिमी पञ्जाबी को जाट की (जाटों की बोली) और मुलतानी भी कहते हैं। इसमें हिन्द को, पोथवारी, चिब्बाली, घून्दी, गेबी, और अवांकारी बोलियां शामिल हैं। पूर्वी पञ्जाबी की मंझा और मालवा दो शाखायें हैं। मंझा बारी द्वाब के मध्यवर्ती भाग में अमृतसर के चारो ओर बोली जाती है। सतलज के दक्षिण में पञ्जाब की मालवा शाखा बोली जाती है। पश्चिमी हिन्दी में हरियानी (हरियाना जिले की बोली) बांगरी (बांगर की भाषा) जाटू (जाटों की भाषा) अहीर वाटी (अहीरों की

भाषा) शामिल है। पहाड़ी जिलों में संस्कृत से उत्पन्न पहाड़ी भाषा बोली जाती है। हिमालय के कुछ भागों में गूजरी (गूजरों की भाषा) बोली जाती है। हिमालय के अधिक भीतरी भागों की भाषा भूटिया है। बोलने वालों की संख्या इस प्रकार है। पश्चिमी पञ्जाबी २८ लाख; पूर्वी पञ्जाबी १ करोड़ ५५ लाख; राजस्थानी ६ लाख; पश्चिमी हिन्दी ४२ लाख; पहाड़ी १६ लाख।

जातियां

पञ्जाब में भारतवर्ष के दूसरे प्रान्तों से जाति पांति की कट्टरता बहुत कम है। हिमालय के लाहोल स्थिति और कनावर प्रदेश में कुछ बौद्ध लोग रहते हैं। यह मंगोल जाति के हैं। कहीं कहीं सैयद, कुरेशी आदि कुछ मुसलमान बाहर से आये हुये हैं और सेसायनिक जाति के हैं। पञ्जाब के बहुत बड़े भाग में आर्य जाति का निवास है। कुछ मुसलमान भी आर्यों से हिल मिल गये। पञ्जाब के दक्षिणी-पूर्वी भाग में प्रायः ५० लाख जट या जाट हैं। इनमें अधिकतर जमींदार या किसान हैं। १६ लाख जाट हिन्दू हैं और पूर्वी भाग में रहते हैं। १४ लाख जाट सिक्ख हैं और मध्यवर्ती भाग में रहते हैं। बहुत से जाट समय समय पर मुसलमान हो गये। इस समय इनकी संख्या २० लाख से कुछ ही कम है। पञ्जाब में प्रायः १८ लाख राजपूत हैं। इनमें १३ लाख राजपूत मुसलमान हो गये हैं।

हिन्दू राजपूत अधिकतर प्रान्त के उत्तरी-पूर्वी कोने पर पहाड़ी भाग में रहते हैं। मैदान के अधिकतर राजपूत मुसलमान हो गये हैं। मुसलमान अरैन १० लाख, हिन्दू और सिक्ख सैनी १३ लाख, कम्बोह प्रायः २ लाख हैं। प्रान्त के दक्षिणी-पूर्वी भाग में २ लाख ७ हजार अहीर हैं। हिमालय प्रदेश और प्रान्त के उत्तरी-पूर्वी भाग में ४ लाख कनेत, पौने दो लाख घिरठ किसान रहते हैं।

उत्तर पश्चिम की ओर २७००० गक्खर और ११०,००० खोखर ४,२५,०००अवान रहते हैं अधिक पश्चिम की ओर २६,५००० पठान रहते हैं। दक्षिण पश्चिम की ओर विशेष कर सिन्ध नदी के पश्चिम में डेरा गाजीखां जिले में, ४७०,००० बलोच हैं। यह ईरानियों की संतान हैं। हिमालय के निचले भाग में ६,५०,००० गूजर (ग्वाले) और ३०,००० गद्दी (गड़रिये) रहते हैं।

व्यापारी वर्ग में पूर्वी भाग में ४५,५००० बनिये और मध्यवर्ती और उत्तरी-पश्चिमी भाग में ४,४०,००० खत्री रहते हैं। प्रान्त के दक्षिणी-पश्चिमी भाग में ६,५५,००० अरोड़ा रहते हैं। मुसलमानों में ३,२५,००० शेख और १ लाख खोजा व्यापार के कार्य में लगे हुये हैं। प्रान्त में प्रायः १२ लाख ब्राह्मण पूजा पाठ और पुरोहित का कार्य करते हैं। कुछ दूसरे पेशों में भी लगे हैं। हिन्दुओं में जो स्थान ब्राह्मणों का है मुसलमानों में वही स्थान सैय्यदों का है। सैय्यदों की संख्या २,४०,००० है।

पञ्जाबी लोग डील डौल में लम्बे, मजबूत और रंग में प्रायः गोरे होते हैं। शहर के व्यापारी लोग या बैठने के पेशों में लगे हुये पञ्जाबी प्रायः कमजोर होते हैं। शरीर से कमज़ोर होने पर भी यह लोग किसानों से बुद्धि में कम नहीं होते हैं।

धर्म

पञ्जाब में मोटे ढंग से आधे प्रायः (५२ प्रतिशत) मुसलमान ⅔ हिन्दू और ⅓ सिक्ख रहते हैं। १९०१ ई० में मुसलमानों की जनसंख्या केवल ४९ प्रतिशत थी। प्रान्त के पश्चिमी भाग और पहाड़ की तलहटी में प्रायः ८० प्रतिशत मुसलमान रहते हैं। दक्षिणी पूर्वी मैदानी भाग में हिन्दुओं की संख्या अधिक है। हिमालय प्रदेश में ९५ प्रतिशत हिन्दू रहते हैं। दक्षिणी-पश्चिमी भाग में मुल्तान और उच में मुसलमानो का प्रथम प्रवेश हुआ। यहां अधिकांश संख्या मुसलमानों की है। केवल व्यापारी हिन्दू है। कुछ और लोग भी हिन्दू हैं जिनके पास ज़मीन नहीं हैं। पञ्जाब के आरम्भ के सुल्तानों ने दिल्ली में अपनी राजधानी बनाई और पञ्जाब के हिन्दुओं के धर्म में कोई हस्तक्षेप नहीं किया। अकबर ने हिन्दुओं और मुसलमानों को मिलाने का प्रयत्न किया। पर कट्टर औरंगजेब के समय में बहुत से हिन्दू मुसलमान बना लिये गये। पञ्जाब के मुसलमानों पर सूफी सन्तों का भी प्रभाव पड़ा। महाराज (बहावलपुर राज्य)तौंसा शरीफ

हिमालय के पहाड़ी प्रदेश में मरु प्रदेश से भी कम जनसंख्या है। हिमालय-प्रदेश में जनसंख्या की सघनता ७७ है जो पंजाब भर में सब से कम है। हिमालय के चम्बा राज्य में प्रति वर्ग मील में केवल ४० मनुष्य रहते हैं।

पंजाब में केवल २ शहर ऐसे हैं जिनमें प्रत्येक शहर की जनसंख्या १ लाख से ऊपर है। यह शहर लाहौर और अमृतसर हैं। यहां ५३ कस्बे हैं जिनमे प्रत्येक की जनसंख्या १०,००० से ऊपर है। ९९ कस्बों की जनसंख्या १० हजार से कम पर ५ हजार से ऊपर है। प्रधान नगर रावलपिंडी (६०.०००) मुलतान (८८,०००) अम्बाला (८०,०००) जलन्धर (७०,०००) स्यालकोट (६०,०००) और पटियाला (५५,०००) है। इस प्रान्त में ४३,६६० गांव हैं प्रत्येक गांव की जनसंख्या ५०० या इससे अधिक है। पंजाब के मैदानी भाग में घर पास पास एक दूसरे से मिले हुये बने हैं। ।अराजकता के समय में इस ढंग से गांव सरलता पूर्वक अपनी रक्षा कर सकते थे दक्षिणी-पश्चिमी भाग और पहाड़ी भाग में घर इधर उधर बिखरे हुये बसे हैं।

दूसरे प्रान्तों की अपेक्षा पंजाब की जन संख्या कुछ कम होने के कई कारण हैं। बाहरी हमलों के धक्के पञ्जाब को पहले सहने पड़े। कभी कभी तो पूरे के पूरे नगर एक दम उजड़ गये। पञ्जाबी लोग व्यापार के काम से या सेना में भरती होकर यूगांडा हांग कांग, बोर्नियो, केलिफोर्निया आदि विदेशों में जाने से नहीं हिचकते हैं इससे जन संख्या में कुछ कमी तो अवश्य हो जाती है पर देश में वीरता का संचार होता है। कुछ धन भी बढ़ जाता है। पञ्जाब में दूसरे प्रान्तों से पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों की संख्या कम है। पर पञ्जाब में दूसरे प्रान्तों की अपेक्षा औसत उम्र कुछ अधिक होती है। पुरुषों की औसत उम्र २५ वर्ष की और स्त्रियों की २४ वर्ष होती है। दूसरे देशों की तुलना में पञ्जाब की भी औसत उम्र बहुत छोटी होती है। पञ्जाब में सब से अधिक मनुष्य बुखार से मरते हैं। कुछ अन्य बीमारियों से भी मरते हैं। कुछ भागों में हैजा भी हो जाता है कभी कभी प्लेग भी फैलती है। पञ्जाब में बहु विवाह की प्रथा अधिक प्रचलित नहीं है। प्रति १००० मनुष्यों में ११ मुसलमान एक से अधिक स्त्रियों से विवाह करते हैं।

हिन्दू और सिक्खों में अधिक धनी लोग बहु विवाह कर लेते हैं। औसत से प्रति १००० हिन्दू और सिक्खों में ६ मनुष्य एक से अधिक विवाह करते हैं। हिमालय प्रदेश के कुछ भूटिया लोगों में एक स्त्री अपने पति के अतिरिक्त सगे देवर और ज्येष्ठ के साथ भी विवाह सम्बन्ध रखती है। तलाक की प्रथा हिन्दुओं में तो है ही नहीं। मुसलमानों में भी बहुत कम तलाक दी जाती है।

भाषायें

हिमालय स्थिति, लाहोल और ऊपरी कनावर में भूटिया भाषा की अपभ्रंश बोली जाती है। पञ्जाब के शेष भागों में आर्य भाषा है। इनमें ५३,००० मनुष्य पश्तो, ४२००० बलूची और ३००० फारसी बोलते हैं। अटक जिले में बसे हुये पठान पश्तो बोलते हैं। मियां वली जिले की ईसा खेल तहसील में सिन्ध के किनारे जो पठान आ गये हैं वे भी पश्तो बोलते हैं। बलूची भाषा डेरागाजी खां जिले में बोली जाती है। बहावलपुर राज्य के कुछ भागों में भी बलूची बोलने वाले लोग बस गये हैं। जो थोड़े से परिवार ईरान और अफ़गानिस्तान से पञ्जाब में आ गये हैं वे फारसी बोलते हैं। पश्चिमी पञ्जाबी सिन्ध की घाटी और इसके पूर्व में चनाब की घाटी तक बोली जाती है। यहां इसकी सीमा गुजरान-वाला, मांटगोमरी होती हुई बहावल पुर तक चली गई है। इसके पूर्व में सर हिन्द तक पूर्वी पञ्जाबी बोली जाती है। सर हिन्द के पूर्व में पश्चिमी हिन्दी बोली जाती है। पश्चिमी पञ्जाबी को जाट की (जाटों की बोली) और मुल्तानी भी कहते हैं। इसमें हिन्द को, पोथवारी, चिब्बाली, धून्दी, गेबी, और अवांकारी बोलियां शामिल हैं। पूर्वी पञ्जाबी की मंझा और मालवा दो शाखायें हैं। मंझा बारी द्वाब के मध्यवर्ती भाग में अमृतसर के चारो ओर बोली जाती है। सतलज के दक्षिण में पञ्जाब की मालवा शाखा बोली जाती है। पश्चिमी हिन्दी में हरियानी (हरियाना जिले की बोली) बांगरी (बांगर की भाषा) जाटू (जाटों की भाषा) अहीर वाटी (अहीरों की

भाषा) शामिल है। पहाड़ी जिलों में संस्कृत से उत्पन्न पहाड़ी भाषा बोली जाती है। हिमालय के कुछ भागों में गूजरी (गूजरों की भाषा) बोली जाती है। हिमालय के अधिक भीतरी भागों की भाषा भूटिया है। बोलने वालों की संख्या इस प्रकार है। पश्चिमी पञ्जाबी २८ लाख, पूर्वी पञ्जाबी १ करोड़ ५५ लाख; राजस्थानी ६ लाख; पश्चिमी हिन्दी ४२ लाख; पहाड़ी १६ लाख।

जातियां

पञ्जाब में भारतवर्ष के दूसरे प्रान्तों से जाति पांति की कट्टरता बहुत कम है। हिमालय के लाहोल स्थिति और कनावर प्रदेश में कुछ बौद्ध लोग रहते हैं। यह मंगोल जाति के हैं। कहीं कहीं सैयद, कुरेशी आदि कुछ मुसलमान बाहर से आये हुये हैं और सेसायनिक जाति के हैं। पञ्जाब के बहुत बड़े भाग में आर्य जाति का निवास है। कुछ मुसलमान भी आर्यों से हिल मिल गये। पञ्जाब के दक्षिणी-पूर्वी भाग में प्रायः ५० लाख जट या जाट हैं। इनमें अधिकतर जमींदार या किसान हैं। १६ लाख जाट हिन्दू हैं और पूर्वी भाग में रहते हैं। १४ लाख जाट सिक्ख हैं और मध्यवर्ती भाग में रहते हैं। बहुत से जाट समय समय पर मुसलमान हो गये। इस समय इनकी संख्या २० लाख से कुछ ही कम है। पञ्जाब में प्रायः १८ लाख राजपूत हैं। इनमें १२ लाख राजपूत मुसलमान हो गये हैं।

हिन्दू राजपूत अधिकतर प्रान्त के उत्तरी-पूर्वी कोने पर पहाड़ी भाग में रहते हैं। मैदान के अधिकतर राजपूत मुसलमान हो गये हैं। मुसलमान अरैन १० लाख, हिन्दू और सिक्ख सैनी १२ लाख, कम्बोह प्रायः २ लाख हैं। प्रान्त के दक्षिणी-पूर्वी भाग में २ लाख ७ हजार अहीर हैं। हिमालय प्रदेश और प्रान्त के उत्तरी-पूर्वी भाग में ४ लाख कनेत, पौने दो लाख घिरठ किसान रहते हैं।

उत्तर पश्चिम की ओर २७००० गक्खर और ११०,००० खोखर ४,२५,०००अवान रहते हैं अधिक पश्चिम की ओर २६,५००० पठान रहते हैं। दक्षिण पश्चिम की ओर विशेष कर सिन्ध नदी के पश्चिम में डेरा गाजीखां जिले में, ४७०,००० बलोच हैं। यह ईरानियों की संतान हैं। हिमालय के निचले भाग में ६,५०,००० गूजर (ग्वाले) और ३०,००० गद्दी (गड़रिये) रहते हैं।

व्यापारी वर्ग में पूर्वी भाग में ४५,५००० बनिये और मध्यवर्ती और उत्तरी-पश्चिमी भाग में ४,४०,००० खत्री रहते हैं। प्रान्त के दक्षिणी-पश्चिमी भाग में ६,५५,००० अरोड़ा रहते हैं। मुसलमानों में ३,२५,००० शेख और १ लाख खोजा व्यापार के कार्य में लगे हुये हैं। प्रान्त में प्रायः १२ लाख ब्राह्मण पूजा पाठ और पुरोहित का कार्य करते हैं। कुछ दूसरे पेशों में भी लगे हैं। हिन्दुओं में जो स्थान ब्राह्मणों का है मुसलमानों में वही स्थान सैय्यदों का है। सैय्यदों की संख्या २,४०,००० है।

पञ्जाबी लोग डील डौल में लम्बे, मजबूत और रंग में प्रायः गोरे होते हैं। शहर के व्यापारी लोग या बैठने के पेशों में लगे हुये पञ्जाबी प्रायः कमजोर होते हैं। शरीर से कमजोर होने पर भी यह लोग किसानों से बुद्धि में कम नहीं होते हैं।

धर्म

पञ्जाब में मोटे ढंग से आधे प्रायः (५२ प्रतिशत) मुसलमान $\frac{?}{?}$ हिन्दू और $\frac{?}{?}$ सिक्ख रहते हैं। १९०१ ई० में मुसलमानों की जनसंख्या केवल ४९ प्रतिशत थी। प्रान्त के पश्चिमी भाग और पहाड़ की तलहटी में प्रायः ८० प्रतिशत मुसलमान रहते हैं। दक्षिणी पूर्वी मैदानी भाग में हिन्दुओं की संख्या अधिक है। हिमालय प्रदेश में ९५ प्रतिशत हिन्दू रहते हैं। दक्षिणी-पश्चिमी भाग में मुल्तान और उच में मुसलमानों का प्रथम प्रवेश हुआ। यहां अधिकांश संख्या मुसलमानों की है। केवल व्यापारी हिन्दू है। कुछ और लोग भी हिन्दू हैं जिनके पास ज़मीन नहीं हैं। पञ्जाब के आरम्भ के सुल्तानों ने दिल्ली में अपनी राजधानी बनाई और पञ्जाब के हिन्दुओं के धर्म में कोई हस्तक्षेप नहीं किया। अकबर ने हिन्दुओं और मुसलमानों को मिलाने का प्रयत्न किया। पर कट्टर औरंगजेब के समय में बहुत से हिन्दू मुसलमान बना लिये गये। पञ्जाब के मुसलमानों पर सूफी सन्तों का भी प्रभाव पड़ा। महाराज (बहावलपुर राज्य)तौंसा शरीफ

डेरा गाज़ी खां) और कुछ अन्य स्थानों पर इनकी कब्रें बनी हुई हैं।

पञ्जाब के हिन्दू प्रायः हरिद्वार की तीर्थ यात्रा करने आते हैं। यहां १८७५ ई० में स्वामी दयानन्द सरस्वती ने आर्य समाज स्थापित कर आर्य समाज इस सैनिक प्रान्त में बड़ी तेज़ी से फैला। प्रायः इसी समय ईसाइयों ने भी यहां अपना धर्म फैलाना आरम्भ किया। पञ्जाब में भिन्न भिन्न धर्मों के मानने वालों की संख्या इस प्रकार है।

	१८९१	१९०१	१९२१
हिन्दु	१,०१,२२,५००	१,३,४४५००	९१,२५,०००
सिक्ख	१८,५२,०००	२१,०३,०००	३१,२६,०००
जैन	४६,०००	५०,०००	४६,०००
बौद्ध	६२३६	६,६४०	५,०००
पारसी	३७०	४७७	५४६
मुसलमान	१,११,९८,२७०	१,२१,८३,३४५	१२०,०५,०००
ईसाई	२८,९७१	२८,६११	३,४६,०००
यहूदी	५७	२६	३८

शिक्षा

सिक्खों के शासन काल में मुसलमानों को मौलवी लोग अरबी और फारसी पढ़ाया करते हैं। ब्राह्मण लोग संस्कृत पढ़ते थे। बनिये के लड़के मुंडिया पढ़ते थे और बही खाता लिखना सीख लेते थे। कुछ सिक्ख गुरुमुखी पढ़ लेते थे।

१८४९ ई० में पञ्जाब ईस्ट इण्डिया कम्पिनी के अधिकार में आ गया। १८५४ ई० में यहां शिक्षा विभाग स्थापित हुआ। इसका संचालन इस विभाग का डाइरेक्टर करता था आरम्भ में प्रान्त की आय का १ प्रतिशत (प्रायः २ लाख रुपये वार्षिक) शिक्षा पर व्यय होता था। सरकार की ओर से ४ जिला १०० तहसीली स्कूल और ४ नार्मल स्कूल चलाये जाते थे। देहाती स्कूलों की सहायता के लिये लगान पर १ प्रतिशत अधिक ले लिया जाता था। लिखने के लिये फारसी लिपि का प्रयोग किया गया। कचहरियों और स्कूलों में उर्दू भाषा का प्रयोग किया गया। गुरुमुखी और हिन्दी स्कूलों में गौण स्थान मिला। पहले दूसरे प्रान्तों से इन्सपेक्टर यहां बुलाये गये। इनका यहां स्वागत न हुआ। अतः कुछ समय तक प्रत्येक जिले के डिप्टी कमिश्नर और तहसीलदार ही अपने अपने जिले के स्कूलों का निरीक्षण करते रहे। १८६० ई० में स्कूलों में फीस ली जाने लगी। १८६४ ई० में लाहोर और दिल्ली में गवर्नमेन्ट कालेज स्थापित हुये। १८७० में देहाती स्कूल मास्टर का वेतन १० रु० मासिक नियत कर दिया गया। पर सरकार शिक्षा पर अधिक खर्च नहीं करना चाहती थी। इसलिये कई स्कूल बन्द कर दिये गये। डाइरेक्टर इन्सपेक्टर सरकारी कालेज के प्रिंसिपल, तीन प्रोफेसर ट्रेनिंग कालेज के प्रिंसिपल, मेयो स्कूल के प्रिंसिपल और माडल स्कूल हेड मास्टर अँग्रेज होते थे वे इण्डियन एज्यूकेशनल सर्विस के सदस्य होते थे। शेष सहायक और थोड़े वेतन वाले शिक्षक हिन्दुस्तानी होते थे। प्राविंशल एज्यूकेशनल सर्विस में भी ४ अँग्रेज रहते थे।

१८८२ ई० में पञ्जाब विश्वविद्यालय की स्थापना हुई। इससे पहले पञ्जाब के स्कूल और कालेज कलकत्ता विश्वविद्यालय से सम्बद्ध थे। १८८६ ई० में विश्वविद्यालय को मेडिकल डिग्रियां प्रदान करने

का अधिकार हो गया। १८९२ ई० में यह कानून और विज्ञान की भी उपाधियां प्रदान करने लगा। इसमें निम्न पांच विभाग हैं:—१ ओरियण्टल लर्निङ्ग (पूर्वीय विद्या) आर्ट कानून, चिकित्सा शास्त्र (मेडिसिन) विज्ञान और इंजीनियरिंग सीनेट की कार्यकारिणी सभा सिंडीकेट कहलाती है। सीनेट में ७५ सदस्य होते हैं। ६० सदस्यों को चांसलर नियुक्त करता है। १५ सदस्यों को चांसलर के नामजद सदस्य चुनते हैं।

विश्वविद्यालय के १० फेलो होते हैं। प्रथम वर्ष (आरम्भ) में ग्रेजुवेट केवल १६ हुये। २१,०००, रु० व्यय हुआ दूसरे वर्ष इनकी संख्या बढ़कर ४२ हो गई व्यय ६०, ९१२ रु० हुआ। मेट्रीकुलेशन परीक्षा में सम्मिलित होने वाले विद्यार्थियों की संख्या ५५१ थी। इनमें २२४ उत्तीर्ण हुये। प्रत्येक विद्यार्थी की शिक्षा पर औसत से ४०० रु० व्यय हुआ। आरम्भ में केवल तीन कालेज (ओरियन्टल कालेज गवर्नमेंट कालेज लाहोर और सेंटस्टीफेन कालेज दिल्ली थे) इन पर प्रायः ८,०००० रु० व्यय हुआ। १८८९-९० में कालिजों की संख्या ७ हो गई। मेट्रीकुलेशन के परीक्षार्थियों की संख्या १०१६ हो गई। ४६२ परीक्षार्थी उत्तीर्ण हुये। २,०६,३४६ रु० व्यय हुआ। फीस लगने और विद्यार्थियों की संख्या बढ़ जाने से प्रत्येक विद्यार्थी पर औसत व्यय ६५ रु० कम हो गया।

१८८८ ई० में दयानन्द-एंग्लावैदिक स्कूल को आर्य समाज की ओर से स्थापित किया गया। शीघ्र ही यह कालेज हो गया। प्रान्त में इसके विद्यार्थियों की संख्या दूसरे कालेजों के विद्यार्थियों से कहीं अधिक हो गई। १८९२ ई० में लाहोर में इस्लामिया कालेज और १८९७ ई० में अमृतसर में खालसा कालेज स्थापित हुआ। १९०१ ई० में कालिजों की संख्या १२ हो गई। मेट्रीकुलेशन परीक्षार्थियों की संख्या २१४८ हो गई। लेकिन प्रत्येक विद्यार्थियों पर औसत व्यय १८८२ की अपेक्षा आधे से कम हो गया।

१८६० ई० लाहोर मेडिकल कालेज की स्थापना हुई। १८७० ई० में इसमें ६८ विद्यार्थी थे। १८७८ ई० से फीस लगने लगी। १८७० ई० में ला कालेज स्थापित हुआ। अँग्रेजी और वर्नाक्यूलर के माध्यम द्वारा २ वर्ष की पढ़ाई थी। १८९० ई० में तीन वर्ष की पढाई कर दी गई। केवल ग्रेजुयेट ही ला कानून अध्ययन करने के लिये भरती होने लगे। १८९७-९८ में ला (कानून) के विद्यार्थियों की संख्या ४३४ हो गई। इतने अधिक वकीलों की आवश्यकता न थी। अतः दूसरे वर्ष कानून के विद्यार्थियों की संख्या कम कर दी गई।

१८८२ ई० में यहां २५ हाई स्कूल थे इन में ९१२ विद्यार्थी थे। मिडिल स्कूल १९८ थे। मिडिल स्कूल के विद्यार्थियों की संख्या ५१०७ थी १९०४ई० से प्रत्येक जिले में एक सरकारी हाई स्कूल स्थापित हुआ प्रान्त में सरकारी स्कूलों से डी० ए० वी० स्कूलों की संख्या कहीं अधिक है। कुछ सनातन धर्म स्कूल, कुछ इस्लामियां और खालसा स्कूल हैं। कुछ मिशन स्कूल है। लड़कियों के भी कई सौ स्कूल हैं। मध्यवर्त्ती भाग (लाहोर, अमृतसर, गुजरान वाला, स्याल कोट, जलन्धर) में लड़कियों की शिक्षा बहुत उन्नत पर है। इनमें जलन्धर का कन्धा महाविद्यालय विशेष उल्लेखनीय है। इसमें सरकारी आर्थिक सहायता की चिन्ता न करके लड़कियों को आदर्श गृहणी बनाने का प्रयत्न किया जा रहा है शिक्षक तयार करने के लिये कुछ नार्मल स्कूल हैं। १८८१ से योरुपीय और यूरोसियन (गोरे और अधगोरे) लड़कों की शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया गया। औसत से इनके प्रत्येक स्कूल पर अधिक धन व्यय किया गया।

मुसलमानों में माध्यमिक शिक्षा बढ़ाने के लिये मुसलमान विद्यार्थियों को पूरी या आधी फीस माफ की जाने लगी। उन्हें सरकारी या अर्द्ध सरकारी (जमींदारी) वजीफे मिलने लगे। पर मुसलमान विद्यार्थियों का आरम्भ का समय कुरान रटने में बीत जाता था। इसलिये बहुत थोड़ी संख्या में हर साल स्कूल और कालेज के ऊंचे दर्जो तक पहुँच पाते थे। पर अब ऐसा हाल नहीं हैं।

शासन प्रबन्ध

१८४९ ई० के मार्च मास में जब पञ्जाब अंग्रेजी राज्य में मिलाया गया तब यहां शासन करने के

लिये एक बोर्ड बनाया गया। १८५३ ई० में बोर्ड अलग कर दिया गया। बोर्ड के स्थान पर यहां एक चीफ कमिश्नर नियुक्त हुआ। चीफ कमिश्नर की सहायता के लिये एक जूडीशल (न्याय सम्बन्धी) और एक फाइनेन्शल (अर्थ सम्बन्धी) कमिश्नर नियुक्त हुये। पहले दिल्ली जिले को संयुक्त प्रांत से अलग करके पञ्जाब में मिला दिया गया। १८५९ की पहली जनवरी से यहां लफ्टेनेण्ट गवर्नर का शासन होने लगा। १८६६ से जूडीशल कमिश्नर के स्थान पर यहां एक चीफ कोर्ट बना। जमीन का बन्दोबस्त और लगान वसूल करने के लिये एक एक सेटिलमेण्ट कमिश्नर नियुक्त हुआ।

आगे चलकर पञ्जाब का सर्वोच्च शासक लफ्टेनेण्ट गवर्नर हुआ। उसकी सहायता के लिये एक प्रधान सेक्रेटरी, एक सेक्रेटरी और दो अंडर सेक्रेटरी (उपमंत्री) नियुक्त हुये। प्रधान विभागों के पदाधिकारी फाइनेन्शल कमिश्नर इन्सपेक्टर जनरल आफ पुलिस, डारेक्टर आफ पब्लिक इन्स्ट्रकशन (शिक्षा विभाग के डाइरेक्टर), जेलों के इन्सपेक्टर जनरल अस्पतालों के इन्सपेक्टर जनरल सेनेटरी कमिश्नर कन्सवेटर आफ फारेस्टस (जंगलो के संरक्षक, एकांउटेंट जनरल और पोस्ट मास्टर जनरल थे।

नहर और सार्वजनिक विभाग के सेक्रेटरी होते थे। १९१९ ई० में एक नया कानून बना। इसके अनुसार पञ्जाब में एक गवर्नर नियुक्त होने लगा। इसके अनुसार एक कार्य समिति और हस्तान्तरित विषयों के लिये मंत्रिमंडल चुना जाने लगा। १९३५ के कानून के अनुसार गवर्नर के अतिरिक्त यहां चुने हुये प्रान्तीय सदस्यों के एक संयुक्त मन्त्रिमंडल बनाया। १९४६ में जो चुनाव हुआ उसके अनुसार भी यहां चुने हुये सदस्यों की ओर से संयुक्त मन्त्रिमण्डल प्रान्त का शासन कर रहा है।

प्रान्त २९ जिलों पांच कमिश्नरियों और ४३ छोटे छोटे देशी राज्यों में बटा हुआ है।

प्रत्येक जिला एक डिप्टी कमिश्नर के आधीन होता है। उसके ऊपर कमिश्नर होता है। डिप्टी कमिश्नर के नीचे जिले की छुटाई बड़ाई के अनुसार तीन से लेकर सात तक तहसीलदार होते हैं। क्षेत्रफल में कांगड़ा पञ्जाब का सब से बड़ा जिला है। जन संख्या में लाहोर का जिला सबसे बड़ा है। शिमला का जिला क्षेत्रफल और जन संख्या दोनों ही में सब से छोटा है। औसत से पञ्जाब के एक जिले की जन संख्या ७ लाख से कुछ ऊपर है। तहसीलों की संख्या सब जिलों में बराबर नहीं है। तहसीलदार तहसील का बड़ा हाकिम होता है। तहसीलदार के नीचे नायब तहसीलदार होते हैं। प्रत्येक तहसील में तहसीलदार के आधीन दो से लेकर ५ तक कानूनगो होते हैं। प्रत्येक कानूनगो २०,३० पटवारियों के काम का निरीक्षण करता है। प्रत्येक पटवारी कई गांवों की मालगुजारी, फसल और जमीन का लेखा रखता है। प्रत्येक गांव में एक या दो मुखिया होते हैं। गांव में एक चौकीदार भी होता है।

न्याय

न्याय व्यवस्था के लिये पञ्जाब में एक हाई कोर्ट है जो लाहोर में स्थित है। यहां मुकद्दमों की अपील सुनी जाती है और योरुपीय लोगों में गम्भीर मुकद्दमें पेश होते हैं। यहां एक चीफ जस्टिस बैरिस्टर की योग्ता वाले ८ जज और ६ अतिरिक्त जज होते हैं। एक निरीक्षण करने वाला जज प्रति वर्ष छः छः महीनों के लिये नियुक्त किया जाता है।

हाईकोर्ट के अधीन डिस्ट्रिक्ट और सेशन्स जज होते हैं। प्रान्त में इनकी संख्या २५ है। यह कमिश्नरियों में दीवानी और फौजदारी के मुकद्दमें फैसल करते हैं। डेरागाजी खां और मियांवली जिन जिलों में सीमा प्रान्तीय नियम जारी है- उनमें जीर्गा के निर्णय को ध्यान में रख कर डिप्टी कमिश्नर अपराधियों को उनके अपराध के अनुसार ७ वर्ष तक सजा देता है।

कमिश्नरियों के जज प्रायः जिला की अदालतों के मुकद्दमों की अपील सुनते हैं। सेशन्स जज जिले के अपराध सम्बन्धी मुकद्दमों को सुनते हैं। डिस्ट्रिक्ट जज मुन्सिफों के मुकद्दमों की अपील सुनता है। और जिले के साधारण मुकद्दमों को तय करता है।

जन संख्या के अनुपात से पञ्जाब प्रान्त सबसे अधिक मुकद्दमे बाज प्रान्त कहा जा सकता है। यहां

प्रति १००० की जन संख्या में प्रायः १२ मुकद्दमें प्रति वर्ष पेश होते हैं। फौजदारी के छोटे छोटे मुकद्दमे भी कचहरियों में पहुँचते हैं। इनमें एक तिहाई अन्त में झूठे सिद्ध होते हैं। गाय, बैल और भैंस चुराने के मुकद्दमें सब से अधिक होते हैं। यह दक्षिणी-पश्चिमी पञ्जाब और संयुक्त प्रान्त और राजपूताना के समीप वाले जिलों में बहुत होते हैं। मध्यवर्ती जिलों के जाट सिक्खों और उत्तरी पञ्जाब के मुसलमानों में जमीन या स्त्री से संबंध वाले फौजदारी या क़तल के मुकद्दमें बहुत हैं। औसत से प्रति वर्ष ढाई लाख मनुष्य अदालत के सामने लाये जाते हैं। इनमें प्रायः एक तिहाई मनुष्यों को दंड मिलता है।

सेना

१८५१ से १८८६ ई० तक पञ्जाब सीमा प्रान्तीय सेना सीधे पंजाब के लफ़्टेनेंट गवर्नर के अधीन थी। फिर यह सेना प्रधान सेनापति (कमाण्डर इनचीफ) के अधीन हो गई। पञ्जाब प्रान्त की सभी सेनायें उत्तरी कमाण्ड में शामिल है। लफ़्टेनेण्ट जनरल कमांडिङ्ग का प्रधान कार्यालय रावलपिंडी और मरी में है पञ्जाब में रावलपिंडी और लाहोर डिवीजन के सिपाही आते हैं। कुछ सिपाही डेरा जात ब्रीगेड के आते हैं। रावलपिंडी कमिश्नरी की छावनियाँ अटक, कैम्प, वेलपुर, झेलम और मरी में हैं। मरी पहाड़ियों पर कई छावनियां हैं। लाहोर डिवीजन की सेना अम्बाला, अमृतसर, बकलोह, दगशाई, डलहौजी, धर्मशाला, फीरोजपुर, जलन्धर, जुतोग, कसौली, लाहौर (किला और छावनी) मुल्तान, सबाथू और सोलन में रहती है। डेराजात डिवीजन डेरागाजी खाँ में रहता है। अँग्रेज सिपाहियों का रिसाला (घुड़सवार सेना) रावलपिंडी, स्यालकोट और अम्बाला में रहता है। अँग्रेजी तोपखाना झेलम, कैम्प वेलपुर जुतोग और अटक को छोड़कर सभी छावनियों में रहता है। सैयद और माइनर (सपरमैना) रावलपिंडी में रहते हैं। एक सैनिक रेलवे कम्पिनी स्यालकोट में रहती है। खच्चरों को चलाने वाले रावलपिंडी, हसन अब्दाल, स्यालकोट, झेलम, लाहोर, फीरोजपुर, जलन्धर और अम्बाला में रहते हैं। ऊँटों का रिसाला कैम्प वेलपुर झेलम, शाहपुर, मुल्तान, माण्टगोमरी, लायलपुर और लाहोर में रहता है। फीरोजपुर और रावलपिंडी में बारूदखाना है।

जितने सिपाही पञ्जाब प्रान्त से सेना में भरती होते हैं उतने और किसी एक प्रान्त से नहीं होते हैं। सिक्खों के भरती होने का प्रधान केन्द्र जलन्धर, पञ्जाबी मुसलमानों के भरती होने का प्रधान केन्द्र झेलम, डोगरा राजपूतों के भरती होने का केन्द्र जलन्धर है। जाट और हिन्दुस्तानी मुसलमान दिल्ली में भरती किये जाते हैं। गत दूसरी बड़ी लड़ाई में प्रायः प्रत्येक जिले में सिपाहियों को भरती करने के लिये दफ़्तर खुल गये।

पञ्जाब के देशी राज्यों में कुछ स्थानीय सिपाही और कुछ इम्पीरियल सर्विस ट्रूप होते हैं। पटियाला झींद, नाभा, कपूर्थला में इम्पीरियल सर्विस के पैदल और घुड़सवार सिपाही रहते हैं। भावलपुर ऊँटों का रिसाला रहता है। फरीदकोट मालेर कोटाण और सिरमौर में सैपर रहते हैं।

संक्षिप्त इतिहास

पञ्चनद प्रदेश प्राचीन आर्य सभ्यता का केन्द्र रहा। वेद मन्त्रों में विपासा (व्यास) और शतद्रु नदियों का उल्लेख आया है। कुरुक्षेत्र (थानेश्वर) में महाभारत का युद्ध क्षेत्र रहा। दिल्ली के समीप इन्द्रप्रस्थ में युधिष्ठिर की राजधानी थी। कुछ लोगों का अनुमान है कि थोड़े समय तक पञ्जाब का कुछ भाग ईरान के पारसी राजा दारा के साम्राज्य में मिला रहा। दारा का साम्राज्य कालाबाग से समुद्र तक फैला हुआ था। ईसा से ३२६ वर्ष पूर्व सिकन्दर महान ने ओहिन्द (उन्द) के पास सिन्ध नदी को पार करके राजा पौरव (पोरस) पर आक्रमण किया। वास्तव में यहां राजा पौरव (पुरु) के एक करद राजा का राज्य था। तक्षशिला इस राज्य की राजधानी थी। इस राज्य की राजधानी थी आजकल शाहढेरी के पास तक्षशिला के खंडहर फैले हुये हैं अपने समय में यह एक बड़ा भव्य नगर था। तक्षशिला का शासक अम्भी विद्रोही हो गया और पौरव के विरुद्ध होकर सिकन्दर से जा मिला। सिकन्दर ने एक अपने सेनापति को तक्ष शिला में छोड़ दिया। पांच हजार तक्षशिला के भारतीय सिपाहियों को अपने यूनानी सिपाहियों के साथ लेकर सिकन्दर झेलम नदी की ओर बढ़ा। यहां झेलम नगर के पास पौरव (पुरु) अपनी सेना लेकर सिकन्दर से युद्ध करने के लिये तयार था। सिकन्दर ने धोखा देकर दूसरे स्थान पर झेलम को पार किया। वर्षा हो जाने के कारण पौरव के रथों के पहिये कीचड़ में धँस जाते थे। भारतीय सिपाही पैर से धनुष को दबा कर इतने जोर से बाण छोड़ते थे कि वे यूनानियों के फौलादी कवच को तोड़ कर उनकी छाती वेध देते थे। फिसलनी जमीन में इनको बड़ी बाधा पड़ी। पौरव की पूरी सेना भी न आ सकी फल यह हुआ कि पौरव की पराजय हुई। पर सिकन्दर ने पौरव से मित्रता कर ली और चनाब, झेलम के बीच का प्रदेश (भीम बार और रजौरी के जिले) उसे सौंप दिया। पौरव के चचेरे भाई ने भी जो झेलम और रावी के बीच वाले प्रदेश (गोन्दल बार) पर राज्य करता था। सिकन्दर से मित्रता कर ली सिकन्दर व्यास नदी के तट तक आया पर उसने यह सब प्रदेश पौरव को सौंप दिया। वह अपने यूनानी सिपाहियों को लेकर यूनान लौट गया। झेलम में २००० नावें तयार की गईं। इन पर अपने सिपापियों को चढ़ा कर वह समुद्र तट तक गया। जो यूनानी यहां छूट गये थे वे अधिक समय तक अपना प्रभुत्व न रख सके। चन्द्र गुप्त मौर्य ने उन्हें भगा कर पूरे पंजाब पर अपना अधिकार कर लिया। इसी से पूर्व ३०५ सन् में जब सिरिया के निकट चन्द्र गुप्त पर चढ़ाई की तो चन्द्र गुप्त ने उसे बुरी तरह हराया। इस विजय से सिन्ध नदी के पश्चिम का प्रदेश भी चन्द्र गुप्त को मिल गया। चन्द्र गुप्त को प्रसन्न रखने के लिये सिकेंदर ने अपनी कन्या का विवाह भी चन्द्र गुप्त के साथ कर दिया। चन्द्र गुप्त के पुत्र बिन्दुसार और उसके पौत्र अशोक के समय में पंजाब में बौद्ध धर्म फैल गया। (तोपरा में एक बौद्ध स्तम्भ खड़ा किया गया। सुई विहार (बहावलपुर राज्य) और कांगड़ा की घाटी में प्राचीन बौद्ध भग्नावशेष मिलते हैं। मौर्य साम्राज्य के शासन काल में तक्ष शिला फिर एक बड़े प्रान्त की राजधानी हो गया। यह प्रान्त सतलज नदी से लेकर हिन्दूकुश तक फैला हुआ था। इसी में सिन्ध भी शामिल था। अशोक की मृत्यु के बाद बैक्ट्रियां के यूनानी सूबेदार ने काबुल की घाटी और पश्चिमी पंजाब पर अपना प्रभुत्व जमा लिया। सागल फिर से बनाया गया। मेनाण्डर ने अपना राज्य सिन्धु से नर्बदा तक फैला लिया था। पर कुछ ही समय में यह राज्य नष्ट होगया। ईसा से १०० वर्ष पूर्व शक

वंशी राजा भोग ने उत्तरी पश्चिमी पञ्जाब में अपना राज्य स्थापित कर लिया और तक्षशिला में राजधानी बनाई। यह राज्य ७० वर्ष तक चला। फिर कुशान वंश के एक राजा ने इस (राज्य को) नष्ट कर दिया। उसके बेटे हिमकपिस ने १० ई० तक उत्तरी-पश्चिमी भारतवर्ष पर अपना शासन कर लिया पर २५ ईस्वी तक अफ़गानिस्तान और उत्तरी भारत में पार्थियन क्षत्रप का राज्य स्थापित हो गया। ७८ इस्वी में सिदियन राजा कनिष्क ने इस ओर अपना राज्य स्थापित कर लिया। उसके मरने पर हविष्क और फिर वासुदेव राजा हुये। पाँचवीं शताब्दी के मध्य में यहां श्वेत हूणों का प्रभुत्व हो गया। तोर्मान और उसके पुत्र मिहिराकुल ने उत्तरी भारत पर अधिकार करके सागल में राजधानी बनाई। मिहिराकुल का राज तरंगिणी में उल्लेख आया है। उसका मध्य एशिया का राज्य छिन्न-भिन्न हो गया। पर काश्मीर और पञ्जाब के कछ भाग में उसने अपना राज्य जमा लिया। उसके शासन काल में बौद्धमत का पतन होने लगा। सौ वर्ष के पश्चात् यह राज्य क्षीण हो गया। छठी शताब्दी के अन्त में थानेश्वर के राज्य का उदय हुआ। इसमें पंजाब का केवल वह भाग शामिल था जो झेलम नदी के पूर्व में स्थित है। सातवीं शताब्दी के मध्य में प्रसिद्ध चीनी यात्री ह्वान सांग ने तक्षशिला और सिंहपुर (साल्ट रेंज) को काश्मीर के अधीन पाया। सिन्ध नदी से व्यास तक मध्यवर्ती पंजाब में सेहक्य राज्य था। साकल के पास इसकी राजधानी थी। मुल्तान इसी के अन्तर्गत एक छोटा राज्य था। आठवीं शताब्दी के अन्त में थानेश्वर राज्य का अन्त हो गया। इसके स्थान पर दक्षिणी-पूर्वी पंजाब में कन्नौज के तोमरे राजवंश का आधिपत्य स्थापित हो गया। हांसी और दिल्ली इसी राजवंश के आधीन थे। सौ वर्ष राज्य करने के बाद तोमर वंश का अन्त हो गया। इसके स्थान पर ११५१ ई० में अजमेर के चौहान वंश का राज्य हो गया।

मुसलमानों ने दो भिन्न मार्गों से पंजाब पर आक्रमण किया। ६६४ ई० में एक मुसलमानी सेनापति सिन्ध के मार्ग से पंजाब तक घुस आया। पर इस आक्रमण का कोई स्थायी फल न हुआ। ७१२ ई० में मुहम्मद इब्न कासिम ने सिन्ध प्रान्त जीत लिया। और मुल्तान पर अधिकार कर लिया। उसने मुल्तान को सैनिक अड्डा बना कर एक सैनिक टोली झेलम के किनारे ब्रह्मपुर को भेजी। उस समय मुल्तान रावी नदी के उत्तरी किनारे पर स्थित था। ब्रह्मपुर के स्थान पर वर्तमान शेर कोट है। फिर वह ५०, हजार सिपाही लेकर दीबाल पुर होकर हिमालय की तलहटी में झेलम नदी के समीप पहुँचा पर आक्रमण का कोई स्थायी फल न हुआ।

८७१ ई० में खिलाफत का पतन होने लगा। मुल्तान एक स्वतन्त्र अरबी राज्य हो गया। पंजाब में कई हिन्दू राजा थे। ओहिन्द के ब्राह्मण राजवंश के अधिकार में साल्टरेंज के समीप का प्रदेश था। ८०४ में त्रिगर्त या जालन्धर एक स्वतन्त्र राज्य था।

मुसलमानों का दूसरा आक्रमण गजनी के मार्ग से हुआ। ९७९ ईस्वी में लाहौर का राजा जयपाल गजनी के अमीर सुबक्तगीन पर चढ़ाई करने गया लगमान में दोनों के बीच में सन्धि हो गई। जयपाल लाहौर को लौट आया। ९८८ ई० में जब लगमान में दूसरी बार सुबक्तगीन और जयपाल के बीच में युद्ध हुआ तो जयपाल की हार हुई। उसे गजनी के मार्ग के ४ किले समर्पण करने पड़े। सुबक्तगीन सिन्ध के किनारे तक का देश अपने अधीन कर लिया। उसके मरने पर १००१ ई० में महमूद गजनवी भारत में आक्रमण आरम्भ किये। पहले आक्रमण में पेशावर के पास जयपाल की पराजय हुई। इस पराजय से उसे इतनी लज्जा लगी कि वह एक चिता पर जल कर भस्म हो गया। उसका बेटा अनंगपाल गद्दी पर बैठा। अनंगपाल से मुल्तान का सूबेदार मिल गया। पर छः वर्ष बाद १००६ई० में पेशावर के पास अनंगपाल की पराजय हुई। महमूद ने मुल्तान पर अधिकार कर लिया। उज्जैन और ग्वालियर के राजाओं ने भी अनंगपाल की सहायता की। पर १००९ ई० में दूसरी बार अनंगपाल की हार हुई। इसके बाद महमूद ने नगर कोट या कांगड़ा को लूटा। १०१० ई० में महमूद को मुल्तान का विद्रोह दबाना पड़ा।

१०१४ ई० में साल्टरेंज के नन्दन किले को महमूद ने जीता और अनंगपाल के बेटे त्रिलोचन पाल को काश्मीर की ओर भगा दिया। इसी वर्ष महमूद ने थानेश्वर को लूटा। १०२१ ई० में त्रिलोचन पाल दूसरी बार महमूद से युद्ध करता हुआ मारा गया।

महमूद के बेटे मसूद ने १०३६ ई० में सिवालिक की राजधानी हांसी को जीत लिया। पर गज़नवी शक्ति अधिक समय तक न टिक सकी। १०४१ ई० में इनके शत्रु से सेल्जुक तुर्कों ने इन्हें पंजाब की ओर भगा दिया। कुछ समय तक गजनी इनकी राजधानी अवश्य बनी रही। पर वास्तव में इनका एक मात्र आश्रय स्थान पंजाब था। अन्त में ११८१ ई० में मलिक खुसरू को वाध्य होकर लाहोर शहाबुद्दीन को देना पड़ा। इसका ठीक नाम था मुईज़ुद्दीन मुहम्मद गोरी (गोरका मुहम्मद) उसका भाई गोरका सुल्तान था वह गजनीं का सूबेदार था और अपने भाई के अधीन था।

११७५-७६ में उसने करमाती मुसलमानों से मुल्तान छीन लिया और उच घेर कर अपने अधिकार में कर लिया। ११७९ ई० में उसने पेशावर पर अपना अधिकार कर लिया। इसी समय काश्मीर के शासक ने खुसरू के आक्रमण से बचने के लिये शहाबुद्दीन से सहायता मांगी। फल यह हुआ कि शहबुद्दीन ने लाहोर पर भी अधिकार कर लिया। ११९१ ई० में शहाबुद्दीन ने पहली बार दक्षिणी पूर्वी पंजाब पर चढ़ाई की। शहाबुद्दीन मुहम्मद गोरी ने सर हिन्द जीत लिया। फिर उसने दिल्ली और अजमेर के राजा पृथिवीराज से मोरचा लेने की तयारी की। थानेश्वर के पास तलावरी के मैदान में लड़ाई हुई। मुहम्मद की हार हुई। वह घायल भी हुआ। दूसरे वर्ष वह सर हिन्द को तो न बचा सका। पर वह बड़ी सेना लेकर पृथ्वीराज पर फिर चढ़ा। उसी थानेश्वर मैदान में (जहां पिछले वर्ष मुहम्मद की हार हुई थी) फिर लड़ाई हुई। पर इस बार पृथिवीराज का भाई राय गोविन्द लड़ता हुआ वीरगति को प्राप्त हुआ। स्वयं पृथिवीराज भी कैद कर लिया गया। इस विजय से अजमेर और शिवालिक प्रदेश जिसमें हान्सी भी शामिल था। मुहम्मद गोरी के हाथ आ गया। मुहम्मद गोरी के गुलाम कुतुबुद्दीन ऐबक ने दूसरे वर्ष ११९३ ई० में दिल्ली पर अधिकार कर लिया। पर साल्टरेंज के समीप रहने वाली जातियों ने गज़नी और लाहोर के बीच के मार्ग को दुर्गम बना दिया। मुहम्मद गोरी ने उन्हें बड़ी निर्दयता से दबाया। पर १२०६ ई० में जब मुहम्मद गोरी गज़नी को लौट रहा था उन्होंने मुहम्मद गोरी को मार डाला।

मुहम्मद के मारे जाने पर उसका एक गुलाम ताजुद्दीन गजनी का बादशाह बन गया। दूसरा गुलाम कुतुबुद्दीन लाहोर का स्वतन्त्र बादशाह बन गया। पहले ताजुद्दीन ने लाहोर के सूबेदार नासिरुद्दीन को भगा दिया। फिर कुतुबुद्दीन ने दिल्ली से चढ़ाई की। कुतुबुद्दीन ने अपने शत्रु को कुर्रम की घाटी (किर्मीन) को भगा दिया। फिर उसने डेढ़ महीने तक गज़नी पर अपना अधिकार रक्खा। १२१० ई० में कुतुबुद्दीन के मरने पर उसका गुलाम शमसुद्दीन अल्तमश दिल्ली की गद्दी पर बैठा। नासिरुद्दीन ने पंजाब के अधिकतर भाग पर अपना अधिकार कर लिया। लेकिन ताजुद्दीन को ख्वारिज़मी लोगों ने मध्य एशिया से पञ्जाब की ओर भगा दिया। ताजुद्दीन ने लाहोर पर अपना अधिकार कर लिया पर तलात्ररी की लड़ाई में वह हारा और कैद कर लिया गया। उसके पश्चात अल्तमश ने लाहोर को जीत कर पञ्जाब पर अपना अधिकार कर लिया। केवल ऊच पर नासिरुद्दीन का अधिकार बना रहा। इसी बीच मध्य एशिया के ख्वारिज़्मी लोगों पर मंगोलों ने धावा बोल दिया। १२२१ ई० में ख्वारिज़्मी सुल्तान ज़लालुद्दीन भाग कर पञ्जाब में आया। चिंगेज खां ने जलालुद्दीन को सिन्ध नदी के पश्चिमी किनारे तक खदेड़ा। पर जलालुद्दीन किसी तरह अपने कुछ साथियों को लेकर भाग निकला। उसने अल्तमश की एक सेना को हराया। पर लाहोर पर चढ़ाई करने का उसको साहस न हुआ। वह मुल्तान और ऊच की ओर मुड़ा और उसने नासिरुद्दीन को हरा दिया। गरमी ऋतु उसने साल्टरेंज (नमक के पहाड़) पर बिताई। जलालुद्दीन की इस विजय से डर कर चिंगेज खां ने एक सेना पञ्जाब की ओर भेजी। इस मंगोल सेना ने

नन्दन जीत कर मुल्तान को घेर लिया। १२२३ ई० में दूसरी मंगोल सेना ने उच को जलाया और जलालुद्दीन को पञ्जाब छोड़ने के लिये बाध्य किया।

१२२८ ई० में अलतमश ने नासिरुद्दीन को हरा कर मुल्तान उच और सिन्ध पर अपना अधिकार कर लिया। १२२९ ई० में बगदाद के अब्बासी खलीफा की ओर से उसे उसकी सनद भी मिल गई। पर साल्टरेंज के आगे उसका अधिकार न हो सका जब मंगोलों पर उसने चढ़ाई की तो उसकी हार हुई। १२३६ ई० में उसकी मृत्यु हो गई। उसने ४० तुर्की ममलूकों का एक गुट बनाया था। इनके प्रभाव से उसके वंश का पतन बहुत शीघ्र हो गया। उसकी लड़की रजिया दिल्ली की गद्दी पर बैठी और उसने १२३६ से १२४० तक राज्य किया। कट्टर पन्थी मुल्लाओं ने रजिया का विरोध किया। लाहोर, हान्सी और मुल्तान प्रान्तों में विद्रोह हुआ। १२४१ ई० में एक मंगोल सेना ने लाहोर लूट लिया। उच और सिन्ध स्वाधीन हो गये। १२४२ ई० में तुर्की अमीरों ने रजिया के उत्तराधिकारी को गद्दी से उतार दिया।

इसके पश्चात् ४० के गुट में बलबन शक्तिशाली हो गया। उसने मङ्गोलों और करलुग तुर्कों को रोका। १२४६ ई० में वह दिल्ली के सिंहासन पर बैठा। उसने ४० के गुट की शक्ति को तोड़ दिया। १२८५ ई० में इसका बेटा दीपालपुर के पास मङ्गोलों से लड़ता हुआ मारा गया। १२८७ ई० में बलबन की मृत्यु हो गई। इसके बाद खिलजी सुल्तान १२९० ई० में दिल्ली के सिंहासन पर बैठे। १२९६ ई० में अपने चाचा (खिलजी वंश के संस्थापक) की हत्या करके अलाउद्दीन दिल्ली के सिंहासन पर बैठा। अलाउद्दीन ने दक्षिणी भारत को जीतने का प्रयत्न किया। इसी बीच में १२९६ से १३०५ ई० तक मङ्गोलों ने पञ्जाब को उजाड़ डाला। १२९८ ई० में २ लाख सिपाही लेकर मङ्गोल लोग दिल्ली तक घुस आये। दिल्ली की चारदीवारी के पास उनकी पराजय हुई। १३०३ ई० में उन्होंने फिर दिल्ली के सुल्तान को घेर लिया। कुछ महीने डेरा डालने के बाद वे लौट गये। दूसरे वर्ष उन्होंने भारतवर्ष पर फिर आक्रमण किया। अब अलाउद्दीन की आँखें खुलीं। उसने समाना और दीपालपुर नगरों की मरम्मत की। पर वह मुल्तान और सिवालिक प्रदेश को मंगोलों के आक्रमण से न बचा सका। १३०४ ई० में पञ्जाब के सूबेदार गाजी बेग तुगलक ने उनकी लौटती हुई सेना पर आक्रमण किया। १३१६ ई० तक शांति रही। सुल्तान मुहम्मद शाह के १३१६ ई० में मर जाने से चार वर्ष तक देश में गड़बड़ी मची रही। १३२० ई० में गाजी बेग तुगलक ने दिल्ली को जीतकर तुगलक राज वंश की नींव डाली। १३२५ ई० में उसके बड़े बेटे मुहम्मद ने उसको हत्या करवा डाली। गाजी बेग ने तुगलकाबाद बसाया था। पर मुहम्मद तुगलक ने देवगिरि में राजधानी ले जानी चाही। १३२७ ई० में मंगोलों ने मुल्तान उजाड़ डाला। भारी रिश्वत लेकर उन्होंने दिल्ली को छोड़ दिया। मुहम्मद तुगलक ने खुरासान और चीन जीतने की योजना तयार की। उसके तांबे के सिक्के से सरकारी खजाने को भारी घाटा हुआ। उसका साम्राज्य एक दम बहुत बढ़ गया था। पर यह दृढ़ नहीं हो पाया था। १३४३ ई० में अफगानों ने मुल्तान जीत लिया। सुनाम और सामाना में विद्रोह हुआ। धक्कड़ों ने लाहोर छीन लिया। १३५१ ई० में सिन्ध में मुहम्मद तुगलक मर गया। फीरोज गद्दी पर बैठा। फीरोज ने पश्चिमी यमुना नहर खुदवाई और हिसार शहर बसाया। सर हिन्द फिर से बसाया गया। नगर कोट (कांगड़ा) जीता गया। सिरमौर और अम्बाला के उत्तर में पहाड़ी लोग दबा दिये गये। फीरोज ने ३७ वर्ष राज्य किया। थोड़ी सी गड़बड़ी के बाद १३९० ई० में मुहम्मद शाह तृतीय बादशाह हुआ। इस समय मेवात में विद्रोह था। खोखरों ने लाहोर छीन लिया। बड़े भाग में अराजकता फैल गई। दिल्ली का सुल्तान कठपुतली बना था। इसी समय मंगोलों ने फिर आक्रमण किया। साल्टरेंज के दक्षिण में सिन्धु नदी को पार कर के तैमूर ने तालम्बा को लूटा। फिर वह अजोधन होकर भटनेर की ओर बढ़ा। यहां वह फतेहाबाद, सोहाना होता हुआ घघर पार गया। फिर वह कैथल और पानीपत होकर दिल्ली पहुँचा। २६ दिसम्बर उसने दिल्ली

शहर लूटा। फिर वह यमुना पार कर के हरिद्वार पर चढ़ गया। १३९९ के जनवरी मास में फिर यमुना पार करके उसने क्या दादून में सिरमौर के राजा रतनसेन को हराया। सिवालिक के मार्ग से वह नगर कोट और जम्मू की ओर बढ़ा। मार्च मास में उसने बन्नू में पड़ाव डाला। इस चढ़ाई में तैमूर ने, लाखों मनुष्यों, स्त्रियों और बच्चों का संहार किया। मार्ग के देश को एक दम उजाड़ दिया।

तैमूर के लौट जाने पर देश में अकाल और महामारी फैली। दिल्ली के सिंहासन में कोई बल न रहा। पञ्जाब में छोटे छोटे जागीरदार स्वाधीन हो गये।

१४१४ ई० में खिजर खाँ ने पञ्जाब और दिल्ली को जीत कर सैय्यद राज वंश की नींव डाली। पर सैय्यद बादशाहों में दम न थी। १४४१ ई० में लाहोर और दीवालपुर बहलोल लोदी नाम के एक अफगान के हाथ में आ गये। बहलोल ने खोखरों से मेलकर लिया। १४५१ ई० में दिल्ली जीतकर उसने अफगान या पठान राजवंश की नींव डाली। लोदी शासन में पञ्जाब में कुछ शान्ति रही। इसी समय (१४६९-१५३८ ई०) में गुरू नानक ने सिक्ख धर्म की स्थापना की। १५२६ ई० में समरकन्द से भाग कर आये हुये बाबर ने दिल्ली के बादशाह इब्राहीम लोदी को पानीपत के मैदान में हराया। अफगानों में फूट थी। दौलत खां लोदी पञ्जाब का सूबेदार था। उसी ने १५२४ ई० काबुल के बादशाह बाबर को बुलाया था। जब बाबर ने दौलत खां के चाचा को दीवालपुर का सुल्तान बनाया तो दौलत खां बाबर का विरोधी हो गया। बाबर नई सेना को भरती करने के लिये काबुल को चला गया था। जब वह लौट कर आया तो उसने सिवालिक में दौलत खां के किले को छीन लिया। दौलत खां से कुछ भी न करते बना। फिर जस्वात दून के मार्ग से सतलज नदी को पार करता हुआ। पानीपत की ओर बढ़ा। बाबर ने अपने अन्तिम ४ वर्ष अपनी स्थिति को दृढ़ करने में बिताये। १५३० ई० में उसकी मृत्यु हो गई। उसका बड़ा बेटा हुमायूं दिल्ली का बादशाह हुआ। बाबर के दूसरे बेटे ने पञ्जाब को मिला लिया। १५४० ई० में शेरशाह ने हुमायूं को ईरान भगा दिया। शेरशाह ने पञ्जाब पर भी पूरा अधिकार कर लिया। साल्टरेंज के गक्खरों को डराने के लिये उसने झेलम जिले में रोहतास का किला बनवाया। फारस के बादशाह की सहायता लेकर हुमायूं ने १५४७ ई० में अपने भाई कामरान को काबुल से भगाया। ८ वर्ष के बाद हुमायूं ने पञ्जाब के शासक सिकन्दर शाह सूरी को १५५५ ई० में सर हिन्द की लड़ाई में हराया। सिकन्दर कांगड़ा की पहाड़ियों की ओर भागा। अकबर उसका पीछा कर रहा था। इतने ही में उसे हुमायूं के (दिल्ली में) मरने का समाचार मिला।

अकबर के बादशाह होने पर पञ्जाब को शान्ति मिली। सिकन्दर शाह सूरी मानकोट में डटा हुआ था। हीमू रिवाड़ी का एक दुकानदार था। उन्नति करते करते वह अफ़गान बादशाह का वजीर बन गया। वह बड़ा बीर था। दिल्ली को जीतकर उसने विक्रमादित्य की उपाधि ली। पर पानीपत की लड़ाई में वह कैद कर लिया गया और मार डाला गया। आठ महीने के घेरे के बाद मानकोट अकबर के हाथ लग गया। उत्तरी पश्चिमी सीमा को सुरक्षित रखने में अधिक समय लगा। यहां १५८६ ई० में पूरी शान्ति हो पाई। भारतवर्ष के दूसरे भागों की तरह पञ्जाब को भी अकबर के शासन सम्बन्धी सुधारों का लाभ हुआ।

अकबर के मरने पर १६०५ ई० में उसका बेटा जहांगीर बादशाह हुआ। इसी समय जहांगीर के बेटे खुसरू ने विद्रोह किया। खुसरू आगरे से भाग निकला। उसने लाहोर को घेर लिया। जहांगीर ने स्वयं इस विद्रोह को दबाया और शाहजादे को हरा कर उसके साथियों को कड़ा दंड दिया।

१६११ ई० में जहांगीर ने नूरजहां से ब्याह किया। आरम्भ में नूर जहां का शासन पर अच्छा प्रभाव पड़ा। पर आगे चलकर नूर जहां की नीति से जहांगीर और उसके बेटे खुर्रम (शाहजहां) में झगड़ा हो गया। प्रसिद्ध सेनापति महाबत खां भी बिगड़ गया। १६२६ ई० में झेलम के किनारे उसने बादशाह को शाही डेरे में कैद कर लिया। जब नूरजहां बादशाह को न छुड़ा सकी तो वह भी बादशाह के साथ नजरबन्द हो गई और अन्त में

बादशाह को मुक्त करने में सफल हुई। पर मुक्त होने पर जहाँगीर अधिक समय तक जीवित न रहा। १६२७ ई० में भीमवार में उसकी मृत्यु हो गई। लाहौर के पास शाहदरा में वह दफ़न किया गया। विधवा नूरजहां ने यहां एक मकबरा बनवाया। उसने अपने जीवन के शेष १८ वर्ष यहीं लाहौर में बिताये।

१६२८ ई० में शाहजहां आगरे में बादशाह घोषित किया गया। ठीक इसी समय उसके छोटे भाई शहरयार ने लाहौर में विद्रोह का झंडा उठाया। शाहजहां के ससुर आसफ खां ने शहरयार को शीघ्र ही दबा दिया। शहर और उसके प्रमुख साथियों के सिर काट डाले गये। जहांगीर के अन्तिम पांच वर्षों में लाहौर ही देश की राजधानी रहा। लेकिन शाहजहां ने यमुना के किनारे दिल्ली में अपनी राजधानी बनाई। शाहजहां के शासन-काल में देश में शान्ति रही। बाहर से भी हमले नहीं हुये। १६३९ ई० में कन्धार पर अधिकार कर लिया गया। १६४९ में कन्धार फिर छिन गया। १६५२ ई० में औरंगजेब और दाराशिकोह की सेनायें इसे फिर से जीतने में सफल न हो सकीं। १६४४ ई० में शाही सेना की बलख और बदख्शां में जीत हुई। पर औरङ्गजेब को हिन्दूकुश के दर्रों से पीछे लौटना पड़ा। १६५१ ई० में बाल्तिस्तान पर जो आक्रमण किया गया। उसमें शाही सेना को सफलता मिली। स्कर्दू जीत लिया गया। १६५७ ई० में शाहजहां को भयानक बीमारी हुई। इसी से उसके बेटों में गृहयुद्ध आरम्भ हुआ। आगरे में हारने के बाद दारा भाग कर पंजाब में आया। यहां वह पहले ही लोकप्रिय हो चुका था। यहां उसे बहुत से सहायक मिले। पर औरङ्गजेब ने उसे यहां दम न लेने दिया। दूसरे वर्ष वह पकड़ लिया गया और दिल्ली में बुरी तरह से मार डाला गया। शाहजहां कैद में १६६६ ई० तक जीवित रहा। औरङ्गजेब १६५८ ई० से बादशाह हो गया। पंजाब में प्रायः शान्ति रही। १६७३-७४ ई० में शाही सेना पञ्जाब होकर अफ़गान विद्रोह को दबाने के लिये गई। १६७६ ई० में नारनौल के सतनामियों का विद्रोह हुआ। अफ़गान युद्ध २ वर्ष तक चला। पेशावर में धोखा देकर जो हत्याकांड हुआ उससे यह युद्ध समाप्त हो गया। सतनामी विद्रोह का प्रभाव आगरे और अजमेर की हिन्दू जनता पर पड़ा। शाही सेना की टोलियां हरा दी गईं। विद्रोही दिल्ली पर चढ़ आये। शाही सेना में सनसनी फैल गई। सिपाहियों में लड़ने का साहस न रहा। बड़ी कठिनाई से औरङ्गजेब ने विद्रोह को दबाया। १७०७ ई० में औरङ्गजेब की दक्षिण में मृत्यु हो गई।

मुगल साम्राज्य के नष्ट होने के चिन्ह पहले ही दिखाई देने लगे थे। पञ्जाब में सिक्ख मुगलों के कट्टर शत्रु हो गये थे। सिक्ख धर्म को बाबा नानक ने चलाया था। बाबा नानक कबीर के चेले थे। उनका जन्म लाहौर के पास हुआ था। उन्होंने हिन्दू मुसलमान की एकता पर जोर दिया। वे एक ईश्वर को मानते थे। वे जाति पांति के बन्धनों को नहीं मानते थे। लाहौर के समीप रहने वाले किसानों को उनका नया धर्म बहुत पसन्द आया। रावी के किनारे डेरा नानक में १५३८ ई० में गुरु नानक का स्वर्गवास हो गया। उनके बाद जो गुरू हुये उन्होंने भी इसी धर्म का प्रचार किया। यह नया धर्म उन्नति करता गया। चौथे गुरू रामदास को अकबर की ओर से वह जमीन मिल गई जहां इस समय अमृतसर स्थित है। अमृतसर सिक्ख धर्म का प्रधान केन्द्र बन गया। यहां उन्होंने एक पवित्र सरोवर खुदवाया और उसके बीच में मन्दिर बनवाना आरम्भ किया। उनके बेटे और उत्तराधिकारी अर्जुनमल ने मन्दिर को पूरा किया। वे बड़ी शान से रहते थे। उनके चेलों को संख्या बहुत बढ़ गई। इससे मुगल शासक उनसे जलने लगे। लाहौर के सूबेदार से जो झगड़ा हुआ उसमें वे कैद कर लिये गये। कैद में ही उनको निर्दयता से मार डाला गया। इस घटना ने सीधे सादे सिक्ख चेलों को कट्टर सिहों में परिणत कर दिया। अर्जुन के बेटे हरगोविन्द की अध्यक्षता में उन्होंने हथियारों का रखना आरम्भ कर दिया। अब वे मुगलों के खुल्लमखुल्ला शत्रु हो गये। मुग़ल शासकों ने उन्हें लाहौर के समीप से भगा दिया। उन्होंने उत्तर की ओर पहाड़ियों में शरण ली। १६७५ में हरगोविन्द

के पौत्र गुरु गोविन्द सिंह के समय में वे एक दम सिपाही बन गये। गुरु गोविन्द सिंह दसवें गुरु थे। फिर भी सिक्खों की संख्या इतनी कम थी कि वे खुल्लमखुल्ला युद्ध में मुगलों का सामना नहीं कर सकते थे। लड़ाई लम्बी चली। इसके अन्त में गुरु गोविन्द सिंह ने देखा कि उनकी माता, बच्चे मार डाले गये। उनके अनुयायी मारे गये अथवा उनके अंग भंग कर दिये गये। स्वयं गुरु गोविन्द सिंह भी १७०८ ई० में दक्षिण भारत के नन्देर गांव में मार डाले गये। पर जैसे जैसे मुसलमानों का अत्याचार बढ़ा वैसे वैसे सिक्खों की वीरता और कट्टरता भी बढ़ती गई। गुरू गोविन्द सिंह के प्रधान शिष्य बन्दा की अध्यक्षता में सिक्ख लोग अपने गुप्त स्थानों से निकल पड़े। उन्होंने पूर्वी पञ्जाब को कुचल दिया। उन्होंने मस्जिदों को तोड़ डाला और मुल्लाओं को मार डाला। मुसलमानों के नगर के नगर उन्होंने नष्ट कर दिये। कहीं कहीं उन्होंने अत्याचारियों की कब्रों को खोद कर उनकी लाशों को जङ्गली पशुओं और पक्षियों के खाने के लिये फेंक दिया। मुगल सूबेदार को खुली लड़ाई में हरा कर सिक्खों ने सरहिन्द पर अधिकार कर लिया। इसी प्रकार मार काट करते हुए सिक्ख लोग पूर्व की ओर सतलज और यमुना को पार करते हुये सहारनपुर तक पहुँच गये। विरोधियों की प्रबल संख्या देख कर अन्त में लुधियाना और सतलज के ऊपरी भाग में पहाड़ी प्रदेश में आ डटे। इस बार अपने पहाड़ी अड्डों की तरह, भूखे शेरों की तरह उन्होंने एक ओर लाहौर और दूसरी ओर दिल्ली तक के सारे देश को उजाड़ डाला। अन्त में दक्षिण से लौट कर सम्राट बहादुरशाह ने स्वयं सेना लेकर सिक्खों पर चढ़ाई की। उसने सिक्खों के पहाड़ी किले डावेर को घेर लिया। कठिन घेरे के बाद उसने इस किले को जीत लिया। लेकिन बन्दा और उसके साथी मुगलों की सेना को चीरते हुये पहाड़ों की ओर भाग निकले। १७१२ ई० में बहादुरशाह मर गया। इस लिये वह सिक्खों को समूल नष्ट न कर सका। बहादुरशान के मरने पर देश में जो गड़बड़ी फैली उसमें सिक्ख पहले से भी अधिक प्रबल हो गये। अपने गुप्त पहाड़ी स्थानों से निकल कर वे फिर मुगलों के जिलों को नष्ट करने लगे। १७१६ ई० में सम्राट फरुखसियर ने सिक्खों को दबाने के लिये काश्मीर के सूबेदार अब्दुस्समद खां को एक बड़ी सेना के साथ भेजा। सिक्ख इतनी बड़ी सेना का सामना करने के लिये तयार न थे। बन्दा और उसके साथी पकड़ लिये गये और बड़ी निर्दयता के साथ वे दिल्ली में मार डाले गये। इसके बाद सिक्खों पर फिर खुल्लमखुल्ला अत्याचार होने लगे।

१७३८ ई० में नादिरशाह ने एक प्रबल बाढ़ की भांति भारतवर्ष पर आक्रमण किया।

१७३९ ई० में कर्नाल के मैदान में शाही सेना की हार हुई। इसके बाद नादिरशाह ने दिल्ली को लूटा। लूट मार का सामान लेकर नादिरशाह कुछ महीनों में भारतवर्ष से चला गया। पर नादिरशाह के आक्रमण से मुगल बादशाह मिट्टी में मिल गया। सिक्ख लोग नये जोश के साथ फिर विद्रोह का झंडा उठाने लगे। सिक्खों पर फिर अत्याचार हुये। लेकिन उनकी शक्ति बढ़ती ही गई।

१७६२ ई० में सिक्खों पर नई आपत्ति आई। पानीपत की लड़ाई में मरहठों को हराने के बाद उसने सिक्खों पर धावा बोल दिया। सिक्खों ने भाग कर पहाड़ों पर शरण ली। उसने अमृतसर शहर को नष्ट कर दिया। सिक्खों के मन्दिर को बारूद से उड़ा दिया। पवित्र ताल में कीचड़ भर दी और गायों को काट कर तीर्थ को भ्रष्ट कर दिया। पर इन घटनाओं से दबने के बदले सिक्ख फिर अधिक वेग से उठे और स्वाधीनता स्थापित करने में पूरे जोश से लग गये।

मुगलों ने नाम मात्र को पञ्जाब दुर्रानी को सौंप दिया था। लेकिन दुर्रानी बादशाहों ने पूर्वी पञ्जाब में अपना प्रभुत्व स्थिर रखने की कभी चिन्ता नहीं की। १७६३ ई० के बाद यहां सिक्खों का अधिकार हो गया। १७९९ ई० में महाराजा रणजीतसिंह ने काबुल के बादशाह जमानशाह से लाहौर की जागीर प्राप्त कर ली। १८०८ ई० में जब रणजीतसिंह ने सतलज के पूर्वी या बायें किनारे की ओर बढ़ने का प्रयत्न किया तो इधर की रियासतों ने ईस्ट इंडिया कम्पनी से यह सहायता मांगी। अँग्रेजों की यह

व्यापारिक कम्पनी व्यापार के साथ अपना राज्य बढ़ाती हुई यहां तक पहुँच गई थी। रञ्जीत सिंह और अंग्रेजों में सन्धि हो गई। इस सन्धि के अनुसार रञ्जीत सिंह ने पूर्व की ओर बढ़ना बन्द कर दिया। पर उत्तर और पश्चिम की ओर सिक्खों की विजय से महाराजा रञ्जीतसिंह का राज्य लगातार बढ़ता रहा। १८१८ ई० में महाराजा रञ्जीतसिंह ने मुल्तान ले लिया। इसी वर्ष उसने सतलज को पार करके पेशावर जीत लिया। कुछ समय के पश्चात् उसने डेराजात और काश्मीर को मिला लिया। इस प्रकार सिन्ध से लेकर पूरे पञ्जाब सीमाप्रान्त और काश्मीर पर महाराजा रञ्जीतसिंह का राज्य हो गया।

१८३९ ई० में रञ्जीतसिंह के मरने पर खड़गसिंह लाहोर की गद्दी पर बैठे। पर दूसरे ही वर्ष उनकी मृत्यु हो गई। कुछ लोगों का अनुमान है कि खड़गसिंह की मृत्यु स्वाभाविक न थी। वरन् षड्यन्त्र रच कर उसको विष दे दिया गया था। इसके पश्चात् पञ्जाब में कुछ कुछ अराजकता फैलने लगा। रञ्जीतसिंह के समय में सिक्खों की सेना भारतवर्ष भर में अजेय थी। सेना में इस समय भी वही वीरता थी। सचमुच वह सिंहों की सेना थी। पर उसके नेता अयोग्य थे। नेपोलियन कहता था कि यदि भेड़ों की सेना का सेना नायक सिंह हो तो वह उस सेना से कहीं अधिक अच्छी है जिसमें सिपाही तो शेर हों लेकिन सेना नायक भेड़ हो। पञ्जाब का प्रायः यही हाल था। पंजाब की सिक्ख सेना के सिपाही तो सिंह थे। पर सेना नायक भेड़ थे। फल वही हुआ जो होना चाहिये। सेना को वश में रखने के लिये उन्होंने यह उचित समझा कि इस सेना को अंग्रेजों से लड़वा कर हरवा दिया कुछ देश द्रोही अँग्रेजी सेनापति से मिल गये।

खड़गसिंह के मरने पर रानी झिन्दन के बेटे दलीपसिंह लाहोर की गद्दी पर बैठे। उनकी उम्र छोटी थी। इस लिये राज का भार उनकी माता एक समिति की सहायता से सँभालती थी।

महाराजा रञ्जीतसिंह ने अँग्रेजों से आजीवन मित्रता का वर्ताव किया। अफगान युद्ध में सिक्खों की सेना ने अँग्रेजों से पहले अफगानिस्तान में प्रवेश किया। पर युद्ध समाप्त होने से कुछ पहले महाराज रञ्जीतसिंह का स्वर्गवास हो गया। जब तक अफगानिस्तान पर युद्ध चलता रहा। अँग्रेजों ने कोई ऐसा काम नहीं किया जिससे सिक्ख नाराज हों। युद्ध समाप्त होते ही उन्होंने सिन्ध को अँग्रेजी राज्य में मिला लिया। अंग्रेजी राज्य और सिक्खों के राज्य के बीच में एक तटस्थ राज्य की आवश्यकता समझकर ही महाराज रञ्जीतसिंह ने सिन्ध को छोड़ दिया था। वैसे सिन्ध को सिक्ख सेना सहज ही में जीत लेती। सिन्ध को अँग्रेजी राज्य में मिला लेने से अँग्रेजों ने सिक्खों की मित्रता पर पहला आघात किया। ग्वालियर की सेना को छिन्न-भिन्न कर के अँग्रेजों ने सिक्खों की मित्रता पर दूसरा आघात किया। पुरानी सन्धि के अनुसार यह निश्चित हुआ था कि सिक्ख या अँग्रेज एक दूसरे की सीमा के पास न सेना एकत्रित करें और न किलेबन्दी करें। पर अँग्रेजों ने फीरोजपुर में किलेबन्दी आरम्भ कर दी। वे सतलज नदी के किनारे की ओर बारूद और सिपाही भेजने लगे। इससे सिक्खों को डर लगने लगा। सिक्खों ने भी अपने देश की रक्षा के लिये सतलज की ओर सिक्ख सेना का भेजना आरम्भ कर दिया। अब युद्ध का टलना असम्भव हो गया। सिक्खों के प्रधान सेनापति लालसिंह और उप प्रधान सेनापति तेजसिंह थे। बहुतों को सन्देह है कि लालसिंह अँग्रेज सेनापति सर ह्यूगफ से मिला हुआ था। सिक्खों के सामने दो बातें थीं या तो वे सतलज के इसी ओर डटे रहते और जब अँग्रेजी फौज नदी को पार करके इधर आती तब उससे मोर्चा लेते अथवा वे सतलज को पार कर के फीरोजपुर पर अधिकार कर लेते और फिर दिल्ली की ओर बढ़ने पर उन्होंने इन दोनों में से कोई काम नहीं किया। सिक्खों ने सतलज को पार करके फीरोजपुर के पास पड़ाव डाला। अँग्रेजी सेनापति ने इस सिक्ख सेना पर संगीनों से धावा किया। सिक्ख सेना ने आक्रमणकारियों को बड़ी क्षति पहुँचाई पर उनके सेनापति तेजसिंह ने सिक्खों को पीछे लौटने का आदेश दिया। इससे वे अपनी वीरता से लाभ न उठा सके और अँग्रेजों को मुफ्त में विजय हाथ

लगी। दूसरी बार लुधियाना के सिक्ख सेना ने फिर इसी भूल को दुहराया और सिक्ख सेना प्रायः नष्ट हो गई। पटियाला, नाभा, झींद, मलेर, कोटला, फरीदकोट और कलसिया राज्यों ने अँग्रेजों की सहायता की थी। उन्हीं के राज्य शेष रह गये। शेष राज्यों से अँग्रेजी सेना को बहुत कम सहायता मिली। इसलिये उनके राज्य छीन लिये गये। लाहोर में सन्धि हुई। सतलज और व्यास के बीच का द्वाबा अँग्रेजों के हाथ आया। इसमें उपजाऊ मैदान और सुन्दर पहाड़ी प्रदेश शामिल है। गुलाब सिंह को डेढ़ करोड़ रुपये के बदले काश्मीर का राज्य मिला। शेष भाग सिक्खों के हाथ में बना रहा। पर यहां ब्रिटिश रेज़ीडेंट आ डटा। जलन्धर, होशियारपुर और कांगड़ा में अँग्रेजी राज्य हो गया। अम्बाला, थानेश्वर, लुधियाना और फीरोजपुर पर पहले ही अँग्रेजी प्रभुत्व हो गया था। यह एक कमिश्नर के आधीन था। यह अँग्रेज कमिश्नर अम्बाला में रहता था। कपूर्थला का सिक्ख राजा स्वाधीन बना दिया गया। पहाड़ी भाग में मंडी और सुकेत के राजा अँग्रेजों के अधीन हो गये। चम्बा का राजा पहले महाराज गुलाबसिंह के अधीन था। फिर यह अँग्रेजों के अधीन हो गया। लाहोर का राज्य सिन्ध नदी, सतलज और हिमालय के बीच में घिरा हुआ था। यह त्रिभुजाकार था। इसके मंझा भाग में सिक्खों की प्रधानता थी। पश्चिमी भाग में मुसलमान अधिक संख्या में थे।

पहली लड़ाई के परिणाम से अँग्रेज सन्तुष्ट न थे। प्रधान सेनापति गफ एक पियर बना दिया गया था। वह चाहता था कि दूसरी लड़ाई आराम से दूसरे वर्ष शीतकाल में लड़ी जावे। लार्ड डलहौज़ी जो नया वायसराय होकर आया था सेनापति से इसलिये सहमत हो गया कि इस बीच में सिक्ख कोई ऐसा काम कर बैठें कि लड़ाई का बहाना मिल जावे और पंजाब अँग्रेज़ी राज्य में मिला लिया जावे। एडवर्ड नाम का एक अँग्रेज पठानों और बलोचियों को सिक्खों के विरुद्ध भड़काने लगा। उसने इनकी एक सेना तयार की। बहावलपुर का मुसलमानी राज्य भी सिक्खों के विरुद्ध खड़ा किया गया। सिक्ख लोग इस लड़ाई के लिये तयार न थे। उनकी सेना पहले से बहुत कम हो गई थी। बची हुई सेना मुसलमानी जिलों में बटी हुई थी। इसे एकत्र करना सरल न था। मुसलमान पहले ही से सिक्खों के विरुद्ध थे। इसी बीच में जुलाई मास में मुल्तान में लड़ाई छिड़ गई। हर्बर्ट एडवर्ड ने डेराजात में एक सेना इकट्ठी करके मुल्तान के सूबेदार दीवान मुलराज पर चढ़ाई कर दी। मुलराज के पास पर्याप्त सिक्ख सेना न थी। लड़ाई में मुलराज की हार हुई। पर एडवर्ड मुल्तान पर अधिकार न कर सका। ७ सितम्बर को मुल्तान का किला घेर लिया गया। महारानी पर सन्देह किया गया कि वह मुलराज से पत्र व्यवहार कर रही थीं। उसे बनारस भेज दिया गया। ब्रिटिश रेज़ीडेण्ट ने एक सेना मुल्तान को लेने के लिये शेर सिंह के साथ भेजी। १४ सितम्बर को यह सेना मुलराज से मिल गई। इससे मुल्तान का घेरा तो उठा लिया गया। फिर भी पञ्जाब के दूर भागों में बिखरी हुई सिक्ख सेना पर्याप्त संख्या में एकत्रित न हो सकी। १६ नवम्बर को अँग्रेज़ी सेनापति सर ह्यू गफ ने रावी नदी को पार किया। २२ नवम्बर को चनाब नदी के किनारे रामनगर स्थान पर शेर सिंह की सिक्ख सेना और अँग्रेज़ी सेना में घमासान युद्ध हुआ। यह युद्ध बराबरी का हुआ। जनवरी मास में सर ह्यू गफ झेलम नदी की ओर बढ़ा। १३ जनवरी को चिलियान वाले स्थान पर फिर घमासान युद्ध हुआ। इस युद्ध में अँग्रेज़ों की भारी क्षति हुई। ८९ अफसर और २३५७ सैनिक मारे गये। अथवा घायल हुये। इस घटना से इंगलैंड में खलबली मच गई। सर चार्ल्स नेपियर सर ह्यू गफ का स्थान लेने के लिये भेजा गया। पर २२ फर्वरी को गुजरात की लड़ाई में तोपों का युद्ध आरम्भ हुआ। सिक्खों के पैदल सिपाही तो ५०,००० थे। पर तोपों की कमी थी। अँग्रेज़ी तोपों ने कुछ ही समय में सिक्ख तोपचियों को शान्त कर दिया। उनकी पैदल सेना भी तोपों के सामने अधिक समय तक न टिक सकी। १२ मार्च को शेर सिंह की सेना ने हथियार डाल दिये। मुल्तान को घेरने के लिये दूसरी बार एक बड़ी सेना भेजी गई। मुल्तान का किला ले लिया गया। २९ मार्च १८४९ की घोषणा के

हिसार

अम्बाला कमिश्नरी का सब से अधिक पश्चिमी जिला, हिसार है। यह २८'३६ और ३०'१ उत्तरी, अक्षांशों और ७४'३१ और ७६'२२ पूर्वी देशान्तरों के बीच में स्थित है। हिसार शब्द का अर्थ है दुर्ग या किला है कहते हैं। चौदहवीं शताब्दी में फीरोज शाह तुगलक ने हिसार नगर बसाया और इसका नाम हिसार फीरोजी अथवा फीरोज का किला रक्खा। आगे चलकर जो नाम नगर का था वही समूचे जिले का नाम पड़ गया। यह जिला वास्तव में राजपूताना के मैदान का अंग है। वह मैदान बीकानेर से पटियाला तक चला गया है। यहाँ कोई नदी इस जिले की सीमा नहीं बनाती है।

हिसार के दक्षिण में झींद राज्य का ददरी प्रदेश और लोहारू राज्य है। इसके पूर्व में रोहतक जिला और झींद और पटियाला के राज्य हैं। इसके उत्तर में पटियाला राज्य और फीरोजपुर का जिला है। इसके पश्चिम में बीकानेर का मरुस्थलीय मैदान है। इस जिले का दृश्य एक चपटे मैदान की तरह दिखाई देता है। केवल दक्षिणी-पश्चिमी भाग में अर्वली की कुछ इधर उधर बिखरी हुई पहाड़ियाँ हैं। सब से ऊँची तोशाम पहाड़ी ८००फुट ऊँची है। भिवाणी नगर समुद्र तल से ८७० फुट ऊँचा है। सिरसा की ऊंचाई ७३८ फुट है। हिसार समुद्र तल से केवल ६८० फुट ऊँचा है।

पश्चिमी सीमा के पास इस जिले की भूमि बलुई है। पूर्व की ओर रोहतक, झींद और पटियाला के समीप यह मिट्टी एकदम कड़े मटियार में बदल गई है। जिले के उत्तरी सिरे पर सिरसा में हलका मटियार है। इसके दक्षिण में घग्घर घाटी में कड़ी मिट्टी है। इस घाटी के दक्षिण में फिर ढीली बलुई भूमि है। यह बलुई भूमि जिले के पश्चिमी भाग तक फैली हुई है। भिवाणी तहसील में ऊँची नीची ढीली बालू का लहरदार समुद्र सा फैला हुआ है। यह बालू हवा की दिशा के साथ अपना आकार बदलती रहती है। इस बलुई भूमि के पूर्व में कुछ कड़ी भूमि मिलती है। फिर भी बीच-बीच में रेतीले टीले बिखरे हुये हैं।

जिस भाग में घग्घर नदी का मार्ग है उस में इस नदी ने सदियों से बालू के ऊपर वार्षिक बाढ़ के साथ चिकनी मिट्टी की तहें बिछाकर कड़ी भूमि बना दी है। जहाँ पश्चिमी यमुना नहर से सिंचाई होती है वहाँ भी कुछ कड़ी भूमि है। सिंचाई के साथ-साथ कांप या कछारी मिट्टी की तहों के बिछ जाने से धरती धीरे-धीरे कुछ कड़ी और अधिक उपजाऊ हो रही है।

धरती की स्थानीय विशेषताओं के अनुसार हिसार जिला पांच भागो में बांटा जा सकता है।

उत्तरी सिरे पर सिरसा का रोही प्रदेश है। इसके दक्षिण-पश्चिम में सिरसा, फतेहाबाद, हिसार और भिवाणी का बागर प्रदेश है। इसके पश्चिम में हरियाना प्रदेश है जो जिले की चारों दक्षिणी तहसीलों में फैला हुआ है। घग्घर धारा के दोनों ओर कुछ दूर तक नाली प्रदेश है।

१८८६ ई० में करनाल जिले के पन्द्रह गाँव हिसार जिले की फतेहाबाद तहसील में मिला दिये गये। यहाँ जंगल है। यह जंगल प्रदेश घग्घर और सतलज के पुराने किनारे के बीच में स्थित है। यह प्रदेश सिरसा के रोही प्रदेश से बहुत कुछ मिलता जुलता है।

रोही—रोही प्रदेश में कुछ लाल और मुलायम मटियार है। इसे रत्ती या रोही (मुलायम) कहते हैं। कहीं-कहीं पीली मिट्टी मिली हुई बालू दिखाई देती है। यह प्रदेश घग्घर के उत्तरी किनारे से होकर जिले की उत्तरी सीमा तक चला गया है। इस भाग के कुओं में औसत से १८० फुट की गहराई पर पानी मिलता है। केवल जो भाग घग्घर की तली के पास है उनमें ४० फुट की गहराई पर पानी मिल जाता है। इससे यहाँ कुओं से सिंचाई का काम नहीं लिया जा सकता। जहाँ कुछ वर्षा हो जाती है वहाँ थोड़ी सी खेती होती है। सरहिन्द नहर के समीप विशेष रूप से खेती होती है। गाँवों के पड़ोस को छोड़कर शेष भागों में वृक्षों और वनस्पति का अभाव है। गाँवों के प्र प्रायः पीपल और बेर के पेड़ मिलते हैं।

नाली—रोही के दक्षिण में नाली प्रदेश का पश्चिमी सिरा है। यह नाली प्रदेश फतेहाबाद और सिरसा तहसीलों को पार करता हुआ पूर्व से पश्चिम तक चला गया है। इस प्रदेश को घग्घर और चौंपा (जोइया) नदियाँ पार करती हैं। इसी से इस का नाम नाली (नदी की धारा) पड़ गया। इस प्रदेश में कड़ी चिकनी मिट्टी है। जिसे यहाँ के लोग सोतार कहते हैं। ग्रीष्म काल की बाढ़ से भीग कर जब यह गीला हो जाता है तभी यहाँ खेती हो सकती है और दिनों में सोतार इतना कड़ा रहता है कि इसमें हल चलना असम्भव है। अनुकूल समय पर बाढ़ आने पर यहाँ रबी और खरीफ दोनों ही फसलें अच्छी हो जाती हैं। असामयिक बाढ़ से फसलें नष्ट हो जाती हैं। फतेहाबाद तहसील में घग्घर की प्रधान धारा सिरसा की अपेक्षा अधिक गहरी और संकुचित है। सिरसा में यह धारा उथली है और नीचे क्रमशः ढालों से घिरी हुई है। इससे सिरसा में अधिक दूर तक बाढ़ का पानी पहुँचता है। फतेहाबाद में ऊसर भूमि अधिक है यह ढोरों (गाय-बैल) के चराने के काम आती है। १८८३ और १८६० के बीच में कुछ ऊसर भूमि खेती के काम आने लागी। पर १८६५ ई० से अकाल आरम्भ हुआ। इससे परती (ऊसर) भूमि का क्षेत्रफल बढ़ गया। यह प्रदेश चरवाई के लिये बड़ा अच्छा है। इस जिले के अतिरिक्त कर्नाल जिले के पशु भी यहाँ चरने के लिये आया करते हैं। सिरसा नाली को छोड़कर यहाँ जिले के शेष भागों से प्राकृतिक वनस्पति कहीं अधिक है। यहाँ डाव (कुश) इतना अधिक होता है कि घग्घर के समीप बसे हुये गाँवों का नाम ही डावन पड़ गया। फतेहाबाद की नाली की अपेक्षा सिरसा-नाली में कहीं अधिक खेती होती है। सिरसा नगर के पूर्व में जहाँ घग्घर की पुरानी तली है वहाँ सब से अधिक खेती होती है। यहाँ पश्चिमी यमुना नहर की शाखा से सिंचाई होने लगी है। सिरसा के नीचे ऊसर भूमि अधिक है। घग्घर से बाढ़ का पानी न मिलने से कुछ भागों में खेती बन्द हो गई और ऊसर भूमि अधिक बढ़ गई।

बागर—बागर प्रदेश सिरसा के दक्षिण और दक्षिण पश्चिम से जिले की पश्चिमी सीमा तक फैला हुआ है। इसकी चौड़ाई क्रमशः बढ़ती जाती है। यहाँ की मिट्टी हलकी बलुई है। यह हवा के साथ अपनी आकार बदलती रहती है। केवल कहीं-कहीं कड़ी मिट्टी की तली पाई जाती है। रेतीले टीले को टिब्बा और कड़ी घाटी को ताल कहते हैं। कुओं में पानी प्रायः १०० फुट की गहराई पर मिलता है। पानी प्रायः खारा निकलता है। इसलिये इस प्रदेश के खेतों में कुओं से सिंचाई नहीं हो सकती। तोशाम पहाड़ी के पड़ोस में कुओं में पास ही पानी निकल आता है। इसलिये इधर कुओं से सिंचाई होती है। यहाँ अधिकतर खरीफ की फसल होती है। कुछ भागों में रबी की फसल भी होने लगी है।

इस प्रदेश में खेती का काम बड़ा कठिन है। यदि वर्षा न हुई तो खेती तो दूर रही घास भी नहीं उगती है। प्रबल वर्षा होने पर बीज बह जाता है अथवा पड़ोस की बालू के बह आने से वह मोटी तहों नीचे दबकर नष्ट हो जाता है। ऐसी दशा में किसान का एक फसल उगाने के लिये तीन-चार बीज बोना पड़ता है। कभी-कभी तेज आँधी बोये हुये खेत के ऊपर इतनी मोटी बालू की तह बिछा देती है कि किसान को फिर से खेत जोतना और बोना पड़ता है। पर ढीली बलुई भूमि में जोतने में अधिक परिश्रम नहीं करना पड़ता है। हलकी बलुई भूमि में साधारण वर्षा होने पर भी बीज बो दिया जाता है। इतनी वर्षा से अधिक उप-जाऊ मटियार भूमि जोती बोई नहीं जा सकती। बागर की कड़ी मिट्टी वाली घाटियों में पड़ोस की पहाड़ियों का वर्षा-जल बह आता है।

हरियाना—इस जिले का हरियाना प्रदेश सबसे अधिक महत्व पूर्ण है। यह घग्घर के पड़ोस से जिले के दक्षिण-पूर्वी कोने तक फैला हुआ है। उत्तर की ओर फतेहाबाद तहसील में यह अधिक चौड़ा है। दक्षिण को ओर यह कम चौड़ा रह गया है। बागर की बालू ने उड़ उड़कर इसे दाब दिया है। इसमें फतेहाबाद और हिसार तहसीलों का पूर्वी भाग और समस्त हान्सी तहसील शामिल है। भिवाणी तहसील का कुछ भाग भी इसी प्रदेश में स्थित है। हरियाना प्रदेश में होकर पश्चिमी यमुना नहर जाती है। इस प्रदेश में अधिकतर कड़ी चिकनी मिट्टी है। इसे

करीं या काठी कहते हैं। यह न तो नाली प्रदेश की चिकनी मिट्टी सोतार के समान कड़ी है और न बागर की बलुई भूमि के समान मुलायम है। हरियाना प्रदेश में कहीं-कहीं रेतीले टीले भी मिलते हैं। इसके निचले भागों में पड़ोस का पानी बह आता है और भूमि को कड़ा बना देता है। इसे डाकर कहते हैं। हरियाना की भूमि उपजाऊ है। पर्याप्त वर्षा होने पर यहाँ अच्छी फसलें होती है। वर्षा कम होने पर यहाँ कोई फसल नहीं उग सकती। यहाँ की कड़ी भूमि को जोतने में अधिक परिश्रम पड़ता है। अधिक ऊँचे टीले बिना जुते छोड़ दिये जाते हैं। यहाँ पराहन से (अगम भरा) या छोटी नालियों द्वारा पानी खेतों तक पहुँचाया जाता है। कुओं में पानी प्रायः १०० फुट की गहराई पर निकलता है। नहरों के समीप तीस या चालीस फुट की गहराई पर ही पानी निकल आता है। पक्का कुआँ बनाने में दो तीन हजार रुपये लगते हैं। इसलिये यहाँ कुओं से बहुत कम सिंचाई होती है। वर्षा होने पर (अगस्त से अक्तूबर तक) यह प्रदेश हरा-भरा दिखाई देता है। वर्षा के अभाव में (नवम्बर से जुलाई तक) यह मरुस्थल सा प्रतीत होता है। प्राचीन समय में यह अधिक हरा-भरा था इसी से इसका यह नाम पड़ा।

घग्घर नदी प्राचीन समय में सरस्वती नाम से प्रसिद्ध थी। यह नदी फतेहाबाद तहसील के उत्तरी भाग और सिरसा तहसील के मध्यवर्ती भाग में होकर बहती है।

घग्घर नदी यमुना और सतलज के मध्य में बाहरी हिमालय से निकलती है। पहाड़ी प्रदेश से बाहर आने पर जब यह मैदान में प्रवेश करती है तो भी यह बड़ी तेज बहती है और पहाड़ी नदी मालूम होती है। अम्बाला शहर इस नदी से कुछ ही दूर है। अम्बाला जिले और पटियाला राज्य में ७० मील दक्षिण-पश्चिम की ओर बहने के बाद यह पश्चिम की ओर मुड़ती है। तभी यह हिसार जिले को पार करती हुई बीकानेर राज्य में पहुँचती है। उद्गम से २९० मील बहने के पश्चात् घग्घर नदी बीकानेर की मरुभूमि में समाप्त हो जाती है। पटियाला राज्य में सरस्वती और मार्कण्ड नदियाँ इसमें आकर मिलती हैं। इसी ओर असंख्य छोटी-छोटी पहाड़ी धारायें घग्घर में आ मिलती है। इसकी सोतार घाटी ३ मील से ६ मील तक चौड़ी है। यह घाटी अधिक गहरी नहीं है। कुछ भागों में यह समतल दिखाई देती है। इसके किनारे ऊँचे नहीं है। फिर भी दोनों ओर इसके किनारे स्पष्ट हैं। किनारों से भी अधिक स्पष्ट इसकी धुंधली चिकनी मिट्टी की तली है। इस उपजाऊ तली में बालू का एक दम अभाव है। घग्घर के दोनों ओर कुछ हलकी पीली बालू बिछी हुई है। घग्घर की उपजाऊ तली में जो प्राकृतिक वनस्पति होती है वह पड़ोस की बलुई भूमि की वनस्पति से भिन्न है। पहले जिस तली में होकर घग्घर नदी बहती थी वह भिन्न थी। पहले जोइया और सोतार के मार्ग से फतेहाबाद की ओर से कुछ पानी आता था। आजकल जिस धारा में होकर घग्घर का पानी बहता है उसे यहाँ के लोग नाली कहते हैं।

यह धारा जाखल के पास हिसार जिले में प्रवेश करती है। यहीं से सोतार घाटी आरम्भ होती है। पश्चिम की ओर रटिया होती हुई पहले पटियाला राज्य का कुछ भाग पार करती है। फिर यह हिसार जिले में रोरी के दक्षिण में प्रवेश करती है। सिरसा इससे दक्षिण ओर ४ मील दूर रह जाता है। सिरसा और रनिया के बीच में यह फिर सोतार घाटी से मिलकर बीकानेर राज्य की ओर बढ़ती है। वर्षा ऋतु में इसकी गहराई कभी-कभी आठ-दस फुट हो जाती है। अपने निचले किनारों के ऊपर उमड़ कर यह पड़ोस की भूमि को अपनी बाढ़ से डुबो देती है। सिरसा तहसील में यह अपनी बाढ़ से तीन (चनमल, धानूर और रनिया) ताल बना देती थी। ओटू बाँध के बन जाने से ताल बहुत बड़ा बन गया है। सरदी की ऋतु में ताल बहुत घट जाता है। जून मास में यह एक दम सूख जाता है। जो भाग बाढ़ में पानी से डूब जाते और शीतकाल में सूख जाते हैं उनमें गेहूँ और चना की अच्छी फसल होती है। रनिया ताल में पहले दलदल था फिर यह सुखा लिया गया।

घग्घर नदी में बरफ का पिघला हुआ पानी नहीं आता है। वर्षा ऋतु में इसमें इतना जल हो जाता

है कि घाटों पर इसे नाव द्वारा पार करना पड़ता है, पर गरमी में यह सदा सूख जाती है। कभी-कभी तो यह अक्तूबर मास में ही सूख जाती है। यह भटनेर तक प्रायः नहीं पहुँचने पाती है। पर सोतार घाटी के आकार और असंख्य गाँवों और नगरों के भग्नावशेषों से प्रगट होता है कि पहले घग्घर साल भर बहती रहती थी और इसमें अधिक पानी रहता था। यह भग्नावशेष बहावलपुर राज्य तक फैले हुये हैं। पहले यह पंचनद तक पहुँचती थी। इसके पड़ोस में उपजाऊ कछारी मिट्टी है जिसे इसने अपनी बाढ़ के साथ लाकर बिछा दिया है। इसके मार्ग में सरों या तालावों की लड़ी बन जाने से इसका नाम सरस्वती पड़ा। फतेहाबाद तहसील में साधन के पास सरहिन्द नहर की घग्घर शाखा अपना बचा हुआ पानी गिराती है। इस पानी से लाभ की अपेक्षा हानि अधिक होती है। यह पानी धीरे-धीरे घग्घर की तली काट कर मिट्टी को बहाता रहता है। चोया या जोइया नाले में इतना कम पानी रहता है कि यह फतेहाबाद की सीमा के अधिक आगे नहीं पहुँचने पाता है। चोया नाला पटियाला राज्य में फुलाद के पास घग्घर नदी से फूटता है। घग्घर की बाढ़ के पानी से मूसा खेड़ा (फतेहाबाद तहसील) में एक अधसूखा नाला या दलदल बन गया है। प्रबल वर्षा हो जाने पर इसमें पानी भर जाता है।

भूगर्भ—हिसार जैसे समतल मैदानी जिले में खनिज का अभाव है। केवल कुछ भागों में कंकड़ पाये जाते हैं। अधिक कड़े कंकड़ सड़क बनाने के आते हैं। जिन भागों में खारी मिट्टी है वहाँ शोरा बनाया जाता है। खारी मिट्टी खोदकर गाँव के पास एक अनुकूल स्थान पर इकट्ठी कर ली जाती है। जहाँ खारी मिट्टी का ढेर लगाया जाता है उसके पास ही गढ़ा या कढ़ा रखने का स्थान होता है। दोनों को एक नाली से जोड़ देते हैं। जब खारी मिट्टी के ढेर पर पानी छोड़ा जाता है तब भूरा मटोला पानी बह-कर कढ़ाहों या गढ़ों में इकट्ठा होता है। यहाँ यह पानी धूप में सूखता रहता है। कुछ ही समय में शोरा तैयार हो जाता है। कहीं-कहीं खारे पानी को कढ़ाहों में भर कर आग से उबालते हैं। प्रायः छः घंटे उबालने के बाद शोरा तैयार हो जाता है। इस कच्चे शोरे को भिवाणी सिरसा या हाँसी में ठेकेदार फिर से उबालकर साफ कर लेते हैं। गाँव में खारी मिट्टी खुरचने या निकालने का अधिकार जमींदार कुछ रुपया लेकर लोनिया या ठेकेदार को देता है। शोरा बनाने की लाइसेन्स (आज्ञा) सरकार को २) रुपया देने से मिल जाती है।

जल वायु—हिसार जिला भारतवर्ष के उत्तरी-पश्चिमी खुश्क प्रदेश में स्थित है। जनवरी मास में यहाँ का औसत अल्प तापक्रम ४३ अंश फारेन हाइट हो जाता है। जून मास का औसत (आनुपातिक) अल्प तापक्रम ८३ अंश हो जाता है। जनवरी मास का औसत परम तापक्रम ७१ अंश और मई का परम तापक्रम १०७ अंश हो जाता है। अक्तूबर, नवम्बर और दिसम्बर महीनों में परम तापक्रम और अल्प तापक्रम में प्रायः ३३ अंश फारेन हाइट का अन्तर रहता है। इन महीनों में रात को खूब ओस पड़ती है हवा साफ रहती है और उसमें नमी और धूल नहीं रहती है। जनवरी तक जलवायु बड़ी स्वास्थ्य प्रद होती है। जनवरी में ही सबसे अधिक जाड़ा पड़ता है। फर्वरी महीना बड़े आनन्द का होता है। इस के बाद गरमी बढ़ने लगती है। मई और जून में सबसे अधिक गरमी पड़ती है। जून में धूल भरी आंधियाँ चला करती हैं। आंधी आने के पूर्व हवा एक दम शान्त रहती है। गरमी असह्य हो जाती है। अचानक धूल भरी आंधी जोर से चलने लगती है। कभी-कभी कुछ बूँद गिरने और बिजली के कड़कने के बाद आंधी शान्त हो जाती है। आंधी चलने पर कुछ घंटों के लिये गरमी कम हो जाती है। कुछ समय के पश्चात् गरमी फिर बढ़ने लगती है। अधिक गरमी बढ़ जाने पर फिर आंधी चलती है। आंधी और गरमी का यही क्रम लगा रहता है। आंधी में सूर्य का प्रकाश एक दम छिप जाता है। आधी जुलाई बीतने पर वर्षा के बादल मड़राने लगते हैं। हवा में नमी बढ़ने लगती है। अन्त में बिजली कड़ककर वर्षा ऋतु के आगमन की सूचना देती है। हिसार जिले में लगातार वर्षा नहीं होती है। दो तीन घंटे प्रबल वर्षा होने के पश्चात् आकाश निर्मल हो जाता है। सितम्बर मास

तक वर्षा ऋतु रहती है। छोटा जिला होने पर भी भिन्न-भिन्न भागों में वर्षा की मात्रा भी भिन्न रहती है। औसत से यहाँ २० इंच वर्षा होती है। कुछ वर्षा शीतकाल में भी होती है।

वनस्पति

इस जिले की प्रधान प्राकृतिक वनस्पति घास है। पहले अधिकांश जिला घास से ढका हुआ था। आजकल जहाँ खेती नहीं होती है वहाँ वर्षा काल में घास होती है। खुश्क भाग में धामन घास होती है। जहाँ पहले उपजाऊ भागों में धामन की अधिकता थी वहाँ अब तरह तरह की फसलें उगने लगी है। कुछ भागों में छोटी घास होती है। इसे गंठिल या भवरिया कहते हैं खोई या खावी घास भी प्रसिद्ध है। पकने पर इसका रंग लाल हो जाता है। साईं या सेवीं घास मोटी और लम्बी होती है। गाय बैल इसे सूख जाने पर खाते हैं। ऊँट इसे हरा ही पसन्द करते हैं। गड़ौम घास कैर के चारों ओर उगती है। इसकी घास का धुआँ चेचक को दूर करने के लिये अच्छा होता है। भूड़ी घास के कटीले बीज कपड़ों में चुभ जाते हैं। खब्बर या दूब को ढोर और घोड़े दोनों ही पसन्द करते हैं। घग्घर के दलदलों में पन्नी उगती है। यह ८ फुट तक ऊंची होती है। यह छप्पर छान के काम आता है। इसकी ज[illegible] का ही खस होता है जो टट्टी बनाने के काम आता है सिरसा तहसील का खस अधिक प्रसिद्ध है। दुचाव वर्ष भर हरी रहती है। सरकंडा या सरे घग्घर के किनारे और बगार में मिलता है। पतले कानागाड़ी और छप्पर छाने और सूप बनाने के काम आते हैं। आक सब कहीं होता है। बलुई भूमि में यह अधिक पाया जाता है। पहले यहाँ सज्जी पौधा भी अधिक होता था। सज्जी के पौधे फूलते समय दिसम्बर मास में काटे जाते हैं। फिर यह एक गढ़े में जलाये जाते हैं। इनके जलने से एक द्रव पदार्थ निकलता है। सूखने पर यह कड़ा हो जाता है। यही सज्जी या खार होता है। यह कपड़ा धोने, रंगने और चमड़ा कमाने के काम आता है। रेतीले टीलों पर तुम्बा अधिक होता है। इसे बकरियाँ बहुत खाती हैं। दूधी के छोटे पौधे से दूध के समान सफेद रस निकलता है। इस घास को भेड़ बकरी खाती है। फोग बीकानेर की सीमों के पास मरुभूमि में पाई जाती है। खिप खिम्प या सनी भी खुश्क भागों में होती है। जवासा भी बहुत होता है। इसे ऊँट बहुत खाते हैं। कटेली के फूल पीले होते हैं। खुश्क प्रदेश में झरबेरी की प्रधानता है। इसके छोटे लाल बेर गरीबों का भोजन है। इसकी कटी हुई सूखी झाड़ियाँ बाड़ा बनाने के काम आती हैं। प्रायः इसकी ऊँचाई तीन चार फुट होती है। पर यदि इसकी बकरियों से रक्षा कर ली जावे तो यह १२ फुट तक ऊँची हो जाती है। जंड या जंडी की लकड़ी किसान के बड़े काम की होती है। इसका कोई कोई पेड़ ३० फुट ऊँचा होता है। इसकी संगरी (फल) ढोरों के काम आती है। इसकी लकड़ी से होम किया जाता है। घग्घर घाटी की कड़ी भूमि में कीकर (बबूल) फरांश, वन और कैर (करील) पेड़ होते हैं। कीकर (बबूल) की सिमरी (फली) भेड़ बकरियों को खिलाई जाती है। इसकी छाल से चमड़ा कमाया जाता है। इसकी लकड़ी बड़ी मजबूत होती है और हल, जुआ, और बेट बनाने के काम आती है। इसका ईंधन भी बड़ा अच्छा होता है। जलने पर इससे कोयला तैयार कर लिया जाता है। कुछ भागों में सिरसा और शीशम के पेड़ लगाये गये हैं। नहर के किनारे और सड़कों पर नीम के पेड़ लगे हैं। बेर, पीपल और बरगद के पेड़ कई भागों में पाये जाते हैं।

पशु

पालतू पशुओं में गाय, बैल, भैंस, भेड़, बकरी और ऊँट प्रसिद्ध हैं। जंगलों में भेड़िया, लोमड़ी, खरगोश, वनबिलाव और शृंगाल (गिदड़) पाये जाते हैं। कुछ भागों में हिरन और नील गाय के झुंड मिलते हैं। पेड़ों के पड़ोस में गिलहरी बहुत है। विषैले और बिना विष वाले साँप सभी भागों में मिलते हैं। यहाँ नेवला भी बहुत है।

पक्षियों में मोर सब कहीं पाया जाता है। इन्हें मारने की आज्ञा नहीं है। इसलिये मोर आधे पालतू और आधे जंगली गाँवों के समीप बहुत मिलते हैं। तालाबों के समीप मछली खाने वाले बगुला और सारस मिलते हैं। तीतर भी बहुत हैं। नीलेपंख वाला कुंज पक्षी शीतकाल में यहाँ आता है। कभी-कभी टिड्डियों के झुण्ड यहाँ आते हैं और फसलों को चटकर जाते हैं। बिलों में रहने वाले चूहे भी फसलों को क्षति पहुँचाते हैं। दीमक फसल और लकड़ी दोनों ही को नष्ट करती रहती है। वर्षा ऋतु में मच्छड़ों की अधिकता हो जाती है मक्खियाँ और चींटियाँ वर्ष भर सब कहीं रहती है। वग्घर घाटी में वर्षा ऋतु में डंकी के डंक मारने से पशु और मनुष्य इतने तंग हो जाते हैं कि कुछ मनुष्य अपने ऊँटों को सूखे भागों में हाँक ले जाते हैं।

कृषि

हिसार जिले के कुछ भागा में कर्रीया काठी (दुमट) धरती है जिसे कहीं सैतली और कहीं निवान भी कहते हैं। कुछ भागों में भूड या हलकी बलुई मिट्टी है जो हवा के साथ उड़ती रहती है और स्थान-स्थान पर बालू के टीले या टिब्बा बना देती है। कुछ भागों में लोहे के समान कड़ी धरती है जिसे सोतार कहते हैं। यह धरती पानी में भागने पर ही मुलायम होती है। खेती के लिये साधारणतया काठी या दुमट धरती को किसान पसन्द करते हैं। लेकिन जिन भागों में पानी बहुत कम बरसता है उनमें भूड खेती के लिये अनुकूल होती है भूड़ धरती में बीजों के जमने और बढ़ने के लिये थोड़ी नमी से काम चल जाता है। इतनी कम वर्षा में दुमट खेत बिना बोये पड़े रहते हैं। लेकिन साधारण वर्षा होने पर दुमट खेतों में भूड़ की अपेक्षा कहीं अधिक अच्छी फसल होती है। भूड़ धरती की नमी अधिक जल्द सूख जाती है इसलिये इन भागों में कई बार वर्षा होने पर ही फसल हो पाती है। भूड़ मिट्टी के टीलों या टिब्बों के बीच में कड़ी मिट्टी की घाटियाँ (ताल) होती हैं। इन रेतीले टीलों का वर्षा जल बह कर चला आता है। पर बालू के उड़ आने से बीज प्रायः नीचे दब जाता है।

सोतार भूमि का जो भाग सब से अधिक निचले भाग में स्थित होता है उसे सोतार कहते हैं। यह असली धारा से कुछ ही दूर फाट से मिला रहता है। इन निचले भागों में धान उगाने के लिये कूड़ बनाये जाते हैं। इनसे कुछ अधिक ऊंचाई की भूमि चना उगाने के काम आती है। इन भागों में दूब और दूसरी घास इतनी अधिक होती है कि इन में गेहूँ नहीं हो सकता है।

जून जुलाई में हर (हल चलाने) के समय अच्छी वर्षा की आवश्यकता है तभी फसल जोती बोई जा सकती है। सावन भादों में थोड़े-थोड़े दिन के बाद वर्षा होने से फसल अच्छी बढ़ती है। कुछ वर्षा अन्त में क्वार (आश्विन) मास में भी होनी चाहिये। इसी वर्षा के होने से खरीफ की फसल पकती है और रबी की फसल बोई जाती है। वर्षा होने पर भूमि नम हो जाती है। जितनी गहराई तक भूमि नम हो जाती है वह अंगुलों से नाप ली जाती है। वही यहाँ वर्षा नापने का ढंग है। १०० अंगुल वर्षा रबी और खरीफ दोनों फसलों के लिये पर्याप्त समझी जाती है। जेठ मास से खेती के कार्य का आरम्भ हो जाता है। जिन किसानों के पास बैल नहीं होते हैं वे चैत मास के मेले में मोल ले लेते हैं। पहली वर्षा होते ही खेतों को जोतकर बाजरा बो दिया जाता है। जहाँ सिंचाई का प्रबन्ध है वहाँ कपास बोई जाती है। बाजरा के साथ मूंग, मोथ और माश (उर्द) भी बो देते हैं। जो खेत बाढ़ के पानी से डूब जाते हैं उनमें धान बोया जाता है। भादों में खेत निराये जाते हैं। दिन में चिड़ियों से और रात में पशुओं से उनकी रक्षा की जाती है।

आश्विन के आरम्भ में अच्छी वर्षा होने पर चना और सरसों बोते हैं। कुछ देरी (आश्विन के अन्त अथवा कार्तिक के आरम्भ में) वर्षा होने पर जौ बोया जाता है। बाढ़ वाले प्रदेश में जमीन के सूखने पर चना बिझरा, बेझर, गेहूँ और जौ, चना गेहूँ और चना, बोते हैं। खरीफ की फसल कटने पर यदि किसान को अवकाश हुआ तो वह तुरन्त माड़ (गाह) कर अन्न अलग लेता है। यदि वह रबी की फसल बोने में लगा रहा तो खरीफ की फसल काट कर एक जगह इकट्ठी कर दी जाती है। रबी की फसल बो लेने पर वह इसे माड़ने में लगता है।

जहाँ सिंचाई की सुविधा होती है वहाँ किसान गेहूँ और तम्बाकू बोता है। बीच-बीच में कपास (टेंट) चुनने का काम होता रहता है। रबी की फसल में सब से पहले सरसों पकती है। यह फागुन में काट ली जाती है। चना चैत में कटता है। इसके कुछ ही दिन बाद जौ और गेहूँ की कटाई होती है। वैशाख के अन्त तक रबी की सब फसल गाह (माड़) ली जाती है।

कृषि के बढ़ने से गोचर भूमि कम हो गई और ढोरों की संख्या भी घट गई। फिर भी हरियाना के गाय बैल भारतवर्ष भर में प्रसिद्ध हैं। ढोर चराने का काम लड़के करते हैं। पहले गाँव के ढोर एक स्थान पर इकट्ठे होते हैं। यहाँ से वे भिन्न-भिन्न चरागाहों चरने को जाते हैं। तीसरे पहर वे फिर लौटा कर उसी स्थान पर एकत्रित कर दिये जाते हैं। यहाँ से वे फिर अपने-अपने मालिकों के घर चले जाते हैं ढोरों को बेचने के लिये जिले में कई मेले लगते हैं। प्रत्येक मेला प्रायः पन्द्रह दिन तक लगता है। हिसार और सिरसा के मेलों में पशुओं की अधिक बिक्री होती है।

भेड़ बकरियों की संख्या इस जिले में बढ़ रही है। भेड़ों की ऊन कतरने का काम चमार और धानुक करते हैं। इस जिले के घोड़े अच्छे नहीं होते हैं। गधे भी साधारण ही होते हैं। पर ऊँट अत्यन्त उपयोगी होते हैं। यह सवारी और बोझा ढोने के काम आता है। भूड़ में हल जोतने का काम भी ऊँट से लिया जाता है। राहबारी लोग बहुत से ऊँट किराये के लिये रखते हैं। जब ऊँट का बच्चा चार वर्ष का होता है तभी से उससे काम लिया जाता है। पाँच वर्ष का होने पर ऊँटनी बच्चा देने लगती है। वह दो या तीन वर्ष के बाद पांच छः बार बच्चा देती है। ऊँटनी का दूध पिया जाता है। ऊँट की जट (बाल) से रस्से और बोरे बनाये जाते हैं। पालतू सुअर जिले में बहुत कम देखने को मिलते हैं मुर्गियाँ भी केवल बड़े कस्बों में ही पाली जाती हैं।

हिसार का गवर्नमेंट केटल फार्म १८१३ ई० में स्थापित हुआ। फार्म की भूमि हिसार नगर के उत्तर, पूर्व और पश्चिम में फैली हुई है। इसकी सीमा पर खम्भे गड़े हुये हैं।

होम फार्म शहर की मोटी गेट से केवल २०० पूर्व की ओर है। सली फार्म ५॥ मील उत्तर-पश्चिम की ओर है। चाडनी फार्म २ मील दक्षिण-पश्चिम ओर है। मुंडियां वाला फार्म शहर से मिला हुआ है। खरवां फार्म १० माल उत्तर-पूर्व की ओर है। फार्म के खुलने के बाद शहर तेजी से बढ़ा। शहर और फार्म दोनों के एक साथ बढ़ने से दोनों को एक दूसरे से असुविधा होने लगी। फार्म को शहर की ओर फैलने का स्थान न मिला। शहर के पशुओं की गोचर भूमि भी कम हो गई। फिर भी इस फार्म का क्षेत्रफल ४०,००० एकड़ है। इसके कुछ भाग में खेती होती है। कुछ किसानों को बढ़े हुये लगान पर उठा दिया जाता है। साधारण वर्षा के वर्षों में ढोर मई मास तक गोचर भूमि में चरते हैं। कुछ भाग में दुर्भिक्ष के समय ढोरों को खिलाने के लिये चारा उगाया जाता है। फार्म का प्रबन्ध वेटेरी नेरी (पशु चिकित्सा विभाग) के एक उच्च पदाधिकारी के हाथ में है। यहाँ सैकड़ों मनुष्य काम करते हैं। यहाँ अधिकतर हरियाना नस्ल की गाय और साँड़ हैं। साँड़ और गायों के अतिरिक्त यहाँ कुछ ऊँट, खच्चर गधे, भेड़ और बकरे भी पाले जाते हैं। यहाँ की प्रचलित कहावत के अनुसार कूड़े में चार गाँव में घार भात में आल। घर में साल यह चारों दुख दाई होते हैं।

इसलिये यहाँ के लोग खेतों को भली भाँति जोतते हैं। लेकिन खाद बहुत कम दी जाती है। रबी के बाद खरीफ और खरीफ के बाद खेतों में रबी की फसल बोई जाती है। ज्वार और बाजरा बोने के लिये दो बार खेत जोते जाते हैं। प्रति एकड़ १० सेर के हिसाब से बीज बोया जाता है। इन्हीं के साथ चार या पाँच सेर माठ या मूंग मिला दी जाती है। जब ज्वार को चरी (चारा) के लिये बोते हैं तब प्रति एकड़ में २० या २५ सेर बीज बोया जाता है। जहाँ नहर से सिंचाई की सुविधा है वहाँ खरीफ की फसल के साथ-साथ कपास और मिर्च भी बोते हैं। इन खेतों में खाद भी डाली जाती है।

रबी की फसल की ओर अधिक ध्यान दिया जाता है। खेत कई बार जोते जाते हैं। इन्हें सींचना भी पड़ता है। प्रति एकड़ में २५ सेर जौ या चना

बोया जाता है अधिक अच्छे खेतों में गेहूँ और चना मिलाकर बोते हैं। बोने के बाद गेहूँ के खेत को बीस-बीस दिन के बाद चार बार सींचना पड़ता है।

तम्बाकू बोने के लिये पहले खेत सींच लिया जाता है। फिर जोतकर बीज बोया जाता है। बीज कार्तिक मास में बोया जाता है। प्रति एकड़ में डेढ़ सेर बीज बोया जाता है।

कला कौशल

हिसार जिले का प्रधान कारबार खद्दर या गाढ़ा का बुनना है। खद्दर बुनने का काम चमार, जुलाहे या धानुक करते हैं। कातने का काम स्त्रियाँ करती हैं। कुछ जाट और विश्नोई स्त्रियाँ अपने हाथ से अपनी चद्दरों पर ऊन का किनारा बना लेती हैं। यहाँ की ऊनी फूलकारी सीधी सादी और आकर्षक होती है। हिसार जिले में कपास ओटने और रूई के गट्ठा बनाने में कई कारखाने हैं। इनमें सबसे अधिक हांसी में है, भिवाणी में हिसार शहर में, एक नरनौंद में, एक उकलाना में है। प्रति वर्ष यहाँ प्रायः चार पाँच लाख मन कपास ओटी जाती है। भिवाणी में सूत कातने और कपड़ा बुनने की भी एक मिल १६१३ ई० में खोली गई। भिवाणी पीतल और फूल के व्यापार का भी एक बड़ा केन्द्र है। फूल के कटारे अच्छे बनते हैं। पीतल के बर्तन प्रायः पुराने फूटे बर्तनों से बनाये जाते हैं।

व्यापार

व्यापार के काम में अधिकतर बनिये लोग लगे हुये हैं। उत्तर की ओर कुछ खत्री और आरोड़ा भी व्यापार करते हैं। कुछ साधारण व्यापारी हैं और गाँव में नोन, तेल बेचते हैं। कुछ बड़े-बड़े व्यापारी हैं। भिवाणी और सिरसा के महाजन (व्यापारी) बड़े धनी हैं। उनकी आढ़त की दुकानें दूसरे बड़े शहरों में भी है। सुनार लोग रुपया उधार देते हैं। लेकिन स्वतन्त्र व्यापार बहुत कम करते हैं। जमींदार और किसान प्रायः अपना अन्न स्वयं मंडियों में बेचने के लिए ले जाते हैं। रिवाड़ी भटिंडा रेलवे के बनने के पहले पश्चिमी जिलों और दिल्ली के समीप का व्यापार हान्सी, हिसार, फतेहाबाद और सिरसा होकर जाता था। यह नगर इस समय भी व्यापार केन्द्र है। भिवाणी और सिरसा से बहुत सा व्यापारिक सामान देशी राज्यों को भेजा जाता था। फिर व्यापार का यह सामान रेल द्वारा जाने लगा। हांसी और हिसार व्यापार के केन्द्र न रहे। हांसी में स्थानीय खेती का व्यापारिक सामान बिकने के लिये इकट्ठा होने लगा। सिरसा का व्यापार भी घट गया। भिवाणी पहले के समान ही व्यापार केन्द्र बना रहा। सिरसा का व्यापारी दाबवाली में चला गया। बीकानेर, जोधपुर भटिंडा रेल की यह स्टेशन और दूसरी स्टेशनों पर व्यापारिक सामान पहुँचने लगा। बुधलदा और तोहान (नगरों) का पहले कोई महत्व न था। रेल के खुल जाने से यह व्यापार केन्द्र बन गये। हिसार जिले से कपास (रूई) अनाज, अलसी बाहर भेजी जाती है। कपड़ा और नमक बाहर से आता है।

हिसार जिले में आने जाने की बड़ी सुविधा है। रिवा। भटिंडा मीटर गेज रेलवे १२२ मील इस जिले में होकर जाती है। यह बम्बे बड़ौदा सेन्ट्रल इण्डिया रेलवे का अंग है। भिवाणी, बवानी, खेड़ा, हान्सी, सतरोद, हिसार, जाखोद, आदमपुर, भट्टू, डींग, सुचन, कोटली सिरसा, गुढ़ा और कलनवाली इस रेलवे लाइन की स्टेशन है। इस लाइन पर व्यापार का सामान अधिक जाता है। मुसाफिर कम चढ़ते हैं।

जोधपुर बीकानेर रेलवे १६०२ ई० में भटिंडा तक बन गई। जिले की सीमा से कुछ बाहर चौटाला रोड स्टेशन है। जाट स्कूल और मरुभूमि सेवा कार्य कार्यालय का केन्द्र संगरिया (बीकानेर राज्य) इसी स्टेशन से निकट पड़ता है। दूसरा स्टेशन दाबवाली है। इस रेलवे की डिगाना-चूरू शाखा भी हिसार तक खुल गई है।

दक्षिणी-पंजाब रेलवे फतेहाबाद और हान्सी तहसील के कुछ भाग में होकर जाती है। बुधलदा, जाखल और तोहाना स्टेशन हिसार जिले में इस लाइन पर स्थित है। इस ओर से करांची को व्यापार का सामान जाता है। नार्थ वेस्टर्न रेलवे से जाखल से हिसार को एक या दो मील लम्बी शाखा खोल दी है। दुर्भिक्ष पड़ने पर अन्न बाहर से आ है। कुछ गरीब लोग अपना सामान बाँधकर लायलपुर

और झेलम कलोनी को चले जाते है।

भिवाणी से रोहतक को पक्की सड़क जाती है। एक पक्की सड़क भट्टू से फतेहाबाद को जाती है। कच्ची सड़कों की दशा अच्छी नहीं है। वे प्रायः उड़ती हुई बालू से ढक जाती हैं। इन पर बैल-गाड़ियाँ नहीं चल सकतीं। इसलिए इन भागों में आने जाने और सामान ढोने का एकमात्र साधन ऊँट है।

हिसार जिले में नाव चलने योग्य कोई नदो नहीं है। पश्चिमी यमुना नहर की हान्सी शाखा में केवल २ मील तक नाव चल सकती है ? घग्घर नदी प्रायः सूखी पड़ी रहती है। केवल बाढ़ के दिनों में इसे पार करने के लिए नाव की आवश्यकता पड़ती है। बाढ़ के दिनों में इसे पार करने के लिये खैरेकी, जिचरार, बन्सीधर, पनिहारी, रटिया, कलोशा, अलवलवास, जाखल, सदहनवास, और बीरा हाथी में नाव मिलती है। इन स्टेशनों पर प्रायः किसान नदी को पार करने के लिये नाव द्वारा अपने खेतों को जाया करते है। नाव के घाट ऊँटों की पहुँच न होने के कारण दूसरे यात्री बहुत कम इसे पार करते हैं।

जन संख्या

हिसार जिले की जन संख्या प्रायः ९ लाख है। १८८१ ई० में वहाँ की जन संख्या केवल पौने सात लाख थी। यह वृद्धि अधिकतर राजपूताना की ओर से आने वाले मनुष्यों के कारण हुई है। अकाल पड़ने पर यहाँ के निर्धन लोग भी कनाल कलोनी (नहर के उपनिवेश) की ओर चले जाते हैं। इस जिले में स्त्रियों से पुरुषों की संख्या अधिक है। स्त्रियों की संख्या प्रायः ७५००० कम है। यह अन्तर कुछ प्रकृतिक हैं। लड़कियों की अपेक्षा लड़के अधिक पैदा होते हैं। स्त्रियों को कठिनाई में जीवन बिताना पड़ता है। वे छोटी उम्र में ही माता बन जाती हैं। पुरुषों की अपेक्षा वे थोड़ी उम्र में ही मर जाती हैं। अतः तहसीलों में अधिक जन संख्या (प्रायः पौने दो लाख) हान्सी की है। यहाँ सिंचाई की सब से अधिक सुविधा है। नहरें यहीं सबसे अधिक है। सब से अधिक जन संख्या (२ लाख) फतेहाबाद की है। यहाँ कोई बड़ा कस्बा नहीं हैं। सिक्खों के कुछ गाँव बहुत धनी हैं। हिसार तहसील की जन संख्या कम (१,२७,०००) होने का एक कारण यह है कि इस तहसील का काफी बड़ा भागा बीरया फार्म से घिरा हुआ है। इसमें ६७ वर्ग मील भूमि ऐसी है जिसमें खेती नहीं होती है। भिवाणी और सिरसा तहसीलों में भूड़ होने के कारण अधिक मनुष्यों का खेती से निर्वाह नहीं हो सकता है।

इस जिले में भिवाणी, हिसार, सिरसा और हान्सी ही चार नगर हैं जिनकी संख्या १०,००० से ऊपर है। अधिकांश जन संख्या गाँवों में बसी हुई है। इस जिले में ९९६ गाँव ऐसे हैं जो एक दूसरे से २॥ मील से अधिक दूर नहीं है। इनकी जन संख्या औसत से ७५० है। इस जिले के ७५ फी सदी लोग एक दम सीधे खेती में लगे हुये हैं। सरकारी नौकरों रेलवे कर्मचारियों और व्यापारियों को छोड़ कर शेष जन संख्या उन पेशों में लगी हुई हुई है। जिसकी जीविका किसान से पलती है। इस जिले में ६७ फी सदी हिन्दू २७ फीसदी मुसल-मान और ४ फीसदी सिक्ख रहते हैं। सिक्खों की संख्या दूसरों की अपेक्षा अधिक बढ़ रही हैं।

हिन्दुओं में इस जिले में विश्नोई अधिक उल्लेख-नीय हैं विश्नोई सम्प्रादय की उत्पत्ति बागरी या मार-वाड़ी है। वह न विष्णु का अपभ्रंश है। कोई हिन्दू विश्नोई हो सकता है। इस जिले में अधिक तर जाट और खत्री विश्नोई है। विश्नोई सम्प्रदाय की उत्पत्ति निम्न प्रकार है :—

बीकानेर के दक्षिण में जोधपुर राज्य के पिम्पा-सर गाँव में एक पंजाब राजपूत रहता था। वह साठ वर्ष का हो गया। उसके कोई पुत्र न था। एक बार उसका पड़ोसी खेत बोने जा रहा था। लेकिन इस पुत्रहीन राजपूत को देख कर और अपशकुन मान कर वह लौट गया। इससे राजपूत को बड़ा दुःख हुआ वह जंगल में गया और सन्ध्या समय तक सन्ताप करता रहा। सन्ध्या समय साधू ने दर्शन देकर कहा कि नौ मास में तुम्हारे यहाँ पुत्र का जन्म होगा। १५०८ सम्वत् (१४५१ ई०) में में आश्चर्य जनक रूप से उसके घर में पुत्र का जन्म हुआ। विश्नोई लोगों का विश्वास है कि यह बालक विष्णु का अवतार था। ७ वर्ष तक यह बालक

अपने साथियों के साथ खेलता रहा। फिर २७ वर्ष तक एक दम मौन रह कर उसने गाय चराई इस बीच में उसने कई आश्चर्य जनक काम किये। वह विना चीनी आदि पदार्थ से केवल इच्छा शक्ति से ही नाना प्रकार की मिठाई प्रगट कर देता था। इसी लिये लोग उसे अचम्भा या जम्भा कहते थे। ३४ वर्ष के बाद एक ब्राह्मण उसके पास शब्द उच्चारण करवाने के लिये भेजा गया। जब ब्राह्मण ने अपनी असमर्थता प्रगट की तो अचम्भा या जम्भाक जी ने अंगुली रगड़ कर आग प्रगट कर दी और प्रथम शब्द उचारण किया। इसके बाद उसने बीकानेर से ८० मील दूर एक पहाड़ी पर आचार्य का जीवन बिताया। ५१ वर्ष के बाद उसका शरीर शान्त हो गया वह आजीवन ब्रह्मचारी रहा। उसके चेलों ने उसके उपदेशों का संग्रह किया है जो इस प्रकार हैं।

तीस दिन सूतक-पांच रोज रतवन्ती नारी।
सेरा करो स्नान, सील सन्तोप स्वच्छ प्यारी॥
पानी बानी ईंधन इतना लीज्यो छान।
दया धर्म हृदय धरो गुरु बताई जान॥
चोरी निन्दा झूठ वर्ज्या वाद न करिवो कोई।
अमल तमाखू भांग लील दूर ही त्यागे॥
मद मास देख के दूर ही भागो।
अमर रखाओ ठाट बैल तबीन बाहो॥
अमास्या ब्रत रुंख लीलो ना बाओ।
होम, जप, समाध, पूजा वाश बैकुंठी पाओ॥
उन्तीस धर्म की आखरी गुरु बताई सोई।
पहल देउ पर चाव्य जिसको नाम विश्नोई होई॥

बच्चा पैदा होने के ३० दिन और मासिक धर्म की दशा में स्त्री को भोजन नहीं बनाना चाहिये। संवेरे (प्रातः काल) स्नान करो। व्यभिचार न करो। सन्तोष रक्खो और स्वच्छ रहो। पानी छान कर पियो। वचन समझ कर बोलो ईंधन को देख कर जलाओ जिससे उसके साथ कीड़े न जल जावें। गुरु ने बताया है कि हृदय में दया धर्म रक्खो। चोरी, निन्दा और झूठ वर्जित हैं। किसी से वाद (झगड़ा) न करो अफीम, तम्बाकू, लील (नीले वस्त्र) त्याग दो। मद (शराब) और मांस को देखकर दूर भागो। बकरों को जीवित रहने दो (कसाइयों के के हाथ बेच कर उन्हें न कटवाओ बैल से हल न जोतो। अमावस्या को ब्रत रक्खो। हरे वृक्षों को न काटो। होम, जप, सन्ध्या, पूजा करो और स्वर्ग प्राप्त करो। यदि विश्नोई कहलाना चाहो तो अपने बालकों का दीक्षा संस्कार करो। इन उपदेशों में बहुतों को विश्नोई मानते हैं। वे मदिरा मांस, तम्बाकू नहीं छूते हैं। घर पर नीले वस्त्र नहीं पहनते हैं। ऊँटों से हल जोतते हैं। यथा शक्ति जीव हिंसा नहीं करते हैं न दूसरों को करने देते हैं। इसी से उनके गाँव के पास हिरण के झुण्ड मिलते हैं। वे कबूतर और दूसरी चिड़ियों को बाजरा या मोठ बखेर देते हैं। वे अमावस्या का ब्रत रखते हैं और दिन में तीन बार (प्रातः, दोपहर और सन्ध्या) को विष्णु नाम जपते हैं। पहल या दीक्षा संस्कार इस प्रकार होता है:—एक साध या विश्नोई पुजारी पहले होम करता है। फिर वह बालक को विश्नोई धर्म की बातें सिखाता है। एक कोरी हाँडी में पानी रख कर वह इसके ऊपर विश्नोई गायत्री पढ़ता है। फिर वह इस पानी को अपनी माला से हिला कर शिष्य (बालक) की उँजली में तीन बार डालता है। बालक इसे पी लेता है। फिर शिखास ही शिष्य का सिर मुँड़ा दिया जाता है। इस अवसर पर दूसरे विश्नोई इकट्ठे हुआ करते हैं। विश्नोई लोग ब्राह्मणों को नहीं मानते हैं उनके पुजारी साधू होते हैं। वे मृतक को जलाने के बदले गाड़ देते हैं। विश्नोई जम्भाजी की समाधि (मठ) का दर्शन करने जाया करते हैं।

कुछ हिन्दू, सिक्ख और मुसलमान निघाया (डेरा गाजी खाँ) के सखी सरवर सुल्तान के मानने वाले हैं। वे सुल्तानी कहलाते हैं। कुछ गाँवों में सुल्तान की मूर्तियाँ बनी है यहाँ सवा मन या सवा पांच मन। मिठाई का प्रसाद चढ़ता है।

नानक पन्थी सिक्खों का एक सम्प्रदाय है। वे बाबा नानक को मानते हैं। वे अपना सिर मुँड़ा लिया करते हैं और ब्राह्मणों को मानते हैं।

असली सिक्ख सिरसा तहसील और फतेहाबाद तहसील के उत्तरी भाग में रहते हैं। वे गुरु गोविन्द सिंह के मानते हैं। वे केश, कछ, कड़ा, कंघा, और कर्द या कृपाण रखते हैं। वे ग्रन्थ साहब को मानते हैं गौ रक्षा करते हैं और तम्बाकू नहीं पीते हैं।

जैन-लोग अधिकतर नगरों में रहते हैं। वे प्रायः

शिक्षित और धनी होते हैं। वे वेदों को नहीं मानते हैं। पर वे देवताओं की पूजा करते हैं और निरंकार को सर्वोपरि मानते हैं। वे ब्राह्मणों को नहीं मानते हैं उनके साधू या पुजारी अलग होते हैं। वे निर्माण प्राप्त अर्हत (साधुओं) को भी मानते हैं। वे जनेऊ नहीं पहनते हैं। स्नान की ओर भी विशेष ध्यान नहीं देते हैं। वे अहिंसा का पालन करते हैं। मन्दिर पन्थी जैन मूर्ति पूजते हैं। धूँधा पन्थ जैन मूर्ति पूजा नहीं करते हैं।

आर्य समाज का इस जिलों में प्रथम बार १८८६ ई० में प्रचार हुआ। १८६३ ई० में हिसार में आर्य समाज मन्दिर बना। १८६६ ई० में भिवाणी में आर्य समाज ने एक अनाथालय स्थापित किया।

इस जिले में कुछ हिन्दू कर्वाले कई सदियों पहले मुसलमान हो गये या बना लिये गये। इस जिले में प्रायः सभी मुसलमान सुन्नी हैं। कुरेशी फकीर अजान देता है और मस्जिद में गाँव के लड़कों को कुरान पढ़ाता है। वही निकाह पढ़ता है (ब्याह कराता है) पर साधारण मुसलमान स्थानीय पीर और देवताओं को मानता है। इस जिले के चमार रामदास को पूजते हैं। रामदासा या रह दास अथवा रैदास बनारस का एक भक्त (चमार) था। कुछ लोग गुंगा पीर को मानते हैं और मोर पंख लगाकर उसको झंडा अपने मुहल्ले में गाड़े रखते हैं चौहान राजपूत था वे तो गुंगा देवता, माता और गुरु नानक को भी मानते हैं। कुछ चमार मृतक को जलाते हैं। कुछ गाड़ते हैं।

चूहा (भंगी) लोग लाल बेग या लाल गुरु की पूजा करते हैं। उनका मठिया प्रायः सभी भंगी मुहल्लों में मिलती हैं।

हिसार जिले में प्राटेस्टेंट ईसाई बढ़ाने का प्रयत्न हो रहा है। इनका प्रधान केन्द्र लाहोर में है। यह अमरीकन मिशनरियों के हाथ में है। मिशन का काम प्रथम बार १८८७ ई० में आरंभ हुआ।

जनाना मिशन स्त्रियों में ईसाई मत फैलाने का काम करता है।

इस जिले की भाषा हिन्दी, बागरी और पंजाबी है। हिन्दी या हिन्दुस्तानी में उर्दू भी शामिल है। उर्दू गांवों की भाषा नहीं है। शहर के शिक्षित लोग विशेषतः मुसलमान लोग उर्दू बोलते हैं। हिन्दी में इस जिले की कई बोलियाँ शामिल हैं। हिन्दी ही इस जिले की प्रधान भाषा है। यदि हम फतेहाबाद से तोहना तक एक रेखा खींचें तो इस रेखा के दक्षिण का समस्त भाग हिन्दी भाषा भाषी है। फतेहाबाद हिसार और कैरू के बीच में होकर जाने वाली रेखा के पूर्व में जो भाग स्थित है वहाँ भी हिन्दी बोली जाती है। इस प्रकार जिले के आधे से अधिक भाग की भाषा एक दम हिन्दी है। इस रेखा के पश्चिमी भाग में पंजाबी बोली जाती है। हिन्दी के पश्चिमी भाग में बागरी का क्षेत्र है। असली बागरी सिरसा के दक्षिण-पश्चिम में बोली जाती है।

इतिहास

अधिकांश हिसार और रोहतक जिले का कुछ भाग मिलकर हरियाना कहलाता था। हरियाना शब्द की उत्पत्ति कई प्रकार से बतलाई जाती है। कुछ लोगों का विचार है कि यहाँ राजा हरिश्चन्द्र का राज्य था। इसलिये देश का नाम हरियाना पड़ गया। कुछ लोगों का विचार है कि यहाँ हरिया वन था। हरिया एक पौधे का नाम है। इसी की अधिकता थी। इसलिये इस प्रदेश का नाम हरियाना पड़ गया। कुछ विद्वानों का मत है कि प्राचीन समय में यह भाग अधिक हरा-भरा था। सम्भवतः इसी से इसका नाम हरियाना पड़ गया।

हिसार जिले में हान्सी अतिप्राचीन स्थान है। यहाँ का गढ़ या किला भी पुराना है। यह प्राचीन आर्य सभ्यता का एक केन्द्र था। यह ब्रह्मर्षि देश से अधिक दूर न था। ब्रह्मर्षि देश सरस्वती और घग्घर नदियों के बीच में करनाल जिले में स्थित था। प्राचीन आर्य सभ्यता के भग्नावशेष इसलिये कम हो गये कि कुछ प्राचीन शिलायें और इमारतों के पत्थर मसजिदों और मकबरों के बनाने में लगा दी गई। इस प्रकार इस प्राचीन इतिहास की प्रामाणिक सामग्री बहुत कम रह गई।

इतिहास बद्ध घटना तोंवर राजपूत विजय पाल के आक्रमण से आरम्भ होती है। विजय पाल अनंग पाल का भाई था। जब अनंग पाल ने दिल्ली में अपना राज्य जमा लिया तो ७६२ ई० में उसने अपने भाई विजय पाल को इस प्रदेश के जीतने के लिये भेजा

कहते हैं बहुना गाँव उसी ने बसाया था। इससे से कुछ शताब्दी पूर्व चौहानों के पूर्वज राजा अजय पाल ने अजमेर नगर बसाया। ६८५ ई० में चौहन राजा मानिक राय दिल्ली और अजमेर का राजा हो गया। उसके पौत्र दुजगन देव ने ८६६ ई० में सुबुक्तगीन का सामना किया। चौहान राजा बीसल देव ने १०६६ ई० में अपना अचल प्रभुत्व दिल्ली के तोवंर राजाओं पर भी जमा लिया था। इस समय चौहान राजा सर्व प्रधान थे। इन्हीं में बीसल देव चौहान ने राजपूत राजाओं के समूह को एकत्रित करके मुसलमान आक्रमणकारियों का सामना किया। जो प्रदेश इस समय हिसार जिले में शमिल है वह उस समय चौहान राज्य की सीमा पर स्थित था। इस सीमा प्रान्त का हान्सी या असिदुर्ग बीसल देव के लड़के अनुराज को १००० ई० में एक जागीर के रूप में मिला था।

१०३७ ई० में महमूद के बेटे मसूद ने हान्सी दुर्ग लेने का किया लेकिन इसमें वह सफल न हो सका।

दूसरी बार उसने फिर घेरा डाला। इस बार उसने किले पर अधिकार लिया। अनुराज का बेटा तेश पाल चौहान राजपूतों को लेकर भाग निकला और उसने बूंदी की नांव डाली। यह राजवंश हरवंश भी कहलाता है। सम्भव है इसोसे हरियाल नाम पड़ा है। ११७३ ई० में दिल्ली के तोंवर वंश का अन्त हो गया। अनंगपाल द्वितीय का स्वर्ग वास हो गया।

राय पिथौरा या पृथ्वी राज दिल्ली के सिंहासन पर बैठे। इस जिले पर भी पृथ्वी राज का राज्य हो गया। पृथ्वी राज ने हान्सी के दुर्ग (किले) को अधिक दृढ़कर लिया। इसी समय मुहमाद गोरी ने भारतवर्ष पर चढ़ाई करने की तैयारी की।

११६१ ई० में सरस्वती के किनारे नरैनी के युद्ध में पृथ्वी राज ने मुहम्मद गोरी को मार भगाया। पर दूसरे वर्ष मुहम्मद गोरी अधिक तैयारी के साथ फिर लौट आया। इस बार सरस्वती के किनारे पृथ्वी राज की हार हुई। सिरसा के पास पृथ्वी राज पकड़ लिया गया और मार डाला गया। हान्सी और उसके समीपवर्ती प्रदेश का चौहान राजा हान्सी भी मार डाला गया। इस विजय से दिल्ली अजमेर हमीर और सरस्वती (सिरसा) पर मुहम्मद गोरी का अधिकार हो गया। जो प्रदेश हिसार ज़िला में या उस पर गोरी का राज्य जम न सका। इस गड़बड़ी के समय में राज पूताना की ओर से जतु राजपूतों ने सिरसा में प्रवेश किया। वे जिले के दक्षिणी भाग में फैल गया केवल नाम मात्र के लिये उन्होंने दिल्ली राजाओं का शासन स्वीकार किया। आगे चलकर मुसलमानी राज्य जड़ पकड़ गया। १२५४ ई० में गुलाम वंश के एक राजा निजाम के समय में हान्सी और सिरसा में मुसलमानी सेना रहने लगी। खिलजी वंश के पतन होने पर सिरसा पर तुगलक वंश का अधिकार हो गया। इस समय सिरसा भारत के प्रधान नगरों में था। फीरोज तुगलक ने फतेहाबाद नगर बसाया। यहाँ तक पानी लाने के लिये उसने घग्घरके किनारे फुलाद से यहाँ तक एक नहर खुदवाई। इसे जोइया कहते हैं। फिर फीरोज ने हिसार नगर बसाया जो हिसार फीरोजा के नाम से प्रसिद्ध है। यह खुरासान से मुलतान होकर दिल्ली आने वाले मार्ग में पड़ता था। इसलिये उसने इस मरुभूमि में हिसार नाम का किला और नगर बनवाया। यहाँ से शिकार के लिये जाने में भी सुविधा रहती थी किले और राजमहल को बनाने में हिन्दू मन्दिरों के पत्थरों और मसजिदों का प्रयोग हुआ। इसके समीप कई छोटे-छोटे हिन्दू नगर थे। जब किला, महल चारदीवारी और खाई बन गई तब पता लगा कि यहाँ पानी नहीं है। इसलिये उसने यहाँ तक पानी लाने के लिये पश्चिमी यमुना नहर बनवाई हिसार नगर बनने के पहले यह प्रदेश हान्सी शिक या विभाग में शामिल था। फीरोज ने बारह मील की दूरी पर फीरोजाबाद हर्नी खेड़ी नाम का नगर बसाया।

१३३६ ई० तैमूर लेन का आक्रमण हुआ। सतलज को पार करके मरुभूमि में होता हुआ वह बीकानेर के भाट नेर स्थान में पहुँचा। अपने समय में यह भारत का एक प्रमुख स्थान था। घमासान युद्ध के पश्चात् तैमूर ने भाटनेर पर अपना अधिकार कर लिया। फिर वह यहाँ से घग्घर घाटी के मार्ग से पूर्व की ओर बढ़ा। उसने किनारे ये हौज

(घग्घर तट की एक झील के किनारे) पर पड़ाव डाला। वहाँ से वह फीरोजाबाद होता हुआ सिरसा (सरस्वती) की ओर बढ़ा। सिरसा के निवासी उसके आने का समाचार पाकर भाग निकले। लेकिन बहुत से पकड़ लिये गये और मार डाले गये। उनका दोष यह था कि वे सुअर का मांस खाते थे। यहाँ से आगे बढ़कर तैमूर ने फतेहाबाद में पड़ाव डाली। यहाँ के निवासी भी भाग निकले। पर बहुत से खदेड़ कर पकड़ लिये गये और मार डाले गये। यहाँ से वह अहरूहनी (अहरवान) की ओर बढ़ा। यह गाँव जोइया के किनारे स्थित है। यह स्थान लूटा गया और जला दिया गया। फिर घग्घर के जंगलों में होकर तोहना को प्रस्थान किया गया। जब तैमूर के एक दल ने जाटों पर चढ़ाई की तो वे गन्ने के खेतों में छिप गये। आजकल यहाँ गन्ना नहीं होता है। इससे सिद्ध होता है कि उस समय घग्घर में अधिक पानी रहता था। तोहना से कैथल के बीच वाले भाग में उसने फिर जाटों पर चढ़ाई की और हिम्मतपुरा, पुरू मजरा और उदयपुर गाँवों के पास उसने उन्हें हराया।

अराजकता के समय में पहले इस प्रदेश में लुटेरों ने अपना अधिकार जमाया। फिर १४११ ई० में खिजरखाँ ने यहाँ अपना अधिकार कर लिया। आगे चलकर १४१४ ई० में वह सैयद वंश का पहला बादशाह बना और दिल्ली के सिंहासन पर बैठा। मुबारक शाह सैयद के समय में सरस्वती (सिरसा) सेना का केन्द्र बन गया। सरहिन्द के विद्रोही किले पर चढ़ाई करने के पहले शाही सेनायें पड़ोस के जिलों से आकर यहीं इकट्ठा होती थी।

लोदी वंश के शासन काल में हरियाना या हिसार दिल्ली राज्य का अंग बना रहा।

१५२६ ई० में बाबर के आक्रमण के समय हिसार फीरोजशाही सेनाओं का अड्डा था। पानीपत के युद्ध में सम्मिलित होने वाली शाही सेनाओं के लिये हिसार फीरोजा एक महत्वपूर्ण सैनिक केन्द्र था। जो सेना यहाँ एकत्रित होती थी। वह सरहिन्द से दिल्ली की ओर कूच करनेवाली बाबर की सेना पर एक बगल (पक्ष) से छापा मारती रहती थी। घग्घर पहुँचने पर बाबर को पता लगा कि हिसार की सेना उस पर आक्रमण करने आ रही है। अतः उसने युवराज हुमायूँ को उस ओर भेजा। हुमायूँ ने आक्रमणकारियों को मार भगाया और हिसार पर अपना अधिकार कर लिया। बाबर ने हुमायूँ को हिसार नगर पुरस्कार के रूप में दे दिया। शेरशाह के समय में सिरसा फिर दिल्ली राज्य का अंग हो गया। केवल कुछ समय के लिये बीकानेर के राय कल्याण सिंह ने यहाँ अपना अधिकार कर लिया था।

१५५३ ई० में हुमायूँ ने दूसरी बार दिल्ली पर चढ़ाई की। इस बार हिसार पंजाब और सरहिन्द बिना लड़े ही मुगलों को मिल गये। अकबर के समय में हिसार एक महत्वपूर्ण स्थान बन गया। यह मालगुजारी वसूल करने का एक केन्द्र बन गया। जहाँगीर, शाहजहाँ और औरंगजेब के समय में हिसार उल्लेखनीय नहीं रहा। १७०७ में कसूर का एक पठान हिसार का हाकिम बना। १७३८ ई० तक वह हाकिम बना रहा। इस बीच में हिसार के समीपवर्त्ती जिलों में राजसिंहासन के लिये बार-बार भीषण लड़ाइयाँ हुई। १७३६ ई० में नादिरशाह के आक्रमण ने मुगल साम्राज्य को हिला दिया। इसके बाद हिसार के अधिकार के लिये तीन दलों में युद्ध होता रहा। उत्तर-पूर्व की ओर से सिक्ख, उत्तर-पश्चिम की ओर से भट्टी लोग और दक्षिण की ओर से मुसलमान हिसार जिले पर चढ़ाई करते थे। १७३१ ई० में पटियाला राज्य के जन्मदाता आला सिंह ने भटनेर और फतेहाबाद के भट्टी सरदारों से युद्ध छेड़ दिया। यह युद्ध उसके जीवन पर्यन्त चलता रहा। भट्टी लोग खुले हुए गाँवों में रहते थे। वे चरवाहे, लुटेरे और खूँख्वार लड़ाके थे। पटियाला या झींद के सिक्ख सरदारों के समान उनके पास सुजोत सेना न थी। फिर भी वे बार-बार आक्रमण करके सिक्ख सरदारों को चिढ़ाते रहते थे। संकट के समय भट्टी लोग मरुस्थल में बिखरे हुये किले बन्द नगरों (फतेहाबाद, सिरसा, रनिया, अबोहर) में चले जाते थे। भट्टी सरदारों में मुहम्मद अमीनखाँ नेता था। १७५४ ई० में पटियाला नरेश अलासिंह ने अपने बेटे लालसिंह के साथ एक बड़ी सेना लेकर भट्टी सरदारों के तोहना,

जमालपुर, धरसूल और शिकारपुर, मुहल्लों को उजाड़ दिया। भट्टी सरदारों ने हिसार के शाही सूबेदार से सहायता माँगी। इनकी सहायता के लिये एक सेना भेजी गई। पर अकलगढ़ की लड़ाई में भट्टी सरदार हरा दिये गये। दूसरी रात को जब उन पर छापा मारा गया तो उन्होंने भाग कर हिसार में सांस ली। यहाँ उन्होंने शाही सेना की सहायता से १७५७ ई० में फिर पटियाला पर चढ़ाई की। भट्टी और शाही सेनायें धरसूल की लड़ाई में हरा दी गईं। शाही सूबेदार भी मारा गया। इस बार सिक्ख सेना हिसार तक घुस आई। उसने हिसार नगर लूट लिया। १७६७ ई० में सिक्खों ने किलेबन्द तोहनो नगर को लूटा। शाही सूबेदार नजीबुद्दौला ने सिक्खों की प्रगति को रोकने के लिये रनिया भट्टी सरदार नवाब अमान खाँ को हिसार का नाजिम नियुक्त किया, पर इस चाल से सिक्खों की प्रगति रुक न सकी। झींद के महाराजा गजपतिसिंह और पटिया राजा अमरसिंह ने पांच छः वर्षों में झींद, सफीदों, कसुहां और तोहना के महलों पर अपना अधिकार कर लिया। १७६८ ई० में सिक्खों को रोकने के लिये रुहेला सरदार नजार खाँ हरियाना को भेजा गया। पर बरनाला के पास मोरन में उसकी हार हुई और वह मार डाला गया। १७७१ ई० में अमरसिंह को भटिंडा का किला मिल गया। १७७४ ई० में महाराजा अमरसिंह ने अपने प्रसिद्ध प्रधान मन्त्री नन्नूमल के साथ बिघार के किले को घेर लिया भट्टी सरदारों ने इसे बचाने के लिये जी-जान से कोशिश की पर किला सिक्खों के हाथ चला ही गया। इसके बाद पटियाला के राजा ने फतेहाबाद, सिरसा और रनिया पर अधिकार कर लिया। दिल्ली के अधिकारियों ने सिक्खों को रोकने के लिये फिर एक बार प्रयत्न किया। हांसी के सूबेदार रुहेला सरदार रहीमदाद खाँ के साथ एक बड़ी सेना भेजी गई। पहले झींद के राजा गजपतसिंह पर चढ़ाई की गई। पटियाला के राजा ने अपनी एक सेना अपने प्रधान मन्त्री नन्नूमल के साथ झींद की सहायता के लिये भेजा। दोनों सिक्ख सेनाओं ने झींद की लड़ाई में शाही सेना को बुरी तरह से हराया रहीमदाद खाँ (सूबेदार) भी मारा गया! इस विजय का यह फल हुआ कि तोहना का जिला और रोहतक का कुछ भाग राजा गजपतसिंह को मिल गया। पटियाला के राजा ने हांसी, हिसार और तोहना पर अधिकार कर लिया। रनिया का किला जीत लेने पर सिरसा का पूरा परगना पटियाला नरेश के हाथ में आ गया। उसने तोशाम के पहाड़ी किले को फिर से बनवाया। अगरोहा में दूसरा किला और हिसार में राजमहल बनवाया कुछ समय तक हिसार जिला सिक्खों, राजपूतों और मुसलमानों के युद्ध उजड़ गया।

१७८१ ई० में दिल्ली की ओर अन्तिम प्रयत्न किया गया। नजफ अली खाँ राजा जै सिंह के साथ बड़ी सेना लेकर इस जिले में पहुँचे। झींद में एक सन्धि हो गई। इसके अनुसार हान्सी हिसार, रोहतक, मेहम और तोशाम के परगने दिल्ली राज्य के अंग मान लिये गये शेष प्रदेश जो सिक्खों ने जीत लिया था वह उन्हीं के अधिकार में बना रहा। फतेहाबाद और सिरसा यही सरदारों को सौंप दिया गया। राजा जै सिंह हिसार के नाजिम बना दिया गये।

१७८३ ई० के चालीसा अकाल ने जिले को नष्ट कर दिया। १७८३ में वर्षा बिल्कुल नहीं हुई। लोग भूखों मरने लगे। किसी में भागने का साहस न रहा। जानवरों को चारा न मिलने से वे भी बड़ी संख्या में मर गये। मुट्ठी भर अन्न के लिये बच्चे बेच डाले गये खेत बिना जुते पड़े रहे। गाँव खाली हो गये। सिक्ख सेना भी अपने प्रदेश में चली गई। एक प्रकार से यह जिला फिर बसाया गया। पर अकाल के चिन्ह दूर नहीं हुये।

इसी आपत्तिकाल में जार्ज टामस नाम के एक अँग्रेज ने अपना एक छोटा राज्य बनाने का प्रयत्न किया पहले वह साधना की समरू बेगम के यहाँ नौकर था १७८८ ई० में उसने बेगम की नौकरी छोड़ कर महाराजा सिन्धिया के सम्बन्धी आपा खण्डेराव, के यहाँ नौकरी कर ली। खण्डे राव के हाथ में इस समय झज्झर, दादरी और नरनौल का प्रदेश था। टामस ने पहले अपने स्वामी की सहायता के लिये झज्झर और रोहतक में एक सेना एकत्रित की। उसने खण्डेराव और उसके बेटे वामनराव की सेवा की। इस नौकरी को छोड़कर जार्ज टामस ने

हरियाना में अपना प्रमुत्व स्थापित करने का निश्चय किया। यह प्रदेश अकाल और बाहरी आक्रमण से जर्जर हो ही चुका था उसका सामना करने वाला यहाँ कोई न रहा। पहले उसने कन्हौरा गाँव पर अधिकार कर लिया फिर उसने समीप वर्ती प्रदेश पर अधिकार जमाना चाहा। फिर उसने हांसी में अपनी राजधानी बनाई। कुछ ही समय में उसका अधिकार हिसार, तोशम बरवल और दूसरे गाँवों तक फैल गया। फिर शेखावटी के प्रदेश पर आक्रमण किया। १७६८ ई० में बीकानेर राज्य से बहुत सा धन लूट लाया। पर जब उसने झींद को घेरा तो उसे पीछे लौटना पड़ा। यहाँ से वह मेहम पहुँचा। १७६६ ई० में उसने फिर बीकानेर में छापा मारा। उसने जार्जगढ़ या जहाज़ गढ़ में किला बनवाया। जब उसने सिक्ख राज्यों पर आक्रमण किया उसे पीछे लौटना पड़ा। वह कैथल, झींद, सोनपत और पानीपत होता हुआ जार्जगढ़ या जहाज़गढ़ को लौटा। अन्त में वह सिन्धिया से लड़ बैठा। जहाज़गढ़ के पास वारी स्थान में उसकी हार हुई। वह हाँसी में से भाग आया। सिन्धिया की सेना ने यहाँ भी उसका पीछा किया। वह किले में छिप गया। अन्त में वह बिटिश राज्य की ओर भाग गया।

यहाँ सिन्धिया का प्रमुत्व हो गया। आगे चल कर सिन्धियाँ और ईस्ट इण्डिया कम्पिनी में लड़ाई हुई। लसवारी और अर गाँव के युद्ध के बाद सरजी अंजन गाँव की सन्धि हो गई। सन्धि के अनुसार गंगा और यमुना के बीच का द्वावा तो ईस्ट इण्डिया कम्पिनी को मिल ही गया। इसके अनुसार जैपुर और जोधपुर राज्यों के उत्तर का प्रदेश भी सिन्धिया से ईस्ट इण्डिया कम्पिनी को मिल गया। इस प्रकार इस सन्धि से गुर गाँव, हिसार और रोहतक के जिले सिंधिया से ईस्ट इण्डिया कम्पनी को मिल गये।

इस समय जिले का दशा बड़ी शोचनीय थी। घग्घर के किनारे केवल ११ गाँव ऐसे थे जिनमें कुछ मनुष्य रहते थे। घग्घर की घाटी जंगल से घिर गई। पानी की भी कमी थी। नदियों के मोड़ के तालाब सूख गये। जंगली जानवरों का भी जीवित रहना कठिन हो गया। कुछ लोग यहाँ से बचे हुये जानवरों को चुरा ले जाते थे। वे अपने साथ तलवार बन्दूक और बर्छी रखते थे। कभी-कभी यहाँ आग भी लग जाती थी और मीलों तक घास जल जाती थी। आँधी चलने पर आग इतनी तेजी से आग बढ़ती थी की मार्ग के मनुष्य और पशु भी जल जाते थे। १७६५ ई० में सतलज के किनारे पर लाले की स्थान से एक आग ऐसी फैली कि उसने २१० मील की दूरी तक यमुना के पास पानीपत तक का समस्त प्रदेश जला दिया।

चार तहसीलों में छोटे छोटे गाँव खाली हो गए। पश्चिमी यमुना नहर के पास बड़े गाँवों में वही लोग आपत्ति काल में शेष बचे जो हल चलाने के साथ साथ समय पड़ने पर तलवार भी चला सकते थे। १८०३ ई० में इस जिले में ब्रिटिश अधिकार होने पर रान्सी का किला सुधरवाया गया और जनरल आक्लोनी ने मिर्जा इलियास वेग को परियाल और रोहतक का नाजिम नियुक्त किया। पर भट्टी लोगों के आक्रमण होते रहे। १८१० ई० में यहाँ एक ब्रिटिश सेना भेजी गई। पहले इस सेना ने सिवाणी पर अधिकार कर लिया। फिर यह सेना हाँसी और हिसार होती हुई फतेहाबाद पहुँची भट्टी सरदार भगा दिया गया उसकी जायदाद सीधे ब्रिटिश राज्य में मिला ली गई। सिरसा में नवाब जाब्ता-खाँ ने आत्म समर्पण किया। उसकी जागीर फिर उसको लौटा दी गई। हान्सी जिलों का केन्द्र स्थान बनाया गया। यहीं गार्डिनर नाम का एक अंग्रेज यहाँ ६ वर्ष तक जिला धीश बना रहा। भट्टी लोगों के आक्रमण बन्द न हुए अतः जाब्ता खाँ की सब जायदाद जब्त कर ली गई। इस प्रकार समस्त सिरसा तहसील सीधे ब्रिटिश शासन में आ गई।

गदर के समय (१८५७) वर्तमान हिसार जिला दो जिलों में बटा हुआ था। एक हिसार था दूसरा जिला भट्टियाना था। समस्त सिरसा तहसील भट्टियाना जिलों में शामिल थी।

१८५७ ई० के मई मास में जब दिल्ली के विद्रोह की खबर यहाँ पहुँची तो सरकारी खजाना कचहरी से हटाकर केटिल फार्म के सुपरिन्टेन्डेण्ट से निवास स्थान पर पहुँचा दिया गया। यहाँ खजाने की भली भाँति रक्षा हो सकती थी। ददरी के नवाब ने भी

अंग्रेजों की सहायता के लिये एक सेना भेजी। हांसी हिसार और सिरसा में कुछ फौज पहले ही से थी। चुङ्गी के चपरासी शहर के दरवाजों पर संतरी नियुक्त हो गया। २६ मई को दिन के ११ बजे हान्सी की हिन्दुस्तानी सेना ने विद्रोह का झण्डा उठाया। कुछ अंग्रेज अफसर समय से सूचना पाकर भाग गये। शेष योरुपीय और ईसाई मार डाले गये उनके बँगले जला दिये गये। दिन के २ बजे। विद्रोह की खबर हिसार पहुँची। अंग्रेज सेनापति और कलक्टर मार डाले गये। फिर विद्रोहियों ने जेल के फाटक खोल दिये। दो अंग्रेज क्लर्क घर में भाग गये। हिसार और हांसी में सब मिला कर २३ (१२ हिसार में ११ हान्सी में) मार डाले गये। केटिल फार्म के सुपरि-टेन्डेएट को मिलकर १३ अंग्रेज हिन्दुस्तानियों की सहायता से भाग गये सिरसा के अंग्रेज को विद्रोह की खबर समय से मिली। उन्होंने (१७) भाग किये रोरी की गढ़ी में शरण ली। कुछ समय में पटियाला से एक सैनिक टोली इन्हें बचाने के लिये आ गई और इन्हें पटियाला राज्य में ले गई। विद्रोह शान्त होने पर पटियाला राज्य ने उन्हें फिर सिरसा भिजवा दिया। विद्रोह फैलने के एक मास फीरोज पुर से कोर्टलैएड नामी एक अंग्रेज डिप्टी कमाएडर सिक्खों की एक छोटी (५५०) सेना लेकर सिरसा की ओर आया। रास्ते में १२० सिपाही और मिल गये। ओधन में ५००० भट्टियों ने इन पर हमला किया। पर वे भगा दिये गये। १८ जून को इस सेना ने छतर का गाँव जला कर बिस्मार कर दिया। इस गांव में एक अंग्रेज मार डाला गया था। दूसरे दिन घग्घर के किनारे खैरे का गाँव के पास विद्रोहियों की एक टोली नष्ट कर दी गई। २० जून को बीकानेर महाराज ने अंग्रेजों की सहायता के लिये ८०० सिपाही सिरसा भेज दिये। २१ जून को ४०० बीकानेरी घुड़सवार हिसार पहुँच गये। इससे मंगली गाँव के विद्रोही दब गये। सिरसा में शान्ति स्थापित करने के बाद जनरल कोर्टलैएड सेना लेकर फतेहाबाद पहुँचा। यहाँ वह ६ दिन रहा। विद्रोह के दबाने के बाद वह १७ जुलाई को हिसार पहुँच गया। इसके बाद हान्सी में विद्रोह दबा दिया गया। दिल्ली से कुछ विद्रोही समय पर न आ सके। इस लिये उन्हें यहाँ सफलता न मिल सकी। कोर्टलैएड ने हाजिम पुरगाँव जला डाला। ११ तारीख को मंगली गाँव जला डाला गया। १३ तारीख को जमालपुर गाँव में विद्रोही हटा दिये गये और गाँव जला डाला गया। शान्ति हो जाने पर १३३ मनुष्य को फांसी दी गई। तीन काले पानी भेज दिये गये दो छोड़ दिये गये। सात गाँवों की जमींदारी जब्त कर ली गई। कई गाँवों से जुर्माना लिया गया। जिन लोगों ने अंग्रेजों की सहायता की थी उन्हें माफी और इनाम मिला।

बागरी गाँवों और नगरों के रहने वाले विद्रोह होने पर गाँव छोड़कर भाग गये थे। घग्घर घाटी के मुसलमान लूट मार मचाने लगे। रांधर मुसलमान विद्रोह में शामिल हो गये। जाट, सिक्ख और देसवाली लोग शान्त रहे और जब विद्रोहियों ने इन पर हमला किया तो इन्होंने वीरता से सामना किया। पटियाला और बीकानेर विद्रोह को दबाने में भारी सहायता की।

१८०३ ई० में जब यह प्रदेश अंग्रेजों के हाथ में आया तो इसकी सीमा निश्चित न थी। बहुत सा प्रदेश सिक्खों के जीत लिया था। केवल अकाल पड़ने के बारसा वे पटियाला को लौट गये थे। अंग्रेज उनका अधिकार नहीं मानते थे यह झगड़ा १८५६ ई० तक चला। अन्त में ४२ गाँव पटियाला राज्य को लौटा दिये गये।

१८३७ ई० में सिरसा तहसील और समीपवर्ती प्रदेश मिला कर भट्टियाना जिला बनाया गया। १८५८ ई० में हिसार और भट्टियाल जिले पंजाब में शामिल कर दिये गये। भट्टियाना जिला सिरसा कहलाने लगा।

१८६१ में मेहम भिवाणी तहसील रोहतक से हिसार में मिला दी गई। झज्जार के नवाब के पाँच गाँव जब्त कर लिये गये थे वे इसी जिले में मिला दिये गये। महाराजा नाभा को थानेश्वर के पास कुछ गाँव मिल गये थे उनके बदले में नाभा राज्य से जो १२ गाँव (मिले वे भी इसी जिले में मिला दिये गये। गदर में बीकानेर राज्य से भारी सहायता मिली थी। उसके पुरस्कार में ४२ तीबी गाँव बीका-नेर राज्य को दे दिये गये)

१८८४ ई० में सिरसा जिला तोड़ दिया गया। इसके गाँव हिसार जिले में मिला दिये गये। १८८६ ई० में बुधलदा इलाका के १५ गाँव कर्नाल जिले की कैथल तहसील से अलग करके हिसार जिले की फतेहाबाद तहसील में मिला दिये गये। १९०५ ई० में फतेहाबाद तहसील का एक छोटा गाँव बीकानेर राज्य को दे दिया गया। १९०६ ई० में सिरसा तहसील का एक गाँव बीकानेर राज्य को मिल गया। इसके बाद फिर इस जिले के क्षेत्रफल में कोई विशेप परिवर्तन नहीं हुआ।

प्रसिद्ध स्थान

हिसार शहर २९'६ अक्षांश और ७५'४६ देशान्तर में स्थित है। यह दिल्ली से १०२ मील पश्चिम की ओर यमुना नहर पर बसा है। रिवाड़ी से भटिंडा को जाने वाली बम्बे बड़ौदा और सेन्ट्रल इण्डिया रेलवे का यह एक बड़ा स्टेशन है। इसके पड़ोस में जंगल है। शहर के एकदम चारों ओर फलों के बगीचे हैं। शहर एक पुरानी चारदीवारी से घिरा है। इसमें पूर्व की ओर दिल्ली और मोरी दरवाजे हैं। पश्चिम की ओर तलाकी दरवाजा और दक्षिण की ओर नागौरी दरवाजा है। कटरा के पास शहर बड़ा शानदार मालूम पड़ता है। इसकी सड़कें चौड़ी और व्योपारियों के घर अच्छे बने हैं। पूर्व और दक्षिण की ओर साधारण घर शहर के बाहर भी बने हुये हैं। डोगरा, माली और धोसी इसके ३ प्रधान मुहल्ले हैं। शहर के दक्षिण की ओर नहर है। नहर को पार करने में लिये ४ पुल (३ पक्के और १ लकड़ी का) बने हैं। नहर के दक्षिण में रेलवे लाइन जाती है। रेलवे के दक्षिण में सिविल लाइन है, जहाँ योरुपीयन लोग रहते हैं। रेलवे स्टेशन सिविल लाइन के पास है। ईसाई गिरिजा भी यहीं है। स्टेशन की सड़क पर सुन्दर छायादार पेड़ लगे हैं। सिविललाइन के पूर्वी सिरे पर पुलिस लाइन और पश्चिमी सिरे के पास गवर्नमेंट केटिल फार्म है। शहर के कुओं में पीने का पानी अच्छा है नहर के किनारे स्नान करने और कपड़ा धोने के लिये अच्छे घाट बने हैं। प्रधान नगर नहर के तल से काफी ऊँचाई पर बसा है।

चारदीवारी के भीतर जामामस्जिद १५३५ ई० (हुमायूं के शासन काल) की बनी है। यहीं फीरोज के किले के भग्नावशेष हैं। महल के नीचे के कमरे अब भी कुछ अच्छी दशा में बने हैं। सुपरिन्टेन्डेण्ट के हाते में फीरोजशाह की मस्जिद है। इसके स्तम्भ एक हिन्दू (जैन) मन्दिर से लेकर बनाये गये हैं।

किले के भीतर फीरोज़ की लाट है। यह भूरे बलुआ पत्थर की बनी है। इसकी चोटी पर संस्कृत का एक शिला लेख है। इससे सिद्ध होता है कि यह किसी प्राचीन हिन्दू मन्दिर से लिया गया था। किले के बाहर गूजरी महल की बारादरी बड़ी रमणीक है। कहते हैं कि यह महल फीरोजशाह ने एक गूजर रानी के रहने के लिये बनवाया था। अब इस महल की बारादरी शेप बची है। उत्तर की दीवार का एक भाग भी शेप है। जैसा नाम से ही प्रगट है उसमें बारह दरवाजे हैं। बारादरी की दीवारें मोटी और ढलवाँ हैं। १२ दरवाजों के ऊपर १२ खिड़कियाँ बनी हैं। भीतरी भाग में ४ हिन्दू या जैन स्तम्भ हैं। यह एक गुम्बदोंदार छत को साधे हुये हैं। दरवाजों के भीतरी भाग में हिन्दू ढंग की नक्काशी है। इमारत के नीचे तीन तहखाना है। इनमें बीच वाले तहखाने में एक छोटा हौज है। शायद यह स्नान करने के काम आता था। दो तहखानों में सिर्फ कमरे हैं। यह बहुत कुछ जीर्ण है। यह इमारत एक प्राचीन हिन्दू मन्दिर को तोड़ कर बनाई गई। मन्दिर यहाँ बहुत पहले स्थित था।

जहाज नाम का दूसरा प्राचीन स्थान है। पहले यह एक जैन मन्दिर था। फिर इसे तोड़कर इससे मस्जिद बना ली गई। यहाँ जार्जटामस नाम का एक अंग्रेज रहने लगा था। जार्ज से बिगड़ कर जहाज नाम पड़ गया। हिसार के पूर्व में हान्सी को जाने वाली सड़क पर कई मकबरे हैं। यह १५३५ ई० में हुमायूं के समय में मरे हुये अफसरों की स्मृति में बनाये गये थे। बहलोलशाह की मस्जिद और मकबरा हिसार से १ मील पूर्व की

ओर हान्सी की सड़क पर स्थित है। यह १६६४ ई० में एक प्राचीन मन्दिर के स्थान पर बनाया गया। आजकल इसे दाना शेर कहते हैं। शेर बहलोल एक फकीर था। उसने गयासुद्दीन तुगलक को बहुत पहले ही बता दिया था कि एक दिन वह बादशाह होगा।

चालीस हाफिज का मकबरा हिसार शहर से उत्तर की ओर फतेहाबाद को जाने वाली सड़क पर स्थित है। कहते हैं यहाँ उन चालीस फकीरों की समाधि है जो मुहम्मद तुगलक के समय में रहते थे। इनके अतिरिक्त हिसार शहर और उसके समीप और कई छोटी मस्जिदें और मकबरे हैं। इस प्रकार हिसार शहर प्राचीन स्मारकों और भग्नावशेषों से भरा पड़ा है। झींद की लड़ाई में पटियाला के राजा अमरसिंह ने मुसलमानों को हरा कर यहाँ एक किला बनवाया था। जो पुरानी जेल के नाम से प्रसिद्ध है। १७८३ ई० के चालीसा अकाल में हिसार शहर एक दम उजड़ गया। इसको फिरसे सँभालने में २० वर्ष लगे। इसके बाद यहाँ सिक्खों, मरहठों और अंग्रेजों में संघर्ष हुआ। १८०२ ई० से यह अंग्रेजों के अधिकार में आ गया। गदर में यहाँ कुछ अंग्रेज मार डाले गये इनका स्मारक कचहरी के पास डिस्ट्रिक्टबोर्ड के बगीचे में बना है। हिसार में दो कपास ओटने की मिलें और केटिल फार्म है। जब रेल नहीं खुली थी तब यह दिल्ली सिरसा स .. पर एक व्यापार केन्द्र था। रेल के खुल जाने से हिसार का व्यापार भिवाणी के हाथ में चला गया। फिर भी यहाँ रेल का बड़ा स्टेशन, अस्पताल, डिस्ट्रि .जेल, डांकबंगला और हाईस्कूल है।

हान्सी—नगर में प्राय: १५००० मनुष्य रहते हैं। यह नगर २६ उत्तरी अक्षांश और ७६ पूर्वी देशान्तर में स्थित है। यह हिसार से १६ मील पूर्व की ओर पश्चिमी यमुना नहर के किनारे दिल्ली-सिरसा सड़क पर बसा है। नहर की सिंचाई से हान्सी के पड़ोस में पेड़ उग आये हैं। हांसी नगर एक पक्की ईंटों की चारदीवारी से घिरा है। इसमें कई दरवाजे हैं। नगर में दो सीधी और चौड़ी सड़कें हैं जो समकोण बनाती हुई एक दूसरे को काटती हैं। शेष गलियां तंग और मोड़दार हैं। उत्तर की ओर एक विशाल टीले पर पुराना किला टूटा पड़ा है। यह किला गदर के बाद तोड़ दिया गया और इसका सामान बेच डाला गया है। हान्सी नगर और हान्सी का किला भारत के अति प्राचीन स्थानों में से हैं। मुसलमानों के आक्रमण के समय यहाँ अजमेर और सांभर के चौहानों का अधिकार था। कहते हैं यहाँ के किला को रायपिथौरा ने खुदवाया था। यह उससे बहुत अधिक पहले ही से विद्यमान था। १३५४ ई० में हिसार शहर की नींव पड़ने से पहले हरियाना की राजधानी हान्सी नगर था। १७८३ ई० में चालीसा अकाल पड़ने पर यह नगर उजड़ गया। १७९५ ई० में जार्जटामस ने यहाँ अपनी राजधानी बनाई १८०२ ई० में अंग्रेजों ने यहाँ छावनी बनाई। १८५७ ई० के गदर में यहाँ कुछ अंग्रेज अफसर मार डाले गये। गदर के शान्त होने पर यहाँ की छावनी तोड़ दी गई। यहाँ के किला का टीला उत्तर से दक्षिण तक ३७० गज और पूर्व से पश्चिम तक ३४५ गज है। किले की दीवार ५२ फुट ऊँची और ३७ फुट मोटी है। इसके भीतर २ कुएँ हैं। यह किला एक प्राचीन हिन्दूनगर के खंडहरों के ऊपर बनाया गया। इसके भीतर न्यामतुल्ला का मकबरा हिन्दू मन्दिर और महल के मसाले से बनाया गया। नगर के पश्चिम की ओर चार कुतबों का मकबरा और मस्जिद है। इसके पास का तालाब १४६१ ई० में अबू बकर जवानो ने बनवाया था। कहते हैं एक कुतुब (जमालुद्दीन) यहाँ मुहम्मद गोरी के साथ आया था। इसके बाद वह फकीर हो गया। हान्सी से ३ मील की दूरी पर स्थित एक टीला शहीदगंज कहलाता है। कहते हैं यहाँ १५०००० मुसलमान मार डाले गये थे। प्रथम बार मसूद ने जब हान्सी पर चढ़ाई की थी तो वह वहीं पर हराया गया था!

हान्सी नगर कपास का एक बड़ा केन्द्र और अनाज की मंडी है! यहाँ तहसील, थाना, सराय, अस्पताल और स्कूल हैं।

भिवाणी नगर हिसार से ३६॥ मील दक्षिण-पूर्व की ओर है। इसकी जनसंख्या ३२,००० है। १६०१ की ताऊन लेग में यहाँ बहुत से लोग मर गये। कहते हैं इस नगर को एक राजपूत ने अपनी स्त्री बहनी की स्मृति में बसाया था। इसी से इसका

यह नाम पड़ गया। भिवाणी पर १८१० में प्रथमवार अँग्रेजों का अधिकार हुआ। १८१७ ई० में यहाँ मंडी (निःशुल्क बाजार) बनी। इससे पहले कुछ दूर दक्षिण-पूर्व की ओर ददरी नगर व्यापार केन्द्र था। पर ददरी का नवाब व्यापारियों में अधिक कर लेता था। इसलिये वे ददरी छोड़कर भिवाणी चले आये। बीकानेर, जैसलमेर, जैपुर और राजपूताना के दूसरे राज्यों का व्यापार यहाँ आने लगा। दक्षिणी भारत के व्यापारियों के गुमाश्ते भी यहाँ रहते हैं। भिवाणी नगर एक निचले भाग में दुमट मिट्टी पर बसा है। बसा है। इसके पश्चिम में ऊँचे रेतीले टीले हैं। यह नगर तेजी के साथ बढ़ा इसलिये इसका कुछ भाग पुरानी चारदीवारी के बाहर फैल गया।

नई चारदीवारी में १२ दरवाजे हैं। राजपूताना का व्यापार यहाँ इतनी अधिक मात्रा में आता है कि भिवाणी कौव्यापार को राजपूताना का दरवाजा कहते हैं। यहाँ का व्यापार केवल स्थानीय नहीं है। यहाँ के व्यापारियों की शाखायें कलकत्ता और बम्बई में भी पाई जाती है।

कलकत्ते में भिवाणी के व्यापारी अधिकतर कमीशन पर सामान को मोल लेते और बेचते हैं। हुंड़ी तुड़ाने का एक बड़ा केन्द्र भिवानी है। यहाँ कपास ओटने की कई मिलें हैं। यहाँ स्कूल, अस्पताल, थाना और डाक खाना है।

सिरसा

१७८३ के चालीसा अकाल में सिरसा नगर ऐसा उजड़ गया था कि १८३७ यहाँ एक भी बसा हुआ घर नहीं था।

१८३८ ई० में पुराने सिरसा नगर के पूर्व में था सिरसा बसाया गया। इस ओर पानी अच्छा और पक्के कुएँ भी अधिक थे। पुराने के पास पक्की ईंटे भी बहुत थीं। पहले ऊँचा और घना जंगल साफ कराया गया। घरों की दीवारों और सड़कों का खाका तैयार किया गया। फिर मजदूरों और कैदियों की सहायता से निर्माण कार्य आरम्भ हुआ। सड़कें सीधी हैं और एक दूसरे को समकोण बनाती हुई काटती हैं।

नगर के बाहर खाई और चारदीवारी बनाई गई। एक वर्ष में कई सौ घर बन गये। २००० की नींव पड़ गई। फिर भट्टी प्रदेश का केन्द्र स्थान बना दिया गया। यहाँ पड़ोस के अन्न के लिये बड़ी मंडी बन गई। उत्तर की ओर रेलवे कर्म चारियों का मुहल्ला है।

सिरसा के पड़ोस में प्राचीन सरस्वती नगरों के भग्नावशेष मिलते हैं। कुछ प्राचीन हिन्दू मन्दिर और मुसलमाना मस्जिदें हैं।

सिरसा में कचहरी, थाना अस्पताल और स्कूल हैं। इस नगर की जनसंख्या १५००० से अधिक है।

रनिया एक पुराना भट्टी गाँव है। पहले यहाँ नवाब की राजधानी थी। अधिकतर निवासी मुसलमान हैं। यहाँ चावल और गेहूँ की खेती होती है।

फतेहाबाद कस्बा हिसार से ३० मील उत्तर-पश्चिम की ओर है। नगर पड़ोस के तल से कुछ ऊँचा बसा है। पूर्व की ओर बड़ा दल दल है। वर्षा काल में यह जल से भर जाता है। उत्तर और उत्तर पूर्व की ओर जंगल है। यहाँ से जोइया धारा कुछ ही दूर है। इसी के पानी से सिंचाई होती है। नगर एक टूटी फूटी चारदीवारी से घिरा है। पूर्वी सिरे पर पुराना किला है। दो पक्की सड़कों पर बाजार लगता है। यह दोनों एक दूसरे को समकोण बनाती हुई काटती हैं। व्यापारियों के घर पक्के हैं। मुसलमान किसानों के घर कच्चे हैं। कुओं का पानी अच्छा है। इस नगर को सम्राट् फीरोज शाह ने अपने बेटे फतेहखाँ की स्मृति में बसाया था। उसके पड़ोस में ३ किले बने थे। पहले यहाँ की ज़मींदारी मुसलमानों के हाथ में थी। पर सरकारी मालगुजारी न देने पर यह जमींदारी बनियों के हाथ में चली गई। दिल्ली से सिरसा को जाने वाली सड़क पर स्थित होने के कारण पहले फतेहाबाद एक व्यापार पार केन्द्र था। फिर यह व्यापारिक महत्व घट गया। जब रेल खुली तो यहाँ का व्यापार घट गया। सब से निकट रेलवे स्टेशन यहाँ से ११॥ मील दूर है। फतेहाबाद में एक किले के खंडहर हैं।

यहाँ तेल रखने के लिये चमड़े के कुप्पो बनाये जाते हैं। यहाँ अस्पताल, नोटी फाइड एरिया बाजार और स्कूल है। किले में फीरोज की लाट है।

इसके सिरे पर हिन्दू शिला लेख है। यहीं हुमायूँ की मस्जिद है।

तोशम

तोशम की पहाड़ी भिवाणी तहसील में हिसार शहर से १६ मील दक्षिण की ओर स्थित है। इसकी चोटी पर एक पुराना किला है। तोशम नगर के समीप एक सुन्दर बारादरी है। नगर को प्रायः पृथ्वीराज की कचहरी के नाम से पुकारते हैं। पश्चिम की ओर एक पहाड़ी पर संस्कृत का शिला लेख है। सम्भव है कि वह सिदियन राजा तुषार के समय (५० ई० से ७६ तक) का शिला लेख हो। यहाँ पहले बौद्ध भिक्षुओं का मठ था। यहाँ पर पांडुतीर्थ और कुछ दूसरे पवित्र तीर्थ हैं। अगरोहा गाँव हिसार से १२ मील उत्तर-पश्चिम की ओर दिल्ली से सिरसा को जाने वाली सड़क पर स्थित है। किसी समय में अगरोहा एक बड़ा शहर रहा होगा। कहते हैं अग्रवाल जाति के जन्मदाता अग्रसेन ने इसे बसाया था। गाँव के पास एक बड़ा खेडावा टीला है। कहते हैं यहाँ एक किला था जिसे अग्रसेन ने बनाया था। यहाँ जो खुदाई हुई है उसमें मूर्त्तियाँ और गढ़े हुए पत्थर मिले हैं। सिक्के और ईंटे कई प्रकार की मिली हैं। एक स्थान पर खुदाई करने पर एक घर की पक्की दीवारें निकलीं। टीले के पड़ोस में एक विशाल आखात है। शायद यहाँ एक प्राचीन पक्का ताल था। आज कल यहाँ अच्छी फसलें उगती हैं।

तोहना

प्राचीन समय में तोहना भी एक बड़ा नगर रहा होगा। गत २०० वर्षों में घटते घटते यह एक गाँव रह गया। रेलवे स्टेशन यहाँ से केवल १ मील दूर है। यहाँ स्कूल, थाना और अस्पताल है। एक नायब एक तहसीलदार भी रहता है।

बुधलदा का व्यापार तेज़ी से बढ़ रहा है। स्टेशन पास ही है। यहाँ एक नोटी फाइड एरिया थाना अस्पताल और स्कूल है। यहाँ अनाज की एक मंडी है।

सिरसा तहसील में दाबवाली नगर में भी अनाज की एक मंडी डिस्ट्रिक्ट बोर्ड की ओर से खोली गई है। यह भटिंडा रेलवे शाखा का एक स्टेशन है।

लोहारू राज्य

कहते हैं इस राज्य में पहले लोहार रहते थे। इसी से इसका यह नाम पड़ा। इसका क्षेत्रफल २२४ वर्गमील है। यह राज्य पंजाब के एक कोने में राजपूताना की सीमा के पास स्थित है। यह एक विषम चतुर्भुज है। इसके उत्तर में हिसार जिले की भिवाणी तहसील है। इसके पूर्व में पटियाला और झींद राज्य और हिसार जिले का कुछ भाग है। इसके दक्षिण में शेखावटी (जैपुर राज्य) है। पश्चिम में जैपुर, बीकानेर राज्य और भिवाणी तहसील है।

यह एक वृक्ष रहित उजाड़ प्रदेश है। अधिकतर भाग में रेतीले टीले केवल कहीं कहीं वनस्पति दिखाई देती है। राज्य के बीच में केवल दो अकेली-अकेली पहाड़ियाँ उठी हुई हैं। यहाँ एक भी नाला या नाली नहीं है। मिट्टी बलुआ है। कहीं-कहीं चूने का पत्थर सा मालूम होता है। कीकर, झाड़, सिरस, पीपल, शीशम, नीम यहाँ के पेड़ हैं। कहीं कहीं झाल (पीलू) टेंट और पिंजरी मिलती हैं। झरबेरी प्रायः सभी स्थानों में मिलती है। इसके छोटे बेर के समान फल मनुष्यों के लिए और पत्ते (प्रायः सुखा कर) ढोरों के खाने के काम आते हैं। इसके कांटों से बाड़ी का घेर बना लिया जाता है। कुछ जलाने के काम आते हैं।

भेड़िया, बनबिलाव, गीदड़ (शृगाल) लोमड़ी, खरगोश, सही और नील गाय यहाँ के जंगली पशु हैं यहाँ की शुद्ध वायु और अच्छा पानी बहुत ही स्वास्थ्य कर है। वर्षा और तापक्रम हिसार जिले के समान है।

यहाँ प्रायः २०,००० मनुष्य रहते हैं। लोहारू कस्बा फैला हुआ बसा है। मुसलमानों में प्रायः सभी सुन्नी हैं। अधिकतर हिन्दुओं को ही मुसलमान बना लिया गया है। बाहर से आने वाले मुसलमानों का अभाव है। हिन्दुओं में जाट, राजपूत, बनिये और नायक रहते हैं। अधिकतर लोग बागरी भाषा बोलते हैं।

इस राज्य के प्रायः १२,००० मनुष्य खेती में लगे हैं। वे बाजरा, मोठ, ज्वार उगाते हैं। जहाँ कुओं से सिंचाई हो जाती है वहाँ गेहूँ, जौ, तम्बाकू और तरकारियाँ भी उगा ली जाती हैं। कुओं में ८०

या ६० फुट की गहराई पर पानी मिलता है। अधिकतर लोग गाय बैल और ऊँट, भेड़, बकरी पालते हैं। ऊँट बड़ा उपयोगी है।

कुछ लोग चूने का पत्थर निकालते रहते हैं। ऊन और चमड़ा बाहर भेजा जाता है।

लोहारू के प्राचीन इतिहास का ठीक ठीक पता नहीं चलता है। एक बार यह जैपुर राज्य में शामिल था। अठारहवीं शताब्दी में कुछ ठाकुर जैपुर राज्य से अलग हो गये। उन्होंने यहाँ अपना अलग राज्य स्थापित कर लिया। फिर यहाँ अंग्रेजों का अधिकार हो गया। अलेवर के राजा ने मरहठों के विरुद्ध अंग्रेजों की सहायता की थी। अतः इस सहायता के बदले लोहारू का छोटा राज्य अलवर नरेश को दे दिया गया। कुछ समय के पश्चात् अंग्रेजों की सम्मति से यह राज्य नवाब अहमद बख्श खाँ को दे दिया गया। उसने भी मरहठों की लड़ाई में अंग्रेजों का साथ दिया था। वह एक मुगल था। उसने कई वर्ष मरहठों की सेना में नौकरी की थी। फिर वह मरहठों के शत्रुओं से जा मिला। उसने लार्ड लेक का कई लड़ाइयों में साथ दिया। १८०१ ई० में उसे लोहारू का इलाका इनाम में दे दिया गया। १८२७ ई० में वह मर गया। कुतुबमीनार के पास उसकी कब्र बनी। उसे गुरगाँव जिले में भी पाँच महाल दे दिये गये थे। उसकी स्त्री बुखारा की थी। वहाँ (मुहल्ला पिस्ता शिकन में) अब भी उसके रिश्तेदार रहते हैं। १८२७ ई० में उसका बड़ा बेटा शामसुद्दीन नवाब हुआ। १८३५ ई० में दिल्ली के रेजीडेंट की हत्या में सम्मिलित होने के कारण शम्सुद्दीन को फाँसी दी गई। फीरोजपुर के परगने भी जब्त कर लिये गये। केवल लोहारू की जागीर उसके सौतेले भाई अमीनुद्दीन अहमद खाँ को मिली। सिक्खों की लड़ाई में उसने अंग्रेजों का साथ दिया। १८५७ ई० के गदर में उसका जो खजाना दिल्ली में था वह लुट गया। किसी तरह लोहारू का विद्रोह दब गया। उसकी सेना में २५ घुड़सवार और ११० पैदल सिपाही रहते हैं। १८६६ ई० में मरने पर उसकी लाश उसके पिता की कब्र के पास ही गाड़ी गई। गई। १८७७ ई० के दिल्ली दरबार में नये नवाब को फख्रुदौला की उपाधि मिली। १८८० ई० के अकाल में लोहारू पर बुरा असर पड़ा। नवाब दिल्ली में ही रहने लगा। १८८४ ई० में उसकी मृत्यु हो गई। वह भी अपने पिता की कब्र के पास गाड़ा गया। उसका बड़ा बेटा नवाब अमीरुद्दीन अहमद खाँ गद्दी पर बैठा। १८६५ ई० में वह इम्पीरियल लेजिसलेटिव काउंसिल का एक सदस्य नामजद कर लिया गया। १८६६-१६०१ ई० के अकाल से लोहारू राज्य (जागीर) को बड़ा धक्का पहुँचा। उसके बेटों को लाहौर के एटकिशन कालेज में शिक्षा मिली। १६११ ई० में सरकारी आज्ञा से ममदोत जागीर से रुपया लेकर इस लोहारू जागीर का सब कर्ज अदा कर दिया गया। इससे जागीर का प्रबन्ध सरकार के हाथ में आ गया। उसके बड़े बेटे ने सरकारी नौकरी कर ली।

फीरोजपुर

फीरोजपुर को शायद फीरोज शाह तुगलक ने बसाया था। इसी से यह नाम पड़ा। दिल्ली और लाहौर के बीच में इस नगर की स्थिति महत्व पूर्ण है कुछ लोगों का अनुमान है कि इसे फीरोज खाँ नाम के एक भट्टी सरदार ने बसाया था।

फीरोजपुर जिले का क्षेत्रफल ४२८६ वर्ग मील है। यह जालन्धर कमिश्नरी का सब से दक्षिणी जिला है। यह २९.५६ और ३१.११', उत्तरी अक्षांशों और ७३.५५' और ७५.३७ पूर्वी देशान्तरों के बीच में स्थित है। इस जिले के उत्तर-पूर्व में जालन्धर जिला और कपूर्थला राज्य है। जालन्धर और फीरोजपुर जिलों के बीच में कुछ दूर तक सतलज नदी प्राकृतिक सीमा बनाती है उत्तर-पश्चिम की ओर सतलज और व्यास की संयुक्त धारा फीरोजपुर जिले को लाहौर और मांट गोमरी जिलों से अलग करती है। पूर्व और दक्षिण-पूर्व की ओर लुधियाना जिला और फरीद कोट पटियाला, नाभा और झींद राज्य है। दक्षिण और दक्षिण-पश्चिम

की ओर हिसार जिला, बीकानेर और बहावलपुर के राज्य हैं। इस जिले का आकार एक टूटे कंघे के समान है। इस के बीच वाले भाग में बहुत दूर तक फरीद कोट का राज्य घुसा हुआ है। सतलज नदी के बायें किनारे के पास पास फीरोज़ पुर का जिला ११० मील की लम्बाई में फैला हुआ है। इसकी चौड़ाई सतजल के किनारे से भीतर की ओर तीस चालीस मील है। इस जिले में पाँच तहसील हैं। इन में मुक्तेसर और फाजिल्का तहसीलें फरीद कोट राज्य के नीचे हैं। ज़ीरा फीरोज़पुर और फीरोज़पुर तहसीलें फरीद कोट राज्य के ऊपर स्थित हैं। मोगा तहसील एक दम नदी से दूर है। जीरा तहसील व्यास और सतलज के संगम के सामने त्रिभुजाकार भाग घेरे हुये है। इसके आगे फीरोज पुर तहसील है। यह तहसील उस स्थान तक फैली हुई है जहाँ यह जिला बहुत तंग हो गया है। मुक्तेसर और फाजिल्का तहसीलों का कुछ भाग नदी तट के पास है। इनका बहुत बड़ा भाग नदी से दूर भीतर की ओर चला गया है। बाहर की ओर ३८ गाँवों का एक समूह महाराज इलाका नाम से प्रसिद्ध है। यह प्रधान मोगा तहसील से कुछ दक्षिण की ओर है। मोगा तहसील के मध्यवर्ती भाग में छिरक और ५ दूसरे गाँव कलसिया राज्य के अधीन है। फीरोज पुर से ६ मील नीचे की ओर से लेकर मुक्तेसर तहसील की दक्षिणी सीमा के पास तक ममदोत के नवाब की जागीर है।

१८८४ ई० में सिरसा जिले के टूट जाने पर फाजिल्का तहसील फीरोजपुर जिले में मिला दी गई।

फीरोज पुर जिले में केवल दो नगर (फीरोज पुर और फाजिल्का, ऐसे नगर है। जिनकी जन संख्या १० हजार से ऊपर है। इनमें फीरोज पुर की जन संख्या ५० हजार से कुछ अधिक और फाजिल्का की १० हजार से कुछ ही ऊपर है। फीरोज़पुर जिले का प्रधान स्थान सतलज नदी के दाहिने किनारे से ४॥ मील दूर है। क्षेत्रफल की दृष्टि से रूपा गाँव के जिलों में फीरोज पुर का स्थान आठवाँ है। जन संख्या में पंजाब के जिलों का स्थान तीसरा है।

इस जिले की भूमि दक्षिण-पूर्व से उत्तर-पश्चिम की ओर बहुत ही क्रमशः ढालू होती गई है। प्रति मील में ११३ फुट ढाल है। समूचा जिला कछारी भूमि का बना है। इस में पहाड़ी या पत्थर का नाम नहीं है। फिर भी यह जिला तीन प्राकृतिक भागों में बाँटा जा सकता है। यह तीनों भाग नदी तट के समानान्तर चले गये जो भाग नदी से अधिक दूर है यह सब से अधिक ऊँचा है। बीच वाला भाग भीतरी भाग से नीचा पर नदी तट के पास वाले भाग से कुछ ऊँचा है। सब से ऊँचे भाग में पूरीमोग तहसील और जीरा तहसील के कुछ गाँव शामिल हैं। इसी में फीरोज़ पुर तहसील का दक्षिणी-पूर्वी कोना, आधी मुक्तेश्वर तहसील और फाजिल्का शामिल है। इसे प्रायः कोटकापूरा पठार कहते हैं यह फरीद कोट राज्य के मध्य में है। इसका धरातल एक दम समतल है। यहाँ की मिट्टी कुछ लाल और भूरी बाल मिली हुई दुमट है। जहाँ नालों के पुराने मार्ग है। वहीं वह कुछ टूटी फूटी है। धुर दक्षिणी-पूर्वी सिरे पर रेतीले टीले हैं। इस प्रदेश का ऊपरी बड़ा किनारा पन्द्रह बीस फुट ऊँचा है, लुधियाना की सड़क पर डागरू के आस पास यह एक दम स्पष्ट है, यह स्थान फीरोज़पुर से २८ मील की दूर पर मुक्तेसर तहसील में स्थित है। इस ऊँचे प्रदेश के नीचे कुछ नीचा और रेतीला प्रदेश है। बीच वाले भाग में इस प्रदेश की चौड़ाई १६ मील है। ऊपरी और निचले सिरों पर यह एक दम तंग हो गया है। ऐसा जान पड़ता है कि अब से तीन चार सौ वर्ष पहले सतलज नदी ऊपर तट के नीचे बहती थी। उस समय व्यास नदी सतलज नदी से मुल्तान और बहावलपुर के बीच किसी स्थान पर मिलती थी। इसके पश्चात सतलज नदी ने इस रेतीले मैदान को वीरान कर दिया। जीरा तहसील का दक्षिणी आधा भाग इसी मैदान में शामिल है। इसी में फीरोज पुर तहसील का पूर्वी आधा भाग, मुक्तेसर और फाजिल्का का उत्तरी-पश्चिमी भाग शामिल है। इसे मुदकी का मैदान कहते हैं। यहीं अंग्रेजों और सिक्खों में प्रसिद्ध युद्ध हुआ था। वास्तव में मुदकी का युद्ध क्षेत्र इस मैदान (की लम्बाई) के बीच में स्थित है। इस प्रदेश के अधिकांश कुओं का पानी इतना खारी है कि यह पीने योग्य नहीं है। मुदकी

मैदान के नीचे नदी तट का प्रदेश है। इसे बेत कहते हैं। जीरा और सतलज-व्यास संगम के बीच में बेत की चौड़ाई १२ मील है। शेष भागों में इसकी चौड़ाई ६ मील से अधिक नहीं है। मिट्टी चिकनी है। इसका रंग कुछ धुंधला भूरा है। इसमें कुछ बालू भी मिली हुई है। जो नीचा किनारा बेत को घेरे हुये है उसकी ऊँचाई केवल चार पाँच फुट है। कहीं ऊँचाई इतनी कम है कि स्पष्ट मालूम भी नहीं पड़ती है। ऊँचे भाग की लाल बालू और निचले भाग की काली चिकनी मिट्टी कुछ दूर तक एक दूसरे से मिल जाती है।

मोगा में ऊपरी पठार को रोही कहते हैं। यहाँ की मिट्टी राजपूताना की बालू से कहीं अधिक कड़ी होती है। मुदकी के मैदान को निचली रोही कहते हैं। मुक्तेसर में कोटकपूरा का मैदान उतार कहलाता है। ममदोत में पश्चिमी किनारे को रोही कहते हैं। निचली रोही रेतीली है। ममदोत के दक्षिणी भाग में कड़ी मिट्टी की एक तंग पेटी को सोतारा कहते हैं। घाटी के ऊपर कहीं कहीं यह स्पष्ट दिखाई देती है।

बेत—प्रदेश में कुओं की भरमार है। कुओं के पड़ोस में पेड़ भी बहुत है। इस भाग में कुओं की गहराई १८ फुट से अधिक नहीं है। मुदकी के मैदान में कुओं में तीस चलीस फुट की गहराई पर पानी मिलता है। मोगा और मुक्तेसर में ४५ फुट से ७० फुट या ८० फुट की गहराई पर कुओं में पानी मिलता है। इसलिये इस प्रदेश के केवल उत्तरी-पूर्वी सिरे पर कुओं से सिंचाई हो सकती है। महराज गाँवों में और मुक्तेसर और फाजिल्का के दक्षिणी भागों में कुओं में १५० या १८० फुट की गहराई पर पानी मिलता है। इतने गहरे कुएँ खोदने में इतना खर्च होता है कि सब गावों में पानी पीने के कुएँ नहीं मिलते हैं। मुदकी मैदान के कुछ गाँवों में कंकड़ मिलता है।

नदियाँ सतलज—इस जिले में सतलज नदी का मार्ग प्रायः ११५ मील लम्बा है। प्रति मील में प्रायः डेढ़ फुट का उतार है। लुधियाना जिले की सीमा के पास सतलज नदी का जल समुद्रतल से प्रायः ७२५ फुट ऊँचा है। बहावलपुर राज्य के पास यह ऊँचाई केवल ५६५ फुट रह जाती है। बाढ़ घटने पर सतलज नदी में मोड़ बहुत हो जाते हैं। मोड़ों के बढ़ जाने से इसकी लम्बाई भी अधिक हो जाती है। लेकिन धारा मन्द पड़ जाती है। रूपड़ के समीप सतलज से सरहिन्द नहर के निकलने से सतलज में बहुत थोड़ा पानी बचता है। व्यास और सतलज के संगम के ऊपर सतलज सब कहीं पाँज हो जाती है। इसे पैदल पार किया जा सकता है। संगम के पास सतलज की अपेक्षा व्यास का जल अधिक निर्मल और नीला है। इसी से कुछ लोग इसे नीली कहते हैं। दोनों की संयुक्त धारा बाढ़ घटने पर भी १००० गज रहती है। बाढ़ के समय संयुक्त धारा की चौड़ाई दो तीन मील हो जाती है। इसकी गहराई और तेजी भी बहुत बढ़ जाती है। नदी का मार्ग प्रायः बदल जाता है। किनारे के गाँव कट जाते हैं। कुछ भागों में नई भूमि बन जाती है। इसके बीच बीच में द्वीप हो जाते हैं। इसकी तली में प्रायः कीचड़ रहती है। ऊपर से बालू का परत पड़ जाने पर भी इसकी दलदली तली में फँस जाने का डर रहता है। जिस मार्ग में ढोर बार बार आया जाया करते हैं। वह कड़ा पड़ जाता है। उसी पर यात्री निडर होकर जा सकते हैं।

नदी यहां पर अधिक गहरी नहीं है। केवल चपटी तली वाली चप्पू नावें इस पर चलती हैं। कुछ बड़ी नावें फीरोजपुर तक कभी कभी आ जाती हैं। चप्पू नाव थोड़ी दूर तक ही चला करती है। पर इसमें साठ सत्तर मनुष्य सवार हो सकते हैं। यदि केवल सामान ही लादा जावे तो चप्पू १०० मन बोझा लाद सकती है। इस जिले में नदी को पार करने के लिये कैसर-हिन्द नाम का रेलवे का पुल १८८६ ई० में बना, यह ४००० फुट लम्बा है। इसमें २७ गार्डर या लोहे के पाये हैं। यह उन कुओं पर सधे हैं जो नदी की तली में गलाये गये हैं। साधारण जनता के लिये यह पुल १९१४ ई० में खोल दिया गया। इसके अतिरिक्त नदी को पार करने के लिये कई स्थानों पर घाट हैं जहाँ चप्पू या नावें चला करती हैं। नदी के पुराने सूखे मार्ग में सुरवार नाला है।

मुक्तेसर तहसील में सोतार आखात है। इसका पानी फाजिल्का तहसील की बाढ़ झील तक पहुँचता

डाएडा के ऊपर मोगा (सूखा) नाला मोगा तहसील से फरीदकोट को चला गया है। मोगा के दक्षिण में एक दूसरा सूखा नाला है जो लुधियाना जिले अखरा झील से मिला हुआ है। यह सूखा नाला सरहिन्द नहर की भटिंडा और अबोहर शाखाओं के बीच में सीमा बनाता है।

मुक्तेसर रोही में भी एक सूखी तली है जहाँ पहले कोई नदी बहती थी। फाजिल्का तहसील में नैवल नदी का पुराना सूखा मार्ग है।

तीनों धरातलों की भूमि समस्त लम्बाई में एक ही प्रकार की है। उनकी उपज वर्षा पर निर्भर है। जैसे-जैसे उत्तर-पूर्व में हिमालय से दूरी बढ़ती जाती है वैसे ही वर्षा घटती जाती है। उत्तरी-पूर्वी सीमा के पास पच्चीस इंच वर्षा होती है। दक्षिणी-पश्चिमी सिरे पर १० इंच से भी कम वर्षा होती है। ऊँचे भागों के मिट्टी में अधिक समय तक नमी रहती है। इन भागों में अच्छी फसल पैदा होती है। नदियों के समीप कड़ी मिट्टी वाला प्रदेश उपजाऊ होने पर भी बीरा न पड़ा रहता है। यहाँ अधिक वर्षा होने पर ही खेती हो सकती है। कुछ भागों में सिंचाई होने पर ही खेती होती है। समस्त जिले में स्वयं कहीं उपजाऊ कलारी मिट्टी है। पत्थर का नाम नहीं है। केवल कहीं कहीं कंकड़ मिलता है। फाजिल्का तहसील के कुओं में भी कंकड़ मिलता है। यहाँ अभेद्य तह (धरातल) में सफेद रंग का हानि मिलता है।

करार धरती बड़ी कड़ी होती है। सूखने पर यह लोहे के सामान कड़ी हो जाती हैं लेकिन भीगने पर यह बड़ी फिसलनी हो जाती है। यहाँ कहावत है गिल्ली गोहा सूखी लोहा। जीरा तहसील में इसे भींडर कहते हैं। रेशली मिट्टी हलकी और कुछ रेतीली होती है। करार की अपेक्षा कम पानी की आवश्यकता होती है। दोसाही मिट्टी में ऊपर बालू और नीचे कुछ काली कड़ी मिट्टी की तह होती है। यहाँ साधारण वर्षा होने पर भी गेहूँ और चना की अच्छी फसल होती। तिब्बी मिट्टी में प्रायः अशुद्ध बालू रहती है। रुदार मिट्टी का रंग कुछ लाल रहता है। बेत या नदी के समीप वाले प्रदेश में कड़े कंकड़ मिले रहते हैं। इन सब भागों में खेती वर्षा पर ही निर्भर है। प्रबल वर्षा जून के अन्त और जुलाई के आरम्भ में होती है। इससे भी अधिक वर्षा अगस्त और सितम्बर मास में होती है इस वर्षा के होने पर ही खरीफ की फसल बोई जाती है और रबी का खेत तैयार किया जाता है।

रबी की फसल के लिए जनवरी या फरवरी मास में वर्षा का होना आवश्यक है। जिस वर्ष सितम्बर महीने में वर्षा नहीं होती है उस वर्ष रबी की फसल बहुत कम हो जाती है। मार्च, अप्रैल या मई की वर्षा से फसल को बड़ी हानि होती है। शीतकाल की वर्षा से रबी को लाभ होता है। वर्षा के सम्बन्ध में यहाँ अनेक कहावतें प्रचलित हैं। जिस महीने में फसल बोई जाती है उसकी सूची इस प्रकार है :—

हर (आषाढ़) चरी और मोठ बोया जाता है।

सावन—रबी के खेत जोते जाते हैं और खरीफ की फसल बोई जाती है।

भादों—वर्षा देर से होने पर खरीफ की फसल बोई जाती है और खेत जोते जाते हैं।

अश्विन—मक्का, के खेत निराये जाते हैं। रबी के खेत जोते जाते हैं।

कार्तिक—खरीफ की फसल काटी जाती हैं और रबी की फसल बोई जाती है।

अगहन—रबी की फसल बोई जाती है और खरीफ की फसल माड़ी जाती है।

पौष—खरीफ की फसल माड़ी जाती है और रबी के खेत सींचे जाते हैं।

माघ—खरीफ की फसल माड़ी जाती है और रबी के खेत सींचे जाते हैं।

फागुन—गल्ला, कपास, तम्बाकू और तरकारी बोई जाती है।

चैत—सरसों काटी जाती है।

बैशाख—रबी की सफल काटी जाती है।

जेठ—रबी की फसल का सब काम समाप्त हो जाता है।

[गताङ्क से आगे]

इस जिले में खरीफ़ की अपेक्षा रबी की फ़सल अधिक महत्व की है। गन्ने की फसल केवल वेत प्रदेश में होती है जिस खेत को पाला मार देता है, उसकी ईख केवल चारे के काम आती है। वैसे अधिकतर पौंड़ा चूसने के काम आता है। गन्ने का खेत फर्वरी से दिसम्बर तक घिरा रहता है। इसे लगातार सिंचाई की जरूरत पड़ती है। इस लिए जहां नहर से पानी प्रायः मिलता रहता है वहीं इसकी खेती होती है। कुछ ही खेत ऐसे हैं जहाँ कुओं से सिंचाई होती है। धान के खेत उन नहरों के पास हैं। जिनमें नहर का पानी आता है। धान की खेती कुएं की सिंचाई से नहीं हो सकती है। यहां धान दो तीन प्रकार का होता है। बढ़िया धान का चावल सफ़ेद होता है। बढ़िया धान की पौधा लगाते (रोपते) हैं।

मक्का—मक्का दो प्रकार की होती है। पीले दाने वाली मक्का की उपज अधिक होती है। लेकिन सफेद दाने वाली मक्का देरी से भी वोई जा सकती है। सफ़ेद दाने की मक्का के बीज अमरीका से मंगाये गये थे। अधिक गर्मी इसके लिए अनुकूल नहीं होती है। अधिकतर मक्का वेत प्रदेश में होती है।

कपास—नदीतट के उन भागों में होती है जहाँ नहर या कुएँ से सिंचाई होती है। पर इस जिले की कपास अधिक अच्छी नहीं होती है। पुराने समय में मोगा तहसील में बिना सिंचाई के अच्छी कपास होती थी। जो कपास यहाँ उगाई जाती है वह घरेलू काम में ही खर्च हो जाती है। किसान की स्त्री ओटने और कातने का काम करती है। बिनौले दूध देने वाली भैंस को दिये जाते हैं।

ज्वार—इस जिले का प्रधान भोजन है। अधिक रेतीले प्रदेश को छोड़कर यह जिले के प्रायः सभी जगहों में होती है। उत्तरी और पूर्वी भागों में अलग से सींचने की आवश्यकता नहीं होती है। लेकिन कुछ ज्वार उन भागों में होती है। जहाँ नहर या नदी से सिंचाई होती है। ज्वार के साथ कोई न कोई दाल भी बो दी जाती है। इनमें मोठ अधिक प्रसिद्ध है। जिस खेत में रबी की सफल होती है। उसके दूसरे वर्ष प्रायः ज्वार बोई जाती है। एक बार जोतने के बाद इसे बो देते हैं। सब पौदे एक साथ नहीं पकते हैं इसलिये पहले पकने वाले भुट्टे हाथ से तोड़ लिये जाते हैं। ज्वार का चारा जानवरों को खिलाया जाता है। कुछ भागों में इसे इतना घना बो देते हैं कि यह चारे के ही काम आती है। कुछ चरी वर्षा होने के पूर्व गर्मी के ऋतु में कुओं से सींच कर बो देते हैं।

बाजरा—मुक्तसर और फाजिल्का तहसील में बिना सींचे हुये खेतों में बो दिया जाता है। इसे कम वर्षा की आवश्यकता होती है। यहाँ के लोग बाजरे की रोटी को ज्वार की रोटी से अधिक पसन्द करते हैं। इसलिए यह ज्वार से अधिक महंगा बिकता है। यह अधिक समय तक खराब नहीं होता है। लेकिन इसका चारा उतना अच्छा नहीं होता है। कभी कभी ज्वार की बाल काट ली जाती है और चारा खेत में छोड़ दिया जाता है।

बाजरा के साथ मोठ भी बो देते हैं। ऊँचे भागों की प्रधान फ़सल मोठ है। इसे अलग से सींचने की आवश्यकता नहीं होती है। इसका भूसा पशुओं के लिए बड़ा अच्छा होता है। ज्वार और बाजरा के साथ शीतकाल में मोठ लोगों का प्रधान भोजन है। पर नहर की सिंचाई के साथ साथ मोठ की खेती कम होने लगी है।

मूंग—मूंग की दाल होती है। लेकिन इसका चारा (भूसा) अधिक अच्छा नहीं होता है। नदियों के किनारे पर निचले भागों में मास उर्द बोया जाता है।

तिल—तिल भी कुछ भागों में खरीफ के फ़सल के साथ बो दिया जाता है।

गेहूँ—गेहूँ नदी तट के प्रदेश का प्रधान भोजन है। यह मोगा तहसील में सींचे और बिना सींचे सभी खेतों में होता है। लेकिन मुक्तसर और फाजिल्का तहसीलों में बिना सींचे हुये खेतों में गेहूँ नहीं हो सकता।

गेहूँ के खेत बड़ी सावधानी से तीन चार बार जोते जाते हैं। सावती गेहूँ बड़ा बढ़िया गिना जाता है।

जौ—यह जिले के मध्यवर्ती और दक्षिणी भागों का प्रधान अन्न है। इसे बोने के लिए कम नमी से भी काम चल जाता है। प्रायः जौ को चना के साथ मिला कर बोते हैं। कहीं कहीं जौ चारे के लिए बोया जाता है। सर हिन्द नहर के पास ज़िले के पश्चिमी भाग में जौ की खेती बढ़ रही है।

चना—चना की फ़सल जौ और गेहूँ से भी अधिक होती है। कुछ चना जौ और गेहूँ के साथ मिलाकर बोया जाता है। गर्मी की ऋतु में किसान चना की रोटी अधिक खाते हैं। कुछ चना धान और मक्का की फ़सल कट जाने पर बोया जाता है। मुदकी का मैदान और जिले के दक्षिणी भाग में चना बहुत बोया जाता है। चना को अधिक जुताई की आवश्यकता नहीं होती है। यहाँ पर कहावत प्रसिद्ध है चाला (चना) की (क्या) जावे वाह (जुताई) माह (उर्द) की जाने (घा) निराई जाट की जाने राह अर्थात चना बिना जुताई के, उर्द बिना निराई के हो जाता है और जाट राह न होने पर भी चला जाता है।

मसूर—नदी तट के प्रदेश में शीतकाल में हो जाती है। यह बहुत जल्द पकती है। इसे अधिक सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है। रबी की फ़सल के साथ नदी तट के भागों में तर-बूज बोये जाते हैं। प्रायः इन्हें कपास के बीज के साथ फरवरी मास में बोते हैं कहीं कहीं खरबूज़ा भी बोते हैं। जीरा तहसील में प्याज़ और लाल मिर्च की खेती बहुत होती है।

तम्बाकू—इस ज़िले में अधिक नहीं होती है। उत्तरी भागों में कुछ मुसलमान किसान इसे उगाते हैं। सिक्ख किसान तम्बाकू कभी नहीं बोते हैं और न इसे कभी छूते हैं।

जंगल—इस ज़िले में जंगल की कमी है। साधारण दृश्य उजाड़ और वीरान है। पर पहिले यह भाग छोटे जंगल से ढंका हुआ था जैसा मुदकी की लड़ाई से स्पष्ट है। मुदकी की लड़ाई का वर्णन करते हुये लार्ड गफ़ ने लिखा है कि यह प्रदेश एकदम चपटा है। थोड़ी थोड़ी दूर पर घनी झाऊ के जंगल और रेतीले टीलों से ढका है। खेती के बढ़ने से झाऊ का जंगल काट डाला गया। कहीं कहीं शीशम और सिरस के पेड़ मिलते हैं। शीशम के पेड़ प्रायः नदियों के किनारों और सड़कों के दोनों ओर लगाये गये हैं। कहीं कहीं नीम, बकायन के पेड़ कुओं के पास मिलते हैं। कुछ भागों में पलास है। बेरी (झरबेरी) सब कहीं मिलती है। कुछ भागों में ढाक हैं। तालाबों के किनारे पीपल का पेड़ मिलता है। आम, सन्तरा, अनार, और जामुन के बगीचे नगरों के पास लगाये गये हैं। नदियों के किनारे पर झाऊ सूखी नर्म घास (सरपत) मिलती है। सर (सरपत) और मूंज इस जिले के बड़े काम की है। ये जिले के सभी भागों में मिलती है। पर नदियों के समीप ये बहुत है। मूँज को कूटकर रस्सी बनाई जाती है। इसीसे मोढ़े बनाये जाते हैं। ये छप्पर छाने के भी काम आती है। जिन भागों में नहरों से सिंचाई होती है यहाँ डाभ बहुत है। इससे भूमि फसल उगाने योग्य नहीं रहती हैं। जब भूमि कल्लार (रेह) से ढक जाती है तो ये और भी बिगड़ जाती है। खेती के बढ़ जाने से दूब और दूसरी घास कम हो गई है।

पशु—फीरोज़पुर जिले में शिकारी पशुओं का अभाव है। फाजिल्का तहसील विश्नोई गांवों के पड़ोस में शिकार की मनाही है। इसलिये यहां काली बतख़ बहुत हैं। यहां चिक्कारा की भी अधिकता है। नायन और भागों में नीलगाय के झुंड मिलते हैं। सतलज के किनारे जंगलों में जंगली सुअर भी बहुत पाये जाते हैं। कहीं कहीं भेड़िया भी पाया जाता है। इस जिले के रेतीले भागों में लोमड़ी और खरगोश बहुत हैं। नदी में घड़ियाल, कछुए और मछली हैं। जिले के कई भागों में जहरीले सांप पाये जाते हैं।

जलवायु—इस जिले की जलवायु मध्य पंजाब के खुश्क जिलों के समान है। ग्रीष्म ऋतु बहुत गरम होती है। वर्षा ऋतु बहुत छोटी होती है। इसके बाद शीतकाल की स्वास्थ्यकर खुश्क ऋतु आती है। सर्दी की ऋतु नवम्बर मास के आरम्भ से आती है और आधे मार्च तक रहती है। मई से लेकर और जुलाई के अन्त तक अत्यन्त गर्मी रहती है। जून का महीना सबसे अधिक गर्म होता है। जुलाई मास में वर्षा होती है। पर इस महीने के अन्त में

या अगस्त के आरम्भ में कुछ दिनों के लिए वर्षा रुक जाती है। इन दिनों गर्मी असह्य हो जाती हैं। कुछ वर्षा जनवरी के अन्त में और फर्वरी के आरम्भ में होती है। मार्च के अन्त में और अप्रैल के आरम्भ में प्रायः ओले भी गिरते हैं। इनसे फसल को बड़ी हानि होती है। ग्रीष्म काल में कभी कभी धूल भरी आंधियाँ आती हैं। कभी कभी ये धूल एक सप्ताह तक आकाश में छाई रहती है। 'काबूल का सरदा फीरोजपुर का गरदा" कहावत यहाँ सब कहीं प्रचलित है। जिले के दक्षिणी-पश्चिमी भाग (अबोहर) के रेतीले भागों में धूल भरी आँधियां बहुत आती हैं। कुछ भागों में ये आंधियाँ सर्दी की ऋतु में भी आती हैं। खुश्क होने से इस जिले की जलवायु बड़ी स्वास्थ्यकर है। नदी के समीप निचले भागों में (जहां धान उगाया जाता है) सितम्बर और अक्टूबर महीनों में मच्छड़ों की अधिकता से मलेरिया ज्वर बहुत फैलता है। जिले का सबसे अधिक तापक्रम वर्षा आरम्भ होने के पहिले १११ अंश फारेन हाइट तक हो जाता है। सबसे कम तापक्रम (३९ अंश) जनवरी मास में होता है। किसी किसी वर्ष परम तापक्रम १२६ अंश और लघु तापक्रम २८ अंश तक देखा गया है।

इस जिले में भिन्न-भिन्न भागों में वर्षा भी भिन्न भिन्न है। पूर्व की ओर वर्षा अधिक होती है। पश्चिम की ओर वर्षा घटती जाती है। पश्चिम की ओर प्रायः प्रति दस मील बढ़ने पर एक इंच वर्षा कम हो जाती है। मोगा और जीरा में प्रायः २० इंच वर्षा होती है। फीरोज़पुर में १७ इंच, मुक्तसर में १३ इंच और फाजिल्का में ११ इंच वर्षा होती है। जून के अन्त में वर्षा आरम्भ होती है। कुछ वर्षा जुलाई अगस्त और सितम्बर में भी होती है। किसी किसी वर्ष मोगा और जीरा तहसीलों में :७ इंच तक वर्षा हुई है। पर दुर्भिक्ष के वर्षों में इस जिले में केवल ३-४ इंच वर्षा हुई है। नदी के पड़ोस वाले भागों में वर्षा ऋतु में प्रायः प्रति वर्ष बाढ़ आती है। नहर के खुल जाने से बाढ़ का डर बहुत कम हो गया है। कैसरहिन्द पुल के पास नदी जल का ऊपरी तल समुद्र तल से शीतकाल में ६३६ फुट और ग्रीष्म में ६४४ फुट रहता है। अधिक ऊँची बाढ़ के समय नदी जल का तल ६४९ फुट तक हो गया है। इस बाढ़ से फीरोज़पुर शहर को भारी हानि पहुँची। शहर और पड़ोस की बस्तियों में कई सौ घर गिर गये और कुछ मनुष्य डूब गये।

इस जिले में भारी भूचाल कभी नहीं आया। पर हल्के भूचाल कई बार आ चुके हैं।

संक्षिप्त इतिहास

फीरोज़पुर जिले में प्रचीन इतिहास से सम्बन्ध रखने वाले भग्नावशेषों का प्रायः अभाव है। कहा जाता है। कि मुक्तसर से कुछ मील पूर्व की ओर सराय नंगा के पास राजा शालिवाहन के खंडहर गत चार शताब्दियों में सतलज नदी ने इस जिले को ऐसा उजाड़ दिया कि प्राचीन भग्नावशेषों में भी बह गये। ऊँचे किनारे की चोटी पर प्रायः ठेह, खेड़े या ऊँचे टीले मिलते हैं यहाँ पहले गाँव थे। इनसे सिद्ध होता है कि प्राचीन समय में नदी का ऊँचा भाग बसा हुआ था। पर निचले भाग में चनार और कवारवाचा को छोड़कर और कहीं पुरानी बस्ती का चिन्ह नहीं मिलता है। जानेर का टीला मोगा से छः मील उत्तर की ओर है। इधर ही सराय नंगा है। मुक्तसर के दक्षिण में कुछ ठेह मिलते हैं। यहाँ एक पुरानी धारा अबोहर की ओर बहती चली गई थी। सबसे बड़ा ठेह ठेरी के पास है। यहाँ कई स्थानों में बड़ी बड़ी ईंटे मिलती हैं। इनमें हाथ का चिन्ह बना हुआ है। झुम्पा के पास भी एक बड़ा ठेह है। अबोहर के समीप एक पुराने किले या गढ़ के चिन्ह हैं। कुछ ठेह रावली और डांडा मांडा के पास मोगा तहसील में मिलते हैं। यहां कुछ पुराने सिक्के भी मिले हैं।

प्राचीन समय में कोट कपूरा का पठार राजपूताना के विशाल मरुस्थल की उत्तरी सीमा बनाता था। नदी के पास इसकी स्थिति होने से यह अधिक बसने योग्य था उस समय नदी वर्तमान मुक्तसर और फरीदकोट के समीप बहती थी। धीरे धीरे जैसलमेर और बीकानेर से कुछ लोग यहाँ आ बसे। पंवार राजपूत यहाँ के प्राचीन निवासी हैं। इनकी राजधानी जानेर थी।

प्रथम मुसलमानों के आक्रमण के समय यहां

भट्टी राजपूतों की एक बस्ती थी, मंज, नेपाल और डोगर इन्हीं की शाखायें हैं। ये लोग रायहेल की अध्यक्षता में जैसलमेर से आये थे और वर्तमान मुक्तसर के दक्षिण में बस गये। इन्होंने स्थानीय पंवार राजा को हराया और अपना राज्य स्थापित कर लिया। रायहेल के ५ वीं पीढ़ी में धूम और चीन दो भाई हुये। डोगर और नेपाल वंशी धूम से उत्पन्न हुए यह शाखा बाईं ओर को मुड़ी और कुछ समय तक व्यास नदी के आगे पाक पट्टन और दीयालपुर के समीप रहने लगी। राजा मेज चीन का पौत्र था। मेज के बेटे मुकालशी ने फरीदकोट बनवाया। यह पहले मुकाल्हर कहलाता था मुकाल्सी के बेटे दो वंशों में बँट गये और जैरसी और बैरसी कहलाने लगे। १२८८ ई० में ये दोनों वंश मुसलमान हो गये। पंवार धीरे धीरे इतिहास से लुप्त हो गये। मंजु वंश उत्तर की ओर नदी के समीप बढ़ा। १६ वीं शताब्दी के आरम्भ में इस वंश ने कई गांव और नगर बसाये। जीरा और धर्मकोट के बीच में ये उस स्थान पर मिलते हैं जहां पहले नदी का किनारा था। १७०० ई० में नवाब ईसा खां ने कोट ईसा खां बनवाया।

इसी बीच में बैरसी लोगों ने रैकोट में अपनी राजधानी बनाई यह स्थान आजकल लुधियाना जिले में है। यहाँ से पूर्वी परगनों पर शासन करते रहे। इनके वंश वाले मुगलों के सरहिन्द सूबों के अन्तर्गत स्थानीय सूबेदारों का काम करते थे।

रायहेल के समय से यहां जाटों का आना आरम्भ हुआ जाटों के कई वंश यहाँ आये। धालीवाल जाट वंश के ही धौलपुर राज्य के महाराज हैं। कहते हैं यह वंश धारा नगरी (मालवा) से आया। इसी वंश की एक लड़की आगे चलकर सम्राट अकबर को व्याही गई। भटिंडा से आने वाले जाट मोगा तहसील के पश्चिमी भाग में फैल गये। सोलहवीं शताब्दी के अन्त में सीधू वंश राजपूताना की ओर से इस जिले में आया। सीधू बरार जाटों ने कोट कपूरा की नींव डाली। फरीदकोट का राजा भी इसी वंश का है। मोहन के वंशज जाट महराज में बस गये। इन्हीं से पटियाला नाभा और झींद के फुलकियां राजाओं की उन्नति हुई।

१६२५ ई० के समीप सातवें गुरु हरराय सिंह ने बहुत से जाटों को सिक्ख बना लिया। दसवें गुरु गोविन्द सिंह ने १७०५ ई० में चमकौर से भाग कर कोट कपूरा में शरण लेनी चाही। पर सिक्ख होने पर भी कोट कपूरा के राजा ने औरंगजेब के डर से गुरु गोविन्द सिंह को शरण न दी। गुरु गोविन्द सिंह भाग कर मुक्तसर आये। यहां उनके अनुयाई काट डाले गये। गुरु गोविन्द सिंह दक्षिण भारत को चले गये।

१७६० ई० में सिक्खों ने लाहौर के मुगल सूबेदार अदीना बेग को हरा दिया। इस समय से सिक्खों की शक्ति तेजी से बढ़ने लगी। ३ वर्ष बाद इन्होंने कसूर को लूटा। बहुत से लोग कसूर से भाग कर फीरोजपुर चले आये और उन्होंने वर्तमान नगर को बसाया। इसी समय तारासिंह घेबा ने जिले के उत्तरी भाग पर आक्रमण करके फतेहगढ़ पर अधिकार कर लिया। आगे बढ़कर तारासिंह ने रामूवाला और भारी में किले बनवाये। सरदार जसासिंह ने अहुलिया वाला इस जिले के नेपाल इलाके पर अधिकार कर लिया। कोट ईसा खां के नवाब अहुलिया वाला की अधीनता स्वीकार कर ली।

कहते हैं फीरोजपुर का किला दिल्ली के बादशाह फीरोजशाह के समय (१३५१ से १३८७ ई०) में बना। इस समय यहां एक टीला शेष है। इसी के ऊपर एक मुसलमानी मकबरा बना है। आईन अकबरी में फीरोजपुर को मुल्तान के सूबे में एक बड़े परगने का केन्द्र बतलाया गया है। मुहम्मदोत या ममदात भी इसी जिले में था। आइन अकबरी में फीरोजपुर के किले का उल्लेख नहीं है पर ममदोत के किले का उल्लेख है। १५४३ ई० में यह नगर एक महामारी में नष्ट हो गया। यहां के व्यापारी कोट ईसा खां को चले गये। फीरोजपुर अकबर के समय में सरहिन्द के सूबे में न मिलाकर मुल्तान के सूबे में मिलाया गया इससे सिद्ध होता है कि उस समय फीरोजपुर सतलज नदी के दाहिने किनारे पर स्थित था। पर कई मार्गों के चौराहे पर स्थित होने के कारण फीरोजपुर कई बार लूटा भी गया।

मुगल साम्राज्य के पतन के समय यह प्रदेश प्रायः निर्जन हो गया। फिर यहां डोगर राजपूत बस गये। डोगर लोग खेती की अपेक्षा पशुओं को पालना अधिक पसन्द करते थे। आपत्ति आने पर वे स्त्रियों और बच्चों को भैंसों पर चढ़ाकर झाऊ के जंगल में भाग जाते थे। मुसलमान अपने को दिल्ली के चौहानों के वंशज बतलाते हैं। वे पाक पट्टन के पड़ोस में बस गये। फिर वे यहां से सतलज नदी के दोनों किनारों पर १०० मील तक फैल गये। यह लोग सतलज के खादर में रहते थे। यहां यह लोग ढोर पालते और लूटमार करते थे। एक समय उन्होंने ममदोत, खाई और फीरोजपुर पर अधिकार कर लिया था। इनके कई हजार साथी सुनाम कस्बे में बस गये। कुछ लोग लाहौर और डेरा इस्माइल खां के पड़ोस में चले गये। फीरोजपुर के मुसलमान डोगर अपने को बहलोल के वंशज बतलाते हैं। पाक पट्टन से वे धीरे धीरे इधर उधर फैले। १७४० ई० में वे फीरोजपुर के समीप पहुँच गये। यह इस समय लखी जंगल का अंग था। फीरोजपुर के मैदान में कुछ भट्टी गाँव बिखरे हुये थे। डोगरों के आने पर भट्टी लोग दक्षिण की ओर चले गये। लगान न देने पर लाहोर का सूबेदार उनके लड़कों को जमानत के रूप में रख लेता था। पर शीघ्र ही उन्होंने विद्रोह का झंडा उठाया। कुछ समय तक वे स्वाधीन बने रहे। उन्होंने दो फौजदारों को मार डाला। उन्होंने एक फौजदार (जुलखां) को सन्धिवार्ता के बहाने बुलाकर विश्वास घात से मार डाला। जो लोग जमानत पर रक्खे गये थे उन्हें फौजदार के नायब ने आरा से चिरवा कर टुकड़े टुकड़े करवा डाला।

१७६३ और १७६४ ई० में हरीसिंह ने कसूर और समीपवर्ती प्रदेश को लूटा। इन्हीं सरदारों में एक गुजर सिंह था। इसके बेटे को महासिंह की बहिन ब्याही थी।

महासिंह रंजीतसिंह का पिता था। अपने भाई और दो भतीजों को साथ लेकर गुजर सिंह ने कसूर के ठीक सामने सतलज नदी को पार किया और फीरोजपुर शहर पर अधिकार कर लिया। यहां का किला खंडहर हो चुका था। एक सरदार ने फीरोजपुर के पड़ोस में खाईचान और बाजिदपुर पर अधिकार कर लिया। इस समय फीरोजपुर जिले में ३७ गांव थे।

१७७१ ईस्वी में सतलज के मार्ग में परिवर्तन हुआ। सुखार या नई धारा सूख गई। ७ गांवों को छोड़ कर शेष गांव कट गये या ऊसर हो गये। इसी वर्ष फीरोजपुर का किला फिर से बनाया गया। कुछ ही समय में यह जागीर कई टुकड़ों में बट गई। कसूर के नवाब ने इधर चढ़ाई की और बचे हुये गांवों में लगान का अपना भाग बांट लिया। १८०७ ई० में महाराजा रंजीत सिंह ने कसूर पर अधिकार कर लिया। उसने यह जागीर अपने प्रेम पात्र सरदार निहाल सिंह अटारी वाले को सौंप दी। निहाल सिंह ने सतलज नदी को पार करके दुलची गांव और कोट (किले) को जीत लिया। १८०८ ई० में रंजीत सिंह की सेना के एक भाग ने खाई के किले को जीत लिया। सरदार धनसिंह ने अपनी छोटी जागीर को बचाने के लिये अंग्रेजी एजेण्ट आक्टर लोनी से सहायता मांगी। अंग्रेजों ने धनसिंह को अपनी संरक्षता में ले लिया। पर १८१९ ई० में सरदार धनसिंह का स्वर्गवास हो गया। १८३५ ई० में उसकी विधवा स्त्री लच्छमन कुअर का भी देहान्त हो गया। इसके पश्चात् फीरोजपुर का प्रदेश अंग्रेजी राज्य में मिला लिया गया। लाहोर दरबार से मिलकर नये जिले की सीमा निश्चित की गई। इसमें ४० गांव शामिल थे।

१८४५ ई० में जो प्रथम सिक्ख युद्ध छिड़ा उसका प्रधान केन्द्र फीरोजपुर हुआ। सिक्ख सेना ने फीरोजपुर के ठीक सामने सतलज नदी को पार किया। मुदकी, फीरोजशाह, अलीवाल और सोब्रांव में घमासान लड़ाइयां हुई। इन युद्ध स्थलों में आजकल खेती होती है और युद्ध का कोई चिन्ह शेष नहीं है। इस युद्ध का यह फल हुआ कि अंग्रेजों को खाई, मुदकी और लाहोर राज्य का वह सारा प्रदेश मिल गया जो सतलज नदी के पूर्व में स्थित है। अहलुवालिया वाले सरदार ने सिक्खों का साथ दिया था। उसकी वह सब जागीर जो नदी के दक्षिण में थी छीन ली गई। फरीदकोट के सरदार ने अंग्रेजों को सहायता की थी। उसे कोट कपूरा इनाम में

दिया गया। बदले में उससे सुल्तान खान वाला परगना ले लिया गया। यह मार्ग में पड़ता था।

खाई इलाका पहले डोगरों के अधिकार में था। मल्लां वाला इलाका भी पहले डोगर प्रदेश में था। मल्लां वाला खास गांव मल्ला नाम के एक डोगर सरदार ने बसाया था। कुछ गांवों को छोड़कर बाघू वाला इलाका भी मल्लांवाला में शामिल था।

अब से १२५ वर्ष पहले मखू इलाके पर नमाल नाम के एक मुसलमानी कबीले का अधिकार था।

जीरा परगना पहले उजाड़ था। जो प्रदेश कोट ईसा खां, धर्म कोट और फतेहगढ़ इलाकों में शामिल है उस पर पहले पंवार राजपूतों का अधिकार था, जानेर राजधानी थी।

कहते हैं फारस के बादशाह ने अकबर के दरबार में एक धनुष ऐसा भेजा था कि उस पर बहुत से लोग प्रत्यंचा लगाने में विफल हो चुके थे। नेता अहमद खां ने इस पर प्रत्यंचा लगा दी। इसपर सम्राट अकबर ने प्रसन्न होकर टप्पा शार्दीवाल दे दिया यह आजकल कोट ईसा खां के नाम से प्रसिद्ध है। १७६० ई० में तारासिंह ने कुतबपुर में एक किला बनाया। इसका नाम बदल कर धर्म कोट रक्खा गया।

सदासिंह वाला इलाका सरदार सदासिंह के नाम पर पड़ा जिन्होंने प्रथम बार इसे जीत कर सिक्ख राज्य में शामिल किया था। प्रथम सिक्ख युद्ध में इसके कुछ भाग जब्त कर लिये गये और कुछ भाग छोटे छोटे जागीरदारों के हाथ में बने रहे।

बदनी इलाके के गांवों पर पहले रायकोट के राय के अधिकार में थे। आजकल इस इलाके के जमीदार धारीवाल जाट हैं। कहते हैं इस वंश की एक लड़की सम्राट अकबर को ब्याही गई थी। लड़की के पिता को १२० गांव जागीर में दिये गये थे। मुगल साम्राज्य के पतन होने पर पटियाला और नाभा राज्यों ने यह गांव छीन लिये। शेष गांव महाराज रंजीत सिंह ने ले लिये। कुछ ही एकड़ भूमि पुराने जागीरदार के वंशजों के हाथ में बनी रही। बदनी का किला मियाँ हिम्मत खां ने बनवाया था। मियाँ की उपाधि ग्रहण कर लेने पर भी यह वंश हिन्दू बना रहा।

पहार चक—इस इलाके के गांव भी रायकोट के राय के अधिकार में थे। सिक्खों के अधिकार में आने से पूर्व यहाँ के जमींदार स्वाधीन हो गये थे। लाहोर दरबार ने यह इलाका सीधी जवाहर सिंह को सौंप दिया। उसी के वंशजों का इस समय भी इस इलाके पर अधिकार है।

छिरक इलाके को झंडा नामी जाट ने स्थापित किया। वह रायकोट के राय का प्रजा था। वर्तमान समय में भी इस इलाके पर झंडा के वंशजों का अधिकार है। वे कलसिया के सरदार को आधी मालगुजारी देते थे।

कोट कपूरा—कोट कपूरा, मुक्तसर, मरी और मुदकी के इलाके पहले फरीद कोट राज्य से मिले हुये थे। इस सम्मिलित राज्य की राजधानी कोट कपूरा थी। यहां के जमींदार बरार या सीधू जाट हैं। कहा जाता है कि अकबर के समय में इनसे और भट्टियों से झगड़ा हुआ। तभी इनके (बाणों) प्रदेश और भट्टियाना (सिरसा) के बीच में सीमा निर्धारित कर दी गई जो अब तक चली आती है। बरारों के एक सरदार कपूरा ने कोट कपूरा (कपूरा का किला) बनवाया जो अब तक प्रसिद्ध है। १८०७ ई० में यह भाग लाहोर (सिक्ख) राज्य में मिला लिया गया। १७०५-१७०६ ई० में गुरु गोविन्द सिंह के कई अनुयांई मुक्तसर में लड़ते हुये वीरगति को प्राप्त हुये। गुरु जी ने इन सब के संस्कार कराये और कहा कि यह सब मुक्ति प्राप्त कर चुके हैं। जिस सर (तालाब) के समीप यह घटना हुई वह मुक्तिसर कहलाने लगा। उन्होंने यह भी बतलाया कि जो लोग इनकी वार्षिक तिथि पर यहां स्नान करेंगे वे भी मुक्ति प्राप्त कर सकेंगे। इसीसे इस घटना की स्मृति में प्रति वर्ष यहां एक मेला लगने लगा। सुल्तान खान वाला इलाके का प्रधान गांव सुल्तान खां वाला है। इस गांव को मतवल निवासी सुल्तान खां ने बसाया था। जब फरीदकोट के राजा पहाड़ सिंह ने इस पर अधिकार किया तब यह उजाड़ था। १८४७ ई० में कोट कपूरा के बदले यह इलाका फीरोजपुर जिले को मिल गया। महाराज, बच्छो, कोट भाई, झम्भा गुरु हरसहाय के इलाके बाद में इस जिले में सम्मि-

लित हुये। बरारों और डोगरों के बीच में यह एक उजाड़ खण्ड था। अब से प्राय: १७० वर्ष पहले यहां गुरु हरसहाय पधारे। उनके यहाँ आने से बरारों और डोगरों के झगड़े शान्त हो गये। घोड़े पर सवार होकर उन्होंने इस नये इलाके की सीमा निश्चित की। इससे यह इलाका उन्हीं के नाम से प्रसिद्ध हुआ। यह गुरुगोविन्द के बाद सिक्खों के आठवें गुरु थे। जब सिक्खों की आपस की लड़ाइयां हुईं तब इस इलाके पर कभी आक्रमण नहीं हुआ। अंग्रेजों ने भी इस पद्धति को माना और गुरु के चेलों का अधिकार यहां बना रहने दिया।

ममदोत या मुहम्मदोत अकबर के समय में भी एक परगना था और मुल्तान जिले में शामिल था। वर्तमान इलाका फीरोजपुर जिले के दक्षिणी पश्चिमी भाग में स्थित है। सतलज नदी के बांये किनारे पर यह ४० मील तक फैला हुआ है। पर इसकी औसत चौड़ाई आठ या नौ मील से अधिक नहीं है। इसका क्षेत्रफल ३७१ वर्ग मील है। पहले यहां कहीं अधिक मनुष्य रहते थे। जब १७५० ई० में मुगल बादशाह की अनुमति से इस भाग पर अधिकार किया। तब यह उजाड़ था। कुछ समय तक वे सरदार शोभासिंह के अधीन थे। इस इलाके का एक दावेदार (शाहनेवाज खां) फीरोजशाह की लड़ाई में सिक्खों की ओर से लड़ता हुआ मारा गया। दूसरा (जमालुद्दीन) अंग्रेजों की ओर से लड़ा। पुरस्कार में अंग्रेजों ने उसे नवाब की उपाधि और एक जागीर दे दी। यह नया नवाब डोगरों का कट्टर शत्रु था। उसने डोगरों की भूमि छीन ली और बहुतों को यहां से भगा दिया। डोगरों ने अम्बाला के कमिश्नर से अपील की। नवाब के अत्याचार सिद्ध हो गये। वह जागीर से हटा दिया गया। उसकी जागीर फीरोजपुर जिले में मिला ली गई। पर उसके परिवार के पोषण के लिये दो तिहाई मालगुजारी नियत कर दी गई।

फाजिल्का का इलाका १८०० ई० में प्राय: निर्जन था। जहाँ इस समय फाजिल्का कस्बा है वहां पहले कोई गांव न था। नदी के समीप १२ छोटे छोटे गांव थे। फाजिल्का तहसील के ४ परगने थे। मलौत परगने में १२९ गांव थे जो तहसील के दक्षिणी भाग में थे। महाजनी परगने में ४५ गांव थे।

यह सतलज के पुराने किनारे के ठीक दक्षिण पूर्व में थे और महाबलपुर के सिक्ख सरदारों से १८३७ में लिये गये थे।

बन्तुअन परगने में ८० गांव थे यह सतलज के पुराने किनारे से उत्तर-पश्चिम की ओर थे। और बहावलपुर के नवाब से लिये गये थे।

बहक परगने में ३९ गांव थे। यह सतलज के पुराने किनारे (डांड) और सतलज के बीच में स्थित थे।

फरीदकोट—यह राज्य मुक्तेसर परगने और फीरोजपुर किले के बाहरी भाग के बीच में स्थित है। इसका क्षेत्रफल ६१८ वर्ग मील और जन संख्या प्राय: १ लाख है। फरीद कोट के राजा ने सिक्ख युद्ध में अंग्रेजों का साथ दिया। इससे उसे कुछ गांव पुरस्कार में मिल गये। दोनों भागों की आय प्राय: ३ लाख है।

गदर के समय जैतू के समीप शामदास फकीर ने ४००० विद्रोही इकट्ठे किये पर अंग्रेजी सेनापति मार्सडन ने अचानक छापा मारा। इससे उसकी सेना छिन्न भिन्न हो गई। फाजिल्का में भी विद्रोही तेजी से दबा दिये गये इससे इस जिले में विद्रोह न फैल सका।

इस जिले में प्राचीन भग्नावशेषों का अभाव है। इस जिले में सबसे पुरानी इमारत जलालाबाद की मस्जिद है जो अकबर के समय में बनी। सराय नागा का गुरुद्वारा भी पुराना है। कहते हैं गुरु नानक यहां पधारे थे। सराय नागा में गुरु अंगद की भी मढ़ी है। मदरसा के पास राय मन्सूर का मकबरा है। दरोली भाई में माता दामोदरी की समाधि है। ठेरो, जानेर, सराय नागा आदि स्थानों में पुराने ठेह हैं। गुरु हरसराय में, गुरु नानक की माला और पोथी रक्खी हुई है। दरोली भाई में गुरु गोविन्द सिंह के भेंट किये हुये ग्रन्थ साहब, दो परवाने और कुछ वस्त्र रक्खे हुये हैं।

जन संख्या

जन संख्या की सघनता की दृष्टि से पंजाब प्रान्त

में फ़ीरोज़पुर जिले का अठारहवाँ स्थान है। औसत से यहाँ प्रति वर्गमील में प्रायः २५० मनुष्य रहते हैं। सबसे धनी जनसंख्या फीरोज़पुर तहसील में और सबसे कम जनसंख्या फाजिल्का तहसील में बसी है। मोगा, जीरा और मुक्तसर की जनसंख्या फीरोज़पुर से कम और फाजिल्का से अधिक है। इस जिले में केवल कस्बे ऐसे हैं जिनकी जन संख्या ५००० से ऊपर है।

फीरोज़पुर शहर, (५१,०००)
फाजिल्का (११,०००)
अबोहर (९५००)
मुक्तसर ८,०००
मोगा ७०००
जलालाबाद ६०००
धर्मकोट ६०००
जीरा ४,५००

दर्शनीय स्थान

फ़ीरोज़पुर शहर समुद्रतल से ६४५ फुट की उंचाई पर ३०°५५ अक्षांश और ७८°४० देशान्तर में स्थित है। यह नगर सतलज नदी से प्रायः ३ मील दूर है। इस शहर में कोई आलीशान इमारत नहीं है। यह प्रायः ४ मील लम्बी कच्ची चार दीवारी से घिरा हुआ है। इस में १० दरवाजे हैं। दिल्ली और लुधियाना दरवाजा दक्षिण की ओर है। कसूर और मुल्तान के दरवाजे पश्चिम की ओर हैं। चारदीवारी के पड़ोस में नगर के चारों ओर एक पक्की सड़क चली गई है। सड़क के पड़ोस में कई बगीचे हैं। पड़ोस में कई गांव हैं। बाजार ने शहर को दो भागों में बांट दिया है। यह बाजार दक्षिण में दिल्ली दरवाजे से आरम्भ होता है और उत्तरी सिरे तक चला गया है। इसी के पड़ोस में शहर के बड़े बड़े लोगों के घर हैं। लुधियाना दरवाजे के पास बैलगाड़ियों के पहिये बनते हैं। बाजार का दरवाजा बग़दाद के नमूने का है इसी से यह बग़दादी दरवाज़ा कहलाता है हीरा मंडी में लोहे का सामान बहुत बिकता है। पुरानी मण्डी और गंज रामजी दास अनाज की मंडियां है।

मन्दिर शहर भर में सब से बढ़िया है।

पुराने किले के बहुत थोड़े चिन्ह शेष बचे हैं। पुरानी तहसील के सामने जहां नूरशाह वली का मकबरा है वहीं पर यह किला बना था। हर बृहस्पति वार को बहुत से मुसलमान इस मकबरे का दर्शन करने आते हैं। फीरोज़पुर शहर के भीतर रानी का तालाब कुछ पुराना है। शहर के बाहर दिल्ली दरवाजे के पास वाला तालाब म्यूनिसिपेलिटी ने हाल में बनवाना था। म्यूनिसिपल हाल एक सुन्दर भवन है। स्कूल और अस्पताल की इमारतें साधारण हैं। फीरोज़पुर जेल छावनी की ओर है। फीरोज़पुर में चार सराय हैं। तहसील की नई इमारतें रेलवे लाइन के पास हैं।

छावनी शहर से दो ढाई मील दूर है। दोनों के बीच में सुन्दर सड़क है। जिले की कचहरी छावनी की हद के भीतर है। यह छावनी १८३९ ई० में बनी।

कहते हैं फीरोज़पुर शहर को १३५१ ई० में फीरोज़शाह ने बसाया था। पर १८३८ ई० में यहां केवल २७३२ मनुष्य रहते थे। १८४१ ई० में पूर्व की ओर बाजार बन जाने से फीरोज़पुर शहर की जनसंख्या ४८४१ हो गई। प्रथम सिक्ख युद्ध के बाद यहां ग़दर (१८५७ ई०) तक शान्ति रही। १८५७ के ग़दर में हिन्दुस्तानी सिपाहियों की एक सेना ने छावनी की इमारतों को लूट कर नष्ट कर दिया। पर तोपखाने पर विद्रोहियों का अधिकार नहीं हो सका था। इस से कुछ ही समय में छिन्न-भिन्न कर दिये गये थे। फीरोज़पुर कई रेलवे लाइनों का जंकशन है। दिल्ली से आने वाली प्रधान लाइन फीरोज़पुर शहर होती हुई कसूर और लाहोर को गई है। एक लाइन यहाँ से फाजिल्का, कराची होती हुई फसली को गई है। एक लाइन फीरोज़पुर से लुधियाना को जाती है। एक छोटी लाइन कोट कपूरा से फीरोज़पुर होती हुई फाज़िल्का को जाती है। लुधियाना की ओर से आने वाली ग्रांड ट्रंक रोड फीरोज़पुर होती हुई आगे चल कर सतलज नदी को पार करती है।

मोगा कस्बे में अधिकतर घर कच्चे हैं। लुधियाना से फीरोज़पुर को जाने वाली पक्की सड़क ग्रांडट्रंक रोड से यह प्रायः १ मील दूर है। पर तहसील और

दूसरी इमारतें ग्रांडट्रंक रोड पर ही बनी हैं। वह फीरोज़पुर से ३४ मील और लुधियाना से ४३ मील दूर है। तहसील के अतिरिक्त यहां अस्पताल, थाना और स्कूल हैं। अमरीकन मिशन ने शिक्षकों को तयार करने के लिये स्कूल खोला है। यहां देव समाज, आर्य समाज और डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के स्कूल अलग अलग हैं।

मुक्तसर (मुक्तिसर) कस्बा फीरोज़पुर से ३५ मील दक्षिण की ओर है। यह सतलज नदी से २० मील दूर है। यह ज़िले के पश्चिमी भाग का प्रधान व्यापारिक नगर है। सिरसा और फीरोजपुर से आने वाली सड़कें बलुई हैं। इन पर बैलगाड़ियां अनाज लाद कर चला करती हैं रेलवे की एक शाखा लाइन कोट कपूरा से मुक्तसर होती हुई फाज़िल्का को गई है जिस स्थान पर गुरुगोविन्द सिंह के अनुयाई मुगल सम्राट द्वारा मरवा डाले गये थे। वहां पर एक सरोवर (तालाव) के किनारे सिक्खों का विशाल गुरुद्वारा बना हुआ है। वैसे इस कस्बे के अधिकतर घर कच्चे हैं कुछ ही घर पक्के हैं। इस सरोवर का बनवाना महाराज रंजीत सिंह ने आरम्भ किया था पटियाला नाभा, झींद और फरीदकोट के राजाओं ने इसे पूरा कराया था। गुरुद्वारे के खर्च के लिये प्रायः ६००० रु० वार्षिक मालगुजारी का एक गांव मिला हुआ है। यहां प्रतिवर्ष मेला लगा करता है। मेलों में प्रायः ५०,००० मनुष्य आया करते हैं। यहां थाना, अस्पताल, स्कूल और सराय है। बाज़ार रेलवे स्टेशन के पास है।

अबोहर रेगिस्तानी प्रदेश में एक पुराना कस्बा है। १२४१ ई० में भी इसका उल्लेख आता है। पड़ोस में एक पुराने किले का खंडहर है। कहते हैं एक बार कुछ सैय्यद यहाँ के राजा के घोड़े चुरा ले गये। राजा के कोई लड़का न था। पर उसकी लड़की वीर थी। उसने पुरुष का भेष बनाकर अस्त्र-शस्त्र धारण किये। फिर यह घोड़े छुड़ा लाई। सैय्यद दो घोड़े वापिस लेने के लिये लम्बा धरना दिया। सैय्यदों की स्त्रियां अपने पतियों की खोज में निकलीं। उनको देखकर सैय्यदों ने सब को शाप दिया और सैय्यद उनकी स्त्रियाँ और निवासी सभी मर गये। इन वीरों का मकबरा बना है। कुछ समय तक अबोहर सचमुच उजड़ा हुआ था १८२८ ई० में कुछ मुसलमान ग्वाले यहाँ आकर बस गये। कैटाल के सिक्ख भाई ने इन सुखेरों को यहाँ बसने की आज्ञा दे दी। १८३१ ई० में यहाँ पटियाला महाराज का अधिकार हो गया। उन्हीं की ओर से यहाँ पक्का कुआँ बनवाया गया। १८३८ ई० में यहाँ अंगरेजों का अधिकार हो गया। कहते हैं इस समय यहां सुखेरों के १४०० घर थे। उनके पास डेढ़ लाख गायें थीं। उनके यहाँ प्रतिदिन ६० मन घी होता था। अबोहर घी की प्रधान मंडी थी। सरहिन्द नहर की शाखा नहरों से यहाँ सिंचाई होने लगी। इससे खेती तो बढ़ गई पर घी का कारबार नष्ट हो गया। १८९७ ई० में रेलवे के खुलवाने से अबोहर तेजी से बढ़ा। अबोहर में थाना, टाउन हाल, मवेशी अस्पताल और स्कूल है। पर हिन्दी साहित्य सम्मेलन का साहित्य सदन सर्व प्रसिद्ध है।

फाज़िल्का—१८४४ ई० में जब बहावलपुर दरबार ने सतलज नदी के समीप का प्रदेश अंग्रेजों को सौंपा तब उस स्थान पर कोई गाँव या घर न था जहाँ पर आजकल फाज़िल्का बसा हुआ है। पहले यहाँ एक अंग्रेज अफसर ने एक बँगला बनवाया। कुछ समय तक यह स्थान बंगला नाम से प्रसिद्ध रहा। दस वर्ष बाद यहाँ कुछ दुकानें खुल गईं। एक निवासी का नाम फाज़िल था। इससे यह स्थान फाज़िल्का कहलाने लगा। सतलज के समीप स्थिति होने से यह सिन्ध और मरुस्थल के व्यापार का केन्द्र बन गया। व्यापार बढ़ने से यहां की आबादी भी तेजी से बढ़ गई। २०,००० रु० से ऊपर यहाँ की म्यूनिसिपैलिटी के चुंगी से आमदनी होती है १९०८ ई० में यहाँ एक ऐसी बाढ़ आई कि सारा नगर नष्ट हो गया। नया नगर फिर से बनाया गया। यहाँ तहसील, थाना, डाकखाना, मुन्सफी कचहरी है। फाज़िल्का पंजाब भर में ऊन की सब से बड़ी मंडी है। कुछ ऊन बीकानेर से आती है। ऊन के गट्टे बनाने का यहाँ एक बड़ा कारखाना है। यह गट्टे लिवरपूल (इंगलैंड), कानपुर और दूसरे स्थानों को भेजे जाते हैं। फाज़िल्का अनाज की भी बड़ी मंडी है। फाज़िल्का में छोटी लाइन कोटकपूरा और भटिंडा से आती है। बड़ी लाइन मैकलिओड

गंज होकर कराची को जाती है। व्यापार का केन्द्र होने से यहाँ सेन्ट्रल कोआपरेटिव बैंक का प्रधान कार्यालय खुल गया।

धर्मकोट कस्बा फीरोजपुर से लुधियाना को जाने वाली पुरानी सड़क पर स्थित है। इसका पुराना नाम कुतुबपुर था। १७६० ई० में सिक्ख सरदार उल्लेवाला ने जब यह प्रदेश जीता तब इस नगर का नाम धर्मकोट रख दिया गया। किला लुप्त हो गया। लुधियाना से यहाँ बहुत कपड़ा बिकने आता था। यहाँ का बाजार अच्छा है। यहाँ थाना, स्कूल और सरांय है। पहले तहसील भी थी। फिर वह तहसील उठ कर जीरा को चली गई। जीरा कस्बा फीरोजपुर से लुधियाना को जाने वाली सड़क पर ग्रांड ट्रंक सड़क से ९ मील की दूरी पर बसा है। यहाँ अधिकतर घर कच्चे हैं। तालाब और कुछ दुकाने पक्की हैं। यहाँ तहसील, थाना, स्कूल, सराय, डाकखाना, बाजार और मवेशी अस्पताल है। नहर का पानी मिल जाने से पड़ोस में बाग तयार हो गये हैं। दोनों रेलवे लाइनों के बीच में प्रायः ८ मील की दूरी पर स्थिति होने से जीरा की वृद्धि में बाधा पड़ती है।

मखू (२०००) कस्बा सतलज के बायें किनारे के पास सतलज और व्यास के संगम से कुछ ही दूर बसा है। यहां से जीरा १२ मील दूर है। यहां गुड़ और देशी शक्कर का व्यापार बहुत होता है। यहां बाजार, थाना, स्कूल छोटी सराय और रेलवे स्टेशन है।

महाराज सिक्खों का एक गांव (४०००) है यह मोगा से ३६ मील दक्षिण की ओर है। यहीं तिलकरा का पवित्र ताल है। पड़ोस के सुडौल महाराज लोग रहते हैं। यह गांव जिले के रेगिस्तानी भाग में स्थिति है।

रहन-सहन

ऊँचे भागों के गांव बड़े हैं। नदी तट के गांव छोटे हैं। गांव में एक दो धनी लोगों के घर पक्के होते हैं। शेष घर कच्चे होते हैं। गांव की गलियां तंग और टेढ़ी होती हैं। जिले के पश्चिमी भाग में भूमि सस्ती है। इसी से गांव अधिक खुले हुये हैं और घर दूर दूर बसे हैं। एक गांव में एक या दो कुएं होते हैं। तालाब भी होता है। इसी से घरों की मरम्मत के लिये मिट्टी मिलती है। इसी में गांव के जानवर पानी पीने आते हैं। यहीं कुछ लोग कपड़ा धोते हैं। गांव के चारों ओर फिरुई या चक्करदार कच्ची सड़क होती है। गांवों के चारों ओर प्रायः झाड़ियों के घेरे होते हैं। इन छोटे छोटे घेरों में खाद या कंडे रक्खे जाते हैं। सिक्खों के गांवों में पक्का महराब होता है। फाजिल्का तहसील के बागरी गांवों में भीतर आने के लिये एक प्रधान सड़क होती है। कुछ गांवों के बाहरी भागों में चमार और चूढ़ों के घर होते हैं। सिक्खों के गांव बहुत साफ और सुथरे होते हैं। बागरी गांव और मुसलमानों के गांव कुछ गन्दे होते हैं। नदी तट के पास वाले मुसलमानी गांव प्रायः छोटे और गन्दे होते हैं। यह घर छोटे होते हैं और सरपत (घास) से छाये होते हैं। सिक्खों के गांव में धर्मशाला अवश्य होता है। मुसलमानी गांव में प्रायः मस्जिद होती है। बागरी गांवों में धनी लोग अपने पूर्वजों की स्मृति में छतरी बनवा देते हैं।

ऊँचे भागों के घर बहुत बड़े होते हैं। इनकी कच्ची दीवारें प्रायः पांच गज़ ऊँची होती हैं। दरवाजा इतना चौड़ा होता है कि भरी गाड़ी आ सकती है। इसके आगे ड्योढ़ी (एक बड़ा कमरा) होती है जिसमें बैलगाड़ी और हल आदि रक्खा जाता है। जितना चौड़ा घर होता है उतनी ही लम्बी ड्योढ़ी होती है। इसकी चौड़ाई प्रायः १८ फुट होती है। जितनी लम्बी धन्नी (लकड़ी) मिलती है उतनी ही चौड़ी छत होती है। अधिक चौड़ा बनाने के लिये बीच में पक्के खम्भे बना दिये जाते हैं। धन्नी के ऊपर तख्ते बिछा कर इसे मिट्टी से पाट देते हैं। यह कच्चे घर गरमी में बहुत ठंडे रहते हैं। ड्योढ़ी के आगे दलान (आंगन) होता है। इसके सिरों पर कई छोटे छोटे कमरे बने होते हैं। कुछ कमरों में अन्न रखने के लिये चिकनी मिट्टी के बड़े बड़े गोल भरोला बने होते हैं। चारा छत पर रक्खा जाता है। घर में काफी जगह न होने पर चारा बाहर बाड़े या खेत में रक्खा जाता है। प्रत्येक घर में चरखा, भोजन बनाने के बर्तन होते हैं। हिन्दुओं

के घरों में अधिकतर बर्तन पीतल के होते हैं। मुसलमानी घरों में तांबे और टीन के बर्तन होते हैं। हिन्दू और मुसलमानों के घरों की बनावट में कोई अन्तर नहीं होता है। नदी तट के समीप जिन भागों में बाढ़ आती है वहां छोटे झोपड़े घास फूस के बनाये जाते हैं।

इस जिले में लोगों को कुश्ती देखने का बड़ा शौक़ है। हर मेले में कुश्ती होती है। नामी पहलवानों का नाम सुन कर दूर दूर के पहलवान इकट्ठे हो जाते हैं। नौजवान लोग सोची का खेल बहुत खेलते हैं। एक मनुष्य दूसरे मनुष्य की छाती पर इस तरह हाथ मारता है कि वह पकड़ा न जा सके। कबड्डी का खेल भी बहुत खेला जाता है। गुल्ली डंडा, लुक, मचई (आंख मिचौनी) लट्ठ, चलाना, वरमा चोरी (उछलना) खेल भी प्रचलित है। मेलों में रस्सा भी खींचा जाता है।

चीचो चिच गन्धोंलियां में लड़के दो दलों में बट जाते हैं। प्रत्येक दल लकीरें खींच कर दूसरे दल की लकीरों को मिटाता है। जिस दल की सब से अधिक लकीरें शेष रह जाती हैं वही दल जीतता है। करकना लक्कड़ जंड या सिरीस के पेड़ के नीचे खेला जाता है। एक लड़का अपने दाहिने पैर के नीचे से एक लकड़ी जितनी दूर फेंक सकता है उतनी दूर फेंकता है। लकड़ी पकड़ने वाला लड़का इसे लेने के लिये भागता है। दूसरे लड़के झट से पेड़ के ऊपर चढ़ जाते हैं। लकड़ी लाने वाला लड़का इतने में लकड़ी को पेड़ के नीचे लाकर एक घेर बनाता है। दूसरे लड़के पेड़ से कूद कर लकड़ी पकड़ने की कोशिश करते हैं। लकड़ी पकड़ने वाला लड़का इन छूने वाले लड़कों में से किसी एक की दाहिनी टांग पकड़ने का प्रयत्न करता है। जिस किसी की वह टांग पकड़ लेता है वही इस बार लकड़ी लेने जाता है।

लड़कियां गुड़िया गुड्डा का खेल खेलती हैं। कुछ लड़कियां गेंद उछाल कर खेलती हैं। कुछ ठिकरियां खेलती हैं। मिट्टी के टुकड़ों को ऊपर उछाल कर वे अपना हाथ उलट लेती हैं। इसी उलटे हाथ पर वे मिट्टी के टुकड़ों को रोकती हैं। जो लड़की सब से अधिक टुकड़े रोक लेती है वही जीतती है। कुछ लोग शतरंज, पचीसी, तास और जुआ भी खेलते हैं।

फीरोज़पुर ज़िले की कुछ कहावतें

१—सावन सूँज न कपा न मूँज

यदि सावन के महीने में वर्षा न हुई तो न कपास और न मूँज होगी।

२—तित्तर खम्भी ह्वासी कि पूछी पंडा जोतसीं

यदि बादल तीतर के पंख के समान हुये तो अवश्य वर्षा होगी।

३—मेंह पिया दिवाली गेहा सूता तेहा हाली सीता का धू वाही वाली।

यदि दिवाली के समय वर्षा हुई, सुस्त और मेहनती किसान दोनों का एक हाल हो जायगा पर अन्त में मेहनती किसान की फसल अच्छी होगी।

४—शुक्रवार के बादल रहे शनीचर छाय, कहे भाट सुन बादल बरसे बाझ न जाय। यदि शुक्रवार से बादल छाये और शनिश्चर तक बने रहें तो अवश्य वर्षा होगी।

५—दक्खन वागे सान बादल, रान मलाई खाय डह वरसे डह उधले कहे न बिरथा जाय।

यदि बदली हो और दक्खिन की ओर से हवा चले तो अवश्य वर्षा होगी।

६—ऊँट, जवाहां (जवासा) भासरा चौथा गाड़ीवान, चारो मेंह न मांगदे भावें उजड़ जावे जहान।

७—आपे ही मर जायंगे जेहरे जेठ पायंगे राह।

८—जे परसे पोहिन माहिन कौन आखे जामेन नाहिन।

(अगर पौष और माघ में वर्षा हो तो अवश्य फसल होगी।

कातिक भाले मैंगला, मुल्ली फिरे गंवार

वरसिया चैत न घर मिले न खेत।

पालागिया संगलियां आधे जन्दे माघ (आधे माघ बीतने पर सरदी कम हो जाती है।)

सावन तरी पंचमी जे चले पौन

यदि ठीक समय पर पवन चले तो सावन में वर्षा होती है।

दिनीन बादल रातिन तारे आखिन मेरे खसम नून बल्दन नून न मारे।

यदि दिन में बादल रहें और रात को तारे दिखाई दें तो अवश्य वर्षा हो।

सावन वागे पुरा वह मन दे हाथ छुरा जाट चढ़े तुहरा वह सरियन नालों बुरा।

दो सावन, दो भादों दो कातिक दो माघ, ढाडा ढागा वेच के दाना पका विहाज।

(यदि किसी वर्ष दो सावन दो भादों दो कातिक दो माघ हों तो गाय बैल बेच कर अनाज मोल लेना पड़ेगा।

माघ महीने बरसे बादल होय हम जो काल हटे तब बदली वो बीज मत खो।

अति न भला मेघला, अति न भली धूप, अति भला हँसना, अति न भली चुप।

पहली परका जे लागे दिन बहत्तर लागे। यदि जेठ की प्रतिपदा को वर्षा हो तो बहत्तर दिन पानी बरसे।

पीके न सौहरियां वत्तर न वाहियां सावन न ओस पिया तीनी औगात गययां।

सावन न बाही एक वार फेर भावन वाहिन वार वार।

अगर सावन में खेत एक बार न जोता जाय तो फिर बार बार जोतने से कोई लाभ नहीं।

भूली फिरे गंवार जो कातिक भाले मेघला जो भावा कर्तार तान कातिक सावन या करे।

वाहियां उन्हां दियां जिन्हां देघर दे हुक्के। हुक्के उन्हां दे जिन्हां दे गोहे सुक्के। गोहे उन्हां दे मंगू धुक्के। (हल उन्हीं के यहां होते हैं जिनके यहां हुक्के होते हैं। जिनके हुक्के होते हैं। हुक्के उन्हीं के यहां होते हैं जिनके यहां सूखे गोहे (खाद) होते हैं। गोहे (खाद) उनके यहां होते हैं जिनके यहाँ गाय, बैल होते हैं।)

मर्ददा बोलिया ते फज्जरदा गज्जिया विर्था न जाये। मर्द पुरुष का वचन (प्रतिज्ञा) और प्रातःकाल का गर्जना वृथा नहीं जाता है।

सियाल, सोना, हार, चांदी सावन समो सामी। सरदी की ऋतु में हल जोतना सोना के समान मूल्यवान होता है। हार में हल जोतना चांदी के समान है। सावन में एक सा है।

सावन न चरियां (चराई) भादों न वहियां (जुताई) पीके (पिता के यहां) न सहवरियां (शिक्षा) सट्ठी (साठ बार) सियां (जुताई) गाजराने गाजर के लिये।

सौसिया कमद (गन्ने के लिये १०० बार) बारह सियाँ पायके (गेहूँ के लिये १२ बार) देख कनकदा झार ज्यूँ ज्यूँ वाहे कनक नूँ त्यों त्यों देवे सवाय।

टूँघे ला हल तेरे घर विच नौकरी तिल विरले जौ संवने वाठो वाठ कपास लेफ दी बुक्कल मार्के मक्की विच दे जाह।

तिल दूर दूर जौ पास पास, कपास मध्यम दूरी पर बोना चाहिये कि लिहाफ ओढ़ कर मनुष्य उनके बीच से जा सके।

दाद तपाके बाजरा तित्तर तोर जवार कनक कमादी सांघने डंगो डंग कपास। लेफ दे बुक्कल मार्के मक्का विच दे लंग जावे।

बैन दिनीन तन्दिन चालीस दिनीन गुवार साठिन दिनीन बजरी नव्वे दिनीन ज्वार।

२२ दिन में शांक, ४० दिन में ग्वार ६० दिन में बाजरा और ९० दिन में ज्वार पकती हैं।

सट्ठी पक्के साठिन दिनीन जो पानी आवे अट्ठिन दिनीन।

साठी चावल ६० दिन में पकता है। यदि उसे आठवें दिन पानी मिलता रहे।

बागरी कहावतें

चैत मास उज्जल पाख आठों नवें कर जो ना हग बरसे जहां दूर मख होवे। यदि चैत मास के उज्जल पक्ष में आठवीं नवमी को वर्षा हो तो जहां जहां वर्षा हो वहां वहां अकाल पड़े।

अरवा रोहन महिरी पोई मूल न होई रखी सिरों न मोती लेही दौलती जोई।

यदि जेठ के पहले सप्ताह में, समस्त पोह में और सावन में रखरी के दिन वर्षा न हो तो अकाल पड़ेगा।

रोहन वागेन मिर्ग पावेन तो घल्ला हाली क्यों खावेन।

यदि जेठ के प्रथम सप्ताह में हवा चले और अन्तिम सप्ताह में यह गरम हो जावे तो वर्षा भाव से खेती न होगी।

सावन पहली सोध नून घन बादल घन विजली धन्धा धोरी बेच के वेठिय चावो बीज। यदि सावन के आरम्भ में घने बादल हों और कजली हो तो वर्षा होगी। यह सब कुछ बेच कर बीज मोल ले लेना चाहिये।.

जाट, पाट, फट्ट, वट्ट चारों बंधे ही काम सवार देने जाट रेशम, घाव और हद बंधने पर ही काम देते हैं।

वन्ने जाट न छेड़ियो हट्टी विच किरार। जाट को उसके खेत की हद में और बनिये को उसकी दूकान में नहीं छेड़ना चाहिये।

जाट की जाने गुन नून चोला की जाने वाह नून जाट गुन को और चना हल को क्या जाने।

गुज्जर तों उज्जर भल्ली उज्जरों भल्यू जर जिथें गुज्जर देखिये डटो दीयेमार।

डोगर गज्जर दो कुह विलाव दो यह चारों न हों तो खुले किंवाड़े सो।

सूद होवे पार तो गांठ संभाल्यु यार सप्प सांप) सूद, सुनार तिन्ने नहीं किसे दे यार।

ऐसो उल्लू कोई नहीं ऐसा उल्लू डूम,
देही देही कर रिहो दाता गिने न सूम।

गिल सिक्ख नहीं चाहिल मीत नहीं टिक्त धारीवालदा, चौधर प्यारे वालदा, बरछी बरार दी।

ढोल गँवार शूद्र पशु नारी, पंजे ताड़न के अधिकारी।

सींग बांकी मेंह (भैंस) चंगी,
कौन बांकी गोरिया (स्त्री)
मूछ बांकी मर्द चंगा
सुम बांकी घोड़िया (घोड़ी)
दूध बांकी मेंह चंगी
कोख बांकी गोरिया।
सुख न बांका मर्द चंगा।
चाल बांकी घोड़िया।

दूध वाली भैंस, सन्तान वाली स्त्री, वचन पालन करने वाला पुरुष और अच्छी चाल वाली घोड़ी अच्छी होती है।

स्याल कोट

कहते हैं स्याल कोट नगर को महाभारत के सुप्रसिद्ध राजा शल्य (पांडवों के चाचा) ने बसाया था १००० वर्ष तक समीप वर्ती प्रदेश वन से ढका रहा। उज्जैन के राजा विक्रमादित्य के शासनकाल में राजा शालिवाहन या शालिवन ने इसे फिर से बसाया और किला भी बनवाया। कोट शब्द का अर्थ है किला। इसलिये स्याल कोट शब्द का अर्थ होता है शालिवाहन का किला। शालिवाहन के दो बेटे थे। एक बेटे का नाम पूरन था। उसे उसकी सौतेली माँ ने मरवा डाला। दूसरा बेटा स्यालु स्यालकोट का राजा हुआ। स्यालु के शासन के अन्तिम वर्षों में घक्कर राजाओं से युद्ध होता रहा और स्यालकोट की दशा बिगड़ गई। कुछ विद्वानों का मत है कि जहां इस समय स्यालकोट नगर है वहीं प्राचीन समय का साकल नगर था।

स्यालकोट जिले का क्षेत्रफल लगभग १६०० वर्ग मील है। इसका कुछ भाग (१९८ वर्ग मील गुजरान वाला जिले को दे दिया गया। कुछ शेखूपुरा में मिला दिया गया। स्यालकोट का जिला ३१'४३ और ३२'५८ उत्तरी अक्षांशों के बीच स्थित है। यह ७४'१४ और ७५'३ पूर्वी देशान्तरों के बीच में घिरा हुआ है।

स्यालकोट के उत्तर में गुजरात का जिला और जम्मू राज्य है। स्यालकोट के पूर्व गुरदासपुर जिला, दक्षिण में अमृतसर और पश्चिम में शेखूपुरा और गुजरानवाला के जिले हैं। जिले की अधिक से अधिक लम्बाई ६२ मील और चौड़ाई ४६ मील है। पहाड़ की तलहटी में स्यालकोट का जिला रचना द्वाब (रावी और चनाव नदियों से घिरे हुए रचना द्वाब में स्थित है। इसके उत्तर में चनाव नदी और

दक्षिण में रावी नदी बहती है। स्यालकोट शहर से उत्तर और उत्तर-पूर्व की ओर शहर से हिमालय की बीर पंजाल श्रेणी का सुन्दर दृश्य दिखाई देता है। जिले का ऊँचा भाग हिमालय की ओर है। दक्षिण की ओर ढालू होता गया है। इसकी औसत ऊँचाई ८०० फुट है। पहाड़ की तलहटी से आगे रचना द्वाब में जिले की भूमि सब कहीं ऊँचे मैदान के समान मालूम होती है। उत्तर की ओर चनाब और दक्षिण की ओर रावी से घिरे होने के कारण जिले के इन सिरों पर ताजी नई कछारी भूमि की पेटी तयार होती रहती है। इस कछारी भूमि के आगे नदी के निचले किनारे हैं। रावी से प्रायः पन्द्रह मील की दूरी पर डेग नदी बहती है यह जम्मन राज्य से निकलती है और स्यालकोट को पार करके जम्मू में चली जाती है। नदियों और नालों के कटानों को छोड़ कर स्यालकोट जिले की भूमि सब कहीं समतल दिखाई देती है। हिमालय की पहाड़ियां जिले की सीमा के बाहर २० मील की दूरी पर ही समाप्त हो जाती है। जिले की भूमि उत्तर-पूर्व से दक्षिण पश्चिम की ओर ढालू होती गई है। नदियों और नालों का बहाव इसी (उत्तर-पूर्व से दक्षिण पश्चिम की) ओर है।

जिले के उत्तरी भाग में बजावत या चनाब नदी का एक प्रकार से भीतरी डेल्टा है। यहां कई धारायें उत्तरी प्रधान धारा से निकलती हैं और दक्षिण की ओर वाली धारा में मिल जाती है। इस प्रकार यहां नदियों और नालों का जाल सा बन गया है। बजावत के उत्तर पश्चिम में मलखानी तावी उत्तरी धारा में मिलती है। जम्मू तावी (नदी) दक्षिणी-पूर्वी कोने पर दक्षिणी धारा में मिलती है। इन धाराओं के पड़ोस में प्रायः गोल घिसे हुये पत्थर बिछे रहते हैं। इनके पास हरियाली भी रहती है। कुछ जंगल भी है। पर धाराओं में पानी अधिक नहीं रहता है। केवल बाढ़ के दिनों में वे पूरे वेग से बहती है। बजावत और चनाव, रावी और डेग नदियों के समीप वर्ती भाग जिले के विशेष स्थान मालूम होते हैं। इनसे दूर सब कहीं कुछ बालू मिली हुई उपजाऊ भूमि मिलती है कुओं में पानी कहीं पास कहीं अधिक गहराई पर मिलता है। पर जिले की भूमि इतनी उपजाऊ है कि खेती प्रायः सब कहीं होती है। फिर भी स्थान स्थान पर पेड़ मिलते हैं। लकड़ी की मात्रा काफी है। जिले के उत्तरी सिरे पर चनाब और दक्षिणी सिरे पर रावी नदी हिमालय के हिमागारों से आती हैं। गरमी बढ़ने से इनके निकास के पास बरफ भी अधिक पिघल जाती है। इसलिये इन नदियों में पानी बढ़ जाता है। इनके अतिरिक्त ऐक, डेग आदि कुछ छोटी बरसाती नदियां हैं जो हिमालय के निचले भागों से केवल वर्षा जल लेकर मैदान में आती है। यह बरसाती नदियां गरमी की ऋतु में प्रायः सिकुड़ जाती हैं। वर्षाकाल में वे उमड़ पड़ती हैं। यह नदियाँ ऊपरी भाग में अपने समीप के किनारों को काटती रहती हैं लेकिन निचले दक्षिणी भागों में इनका पानी सिंचाई के लिये बड़ा उपयोगी होता है।

चनाब नदी बजावत प्रदेश से ६ मील उत्तर की ओर पहाड़ी कन्दरा को पार करके दो प्रधान धाराओं में बट कर मैदान में प्रवेश करती है। एक धारा ठीक दक्षिण की ओर जाती है। बेनी संग के पास इसमें जम्मू तावी मिल जाती है। संगम के पास से यह पश्चिम की ओर मुड़ती है। दूसरी धारा स्यालकोट जिले की सीमा के कुछ बाहर पश्चिम की ओर बहती है। कलियाल के पास यह स्यालकोट जिले में प्रवेश करती है। और दक्षिण-पश्चिम की ओर बहने लगती है। सिक्का के पास इसमें दूसरी धारा मिल जाती है। ५० वर्ष पहले पूर्वी धारा ही प्रधान धारा थी। अखनूर के पास इस धारा में पत्थरों का समूह डालकर एक बांध बना दिया गया। प्रधान नदी (जिसमें यहां के लोग) खानो भाऊ नाम से पुकारते हैं। इस धारा की ओर मोड़ दी गई। अखनूर का बांध एक बाढ़ का फल था। इससे यहां बाढ़ के दिनों में सिंचाई के लिये प्रयाप्त जल रहता है। और दिनों में यहां की धाराओं में बहुत कम पानी रह जाता है। इससे सिंचाई के लिये बहुत कम पानी मिलता है। पर यहां की नदियां अपने पानी के साथ लाई हुई उपयोगी कांप (मिट्टी) बिछा जाती हैं। जम्मू तावी धारा बड़ी उपजाऊ कांप लाती है। अब से पचास वर्ष पूर्व बांध बनने से पहले पुरानी चनाब

नदी सब कहीं १५ फुट से अधिक गहरी थी। आज कल शीतकाल में इसमें कई स्थानों में पाज है। लोग इसे पैदल पार कर सकते हैं। खानो भाऊ बिना नावों की सहायता पार नहीं की जा सकती। पुल बजवन, चकखोजा, वेली गंगबल, कुरी, खान-भाऊ, मारी, कुलुवाल, भकराली, और सोधारा स्थानों पर नदी को पार करने के लिये नावें रहती हैं। मराला के नीचे नदी उत्तरी किनारे के पास रहती है।

रावी—रावी नदी स्यालकोट जिले के उत्तरी पूर्वी कोने पर राय तहसील में प्रवेश करती है। यह दक्षिणी सीमा के पास प्रायः सीधी रेखा में बहती है और स्यालकोट जिले को पार करके शेखूपुरा जिले में पहुँच जाती है।

राया तहसील में प्रवेश करने के कुछ ही आगे रावी नदी में बसन्तर नदी मिलती है। बसन्तर नदी जम्मू के पूर्व में पहाड़ियों से निकलती है। रावी नदी समतल प्रदेश में होकर बहती है। इसकी धारा चनाब की अपेक्षा बहुत मन्द है। इस जिले में यह अपने मार्ग में कहीं पर भी यह ऊँचे किनारों से नहीं घिरी हुई है। नदी का पाट धीरे धीरे चौड़ा होता जाता है। पहाड़ियों से दूर पहुँचने पर यह रावी नदी अपना मार्ग टेढ़ा कर लेती है और इधर उधर भटकती हुई बहती है। (जो कांप कछारी मिट्टी) रावी नदी अपने मार्ग में छोड़ती है। वह चनाव की कांप से कहीं अधिक उपजाऊ है। राया तहसील का खादिर महाल बड़ा उपजाऊ है। स्यालकोट और डस्का के नदी तट के प्रदेश इतने उपजाऊ नहीं हैं।

नदी की धारा में कोई स्थायी द्वीप नहीं हैं। केवल बाढ़ घटने पर कहीं कहीं बालू निकल आती है। इसी बालू में कुछ जंगली पौधे भी उग आते हैं। शीतकाल में रावी नदी कहीं कहीं पांज हो जाती है। पर बालू के बह जाने से पैदल नदी को पार करना भयानक रहता है। इस जिले में रावी को नाव से पार करने के लिये ११ घाट हैं। रावी नदी इतनी गहरी नहीं है कि इसमें बड़ी बड़ी नावें चल सकें। केवल छोटी छोटी नावें लाहौर से यहां तक कान घास लेने के लिये आती हैं। कुछ लकड़ी के लट्ठे भी चम्बा से बहकर यहां आया करते हैं।

डेग नदी जम्मू राज्य से निकलती है। वास्तव में यह दो छोटी छोटी पहाड़ी धाराओं से मिलकर बनती है। यह दोनों जसरोता के पास मिलती हैं। जिले के उत्तरी-पूर्वी सिरे पर जफरवाल तहसील के लेहरी गांव के पास यह स्यालकोट जिले में प्रवेश करती है। तेहरा में इसकी दो शाखायें हो जाती हैं। सैदपुर हजली के पास दोनों शाखायें फिर एक दूसरे से मिल जाती हैं। पसरूर तहसील में पहुँचने से कुछ ही पहले फिर दो शाखायें फट जाती हैं। दाहिनी शाखा भगतपुर के पास नहर को पार करती है। बाईं शाखा टेथरवाली के पास राया तहसील में प्रवेश करती है। इस डेग नदी में निचली पहाड़ियों का ही वर्षा का जल आता है। बरसाती नदी होने के कारण कभी इसमें पानी रहता है और कभी कहीं कहीं सूख जाता है। कुछ भागों में ऊपर पानी शेष रहता है। जिन भागों में ऊपर पानी नहीं रहता है उनमें गढ़ा खोदने से तली में पानी निकल आता है। पहाड़ियों पर अधिक वर्षा होने पर डेग में प्रबल बाढ़ अचानक आ जाती है। इससे बड़ी हानि होती है। वर्षा ऋतु में मैदानी भाग का पानी भी बह कर इस नदी में आ जाता है। इसकी तली समीपवर्ती भाग का समस्त वर्षा जल इसी में बह आता है। इसके किनारे कहीं सपाट और ऊँचे हैं। कहीं क्रमशः इतने नीचे हो गए हैं कि वे पृथक नहीं मालूम होते हैं। नदी की तली में बालू है। जहां तली से बालू हटकर दूसरी जगह चली जाती है वहां यह तली गहरी हो जाती है। वर्षा ऋतु में नदी की धारा बड़ी तेज हो जाती है। जहां नदी में केवल कमर तक पानी होता है वहां भी धारा की तेजी के कारण नदी को पैदल पार नहीं किया जा सकता। प्रधान धारा का मार्ग इस किनारे से उस किनारे को लगातार बदलता रहता है। यह नदी पहाड़ियों से जितनी अधिक दूर बढ़ती हो उतनी ही यह मन्द हो जाती है। जफरवाल और पसरूर में यह बहुत तेज बहती है और पड़ोस की भूमि को काटती रहती है पसरूर के दक्षिण में यह मन्द गति से बहने के कारण यह अपने मार्ग में उपजाऊ कांप

(कछारी मिट्टी) बिछाती है। धीमी चाल से बहने से यह सिंचाई के लिये भी अधिक उपयोगी हो गई है।

एक नदी भी जम्मू की पहाड़ियों से निकलती है और उमरानवाली गांव के पास इस जिले में प्रवेश करती है। यह स्थान स्याल कोट शहर से ६ मील पूर्व की ओर है। ऐक नदी स्यालकोट शहर के दक्षिणी भाग को घेरे हुये है। यह दक्षिण-पश्चिम की ओर को बहती है। ऊपरी भाग में इसके किनारे ऊँचे और तली गहरी और तंग है। इस भाग में नदी उमड़ कर किनारों के बाहर नहीं पहुँच पाती है। डस्का तहसील में पहुँचने पर इसकी तली ऊँची और धारा मन्द हो जाती है। यहां यह उपजाऊ कांप (कछारी मिट्टी) बिछा देती है। डस्का तहसील का यह भाग जिले भर में उपजाऊ है। जहां चनाब नहर इस नाले को पार करती है वहां पानी जमा होने लगता है। सम्बरियाल कस्बे को इस नमी से बड़ी हानि पहुँचती है। वर्षा ऋतु में इस नाले में बहुत पानी रहता है। शीतकाल के अन्त में यह प्रायः सूख जाता है। स्यालकोट शहर की छावनी और रेलवे के इस नाले के पास दो पक्के पुल बने हैं। जहां गुजरान वाला को जाने वाली पक्की सड़क इसे पार करती है वहां इस नाले के ऊपर लकड़ी का एक छोटा पुल बना है। और स्थानों पर इसे पार करने के लिये कहीं पुल नहीं है और न पुल की आवश्यकता पड़ती ही है।

इनके अतिरिक्त देश में कुछ छोटे छोटे नाले हैं। इनमें सबजकोटी, गदाभेर, लुण्डा, पलखू और धन नाले अधिक प्रसिद्ध हैं। कहीं कहीं इनके पानी से खेत सींचे जाते हैं।

इस झील में कोई बड़ी झील नहीं है। लेकिन निचले दलदल या छम्भ कई स्थानों पर मिलते हैं। इनमें वर्षा जल और दूसरे छोटे नालों का जल आता है। यह जिले के उत्तरी भाग में अधिक पाये जाते हैं और सिंचाई के बड़े काम के हैं।

भूगर्भ—स्यालकोट का जिला एक कछारी मैदान है। यहां पुरानी चट्टानों का एक दम अभाव है। इस जिले में मिट्टी कई प्रकार की पाई जाती है। जिले के अधिकतर भाग में उपजाऊ दोमट मिट्टी पाई जाती है। दक्षिणी और दक्षिणी-पश्चिमी भाग में कड़ी चिकनी मिट्टी पाई जाती है। जो धान की खेती के लिये अनुकूल होती है।

नदियों के पास और डेग के मार्ग में रेतीली मिट्टी पाई जाती है।

रोही की कड़ी चिकनी मिट्टी को मुलायम करने के लिये सिंचाई की आवश्यकता होती है। डस्का पसरूर और राया तहसीलों के दक्षिणी भागों में इसी प्रकार की मिट्टी मिलती है। यहां अपर चनाब नहर से सिंचाई होती है। इस प्रकार की मिट्टी जफरवाल के कुछ भागों में भी पाई जाती है। मैरा मिट्टी में बालू की कुछ मिलावट होती है। कहीं यह मुलायम होती है। कहीं यह कुछ कड़ी होती है। यह जिले के सभी भागों में मिलती है।

जलवायु

इस जिले में शीतकाल अक्तूबर के अन्त से आधे मार्च तक रहता है। शीतकाल बड़ा सुहावना रहता है। शीतकाल में अक्सर बदली रहती है लेकिन पानी बहुत कम बरसता है। अप्रैल मास से ग्रीष्मऋतु आरम्भ हो जाती है। लेकिन इस जिले की ग्रीष्म मैदान के दूसरे जिलों की तरह विकराल नहीं होती है जब पहाड़ की ओर से आंधियां आती हैं तब यहां कुछ ठंडक हो जाती है। बजबात में बर्फीला पानी लाने वाली धारायें गरमी कुछ कम कर देती हैं। वर्षा आरम्भ होने पर यहां इतनी नमी बढ़ जाती है कि मलेरिया ज्वर फैलता है।

स्यालकोट जिले में औसत से ३० इंच वर्षा होती है। कुछ भागों में केवल १८ इंच वर्षा होती है। हिमालय के पास वाले भागों में अधिक और दूसरे भागों में कम पानी बरसता है। तहसीलों में वर्षा का औसत इस प्रकार है :—

स्यालकोट	३०'५ इंच
जफरवाल	३६ इञ्च
डस्का	२७'४ इञ्च
पसरूर	३०'४ इञ्च
राया	२३'२ इञ्च

प्रायः इस जिले में अच्छी वर्षा होती है। किसी वर्ष (१११७ई० में ,यहां ५७'४ इञ्च वर्षा हुई। किसी

वर्ष (१८९९) में यहां १५ इञ्च से भी कम पानी बरसा।

७५ प्रतिशत वर्षा गरमी की ऋतु में जून से सितम्बर मास तक होती है। जो वर्षा सितम्बर मास में होती है उससे रबी की फ़सल को बड़ा लाभ होता है। कुछ वर्षा दिसम्बर और जनवरी महीने में भी हो जाती है।

वर्षाकाल में जिले के कई भागों में बाढ़ आती है। जफरवाल, नरोवाल, सम्ब्रियाल और सतराह की ओर आना जाना बन्द हो जाता है। कुछ भाग कई सप्ताह तक पानी से डूबे रहते हैं। इसकी जलवायु बड़ी अस्वास्थ्यकर हो जाती है।

स्यालकोट शहर का अल्प तापक्रम ६३ अंश और परम तापक्रम ८७ अंश फारेनहाइट रहता है। जनवरी, जुलाई और अगस्त मास में बादल अधिक रहते हैं। तभी हवा में नमी भी बढ़ जाती है। जनवरी मास में प्रातःकाल का तापक्रम ४७ अंश फारेन हाइट रहता है।

वनस्पति—जिले के कुछ भागों में पहाड़ियों के निचले भागों की तरह वनस्पति है। पेड़ सब कहीं मिलते हैं। पर इस जिले में खेती अधिक होने के कारण बन का प्रायः अभाव है। केवल चेन्हकी और तहलियान वाला में संरक्षित बन है। तहलियान वाला चनाब की बाढ़ में बहुत समय तक डूबा रहता है। चेनकी बन का क्षेत्रफल ४६७ एकड़ है। यहां पशुओं के चराने की आज्ञा नहीं है पर अक्तूबर से मार्च तक घास काटी जा सकती है। शीशम कीकर फुलाई रिक्त स्थानों में प्रतिवर्ष लगाये जाते हैं। जो वृक्ष सूख जाते हैं या आंधी में गिर जाते हैं वे बेच दिये जाते हैं। जिले में जलाने के ईंधन की कमी होने के कारण प्रायः सब कहीं गोबर के कंडे जलाये जाते हैं।

आम, लसोड़ा, बेर, शीशम सिरस, बबूल या कीकर, फूला, बरगद, बकाइन, तूत, जामुन, पीपल इस जिले के प्रधान पेड़ हैं। बजवान और नदी तट पर बसे हुये गाँवों में नीम, तून, सेमल, खजूर, बाँस, मजनू, इमली, अमलतास, कचनार, बहेरा, ढाक और फगवार (जंगली अंजीर) के वृक्ष पाये जाते हैं। कीकर का पेड़ शीघ्र उगता है और सब तरह की जलवायु सहन कर लेता है। यह किसान के बड़े काम का होता है। काबुली बबूल में कम पत्ते होते हैं। बेर का पेड़ भी जिले के सब भागों में मिलता है। पैवन्दी बेर बड़ा होता है। इसकी कलम लगाई जाती है। इसकी पत्ती अधिक चौड़ी होती है। फूला पेड़ को बड़ा होने में अधिक समय लगता है। इसका फूल बड़ा सुगन्धित होता है। तूत या शहतूत दो तरह (काला और सफेद) होता है। यह प्रायः सड़कों के दोनों ओर लगा रहता है। सिरीस की लकड़ी कोल्हू बनाने के काम आती है।

पशु—खेती बढ़ने से जंगली पशु बहुत थोड़े रह गये हैं। अधिकतर जंगली पशु बजवात रावी के खादर और जम्मू की सीमा के पास मिलते हैं। लोमड़ी खरगोश, भेड़िया, गीदड़ (शृगाल) जंगली सुअर बनबिलाव और नीलगाय आदि यहां के प्रधान जंगली पशु हैं। सारस, बगुला, बतख कई भागों में मिलते हैं। जंगली तीतर और हरियल भी बहुत हैं। फाख़्ता, कौआ, लावा और चमगादड़ बहुत हैं।

रावी में मछलियां कम हैं। चनाव के किनारे कुछ लोग मछली पकड़ते दिखाई देते हैं। यहाँ सांप भी कई प्रकार के मिलते हैं।

कृषि—स्यालकोट जिले की जमीन प्रायः अच्छी है। हिमालय के समीप स्थित होने से यहां वर्षा भी अच्छी हो जाती है। आवश्यकता पड़ने पर कुओं से सिंचाई हो जाती है। इसलिये पंजाब का एक छोटा जिला होने पर भी यह खेती के लिये प्रसिद्ध है। खेती की दृष्टि से पंजाब प्रान्त में इसका दसवां स्थान है। जिले की ६५ प्रतिशत खेती की ज़मीन जाटों के अधिकार में हैं। समस्त जिले की जनसंख्या में एक चौथाई जाट हैं। इनमें दो तिहाई मुसलमान एक चौथाई सिक्ख हैं। सिक्खों के गांवों में वे सेना में बहुत भरती होते हैं और लड़ने में बड़े वीर होते हैं। जिले के १४ प्रतिशत खेत राजपूतों के हाथ में हैं। इनमें ८० फी सदी मुसलमान हैं। हिन्दुओं में अधिकतर डोग्रा राजपूत हैं। यह स्यालकोट और जफरवाल तहसीलों के उत्तरी भाग में रहते हैं।

राजपूत अधिकतर नदी तट के स्थानों में बसे हुये हैं। जहाँ कुओं से सिंचाई करने की आवश्यकता नहीं होती है। चूढ़ा लोग खेतों में मजदूरी का काम करते हैं। इनमें बहुत से लोग ईसाई हो गये हैं। कुछ मजहवी सिक्ख, कुछ आर्य और कुछ मुसलमान हो गये हैं। इससे जमींदारों को सस्ते मजदूर बहुत कम मिलते हैं। चूढ़ों में कुछ लोग सेना में भरती हो गये हैं। कुछ चमड़े के व्यापार में लगे हैं। कुछ नहर की वस्तियों में चले गये हैं। इसलिये मजदूरों की कमी हो जाने के कारण यहां के बड़े बड़े जमींदार मजदूरों की कमी दूर करने के लिये मशीनों का प्रयोग करना चाहते हैं।

धान की खेती राया और पसरूर तहसील की रोही भूमि में अधिक होती है। बजवात के जिन भागों की भूमि नहरों से सींची जाती है उनमें भी धान होता है। इनमें बासबत्ती चावल बड़ा बढ़िया होता है।

मक्का की खेती के लिये बड़ी सावधानी की आवश्यकता होती है। कुछ भागों में सावन में और कुछ भागों में यह भादों में बोई जाती है। इसे खाद और सिंचाई की आवश्यकता होती है।

कपास सींचे और बिना सींचे दोनों प्रकार के खेतों में होती है। यह मार्च अथवा अप्रैल मास में बोई जाती है। सर्वोत्तम कपास डस्का और स्यालकोट नगरों के बीच वाले भाग में होती है।

चारे के लिये ज्वार (चरी) बहुत बोई जाती है। इसे वर्षा होते ही जुलाई मास में बो देते हैं। अक्सर इसके साथ मोठ, मूंग और उर्द भी वो देते हैं।

गन्ने के खेत बड़ी सावधानी से तयार किये जाते हैं। बीज के गन्ने के प्रायः डेढ़ बालिश्त लम्बे टुकड़े इस प्रकार कर लिये जाते हैं कि गांठ या आँख बीच में रहती है। यही गढ़ों में गाड़ दी जाती है। ३ महीने गढ़ों में पड़ी रहने के बाद यह बोने के लिये तयार हो जाती है। यह टुकड़े मार्च मास में गाड़े जाते हैं। बड़े नगरों के पास चूसने के लिये मोटा पौंडा बोया जाता है। कोल्हू में पेरने के लिये कुछ पतला गन्ना होता है। सर्वोत्तम गन्ना राया तहसील की दर्प भूमि में होता है। रोही और मैरा मिट्टी भी इसके लिये अनुकूल होती है।

बाजरा और मिर्च बहुत थोड़े भागों में बोते हैं। गेहूँ इस जिले के लोगों का प्रधान भोजन है। औसत से जिले की समस्त खेती के योग्य भूमि की ४० फी सदी गेहूँ के उगाने में लगी है। स्यालकोट जिले में चार प्रकार का गेहूँ होता है। निक्की कनक छोटा गेहूँ होता है। इसका दाना कड़ा और लाल होता है। यह बिना सिंचे खेतों में भी उग आता है। वडानक बड़ा गेहूँ होता है। इसे उगाने के लिये किसान को बड़ा परिश्रम करना पड़ता है। चित्ती गेहूँ सफेद होता है। यह प्रायः स्यालकोट और डस्का तहसीलों में ही होता है। गोनी या कनकू बहुत छोटा होता है। इसे लोग अधिक पसन्द नहीं करते हैं। गेहूँ सितम्बर से नवम्बर मास तक बोया जाता है। जौ को लोग कम पसन्द करते हैं। जब शीतकाल की वर्षा देर से होती है तब लोग गेहूँ के बदले अपने खेतों में जौ बो देते हैं। रोही मिट्टी वाले खेतों में धान काटने के बाद जौ बो दिया जाता है।

चना या छोला सितम्बर के अन्त में बिना सिंचे खेतों में बोया जाता है। प्रायः जिन खेतों से खरीफ की फसल कट जाती है उन्हीं में चना बोते हैं। रबी की फसल में मसूर और सरसों बो देते हैं। कुछ भागों में ककड़ी, तरबूज और गाजर, मूली, प्याज आदि तरकारी उगाते हैं।

इस जिले में सिंचाई के कई ढंग हैं। बजवात में धान के खेत कुहल से सींचे जाते हैं। इनमें कई नालों से पानी आता है। डस्का तहसील में भी कुछ कुछ इसी प्रकार सिंचाई होती है। स्यालकोट तहसील में किसान एक नदी में बांध बनाकर झालर से अपने खेतों को सींचते हैं। कुओं से सिंचाई प्रायः समस्त जिले में होती है। नदियों के पास कुओं में पास ही पानी निकल आता है। यहां ढेंकली से सिंचाई होती है। स्यालकोट तहसील में चालीस-पचास फुट की गहराई पर पानी मिलता है। यहाँ रहट से पानी ऊपर लाया जाता है।

कुछ भागों में डेग नदी की बाढ़ से सिंचाई अपने आप हो जाती है।

अपर चनाब नहर स्यालकोट तहसील में मराला

स्थान से निकलती है। इसका तहसील के नंदीपुर गाँव के पास यह नहर जिले के बाहर चली जाती है। इस नहर की राया शाखा से इसका पसरूर और राया तहसील के कुछ भागों में सिंचाई होती है। नहर से सींचे हुये खेतों में धान होता है। कुछ में गेहूँ भी होने लगा है। कहीं कहीं छम्भों से सिंचाई होती है। यह एक प्रकार के जलाशय हैं। इनमें वर्षा जल इकट्ठा होता है। कुछ में बांध बनाकर नालों का जल भी इकट्ठा कर लिया जाता है। यह छम्भ वर्षा न होने पर सूखे पड़े रहते हैं।

कला-कौशल

स्यालकोट शहर में प्रायः घरेलू धन्धा होता है। पहले यहां पश्मीना, सूसी और दरियाई का बुनाई होती थी। सूती कपड़े की छपाई और गोटे का काम विदेशी संघर्ष से धीरे धीरे कम होने लगा। हाथ से कागज बनाने का काम भी प्रायः नष्ट हो गया। इनके स्थान पर नया कारबार आरम्भ हो गया। आज कल खेल का सामान, टीन के ट्रंक दरी, और इजारबन्द आदि बनाने का काम होता है।

खेल का काम यहाँ तेजी से बढ़ा। इसमें उबेराय कम्पिनी का कारखाना सर्व प्रसिद्ध है। गंडा सिंह, और झंडा सिंह दो भाई थे। इन्होंने पांच छः कारीगरों की सहायता से क्रिकेट के बैटों का बनवाना आरम्भ किया। फिर वे बैड मिन्टन और टेनिस के रैकट. पोलोस्टिक, हाकी, स्टिक, क्रिकेट और हाकी खेलने को गेंदें, फुटबाल, गोल्फ क्लब और जिमनास्टिक का सामान बनवाने लगे। पहले चनाव के समीप उगाने वाली विलो का प्रयोग हुआ फिर यह लकड़ी काश्मीर से आने लगी। अन्त में ये इंगलैंड से यह लकड़ी आने लगी। १९०३ ई० में चौधरी गंडासिंह इंगलैंड गये वहां से वे खेल के सामान की बड़ी मशीनें और कुछ अंग्रेज कारीगर अपने साथ ले आये। गेंदों के सीने का काम लड़कों से लिया जाता है। जब वे इस काम में निपुण हो जाते हैं। तो उनका वेतन बढ़ा दिया जाता है। कुछ को काम का ठेका दे दिया जाता है। कुछ चौधरी गंडा सिंह के कारखाने में काम सीख का अपना धन्धा अलग करने लगे हैं। स्यालकोट का खेल का सामान योरुप अफ्रीका, आस्ट्रेलिया आदि संसार के सभी भागों में बिकने जाता है। दोनों भाइयों के कारखाने अलग हो गये। आज कल स्यालकोट में २० से अधिक खेल का सामान बनाने वाले कारखाने आय कर देते हैं। कुछ छोटे छोटे कारखाने हैं और व्यापारी हैं। खेल का सामान बनाने के लिये प्रायः सभी कच्चा माल (लकड़ी) चमड़ा, रबर, गट, रबर, डोरा गोंद आदि इंगलैंड से आता है। स्थानीय शहतूत शीशम और चमड़े का भी प्रयोग होता है। इस कारबार में ५००० मनुष्य से अधिक लगे हुये हैं।

मिट्टी के बर्तन—स्यालकोट शहर कड़ी चिकनी पीली मिट्टी की मोटी तह के ऊपर बसा है। इस मिट्टी से चिकने बर्तन बहुत अच्छे बनते हैं। आज कल यहाँ साधारण कुम्हारों के अतिरिक्त ५० नये ढंग के ऐसे कारखाने हैं जो मिट्टी के बढ़िया बर्तन तयार करते हैं। वे घड़े, फूलदान, गमले, खपरैल, जाली, चाय पीने के बर्तन, और मर्तबान बनाते हैं। यह कारबार काश्मीरी मुसलमानों के हाथ में है। पसरूर में भी कुम्हारों के पचास घर हैं वे घड़ा हांडी आदि मिट्टी के बर्तन बनाते हैं। रंगने की चिकनी मिट्टी सतरह से आती है।

हाथ का बना हुआ कागज़—हाथ से कागज़ बनाने का काम १२००० ई० से स्यालकोट में बहुत पुराने समय से होता आया है। यह कागज काफी अच्छा होता है। यह वहीं बनाने और कुरान लिखने के काम आता है। यह रंगपुरा नेकपुरा और हिरनपुरा मुहल्लों में होता है। एक नाले में धोने के लिये आवश्यक पानी मिल जाता है। मुगल और और सिक्ख शासनकाल में इस कारबार को बड़ा प्रोत्साहन मिला। कागज बनाने का काम शीतकाल में होता है। गरमी में धूल भरी आंधियों के चलने से कागज बिगड़ जाता है।

लोहे का सामान स्यालकोट के पास कोटली लोहारन लोहे के बढ़िया कलमदान शील्ड, आदि बनाते हैं। इन पर वे सुनहले तार को चिपका कर फूल पत्ती बना लेते हैं। कोटली लोहारन वास्तव में दो गांव हैं। यह स्यालकोट शहर से ५ मील उत्तर

पश्चिम की ओर है। यहां ढाल, हथियार, चाकू कैंची आदि आवश्यकता की चीजें भी यहां बनाई जाती हैं। स्यालकोट में लगभग ५०० लोहे के कारीगर हैं। पसरूर के इस्लामाबाद मुहल्लों में बढ़िया चम्मच बनाये जाते हैं।

स्यालकोट के बढ़ई लकड़ी से पावा, पीढ़ा, गाड़ी, तांगा आदि भी बनाते हैं। बैग पाइप सेना के लिये बहुत मंगाये जाते हैं। मेज़, कुर्सी भी बनती हैं।

क़िला सोभासिंह का पश्मीना प्रसिद्ध है। यहां बकरी की पश्म (मुलायम बाल) से चादरें बुनी जाती हैं। पहले स्यालकोट में रेशम की सूसी और दरियाई भी बनती थी। स्त्रियां पैजामों के इजार बन्द और ऊनी स्वेटर बनाती हैं। खद्दर दरी, दो तही और खेस बुनने का काम बहुत होता है। पसरूर की सवा सौ दुकानें सूती डोरे से शालों के किनारे बनाती हैं। पसरूर में नेवाड़ और फूलकारी का काम बहुत कम हो गया है। पसरूर में खद्दर को रंग कर लिहाफ जाजम, आदि तयार किये जाते हैं।

कांसे के बर्तन—एक मन तांबे में ११¼ सेर कली मिला कर कांसा तयार किया जाता है। तांबे और कली के छोटे छोटे टुकड़े कर लिये जाते हैं। फिर वे मिला कर एक गोजी में मिट्टी की भट्टी के ऊपर गला लिये जाते हैं। पिघली हुई धातु को सांचों में भर कर ठंडा कर लेते हैं। इसके बाद इन्हें गरम करके और हथौड़े से पीट कर अभीष्ट आकार का बना लेते हैं। डस्का और किला सोभा-सिंह में इनके बर्तन बनाये जाते हैं। डसका में ठेठरों की ३० भट्टियां हैं। एक में ३ मन धातु से सामान बनाने के लिये ८ मनुष्यों की आवश्यकता पड़ती है। डस्का में कटोरा, थाल और थाली बनाई जाती हैं। यहां १३ कसेरा हैं जो इन बर्तनों को बेचते हैं। क़िला सोभा सिंह की भट्टियां छोटी हैं। यहां छोटे बर्तन तयार किये जाते हैं।

पीतल के बर्तन बनाने में अधिक परिश्रम करना पड़ता है। जो बर्तन बनाना होता है, उसका पहले चिकनी मिट्टी से ढांचा बनाते हैं। इसके ऊपर गोबर या सनई लगा देते हैं। इसके ऊपर मोम की एक तह रहती है। इस तह के ऊपर चार प्रकार की भिन्न भिन्न कड़ी चिकनी मिट्टियों की चार तहें होती हैं। इस ढाँचे को लकड़ी के कोयले के ऊपर गरम करते हैं। गरमी पाकर मोम पिघलने लगता है। इसको बाहर निकालने के लिये तली में एक छोटा छेद रहता है। फिर एक बर्तन में पीतल गलाते हैं। पीतल में ६ सेर तांबा, ४ सेर जस्ता और ४¾ छटांक सुहागा मिला रहता है। ढांचे से मोम निकल जाने पर तली का छेद सावधानी से बन्द कर दिया जाता है। फिर ऊपर वाले छेद में पिघली हुई पीतल गिराते हैं। ठंडा होने पर मिट्टी का ढाँचा तोड़ दिया जाता है भीतर से खुर-दरा मैला बर्तन निकल आता है। इसे मशीन से खराद लेते हैं। भरत (कच्ची पीतल) तयार करने के लिये १२ सेर तांबे में १० सेर जस्ता, ११ छटांक टीन और १६ छटांक सुहागा मिलाया जाता है। कच्ची पीतल को मोटे बालों से रगड़ कर साफ करते हैं। पीतल का काम कोट डस्का में होता है। यहां लगभग २० दुकानें हैं। ९ दुकानों में पीतल की चद्दरों से काम लिया जाता है। शेष में ढलाई होती है। किला सोमसिंह जफरवाल और नरोवाल में यह काम बन्द सा हो गया है।

रेशम के कीड़े पालने का काम पहले बजवात में आरम्भ हुआ आजकल यह काम जफरवाल तहसील के चरवा और धमथल गांवों में होता है। इन गांवों में डिस्ट्रिक्ट बोर्ड ३॥ एकड़ भूमि में शहतूत के पेड़ लगवा दिये हैं। इनके पत्ते रेशम के कीड़े पालने वाले स्वतन्त्रता पूर्वक ले जा सकते हैं। सड़कों पर लगे हुये शहतूतों की पत्तियां तोड़ने की भी आज्ञा है।

लायलपुर के सरकारी कृषि विभाग की ओर से रेशम के कीड़ों के अंडे बांट दिये जाते हैं। अप्रैल में कीड़ों से रेशम मिलने लगता है। जून में यह बेच दिया जाता है और गुरुदासपुर पहुँचा दिया जाता है। लगभग ४० घरों में कच्चा रेशम तयार किया जाता है। इससे प्रत्येक परिवार को प्रायः १०० रु० वार्षिक आय हो जाती है। इनमें कुछ जुलाहे, कुछ डोम हैं। ९ प्राइमरी स्कूलों में भी रेशम के कीड़े पालने की कला सिखाई जाती है।

स्याल कोट के चपरार गांव में जुलाहे खद्दर और गाढ़ा बुनते हैं।

चमड़ा कमाने के स्यालकोट में दो कारखाने हैं। एक पिंडी अराइयान में है। दूसरा टिब्बा काकरान में है। इनमें ६० गाय या भैंस के चमड़े और ४०० बकरियों की खालें प्रतिदिन तैयार की जाती हैं।

व्यापार

स्यालकोट ज़िले से गेहूँ और जौ बड़ी मात्रा में रावल पिंडी, कलकत्ता और कराची को भेजा जाता है। अधिकतर गेहूँ जफरवाल और पसरूर तहसीलों से जाता है। लाल गेहूँ बाहर भेजा जाता है। सफेद गेहूँ स्यालकोट शहर में ही खर्च हो जाता है। चावल नहर से सींचे हुये प्रदेशों से शेखूपुरा को बाहर जाता है। गुड़ गुजरात, झेलम, रावलपिंडी, शाहपुर और लियांवली जिलों को जाता है। यह नरोवाल,के समीप वर्पदर्प मुहाल और जफावाल से जाता है। स्यालकोट शहर के पास आलू भी बहुत उगाये जाते हैं। यहां यह रावलपिंडी, पेशावर, क्वेटा, बम्बई और सूरत को भेज दिये जाते हैं। सूती कपड़ा और दरी चपरार और स्यालकोट से जम्मू राज्य, रावलपिंडी और पेशावर को जाती हैं। स्यालकोट का कागज़ पंजाब के कई शहरों को जाता है। स्यालकोट चमड़े के व्यापार का भी एक बहुत बड़ा केन्द्र है। यहां से बम्बई, कराची और कलकत्ता को चमड़ा भेजा जाता है। चमड़ा कमाने का काम शहर और कई गांवों में होता है। कमाया हुआ चमड़ा अधिकतर शहर में ही खेल का सामान आदि बनाने में खर्च हो जाता है। कुछ सीमा प्रान्त को भेज दिया जाता है। पीतल के बर्तन डस्का और स्यालकोट से जम्मू और दक्षिणी पंजाब को जाते हैं। स्यालकोट की बनी हुई पीतल की पिचकारियां और सायकिल पम्प भारतवर्ष के सभी भागों में पहुँचते हैं। स्यालकोट शहर और कोटली लोहारान से तलवार, ट्रंक, बाक्स, डाक्टरी के ओजार, अस्तुरे, चाकू आदि दूर दूर जाते हैं। दस पन्द्रह लाख रुपये का खेल का सामान यहाँ से संसार के सभी भागों को जाता है। पीतल के बैग पाइप सेना विभाग मोल ले लेता है। लकड़ी के पाये, और कुर्सियां रावलपिंडी और नहर की बस्तियों में पहुँचती हैं। पंख, इजारबन्द, चारपाई की अदवाइन, ऊनी स्वेटर, पंजाब के भिन्न-भिन्न स्थानों और सीमा प्रान्त को पहुँचते हैं।

चंगा मंगा से शहतूत की लकड़ी विलो और दूसरी पहाड़ी लकड़ी काश्मीर से यहां खेल का सामान बनाने के लिये आती है। कोयला बंगाल और डंडोत से आता है। सफेद चमड़ा, क्रोम और दूसरा कमाया हुआ चमड़ा कानपुर और आगरे से आता है। टोपी और छाता बम्बई से देहाती साबुन मेरठ से आता है। रेशमी और सूती, मोजे लुधियाना से आते हैं। रुई लायलपुर, चुनियान और कसूर से आती है। फीरोज़पुर, शाहपुर और गुजरान वाला से चना और गुरदासपुर से दूसरा अनाज आता है। घी जम्मू और लालामूसा से आता है। शक्कर और स्पिरिट शाहजहाँ पुर से आती है। देशी चीनी संयुक्त प्रान्त और पेशावर से आती है। पहाड़ो से बीज के आलू आते हैं। चाय बन्दरगाहों से और नील मुल्तान से आता है। फल, अखरोट और ऊनी माल काश्मीर और पेशावर से आता है। तम्बाकू सीमा प्रान्त अटक, गुज़रात और नहर की बस्तियों से आती है। गांजा, भांग आदि नशीले पदार्थ जम्मू से आते हैं।

खेल के लिए कच्चा माल इंगलैंड से रेशमी और सूती कपड़ा (लड़ाई के पूर्व) जापान से बेंत (खेल के लिये) सुमात्रा से और मिट्टी का तेल बरमा और अमरीका से आता है।

आने जाने के साधन स्यालकोट ज़िले में नार्थ वेस्टर्न रेलवे की बड़ी लाइन वजीराबाद से स्याल कोट को आती है। एक रेलवे लाइन स्यालकोट से जम्मू तावी को चली गई है। एक रेल-शाखा स्यालकोट से नरोवाल को जाती है। स्यालकोट से सुचेतगढ़ (९ मील) तक रेलवे लाइन नार्थ वेस्टर्न रेलवे (सरकारी) कम्पिनी के अधिकार में है। सुचेतगढ़ से जम्मू तावी तक जो रेलवे जाती है वह १६ मील लम्बीं लाइन काश्मीर दरबार के अधिकार में है।

स्यालकोट—नरोवल रेलवे एक प्राइवेट कम्पनी के हाथ में है। किली कनिक्सन एण्ड को इसके एजण्ट हैं।
यह लाइन ३८ मील लम्बी है। नरोवल से शाहदरा ४८ मील आगे तक लाइन बनाने की योजना तयार होगई।

पक्की सड़कें स्यालकोट शहर से आरम्भ होकर डस्का, पसरूर और जफरवाल आदि स्थानों को गई हैं। स्यालकोट से जो सड़क डस्का को जाती है वह गुजरानवाला को चली गई है। एक सड़क अमीनाबाद (लाहौर) को जाती है। एक सड़क अमृतसर को जाती है। यह पसरूर और राया होकर जाती है। एक सड़क फिलोरा और धमथल होती हुई गुरदासपुर को जाती है। इसी की एक शाखा बटाला को गई है। उत्तर की ओर स्यालकोट से ३ सड़कें चनाव नदी के घाटों को जाती हैं। अपर चनाव नहर के बायें किनारे पर भी मोटरों के लिये अच्छी सड़क है। दाहिने किनारे पर बैलगाड़ियों के लिये सड़क है। इस जिले में सड़कों की दशा अच्छी नहीं है। बाढ़ में वे और भी बिगड़ जाती हैं।

चनाव नदी में १०० से २५० मन तक बोझ लादने वाली नावें साल भर चल सकती हैं। मराला के पास से नहर निकल जाने से बड़ी बड़ी नावें यहां शीतकाल में ही चलती हैं। पुल, -खोजा चक, बेली, गंमवाल, मारी. कुइंवल, भखरियाली और सोधरा घाटों पर चार से अधिक नावें रहती हैं।

रावी नदी को पार करने के लिये केवल पांच स्थानों पर नावों के घाट हैं। यह सब राया तहसील में हैं। मिरोवाल के ऊपर नावें शीतकाल में नहीं चल सकती हैं।

जन संख्या

स्यालकोट जिले की जनसंख्या प्रायः १० लाख है।

तहसीलों के अनुसार जनसंख्या का विभाग इस प्रकार है:—स्यालकोट—२,९०,००, पसरूर १,७५,००० जफरवाल १,६०,०००, राया २,००,००० डस्का १,७५,०००।

क्षेत्रफल की दृष्टि से स्यालकोट पंजाब के सब से छोटे जिलों में से एक है। पर जनसंख्या में पंजाब के समस्त जिलों में इसका दूसरा स्थान है। प्रति वर्ग मील में जनसंख्या की सघनता प्रायः ५०० है। स्यालकोट शहर को छोड़ कर कारबार बहुत कम है। देहात की समस्त जनसंख्या खेती पर निर्भर है। कुछ लोग (डोगरा सिक्ख) सलेहरिया और राजपूत सेना में भरती हो जाते हैं। कुछ लोग नहर की बस्तियों में खेती करने के लिये चले गये हैं और वहीं बस गये हैं। कुछ लोग मजदूरी की खोज में बाहर चले जाते हैं। इस जिले में केवल स्याल कोट शहर एक बड़ा नगर है। इसकी जनसंख्या छावनी को मिलाकर ६५००० है। इस में ५०,००० शहर में रहते हैं। पसरूर पुराना कस्बा है इसमें ८००० मनुष्य रहते हैं। नरोवल तक रेल के खुल जाने से पसरूर का महत्व बढ़ जायगा। नरोवल में केवल ५००० मनुष्य रहते हैं पर यह ईख के प्रदेश के किनारे पर स्थित है। रेलवे का भी अन्तिम स्टेशन है। इस से भविष्य में इस के बढ़ने की आशा है। स्यालकोट जिले में २५१९ जागीरें और २२१६ गांव हैं। केवल नदी के कछार में बसे हुये घर छप्पर से छाये हुये हैं। शेष भागों में प्रायः पटी हुई छत के कच्चे पर मजबूत घर मिलते हैं। घरों के बीच की गलियां तंग हैं। गलियों में सफाई बहुत कम होती है। घरों के पास ही पशुओं को पानी पिलाने और नहलाने के लिये तालाब रहता है। इसके गन्दे पानी से कुछ लोग बर्तन भी धोते हैं। इस तालाब के पास होने से मच्छर बढ़ते हैं और मलेरिया ज्वर फैलता है। भंगी, चमार आदि नीच जातियां गांव के बाहर बसती हैं।

जनसंख्या में स्त्रियों की संख्या पुरुषों से कम है। प्रायः प्रति १००० पुरुषों के अनुपात से जिले में केवल ८०७ स्त्रियां रहती हैं। दोनों की उत्पत्ति में अधिक अन्तर नहीं है। पर पैदा होने पर शायद माता पिता की असावधानी से लड़कियां अधिक मर जाती हैं। बड़ी होने पर स्त्रियों को घर के काम से अधिकतर भीतर ही रहना पड़ता है। अस्वास्थ्य प्रद वातावरण में लगातार रहने से स्त्रियां अधिक उम्र तक जीवित नहीं रह पाती हैं।

इस जिले के ९८ प्रतिशत मनुष्य पंजाबी बोलते हैं। जफरवाल और स्यालकोट तहसीलों के उत्तरी भाग में रहने वाले हिन्दू डोग्री भाषा बोलते हैं। शहरों में रहने वाले शिक्षित लोग हिन्दुस्तानी बोलते हैं।

जाट,अराइन,राजपूत, तरखान बढ़ई मेघ,कुम्हार, काश्मीरी, ब्राह्मण, जुलाहा चूढ़ा, झीवर और फकीर इस जिले के प्रधान निवासी हैं। जाटों की यहां कई उपजातियां हैं। चीमा और चाठा के विषय में कहा जाता है कि खान पान में यह दोनों अलग रहते हैं पर लड़ाई में एक हो जाते हैं। चीमा और चाठा, खान पान नूं लाखों राख, लड़ाई नूं इकट्ठा कहलान, जाटों की उत्पत्ति राजा विक्रमादित्य से बताई जाती है। मल्ही जाट अधिकतर राजा तहसील में पाए जाते हैं। मल्ही या मोहिल जाट अपने को रामचन्द्र जी के वंशज (सूर्य वंशी) बतलाते हैं। यह लोग मुल्तान की रक्षा के लिये सिकन्दर महान से लड़े थे। मल्हिस्थान से बिगड़ कर शायद मुल्तान शब्द बना है। मल्ही लोग एक सिद्ध या पीर को मानते हैं। वह पृथिवी राज का प्रपौत्र था। लक्ष्मण पति बालकोशी उसका नाम था। वह बचपन से ही योगी हो गया था। पंजाब के लोग उसे बहुत मानते हैं। स्थान स्थान पर उसकी पुण्यस्मृति में मेले लगते हैं। यह अधिक तर हिन्दू हैं जो मुसलमान हो गये हैं वे भी बहुत से हिन्दू संस्कारों को मानते हैं।

गोरय जाट—उत्तरी पूर्वी भाग में रहते हैं। वे चन्द्र वंशी राजपूतों की सन्तान हैं। वे मुंडा पीर को मानते हैं। सन्धू जाट पसरूर तहसील में रहते हैं। वे अपने को सूर्यवंशी राजपूतों की सन्तान बतलाते हैं। इनका विश्वास है कि वे गजनी से यहां आये। यह गजनी बीकानेर राज्य का है अथवा अफगानिस्तान का इसका निर्णय नहीं किया जा सका। यह काले पीर की पूजा करते हैं। स्याल कोट जिले में वज्जू, मन्हास, सलेहरिया, भट्टी, और खोखर राजपूतों की प्रधान जातियां हैं। वज्जू वंश के लोग बजवात के पूर्वी भाग में रहते हैं। इसी से इस भाग का यह नाम पड़ गया। यह लोग डोगरा राजपूत हैं। इनका कद कुछ छोटा होता है। इनके पड़ोस में जलवायु बड़ी आर्द्र है। इससे यह ज्वर से पीड़ित रहा करते हैं। यह बज सिद्ध को मानते हैं। चक खोजा में उसकी समाधि बनी हुई है। कहते हैं सिद्ध चनाब नदी के किनारे इसी स्थान पर पूजा किया करता था। वज्जू लोग सब हिन्दू होते हैं वे इस समाधि पर तुलसी की माला चढ़ाते हैं। वे जम्मू के ठाकुरों की लड़कियों से व्याह करते हैं। बजवात के कुछ गांवों में जामवाल राजपूत बसे हुये हैं। इसके पश्चिमी भाग में मन्हा राजपूत रहते हैं। यह दोनों सूर्य वंशी हैं। यह आरम्भ में अयोध्या से यहां आये। महाभारत के युद्ध में वे कौरवों की ओर से लड़े थे। वे प्रायः सब के सब हिन्दू हैं। केवल कुछ लोग मुसलमान हो गये हैं।

सलेहरिया वंश के लोग जफरवाल तहसील के उत्तरी-पूर्वी भाग में पाये जाते हैं। इनमें अधिकतर मुसलमान हैं। कुछ हिन्दू हैं। वे चन्द्रवंशी हैं।

भट्टी राजपूत—प्रायः सभी मुसलमान हो गये हैं। वे पंजाब के सभी भागों में और इस जिले की सभी तहसीलों में पाये जाते हैं।

लोहार, तरखान और चूढ़ों में प्रायः खोखर गोत्र का नाम होता है। अवान लोग जफरवाल से गुजरात जिला तक फैले हुये हैं। वे सब मुसलमान किसान हैं पर वे ब्राह्मणों से पूछ कर काम करते हैं।

अराइन जिले के सब भागों में मिलते हैं। वे अच्छी खेती करते हैं और तरकारी उगाते हैं। वे सब मुसलमान हैं।

बागबान, डोगर, घक्कर, गूजर, कम्बोह, कुरेशी, लबना, मुगल, पठान, सैनी, और सैय्यद पंजाब की दूसरी उपजातियां हैं जो इस जिले में पाई जाती हैं। गूजर लोग पहले पशु पालते थे। वे जाटों की तरह खेती करते हैं। कम्बो और अराइन एक ही जाति के हैं।

कुरेशी अपने आप को अरबी और हजरत मुहम्मद के वंशज बताते हैं। इनमें कुछ हकीमी का काम करते हैं। पर उनसे अच्छी खेती नहीं होती है।

लबाना लोग राया, पसरूर और स्यालकोट तह-

सीलों में रहते हैं। वे सिक्ख हैं और कुछ सेना में भरती होते हैं। शेष खेती का काम करते हैं।

नदी तट के गांवों में महतम सिक्ख होते हैं। वे खेती करते हैं। उन्हें शिकार का बड़ा शौक है। वे जंगली सुअर और खरगोश का शिकार करते हैं। मुगल, पठान और सैय्यदों की दशा साधारण है।

ब्राह्मण—अधिकतर ब्राह्मण राया तहसील में रहते हैं। थोड़ी संख्या में वे जिले के दूसरे भागों में भी पाये जाते हैं। वे खेती करते हैं। कुछ सरकारी नौकरी करते हैं। सरकरी नौकरी में उन्होंने बड़ी ख्याति प्राप्ति की है।

इस जिले में हिन्दू मुसलमानों के रहन-सहन में बहुत कम अन्तर है। पहनावे को देखकर यह बतलाना कठिन हो जाता है कि अमुक मनुष्य हिन्दू हैं या मुसलमान। इसका मुख्य कारण यह है कि कुछ को छोड़कर शेष प्राय: सभी वर्तमान मुसलमान आरम्भ में इसी जिले के रहने वाले हिन्दू थे। नाम को छोड़कर उनका रहन-सहन बहुत कुछ हिन्दुओं के समान है।

इस जिले के दो तिहाई निवासी मुसलमान, एक चौथाई हिन्दू ९ फीसदी सिक्ख और ४ फीसदी ईसाई हैं।

इस जिले में ६,१५,००० मुसलमान हैं। मुसलमानों में अधिकतर सुन्नी हैं। केवल कुछ (१२) हजार शिया हैं। कुछ वहबी और अहमदिया हैं। नरोवाल कस्बे में अधिकतर शिया हैं। थोड़ी संख्या में वे जिले भर में फैले हुये हैं। असली पुराने सैय्यद पठान और मुगल मुसलमान इस्लाम धर्म को मानने में बड़े कट्टर हैं। इनकी संख्या बहुत कम है। जो जाट, गूजर, राजपूत आदि हिन्दू जातियों से मुसलमान बने हैं उनकी संख्या कहीं अधिक है। मुगलराज्य के आरम्भ काल से हिन्दुओं को मुसलमान बनाने का कार्य आरम्भ हुआ। अब से २०० वर्ष पहले भी इस जिले में मुसलमानों की संख्या बहुत थोड़ी थी। फिर कहीं पूरे के पूरे गांव और कहीं एक दो मनुष्य मुसलमान बना लिये गये। पर वे अपनी जाति के दूसरे भाइयों की तरह ही रहते रहे। इस समय बहुत से मुसलमान नाम मात्र को इस्लाम धर्म मानते हैं। वे खतना कराते हैं और कलमा पढ़ लेते हैं पर वे स्थानीय हिन्दू देवताओं को मानते रहते हैं और ब्राह्मण पुरोहित से अपने सामाजिक संस्कार कराते हैं।

हिन्दुओं की संख्या लगभग ढाई लाख है। ब्राह्मण, खत्री, आरोड़ा आदि कुछ हिन्दू नियम पूर्वक ठाकुर द्वारा में पूजा करने जाते हैं। सिक्ख लोग गुरुद्वारा में ग्रन्थ साहब का पाठ सुनने जाते हैं। वहीं कड़ाहा प्रसाद बटता है। इस जिले में २ हजार से कुछ ऊपर जैन हैं। वे व्यापार करते हैं और अधिकतर स्यालकोट और पसरूर नगरों में रहते हैं। आर्य समाज की स्थापना यहां अठारहवीं शताब्दी के अन्त में हुई। उन्होंने चन्दा करके किले के पास आर्य समाज मन्दिर बनवाया। उन्नत विचारों के हिन्दू आर्य समाज के सदस्य हो गये। इनकी संख्या अधिक नहीं है। पर यह दलितोद्धार आदि हिन्दू समाज को उठाने के कार्य में लगे हुये हैं। संस्कृत पढ़ाने का भी प्रयत्न किया गया है। लड़कियों की शिक्षा के लिये कन्या पाठशाला खुला है। इसमें लड़कियों को गृह कार्य भी सिखाया जाता है। मेघ और दूसरे लोगों को शुद्ध करने का काम आर्य समाज की ओर से होता है।

अंजुमने इस्लामिया १९१८ ई० में स्थापित हुई। यह इस्लाम धर्म को फैलाने और मुसलमान को व्यवहारिक शिक्षा देने का प्रयत्न करती है। इसके अतिरिक्त मुसलमानों की कुछ और संस्थायें हैं।

चर्च आफ इंगलैंड, स्काच, अमेरिकन प्रेसबीटेरियन मिशन और रोमन केथलिक चर्च की ओर से इस जिले में ईसाई बनाने का प्रयत्न हो रहा है। इनकी संख्या जिले में ५०,००० है। यह संख्या लगातार बढ़ती ही जा रही है। इनमें अधिकांश चूढ़ा हैं।

मिस्सी रोटी, गेहूँ की चपाती, दाल, भात यहाँ के लोगों का प्रधान भोजन है। भोजन तयार न होने पर किसान खेत में काम करते समय अथवा यात्रा करते समय शरबत में सत्तू मिलाकर खाता है। कुछ लोग मक्का की रोटी दाल या साग के साथ खाते हैं।

जाटों में यह कहावत प्रसिद्ध है।

फागन कहन्दा चेतर नूल की करिया भाई ।
मैं लाया भुनभुन, तुन वनने ताईं ।

किसान और देहाती लोगों का पहनावा बड़ा सीधा सादा है। वे कुरता, तहमत, लंगोटा, और साफा या पगड़ी पहनते हैं। कन्धे पर चादर डाल ली जाती है। शीतकाल में चद्दर की जगह खेस दोहर या चौतही ओढ़ ली जाती है ।

नगरों में सर्व साधारण और गांवों के जमींदार आदि धनी लोग पाजामा पहनते हैं। पढ़े लिखे लोग प्रायः अंग्रेजी पोशाक पहनते हैं। स्त्रियों का पाजामा रंगीन होता है। सिर पर वे चद्दर डाल लेती हैं। यह कन्धों तक आती है। मेला या उत्सव के समय सभी लोग बढ़िया कपड़ा पहनते हैं।

राजपूत सोने या चांदी की छाप पहनते हैं। बच्चों को कड़ा, हसुली आदि आभूषणों से लाद दिया जाता है। अधिक धनी लोग सोने का कंठा, अंगूठी, बाली आदि पहनते हैं। स्त्रियां बहुत से आभूषण पहनती हैं।

संक्षिप्त इतिहास

वर्तमान स्यालकोट नगर प्राचीन वैदिक काल में साकल कहलाता था। वृहदारण्यक उपनिषद के समय में यहां मद्र लोगों की राजधानी थी। पूरा द्वाव साकल द्वीप नाम से प्रसिद्ध था। यह चन्द्रभागा (चनाव) और इरावती (रावी) के बीच में स्थित था। साकल में ही आगे चल कर मिलिन्द (मेनाण्डर) नामी यूनानी राजा की राजधानी हुई। पांचवीं शताब्दी के अन्त में जब हूण लोगों का आक्रमण हुआ तब हूण-राजा तोरमान और उसके बेटे मिहिराकुल ने साकल में अपनी राजधानी बनाई ।

अति प्राचीन समय में समस्त देश सघन वन से ढका था। यहां कुछ पशु पालने वाले लोग रहते थे। यह लोग यहर या यीर कहलाते थे। यह लोग नदियों के किनारे झोपड़ों में रहते थे। यह लोग बड़े शक्तिशाली थे। सिकन्दर महान के आक्रमण करने पर राजपूताना उज्जैन और इन्दौर से कुछ स्वयंसेवक साकल द्वीपियों की सहायता के लिये आ गये। आगे चलकर बाहर से आने वाले स्वयंसेवक यहां के लोगों से हिल मिल गये इन्होंने यहां खेती करना आरम्भ कर दिया। सिंचाई के लिये इन्होंने कुएँ खोदे। ५ लाख योद्धा में ३॥ लाख योद्धा इतने परिश्रम से खेती करने में लग गये कि इनके आने के ३५० वर्ष बाद लाहौर से मुल्तान तक और कसूर से स्यालकोट तक सारा देश जंगल काट कर साफ कर लिया गया। इस कार्य में यहां के मूल निवासी यीर लोगों ने भी सहायता की। इनको मून और पचाद, भूलार, मान और हेर नामों से भी पुकारा जाता था। विक्रमादित्य के समय में राजपूताना से आये हुये शुन दल वंशी लोग अधिक शक्तिशाली थे। पर वे यहां के रहने वाले गत या युत (जाट) लोगों के साथ व्याह नहीं करना चाहते थे। नैना कोट के समीप और जम्मू के पास वाली पहाड़ियों में मून लोग रहते हैं। हून्दल राजपूताना से यहां आये।

बाजवास लोग मुल्तान की ओर से आये। चुमन मध्यभारत में मकियाला से आये। सिन्धु लोग अवध से और सलेहरिया राजपूत पहाड़ियों से आये। जिले की ८०० जागीरें इन्हीं के हाथ में हैं। अवान लोग गजनी से आये। बाजू और मीना भी राजपूतों के वंशज हैं।

स्यालकोट या सल को और पसरूर इस जिले के प्राचीन स्थान हैं। पसरूर को परसरूर भी कहते हैं। पसरूर के चारों ओर ये गांव हैं जहां जाट लोगों की प्रधानता है। कहते हैं खोलू जाटों का पूर्वज था। उसके ६ बेटे थे। उन्होंने भागोवाल, रूरकी, खानो वाली, चोविन्दा, नारोवाल और पसरूर नगरों को बसाया। पसरूर को बसाने वाला मनका था। कहते हैं एक बार हुमायूँ एक फकीर के भेष में सैयद जलाल की खानगाह का दर्शन करने आया। उसे मनका ने १ रु० भेंट दिया। यह भेंट तो फकीर ने लौटा दी। पर मन में वह मनका से प्रसन्न हुआ। १२ वर्ष बाद उसने मनका को बुला कर पसरूर का हाकिम बनाया। मनका ने पसरूर नगर की नींव डाली और यहां सभी जातियों के व्यापारी बसाये। मनका के मरने पर उसका बेटा छोटा था। अतः उसके भाई नारू के बेटे फतेहचन्द ने इसका

प्रबन्ध किया। वह दिल्ली दरबार में भी गया था। वहां सम्राट अकबर ने उसका सम्मान किया।

स्यालकोट का इतिहास बहुत पुराना है। स्यालकोट को पाण्डु के राजा सल या साल ने बसाया था। इसीलिये यह सल्कोट कहलाने लगा। यह राजवंश अब से ५००० वर्ष पहले राज्य करता था। इसने १५०० वर्ष तक राज्य किया। एक बार यहां ऐसी बाढ़ आई कि समस्त देश १००० वर्ष तक, यह प्रदेश बाढ़ में डूबा रहा और निर्जन हो गया। फिर यहां काश्मीर के राजा सोमदत्त का राज्य हुआ। १०० वर्ष तक यहां काश्मीर का राज्य रहा। इसी समय राजा विक्रमादित्य उज्जैन में राज्य करता था। राजा सलवन या सालिवाहन ने कोट या किला बनवाया और स्यालकोट का राज्य स्थापित किया। एक कथा के अनुसार एक खत्रानी स्त्री ऐक नदी में स्नान कर रही थी। वासुकीनाग से उसके गर्भ रह गया। सलवान नाम का उसके पुत्र हुआ। वासुकी नाग की सहायता से सलवान राजा बनाया गया। यह भी कहा जाता है कि राजा विक्रमादित्य स्यालकोट की ओर यहां सलवान और विक्रमादित्य में युद्ध हुआ। सालवन की जीत हुई उसने नया सम्वत् (शाका) चलाया। सम्वत् १९४६ और १८०९ शाके एक ही वर्ष के द्योतक हैं। सालिवाहन के दो बेटे थे। पूरन भक्त योगी हो गया। इससे राजा इतना प्रसन्न हुआ कि उसने उसे कुएँ में डलवा दिया। जिस कुएँ में वह डाला गया वह पूरन कला के नाम से प्रसिद्ध है। स्याल के पास इस कुएँ के पास प्रति मास एक मेला लगता है। लोगों का विश्वास है कि इस कुएँ का पानी पीने से रोगी अच्छे हो जाते हैं।

सालिवाहन के मरने पर उसका दूसरा बेटा, राजा रसालु गद्दी पर बैठा। अटक के राजा हुदी और स्यालकोट के राजा हूदी के बीच में युद्ध छिड़ गया। पहले दोनों राजाओं में मित्रता थी। रसालु ने हुदी राजा को अपनी कन्या व्याहने का वचन दिया था। इसमें देरी होने से हुदी राजा ने एक बड़ी सेना लेकर स्यालकोट को घेर लिया। स्यालकोट का किला वह ६ महीने तक न ले का। अन्त में उसने पड़ोस के देश को लूटना आरम्भ कर दिया। इसी बीच में रसालु की कन्या छिप कर राजा हूदी के पास पहुँच गई। इससे दोनों राजाओं में फिर मेल हो गया। रसालु के मरने पर हूदी राजा ने रसालु को गोद लिये हुये बेटे को वह सब प्रदेश लौटा दिया जिसे उसने जीत लिया था। पर कहते हैं रसालु के मरने के बाद ३०० वर्ष तक इस देश पर पूरन भक्त का श्राप पड़ा। अकाल और गृह कलह से समूचा देश नष्ट हो गया। ७९९ ई० में यूसुफ जई लोगों की सहायता से राजा निरौत ने स्याल कोट शहर और किला जीत लिया। इसके बाद बहुत समय तक स्यालकोट जम्मू राज्य का अंग बना रहा।

११८४ ई० में शहाबुद्दीन मुहम्मद गोरी ने पंजाब पर चढ़ाई की। यहाँ गजनी वंश का राज्य था। पहले वह लाहोर न ले सका पर उसने समीप वर्ती प्रदेश को लूटना आरम्भ किया। फिर वह स्याल कोट पर चढ़ आया। उसने किले की मरम्मत की और वहाँ एक सेना छोड़ दी। गोरी के गजनी लौट जाने पर लाहौर के सुल्तान मलिक खुसरू ने धक्करों को मिला कर स्यालकोट का किला जीत लिया।

१३९९ ई० में दिल्ली से लौटते समय तैमूर ने जम्मू के राजा को मुसलमान होने के लिये बाध्य किया। सम्भवतः तैमूर स्यालकोट के मार्ग से गया होगा।

१५२० ई० में स्यालकोट होकर बाबर ने दिल्ली पर चढ़ाई की। स्यालकोट के लोगों ने आत्म समर्पण कर दिया। इसलिये यहाँ क़तल आम नहीं हुआ। १५२४ ई० में खुसरू गुकलताश स्यालकोट का सूबेदार नियुक्त हुआ। बाबर का अन्तिम आक्रमण १५२५ ई० में सिन्ध नदी की ओर से आरम्भ हुआ। जोगी की बालनाथ पहाड़ी के नीचे से गुजर कर बाबर ने झेलम नदी को पैदल पार किया उसने सैयद तुफान और लरीन को यथा शीघ्र लाहोर पहुँचने के लिये आदेश दिया। और सेना के लिये सन्देश कहलवाया कि वह लाहोर में युद्ध न करे वरन् तेजी के साथ आगे बढ़कर उसकी दूसरी सेना से (जो उसके साथ थी) स्यालकोट या पसरूर में मिल जावे। पहाड़ियों की तलहटी से चलता हुआ बाबर स्वयं

स्यालकोट पहुँच गया। उसकी तुर्की सेना उससे चनाब नदी के किनारे पर आ मिली। इस सेना की टुकड़ी पर जाटों और गूजरों ने छापा मारा था। इनको आगे चलकर बाबर ने कड़ा दंड दिया था। लाहोर की उसकी कुछ सेना स्यालकोट में उससे आ मिली फिर वह पसरूर की ओर बढ़ा। यहाँ से वह कलानौर की ओर बढ़ा। फिर उसने ज़वानदून के मालात स्थान को घेर लिया। अकबर के समय में वर्तमान स्यालकोट जिला बाजवात चनाब के पार वाले प्रदेश को छोड़कर लाहोर सूबे की रचना द्वाब सरकार का अंग था। प्रति वर्ष जमीन की नाप होती थी और पैदावार के अनुसार प्रति बीघे पर लगान नियत किया जाता था। शाहजहाँ के समय में यहाँ सुप्रसिद्ध इंजीनियर अली मर्दान खां का शासन-प्रबन्ध था। शाहजहाँ के समय में एक मुगलसेना काबुल और पेशावर से शहजादे मुरादबख्श के साथ स्यालकोट होकर पठान कोट को गई थी। चीनी यात्रियों के समय में भी उत्तर से आने का यही सरल मार्ग था।

मुहम्मदशाह के शासन के अन्त में मुगलसाम्राज्य के बाहरी जिलों में अराजकता छा गई। स्यालकोट के बड़े भाग पर पठानों के एक परिवार ने अधिकार कर लिया। पहाड़ की तलहटी के भाग राजा रंजीत देव के हाथ में थे। जफरवाल, डस्का और पसरूर नाम मात्र को लाहोर के अधीन थे। वास्तव में वे दो भागों में बट गये थे।

इसी समय १७४८ ई० में अहमदशाह दुर्रानी एक सेना लेकर काबुल से आया। वह उसके मार्ग में सरहिन्द में बाधा डालने वाले मीर मनू को दड देने के लिये आया था। दिल्ली से सैनिक सहायता न मिलने पर मीर मनू ने गुजरात, स्यालकोट, पसरूर और औरंगाबाद के चार जिले में अहमदशाह को सौंप दिये। तीन वर्ष तक लगान न मिलने पर अब्दाली ने अपना दूत तकाजा करने के लिये लाहोर को भेजा रुपया न मिलने पर उसने लाहौर पर चढ़ाई की। जलन्धर के अदीना बेग खां और मुल्तान के कौमल की सेनाओं ने शाहदरा के पास अब्दाली से मोर्चा लिया। अब्दाली की विजय हुई। पंजाब और सरहिन्द पर उसका अधिकार हो गया। उसने लाहोर में अपने बेटे को शासन करने के लिये छोड़ दिया।

इसी समय पहाड़ी जिलों पर दो राजाओं का अधिकार था। राजा कृपालु देव की राजधानी बाऊ का किला था। तावी नदी के पश्चिम में राजा रंजीत देव का शासन था। दिल्ली से मिलकर रंजीत देव ने राजा कृपालु देव के राज्य पर भी अधिकार कर लिया। दिल्ली का आधिपत्य स्वीकार करके रंजीत देव ने अपना प्रभुत्व रोरास और पठानवाली ताल्लुकों तक स्थापित कर लिया। जब दुर्रानी ने लाहोर पर आक्रमण किया तो राजा रंजीत सिंह ने दुर्रानी से भी मित्रता कर ली। जब दुर्रानी मथुरा जीत कर लौटा तब राजा ने तीन परगने दुर्रानी को भेंट में दे दिये। जफरवाल परगने की सीमा पर चाविन्दा (चार बन्दा) नाम का प्रदेश था। यह पुराना स्थान है। रहमत खां यहाँ एक किला बनवा रहा था। राजा रंजीत सिंह ने अचानक आक्रमण किया और चाविन्दा को अपने राज्य में मिला लिया। एक बार राजा रंजीत सिंह स्वयं कठिनाई में था वह लाहोर में कैद था। उसी समय उसका चौबारा ताल्लुका उसके एक विरोधी ने ले लिया। उसने राजा के वंशवला सभी मीनाओं को जो जाटोक में रहते थे मरवा डाला। यह सुनकर राजा ने अपने विरोधी पृथू को चार्वा के पास अलाकी लड़ाई में हराया और चौबारा को अपने राज्य में मिला लिया। इस प्रकार १७७२ ई० तक उसने जच द्वाब के डिंगा स्थान से चनाब के किनारे कुलू वाल तक अपना राज्य कर लिया था। पर स्यालकोट शहर पर एक पठान वंश का अधिकार था। राजपूत लोग अपने राज्य में उपज का एक तिहाई अथवा एक चौथाई भाग लेते थे।

जब दुर्रानी की शक्ति शिथिल पड़ने लगी। झंडा सिंह और गंडा सिंह नाम के दो सिक्ख भाइयों ने स्याल कोट पर अधिकार कर लिया वे गुलाब सिंह के साथी थे। इसी समय रंजीत देव अपने बड़े बेटे ब्रजराज देव से लड़ रहा था। उसने बेटे को गद्दी से अलग कर दिया। ब्रजराज देव विद्रोह पर तुल गया। उसने महाराजा रंजीत सिंह के पिता चर्त सिंह से प्रार्थना की। लड़ाई में चर्त

सिंह मारा गया। पर १७८० ई० में रंजीत देव का देहान्त हो गया। इसी वर्ष रंजीत सिंह का जन्म हुआ। १७८३ ई० में भीषण चालीसा अकाल पड़ा। हजारों मनुष्य भूखों मर गये। १७८४ ई० में रंजीत सिंह के पिता ने जम्मू पर चढ़ाई की और नगर को लूटा ब्रजरादेव त्रिकोटि देवी को भाग गया। इसके बाद इस भाग में लगातार सिक्खों के आक्रमण होते रहे। कुछ समय तक २५००० रु० देकर उन्हें शान्त रक्खा गया। सिक्खों ने स्यालकोट पर अधिकार कर लिया। रूमाल की लड़ाई में ब्रजराजदेव मारा गया। उसकी सेना भाग गई। कुछ समय में ही रंजीत सिंह ने समस्त प्रदेश पर अधिकार कर लिया। रंजीत सिंह के पूर्वजों का घर गुजरान वाला जिले में था। इस जिले में उसका केवल दो ताल्लुकों पर अधिकार था। पर १७९० और १८१० के बीच में उसने पूरे स्यालकोट जिले पर अधिकार कर लिया था। १७९०-१ में रंजीत सिंह ने गुजरात के गूजरसिंह से सोहदराछीन लिया। गूजरसिंह लड़ाई में मारा गया फिर उसने गनपतराय को गोइन्दको भेजा उसने किले को लूट लिया। सुधसिंह दोदिया के मरने पर रंजीतसिंह ने जाम के और भोपाल वाला पर अधिकार कर लिया। १८०७ ई० में नारसिंह चमियारी के मरने पर रंजीतसिंह ने पसरूर और उसके पड़ोस के १३ ताल्लुके अपने राज्य में मिला लिये। जब स्यालकोट के सरदारों ने रंजीत सिंह का विरोध किया तब उसने एक सेना दीवान मोहकम चन्द के साथ स्यालकोट को भेजी। घमासान लड़ाई के बाद स्यालकोट का किला और शहर रंजीत सिंह के हाथ में आ गया। अटारी का युद्ध और भी अधिक विकराल था। यह १९ दिन तक चलता रहा। पर इस जीत से रंजीत सिंह को १९ नये ताल्लुका मिल गये। दो वर्ष बाद जोधसिंह (वजीराबादिया) का देहान्त हो गया। उसके लड़के गंडासिंह से कर न मिलने पर चार ताल्लुका ले लिये गये। दूसरे वर्ष गुजरात ले लिया गया। साहिब सिंह देवा बटाला को भाग गया। यह स्थान जम्मू राज्य में है। इसके बाद निधन सिंह हट्टू से डरका छीन लिया गया। इससे ८ ताल्लुका रंजीत सिंह को मिल गये। जब यह पता लगा कि अहलूवालिया सरदारों ने निधन सिंह हट्टू की सहायता की थी तब उनका सरदार भागसिंह कैद कर लिया गया। उसका बेटा सूबा सिंह लाहौर को भेज दिया गया। उसके मरने पर १० और ताल्लुका रंजीतसिंह के खालसा राज्य में मिला लिये गये। इस प्रकार रंजीतसिंह पूरे स्यालकोट जिले का राजा बन गया।

रंजीत सिंह के समय में जिले का लगान बटाई प्रथा के अनुसार वसूल किया जाता था। पहले पांचवाँ भाग किसान को खेत जोतने बोने के लिये अलग कर दिया जाता था जो शेष बचता था उसका आधा या चौथाई भाग राज्य ले लेता था शेष आधा या तीन चौथाई किसान को मिलता था। जिले के कुछ भाग ठेकेदारों को दे दिये गये थे वे अनाज के बदले नगद रुपया देते थे। रंजीत सिंह ने १४५ गांव (जिनकी आमदनी ६५३९० रुपये थी) जागीरदारों को दे दिये थे। इनमें राजा तेज सिंह, सरदार सिंह, सरदार झंडा सिंह प्रधान थे। राजा तेजसिंह के हाथ में बजवात और स्यालकोट के कुछ भाग थे। रञ्जीतसिंह के मरने पर ब्रिटिश प्रभुत्व स्थापित हुआ। पहले बुधसिंह और झंडा सिंह की पुरानी जागीरें छोड़ दी गई थीं। फिर सिक्खों की दूसरी लड़ाई में भाग लेने के अपराध में यह जागीरें भी अंग्रेज़ी राज्य में मिला ली गईं। इस प्रकार पूरा स्यालकोट जिला अंग्रेज़ी राज्य में मिला लिया गया।

गदर—१८५७ ई० की १० मई को यहां मेरठ के विद्रोह का समाचार पहुँचा। मियां मीर के बागी सिपाहियों से हथियार रखवा लेने की खबर १३ मई को पहुँची। इससे यहाँ बड़ी सन्सनी फैली। तोपें ब्रिटिश सेना में भेज दी गईं। २० मई को यहां से ब्रिटिश सिपाहियों को दिल्ली भेजने की आज्ञा दी गई। पांच दिन के बाद इन्होंने वजीराबाद के लिये प्रस्थान किया। इन्होंने अपने साथ हिन्दुस्तानी सिपाही भी ले लिये। इस प्रकार अस्पताल के कुछ गोरे सिपाहियों को छोड़ कर स्यालकोट एकदम गोरे सिपाहियों से खाली हो गया था। हिन्दुस्तानी सिपाहियों की यहां दो टोलियां थीं। ११ जून को ३ अमरीकन मिशनरी स्यालकोट खाली कर गये। शेष गोरे लोग स्यालकोट के किले में चले गये। ९ जुलाई को सवेरे ४ बजे देशी सिपाहियों ने

विद्रोह कर झंडा ऊँचा उठाया। इन्होंने अपने अफसरों को गोली से तो नहीं उड़ाया पर एक ओर हटा दिया। कुछ अफसर एक कमरे में बन्द कर दिये गये। विद्रोहियों ने इन अफसरों को अपनी ओर मिलाने के लिये १००० और २००० रुपये मासिक देने और गरमियों में ६ महीने की छुट्टी देने का वचन दिया। सायंकाल को इन्हें छोड़ दिया गया और वे किले में पहुँच गये। विद्रोहियों ने पहले जेल से ३०० कैदियों को मुक्त कर दिया। फिर उन्होंने सरकारी खजाना लूट लिया। दूसरे दिन केप्टेन बिशप मार डाला गया। उसकी स्त्री पैदल किले में पहुँच गई। डिप्टी कमिश्नर बीमार था। वह चारपाई पर लिटा कर किले में पहुँचा दिया गया। कुछ विद्रोही गुरू घासपुर की ओर चले गये। कुछ जम्मू राज्य में चले गये।

१२ जुलाई को रावी नदी के किनारे त्रिमुन घाट पर अंग्रेजों और विद्रोहियों की मुठभेड़ हुई। कुछ विद्रोही मार डाले गये। कुछ इधर उधर हो गये।

२० जुलाई को किले में घिरे हुये गोरे बाहर आ गये और स्यालकोट में विद्रोह एक दम शान्त हो गया।

रोहतक जिला

रोहतक नाम रोहतास गढ़ का अपभ्रंश है। वर्तमान नगर के उत्तर और पूर्व में अधिक प्रान्तीय नगर के खंडहर हैं। इसका नाम रोहतास गढ़ था। कहते हैं राजा रोहतास की यहाँ राजधानी थी। उसी ने यह नगर बसाया था। गोहना कस्बे के पास का तालाब भी उसी ने बनवाया था। यह जिला २८°.२१ और २९°.१९ उत्तरी अक्षांशों ७६°.१५ और ७७.५ पूर्वी देशान्तरों के बीच में स्थित है। यह जिला प्रधान पंजाब के दक्षिण में राजपूताना की सीमा के अधिक समीप है। इस जिले की अधिक से अधिक लम्बाई ६३ मील और चौड़ाई ४३ मील है। इसका क्षेत्रफल १७९७ वर्ग मील है। पंजाब के दूसरे जिलों से यह बहुत छोटा है। प्रान्त भर में क्षेत्र फल की दृष्टि से इसका स्थान छब्बीसवां है। पर जनसंख्या में इस जिले का बीसवां स्थान है। जिले का मध्यवर्ती भाग समुद्र-तल से ७३० फुट ऊंचा है। झज्जर की सीमा तक इस जिले की भूमि उत्तर से दक्षिण को नीची होती गई है। १ मील में १ फुट का उतार है। झज्जर में ढाल बदल कर दक्षिण से उत्तर की ओर हो जाता है। मालवा में इस जिले का जल विभाजक उत्तर-पश्चिम से बदल कर राजपूताना के ढाल के समान दक्षिण की ओर हो जाता है। उत्तरी तहसीलों के कुछ भागों का ढाल पश्चिम से पूर्व की ओर है।

इस जिले के उत्तर में झींद राज्य और कर्नाल जिले की पानीपत तहसील है। पूर्व में सोनपत, दिल्ली और गुरगांव तहसीलें हैं। दक्षिण में पटौदी राज्य और रिवाड़ी तहसील है। पश्चिम में झींद राज्य और हिसार जिले की भिवानी और हांसी तहसीलें हैं।

रोहतक जिले में चार तहसील हैं। उत्तर की ओर गोहना, दक्षिण की ओर झज्जर और बीच में रोहतक है। जिले के बीच में ११॥ वर्ग मील भूमि दुजाना के नवाब की है।

झज्जर तहसील के दक्षिणी भाग में अर्वली पर्वत की अन्तिम पहाड़ियां हैं। कुछ भागों में रेतीले टीले हैं। पर जिले के अधिक तर भाग में नहरों का जाल सा बिछा हुआ है। नहरों के किनारों पर पेड़ लगे हुये हैं। इन सब बातों से इस जिले का दृश्य बड़ा मनोहर हो जाता है। इस जिले का पूर्वी सिरा नीचा है। यहीं झज्जर के दक्षिणी-पूर्वी कोने को पार करके साहिबी और इन्दौरी धारायें नजफगढ़ झील में गिरती हैं।

साहिबी नदी जैपुर राज्य में मेवात की पहाड़ियों से निकलती है। यहां से यह अलवर राज्य में पहुँचती है। मनोहर गढ़ और जीतगढ़ के पास बहती हुई यह कोट कासिम के ऊपर रिवाड़ी तहसील में प्रवेश करती है। कई सौ छोटी छोटी

धाराओं के मिल जाने से यह कुछ चौड़ी हो जाती है। रिवाड़ी तहसील और पटौदी राज्य में यह नदी ठीक उत्तर की ओर बहती है। रिवाड़ी कस्बा इस नदी से ७ मील पश्चिम की ओर छूट जाता है। १०० मील बहने के बाद यह नदी झज्जर तहसील के दक्षिणी-पूर्वी कोने में लोहारी के पास प्रवेश करती है। लोहारी को पार करके यह नदी पटौदा और खेड़ी सुल्तान में शाखायें छोड़ देती है। फिर यह कुछ दूर तक गुरगांव जिले में बहती हुई अन्त में कुटनी गांव के पास रोहतक जिले में पहुँचती है।

इन्दौरी नदी गुरगांव जिले के नूह गांव के पश्चिम में इन्दौर के किले के पास मेवात की पहाड़ियों से निकलती है। इससे एक शाखा फूटकर उत्तर-पश्चिम की ओर बहती है और साहिबी नदी से रिवाड़ी तहसील की दक्षिणी सीमा के पास मिल जाती है। उत्तरी धारा का पानी बेहोरा के पड़ोस की निचली भूमि में फैल जाता है और अन्त में पटौदी के दक्षिण में साहिबी में गिर जाता है। इन्दौरी में साधारण वर्षा होने पर भी बाढ़ आ जाती है। साहिबी नदी का निकास अधिक दूर है। यह रेगिस्तानी प्रदेश में होकर बहती है। इसलिये प्रबल वर्षा होने पर ही इसमें बाढ़ आती है। पहले कोट कासिम के पास इसमें बांध बन जाता था और इसका पानी सिंचाई के काम आता था। रोहतक जिले में दोनों धारायें एक होकर प्रवेश करती हैं। कुटनी के पास पहुँचने पर धारा फिर दो शाखाओं में बट जाती है। एक धारा उत्तर की ओर मुड़ती है और याकूबपुर के पास निचले भाग में गिर जाती है। दूसरी धारा पश्चिम की ओर मुड़ती है। इसी की एक शाखा बदौरा झील में गिर जाती है। बड़ी धारा रेतीले टीलों की तहलटी में दिल्ली जिले में पहुँच जाती है। अधिक बाढ़ आने पर पहले इसके मार्ग की सब झीलें किनारों तक भर जाती थीं। यह बाढ़ कुछ ही दिन रहती थी। आजकल वर्षा की कमी और खेती के बढ़ जाने से इन नदियों का केवल नाम शेष है। औरंगपुर के ऊपर और कोटकलाल के नीचे की झीलें कभी नहीं सूखती हैं। नजफगढ़ झील के उत्तर में १४ मील और पश्चिम में ८ मील तक नीची भूमि है। झीलों के पड़ोस में गेहूँ और गन्ने की खेती होती है।

रोहतक जिले के मध्य भाग में समतल पठार है। पूर्व और पश्चिम की ओर यह नीचे रेतीले टीलों से घिरा है। पश्चिम की ओर जमीन फिर हिसार जिले की सीमा तक क्रमशः नीची होती गई है। इस सीमा के पास फिर रेतीले टीले हैं। झज्जर तहसील में इन्दौरी और खोहची की पुरानी तली छः या सात गज की गहराई पर कुओं में पानी निकलता है। खेतों को सींचने के लिये बराबर ढेंकली चला करती हैं। पर पश्चिम की ओर मेहम के पड़ोस में कुओं में १०६ फुट की गहराई पर पानी मिलता है। बीच वाले भाग में ५० फुट की गहराई पर कुओं में पानी मिल जाता है। कुछ भागों में पथरीली चट्टानों को छोड़कर समूचा रोहतक जिला कछारी मिट्टी से ढका है।

जलवायु—रोहतक निवासी वर्ष को तीन ऋतुओं में बांटते हैं। ४ महीने गरमी, ४ महीने चौमासा (वर्षा) और चार महीने जाढ़ड़ा (जाड़ा) रहता है। अप्रैल मास से गरमी विकराल होने लगती है। वर्षा होने पर ही यह कुछ कम होती है। फिर भी मध्य पंजाब से यहां कम गरमी पड़ती है। गरमी की ऋतु में गरम हवायें पश्चिम की ओर से दिन भर चला करती हैं।

राजपूताना की ओर से धूल भरी आंधी के आने से दिन में भी अंधेरा हो जाता है। जून के अन्तिम सप्ताह से १५ जुलाई तक वर्षा आरम्भ हो जाती है। सितम्बर के अन्त अथवा आधे अक्तूबर से वर्षा समाप्त हो जाती है। इसके बाद दिन में तो गरमी रहती है। पर रात ठंडी होने लगती है। आधे नवम्बर से अधिक जाड़ा पड़ता है। दिसम्बर के अन्त में पाला पड़ता है। कुछ पाला फर्वरी मास में भी पड़ता है। फर्वरी मार्च से जोर की हवायें चलती हैं। मार्च अप्रैल में कभी कभी ओला भी गिर जाता है। इस जिले में औसत से २० इंच वर्षा होती है। गोहना तहसील में सब से अधिक वर्षा होती है। २० इंच की वार्षिक वर्षा १७ इंच चार महीनों में और शेष ३ इंच आठ महीनों में पानी बरसता है।

जब केवल एक दो बूंद पानी बरसता है तब इसे यहां बूंदा बांदी कहते हैं। हलकी वर्षा को डोंगरा प्रबल वर्षा को मूसला धार कहते हैं। जब वर्षा इतनी अधिक होती है कि खेत की हद टूट जाती है तब इसे डोला तोड़ या नाका तोड़ कहते हैं। जब सब कहीं वर्षा होती है तब इसे देश भरन कहते हैं।

वर्षा बीतने पर सरदी के आरम्भ में भारी ओस गिरती है। वर्षा की कमी से इस जिले में अकाल कई बार पड़ चुका है पर यहां भूचाल कम आते हैं।

वनस्पति—पुरानी नहरों के किनारे शीशम, लसोड़ा, सिरस, तून, आम, कीकर आदि कई प्रकार के पेड़ मिलते हैं। गांवों के पड़ोस में पीपल, नीम, बड़े हैं। बागों में आम और जामुन की अधिकता है। दक्षिणी भाग में पेड़ कम हैं। निचले भागों में कहीं कहीं झाऊ मिलती है।

इस जिले में सर (मूंज) दूब घास बहुत होती है। "और घास जल जावेगी दूब रहेगी खूब" यहां की प्रसिद्ध कहावत है। कांस और डाभ भी पाया जाता है। इस जिले में हिरन बहुत हैं। दक्षिणी भाग में चिकारा पाया जाता है। खरगोश, लोमड़ी, गीदड़ और बनबिलाव भी बहुत हैं। कहीं कहीं जंगली सुअर और भेड़िया भी पाया जाता है। नहर के पड़ोस वाले गांवों में बन्दरों की भरमार है। वे खेतों से तोड़कर गन्ना बहुत चूसते हैं।

कृषि—इस जिले में रौसली मिट्टी बड़ी उपजाऊ है। रेतीले टीलों पर भूड़ हैं। कुछ निचले भागों में चिकनी मिट्टी है। नहर और खारे कुओं के पड़ोस में रेह (शोर) पाया जाता है।

डहरी (बाढ़ वाले निचले भागों) और कुआं वाले खेतों को छोड़कर गन्ने की खेती नहर के समीप ही होती है। नहर के समीप गेहूँ भी बहुत होता है। कुछ खेतों में चना और गेहूँ मिलाकर (गोचनी) बोते हैं। गेहूँ और गन्ने के खेतों में खूब खाद डाली जाती है। खरीफ की फसल में कड़ी मिट्टी में ज्वार बाजरा बोते हैं। कपास भी बहुत उगाई जाती है।

कुछ खेतों में बाजरा काटने के बाद चना बोते हैं। ज्वार १,४५,००० एकड़, बाजरा २ लाख एकड़, मूंग १४,००० मोठ ४००० गन्ना, २५,००० कपास ५७ हजार धान, ५०० एकड़ भूमि खरीफ के दिनों में घेरते हैं।

रबी की फसल में गेहूँ ५५,०००, जौ ३०,००० चना १ लाख, गोचनी १४०००, सरसों ८०००, तम्बाकू ४०० फल और साग १५०० एकड़ भूमि घेरते हैं।

रोहतक जिले की गाय, बैल और भैंस बड़ी अच्छी होती हैं। इसी से यहां घी भी बहुत अच्छा होता है। घोड़े बहुत अच्छे नहीं होते हैं। रहबारी लोग ऊंट पालते हैं। जब तक ऊंट का बच्चा बोझा ढोने योग्य नहीं होता है तब तक उसे बोटा या बोटी कहते हैं। पांच वर्ष की होने पर ऊंटनी बच्चा देने लगती है। वह पचीस वर्ष की उम्र तक ६ या ७ बार बच्चा देती हैं। ऊंट की औसत उम्र ३५ या ४० वर्ष की होती है। ऊंटों की ऊँन साल भर में एक बार कतरी जाती है। ऊंट से ८ छटांक और ऊंटनी से १२ छटांक ऊन निकलता है। भंगी लोग सुअरों के बाल काट कर ब्रुश बनाने वालों के हाथ बेच देते हैं। इस जिले में एक लाख से ऊपर भेड़ बकरी हैं। भेड़ों की ऊन वर्ष में दो बार मार्च और सितम्बर में कतरी जाती है। जहाजगढ़ में गाय, बैलों की बिक्री के लिये सितम्बर और मार्च मास में मेला लगता है।

खनिज—इस जिले में कंकड़ कई स्थानों में मिलता है, झज्जर तहसील में जाहिदपुर या असदपुर में बीस वर्गमील में खारी मिट्टी से साफ शोरा बनाया जाता है। कुछ गांवों में सादा शोरा बनाया है। गुरयानी और पड़ोस के गांवों में घर बनाने का पत्थर निकाला जाता है।

कला-कौशल—रोहतक एक कृषि प्रधान जिला है। कलाकौशल की कमी है। चमार साधारण जूते, कुम्हार मिट्टी के बर्तन बनाते हैं। खद्दर और गाढ़ा बुनने का काम कई स्थानों में होता है। झज्जर में कपड़ा रंगा जाता है। लकड़ी और पत्थर का काम भी होता है। ठठेरे लोग तांबे और पीतल के बर्तन बनाते हैं। मुसलमान तांबे के बर्तन पसन्द करते हैं। कांसे और फूल के बर्तन भी बनाये जाते हैं। गोहना का नगर (गांव) बर्तन बनाने के लिये

प्रसिद्ध है। रोहतक शहर में कपास ओटने और गट्ठा बनाने के लिये कुछ पेंच (कारखाने) हैं।

आने जाने के मार्ग—१८७९ ई० तक इस जिले में एक भी रेलवे न थी। आज कल बम्बई, बड़ौदा और सेण्ट्रल इण्डिया रेलवे की रिवाड़ी—फाजिलका शाखा झज्जर तहसील के दक्षिणी पश्चिमी भाग को पार करती है। दिल्ली से भटिंडा और लाहौर को जाने वाली रेलवे इस जिले में विशेष महत्व पूर्ण है। बहादुरगढ़, अपौदा, सम्पली, खबर, रोहतक और खरैंती इस जिले की स्टेशन हैं।

रोहतक शहर से गोहना (२० मील), रोहतक से भिवानी (१८ मील), रोहतक से झज्जर (२१ मील) को पक्की सड़कें गई हैं। रोहतक से मेहम और झज्जर से बहादुर गढ़ को भी पक्की सड़क गई है। इस जिले में कच्ची सड़कें बहुत हैं। उनकी समस्त लम्बाई ६०० मील से कम न होगी। कच्ची सड़कों का मार्ग बदलता रहता है। किसान अपने खेत में होकर जाने वाली कच्ची सड़क को जोत लेता है वह यह चाहता है कि सड़क उसके पड़ोसी के खेत में होकर जावे।

गोहना और रोहतक के बीच में सरदी की ऋतु में कपास से लदी हुई इतनी बैलगाड़ियां चलती हैं कि यह सड़क शीघ्र ही बिगड़ जाती है। गोहना से भिवानी और भिवानी से रोहतक को जाने वाली सड़क भी खूब चलती है। गोहना से पानीपत और सोनपत को जाने वाली सड़कों पर भी बहुत सा सामान आता जाता रहता है।

इस जिले में गुड़, कपास, अनाज, घी और चमड़ा का व्यापार बहुत होता है। यहां से कुछ गुड़ भिवानी को और कुछ रोहतक से कानपुर और सिन्ध को जाती है।

संक्षिप्त इतिहास

इस जिले में हरियाना का जो भाग स्थित है उसकी राजधानी मेहम थी। कहते हैं शहाबुद्दीन गोरी ने इसे नष्ट कर डाला पर १८६६ ई० में पेशोरा नाम के एक बनिये ने इसे फिर बना दिया। रोहतक भी पुराना नगर है। इसे रोहतास नामी एक पवार राजपूत ने बसाया था। पृथ्वीराज ने ११६० ई० में इसे फिर से बनवाया। पर इसे भी गोरी वंश संस्थापक मुहम्मद गोरी ने नष्ट कर डाला। फिर यमन के शेखों ने रोहतक का किला बनवाया। बिरहमा को इब्राहीम खां ने बसाया। यहीं कुछ अफगानी बस गये। कहते हैं फीरोजशाह ने सतलज से झज्जर तक एक नहर खुदवाई। दूसरे उसने यमुना से हिसार तक प्रसिद्ध नहर निकलवाई। १४१० ई० में खिजर खां नाली एक पठान ने रोहतक पर अधिकार कर लिया। अकबर के समय में रोहतक का जिला दिल्ली के सूबे में शामिल कर दिया गया। १६४३ ई० में रोहतक नहर आरम्भ हुई। पर इसमें सफलता न मिली। अकबर ने मेहम कस्बा शहबाज खां नामी एक अफगान को जागीर में दे दिया। औरंगजेब के समय में दुर्गादास की अध्यक्षता में राजपूतों ने इसे लूट लिया १७१८ ई० में फर्रुखसियर ने यह जिला अपने मन्त्री रुकुनुद्दीन को जागीर में दे दिया उससे यह गुरु गांव जिले के फर्रुख नगर के नवाबों को मिल गया। १७६० में भरतपुर के सूरजमल जाट ने नवाब को भगा कर झज्जर, बदली और फर्रुख नगर पर १७७१ ई० तक अधिकार रक्खा। इसके बाद नवाब से फर्रुख नगर तो ले लिया पर रोहतक जिले पर उसका अधिकार कभी नहीं हो सका। झज्जर पर सरधना की बेगम समरू के स्वामी वाल्टर रेनहार्ट का अधिकार हो गया। १७८५ ई० में मरहठे आये पर यहां सिक्खों की शक्ति प्रबल हो चुकी थी। १७८५ से १८०३ ई० तक जिले के उत्तरी भाग पर झींद के राजा का अधिकार रहा। दक्षिणी पश्चिमी भाग पर कभी मरहठों का और कभी सिक्खों या जाटों का अधिकार रहा। इसी बीच में जार्ज टामस ने जिले के कुछ भाग पर अपना अधिकार कर लिया। जार्ज टामस ब्रिटिश जंगी जहाज पर १७८१ ई० में एक मल्लाह बन कर आया था। १७८७ ई० में वह बेगम समरू के यहां नौकर होगया। १७९२ ई० में वह समरू को छोड़कर उसने मरहठा सरदार अप्पा खंडेराव के यहां नौकरी कर ली। अप्पा ने उसे अपने बेटे के समान माना और डेढ़ लाख वार्षिक आमदनी के गांव दे दिये। उसके कुछ गांव तो सिन्धिया ने छीन लिये। कुछ शेष रह गये। उसने झज्जर में

अपना अड्डा जमाया और जहाजगढ़ में किला बनवाया। उसने अपने सिक्के ढलवाये, तोपें और बन्दूकें बनवाईं। सेना को बढ़ाकर उसने पंजाब में अटक तक अंग्रेजी झंडा फहराने का प्रयत्न किया। पर सिक्ख, राजपूत और मरहठे सभी उससे नाराज हो गये। १८०२ की लड़ाई में उसे जहाज गढ़ से भागना पड़ा अन्त में वह मर गया। पर दो वर्ष में मरहठों की शक्ति क्षीण हो गई। रोहतक जिला ईस्ट इण्डिया कम्पनी के हाथ आगया। लार्ड लेक की यह नीति थी कि सिक्खों के पड़ोस में अंग्रेजों की सहायता करने वाले जागीरदार खड़े कर दिये जावें। अतः उसने झज्जर जागीर अंग्रेजों के मित्र नवाब निजावत अली खां को दे दी उसके भाई नवाब इस्माइल खां को बहादुर गढ़ और पड़ोस की जमीन दे दी। झींद के राजा ने जस्वन्त राव होल्कर के विरुद्ध अंग्रेजों का साथ दिया था। उसे गोहना, खरखौरा और मन्दौथी की तहसीलें मिलीं पटौदी राज फैज तलब खां को मिला। रोहतक बेरी और मेहम तहसीलें दुजाना के पहले नवाब को मिलीं। इनको वह संभाल न सका। १८०९ ई० में यह तहसीलें फिर ईस्ट इण्डियन कम्पनी को मिल गईं। इसी समय से रोहतक जिले का आरम्भ हुआ। १८२४ ई० में रोहतक का जिला अलग कर दिया गया।

१८२५ ई० में दुजाना का नवाब मर गया वह पहले पेशवा बाजीराव की सेना में एक रिसालदार था। जब सिन्धिया से लड़ाई छिड़ी तब उसने सिन्धियों के विरुद्ध अंग्रेजों का साथ दिया। वह सेना की एक टोली लेकर मरहठों को छोड़कर लार्ड लेक से जा मिला। भरतपुर के घेरे और जसवन्त राव होल्कर का पीछा करने में उसने अंग्रेजों की बड़ी सहायता की। इन सेवाओं के पुरस्कार में अंग्रेजों से उसे दुजाना की जागीर मिली। दुजाना के नवाब यूसुफजाई कबीले के हैं और झज्जर के पठानों के सम्बन्धी हैं।

झज्जर के पठान आरम्भ में पिशीन और कन्धार के पड़ोस में रहते थे। वर्तमान नवाब के एक पूर्वज ने बंगाल के नवाब अली वर्दी खां के यहां नौकरी कर ली। फिर वह वहां से नौकरी छोड़ कर उत्तरी भारत को चला आया। यहां वह एक लड़ाई में मारा गया। उसका बेटा पहले अवध के नवाब के यहां नौकर हो गया। फिर वह दिल्ली की शाही सेना में आगया। और जैपुर में राजपूतों से लड़ता हुआ मारा गया। शाह आलम ने उसके बेटे निजावत अली को नवाब की उपाधि दे दी। मरहठों और अंग्रेजों के युद्ध में वह अंग्रेजों से जा मिला। बदले में उसे जागीर मिली। उसके बेटे ने झज्जर का महल बनवाया। जहां आज कल तहसील है। १८३५ में वह मर गया। गदर में यह जागीर फिर छिन गई।

गदर के समय बहादुर गढ़ जागीर की दशा भी अच्छी न थी।

१८५७ ई० की १० मई को मेरठ में विद्रोह आरम्भ हुआ। ११ मई को विद्रोही दिल्ली पहुँच गये। इस जिले के बहुत से राजपूत और जाट सेना में नौकर थे। रोहतक जिले के कलक्टर ने झज्जर के नवाब से कुछ सिपाही मांगे। कुछ घुड़सवार आये। पर यह अपने मार्ग के गाँवों को भड़काते हुये आये। २३ मई को दिल्ली के बादशाह का एक राजदूत (तफ़ज्जुल हुसेन) रोहतक जिले में कुछ सिपाही लेकर आया। २४ मई को सवेरे ही अंग्रेज कलक्टर भूरे खां थानेदार को लेकर रोहतक जिले से भाग गया और अन्धा हो गया। विद्रोहियों ने कचहरी को जलाया और जेल के फाटक खोल दिये। खजाने से दो लाख रुपये लूट कर विद्रोही दिल्ली को लौट आये। जो सेना अम्बाला से यहां आई वह भी विद्रोहियों से मिल गई। जिले में कोई अफसर न रहा। पर कोई अंग्रेज मारा नहीं गया। कुछ मुसलमानों ने हिन्दुओं को मारने का प्रयत्न किया। हिन्दुओं के आपस के भी झगड़े हुये। विद्रोहियों ने भूरे खां थानेदार को मार डाला। सितम्बर मास में पटियाला और बीकानेर से सैनिक सहायता आ जाने से विद्रोह शान्त हो गया। विद्रोही गोली से उड़ा दिये गये या फांसी पर लटका दिये गये। कुछ लूट का माल भी वापिस मिल गया। पूरे जिले के लोगों के हथियार छीन लिये गये। जिन गांवों ने विद्रोह में भाग लिया था उन पर ६३,००० रु० का जुर्माना किया गया।

जिन लोगों ने अंग्रेजों की सहायता की थी उन्हें इनाम दिया गया।

रोहतक जिले में प्राचीन भग्नावशेष बहुत कम हैं। रोहतक, रोहतासगढ़ या खोकराकोट में जो खुदाई हुई उससे यह सिद्ध होता है कि यहां पहले ३ प्राचीन नगर बस चुके थे। दीनी मस्जिद में कुछ प्राचीन हिन्दू कला का काम है। यह अला उद्दीन खिलजी के समय में बनी। शहर के पूर्व में पुरानी बाउली और गोकरन तालाब भी पुराना है। कुछ स्थानों में राजा समन्त देव के सिक्के मिले। कहते हैं इसने ९२० ई० में काबुल और पञ्जाब में राज्य किया था।

कहते हैं मेहम को राय पिथौरा के पूर्व राय बल्लू ने बसाया था। यहां कई पुरानी बाउली हैं। यहां की जामा मस्जिद हुमायूं के समय (१५३१ ई०) में बनी।

झज्जर में पुराने सन्तों और पीरों की कई समाधियां हैं।

जन संख्या की सघनता की दृष्टि से रोहतक जिले का पञ्जाब में ११ वां स्थान है। रोहतक तहसील के कुछ भागों में प्रतिवर्ग मील में ६२८ मनुष्य रहते हैं। झज्जर के भूड़ प्रदेश में प्रतिवर्ग मील में २७४ से अधिक मनुष्य नहीं रहते हैं। इस जिले के गांव बड़े हैं। औसत से प्रत्येक गाँव में १००० से अधिक ही मनुष्य नहीं रहते हैं। गांव ऊँची भूमि पर बसे होते हैं। झज्जर के नीचे बलुई भूमि के घर छोटे होते हैं और छप्पर से छाये रहते हैं। कोसली और गुरियानी में कुछ घर पत्थर के बने हैं। रोहतक तहसील में रोहतक (२१,०००) कलानौर (७०००) कहनौर (५०००) सांघी (५०००) और खरखौदा बड़े कस्बे हैं।

झज्जर तहसील में झज्जर (१३,०००) बेरी (१०,०००) बहादुर गढ़ (६०००) मन्धौती (२०००) बदली (४०००) और गुरियानी बड़े क़स्बे हैं। गोहना तहसील के बड़े नगर गोहना (७०००) बुटाना (७५००) महीम (८०००) बड़ौदा (६,०००) और मुंडलाना हैं।

समस्त जिले में प्रायः ७ लाख मनुष्य रहते हैं। इनमें आधे से अधिक लोग खेती पर निर्भर हैं। कुछ चमार, धोबी, लोहार आदि स्वतन्त्र पेशों में लगे हैं। ३०००० मनुष्य व्यापार और लेन देन से जीविका कमाते हैं। जिले के गांवों में १०,००० मनुष्यों में ८८७० हिन्दू, १०७१ मुसलमान, ४८ जैन और ११ सिक्ख हैं। कस्बों में १०,००० मनुष्यों में ६,०९५ हिन्दू, ३६८३ मुसलमान, २१० जैन ५ सिक्ख और ७ ईसाई रहते हैं। मुसलमान यहां प्रायः सभी सुन्नी हैं। हिन्दुओं में जाट, अहीर राजपूत आदि कई जाति हैं। गूजरों के गांव नये हैं।

भूगोल की दृष्टि से समूचा जिला बांगर या ऊँचा मैदान है जो यमुना के खादिर (कछार) और हरियाना के बीच में स्थित है। इस प्रदेश की भाषा बांगरी, हरियानी या जाटू है। यह पश्चिमी हिन्दी का अंग है। पढ़े लिखे लोगों की संख्या बहुत कम है।

लाहौर

लाहौर का प्राचीन नाम लवपुर है। कहते हैं श्री रामचन्द्र जी के पुत्र लव ने इसे बसाया था। लाहौर को प्रायः लोहकोट या लोहे का किला भी कहते हैं। एक लाहौर अफ़गानिस्तान में भी है जहाँ राजपूतों का उपनिवेश है। पर सर्व प्रसिद्ध लाहौर पंजाब की राजधानी है। इसी से इस जिले का यह नाम पड़ा।

लाहौर जिला ३०°३८′ और ३१°४४′ उत्तरी अक्षांशों और ७३°३८′ और ७१°५८′ पूर्वी देशान्तरों के बीच में स्थित है। इस जिले का बहुत बड़ा भाग उत्तर में रावी और दक्षिण में सतलज नदी से घिरा हुआ है। इस जिले की केवल कुछ मील चौड़ी एक तंग पेटी रावी नदी के दाहिने किनारे पर स्थित है। लाहौर जिले के पूर्व में अमृतसर और पश्चिम में मांटगोमरी का जिला है। लाहौर का जिला आकार में एक चतुर्भुज के समान है। उत्तर-पूर्व और दक्षिण-पश्चिम की ओर नदियों की दिशा के साथ यह भी कुछ झुक सा गया है। लाहौर के उत्तर में गुजरानवाला और दक्षिण में फ़ीरोज़पुर का जिला है। इस जिले की लम्बाई पूर्व से पश्चिम तक ६४ मील है। उत्तर से दक्षिण तक इसकी औसत चौड़ाई ३८ मील है। सतलज नदी के कैसरहिन्द पुल से शाहदरा के उत्तर में दो मील की दूरी पर गुजरानवाला जिले की सीमा के पास लाहौर जिले की अधिक से अधिक चौड़ाई ४८ मील है। इस जिले का क्षेत्रफल २७३८ वर्ग मील है।

यह जिले में तीन तहसीलों में बटा हुआ है। उत्तर पूर्व की ओर लाहौर तहसील है। दक्षिण-पूर्व की ओर कसूर तहसील है। इन दोनों तहसीलों में जिले का आधे से कुछ अधिक भाग घिरा हुआ है। शेष भाग पश्चिम की ओर चुनियान तहसील में शामिल है। लाहौर तहसील का ४० मील से कुछ अधिक लम्बा भाग रावी नदी के तट को छूता है। कसूर तहसील का भी ४० मील लम्बा भाग दक्षिण की ओर सतलज के समीप स्थित है। चुनियान तहसील के उत्तर में ३० मील तक रावी और दक्षिण में इससे कुछ ही कम दूरी तक सतलज नदी बहती है। क्षेत्रफल में पंजाब प्रान्त भर में लाहौर का पन्द्रहवां स्थान है। पर जन संख्या में इस जिले का प्रथम स्थान है। कृषि की दृष्टि से इसका स्थान छठा है। इस जिले में समस्त प्रान्त का ३ प्रतिशत क्षेत्र फल, ४ प्रतिशत कृषि प्रदेश और ५ प्रतिशत जन संख्या है।

इस जिले में कोई पहाड़ी नहीं है। समस्त जिला मैदानी है। इसकी औसत ऊंचाई समुद्र तल से प्रायः ७०० फुट है।

इस जिले को दो प्राकृतिक भागों में बाँटा जा सकता है :—

(१) मध्यवर्तीय उच्च प्रदेश, (२) रावी और सतलज नदियों की घाटियों का उपजाऊ प्रदेश। इस जिले में पहाड़ियाँ बिल्कुल नहीं हैं।

मध्यवर्तीय उच्च प्रदेश—इस प्रदेश में जाट सिक्खों के निवास स्थान मांझा का मध्यवर्तीय और मुख्य भाग सम्मिलित है और यह पूरब में अमृतसर की सीमा से पश्चिम में मान्टगोमरी सीमा तक फैला हुआ है, लेकिन पूरब की अपेक्षा पश्चिम में यह पतला होता गया है। यहाँ की भूमि समतल है और ऊपरी बारी द्वाब नहर द्वारा यहाँ सिंचाई की जाती है। इस प्रदेश की भूमि शुष्क है। केवल अमृतसर सीमा के निकट कुछ भूमि नम और बलुही है। यहां के कुओं का पानी खारा होता है। वर्षा यहाँ बिल्कुल अनिश्चित है। इसलिये नहर द्वारा सिंचाई के प्रबन्ध के पूर्व यहाँ बहुत कम उपज होती थी और वह भी बहुत रद्दी प्रकार की। १९५४ में सेटिलमेंट अफसर ने जिले के इस भाग के सम्बन्ध में लिखा था कि यहाँ की जनसंख्या बहुत कम और तितरी-बितरी है और यहाँ मनुष्यों तथा जानवरों के लिए अच्छा पानी प्राप्त नहीं हो सकता। लेकिन अब इसके पूरे प्रदेश में नहरों और उनकी शाखाओं का जाल बिछ गया है और उनके द्वारा सिंचाई की जाती है। फलस्वरूप यहाँ नहरों में काम करने वाले बहुत से लोग बस गए हैं और अब यहाँ की पैदावार भी किसी भी स्थान की अपेक्षा खराब नहीं होती।

(२) निचले उपजाऊ प्रदेश—यह प्रदेश माँझा के दक्षिण में स्थिति है और इसे हितहार कहते हैं। हितहार शब्द 'हेत' से बना है जिसका अर्थ होता है 'निचला।' यह बियास नदी की घाटी थी जब कि वह सतलज नदी से अलग, इस जिले में से होकर बहती थी। इस नदी के मार्ग को अभी भी स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। कहीं-कहीं पर उन मार्गों पर बस्तियाँ दिखाई देती हैं। इन बस्तियों के अध्यन से पता चलता है कि नदी के बहाव में परिवर्तन होते ही लोग आसानी से हट कर निकट ही किसी के स्थान में बस जाया करते थे। हितहार प्रदेश की आबादी भी घनी है। इस भाग में कुओं तथा कहीं-कहीं पर नहरों की शाखाओं द्वारा सिंचाई की जाती है। नहरों की इन शाखाओं द्वारा सिंचाई केवल बाढ़ के दिनों में होती है। यहाँ की भूमि बहुत मुलायम है। इसलिये जोताई बहुत सरलता पूर्वक हो जाती है, लेकिन उसके बलुही होने के कारण उपज अच्छी नहीं होती। बहुत सा बलुहा प्रदेश बेकार पड़ा रहता है और वहाँ किसी भी प्रकार की उपज नहीं होती। नदियों के किनारों पर घने जंगल हैं जिन्हें सिरकाना कहते हैं। ये चरागाहों तथा अन्य बहुत से कामों के लिए बहुत उपयोगी हैं। यत्र तत्र बहुत से बड़े बड़े नालों और खंदारों से पुराने दिनों में नदियों और उनकी सहायक नदियों के मार्गों का पता लगता है।

रावी और सतलज नदियाँ

रावी नदी—रावी का अर्थ है सूर्य और यह 'रवि' का बिगड़ा हुआ रूप है। इसका उल्लेख वेदों में परुनी नाम से किया गया है और संस्कृत के आदि लेखकों ने अपनी अमर कृतियों में इस नदी का उल्लेख इरावती नाम से किया है। यह पंजाब की पांचों नदियों में सब से छोटी है। यह अनेकों स्थानों पर बहुत पतली हो जाती है और इसमें उतार चढ़ाव भी बहुत हैं, इसलिए नाव चलाने के लिये इसका उपयोग नहीं किया जा सकता। रावी नदी इस जिले में इकोगिल नामक गाँव से प्रवेश करती है। यह गाँव अमृतसर और लाहौर की सीमा पर स्थित है। ६३ मील इस जिले में बहने के पश्चात्, मान्टगोमरी सीमा के निकट आलपा कलान नामक गांव के निकट रावी नदी इस जिले से बाहर निकल जाती है। इस जिले में कहीं पर भी इस नदी में नाव चलाना सम्भव नहीं है। चाम्बा के जंगलों से देवदार के लट्ठे अवश्य लाहौर तक बहा कर लाए जाते हैं। लाहौर के निकट लगभग आधे मील के फासले पर इस नदी के ऊपर दो पुल बने हुये हैं। इनमें से एक रेलवे के लिये है और ग्रांडट्रंक रोड के लिये। दूसरा पुल सन् १९१५ में 'नावों के पुल' के स्थान पर बनाया गया था। अन्य स्थानों पर नदी पार करने के लिये नावों का उपयोग किया जाता है। लाहौर के बाहर बड़े बड़े बांध बना कर नदी के प्रवाह पर नियंत्रण रखा जाता है जिससे बाढ़ के कारण रेलवे लाइन को हानि न पहुँच सके। लाहौर के निकट, पहले इस नदी से बाढ़ के समय बहुत सी धाराएँ फूट निकलती थीं। अब बाँधों के द्वारा इसके प्रवाह को एक धारा में बहने के लिये बाध्य कर दिया जाता है। सिंचाई के लिए कहीं कहीं पर इसके पाट को चौड़ा और समतल भी बनाया गया है।

जाड़े के दिनों में रावी नदी का जल बहुत घट जाता है और अनेकों स्थानों पर इसे पैदल पार किया जा सकता है। बरसात के दिनों में किसी किसी वर्ष इसमें, विशेषकर इसके उत्तरी भाग में, बहुत बड़ी और भयंकर बाढ़ आती है और प्रवाह भी बहुत तेज हो जाता है। फल स्वरूप पास-पड़ोस की भूमि जलमग्न हो जाती है। यह अपने मार्ग भी बहुधा बदलती रहता है।

इस नदी की घाटी की अधिकतर भूमि खेती के काम में लाई जाती है। भूमि तल के अनुसार स्थान स्थान की मिट्टी विविध प्रकारों की है। ऊँची और नीची भूमि एक दूसरे के बाद लगातार मिलती हैं। निचली भूमि केवल उन स्थानों पर है जहाँ से यह नदी अथवा इसकी कोई सहायक नदी किसी काल में बहा करती थी। यहाँ पर चिकनी मिट्टी की कई तहें जम गई हैं, जिससे भूमि बहुत उपजाऊ हो गई है। लेकिन इस भूमि में लगातार सिंचाई होते रहना बहुत आवश्यक है, अन्यथा यह

कड़ी पड़ जाती है। इस भूमि में गेहूँ की उपज बहुत अच्छी होती है। अन्य स्थानों की भूमि भिन्न प्रकारों की है और नदी के तट पर भूमि का बहुत बड़ा भाग बलुई भूमि का है। इसमें कोई पैदावार नहीं हो पाती, लेकिन यहां घने जंगल हैं जिनका अनेकों प्रकार से उपयोग होता है।

सतलज नदी—इस नदी का भी उल्लेख वेदों में 'सतुद्री' या 'सतद्रू' नाम से मिलता है। जाड़े के दिनों में भी इस नदी का प्रवाह लगभग ५ मील प्रति घन्टा रहता है। और इसकी साधारण गहराई ४ फिट रहती है। कहा जाता है कि इसमें फीरोजपुर तक स्ट्रीमर चला करते थे। अब इन स्ट्रीमरों के स्थान पर रेलवे द्वारा यातायात होता है। गंडा सिंह वाला स्थान पर इस नदी के ऊपर सतलज सड़क तथा रेलवे के लिए पुल बने हुए हैं। इन पुलों को १८८७ में बनाया गया था। इसके पूर्व रेलवे पुल के स्थान पर नावों का एक पुल बना हुआ था और उसके द्वारा लोग नदी पार किया करते थे। सतलज नदी का पाट काफी चौड़ा है और इसका प्रवाह भी अपना मार्ग बदलता रहता है। इस नदी की सतह में बालू और मिट्टी मिश्रित अवस्था में मिलती है। बाढ़ के दिनों में नदी इस पदार्थ को तथा बहुत बड़ी मात्रा में बालू किनारे के मैदानों में ले जाकर बिछा देती है। इस कारण इसके किनारे की भूमि का गुण परिवर्तन होता रहता है। किसी वर्ष नदी द्वारा लाई गई बालू और मिट्टी भूमि की उपज शक्ति बहुत बढ़ा देती है और किसी वर्ष नदी अपने साथ बालू ही बालू लाती है। यह बालू भी कभी कभी वर्ष भर बाद उपजाऊ सिद्ध होती है। फिर भी सतलज के तट की अधिक भूमि उपज की दृष्टि से खराब है। बहुत बड़े भाग में लम्बे लम्बे जङ्गल फैले हुये हैं और उनमें कहीं पर भी खेती नहीं की जा सकती।

झील और नाले—इस जिले में झीलें बिल्कुल नहीं हैं। हां, दो नालों का अवश्य उल्लेख किया जा सकता है। इनके नाम हैं पट्टी नाला और हुदियारा नाला। इनमें वर्ष भर पानी रहता है और वर्षा के दिनों में काफी बड़ी बाढ़ भी आ जाती है। इनके किनारे के जङ्गल शिकार के लिये प्रसिद्ध हैं। गांवों के निकट कहीं कहीं पर बड़ी बड़ी गढ़इया मिलती हैं। इसका सिंचाई के लिये उपयोग नहीं किया जा सकता। इनमें धान की खेती भी नहीं की जा सकती। इसमें केवल सिंघाड़े उपजते हैं।

पेड़-पौधे और झाड़ियाँ—यहाँ के मुख्य जङ्गली पेड़ों में जन्द, केरील, वान और रेरू नामक वृक्ष हैं। झाड़ियों में मल्ला, कान्गू, आक और रेशम की झाड़ियों का उल्लेख किया जा सकता है। उपजाये जाने वाले पेड़ों में कीकर, शीशम, बेर, तूट और सिरीन उल्लेखनीय हैं। नीम और पीपल के पेड़ भी काफी पाये जाते हैं।

जङ्गली जानवर—यहाँ पाए जाने वाले जङ्गली जानवरों में केवल भेड़िए और सियार का नाम लिया जा सकता है। भेड़िये अधिकतर चूनियान तहसील के निचले प्रदेशों में पाए जाते हैं। सियार तो सभी कहीं देखने को मिल सकते हैं।

मछलियाँ—यहाँ कुछ २६ प्रकार की मछलियां पाई जाती हैं। इनमें से ११ प्रकार की मछलियां बाहर भेजी जाती हैं और शेष प्रकार की मछलियां केवल स्थानीय प्रयोग में आती हैं। बाहर भेजी जाने वाली मछलियों में रोहू, दई-कलबाऊ, मोरी, थैला और मुरार तथा चिलवा के नाम मुख्य हैं।

जलवायु, तापक्रम और वर्षा

जलवायु—उत्तर-पश्चिम भारत के जलवायु की भाँति लाहौर जिले के जलवायु में भी शीघ्र परिवर्तन होते रहते हैं। मध्य दिसम्बर से मध्य मार्च तक वायु बहुत नम और ठन्डी रहती है। थोड़ी-बहुत वर्षा भी कभी कभी हो जाती है। गर्मी के दिनों के बाद यहाँ आंधियाँ चलना आरम्भ होती है और फिर इन गर्म आंधियों का स्थान शीतल वायु के झोंके ले लेते हैं। इस प्रकार मौसम बदलते ही यहाँ के तापक्रम में शीघ्र परिवर्तन हो जाता है। इन्हीं दिनों रात में तापक्रम कभी कभी इतना कम हो जाता है कि कोहरा पड़ने लगता है।

गर्मी के दिनों में यहाँ बहुत तेज लू चलती है। गरमी भी यहाँ बहुत कड़ी पड़ती है। जून से यहाँ मानसूनी हवाओं का आगमन प्रारम्भ हो जाता है।

जून से आधे सितम्बर तक यहाँ वर्षा होती है। वर्षा काल के बाद, सितम्बर के अन्तिम दो महीनों में दिन में तापक्रम अधिक रहता है। इसके पश्चात हल्की हल्की ठन्डी हवाओं का वहना शुरू हो जाता है और फिर बड़े दिनों के बाद (दिसम्बर के अन्त या जनवरी के आरम्भ से) जाड़े की वर्षा आरम्भ हो जाती है।

तापक्रम—साधारणतः लाहौर का वार्षिक तापक्रम ७६ रहता है। जनवरी में जो कि सब से ठन्डा महीना होता है यहाँ का तापक्रम ५५ तक गिर जाता है और सब से अधिक गर्म महीने जून में यहाँ का तापक्रम ९१ तक चढ़ जाता है। दिन में यहाँ का वार्षिक औसत तापक्रम ८० रहता है। और रात में ६२°। अभी तक दिन में यहाँ का तापक्रम अधिक से अधिक १२० तक चढ़ा है और रात में कम से कम २९० तक नीचे गिरा है। वायु की वार्षिक सघनता ६७ प्रतिशत रहती है, लेकिन मई में यह ४२ प्रतिशत और दिसम्बर, जनवरी तथा फरवरी में लगभग ८० प्रतिशत हो जाती है।

वर्षा—सन १८५९ से १९११ तक लाहौर में २१ इंच की औसत वर्षा हुई थी। इसमें से १२.६३ इन्च वर्षा जुलाई से सितम्बर तक के वर्षा काल में हुई थी और अक्तूबर से दिसम्बर तक के मानसून से केवल १ इन्च वर्षा हुई थी। इससे यह पता लग जाता है कि गर्मी के दिनों में यहाँ अधिक वर्षा होती है और जाड़े के दिनों में केवल नाम मात्र की वर्षा होती है।

लाहौर का इतिहास

प्रारम्भिक इतिहास—लाहौर जिले के दो मुख्य नगरों, लाहौर और कसूर का इतिहास ही लाहौर जिले का इतिहास है। इस जिले के इतिहास को एक प्रकार से पंजाब का इतिहास कहा जा सकता है।

मुसलमानों के आक्रमणों के पूर्व इस जिले का इतिहास, सच पूछा जाय तो बहुत कम ज्ञात है। लेकिन मुसलमानों के साथ हिन्दुओं की लम्बी और लगातार लड़ाई में लाहौर के नरेशों और लाहौर की जनता का मुख्य स्थान रहा है।

लाहौर के नाम करण के सम्बंध में बहुत सी दन्त कथाएं प्रचलित हैं। प्रमुख प्रचलित दन्त कथा के अनुसार, इसका नाम राम के पुत्र लव के नाम पर पड़ा है।

लाहौर का प्राचीनतम उल्लेख हुआन सियाग द्वारा मिलता है। यह एक चीनी बौद्धिक दार्शनिक और इतिहासकार के रूप में प्रसिद्ध हैं। आप जलंधर जाते समय ६३० ई० में लाहौर आए थे। शहर का वर्णन करते हुए आपने लिखा है, लाहौर एक बहुत बड़ा शहर है जहाँ ब्राह्मणवाद का बोल बाला है।

दसवीं शताब्दी के अन्त तक लाहौर का शासन सूत्र ब्राह्मण राजाओं के हाँथ में रहा है। ९८८ ई० में जय पाल, जिनके हाथ में उस समय लाहौर का राज्य था, सुबुक्तगीन द्वारा बुरी तरह हराये गए। महमूद अपने पहले आक्रमण के बाद बीस वर्ष तक लाहौर नहीं गया। इस समय लाहौर कोई महत्वपूर्ण स्थान नहीं था। सन १०३४ में लाहौर पर मुल्तान के एक विद्रोही गवर्नर ने शासन जमा लिया था। लेकिन सन् १०३६ में गवर्नर निकाल दिया गया और लाहौर को गजनवी राज्य की राजधानी बना दिया गया। आठ गजनवी राजाओं के शासन काल तक लाहौर का शासन वायसरायों द्वारा होता रहा, लेकिन मसूद तृतीय (सन् १०९९ से १११४ तक) के शासनकाल में इसे साम्राज्य की राजधानी बना दिया गया। मसूद की मृत्यु के बाद लाहौर के गवर्नर मुहम्मद बहलिम ने बहराम शाह के विरुद्ध सन् १११९ में विद्रोह किया लेकिन उसे दबा दिया गया। सन् ११९३ में खुश्रूशाह ने लाहौर को पुनः राजधानी बनाया। सन् ११८१ में घोर के मुहम्मद ने विद्रोह किया और ११८६ में उसपर आधिपत्य स्थापित कर लिया। इस समय से लाहौर दिल्ली की केन्द्रीय सरकार का विद्रोही बना रहा।

सन् १२०६ में घोर के मुहम्मद की मृत्यु के बाद कुतुब उद्दीन ऐबक लाहौर का शासक हुआ। सन् १२१५ में मलदूज़ ने नासिर उद्दीन के हाथों से लाहौर का शासन सूत्र छीन लिया। लेकिन दूसरे ही वर्ष अल्तमश ने उसे हरा दिया और सन् १२१७

में स्वयं लाहौर का शासक बन गया। इसके बाद सन् १२३६ और १२३८ में लाहौर के दो गवर्नरों ने विद्रोह किया, लेकिन दोनों दबा दिये गए।

मुगल शासन काल

इस काल के बाद लगभग एक शताब्दी तक लाहौर को मुगलों के लगातार आक्रमणों का शिकार बनना पड़ा। मुगलों ने इसे सन् १२४१ में जीता। सन् १२७० में बलबन ने शहर का पुनर्निर्माण किया, लेकिन १२८५ में जब मुगल लौट कर फिर आए तो उन्होंने बलबन पुत्र, मुहम्मद को रावी तट पर मार डाला। मुहम्मद के पुत्र काई खुशरू को उसके स्थान पर गवर्नर बनाया गया लेकिन १२८७ में वह भी कत्ल कर दिया गया।

सन १३९८ में तिमूर की सेना ने लाहौर को पददलित किया और सन १४२२ तक वह वीरान पड़ा रहा। इसी सन् में मुबारकशाह ने इसका पुनर्निर्माण किया। जसरथ खोखर ने उसी वर्ष तथा सन् १४३१ और सन् १४३२ में लाहौर पर आक्रमण किया लेकिन उसे सफलता नहीं मिली। सन् १४३३ में शेख अली ने शहर पर आधिपत्य स्थापित कर लिया लेकिन तत्काल ही उसे आत्म समर्पण करना पड़ा। इसके बाद कुछ काल तक लाहौर में थोड़ी बहुत शन्ति रही और बाबर की सेना ने सन् १५२४ में शहर को लूटा।

अब लाहौर में भी, उत्तरी भारत की भाँति मुगल शासन आरम्भ हुआ। हिमायूं और शेरशाह के युद्ध के समय लाहौर मुगलों का सैनिक केन्द्र था। सन् १५५५ में हिमायूं ने लाहौर में प्रवेश किया और वहाँ के गवर्नर द्वारा उनका स्वागत किया गया। अकबर के समय में उनके छोटे भाई हकीम ने दो बार विद्रोह किया लेकिन वे दोनों बार हरा दिये गए। दूसरी बार सन् १५८१ में स्वयं अकबर ने हराया था। सन् १५८४ से सन् १५९८ तक अकबर ने लाहौर में अपनी अदालत किया और यहां पर पुर्तगाली, अंग्रेज तथा अन्य देशों के लोग उससे मिलने आया करते थे।

जहाँगीर के समय में सन् १६०५ ई० में खुशरू आगरा जेल से भाग निकले और उन्होंने लाहौर के बाह्य भाग में आधिपत्य स्थापित कर लिया, लेकिन बाद में वे हरा दिये गये और उनके साथियों की बड़ी क्रूरता के साथ हत्या की गई। गुरु अर्जुन भी इसी विद्रोह में पकड़े गए और जेल में उनकी मृत्यु हो गई। जहाँगीर की सन् १६२७ में मृत्यु हुई और उनकी इच्छानुसार उनकी पत्नी नूरजहाँ के बाग में उनको दफनाया गया। नूरजहां ने शाहदारा में उनका मकबरा बनवाया। अकबर जहाँगीर और शाहजहाँ की मृत्युओं के बाद लाहौर में कई विद्रोह हुए लेकिन उन सब को दबा दिया गया।

औरंगजेब के समय में लाहौर का देश की राजनीतिक घटनाओं से बहुत कम सम्बन्ध रहा क्योंकि औरंगजेब दक्षिण में मराठों और राजपूताना में राजपूतों के विद्रोहों को दबाने में लगा रहा। मुगल साम्राज्य के कमजोर होने का लाहौर पर बहुत बड़ा प्रभाव पड़ा। यहाँ के गवर्नरों का शासन दिनोंदिन खराब होता गया जिसके फलस्वरूप सिक्ख विद्रोह का प्रादुर्भाव हुआ।

सिक्ख धर्म का प्रारम्भ हिन्दू राज्य की पुर्नस्थापना के लिए किया गया। जहाँगीर के समय सेयंह धर्म खूब जोरों से बढ़ा। गुरु नानक के चौथे उत्तराधिकारी गुरु अर्जुन ने इस धर्म के अनुयायियों में लड़ने की जोरदार प्रवृति भर दी। औरंगजेब की मृत्यु के पश्चात् सिक्खों ने, जिन्हें शताब्दियों से गुलाम रक्खा गया, विद्रोह कर दिया। इस विद्रोह का नेतृत्व बंदा ने किया था। औरंगजेब का पुत्र और उत्तराधिकारी, बहादुरशाह कुछ सेना लेकर इस विद्रोह को कुचलने के लिए लाहौर की ओर बढ़ा, लेकिन सफलता प्राप्त करने के पहले ही उसकी मृत्यु हो गई। उसकी मृत्यु के बाद अब्दुस समद खां गद्दी पर बैठा और उसने विद्रोह का दमन किया और बंदा कैद कर लिया गया। इसके बाद बीस वर्ष तक समद खां के पुत्र जकरिया खां ने लाहौर पर निरद्वन्द शासन किया।

अहमद शाह दुर्रानी ने सन् १७४८ में लाहौर पर आक्रमण किया, जिसमें उसे सफलता प्राप्त हुई। इस आक्रमण के बाद वहाँ के गवर्नर मीर मान की विधवा के हाथ में शासन सूत्र सौंपा गया। वजीर द्वारा उसके अपहरण किए जाने पर अहमद

शाह दुर्रानी ने सन् १७५५ में पुनः आक्रमण किया। लाहौर को पुनः जीतने के बाद इस बार उसे तिमूर के आधीन रक्खा गया। तिमूर के ही हाथों से जस्सा सिंह के नेतृत्व में सिक्खों ने लाहौर को जीता। इनको सन १७५८ में मराठों ने हराया और उन्होंने अदीना बेग को वहाँ का गवर्नर नियुक्त किया। कुछ ही महीनों बाद उसकी मृत्यु हो गई। इसी समय सन १७६१ में अहमद शाह ने पानीपत के मैदान में विजय प्राप्त की और उसके फलस्वरूप यहाँ भी मराठों का शासन समाप्त हो गया सिक्खों ने इस समय पुनः अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया, लेकिन दूसरे ही वर्ष वे भयंकर हत्याकांड के पश्चात् हराए गए और काबुली माल लाहौर का गवर्नर नियुक्त किया गया। सिक्ख विद्रोह समाप्त नहीं हुआ था और अहमद शाह के सातवें आक्रमण के बाद उन्होंने अपना राज्य स्थापित कर लिया। इसके बाद तीस वर्षों तक (सन १७६७ सन् १७९७ तक) उन्होंने पूर्ण शान्ति के साथ शासन किया। सन १७९७ में शाहजमन ने लाहौर जीत लिया लेकिन उसने बाद में रणजीत सिंह को लाहौर का प्रधान बना दिया। रणजीत सिंह के शासनकाल में लाहौर पुनः हरा भरा हो गया, किन्तु उनके बाद अनेकों लड़ाइयों के पश्चात् अंग्रेजों ने लाहौर पर अपना शासन स्थापित कर लिया और अभी तक वह भी शेष भारत की भांति उनके आधीन है।

कसूर नगर—प्रचलित दन्त कथाओं के अनुसार यह नगर राम के पुत्र कुश ने बसाया था, जिस प्रकार लव ने लाहौर नगर बसाया था। यह नगर भी बहुत प्राचीन है और सातवीं शताब्दी ई० सं० में चीनी वैद्य और इतिहासज्ञ हुआनसांग इस नगर को देखने भी गए थे। लेकिन मुगल काल से पूर्व इतिहास में इस नगर का उल्लेख नहीं मिलता है। मुगल यहाँ पर बाबर अथवा उसके पौत्र अकबर के समय में आए थे और उन्होंने सतलज के दोनों तटों पर इस नगर का विस्तार किया था। जब सिक्खों को राजशक्ति प्राप्त हुई तो उन्हें कसूर के पठानों के कारण बहुत सी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। उन्होंने प्रथम बार सन १७६३ में इस नगर पर आक्रमण किया था और सन १७७० में दूसरी बार आक्रमण करके उन्होंने इस नगर पर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया था। इस नगर पर सिक्खों का आधिपत्य अधिक काल तक स्थापित न रह सका और सन १७९४ में यहां के पठानों ने पुनः अपनी स्वतंत्रता प्राप्त कर ली। सन १८०७ में पठानों के सरदार कुतुबउद्दीन खाँ को रणजीत सिंह के सामने घुटने टेक देने पड़े और वह नगर छोड़ कर सतलज नदी के आगे ममदोत में जाकर रहने लगा। इस समय यह नगर लाहौर राज्य में मिला लिया गया।

सन् १८५७ का गदर—सन् १८५७ के गदर में लाहौर ने अभूतपूर्व वीरता का परिचय दिया था। यह अंग्रेजों का बहुत बड़ा सैनिक केन्द्र था और यहाँ के भीषण राज विद्रोह ने अंग्रेजों के पैर करीब करीब उखाड़ दिए थे। देश में अंग्रेजी शासन होने के कारण गदर की घटनाओं का विस्तृत और सच्चा वर्णन अप्राप्त है। लेकिन सरकारी मत का कहना है कि सीमा प्रान्त और लाहौर से उनके पैर उखड़ गये हैं और वहाँ के सरकारी अंग्रेज अफसरों का जीवन खतरे में था। मियाँ मीर नामक स्थान पर स्थिति फौजों के हथियार छीन लिए गए थे। स्वयं अंग्रेजों का कहना है कि इस प्रकार से उन्होंने राजद्रोह की, एक बड़ी योजना को नाकाम कर दिया। अन्यथा लाहौर और सीमाप्रान्त से अंग्रेजों को अपना आधिपत्य खो बैठना पड़ता, तमाम अंग्रेज अफसरों का अन्त हो जाता और दिल्ली अर्थात् समस्त भारत पर से अंग्रेजों को अपना आधिपत्य खोना पड़ता।

गदर सफल अवश्य नहीं हुआ, लेकिन इसमें संदेह नहीं कि भारतीय सैनिकों के देश प्रेम और वीरता के इस अद्वितीय प्रदर्शन से अंग्रेजों के हृदय कांप उठे थे और उन्होंने अनुभव कर लिया था कि इस देश पर अधिक दिनों तक शासन कर सकना सम्भव नहीं है। गदर के समय में सारे लाहौर में विद्रोह की आग भड़की हुई थी और अंग्रेजों को कदम कदम पर लोहे के चने चबाने पड़े।

लाहौर की जन संख्या

लाहौर जिले में तीन तहसीलें हैं—(१) लाहौर, (२) चूनियान, (३) कसूर। लाहौर तहसील की

न संख्या प्रति वर्ग मील ६३८, चूनियान की
,४० और कसूर की ३५६ है। लाहौर शहर की
न संख्या ७,८१६ है।

लाहौर जिले में कुल १,१९४ गाँव हैं और
नकी कुल जन संख्या ७५८,२२६ है। पूरे जिले
की जन संख्या के ७२·२२ प्रतिशत लोग गाँवों में
रहते हैं।

इस जिले की जन संख्या विभिन्न वर्षों में
निम्न प्रकार रही है :—

सन् १८८१ में ९२४,१०६
सन् १८९१ में १०७५,३७९
सन् १९०१ में १,१६२,१०९
सन् १९११ में १,०३६,१५८

यहाँ मर्दों की अपेक्षा स्त्रियों की जन संख्या
कम है और पिछले दस-पन्द्रह वर्षों में यह कमी
बढ़ती ही गई है। स्त्रियों की पैदाइश में भी कमी
रही है और मृत्यु संख्या की भी अधिकता रही है।

व्याह इत्यादि—यहाँ छोटी अवस्था में ही
विवाह कर देने की प्रथा रही है, लेकिन अब इस
प्रथा में बहुत कमी है। लाहौर शहर के लोग
अधिकतर शहर के लोगों में ही विवाह करते हैं।
विवाह अधिकतर लोग अपनी ही जाति में करते
हैं। लेकिन शहर में गाँवों की अपेक्षा यह कट्टरपन
कम है और यहाँ अन्तर्जातीय विवाह भी होते हैं।
दूसरे प्रान्तों और कभी कभी तो विदेशियों के साथ
भी विवाह हुये हैं। विधवा विवाह की प्रचलन यहां
नहीं है। शहर में अलबत्ता कभी कभी विधवा
विवाह भी हो जाते हैं। जाटों में अवश्य विधवा
विवाह की प्रथा है। गांवों में भी उनके बीच यह
प्रथा प्रचलित है और विधवा को अनिवार्य रूप से
अपने पति के छोटे भाई अथवा उसी कुटुम्ब के
किसी व्यक्ति, जो उसी स्वामी की सम्पत्ति का
उत्तराधिकारी, के साथ अनिवार्य रूप से विवाह
करना पड़ता है।

भाषा—यहाँ की अधिकांश जनता उर्दू बोलती
है लेकिन हिन्दी का जोर दिनोंदिन बढ़ता जा रहा
है। हिन्दी के प्रभाव के आरम्भ उर्दू बोलने वालों
की भाषा को शुद्ध उर्दू नहीं कहा जा सकता। सच
कहा जाय तो हिन्दू-उर्दू मिश्रत, अर्थात् हिन्दुस्तानी
है। हिन्दी पढ़ने का शौक दिनोंदिन बढ़ता जा
रहा है। आजकल विशेष रूप से हिन्दी बढ़ी है।
पश्तो भी यहां के कुछ लोग बोलते हैं। ये अफगा-
निस्तान और सीमा प्रान्त से आये हुए लोग हैं।
शहर में अंग्रेजी जानने वाले भी बहुत बड़ी संख्या
में हैं।

जातियाँ—यहाँ सबसे अधिक जनसंख्या जाटों
की है। जाट जाति में भी कई उपजातियाँ हैं।
इसके अतिरिक्त इस जाति में हिन्दू, सिक्ख और
मुस्लिम, तीनों धर्म के अनुयायी हैं, किन्तु हिन्दुओं
की संख्या सब से अधिक है। ये लोग अधिकतर
खेती करते हैं, किन्तु ये अपनी वीरता के लिए
अधिक प्रसिद्ध हैं और बहुत बड़ी संख्या में जाट
नवयुवक फौज में भर्ती भी हैं।

जाटों के बाद राजपूतों का नम्बर आता है।
इनकी संख्या भी बहुत बड़ी है। ये सब मुस्लिम
धर्म के अनुयायी हैं।

जाटों और राजपूतों के अतिरिक्त यहां की
उल्लेखनीय जातियाँ डोगर, कम्बोह, गुज्जार, मह-
ताम, लवाना, मुगल, खोजह और खत्री हैं। निम्न-
श्रेणी की जातियों में चुहरा, मोची, जुलाहा, मांछी,
भीनवार, लोहार, तरखान (बढ़ई) और कुम्हार हैं।

कृषि, नहरें और उद्योग धंधे

कृषि—इस जिले की भूमि के ६६ प्रतिशत भाग
पर खेती की जाती है, ४ प्रतिशत भूमि पर सरकारी
जंगल हैं, १७ प्रतिशत भूमि खेती के योग्य होते
हुये भी बेकार है और १० प्रतिशत भूमि खेती करने
योग्य नहीं है।

इस जिले की मुख्य उपज गेहूँ, चना, ज्वार
और जव है।

गेहूँ—गेहूँ यहां की मुख्य उपज है। केवल
भारत में ही नहीं बल्कि विदेशों में भी पंजाब का
गेहूँ प्रसिद्ध है। यहाँ विशेषतौर से चार प्रकार का
गेहूँ होता है :—

(धोनी), (२) दूधी, (३) लाल किसार
आनवाली, और (४) खवर। धोनी गेहूँ भी दो
प्रकार का होता है।

गेहूँ के लिए छः या सात बार भूमि जोतने की

आवश्यकता होती है। किसानों को इतनी बार भूमि जोतने का समय नहीं मिल पाता, किन्तु भूमि इतनी उपजाऊ है कि उनके ३ या ४ बार जोतने से ही अच्छी फसल हो जाती है।

चना—गेहूँ के बाद यहाँ की मुख्य उपजों में चना का नम्बर आता है। यह चना भी तीन प्रकार का होता है, लाल, काला और पीला। पीला चना दाल बनाने के लिए सब से अच्छा समझा जाता है। लाल चना अधिकतर घोड़ों के खिलाने के काम आता है। चना की खेती में दिनों दिन विकास हुआ है और नहरों से सींचीं जानेवाली भूमि पर भी खूब जोरों से चने की खेती की जाती है।

मक्का—मक्का यहां तीन प्रकार का होता है:— ब्रावन, सुफेदा और कुंग। ब्रावन मक्का अमेरिकन नस्ल का है और लोगों का कहना है कि यह जलंधर से लाकर यहाँ बोया गया था।

मक्का की खेती अधिकतर नदियों की बाढ़ वाली भूमि पर की जाती है। नहरों से सींची जाने वाली भूमि पर इसकी फसल अच्छी नहीं होती है। कुओं से सींची जाने वाली भूमि में अवश्य, नहरों से सींची जाने वाली भूमि की अपेक्षा इसकी फसल अच्छी होती है। इसकी फसल अधिक पानी से खराब हो जाती है, इसलिए यह अधिकतर अगस्त के आरम्भ में बोई जाती है।

चावल—चावल अधिकतर नहरों वाली भूमि में उपजाया जाता है। कुँओं से सींचकर चावल की खेती नहीं हो पाती। केवल कुछ भागों को छोड़कर जहाँ की भूमि बहुत अच्छी और नम्र है, चावल की खेती के लिए खाद देने की आवश्यकता पड़ती है।

जौ—जौ कड़ी भूमि पर भी थोड़ी सी सिंचाई से उपजाया जा सकता है। इसलिए खराब भूमि पर भी जहाँ पानी प्राप्त हो सकता, इसकी खेती की जाती है। अच्छी भूमि पर लोग गेहूँ या चावल की ही खेती करते हैं। केवल ऐसी भूमि पर जहाँ गेहूँ और चावल उपजाया नहीं जा सकता, लोग जौ की खेती करते हैं। इसकी खेती अधिकतर कुओं से सिंचाई कर के ही की जाती है।

ज्वार—ज्वार की खेती सिंचाई वाली और गैर सिंचाई वाली, दोनों प्रकार की भूमि पर की जाती है। इसकी खेती अधिकतर जानवरों के चारे के लिए की जाती है। अच्छी फसल का ज्वार खाने के लिए काम में लिया जाता है। फसल के खराब हो जाने पर ऊपर की अच्छी अच्छी बालियाँ खाने के उपयोग के लिए काट ली जाती हैं, शेष चौपायों को खिलाने के उपयोग में लाया जाता है।

दालें—यहाँ दालों की अधिक खेती नहीं होती। इसकी फसलें अधिकतर चारा पैदा करने के लिए बोई जाती हैं। यहाँ उपजायी जाने वाली दालों में मोथ और माश मुख्य। मूँग की खेती यहाँ बहुत कम होती है। मूथ, माश और मूँग खरीफ की फसलों में बोई जाती है। केवल मसूर रबी की फसल में बोई जाती है।

कपास—कपास की फसल सरलता से पैदा की जा सकती है। साधारण वर्षा से भी इसकी अच्छी फसल हो जाती है और इसकी खेती में लाभ भी अधिक है। कपास भी कई प्रकार की होती है और तिल्लर प्रकार की कपास अधिक बिकती है। लेकिन, लोगों का विचार है कि देशी कपास का कपड़ा अधिक मजबूत होता है। तीसरी प्रकार की कपास, नरमान बहुत कम बिकती है। कपास की खेती अधिकतर सिंचाई वाली भूमि में ही की जाती है। गैर सिंचाई वाली भूमि में इसकी फसल अनिश्चित होती है। सिंचाई वाले प्रदेशों में पहली मई से १५ अप्रैल तक कपास बोई जाती है। इन फसलों के लिए भूमि को अच्छी तरह से जोतना पड़ता है। खाद की इन फसलों के लिये आवश्यकता नहीं पड़ती।

गन्ना—गन्ना की खेती इस प्रदेश में नहीं के बराबर है, क्योंकि इसकी फसल के लिए पूरे वर्ष की आवश्यकता पड़ती है। इस कारण से इसमें खर्च भी अधिक पड़ता है और मेहनत भी अधिक लगती है।

नहरें

पंजाब की भाँति इस जिले में अधिकतर सिंचाई नहरों द्वारा होती है। नहरों में भी दिनोंदिन

विकास हुआ है। सन् १८९२-९३ में ३२६,६९२ एकड़ भूमि नहरों द्वारा सींची जाती थी, लेकिन सन् १९१४--१५ में ८६५,४४८ एकड़ भूमि नहरों द्वारा सींची जाने लगी थी।

इस जिले में चार प्रकार की नहरों द्वारा सिंचाई की जाती है :—(१) ऊपरी बारी द्वाब (२) निचला बारी द्वाब (३) ऊपरी चेनाब (४) ऊपरी सतलज प्रखमाला।

उद्योग-धन्धे

लाहौर की दस्तकारियों का भी लगभग विनाश हो चुका है। थोड़ी बहुत दस्तकारी अभी भी होती है। ऊनी और सूती कपड़े बनाने वाले, शीशे का सामान बनाने वाले, लकड़ी पर सुन्दर कारीगरी करने वाले और कांसे का सामान बनाने वाले अब दिखाई भी नहीं पड़ते। देश में बड़ी बड़ी मशीनों और कलकारखानों तथा विदेशी माल ने उनका रोजगार खतम कर दिया है।

सूती सामान - सूती सामान बनाने वाले कारीगरों की संख्या लाहौर जिले में सन् १९११ में चालीस हजार थी। लेकिन इस संख्या में दिनों दिन कमी होती गई है। करघे के कपड़े का स्थान विदेशी सामान ने ले लिया है। गांवों में अभी करघे चलाने वाले थोड़े बहुत हैं लेकिन उनकी दशा बहुत खराब है।

ऊनी सामान—लाहौर किसी समय में अपने ऊनी कपड़ों के लिये प्रसिद्ध था। यहाँ के ऊनी कपड़े दूर दूर के देशों में भेजे जाते थे। इसका कारण यह है कि यहाँ भेड़ें बहुत पाली जाती हैं और उनसे ऊन निकाला जाता है। मशीन और बड़े बड़े कल कारखानों ने उनकी दस्तकारी भी चौपट कर दी है। अब केवल थोड़े से लोग बचे हैं जो हाँथ से ऊनी कपड़ा बना कर वेचते हैं। यह कपड़ा पुराने रिवाज का होता है। ऊनी दस्तकारी का स्थान बड़ी मशीनों ने ले लिया है और लाहौर अभी भी अपने ऊनी कपड़ों के लिए प्रसिद्ध है, किन्तु यह कपड़ा अब मशीनों द्वारा बना होता है।

सिल्क—सिल्क या रेशमी कपड़े चद्दरें अधिकतर चीन से आते हैं। इस कपड़े को बनाने के कुछ प्रयत्न भी किए गए हैं।

बड़े बड़े कल कारखाने—यहाँ अब अनेकों बड़े बड़े कल-कारखाने खुल गए हैं। इनमें सूती और ऊनी कपड़ा बनाने के कारखाने भी हैं, लेकिन सब से अधिक महत्वपूर्ण ऊनी कपड़े के कारखाने हैं। इसके अतिरिक्त धर्म कारखाने आटे की बड़ी बड़ी चक्कियाँ आदि भी हैं।

मुख्य तथा देखने योग्य स्थान

लाहौर शहर स्वयं एक देखने योग्य स्थान है। नए प्रकार के बने हुये भव्य और सुन्दर, ऊँचे ऊँचे भवन, लम्बी-चौड़ी सड़कें, मोटरें, गाड़ियां और ट्रामों का भरमार। इसके अतिरिक्त मुगल युग की इमारतें इसकी शोभा बढ़ाने में योग देती हैं। औरंगजेब द्वारा निर्मित मस्जिद बहुत सुन्दर है। यह सफेद संगमरमर से बनाई गई है और इस पर की गई साधारण कारीगरी बहुत सुन्दर है। रणजीत सिंह का मकबरा भी देखने योग्य है। इसके अतिरिक्त अनेक प्राचीन भवन देखने योग्य हैं। लाहौर में सुन्दर बाग-बगीचे भी बहुत हैं।

अजायबघर—यह अजायबघर सन् १८८७ में पूरे पंजाब प्रान्त से चन्दा एकत्रित करके बनाया गया था। यहाँ अनेक पुरानी चीजें और दस्तकारी के काम देखने को मिलते हैं। इसमें एक भाषण-भवन (लेकचर हाल) भी है जो विशेष रूप से शिक्षा सम्बन्धी भाषण देने के काम में लाया जाता है।

लाहौर का किला—यह किला बहुत बड़ा और विस्तृत है। इसे अकबर ने बनवाना आरम्भ किया था। उनके बाद जहाँगीर, शाहजहाँ; औरंगजेब और सिक्खों ने इसे बढ़ाने में योग दिया था। अकबर द्वारा बनवाया गया अकबरी महल अभी भी मौजूद है। इस महल की दीवालों पर अनेकों प्रकार के चित्र बने हुए हैं। ये चित्र सादे और सुन्दर हैं। फारसी भाषा में अनेक शेर भी स्थान स्थान पर खुदे हुए हैं। अकबरी महल के बाद इस महल का मुख्य स्थान 'अर्ज बेगी' है जहाँ बड़े बड़े ओमरा (राज्य के प्रतिष्ठित लोग) सम्राट की आज्ञा सुनने के लिए एकत्रित हुआ करते थे। यहाँ दीवने आम भी देखने योग्य है। इसमें

बादशाह अपने दरबार किया करते हैं। शाहजहाँ का तख्त भी यहाँ देखने को मिलता है। यह तख्त दीवाने आम के बीचो बीच रखा हुआ है।

ऊपरी मंजिल में, 'अर्ज बेग' के ठीक ऊपर, शाहजहाँ का ख्वाबगाह है। यहाँ बादशाह सोया करते थे। पश्चिम की ओर जाने पर मोती मस्जिद है। यह दीवारों से अच्छी तरह ढकी हुई है। बादशाह की बेगमें यहां नमाज पढ़ा करती थीं।

यहां की एक और मुख्य देखने योग्य चीज शीश महल है। यह रंग बिरंगे शीशों से बनाया गया है और प्राचीन युग की कारीगरी का अभूत पूर्व परिचय है। इसे शाहजहाँ और उनके बाद औरंगजेब ने बनवाया था। सिक्खों ने भी इसमें कुछ चीजें बढ़ाई हैं।

जामा मस्जिद—जामा मस्जिद लाहौर की देखने योग्य इमारत है। मीलों दूर से इसकी स्वच्छ, श्वेत, ऊँची मीनारें दिखाई पड़ने लगती हैं। फाटक पर खुदे हुए शब्दों से ज्ञात होता है कि इसे औरंगजेब ने बनवाया था। यह लाहौर के किले की तरह नहीं बना हुआ है, लेकिन दूर से यह उसी प्रकार की इमारत लगती है। प्राचीन कारीगरी का यह दूसरा बहुत बड़ा नमूना है।

शाहदारा बाग—यहाँ पर नूर जहाँ ने अपने पति शाहजहाँ की कब्र बनवाई थी। कब्र के चारों ओर यह बाग बना हुआ है। कब्र की इमारत पर फारसी में अनेक शेर खुदे हुए हैं।

शालीमार बाग—इस बाग को सन १६६७ ई० में शाहजहाँ ने बनवाया था। इस बाग के ७ भाग थे लेकिन उनमें से ४ समाप्त हो गए हैं। इस बाग को लोग स्वर्ग कहा करते थे। सचमुच यह बहुत ही सुन्दर है।

अमृतसर

१—ज़िला

अमृतसर का जिला अमृतसर कमिश्नरी के तीन जिलों में सबसे दक्षिण वाला है। यह ३१°१०' और ३२°१३' उत्तर अक्षांश, तथा ७४°२४' व ७५°२७' पूर्वीय देशान्तर के मध्य में स्थित है। इसकी लम्बाई, रावी पर इसके उत्तरतम विन्दु से, बियास और सतलज के संगम के समीप के दक्षिणी विस्तार तक, ६१ मील है, जब कि इसकी पूर्व से पश्चिम को सबसे अधिक चौड़ाई ५४ मील है। उत्तर-पश्चिम में रावी नदी इसकी सीमा बनाती है जो इसे स्यालकोट से अलग करती है, उत्तर-पूर्व में गुरदासपुर जिला है, दक्षिण-पूर्व में बियास नदी कपूरथला की रियासत से अलग करती है, और दक्षिण-पश्चिम में लाहौर का जिला है। यह तीन तहसीलों में विभक्त है. जिनमें से अजनाला की तहसील रावी नदी के किनारे-किनारे जिले का सारा पश्चिमी भाग बनाती है; जब कि बाक़ी हिस्से में अमृसर की तहसील उत्तरी तथा तरण-तारण की तहसील दक्षिणी भाग बनाती हैं।

अगले पृष्ठ पर सूची नं० १ में जिले और तहसीलों के विषय में कुछ मुख्य चीजें दिखाई गई हैं। जिले भर में १०,००० से अधिक निवासियों का केवल एक क़स्बा है जिसका नाम अमृतसर है और जिसकी जन संख्या १,६०,२१८ है। जिले के शासन के दफ्तर अमृतसर में हैं, जो जिले के केन्द्र में हैं

सूची नं० १ [मुख्य चीज़ों का प्रदर्शन]

१	२	३	४	५
विवरण	ज़िला	तहसीलों का विवरण		
		अमृतसर	तरणतारण	अजनाला
कुल वर्ग मील (१८८१)	१,५७४	५५०	५९६	४२८
काश्त होने वाली वर्ग मील (१८७८) ...	१,१९८	४४४	४९१	२६३
काश्त होने योग्य वर्ग मील (१८७८) ...	१६३	३१	४९	८३
सिंचाई दार वर्ग मील (१८७८)	३८०	१३३	१४४	१०३
फ़सलों के औसत वर्ग मील (१८७७-८१) ...	१,०६६	३०७	५११	२४८
इञ्चों में वर्ष की वर्षा (१८६६ से ८२) ...	२७,०	२७,०	२४,२	२१,६
बसे हुए क़स्बों और गांवों की संख्या (८१) ...	१,०३९	४७२	३४३	२२४
कुल जन संख्या (१८८१)	८९३,२६६	४३०,४१८	२६१,७७६	२०१,०७२
ग्रामीण जन संख्या (१८८१)	७०५,३६७	२६०,८३३	२४७,८६०	१९६,६७४
नागरिक जन संख्या (१८८१)	१८७,८९९	१६९,५८५	१३,९१६	४,३९८
कुल जन संख्या प्रति वर्ग मील (१८८१)	५६७	७८३	४४०	४७०
ग्रामीण जन संख्या प्रति वर्ग मील (१८८१) ...	४४८	४७५	४१६	४६०
हिन्दू (१८८१)	२६२,५३१	१४९,२७९	६५,१५६	४८,०९६
सिक्ख (१८८१)	२१६,३३७	८८,१२५	९१,९५७	३६,२५५
जैन (१८८१)	३१२	३१२	...	...
मुसलमान (१८८१)	४१३,२०७	१९१,८३०	१०४,५५६	११६,८२१
औसत वार्षिक ज़मीन की मालगुज़ारी (१८७७-८१*)...	८६९,८७४	३८१,२२०	२८०,६३६	२०८,०१८
औसत वार्षिक अन्य मालगुज़ारी (७७-८१)† ...	१,२२२,८०४	...	....	...

*निश्चित, परिवर्तित, तथा विविध विषयक। †ज़मीन, कर, स्थानीय दर, शराब, और टिकट।

और जहाँ से सिन्ध, पञ्जाब और दिल्ली को रेलें जाती हैं। प्रान्त के ३२ ज़िलों में क्षेत्रफल के अनुसार तथा जन संख्या के अनुसार अमृतसर का क्रमशः अट्ठाइसवाँ तथा पाँचवाँ नम्बर है। कुल क्षेत्रफल का १·४८ प्रतिशत इसमें है, व कुल जन संख्या की ४·७४ प्रतिशत यहाँ है, और ब्रिटिश राज्य की नागरिक जनसंख्या की ०·७० प्रतिशत है। मुख्य स्थानों के अक्षांश, देशान्तर, और समुद्र से ऊँचाई (फ़ीटों में) नीचे दिये गये हैं :—

क़स्बा	उत्तरी अक्षांश	पूर्वीय देशान्तर	समुद्रतल से उच्चता
अमृतसर ...	३१°३७′	७४°५५′	७५६
अजनाला ...	३१°५१′	७४°४८′	७५०*
तरण तारण	३१°२८′	७४°५८′	७००*

* लगभग।

यह ज़िला ब्यास और रावी नदियों के बीच

स्थित बाड़ी दोआब के किनारे-किनारे फैला हुआ लम्बा प्रदेश है। यात्री की दृष्टि में यह न दिखाई देने वाला धरातल, पहाड़ी अथवा घाटी से अविभक्त, दिखाई पड़ेगा, परन्तु वास्तव में इसका धीमा ढाल व्यास से रावी की ओर को है, इस सत्य की प्रमाणिकता यही है कि जल के तल में बहुत से परिवर्तन हैं। ऊँची-भूमि में, व्यास के तट के लगे-लगे, कुएँ पचास फ़ीट से अधिक गहरे हैं, जब कि रावी की तरफ़ पानी धरातल से २० फ़ीट से कम की गहराई पर ही मिल जाता है। दोआब के दूसरे ज़िलों की तरह, अमृतसर का ढाल थोड़ा-थोड़ा पहाड़ियों की ओर से भी है, अर्थात् उत्तर-पूर्व से दक्षिण-पश्चिम को। किन्तु तल में ये परिवर्तन निश्चित तभी हो सकते हैं जब वैज्ञानिक जाँच की जाय, और देखने में तो अमृतसर बिल्कुल एकसार मैदान लगता है।

व्यास नदी का पश्चिमी तट ऊँचा और सीधा खड़ा हुआ है, प्रायः नदी के औसत तल से ६० फ़ीट ऊँचा है। इस तट के नीचे भिन्न चौड़ाई वाला एक टुकड़ा, उपजाऊ अथवा खादर भूमि का है जो प्रतिवर्ष बाढ़ के अनुसार बदलता रहता है। सौ वर्ष पूर्व, कहा जाता है कि नदी हमीरा के गांव के नीचे से, कपूरथला प्रदेश में बहती थी, अर्थात् अपने आधुनिक मार्ग से सात मील दूर, और इस दिशा में इसकी तलियों के चिन्ह स्पष्टतया देखे जा सकने योग्य हैं, आजकल, नियमानुसार, धारा इस जिले में होती हुई अपने मार्ग भर में ऊँचे पश्चिमी तट के बिल्कुल किनारे-किनारे जाती है। यहां-वहाँ, खादर शायद एक मील चौड़ा है, पर कहीं भी इससे अधिक नहीं। तट स्वयं इसके ऊपर ऊँचा उठता है बालू के ढेर और बालू की पहाड़ियों के रूप में इतना ऊँचा उठ जाता है कि दक्षिण से बिल्कुल साफ़-साफ़ दिखाई देता है, और इस तट की चोटी से ढाल पहले से ही अपने अस्तित्व का पता देता है। वज़ीर भूलर घाट पर, रेलवे और ट्रङ्क रोड नदी को पार करती हैं, निचला पानी अथवा जाड़े की धारा चौड़ाई में ३०० से ४०० फ़ीट से ज़्यादा नहीं है, परन्तु बाढ़ के दिनों में पौन मील तक हो जाती है। धारा, जो वर्षा ऋतु में दर्शनीय धारा हो जाती है, और जो रेलवे के पुल के नीचे ३५ फ़ीट गहरी होती है, जाड़ों में, शायद, ६ फ़ीट भर गहरी रह जाती है। कहीं तो यह पार कर जाने लायक़ रहती है। तली सब जगह रेतीली है, और पूरब की दिशा में मार्ग के परिवर्तन में अड़-चन डालने वाली कोई भी रुकावट की चीज़ नहीं है। खादर जो पश्चिमी तट पर है, वहाँ खेती होती है और अच्छी फ़सलें तैयार हो जाती हैं। यह नदी रेलवे के पुल द्वारा वज़ीर भूलर में पार होती है, और नावों का एक पुल सर्दी के मौसम में उसी स्थान पर ग्राण्ड ट्रङ्क रोड पर बनाया जाता है।

रावी नदी का पूर्वीय तट एकदम उठा हुआ है, पर ऊँचा नहीं है। इसकी तली रेतीली है, परन्तु नदी से छुटा हुआ बाढ़ के तट के नीचे प्रायः सभी स्थान खेती करने योग्य है और अच्छी फ़सलें उपजाता है। मार्च और अप्रैल के महीनों में बहुत सी जगहों की गहराई एक फ़ुट से अधिक नहीं रहती, परन्तु जून और सितम्बर में १८ या २० फ़ीट तक हो जाती है। कुछ वर्षों से बाढ़ों की प्रवृत्ति उत्तर की ओर स्याल कोट की तरफ़ से इस जिले को लाभ पहुँचाते हुये बढ़ने की रही है। नदी के द्वारा फेंकी हुई, काश्त के क़ाबिल ज़मीन, तिल्लन या खोवा कहलाती है। नदी सब ही जगहों पर शीतकाल तथा बसन्त ऋतु के मासों में पार करने योग्य रहती है। अमृतसर और गुजरानवाला रोड पर कक्कड़ में १८७९ तक एक नावों का पुल रक्खा गया था, और केवल बाढ़ के चार महीनों में हटा दिया जाता था।

बड़ी दोआब और पुरानी हसली नहरों का पूर्ण वर्णन गुरदासपुर ज़िले से सम्बन्ध रखता है। दोनों मुख्य बड़ी दोआब नहर और इसकी लाहौर शाखा जिले की चौड़ाई में से होकर बहती हैं, पहली वाली कुछ दूरी पर अमृतसर के नगर के पूर्व की ओर जाती है।

यह प्रदेश, ऊंचा, सूखा और कम जल वृष्टि होने के कारण, वनों के अनुकूल नहीं है, जब कि घनी आबादी और जङ्गल की लकड़ी की बड़ी क़ीमत ने ऐसे जङ्गलों को कभी से अदृष्ट कर दिया है जैसे कभी इस जिले में रहे होंगे।

किसी प्रकार, वहाँ बञ्जर भूमि के कई टुकड़े हैं, जो राख के नाम से विख्यात हैं, जिनमें से निम्नलिखित अधिक महत्वपूर्ण हैं :—

	एकड़		एकड़
राख नाग ...	५०१	गुजखाल ...	४,३९५
शिकारगाह ...	२७६	दीनावाल ...	७४०
सराय अमानतखां	१,३६२	शेख फ़तह ...	१५९
ओस्मान ...	११०	वहोरू ...	५५०
सुकरचाक ...	१४९		

राख के अलावा, पेड़ों की भी कमी है, चाहे वे लकड़ी के पेड़ हों अथवा फलों के, यह इस जिले की मुख्य विशेषता है, जो दक्षिण की ओर विशेषतया व्यक्त होती है, अर्थात् तरण तारण परगने में। जितने भी पेड़ वहाँ हैं। वे गांवों के आस-पास अथवा खेतों की मेड़ों पर लगे हुए हैं। इस जिले में होने वाले पेड़ों में से हैं फुलाही, फ़रास, ढाक जिनकी बड़ी-बड़ी पत्तियाँ जङ्गलों में इकट्ठा की जाती हैं और कस्बों में लाई जाती हैं, जहाँ वे हलवाई के काम में आती हैं। पर चूनिया भी दही, मक्खन, और चीनी के लिए उनके दोने इस्तेमाल करता है और झंड एक झाड़ी होती है जिसकी सख्त लकड़ी ईंधन के काम आती है। कीकर जिले के सभी भागों में पाई जाती है, और कभी ही कभी लगाई जाती है, लेकिन यह इस जिले का पेड़ नहीं कहा जा सकता।

अमृतसर शिकार के लिए अच्छा जिला नहीं है, शट करने अथवा शिकार खेलने के लिए ज़मीन की कमी है। जंगली सूअर प्रायः राखों में पाये जाते हैं, ईंधन के पौधों में भी कभी-कभी मिलते हैं। खरगोश बहुत कम हैं। पूर्वकाल में जिले के समस्त दक्षिणार्द्ध में चिकारा हिरन पाये जाते थे; किन्तु अब तो कहीं-कहीं ही रह गए हैं। नीलगाय भी कम दिखाई देती है। इस जिले में शिकार किए जाने वाला पशु भेड़िया मात्र है। उनको मारने के लिए इनाम दिये जाते हैं, और १२ वर्षों में १८५५ से १८६८ तक, कुल १०० भेड़िए मारे गए थे, और लगभग ४०० रुपये इनामों में खर्च हुए थे। यह संख्या उचित अनुमान का पता नहीं देती।

व्यास में, महासीर मछली पकड़ने का बहुत अच्छा स्थान है; रावी में, यह मछली, यद्यपि काफ़ी है, परन्तु कहा जाता है कि पकड़ में नहीं आती। दोनों नदियों में बड़ी राहू पकड़ी जाती है, और यहां के निवासी मछेरे बिक्री के लिए जाल डालते हैं। एक नहर का अफ़सर लिखता है "नहर मछलियों से भरी है।" मुख्य शाखा के ऊपरी भाग में, मछलियाँ, विशेषकर महासीर और राहू काफ़ी बड़े आकार वाली, पकड़ी जा सकती हैं और नीचे की ओर, केवल दूसरी मछलियाँ रावी से आती हैं। नहर को बन्द करने के अवसरों पर, अथवा छोटे जलमार्गों को रोक देने पर, मछलियों का बड़ा नाश होता है। ग्रामनिवासी ऐसे ऐसे समयों का लाभ उठाकर हर मछली वाली जगह पर नहर को साफ़ कर देते हैं। नदी-किनारे के बहुत से गांवों में कुछ व्यक्ति मछली पकड़कर अपना जीवन निर्वाह करते हैं। मछलियाँ लगभग दस रुपये सेर की दर पर बेची जाती हैं, अथवा बराबर तौल के अनाज से बदल ली जाती हैं।

भारतीय भूतत्व के विषय में हमारा ज्ञान अब भी इतनी साधारण प्रकृति का है, और पंजाब में भूतत्व-विभाग में इतनी कम खोज की गई है, कि भिन्न-भिन्न जिलों के स्थानीय भूतत्व के विषय में कुछ कहना असम्भव है। किन्तु पूरे प्रान्त के भूतत्व का एक चित्र मिस्टर मेडलीकाट, हिन्दुस्तान के ज्यॉलाजिकल सर्वे के सुपरिण्टेण्डेण्ट ने तैयार किया है, और अलग से मिलता है।

समस्त भूमि में नदियों की लाई हुई भुरभुरी मिट्टी है, किसी काम का खनिज पदार्थ यहां कोई मिलता है तो वह कैलकेरियस है जिसे कङ्कड़ कहते हैं। यह धरातल से नीचे थोड़ी गहराई पर मिल जाता है, जहाँ से यह काटकर निकाला जाता है और सड़क बनाने के काम आता है। कङ्कड़ चूने के लिए जलाया भी जाता है। अतः इसका पाया जाना कुछ कम महत्व का नहीं है, क्योंकि इसके बिना पक्की सड़कें नहीं बन सकती थीं और मकानों में इस्तेमाल किए जाने वाला चूना दूर से मँगाना पड़ता। यहाँ चूने के पत्थर नहीं मिलते और यहाँ की नदियों में गोल पत्थर और पुरानी चट्टानों के टुकड़े भी नहीं मिलते। ये पत्थर प्रायः पहाड़ियों के

समीप बहने वाली नदियों में होते हैं और इनसे काफ़ी मात्रा में चूना तय्यार किया जा सकता है।

सबसे अच्छी कंकरीली भूमि सौरियान और जैसरवाल के ग्रामों में अजनाला तहसील में पाई जाती है, तरण तारण तहसील में कोट काजी और तरण तारण में और अमृतसर तहसील में कुछ १०-१२ गाँवों में भी पाई जाती है। प्रायः इस ज़िले के ऊपरी भाग में, कङ्कड़ कम है और बहुत छोटे टुकड़ों में पाया जाता है। यह लगभग ३।।) प्रति सौ घन फ़ीट बिकता है। कङ्कड़ से बना हुआ चूना १३) प्रति सौ घन फ़ीट तो बढ़िया वाला बिकता है, और १०) घटिया वाला।

सिक्खों के जमाने में अजनाला तहसील में, और राख दीनावाल में साल्टपीटर बनता था, परन्तु आजकल यह बहुत कम मात्रा में तैयार होता है।

रही बर्तन बनाने की मिट्टी, सफ़ेद भूरी और काली, इकट्ठा की जाती है, और कुम्हारों के काम आती है। इसके विषय में कोई विशेष बात उल्लेखनीय नहीं है।

इस ज़िले की जलवायु, पहाड़ियों के नज़दीक होने से और नहरों के विस्तार तथा बढ़ी हुई उपज के कारण, अधिकतर समशीतोष्ण है, और मई से सितम्बर के गर्म महीनों में पंजाब के बहुत से भागों में यहाँ से अधिक अन्तर दिन और रात के तापक्रम में रहता है। साल के बाक़ी हिस्से में यहां समशीतोष्णता तथा मनमोदकता रहती है; जब कि जाड़े में दो महीनों में अक्सर पाला पड़ जाता है। निम्नाङ्कित सूची में ज़िले के रेन-गेज स्टेशन पर रजिस्टर की गई कुछ वर्षों की वार्षिक वर्षा दी जाती है।

वर्ष	इञ्च
१८६२—६३	२३-०
१८६३—६४	३७-८
१८६४—६५	२७-०
१८६५—६६	२३-९

२—इतिहास

अमृतसर ज़िले में, कोई दर्शनीय ऐतिहासिक भवनों का खण्डहर नहीं है। मुहम्मडन राज्य के केवल उल्लेखनीय चिन्ह हैं, रमही सराओं के खण्डहर जो फ़थियाबाद, नौरङ्गाबाद, नूरुद्दीन और सराय अमानत ख़ाँ के क़स्बों में तरण तारण परगने में पुरानी दिल्ली और लाहौर की सड़क पर हैं, जिसके फाटकों के अतिरिक्त कुछ भी अवशिष्ट नहीं है। ज़िले में ऐतिहासिक अर्थ की चीज़ें हैं सिक्खों के मन्दिर जो अमृतसर, तरण तारण, डेहरा नानक, खदूर, गोबिन्दवाल और रामदास में हैं। इनमें सब से प्राचीन ३०० वर्ष पूर्व बना था। अमृतसर के मन्दिर पर तांबा चढ़ा हुआ है और अन्दर से सुन्दरता से सजा हुआ है। इसके ऊपर काफ़ी रुपया ख़र्च हुआ होगा। तरणतारण और डेहरा नानक के मन्दिरों पर भी धातु चढ़ी हुई है और अन्दर से वे सजे हुए हैं, लेकिन इन पर व्यय अधिक नहीं हुआ होगा, और ये इमारतें स्वयं अमृतसर के मन्दिर से छोटी हैं। इन ख़र्चीली सजावटों के कारण सिक्खों के मन्दिर विशेषतया उल्लेखनीय हैं। इमारतें छोटी हैं, और उनकी बनावट का ढंग उच्चकोटि का नहीं है। ऐतिहासिक महत्व की चीज़ों में, इस ज़िले में, अमृतसर में बनी बाबा अटल नाम की इमारत, (जो बाबा अटल की क़ब्र पर बनी हुई एक ऊँची मीनार है, बाबा अटल छठे सिक्ख गुरु हरगोविन्द के सुपुत्र थे) और, १८०९ ईसवी में रणजीतसिंह द्वारा बनवाया हुआ अमृतसर में गोबिन्दगढ़ का क़िला भी उल्लेखनीय है।

पंजाब के इस भाग के इतिहास का महत्व सिक्ख शक्ति के उत्थान में है। जो आजकल, अमृतसर ज़िला है उसमें प्राचीन हिन्दू राज्य के दिनों की किसी राजधानी अथवा महत्वपूर्ण नगर की चर्चा नहीं होती। यह शायद लाहौर के राजाओं के राज्य में था। शाहबाज़पुर में ज़रूर कुछ प्राचीन खण्डहर हैं।

१०२३ ईसवी में सुल्तान महमूद ने स्थायीरूप से लाहौर और पञ्जाब में मुसलमानी शक्ति स्थापित कर दी। उस समय से ,लाहौर में मुसलमानों के

राज्य को सिक्खों द्वारा उलट-पुलट होने तक, इस जिले का सम्बन्ध उस नगर से था और जब मुसलमानी राज्य भारत में फैला हुआ था, तो यह लाहौर के प्रान्त में आता था।

पन्द्रहवीं सदी के मध्य के बाद ही, लाहौर के जिले में, तलवंडी गाँव में, नानक, पैदा हुए थे, जो सिक्ख-धर्म के प्रवर्त्तक और सर्व प्रथम सिख गुरु थे। किसी प्रकार उनका इतिहास इस जिले के इतिहास से कुछ सम्बन्ध रखता है। नानक १५३९ ईसवी में मरे थे, उनकी मृत्यु रावी के दूसरी ओर के एक गाँव में जहाँ अब डेहरा नानक का क़स्बा है (गुरदासपुर में), जिसे उनके वंशजों ने बसाकर उसका नाम नानक के ऊपर रखा था। उनके उत्तराधिकारी, अङ्गद, द्वितीय गुरु, तरण तारण परगने में खदूर के गाँव में रहते थे, जो व्यास से कुछ दूरी पर है और वहाँ १५५२ ईसवी में मरे। अङ्गद के बाद अमरदास उत्तराधिकारी हुए, ये तीसरे गुरु थे, और खदूर से कोई पाँच मील दूर व्यास पर बसे हुए गोविन्दवाल के क़स्बे में रहते थे। वह १५७४ ईसवी में मरे। उनका उत्तराधिकार उनके जामाता रामदास ने पाया, जो चतुर्थ गुरु थे और जिन्होंने शाहंशाह अकबर से उस स्थान पर जमीन के एक टुकड़े की मंजूरी पाई थी जहाँ अब अमृतसर का नगर स्थित है। उन्होंने पवित्र तालाब खुदवाया और इसके मध्य में एक मन्दिर खड़ा कराना शुरू कराया। रामदास १५८१ ईसवी में परलोक सिधारे। उनके पुत्र व उत्तराधिकारी अर्जुन पञ्चम गुरु ने मन्दिर को पूरा करवाया और इसके चारों ओर इमारतें बढ़वाईं। तब से अमृतसर सदैव सिक्ख लोगों का अत्यन्त पवित्र स्थान रहा है। अर्जुन अपने पूर्वजों से धन और वैभव में बहुत बढ़ गए थे और उनके मन्त्रित्व के दिनों में सिक्ख धर्म में धर्मपरिवर्तकों की संख्या तेजी से बढ़ी। उनके जीवन के अन्तिम दिनों में किसी प्रकार उन्हें चन्दूशाह से युद्ध करना पड़ा जो लाहौर में शाही सूबेदार था और १६०६ ईसवी में उस नगर के कारागार में अपनी देह उन्होंने त्यागी। उनके बाद उनके पुत्र हर गोविन्द को गद्दी मिली, जो छठे गुरु थे, और वीर तथा पराक्रमी चरित्र के मनुष्य थे, जिनके नेतृत्व में सिक्खों ने अपने युद्ध प्रिय गुणों का प्रथम परिचय दिया। हर गोविन्द को अवसर के अनुसार लाहौर के राज्याधिकारियों से मोर्चा लेना पड़ा, और यद्यपि उन टुकड़ियों को हरा दिया जो उन्हें दण्ड देने के लिए भेजी गई थीं, उन्हें पंजाब छोड़ देने पर जोर दिया गया। वह १६४५ ई० में, सतलज के किनारे के किरातपुर के क़स्बे में देवत्व को प्राप्त हुए।

१७०८ ई० में, सम्राट् औरङ्गजेब की मृत्यु के अनन्तर ही, गोविन्द, दसवें तथा अन्तिम गुरु, दक्षिण में मरे। उनकी मृत्यु पर उनके चुने हुये शिष्य बन्दा, वैरागी अथवा यति, पञ्जाब में आए और अपने साथ गोविन्द के तीर लाये, तथा सिक्खों को मुसलमानों से बदला लेने के लिए युद्ध के हेतु तैयार करने लगे। उनकी बात सुनी भी गई। सिक्ख हजारों की संख्या में बन्दा के झंडे के नीचे जमा हुए, और, औरङ्गजेब की मृत्यु के पश्चात् घटित गद्दी के ऊपर झगड़ों में मुसलमानी राज्य इतना निर्बल हो गया था, कि समस्त देश में उथल पुथल मच गई और लाहौर के फाटकों पर अधिकार कर लिया गया। किसी प्रकार, यह सफलता अस्थायी रही। अब्दुल समन्द खां लाहौर का गवर्नर नियुक्त हुआ, और १७१६ ईसवी में, उसने सिक्खों को बिलकुल हरा दिया, और बन्दा को क़ैद कर लिया, जिसे दिल्ली भेज दिया गया और वहीं मार डाला गया। इस घटना के बाद, सिक्खों के विरुद्ध चुस्त नजरबन्दी की गई, और कुछ वर्षों तक उनके बारे में कोई बात न सुनाई दी। परन्तु उनकी बगावती तदबीरों के लिए समय अनुकूल था। १७३९ ईसवी में, जब जकरिया खाँ, अब्दुल समन्द खां का बेटा, लाहौर का सूबेदार था, हिन्दुस्तान पर फारस के बादशाह नादिरशाह ने आक्रमण किया, सिक्खों ने इस आक्रमण प्रदत्त अवसर का लाभ उठाया, और फिर से शस्त्र लेकर, देश को लूटा। जब नादिरशाह लौट गया, तो वे फिर हार गये तथा लाहौर के सूबेदार द्वारा दबा दिए गए।

१७४७ ईसवी में, अहमद शाह अब्दाली अफ़गानिस्तान के दुर्रानी राजा ने पञ्जाब में अपना प्रथम आक्रमण किया, तथा लाहौर के सूबेदार, शाह नवाज खाँ को हरा दिया जो स्वर्गीय सूबेदार

जकरिया खां का पुत्र था और सरहिन्द तक बढ़ गया। सिक्ख फिर उठे, और अमृतसर में इकट्ठा होकर, उन्होंने रामरौरी नामक एक क़िले को वहां उड़ा दिया। अहमद शाह के अपने देश को लौट जाने पर, मीर मन्नू दिल्ली से लाहौर का सूबेदार बनाकर भेजा गया, जो अपना राज्य स्थापित करते ही, सिक्खों के विरुद्ध बढ़ा, और उनके क़िले को जीत कर उन्हें तितर-बितर करने लगा। तदनन्तर, मीर मन्नू दिल्ली के राज्याधिकारियों से लड़ा, और जब उसने अपने ख़िलाफ़ भेजे गए जत्थों को हरा दिया तो उसने अपने आपको स्वतन्त्र प्रकट किया। वह इस प्रकार अधिक समय तक न रह सका, १७५२, ई० में, अहमद शाह ने दुबारा सिन्ध पार की, और लाहौर की ओर बढ़ते हुए, मीर मन्नू को हराया, व उस शहर पर क़ब्ज़ा कर लिया। जब वह लौटा, तो मीर मन्नू को पञ्जाब में अपना प्रतिनिधि बना गया। कुछ ही दिनों बाद, मीर मन्नू मर गया, और पञ्जाब कुछ समय तक अदीना बेग खाँ के नामचार के राज्य में रहा, जो गुणवान् तथा दृढ़ चरित्र का मनुष्य था, जिसे मीर मन्नू ने जलंधर दोआब का सुपरिंटेण्डेण्ट नियुक्त किया था। वह वहां उस पद को काफ़ी समय तक ग्रहण करता रहा। इसके बाद जब अहमद शाह लाहौर होकर १७५५-५६ के जाड़ों में गुज़रा, तो अपने पुत्र तैमूर को वहां का सूबेदार बना गया।

राजकुमार तैमूर ने अमृतसर की ओर कूच किया, और रामरौरी क़िले को नष्ट कर दिया, जिसे सिक्खों ने फिर से बनवाया था। किन्तु सिक्खों की शक्ति दिन प्रति दिन बढ़ रही थी, और अदीना बेग के द्वारा भड़काये जाने पर, जो तैमूर के डर के मारे पहाड़ियों में चला गया था, वे बहुत बड़ी संख्या में उठे और अफ़ग़ानों को लाहौर से निकाल देने तथा इसे अस्थायी रूप से अधिकृत कर लेने में सफल हुए। अदीना बेग अब पञ्जाब का मालिक बनने की आशा करने लगा। परन्तु सिक्ख लोग उसे उसकी आशाओं के अनुसार इतना बड़ा पद नहीं देना चाहते थे, और न उनकी सहायता मात्र से उसका मनोरथ पूरा ही हो सकता था। उसने यह देखकर मरहठों को बुलाया जिन्होंने उसकी बात मानी, और पञ्जाब की ओर कूच कर, सिक्खों से लाहौर खाली करा लिया, और अहमदशाह की फ़ौजों को सिन्ध की तरफ़ भगा दिया। अदीना बेग की अभिलाषाएँ अपने शिखर को पहुँच चुकी थीं। पर उसने अपने राज्य का बहुत दिनों तक आराम न कर पाया। वह कुछ ही महीनों के अन्दर, १७५८ के अन्त में मर गया।

पञ्जाब के छुट जाने पर अहमद शाह फिर हिन्दुस्तान में आया। उसने लाहौर से होकर कूच किया, दिल्ली तक गया, और मरहठों से रास्ते में लड़ता चला। १७६१ में उसे उनके ऊपर पानीपत में महान विजय मिली, तथा लड़ाई के बाद शीघ्र ही वह अपने देश को लौट गया, और लाहौर में एक प्रतिनिधि छोड़ गया। अहमद शाह के चले जाने पर, सिक्ख फिर उठे, और लाहौर के सूबेदार को बड़ी तकलीफ़ें देने लगे। इस पर, १७६२ के अन्त में, अहमद शाह लाहौर को लौटा, और सतलज के किनारे सिक्खों का पीछा करके, उसने उन्हें बुरी तरह हराया। अपने घर को वापिस लौटते समय, उसने सिक्खों से उन तकलीफ़ों का बदला लेना चाहा जो उन्होंने लगातार उसे दी थी, और अमृतसर के मन्दिरों तथा सरों को नष्ट व अपवित्र कर दिया। लेकिन इन प्रतिकूल घटनाओं के बावजूद भी सिक्खों का बल नित्यप्रति बढ़ रहा था, और सन १७६४ तक लाहौर से अहमदशाह का प्रतिनिधि भगा दिया गया, और सिक्खों का पञ्जाब के इस भाग पर पूर्ण अधिकार हो गया। इसके बाद दुबारा वे तहस-नहस न हो सके, केवल एक आक्रमण अहमदशाह का और हुआ, जिसका प्रभाव अस्थिर ही रहा।

बहुत से वन्दिश अथवा स्वतन्त्र सरदार जिन्हें मिसल कहते थे, पञ्जाब को आपस में बाँटने लगे। वे मिसल जिन्होंने इस ज़िले पर अधिकार जमाया भंगी, अहलूवालिया, कन्हैया और रामगढ़िया थे। भंगी मिसल का अधिकार अमृतसर के चारों तरफ़, तथा दक्षिण में तरण तारण परगने पर था। अहलूवालिया सरदार, जिसका विशेष अधिकार जालन्धर दोआब में था, कुछ उन क़स्बों का भी मालिक

था जो व्यास के किनारे फ़थियाबाद और गोविन्द-वाल के चारों तरफ़ थे। कन्हैया मिसलों का अधिकार बटाला और फ़थीगढ़ के चारों तरफ़ के प्रदेश पर था, और रामगढ़िया मिसल श्रीगोविन्दपुर व कादियाँ के चारों ओर के प्रदेश का मालिक था जिसे रियार्की कहते हैं। उन सबके अलग-अलग क्वार्टर अमृतसर में थे, जो सभी सिक्ख लोगों का आम नगर माना जाता था और जहाँ सब के सब सिक्ख त्योहारों को मनाने के लिए एकत्रित होते थे। ये राज्य-विभाग अधिक समय तक न टिक सके। १७७४ में, कन्हैया और अहलूवालिया मिसल रामगढ़िया मिसल के विरुद्ध मिल गए, और रामगढ़िया सरदार हार गया, और पंजाब से उसे भाग जाना पड़ा, कन्हैयों ने उसके प्रदेशों पर अधिकार कर लिया।

कन्हैया अब कुछ समय के लिए गालिब हो गए, जब कि भंगियों की शक्ति धीरे-धीरे घटती जा रही थी। १७८५ में कन्हैया सरदार महासिंह से लड़ा जो भावी महाराजा रणजीत सिंह का पिता था तथा जो सुक्करचकियाँ मिसल का सरदार था और जिसे कन्हैया ने अपनी रक्षा में ले लिया था। महासिंह ने रामगढ़िया सरदार को अपनी सहायता के लिए निमंत्रण दिया, तथा उसने इसका निमंत्रण स्वीकार कर लिया। फिर उनके संगठित बल के आगे कन्हैया न ठहर सके। रामगढ़ियों को तब अपने पुराने प्रदेश पुनः प्राप्त हो गए। तदनन्तर ही, महासिंह ने अपने पुत्र रणजीतसिंह का विवाह कन्हैया सरदार की कन्या से कर दिया, तथा इसी सम्बन्ध के कारण बाद में रणजीतसिंह पञ्जाब के दूसरे सभी मिसलों पर अपनी धाक जमाने में सफल हो सका था।

अगले बीस वर्षों का इतिहास रणजीतसिंह की शक्ति के उत्थान से सम्बन्धित है जो धीरे-धीरे हुआ था। रणजीतसिंह अपने पिता की मृत्यु पर उनकी मिसल का सरदार बना। तत्पश्चात् रणजीत-सिंह ने दूसरे मिसलों के प्रदेशों पर भी अधिकार कर लिया। १७९९ में रणजीतसिंह ने लाहौर हथिया लिया, और १८०२ में अहलूवालिया सरदार की सहायता से अमृतसर ले लिया और भङ्गियों की ताकत घटा दी। तब से कोई सरदार रणजीत-सिंह के सामने न ठहर सका, तथा धीरे-धीरे करके उसने कन्हैयों और रामगढ़ियों के प्रदेश मिला लिए, एवं इस समस्त ज़िले पर अपना पूरा शासन स्थापित किया। रणजीतसिंह अब इस ज़िले का एकछत्र राजा था, और यह शान्तिपूर्वक उसके और उसके उत्तराधिकारियों के अधिकार में रहा—जब तक पञ्जाब ब्रिटिशों के द्वारा १८४९ में मिला न लिया गया।

१८५७ की घटनाओं का निम्नलिखित वर्णन है। वह नगर जिस पर अमृतसर ज़िले का नाम पड़ा है पञ्जाब में मुख्य स्थान है। इसका शासन गोविन्दगढ़ की प्रसिद्ध किली से होता है। यह सिक्खों के लिए उतने ही महत्व का है जितने महत्व का मोना का द्वीप जूलियस सीज़र के दिनों में ब्रिटेन के लिए था, जितनी महत्ता मक्का मुसल-मानों के लिए तथा बनारस हिन्दुओं के लिए रखता है। अमृतसर पर खाल्सा लोग अपार भक्ति रखते हैं। इसके ऊपर वे मरने-मारने को उतारू हो जाते हैं। यह किला ५९ वीं नेटिव इन्फ़ैण्ट्री के एक जत्थे के अधिकार में था जिसमें केवल ७० योरोपीय तोपची थे; इससे बहुत बदअमनी फैली। कप्तान लारेंस पुलिस के कप्तान और मिस्टर राबर्टस, कमिश्नर १३ मई को यहाँ आए क्योंकि मियाँ मीर के फ़ौज में कुछ गड़बड़ी हुई थी जिसकी रक्षा करनी थी। उनके लाहौर लौट जाने पर (अगले दिन) उन्होंने ब्रिगेडियर कार्बेट को यह दिखा दिया कि उसे योरोपीयों को वहाँ लाने की अत्यन्त आवश्य-कता पड़ेगी। उसने तत्काल ऐसा ही किया, और उस दिन की उपरोक्त भयङ्कर घटनाओं के बावजूद भी, ८१ वें फ़ुट की आधी कम्पनी उसी रात को इक्कों में भर-भरकर भगा दी गई। यह गोविन्दगढ़ में १५ की सुबह को शान्ति के साथ प्रविष्ट हुए। ५९ वीं फिर भी किले में रही किन्तु ज्योंही योरोपीय आ गए, उन्होंने अपना स्थान ग्रहण किया। ५९ वीं ब्रिगेडियर जनरल निकलसन के द्वारा ९ जूलाई को निहत्थी कर दी गई। ज्योंही ग़दर हुआ सबसे पहले जो काम मिस्टर कूपर डिप्टी कमिश्नर ने किए उनमें से एक था इस गढ़ी को रसद पहुँचाना।

शीघ्र ही पूर्णरूप से यह कार्य चुपचाप किया गया और तब किला अंगरेजों के विश्वस्त बुर्जों में से एक गिना जाने लगा, जैसा यह तब तक कभी नहीं रहा था। मिस्टर मैक्नैटेन, असिस्टेण्ट कमिश्नर उसी समय लाहौर वाली सड़क पर गए ताकि गाँव वालों को (माँझा के पास के निवासी) किन्हीं भी भगोड़ों के विरुद्ध जो वहाँ, आ सकते थे खड़ा होने को तैयार कर सकें। जो कोई भी सिपाही भाग जाता था उसके लिए इनाम रक्खे जाते थे, जनता की दबी हुई युद्धप्रिय भावनाएं भड़क उठीं और उन्होंने प्रज्वलित प्रचण्ड अग्नि का रूप धारण कर लिया। किसी भी भागने वाले का कार्य निराशाजनक था, क्योंकि उसके लिए हर गाँव शत्रु बन गया था। लोगों का मिजाज इस प्राप्ति का एक बड़ा कारण था जिसने अमृतसर ज़िले को १८५७ के इतिहास में विख्यात कर दिया है।

२१ वीं जुलाई को निहत्थे सिपाहियों की एक छोटी टुकड़ी रावी के पश्चिमी तट पर बालघाट के समीप निकली, और पायावों के बारे में पूछताछ करने लगी। लोग बड़े उत्सुक होकर इस ओर ध्यान देने लगे। उन्होंने कई घंटों तक बहुत से बहाने बनाकर सिपाहियों का मनोरंजन किया जब कि भगोड़े शीघ्रता से पड़ोस की तहसील अजनाला और यहां तक कि अमृतसर की ओर बढ़े। अजनाला के तहसीलदार प्रेमनाथ ने तत्काल प्रत्येक मिल सकने वाले पुलिस के आदमी को एकत्र किया और यह पता चला कि ये लोग २६ वीं नेटिव इन्फैण्ट्री थे जिसने गत दिवस लाहौर में विद्रोह किया था, और चार दलों में करके आने-जाने के मुख्य मार्गों द्वारा १९ घंटों में ४० मील तय कर आये थे। एक लड़ाई हुई १५० आदमी ग्रामीणों और पुलिस के प्रस्ताव से सहमत हुए। ४ बजे शाम तक मिस्टर कूपर लगभग ८० घुड़सवार लेकर पहुँच गए, उनके साथ सरदार जोध सिंह एक्स्ट्रा असिस्टेण्ट एक पुराने सिक्ख सरदार भी थे। विद्रोही एक नहर द्वारा नदी के बीच के एक द्वीप में बचकर भाग गए। वे पकड़े गए और अगले दिन सुबह को कत्ल किए गए, ४५ मनुष्य रात-भर में थकान और शक्तिहीनता के कारण मर गए थे। अंगरेज़ों की जो उस समय बुरी स्थिति थी उसके अनुसार इन २३७ विद्रोहियों को कड़ी सज़ा देना ठीक था। लगभग ४२ आदमी बाद में पकड़े गए और वापिस लाहौर को भेज दिए गए और वहाँ कोर्ट मार्शल के दण्डानुसार सारे ब्रिगेड के सामने बन्दूक से उड़ा दिए गए।

किसी प्रकार बहुत से सिक्ख जो अपने रेजीमेण्टों में उत्तरी-पश्चिमी प्रान्त में काम कर रहे थे अपने देश और अपने स्वामियों का साथ नहीं दे रहे थे। कुछ विद्रोह के चक्कर में भी पड़े और दिल्ली के पतन के बाद घर को चुराकर जाने लगे। उनके लिये बड़ी खोज की गई। जब उन रेजीमेण्टों ने जिनमें वे थे अपने अफ़सरों को मार डाला, तो इन लोगों का भी क़त्ल किया गया। दूसरे मामलों में उनको कड़े कारावास का दण्ड मिला। यह काम पञ्जाब भर में सभी जगह किसी न किसी मात्रा में किया गया, परन्तु यहाँ यह अधिक मात्रा में था क्योंकि उनमें से बहुतों के मकान इस ज़िले में थे। इस ज़िले में हिन्दुस्तानियों के मध्य काफ़ी नाराज़ी नज़र आती थी, और उनके पत्रों के मामले में उन्हीं नज़रबन्दियों से काम लिया गया। जिनसे दूसरी जगहों में लिया गया था। नावें रोक दी गईं और दिल्ली से आवारा लोग तथा जासूस निकाल दिए गए। मिस्टर ऐचीसन, असिस्टेण्ट कमिश्नर दो अवसरों पर अन्दर एक नदी की रक्षा के लिए अथवा एक छोटे विभाग को विश्वास दिलाने के लिए भेजे गए और मिस्टर कूपर स्वयं कई सप्ताह तक पेट्रोल ड्यूटी पर हर रात को अर्द्धरात्रि के बाद तक रहे। कप्तान पार्किन्स, असिस्टेण्ट कमिश्नर रंगरूट विभाग के इन्चार्ज थे और मिस्टर मैक्नैटेन असिस्टेण्ट कमिश्नर ने भाई महाराज सिंह नाम के एक फ़सादी के ख़तरे में तथा १४ मई को स्वयं अटारी जाकर देश को उभारने में काफ़ी हिम्मत दिखलाई। यहाँ इच्छापूर्वक दीवान नरायन सिंह, अटारीवाले सरदार खान सिंह के एजेण्ट, उनसे सहमत हुये। एक सिपाही व एक डाक्टर जो ३५ वीं नेटिव इन्फैण्ट्री के थे अलग-अलग समय पर फ़सादी भाषा बोलने के कारण फाँसी पर लटका दिये गए। इनकी मौत से जनता के दृष्टि पथ में बड़ा भारी परिवर्तन हुआ और जनरल निकलसन की फ़ौज

की उपस्थिति का जो लगभग एक मास तक आ-आकर बढ़ती रही, उचित प्रभाव पड़ा। यह आशा की जा सकती थी कि ६ प्रतिशत ऋण का चन्दा अमृतसर तथा लाहौर के दौलतमन्द नगरों से काफी होता। परन्तु इसके विपरीत हुआ। उन्होंने जो कुछ दिया वह अगण्य था। उन लोगों ने जिनकी हैसियत आधा करोड़ रुपए की थी, कुल १,००० रुपए का चन्दा दिया तथा दूसरों ने भी इसी हिसाब से दिया। वे कंजूसी से अँगरेज़ी सरकार के प्रति अविश्वासपूर्ण दृष्टि रखने लगे थे और बिल्कुल स्वामिभक्त न होकर उनके प्रतिकूल थे और इसलिए वे उस ग्रामीण जनता के सख्त विरोध में थे जो उत्सुकतापूर्वक सहायता दे रही थी।

अमृतसर ज़िला जैसे पहले बना था, आधुनिक अमृतसर, तरण तारण और अजनाला की तहसीलों से और रियाह वा नारोवाल के रावी के परगने से मिल कर बना था। यह १८६७ में स्यालकोट में तब्दील कर दिया गया। उसी समय गुरदासपुर की बटाला तहसील अमृतसर में बदल दी गई लेकिन फिर १८६९ में गुरदासपुर में कर दी गई। १८५९ तक ज़िला लाहौर की कमिश्नरी अथवा निरवत में था; परन्तु उस वर्ष एक नया विभाग बनाया गया जिसका मुख्य दफ़्तर अमृतसर में रखा गया इसमें अमृतसर, स्यालकोट और गुरदास-पुर के ज़िले सम्मिलित थे। सिक्खों की अधीनता में २३ रियासतें या (इस ज़िले के) तालुक थे। ये निम्नलिखित सूची के अनुसार वर्तमान तहसीलों में विभाजित थे।

अजनाला { सौरियाँ, जगदेव, चीना, शहन्सरा, थोवा, पंजगिरायँ, चमियारी, घूनीवाला, कुरियाल

अमृतसर { जंडियाला, सठियाला, बुन्दाला, महताबकोट, मट्टीवाल, चविन्डा, मजीया, अमृतसर, गिलवाली

तरणतारण { जाललाबाद, वैरोवाल, कोट खां महमूद, कपूर खेरी, तरण तारण

जब से यह ज़िला अङ्गरेज़ों के हाथ में आया, इसने उत्तरोत्तर उन्नति ही की है। अगले पृष्ट पर सूची नं० २ में यह प्रदर्शित की गई है। इसमें कुछ पांच सालों की मुख्य हालतों का बयान जो मिल सका है दिया गया है। इस सूची में जो चित्रण किया गया है वह साधारण रूप से किया गया है और विकास की प्रकृति तथा विकास का प्रदर्शन करता है। वह हर ज़माने में एक सा नहीं है। ध्यानपूर्वक इसका निरीक्षण कीजिए।

ग्रामीण जनता का हर गाँव का औसत ६८४
हर गाँव और क़स्बे की कुल जन संख्या का औसत ८६०
प्रति १०० वर्ग मील में गाँवों की संख्या ६६
मीलों में एक गाँव की दूसरे गाँव से औसत दूरी ... १·३२

प्रति वर्ग मील घनी आबादी	कुल क्षेत्रफल	कुल जन संख्या ५·६७
		ग्रामीण जन संख्या ४·४८
	खेती का क्षेत्रफल	कुल आबादी ७·४६
		गाँव की आबादी ५·८९
	खेती के योग्यक्षेत्र	कुल आबादी ६·२६
		गाँव की आबादी ५१·८
प्रति बसे हुए घर में रहने वाले कुटुम्बों की संख्या		गाँव १·७९
		क़स्बे १·५०
प्रति बसे हुए घर में मनुष्यों की संख्या		गाँव ७·६३
		क़स्बे ५·८३
प्रति बसे हुए परिवार में मनुष्यों की संख्या		गाँव ४·४४
		क़स्बे ३·८८

जिले को छोड़कर जाने वालों और दूसरे जिलों से आने वालों से जिले को जो फ़ायदा और नुक़सान होता है वह नीचे दिखाया गया है।

कुल जनसंख्या का प्रति मील का अनुपात

	लाभ	हानि
मनुष्य ...	१३९	१२५
पुरुष ...	११४	१०९
स्त्रियाँ ...	१७१	१४५

जिले के बाहर पैदा हुए निवासियों की कुल संख्या १२४,८०६ है, जिनमें से ५६,०३५ पुरुष और ६८,७७१ नारियाँ हैं। जिले में पैदा हुए उन लोगों की संख्या जो पंजाब के दूसरे हिस्सों में रहते हैं १,११,९१७ है, जिसमें से ५३,६२१ पुरुष हैं और ५८,२९६ स्त्रियाँ।

अमृतसर व्यापार का एक बड़ा केन्द्र है और आकर्षक प्रभाव रखता है। तरण तारण में मांझा इस तहसील के ज्यादातर भाग में फैला हुआ है और स्वास्थ्यप्रद स्थान होने के कारण यहाँ भी बाहर से लोग आते हैं। बड़ी दोआब की नहर खुलने पर इस तहसील में और दूसरी तहसीलों से अधिक कृषि के विस्तार की सम्भावना भी थी। इन्हीं कारणों से अमृतसर की आबादी बढ़ती ही जा रही है।

तहसील	कुल जनसंख्या १८८१
अमृतसर	४३०,४१८
तरण तारण	२६१,६७६
अजनाला	२०१,१७२
कुल जिला	८९३,२६६

यहाँ हिन्दू, सिक्ख, मुसलमान और ईसाई रहते हैं।

नगरों और क़स्बों के लोग अधिकतर गेहूँ और चावल खाते हैं, परन्तु कृषकगण निम्नलिखित अनाजों का प्रयोग करते हैं :—

मक्का, ज्वार, चना, चीना, कंगनी, जौ, मट्ठल, सवानक और चूराल। एक बूढ़े पति-पत्नी व दो बच्चों

के एक औसत परिवार में (कृषक के) प्रतिवर्ष नीचे लिखा अनाज खर्च होता है।

अनाज	मन	सेर
गेहूँ ...	१०	३२
ज्वार-बाजरा	७	०
चना ...	४	०
मक्का ...	३	०
जौ ...	४	२३
चीना, कंगनी, सवानक व मट्टल	३	०
कुल ...	३२	१५

उसी प्रकार का अनुमान अकृषक परिवार का जो नगर निवासी हैं नीचे लगाया गया है।

अनाज	मन	सेर
गेहूँ ...	१२	०
चावल ...	४	०
ज्वार-बाजरा	६	०
चना ...	१	३५
जौ ...	२	०
कुल	२१	३५

धर्मों के अनुसार प्रति १०,००० जन संख्या का विभाजन यहां दिया गया है। इसी के नीचे हर १,००० मुसलमान संख्या के फिर्के दिखाये गए हैं।

धर्म	ग्रामीण आबादी	नागरिक आबादी	कुल आबादी
हिन्दू	२,६९३	३,८६४	२,३३९
सिक्ख	२,७६३	१,१४१	२,४२२
जैन	१	१४	३
मुसलमान	४,५४४	४,९३५	४,६२६
ईसाई	...	४६	१०

फिर्का	ग्रामीण आबादी	नागरिक आबादी	कुल आबादी
सुन्नी	९९०	×	९.९०
शिया	२.९	×	३-७
वहाबी	११	×	१-३
फराजी	०.१	×	०-१
अन्य	६.१	×	४-९

वहाबी अपने आपको वहाबी नहीं कहते, क्योंकि इसे वे अपने शत्रुओं द्वारा दिया गया नाम समझते हैं। वे अपने आपको मनोहर (एक ईश्वर को मानने वाले) या मुहम्मदी कहलाना पसन्द करते हैं। वहाबियों की संख्या बहुत है। और अमृतसर नगर में बुरी तरह बढ़ रही है, जहाँ वे मेरे अनुमान से आजकल लगभग १० हजार की संख्या में होंगे। उनका कहना है कि वे और भी अधिक हैं। शियाओं का अनुमान ठीक-ठीक नहीं लगाया जा सका है इस फिर्के के बहुत से लोग खासकर काश्मीरी 'शिया अथवा रफजी' नाम को नापसन्द करते हैं' पर हम लोग साधारणतया उन्हें इसी नाम से पुकारते हैं। बहुत थोड़े ऐसे व्यक्तियों का पता लगा है जो फराजी हैं। लेकिन वस्तुतः इस जिले में ऐसा कोई फिर्का विख्यात नहीं है और विशेष पूछ-ताछ से पता चला है कि ये लोग भी वहाबी हैं, और उन्हें वहाबी ही कहना चाहिए। इस जिले में डेढ़ हजार से ज्यादा भाभरे हैं जिनमें से केवल ३००-४०० अपने आपको जैन धर्म का अनुयायी बताते हैं। यह स्पष्टतया गलत है क्योंकि भाभरे लोग कुछ को छोड़कर यहाँ उसी धर्म को मानने वाले हैं।

सिक्खों के बारे में जो विशेष बात उल्लेखनीय है वह यह है कि इस जिले में सिक्खों की जनसंख्या में कमी होती जा रही है। इन ८० वर्षों में लगभग ३०,००० सिक्ख कम हो गए हैं। अतः यद्यपि कुल जनसंख्या बढ़ती रहती है। उसी अनुपात से यहाँ सिक्खों की जनसंख्या कम होती रहती है। कट्टर हिन्दू लोग अवश्य बढ़ गए हैं। इस वृद्धि का एक कारण सिक्खों की कमी भी हो सकता है क्योंकि यह आवश्यक नहीं है कि एक सिक्ख का बेटा भी स्वयं सिक्ख ही हो और सचमुच यह देखने की बात है कि उन नवयुवकों की संख्या में कमी हो रही है जो पाहुल ग्रहण करते हैं (यह सिक्ख धर्म की दीक्षा लेने की क्रिया होती है) यद्यपि पूर्वकाल में उनकी संख्या बहुत होती थी। किसी दूसरी उपजाति के लोग फौज, पुलिस आदि की नौकरी में नहीं गए हैं जितने सिक्खों में से गए हैं।

यहाँ के खास मेले दीवाली और वैसाखी के

होते हैं. जो अमृतसर में नवम्बर और अप्रैल के महीनों में क्रमशः इन्हीं नामों के हिन्दू त्योहारों के अवसरों पर लगते हैं। ये प्रथमतः धार्मिक मेले होते हैं, लेकिन कई वर्षों से उसी समय घोड़ों और पशुओं के मेले लगे हैं, जिनमें बहुत वाणिज्य व्यापार होता है और सरकार द्वारा इनाम दिए जाते हैं। इस जिले में बहुत से दूसरे मेले मनाए जाते हैं जो सब के सब धार्मिक होते हैं। इनमें से मुख्य हैं। मसानिया जो बटाला के निकट एक मुसलमान सन्त की जियारत-गाह पर होता है दो बड़े मेले तरण तारण में मार्च व अगस्त में, एक नवम्बर में रामतीरथ पर, जो अमृतसर के उत्तर-पश्चिम की ओर करीब आठ मील पर हिन्दू तीर्थ-स्थान है। धार्मिक मेले गोविन्दवाल, खडूर, डेहरा नानक और दूसरे सिक्खों के जियारतगाहों पर लगते हैं; परन्तु ऊपर लिखित मुख्य हैं।

नीचे प्रति १०,००० जन संख्या का विभाजन भाषा द्वारा किया गया है, छोटी संख्यायें छोड़ दी गई हैं।

भाषा		प्रति १०,००० जन संख्या का अनुपात
हिन्दुस्तानी	...	४८
बागरी	...	१४
डोगरी	...	९
काश्मीरी	...	३०७
पञ्जाबी	...	९,५९५
पश्तू	...	६
सभी भारतीय भाषाएँ	...	९,९९३
अभारतीय भाषाएँ	...	७

नीचे प्रति १०,००० पर शिक्षित स्त्री-पुरुषों की संख्या दी गई है :—

	शिक्षा	ग्रामीण जन संख्या	नागरिक जनसंख्या
पुरुष	विद्यार्थी	९५	१७६
	लिख-पढ़ सकने वाले	२८१	५०५
स्त्रियाँ	विद्यार्थिन	२.२	११.२
	लिख-पढ़ सकने वाले	३.०	१४.७

पिताओं के उद्यमों और धर्मों के अनुसार इन मदरसों के विद्यार्थियों की संख्या इस अनुपात से है :—

विवरण	लड़के	लड़कियाँ
योरोपीय तथा ईसाई	...	३
भारतीय ईसाई	२०	८५
हिन्दू	२,४२८	२०२
मुसलमान	१,६१०	३७३
सिक्ख	१,१६४	६६८
अन्य	५	...
कृषकों के बच्चे	१,५८१	१८०
अकृषकों के बच्चे	३,६४६	१,१५१

इसके नीचे विस्तार पूर्वक छापे के कारखाने दिए गए हैं. ये सरकारी नहीं हैं। यहाँ जिले भर के आंकड़े दिये गए हैं जिनमें से प्रकाशित होने वाली पत्रिकाओं की संख्या भी दिखाई गई है।

छापेखाने का नाम	वहां के सामयिक प्रकाशन
वकीले हिन्द	४
चश्मांएनूर	२१
रियाज़ हिन्द	३०
अकाल जन्त्री	१३

१८६३ में क्रिश्चियन वर्नाक्युलर एडुकेशन सोसाइटी ने जो भारतीय विद्रोह की स्मृति में स्थापित हुई थी। एक एजेण्ट पञ्जाब में आदमियों के लिये एक नार्मल स्कूल खोलने के लिये भेजा, जिन्हें सरकारी स्टैण्डर्ड के अनुसार शिक्षक बनने की शिक्षा देनी थी। काम १८६५ में शुरू हुआ। आधुनिक इमारत जो जालन्धर रोड पर स्थित है १८७० में पूरी हुई और चली थी। इसमें एक नार्मल स्कूल है जिसमें कम से कम ६० विद्यार्थी आ सकते हैं, इसी में १०० लड़कों के लिए एक मांडल स्कूल और प्रिंसिपल का निवास-स्थान भी है। विद्यार्थी सभी मिशन और सरकारी स्कूलों के लिए जाते हैं और ट्रेनिङ्ग देकर पञ्जाब भर में शिक्षक बना कर भेज दिए जाते हैं। बाइबिल दोनों स्कूलों में पढ़ाई जाती है। लगभग १५०० आदमी इस विद्यालय में पढ़ाए जा चुके हैं। वे पञ्जाब के सभी भागों में काम कर रहे हैं।

व्यापार और कला-कौशल में लगे हुए लोगों

की धन-दौलत का कोई सन्तोषजनक अनुमान लगाना असम्भव है। लेकिन ऐसे व्यक्तियों की संख्या जिनकी आय पर कर लिया जाता है कम ही है। साधारणतया यह कहा जा सकता है कि क़स्बों के अधिकतर दस्तकार अत्यन्त निर्धन हैं, जब कि उनके साथी जो गाँव में रहते हैं कठिनता से स्वयं कृषकों की अपेक्षा कम फ़सल की प्रकृति पर निर्भर रहते हैं। उनका टैक्स उपज के थोड़े से भाग के रूप में होता है और जहाँ यह बात भी नहीं होती, उनकी उपजों के लिये माँग आवश्यकतया उनके ग्राहकों की सम्पन्नता के साथ बदलती रहती है। शायद चमड़े का काम करने वालों को छोड़ देना चाहिए क्योंकि वे सूखे के साल में मर जाने वाले पशुओं की खालों से काफ़ी अनाज पा लेते हैं। कृषक गणों की परिस्थितियों का वर्णन अभी किया जायगा।

इस जिले की मुख्य उपजातियाँ पञ्जाब भर में फैली हुई हैं और अमृतसर में रहने वाले उनके प्रतिनिधियों में कोई स्थानीय विशेषता नहीं होती।

जाट लोग इस जिले की कुल जन संख्या के लगभग २५ प्रतिशत से ज़रा कुछ कम ही अधिकतर सिक्ख हैं। माँझा या बड़ी दोआब के ऊपरी भाग के सिक्ख जाट सिक्ख सेनाओं के फूल थे और उनमें ऐसे मनुष्य हैं जो संसार के किसी देश में मानव जाति के उत्तम उदाहरण माने जाएँगे। वे मेहनती और किफ़ायतशार होते हैं और मुक़दमे बाज़ होने पर भी साथ ही साथ शायद इतने ईमानदार और साधारण जाति के हैं जितनी भारत में पाई जाती है क्योंकि क़ानून के दरबारों में झूठ बोलना साधारण और रीति है, और उसमें कोई बुराई या बदी नहीं समझी जाती। वे प्रशंसनीय सैनिक होते हैं, जो भारत के किसी देशीय ट्रूप से घटिया नहीं होते हैं। परन्तु अफ़ग़ानों की टक्कर के नहीं हैं, हां कठिन परिस्थितियों में कहीं अधिक विश्वसनीय होते हैं। इनमें सनक नहीं होती जिसके कारण पठान लोग हमेशा ख़तरनाक होते हैं। मनुष्यों या औरतों द्वारा पाक-साफ़ रहना गुण नहीं माना जाता और वे नशीली दवाइयों और स्पिरिट का काफ़ी मात्रा में प्रयोग करते हैं लेकिन इनमें दोष कम हैं और गुण अधिक; यद्यपि इनकी जाति बुद्धिमान् नहीं है, तथापि इनमें काफी हीलाबाजी है और इनका चरित्र साधारणतया स्वतन्त्र होता है। जाट सिक्ख आम तौर से लम्बा और ताक़तवर होता है उनकी बनावट सुन्दर और सुडौल होती है। शीघ्र विवाह हो जाने के कारण औरतें आदमियों की अपेक्षा कहीं अधिक शरीर से कमज़ोर होती हैं, और वे कदापि सुन्दरी नहीं होतीं। निम्नलिखित आँकड़े मुख्य जाट उपजातियों का प्रदर्शन करते हैं :—

जाटों के विभाग

नाम	संख्या	नाम	संख्या
औलक	८,०५३	काहकोन	१,१५५
उठवाल	४४५	खरैल	१,००१
बाजवा	१,१७७	खम्मन	१,०२२
बरार	७०२	मान	२२
भुल्लड़	४३३	मन्हास	६२४
बुट्टर	४६४	विर्क	१,१६२
चाल	५,३५३	बरायच	२,२०५
पन्नून	५,२६८	हिंजरा	२,२२७
चाहल	४,५५८	चद्दर	१,४६६
चौहान	७६८	वाहा	२,०३२
छीना	२,४६२	ढडेआ	१,५२३
चीमा	१,११६	भगू	१,६५२
धालीवाल	१,६६८	छावर	१,४६६
देव	६१५	दूलर	२,८५८
ढिल्लन	१५,७२१	सेखों	२,११२
रन्धावा	२०,१०३	ससोई	१,३२६
सिन्धु	२४,०५७	सघेरे	१,८२४
सोहाल	२,६३२	कलेर	३,०८६
सराय	१,६४३	माहल	२,३८१
खाग	३,५३१	पँवर	६५२
गिल	३०,७३७		

नीचे के आँकड़े राजपूतों की मुख्य उपजातियां बतलाती हैं। इस जिले में थोड़ा बहुत महत्व रखने वाले राजपूत थोड़े ही हैं। ये विशेष कर अमृतसर में ही पाए जाते हैं, और विविध उद्यमों में लगे हुए हैं। वे बिला शिरकत

मुसलमान हैं। राजपूत कृषक केवल निचली भूमि में पाये जाते हैं जो रावी और व्यास के किनारे-किनारे फैली हुई है :—

राजपूतों के विभाग

नाम	संख्या	नाम	संख्या
भट्टी	१०,६१०	सूँवर	४२६
चौहान	६७०	नरू	८०५
सलहरिया	४२२	अवान	१,३९२
खोखर	३,०१		
मन्हास	५१६		
मंज	११७०		

कश्मीरी लोग पूरे मुसलमान हैं, और अमृतसर में ही रहते हैं। उनमें से क़रीब सभी काश्मीर से आ बसे हैं. ये लोग शाल बनाने का काम करते हैं, जो अमृतसर में काफ़ी महत्व का है। वे मुक़द्दमेबाज़, धोखेबाज़ और डरपोक होते हैं उनकी आदतें इतनी गन्दी होती हैं कि एक चौथाई नगर जिसमें वे रहते हैं निरन्तर खतरे का उद्गम बना रहता है क्योंकि इससे फैलने वाली बीमारियाँ होती हैं। व्यक्तिगत रूप से काश्मीरी छोटे और दुर्बल होते हैं. शायद अपने उद्यम की प्रकृति के कारण वे यहूदियों से बहुत मिलते-जुलते हैं, परन्तु नवयुवतियाँ साधारण रूप से लावण्यमयी होती हैं।

खत्रियों की मुख्य उपजातियाँ ये हैं :—

घुँजाही	अरोड़ों में से कुछ उत्तराधि, कुछ गुजराती, और बाकी दरवाने होते हैं।
सरीन	
चर्जराटी	
जौसन	
जम्मूँ	
खन्ने	
कपूर	
मर्होत्रा	

यहाँ पैदा होने वाली चीजें ये हैं :—

चावल, गेहूँ, ज्वार, बाजारा, मकई, जौ, चना, मोठ, खसखस, तम्बाकू, रुई, नील, गन्ना और तरकारियाँ।

अफ़ीम, तिलहन, भी उगाए जाते हैं।

नीचे जानवरों की संख्या दी जाती है।

१	२	३	४	५	६	७
जानवरों की प्रकार	पूरे ज़िले के			तहसीलों के		
				अमृतसर	तरण तारण	अजनाला
गाएँ और बैल			१४७,०५६	४५,०००	६१,८१५	६२,१६१
घोड़े			१,४४३	७५०	५१५	५७८
टट्टू			१,४७५	५००	३६७	६०८
गधे			६,०६८	२,२५५	२,०५५	१,७६८
भेड़ व बकरियाँ			४६,२१४	३,७५०	२५,२२९	१८,२३५
सूअर			५०	५०	...	...
ऊँट			३११	४५	२०९	५७
गाड़ियाँ			१,८७५	१,५००	३५७	१८
हल			५६,१२९	१८,५१०	१९,६८५	१७,५९४
नावें			१६३	—	११७	४६

यहाँ के निवासियों के उद्यम ये हैं :—

कृषि
शासन
सेना
धर्म
नाई
महाजन, व्यापारी, सौदागर अनाज का काम करने वाले
मजदूर
चरवाहे
रसोइए और दूसरे नौकर
पानी ढोने वाले
झाड़ू देने वाले
भूसे, पत्तियों, गन्ने और किलकका करने वाले
चमड़े का काम करनेवाले
जूता बनाने वाले
अनाज पीसने वाले
हलवाई, परचूनिए
बोझा ढोने वाले और नाविक
ज़मींदार
किराए दार काश्तकार
मिलकर काम करनेवाले काश्तकार
ऊन का काम करनेवाले
रेशम का काम करनेवाले
रुई का काम करनेवाले
लकड़ी का काम करनेवाले
कुम्हार
सोने और चाँदी का काम करने वाले
लोहेका काम करनेवाले
भिखारी, फ़क़ीर और ऐसे दूसरे लोग

यहाँ की ११ मुख्य दस्तकारियाँ ये हैं :—

रेशम, कपास, ऊन, दूसरे सूत, काग़ज़, लकड़ी, लोहा, पीतल और तांबा, इमारतें, रंगाई और रंगों की बनाई।

अन्य ये हैं :—

चमड़ा, बर्तन बनाना (साधारण व चमकदार), पश्मीने व शाल, दरियाँ सोना-चाँदी-जवाहिरात, अन्य दस्तकारियाँ।

तहसीलों के क़स्बे ये हैं :

तहसील	क़स्बे
अमृतसर	अमृतसर जंडियाला मंजीठा बुन्दाला
तरण तारण	वैरोवल सरहली कलाँ तरण तारण
अजनाला	रामदास

दूरियाँ

	अजनाला	अमृतसर	अटारी	छबल	चोगावाँ	फ़तेहगढ़	घरिन्दा	हरीकी	जण्डयाला	काथू नङ्गल	खासा	मजीठा	राजा सन्सी	राया	सिरहाली	शेरों	तरण त	वैरो	वज़
अजनाला																			
अमृतसर	१७																		
अटारी	२०	१८																	
छबल	२८	११	१८																
छोगावाँ	१२	१५	८	...															
फ़तेहगढ़	१२	१६	...	...	२२														
घरिण्डा	...	१२	४	१४	७														
हरीकी	५०	३२	...	...	...	४६													
जण्डयाला	२८	११	२९	२०	२६	२७	२६												
काथूनङ्गल	...	१२	२०	२३	२७	.	२४	४४	३										
खास	...	८	१०	...	...				१९	२०									
मजीठा	...	१०	२८	२१	...		२२	४३		५									
राजा सन्सी	१०	७	..	१८	...			४०	१८										
राया	...	२४	४२	...	३६				१३										
सिरहाली	४४	२७	...	...	...			५											
शेरों	२६	१९	...	...	...	३५		१४		२१	२९	२६	७	५					
तरण तारण	२९	१२	२२	९८	२७	२८	१९	२१	१०	२४	२२	१९	१२						
वैरोवाल	...	२६	...	...					१३										
वज़ीर भरज़र	...	२८	४६	...	...				१७			४							

अमृतसर का व्यापार पंजाब भर में सबसे अधिक व सबसे उन्नतिशील है। वार्षिक आयतों की कीमत का अनुमान २ करोड़ रुपयों पर लगाया जाता है और निर्यात क़रीब डेढ़ करोड़ रुपये का होता है। इसका व्यापार बुखारा, काबुल, काश्मीर कलकत्ता, बम्बई, सिन्ध, राजपूताना, यू० पी० और पंजाब सरकार के प्रदेशों में जो मुख्य बाजार हैं उनसे होता है। सबसे अधिक उल्लेखनीय व्यापार बुखारा के साथ होता है। यह दूरी बोझा ढोने वाले जानवरों से तय की जाती है। कच्चे रेशम का आयात २५ लाख का प्रति वर्ष होता है २ लाख का रेशमी कपड़ा आता है सोना-चाँदी दस लाख का होता है और टुकड़ों की कीमत लगभग ३० लाख होती है, और चीनी मिट्टी व पहाड़ी चाय तथा दूसरी चीजें भी दस लाख की आ जाती हैं। आयात की जानेवाली मुख्य चीजें ये हैं :—

अनाज, दालें, चीनी, तेल, नमक, तम्बाकू, कपास (कच्ची व कपड़े के रूप में) अंगरेज़ी कटपीस और डोरा, पश्मीना के सामान और डोरा, पश्म (शाल की ऊन), रेशम (कच्ची व कपड़े के रूप में), चौड़ा कपड़ा, कम्बल, शीशा, मिट्टी की चीजें, अंगरेज़ी चमड़ा, धातुएँ, चाय, रंग, ज़ाफ़रान, काग़ज़, दवाइयाँ, घोड़े ऊँट, चौपाए, खाल व चमड़ा, तारकोल, जलाने की लकड़ी, चारा और टाट।

जिले भर के व्यापार का केन्द्र अमृतसर नगर में है; इसके बाद यदि कोई दूसरा महत्त्वपूर्ण व्यापारिक स्थान है तो वह जंडियाला है।

यहाँ से बाहर जाने वाली चीजें ये हैं :—
अनाज व दालें, गन्ना, रुई, तिलहन, फल व तरकारियां काग़ज़, ऊन, घी, अफ़ीम, पीतल व तांबे के बर्तन।

सिन्ध, पंजाब और दिल्ली की जो ट्रेन दिल्ली से लाहौर व मुल्तान को जाती है, वह इस जिले से होकर गुज़रती है और इसके स्टेशन पूर्वीय व्यास पर हैं। बुटारी ७ मील, जण्डियाला ९ मील, अमृतसर १० मील, खासा ७ मील व अटारी ९ मील। पहली जनवरी १८८४ को एक रेलवे लाइन अमृतसर से दीनानगर को खोली गई थी (दीनानगर गुरदासपुर जिले में है)। अमृतसर जिले में तीन स्टेशन हैं, वरीका, कथूनंगल और जैन्थपुर।

नीचे जिले की मुख्य सड़कें दिखाई गई हैं। ठहरने के स्थान भी बताए गए हैं :—

मार्ग	ठहरने का स्थान	मीलों में दूरी
लाहौर से जालन्धर	गिरिण्डाह	...
	अमृतसर	१२
	जंडियाला	११
	रायाह	१२
अमृतसर से गुरदासपुर	कथू नङ्गल	१२
अमृतसर से फ़ीरोज़पुर	चब्बाल	११
अमृतसर से ज़ीरा व फ़रीदकोट	तरण तारण	१३
	सरहाली	१४
अमृतसर से गुजरानवाला	लोपोकी	१२
अमृतसर से स्यालकोट	राजा सान्सी	७
	अजनाला	९

यहाँ कच्ची सड़कें भी हैं जिनमें से एक अमृतसर से नवापिन्ड और सईदों के होती हुई फ़तेहगढ़ व श्रीगोविन्दपुर (गुरदासपुर जिले में) की तरफ़ चली गई है; पहली १६ मील और दूसरी २४ मील है और अमृतसर से मजीठा १० मील है।

अमृतसर का डाक बंगला सब सामान देता था और नौकरों से तो वह भरा पड़ा था। प्राचीनकाल में यहाँ की सरायों में उठने बैठने व खाने पीने की चीजें मिला करती थीं परन्तु नौकर नहीं। अब तो बहुत से होटल खुल गए हैं। सड़क के व नहर के बंगले जिनमें सिर्फ़ मेज़ कुर्सियाँ मिला करती थीं। अब नहीं दिखाई देते। एक डाक गाड़ी और मेलवान डलहौजी सड़क पर पठान कोट को जाती हैं और

वैरम जी व बद्रीदास (अमृतसर के) दोनों के पास एक-एक बैलगाड़ी उसी स्थान को भेजने के लिए हैं।

एक इम्पीरियल डाकखाना अमृतसर में है। डिस्ट्रिक्ट पोस्ट आफिस अजनाला, अटारी, ब्यास, चव्वाल, धारीवाल, फतेहगढ़, जंडियाला, कथू नंगल, लोपोकी, सटियाला, तरण-तारण, मजीठा, राजा सान्सी, रामदास, सरहाली, सराय अमानत खाँ और वैरोवाल में हैं। सभी सेविंग बैंक और मनीआर्डर के दफ्तरों का काम देते हैं।

टेलीग्राफ की एक लाइन रेलवे के साथ-साथ चलती है। हर स्टेशन पर एक तार का दफ्तर है, तथा एक इम्पीरियल टेलीग्राफ अमृतसर को उन सभी स्टेशनों व नगरों से मिलाता है जहाँ तक तार बढ़ा दिए गए हैं। अमृतसर से डलहौजी को भी तार की एक लाइन जाती है।

—'ललित' शाहजहाँपुरी

कर्नाल

कर्नाल जिले का क्षेत्रफल ३१२८ वर्गमील है। यमुना नदी इस जिले की पूर्वी सीमा पर बहती है और इस जिले को संयुक्त प्रान्त सहारनपुर मुजफ्फर नगर और मेरठ जिलों से अलग करती है। उत्तर की ओर अम्बाला जिले की जगाधरी और अम्बाला तहसीलें हैं। उत्तर-पश्चिम और पश्चिम की ओर पटियाला और झींद राज्य हैं। इसके दक्षिण में रोहतक और दिल्ली जिले हैं। जिसकी अधिक से अधिक लम्बाई ६४ मील और चौड़ाई ४४ मील है।

इस जिले में पानीपत, कर्नाल, थानेसर और कैथल की ४ तहसीलें हैं। इस जिले के मध्यवर्ती भाग में ऊंचा जल विभाजक है इसके पूर्व की ओर का वर्षा जल जमुना में पहुँच कर गंगा के मार्ग से बंगाल की खाड़ी में पहुँचता है।

जल विभाजक के पश्चिम में पुराना ऊँचा मैदान या बांगर है। यह बांगर जिले की समस्त लम्बाई में यमुना में कछारी मैदान के समानान्तर चला गया है। पानीपत, कर्नाल, और थानेसर तहसीलों में यही दो प्राकृतिक विभाग हैं। कर्नाल कैथल तहसीलों के पश्चिम में ऊँचा और खुश्क नर्दक प्रदेश है। इसके पश्चिम में फिर बांगर है। यह रोहतक और हांसी के बांगर के समान है। थानेसर तहसील और नर्दक प्रदेश को छोड़ कर इस जिले के बांगर में सब कहीं पश्चिमी यमुना नहर से सिंचाई होती है। जिले के उत्तरी भाग में थानेसर तहसील और कैथल तहसील के गुहला परगने में बांगर के पश्चिमी भाग को कई पहाड़ी धारायें पार करती हैं। इनमें मार्कण्डा, उम्ला सरस्वती चौटांग और रकशी प्रधान हैं। इन धाराओं ने कई प्रकार की मिट्टी बनाई है। मार्कण्डा का मटियार बड़ा उपजाऊ है। चाचरा और नैली की कड़ी चिकनी मिट्टी ढाक से ढकी है। घग्गर नदी जिले की उत्तरी सीमा बनाती है। इसके आगे पटियाला राज्य में फैली हुई अनौंली और सिधोवल की जागीरें ब्रिटिश राज्य में राजनैतिक कारणों से मिलाई गई हैं। यह जागीर एक विस्तृत मैदान में स्थित हैं। इस मैदान में अधिकतर रेतीले टीले हैं। पर निचले उपजाऊ भागों में अच्छी खेती होती है। यहां कुओं से सिंचाई हो जाती है।

इस जिले के कई भागों में जंगल है। खादर और बांगर के उपजाऊ मैदान में स्थान स्थान पर आम और जामुन के बाग हैं। नर्दक, चाचरा और नैली में ढाक का जङ्गल है। पीपल, मोर और पिलखन के पेड़ सब कहीं मिलते हैं। खादर में खजूर और कीकर (बबूल) बहुत है। नहर के पड़ोस वाले भागों में शीशम के पेड़ मिलते हैं। कुछ पेड़ पुरानी शाही नहर के पड़ोस में मिलते हैं। बांगर और नर्दक प्रदेश में दूब, अंजन, पल्वा आदि घास बहुत है। यह ढोरों के चरने के लिये बड़ी अच्छी होती है। पत्ती से छप्पर छाया जाता है।

खादर की घास अच्छी नहीं होती है। यमुना तट के पास झाऊ बहुत होती है।

जुलाई, अगस्त और सितम्बर महीनों में अच्छी वर्षा होने और नहर में पानी न खर्च होने से यमुना नदी में बहुत जल भर जाता है और यह एक डरावनी नदी सी दिखाई देती है। इसकी बाढ़ से खादर के गांव डूब जाते हैं। खादर की असंख्य धारायें उमड़ आती हैं। खरीफ की फसल भी बाढ़ में प्रायः नष्ट हो जाती है। पर रबी की फसल को इस बाढ़ से बड़ा लाभ होता है। खादर की एक प्रसिद्ध धारा नून है। यह उत्तरी इन्दरी खादर में बहती है। कुंजपुर के पास यमुना की पुरानी धारा है। दोलाहा धारा बरसात तक जाती है। कभी कभी यह पानी पत तक पहुँचती है। कर्नाल तहसील की नदियों का ढाल संयुक्त प्रान्त की ओर है। पानी पत और थानेसर की नदियों का रुख पंजाब की ओर है।

रकशी (रत्ती) धारा की लम्बाई इस जिले में पूर्व से थानेसर तहसील के उस स्थान (जहाँ यह जिले में प्रवेश करती है) से लडवा के पास चौटांग के संगम तक (जहाँ यह प्रधान और प्रथम धारा से मिल जाती है।) केवल १० मील है। ऊपर के कुछ गांवों को छोड़ कर इसकी बाढ़ बहुत दूर तक नहीं जाती है। लडवा के नीचे इसकी तली इतनी गहरी है कि बाढ़ में इसका जल पड़ोस तक के खेतों तक नहीं पहुँचने पाता है। बाढ़ का सब जल यह अपने ऊंचे किनारों के नीचे रखकर ही बहा ले जाती है। रत्ती से एक छोटी (कुरुक्षेत्र) धारा काट कर थानेसर के पवित्र ताल तक पहुँचा दी गई है।

चौटांग नदी अपना मार्ग बदलती रहती है। थानेसर तहसील में पहुँचने पर सीमा से प्रायः ३ मील की दूरी पर पहली धारा मिट्टी से भर गई है। अधिकांश जल पुरानी धारा के बायें किनारे के गढ़ों को पार करता हुआ बहता है। लडवा से २ मील उत्तर की ओर यह जल एक झील में पहुँचता है। यहाँ से कुछ फालतू जल चक्कर काट कर रत्ती नदी में पहुँचता है। कुछ जल सरस्ती नदी में पहुँचा दिया जाता है। चौटांग की लाई हुई कांप से अम्बाला जिले के कुछ गांवों को बड़ा लाभ हो जाता है। पर कई भागों में इस मिट्टी के भर जाने से इस जिले के खेतों को भारी हानि हुई।

सरस्ती—सिंघौर के ऊपर सरस्ती की कोई निश्चित तली नहीं है। पर निचले मार्ग में इसके बाढ़ का पानी किनारों के इधर उधर फैलकर धान के खेतों को सींचने के काम आता है। पर इसके किनारे ऊंचे और सपाट हैं। इसलिये इसकी बाढ़ दूर तक नहीं पहुँचती है। थानेसर के पास गांव वाले बांध बनाकर अपने खेतों को सींचते हैं। सैंसा झील से सरस्ती नहर पानी लेकर अधिक खेतों को सींचती है।

मरकंडा नदी की बाढ़ दूर तक पहुँचती है। कुछ गांवों में बाढ़ के बाद यह कांप (कछारी मिट्टी) की गहरी तह छोड़ देती है। यह बालू बहुत कम छोड़ती है केवल किनारों के पास कुछ बालू रहती है। कुछ भागों में उसकी तली ऊंची है और यह अपना मार्ग बदल देती है। इसका कुछ पानी सरस्वती नहर में जाता है। मार्कण्डा नदी के ऊपर शाहाबाद के पास रेल और सड़क का पुल बना है। कल्सना के नीचे इससे एक शाखा फूटती है। इसमें वर्षा ऋतु में कुछ पानी बहुत रहता है। यह सैंसा झील में गिर जाती है। इसकी कांप में चना और गेहूँ की फ़सलें अच्छी होती हैं। उम्ला नदी इस जिले के उत्तरी-पश्चिमी कोने में केवल ८ मील बहती है। पर इसकी बाढ़ का पानी अम्बाला जिले से इस जिले में होकर मजरा के पास आने लगता है। इस बाढ़ से फसलें प्रायः डूब जाती हैं। अन्त में उम्ला घग्गर नदी में मिल जाती है।

सरस्ती नहर एक कृत्रिम धारा है। यह सैंसा झील को सुखाती है सरस्ती नदी के दक्षिण की भूमि को सींचती है। जहाँ पहोवा से थानेसर को जानेवाली सड़क नहर को पार करती है वहीं इस पर फाटक बने हैं। कुछ मील नीचे इससे कैथल शाखा फूटती है। यह पश्चिमी यमुना नहर और सरस्वती नदी के बीच की ऊंची भूमि को सींचती है। प्रधान नहर बांगर के किनारे की ओर बहती है। यह नहर १८९६ ई० में बनी।

घगर—घगर की प्रधान धारा उंतसरवाली नदी कहलाती है। यह अनौली के पूर्व के गांवों के पड़ोस में बहती है। बेंगला के पास इसमें गडेया धारा मिलती है। यहाँ इस नदी ने ४० फुट गहरी तली खोद ली है। धन दौता के पास तक यह पश्चिम की ओर बहती है। ऊंची बाढ़ आने पर इसका कुछ पानी पुरान तक पहुँच जाता है। रट्टा खेडाल कमान के पास पटियाला नदी अपना पानी इसमें गिरा देती है। यहाँ से यह दक्षिण-पश्चिम की ओर बहती हुई उलौना के पास कर्नाल जिले के बाहर चली जाती है। धनदौता से बूबकपुर तक आरम्भ में घगर नदी उस तली में होकर बहती थी जहाँ आजकल पुरान है। बूबकपुर के पास यह मुड़ती है। लालपुर और भट्टियां होती हुई वर्तमान मार्ग बनाती है। बूबकपुर के पास इस में से अगौंध शाखा निकाली गई।

कर्नाल जिले में जो पानी नदियों नहरों और बाढ़ से आता है उसका बहुत सा अंश जमीन के भीतर मिल जाता है। कुओं के खोदने से यह अभ्यन्तर जल ऊपर लाया जाता है। पर कुओं की गहराई कहीं भी २५ फुट से कम नहीं है। खादर प्रदेश में कुओं में १५ फुट की गहराई पर पानी निकल आता है। थानेसर, कर्नाल और कैथल के के बांगर में अधिक गहराई पर पानी मिलता है।

जलवायु—फागुन, चैत, बैशाख और जेठ गरमी के महीने हैं। आषाढ़, सावन, भादों और आश्विन, चौमासा या बरसात के महीने हैं। कार्तिक, अगहन पौष, मास स्याल, जड्डा या शीत काल के महीने हैं। पूर्वा हवा पानी लाती है। पछवा (हवा) धरती को सुखाती है। औसत से थानेसर में २९ इंच कर्नाल में ३६' पानीपत में २६' कैथल में १९' और धुला में १८ इंच वर्षा होती है। वर्षा की कमी से यहां नहरों और कुओं से सिंचाई होती है।

गन्ना, कपास, धान, मक्का, ज्वार, बाजरा, उर्द, मूंग, तिल, गेहूँ, जौ, चना, और मसूर प्रधान फसलें हैं कुछ गांवों में तम्बाकू भी उगाई जाती है।

इस जिले के लोगों का प्रधान पेशा खेती है। पर प्रायः १८ प्रतिशत लोग कपास ओटने, दरी, बुनने, रंगने, कम्बल बनाने, शीशे का सामान तयार करने और तांबे, पीतल के बर्तन बनाने में लगे हुये हैं। कपास ओटने का पहला कारखाना पानीपत में १८९७ ई० में खुला था। इस समय जिले में दस से ऊपर कपास ओटने के कारखाने हैं। ओटने का काम अक्तूबर में आरम्भ होता है और मार्च में समाप्त हो जाता है। इससे हाथ की चरखी प्रायः लुप्त सी हो गई है। कस्बों में धानकूटने और आटा पीसने की भी मिलें हैं। पानीपत में तांबे और पीतल के बर्तन अच्छे बनते हैं। यहां हुक्का और सरौता भी बनते हैं। यहीं कुछ लुहार खेती के औजार बनाते हैं। शीशे की गोली भी बनाई जाती है। कुछ लोग चूड़ी भी बनाते हैं। नर्दक गांवों में कम्बल बुने जाते हैं। कर्नाल में दरी बुनी जाती हैं। कर्नाल के मोची जूते बहुत बनाते हैं। कुम्हार मिट्टी के बर्तन और बढ़ई लकड़ी का सामान तयार करते हैं।

इस जिले की कल्लार (रकारी मिट्टी) से प्रति-वर्ष प्रायः ४००० मन शोरा तयार किया जाता है। गांव के लोग अच्छा घी तयार करके कस्बों में बेच देते हैं।

गेहूँ, कपास, चना, चावल और घी इस जिले के प्रधान निर्यात हैं। तांबे और पीतल के बर्तन भी बाहर भेजे जाते हैं। तेल, नमक तरह तरह का बना हुआ माल बाहर से आता है। पक्की सड़कों के अतिरिक्त बहुत सा माल रेल द्वारा आता जाता है।

नगर

कर्नाल शहर इस जिले का केन्द्र स्थान है। यह यमुना के पुराने किनारे पर वर्तमान धारा से ७ मील की दूरी पर स्थित है। कहते हैं इस नगर को महा-भारत कालीन राजा कर्ण ने बसाया था। इसी से इसका यह नाम पड़ा। पर बहुत समय तक यह नगर इतिहास में अज्ञात रहा। १५७३ ई० में इब्रा-हीम हुसेन मिर्जा ने सम्राट अकबर के विरुद्ध विद्रोह का झंडा उठाया और इस नगर को लूटा। १७०९ ई० में बन्दा बैरागी ने कर्नाल के समीपवर्ती प्रदेश को उजाड़ डाला। १७३९ ई० में यहीं नादिरशाह ने मुहम्मदशाह को हराया। १७६३ ई० में सरहिन्द के पतन के बाद झींद के राज गजपत सिंह ने इस

पर अधिकार कर लिया। पर १७७५ ई० में दिल्ली के सूबेदार नजफ खाँ ने इसे फिर ले लिया। एक बार गजपत सिंह ने फिर इसे ले लिया। पर १७८७ ई० में यहाँ मरहठों का अधिकार हो गया। कुछ समय में लडवा के गुरुदीन सिंह को यह नगर मिल गया। १८०१ ई० में कर्नाल पर अंग्रेजों का अधिकार हो गया। पहले यहाँ एक छावनी भी बनी थी। पर जलवायु स्वास्थ्यकर न होने से १८४१ ई० में यह तोड़ दी गई। अलीकलन्दर की स्मृति में यहाँ बादशाह गयासुद्दीन ने एक संगमरमर का मकबरा बनवाया। यहाँ अस्पताल, हाई स्कूल, कचहरी दिल्ली अम्बाला कालका रेलवे की स्टेशन और म्यूनिसिपेलिटी है। अधिकतर आमदनी चुंगी से होती है। इस नगर की जनसंख्या प्रायः २५००० है। पानीपत कस्बा एक पुराने ऊंचे टीले पर बसा है। इसके चारों ओर पहले यमुना नदी बहती थी। इस कस्बे में हरे भरे पेड़ बहुत हैं। इसके बीच बीच में सफेद घर बड़े सुहावने लगते हैं। पुराने समय में दिल्ली को छोड़ कर वह उत्तरी भारत में सब से बड़ा शहर था। पुराने खंडहर नगर के चारों ओर दूर तक फैले हुये हैं। कब्रों और टूटे मकबरों के बीच में इब्राहीम लोदी की कब्र है। जो १५२६ ई० में बाबर से लड़ता हुआ मारा गया था। कहते हैं शान्ति स्थापित करने के लिये पांडवों ने कौरवों से पांच पत या प्रस्थान मांगे थे। इन्हीं में पानीपत एक था। पानीपत के मैदान में तीन बार भारत के भाग्य के निर्णय करने वाले ३ प्रसिद्ध हुये। १५२६ ई० बाबर और इब्राहीम लोदी से युद्ध हुआ। विजय के उपलक्ष में बाबर ने यहां एक बाग लगवाया और तालाब बनवाया। यहां से ४ मील की दूरी पर १५५६ ई० में सलेमशाह को हटाया और इस विजय की स्मृति में उसने चबूतरा फतेह मुबारक बनवाया। १७६१ ई० में सुआखेड़ी गांव के पास मरहठों और अहमदशाह अब्दाली के बीच में युद्ध हुआ था।

अली कलन्दर शाह का मकबरा अधिक पुराना है। इसके खम्भे कसौटी पत्थर के बने हैं इन खम्भों को अकबर के एक दरबारी ने बनवाया था। यहां तहसील, थाना और म्यूनिसिपेलिटी है। दिल्ली अम्बाला कालका रेलवे के खुलजाने से पानीपत का व्यापार बढ़ गया है। नगर की जनसंख्या २६,००० है। इसमें प्रायः एक तिहाई हिन्दू और जैन हैं। शेष मुसलमान हैं।

कैटाल में तहसील, थाना और म्यूनिसिपेलिटी है। इस नगर की जनसंख्या १३,००० है। इसमें ६००० मुसलमान शेष हिन्दू और सिक्ख हैं।

यह एक कृत्रिम झील के किनारे स्थित है। यहाँ नहाने के लिये कई घाट बने हैं। कैथल के सामने एक ऊंची दीवार है। यहाँ की गलियाँ तंग पर पक्की बनी हैं। सिवान दरवाजे के पास शेख शहाबुद्दीन बलखी का मकबरा है। वह ६७३ हिजरी में बलख से हिन्दुस्तान आया था और कैथल के लड़ाई में मारा गया। शेख तैयूब की मस्जिद भी पुरानी है। शाह विलायत का मकबरा गोरी बादशाहों के समय में बनवाया गया था। शाह कमाल के मकबरे के पास वर्ष में दो बार मेला लगता है। यहीं हनूमान की माता अंजनी का मन्दिर (स्थान) बना है। पुराने किले के खंडहर ऊंचे किनारे पर दूर तक फैले हुये हैं। यहाँ का सरोवर कुरुक्षेत्रों का एक तीर्थ माना जाता है। कहते हैं इसे युधिष्ठिर ने बसाया था। इसका हनूमान से भी सम्बन्ध है। संस्कृत में इसे कपिस्थल कहते हैं। इससे बिगड़कर कैथल नाम पड़ा है। अकबर के समय में नगर में बहुत सुधार हुआ। यहाँ एक किला बनवाया गया। १७६७ ई० में यहां सिक्ख सरदार भाई देसू सिंह का अधिकार हो गया। १८४३ ई० में इनकी जागीरें अंग्रेजों के हाथ में आ गईं। कुछ समय तक कैथल एक प्रथक जिला रहा। पर १८४९ ई० में यह थानेसर जिले में मिला दिया गया। १८६२ ई० में यह कर्नाल जिले में शामिल हो गया। ताल के किनारे पर महल या किले के खंडहर दूर से दिखाई देते हैं। यहाँ थाना, स्कूल और म्यूनिसिपेलिटी है। लकड़ी के रंगीन खिलौने और कम्बल बनाने का काम बहुत होता है। यहाँ की मंडी में डाक और तार घर है। कपास ओटने, धान कूटने और आटा पीसने की कई मिलें हैं।

थानेसर नगर सरस्वती नदी के किनारे पर इसी नाम की तहसील का केन्द्र-स्थान और रेलवे

स्टेशन है। कुरुक्षेत्र में यह सब से अधिक पवित्र स्थान है। ह्वानसांग के समय में यह वैश्य वंश की राजधानी था। ६४८ ई० में एक चीनी राजदूत स्थानेश्वर से हर्षवर्द्धन के दरबार में भेजा गया था। १०१४ ई० में गजनी के महमूद ने इसे लूटा। १०४३ ई० में दिल्ली के हिन्दू राजा ने फिर इस पर अधिकार कर लिया। सिकन्दर लोदी ने यहां के यात्रियों को लूटने का निश्चय किया था। १५६७ ई० में अकबर ने यहां एक बड़ा मेला देखा था। पर औरंगजेब ने पवित्र सरोवर को भ्रष्ट करके बीच में किला बनवाया था जहाँ से उसके सिपाही स्नान करने वाले यात्रियों पर गोली चला सकें। १८२० ई० में अंग्रेजों ने सिक्खों से थानेसर ले लिया था। यहाँ अस्पताल, थाना और म्यूनिसिपेलिटी है। सूर्य-ग्रहण के अवसर पर यहाँ भारी मेला लगता है। पांच लाख से ऊपर यात्री भारत के भिन्न-भिन्न भागों से यहाँ स्नान करने आते हैं। शेख चिल्ली का मकबरा सुन्दर संगमरमर का बना है। शाहाबाद कस्बा (१०,०००) ग्रांडट्रंक रोड पर अम्बाला से १० मील और कर्नाल से ३५ मील की दूरी पर स्थित है। खरिन्दवा रेलवे स्टेशन कुछ ही दूर है। कहते हैं मस्तगढ़ गुरुद्वारा एक पठानों के समय की मस्जिद को बदल कर बनाया गया है। शाही सराय भी पुरानी है। शाहजहाँ के समय में इसके चारों ओर एक लाल पत्थर की चारदीवारी थी। यहीं मुगल अफसर रहा करते थे। इस नगर में प्रायः १६ प्रतिशत सिक्ख हैं। वे सेना और पुलिस में नौकरी करते हैं। यहाँ डाक-तार घर, थाना और स्कूल है।

पेहोवा—सरस्वती के बायें किनारे पर एक पुराना तीर्थ स्थान है। यह थानेसर से १६ मील पश्चिम की ओर है। इसका प्राचीन नाम पृथुदक (पृथु का कुंड या सरोवर) है। राजा पृथु राजा वेन का पुत्र था। यहां के दो शिला लेखों से विदित होता है कि यह नवीं शताब्दी में कन्नौज के राजा भोज के राज्य का अंग था। मरहठों ने अपने शासन काल में यहां कई मन्दिर बनवाये। यहां के ब्रह्मकुंड में प्रतिवर्ष प्रायः १ लाख यात्री स्नान करने आते हैं।

समल्का जाटों का एक गांव और रेलवे स्टेशन है। यहां थाना, स्कूल और सराय हैं। पड़ोस के गांवों की कपास यहां ओटने के लिये आती है। सरदी की ऋतु में यहाँ गुड़ बहुत बनाया जाता है। घी भी बाहर भेजा जाता है।

सिवान—कैथल से ७ मील उत्तर-पूर्व की ओर राजपूतों का एक गांव है। यह सरस्वती के किनारे पर बसा है। यहाँ बहुत से धनी महाजन रहते हैं। कहते हैं सीता जी ने यहां कुछ समय तक वास किया था इसी से यह सियावन या सिवान कहलाने लगा। यहीं सीता कुंड है।

सिवान जागीर में यह पोहलार गांव महाभारत के समय से भी अधिक पुराना है। संस्कृत में इसे पुलस्तर पुलस्त मुनि (रावण) का निवास स्थान कहते थे। वर्षा ऋतु में यहाँ अति प्राचीन समय के सिक्के मिल जाया करते हैं।

फतेहपुर—पुण्डी से पौन मील उत्तर की ओर है। अपनी सेना की विजय का समाचार मिलने पर अलाउद्दीन ने यहाँ कलालों और गूजरों का गांव बसाया था। यहाँ स्कूल, सराय और बाजार है। गांव के पूर्व में बलख के कुतुबुद्दीन का मकबरा है। वह शहाबुद्दीन गोरी की ओर से लड़ता हुआ यहीं मारा गया था।

ठस्का मीरनजी गांव वर्षा ऋतु में मार्कण्डा और सरस्वती की बाढ़ से दुर्गम हो जाता है। यहाँ सरस्वती के किनारे पर साहब मीरनजी का मकबरा है। यहाँ थाना, डाकखाना और स्कूल है। यहाँ कुछ बलोची लोग रहते हैं। जो चोरी करने में बड़े चतुर होते हैं। फराल गांव कैथल कर्नाल सड़क से ५ मील की दूरी पर एक टीले पर बसा है। यहाँ अधिकतर ब्राह्मण और राजपूत रहते हैं। यहाँ का कुंड कुरुक्षेत्र के अन्तर्गत है। आश्विन मास की सोमवती अमावस्या को यहाँ भारी मेला लगता है। यहाँ डाकघर और स्कूल है।

लडवा कस्बा प्रथम सिक्ख युद्ध के पहले सिक्खों की एक जागीर थी। यह लोग अंग्रेजों की ओर नहीं लड़े थे। अतः इनकी जागीर जब्त कर ली गई। यहां थाना, स्कूल और डाकखाना है।

इन्द्री—यह कुंजपुरा के नवाब का एक गांव है। यहाँ एक पुराने किले के खंडहर हैं। इन्द्री नहर का पानी भरा रहने से इसकी जलवायु बिगड़ गई है। दलदलों में तरह तरह की चिड़ियाँ रहती हैं। गांव में डाकखाना और स्कूल है। हर मंगलवार को मेला लगता है।

रदौर गांव में थाना डाकखाना और स्कूल हैं।

कुंजपुरा—यह जागीर मुगल बादशाहों के एक पठान सिपाही ने बसाई थी। नजबत खां ने अठारहवीं शताब्दी के आरम्भ में यमुना के दलदलों में एक किला बनवाया। फिर इसने बादशाह के विरुद्ध विद्रोह का झंडा उठाया। १८३९ ई० में उसने नादिरशाह का साथ दिया। १७६० ई० में मरहठों ने उसका किला मिट्टी में मिला दिया। दुर्रानियों ने नजबत खां के बेटे दिलेर खां को बड़ी जागीर दी। पर झींद के राजा और सिक्ख सरदारों ने उसे यमुना के पश्चिम की ओर भगा दिया। १७८७ ई० में सिन्धिया ने झींद के राजा को कर्नाल से भगा दिया १८०१ ई० में रहमत खां ने लार्ड लेक का साथ दिया। १८११ ई० में ब्रिटिश सरकार ने उसे नवाब बना दिया और उसे अपनी छत्रछाया में ले लिया। इस जागीर में प्रायः ३८ गांव शामिल हैं।

पिपली—पहले यह एक तहसील का केन्द्र स्थान था। १८९७ ई० में तहसील थानेसर को चली गई। आजकल यह ग्रांडट्रंक रोड पर एक उजड़ा हुआ गांव है।

बरसत गांव में सैयद रहते हैं। यह अपने आपको महमूद गजनवी के एक साथी का वंशज बतलाते हैं। यहां डाकखाना और स्कूल हैं। पर यहां बाढ़ से बड़ी हानि होती है। इस्लामाबाद में डाकखाना और प्राइमरी स्कूल है। जलवायु अच्छी न होने से यहां का थाना तोड़ दिया गया।

अनौली गांव पटियाला से ८ मील दूर है। यहां अनौली जागीरदारों की गढ़ी है। सिधोवल गांव में इसी नाम के जागीरदारों की गढ़ी है। यह गांव पटियाला से ३ मील उत्तर-पश्चिम की ओर है।

घरौंदा गांव ग्रांडट्रंक रोड पर कर्नाल से १० मील दूर है। यहां डाकखाना, स्कूल, रेलवे स्टेशन और पुरानी सराय है।

जुन्दला गांव—कर्नाल से असांध को जाने वाली सड़क पर पड़ता है। यहां के जुन्दला राजपूत चौहान हैं। यहां स्कूल और डाकखाना है। जून जुलाई मास में बृहस्पतिवार को मेला लगता है।

शामगढ़ गांव में एक किला है जहाँ शामगढ़ का सरदार रहता है।

पुण्ड्री गांव कुरुक्षेत्र से ४८ कोस के भीतर है। यहां का पुण्ड्रक ताल पांडवों के समय में बना था। यहां स्नान करने के लिये कई घाट बने हैं। आजकल पुण्ड्री अनाज की एक बड़ी मंडी है। यहां डाक तारघर और स्कूल है।

असांध एक बड़ा गांव है। यहां अधिकतर मुसलमान राजपूत रहते हैं। १८५७ ई० में डिप्टी कमिश्नर ने इस विद्रोही गांव को लुटवा दिया और किला गिरवा दिया। यहां थाना, डाकखाना, स्कूल और सराय है। पहले यहां के लोग जानवर चुरा लेते थे। पर नहर के खुलजाने से उनकी हालत अच्छी हो गई और चोरी बन्द हो गई।

बियाना गांव में कुंजपुरा के एक वंश की पुरानी गढ़ी है। यहां एक स्कूल है।

निसांग—कर्नाल से १५ मील पश्चिम की ओर एक राजदूत गांव है। यहां थाना, डाकखाना, और स्कूल है। कुछ ही दूर फौजी डेरी फार्म है।

रजौंध-गांव बहुत पुराना है। इसका उल्लेख महाभारत में आता है। यहां थाना, डाकखाना और स्कूल है।

बुधाखेड़ा-कर्नाल तहसील में एक छोटा गांव है। कहते हैं बारहवीं शताब्दी में बुधा ने यहां एक मन्दिर बनवाया था। यहीं अलीशाह कलन्दर की दरगाह है।

गुहला-पटियाला की सीमा के पास एक छोटा गांव है। यहां का पानी अच्छा नहीं है। दीमक बहुत हैं। यहां थाना और स्कूल है।

आधागांव-सैयद की जागीर है। गुहला के पास ही तैमूर की सेना ने घग्गर को पार किया था। जून मास में यहां एक मेला लगता है। इसमें स्त्रियाँ अपने दोषों से मुक्त होने के लिये दीवार के एक छेद में अपना सिर भीतर डालती हैं। कुछ लोगों का विश्वास है कि शुभ मुहूर्त में निश्चय

कर लेने पर यहां उनकी इच्छायें पूरी हो जाती हैं।

संक्षिप्त इतिहास

इस जिले में अत्यन्त प्राचीन भग्नावशेष स्थित हैं। पर अधिकतर भग्नावशेष नगरों के नीचे दबे पड़े हैं। इसलिये उनका पता लगाना कठिन है। थानेसर पेहोवा के समीपवर्ती भागों और सरस्वती के किनारे पोलार के टीले अमीने के ऊँचे खेड़े और नर्दक के गांवों में प्राचीन हिन्दू इतिहास की महत्वपूर्ण सामग्री दबी पड़ी है।

बागर के किनारे पर इन्दरी, चुरनी, कोहिन्द आदि गांव पड़ोस के मैदान से बहुत ऊंचे बसे हैं। यह उन स्थानों पर बसे हैं जहाँ पहले किले थे। प्राचीन समय में यमुना का मार्ग अधिक पश्चिम की ओर था उस समय यह किले यमुना को पार करने के घाटों (पांजों) की रक्षा करते हैं।

नर्दक में सीतामाई गांव के पास सीतामाई मन्दिर की ईंटे बड़ी विलक्षण हैं। इन ईंटों की चित्रकारी पकाने के पहले कच्ची ईंटों में बनाई गई थी। मन्दिर का बहुत बड़ा भाग किसी कट्टर मुसलमान बादशाह ने तुड़वा कर तालाब में फेंकवा दिया। ईंटों को निकाल कर यह स्थान फिर बनवा लिया गया है। कहते हैं सीता जी ने अपने सतीत्व की सत्यता सिद्ध करने के लिये धरती माता से फट जाने और अपनी गोद में लेने के लिये प्रार्थना की थी। जहाँ पर पृथिवी फटी और सीता जी को निगल गई वहीं पर यह मन्दिर बना है।

पेहोवा के नवीं शताब्दी के दो लेखों से प्रगट होता है कि उस समय यहां कन्नौज के राजा महेन्द्र-पाल का राज्य था। एक लेख में उल्लेख है कि यहां तोमर वंश के एक राजा ने विष्णु का त्रिमन्दिर बनवाया था। पर यहाँ मन्दिर का कोई चिन्ह शेष नहीं है। नये मन्दिर पिछली शताब्दी के बने हैं।

प्राचीन समय से सिक्खों के उत्थान के समय तक कर्नाल के पड़ोस का मैदान भारतवर्ष का युद्ध-स्थल रहा है। प्राचीन समय में कुरुक्षेत्र और थानेसर के पड़ोस में युद्ध हुये। आधुनिक समय में युद्ध दिल्ली के समीप हुये। अन्त में कर्नाल दिल्ली के मुगल बादशाहों के चंगुल से अलग हो गया। सर हिन्द के युद्ध के बाद सिक्ख सरदारों और दक्षिण के मुगल अथवा मरहठा अफसरों के बीच में सीमा प्रदेश बन गया।

कौरवों और पांडवों के बीच में कुरुक्षेत्र का महाभारत नर्दक प्रदेश में हुआ। इस समस्त में तीर्थ और पुण्य सरोवर हैं। बस्तली (व्यास-स्थल) गांव में व्यास जी रहते थे। वहीं उनकी कुटी के पास पृथिवी के भीतर ही भीतर एक कुएं में गंगा-जल आ गया था। यह व्यास कूप इस समय भी यहां है। गोन्दार में गौतम ऋषि रहते थे। जिन्होंने चन्द्रमा को कलंक और इन्द्र को सहस्र अक्षि (आंखें) प्रदान की थी। बहलोलपुर के पारासर (ताल) में दुर्योधन छिप गया था और कृष्ण के ताने सुनकर बेमन युद्ध के लिये तयार हुआ था। भराल के फल्गू सर में कौरवों और पांडवों ने युद्ध में वीरगति को प्राप्त योद्धाओं का मृतक संस्कार किया था।

कर्नाल जिले में यूनानी सम्राट सिकन्दर नहीं पहुँच पाया था। मेनाण्डर ने जो काबुल और पंजाब का शासक हो गया था। यहां कुछ समय तक शासन किया। पहली और दूसरी शताब्दी (ईसवी) में कर्नाल जिले में कुशानवंश का राज्य स्थापित हो गया था। सफीदों के पास सर्प यज्ञ हुआ था यहाँ बड़ी संख्या में सर्प नष्ट कर दिये गये थे। कुछ लोगों का अनुमान है कि सर्प यज्ञ से सिदियन लोगों के पतन का अभिप्रायः है। कैथल से १० मील उत्तर की ओर पोलार टीले में सर-स्वती के दक्षिणी सीमा पर सिदियन सिक्के मिले हैं।

३२६ से ४८० ई० तक कर्नाल जिला मौर्य साम्राज्य का अंग रहा। ३८० ई० के बाद यहां हूण लोगों के आक्रमण होने लगे।

यहां अराजकता छा गई। छठी शताब्दी के अन्त में यहां के राजा प्रभाकर वर्धन ने हूणों को उत्तरी-पश्चिमी पंजाब से भगा दिया था। प्रभाकर वर्धन और उसके बेटे हर्षवर्द्धन के समय में थानेश्वर उत्तरी भारतवर्ष का एक प्रमुख राज्य बन गया था। सरस्वती और घग्गर के किनारे पुराने गांवों में

पत्थर के भग्नावशेष इस प्राचीन गौरव की साक्षी देते हैं। चीनी यात्री ह्वानसांग ने ६२९ से ६४५ ई० तक यात्रा करके इस साम्राज्य का विस्तार पूर्वक वर्णन किया है।

राजा हर्ष में अपरिमित शक्ति थी उसने अखंड भारत का स्वप्न देखा और बहुत कुछ अंश में उसे पूरा कर दिया गया। इस यात्रा के समय बौद्ध मत क्षीण हो रहा था। हिन्दू धर्म उन्नति कर रहा था। थानेसर का स्थान भारत के नगरों में सर्व प्रथम हो रहा था। अगले तीन सौ वर्ष तक इस भाग के इतिहास में कोई विशेष उल्लेखनीय घटना नहीं हुई। पर इसकी समृद्धि में कोई कमी नहीं हुई। इसी से १०१४ ई० में महमूद ग़ज़नवी ने इस शहर को लूटा। १०३९ ई० में उसके बेटे मसूद ने इस भाग को अपने राज्य में मिला लिया और यहाँ शासन करने के लिये सोनपत में एक सूबेदार छोड़ दिया। पर आठ वर्ष बाद हिन्दुओं ने इस भाग को फिर जीत लिया। डेढ़ सौ वर्ष तक यहां शान्ति रही और धनधान्य में वृद्धि होती रही। इससे मुसलमानी आक्रमण का घाव पूरा हो गया। ११९१ ई० में मुहम्मद गोरी ने राय पिथौरा पर चढ़ाई की। थानेसर से १२ मील दक्षिण की ओर नई नदी के किनारे नर्दक प्रदेश के नरैना गांव के पास युद्ध हुआ। मुहम्मद गोरी घायल हुआ और उसकी मुसलमान सेना बुरी तरह से हारी। पर दूसरे वर्ष हिन्दू सेना हारी। राय पिथौरा कैद कर लिया गया और मार डाला गया। फिर दिल्ली का पतन और वहां मुसलमानी राज्य स्थापित हो गया। गोरी ने अपने गुलाम कुतुबुद्दीन ऐबक को दिल्ली में अपना प्रतिनिधि स्वरूप छोड़ा। कुछ समय में वह स्वाधीन हो गया। उसने सुल्तान की उपाधि ग्रहण कर ली।

१२१० ई० में उसके मरने पर शम्सुद्दीन अलतमश दिल्ली की गद्दी पर बैठा। १२१६ ई० में उसने अपने विरोधी ताजउद्दीन को नरैना के युद्ध में हराया। बीस वर्ष बाद फिर उसके उत्तराधिकारी पुत्र ने इसी युद्ध क्षेत्र में अपने शत्रुओं को हराया। १२३६ ई० में दिल्ली में एक विद्रोह हुआ। सुल्ताना रजिया गद्दी पर बैठी। उसने राज्य प्रबन्ध तो अच्छा किया पर वह एक हब्शी से विशेष प्रेम करने लगी। इससे कुछ अमीर उसके विरोधी हो गये। पहले वह भटिंडा के किले में बन्दी करके रक्खी गई। मुक्त होकर उसने एक सेना लेकर दिल्ली पर चढ़ाई की। पर कैथल के पास उसकी सेना हार गई और १२४० ई० में वह मार डाली गई।

बलबन के मरने पर (१२८७ ई०) में अराजकता छा गई। मुगलों के हमले होने लगे। खिल्जी वंश ने कुछ शान्ति स्थापित की। कहते हैं तुगलक वंश के फीरोजशाह (तुगलक) ने १३५५ ई० में बादशाही नहर खुदवाई। जो झींद, सफीदों और हान्सी के समीप की भूमि सींचती है। १३९० ई० में फीरोजशाह के मरने पर फिर गृहकलह फैली। पानीपत से ७ मील दक्षिण की ओर पसीना गांव के पास दो विरोधी सेनाओं में युद्ध हुआ। गृहकलह फैल ही रही थी। इसी बीच में १३९८ ई० में तैमूर ने इस जिले में होकर दिल्ली पर चढ़ाई की। तैमूर ने गुहला और पोलार के पास घग्गर और सरस्वती नदियों को पुल के ऊपर पार किया। कैथल से वह असांध होकर तुगलकपुर को गया। कहते हैं सल्वन में अग्नि के उपासक (पारसी) रहते थे। यहाँ से वह पानीपत की ओर बढ़ा दिल्ली के आदेश से लोगों ने पानीपत पहले ही खाली कर दिया था। पर यहां तैमूर के १,६०,००० मन गेहूँ तैमूर के हाथ लगा। दूसरे दिन छः कोस चल कर उसने पानीपत की नदी के किनारे सड़क पर पड़ाव डाला। सम्भवतः यह यमुना की पुरानी एक धारा या बूढ़ी नदी थी। यहां से वह कन्ही गज्नी होकर यमुना के किनारे पल्ला नगर को गया। सेना की एक टुकड़ी दिल्ली की पहाड़ी तक पहुँच गई और समीप के प्रदेश को हैरान करने लगी। इस टुकड़ी के लौटने पर तैमूर ने यमुना को पार किया और लोंडी किले को छापा मार कर ले लिया। ३ दिन के बाद उसने दिल्ली को जीत लिया। तैमूर के लौटने पर दिल्ली के राज्य में इतनी शक्ति न रही कि वह इस जिले को अपने अधिकार में रख सके। सरहिन्द से दिल्ली को जाने वाला राज मार्ग इस जिले में होकर जाता था। इसलिये यहां कई प्रसिद्ध लड़ाइयां हुईं।

कर लेने पर यहां उनकी इच्छायें पूरी हो जाती हैं।

संक्षिप्त इतिहास

इस ज़िले में अत्यन्त प्राचीन भग्नावशेष स्थित हैं। पर अधिकतर भग्नावशेष नगरों के नीचे दबे पड़े हैं। इसलिये उनका पता लगाना कठिन है। थानेसर पेहोवा के समीपवर्ती भागों और सरस्वती के किनारे पोलार के टीले अमीने के ऊँचे खेड़े और नर्दक के गांवों में प्राचीन हिन्दू इतिहास की महत्वपूर्ण सामग्री दबी पड़ी है।

बागर के किनारे पर इन्दरी, चुरनी, कोहिन्द आदि गांव पड़ोस के मैदान से बहुत ऊंचे बसे हैं। यह उन स्थानों पर बसे हैं जहाँ पहले किले थे। प्राचीन समय में यमुना का मार्ग अधिक पश्चिम की ओर था उस समय यह किले यमुना को पार करने के घाटों (पांजों) की रक्षा करते हैं।

नर्दक में सीतामाई गांव के पास सीतामाई मन्दिर की ईंटें बड़ी विलक्षण हैं। इन ईंटों की चित्रकारी पकाने के पहले कच्ची ईंटों में बनाई गई थी। मन्दिर का बहुत बड़ा भाग किसी कट्टर मुसलमान बादशाह ने तुड़वा कर तालाब में फेंकवा दिया। ईंटों को निकाल कर यह स्थान फिर बनवा लिया गया है। कहते हैं सीता जी ने अपने सतीत्व की सत्यता सिद्ध करने के लिये धरती माता से फट जाने और अपनी गोद में लेने के लिये प्रार्थना की थी। जहाँ पर पृथिवी फटी और सीता जी को निगल गई वहीं पर यह मन्दिर बना है।

पेहोवा के नवीं शताब्दी के दो लेखों से प्रगट होता है कि उस समय यहां कन्नौज के राजा महेन्द्र-पाल का राज्य था। एक लेख में उल्लेख है कि यहां तोमर वंश के एक राजा ने विष्णु का त्रिमन्दिर बनवाया था। पर यहाँ मन्दिर का कोई चिन्ह शेष नहीं है। नये मन्दिर पिछली शताब्दी के बने हैं।

प्राचीन समय से सिक्खों के उत्थान के समय तक कर्नाल के पड़ोस का मैदान भारतवर्ष का युद्ध-स्थल रहा है। प्राचीन समय में कुरुक्षेत्र और थानेसर के पड़ोस में युद्ध हुये। आधुनिक समय में युद्ध दिल्ली के समीप हुये। अन्त में कर्नाल दिल्ली के मुगल बादशाहों के चंगुल से अलग हो गया। सर हिन्द के युद्ध के बाद सिक्ख सरदारों और दक्षिण के मुगल अथवा मरहठा अफसरों के बीच में सीमा प्रदेश बन गया।

कौरवों और पांडवों के बीच में कुरुक्षेत्र का महाभारत नर्दक प्रदेश में हुआ। इस समस्त में तीर्थ और पुण्य सरोवर हैं। बस्तली (व्यास-स्थल) गांव में व्यास जी रहते थे। वहीं उनकी कुटी के पास पृथिवी के भीतर ही भीतर एक कुएं में गंगा-जल आ गया था। यह व्यास कूप इस समय भी यहां है। गोन्दार में गौतम ऋषि रहते थे। जिन्होंने चन्द्रमा को कलंक और इन्द्र को सहस्र अक्षि (आंखें) प्रदान की थी। बहलोदपुर के पारासर (ताल) में दुर्योधन छिप गया था और कृष्ण के तानें सुनकर बेमन युद्ध के लिये तयार हुआ था। भराल के फल्गू सर में कौरवों और पांडवों ने युद्ध में वीरगति को प्राप्त योद्धाओं का मृतक संस्कार किया था।

कर्नाल ज़िले में यूनानी सम्राट सिकन्दर नहीं पहुँच पाया था। मेनाण्डर ने जो काबुल और पंजाब का शासक हो गया था। यहां कुछ समय तक शासन किया। पहली और दूसरी शताब्दी (ईसवी) में कर्नाल ज़िले में कुशानवंश का राज्य स्थापित हो गया था। सफीदों के पास सर्प यज्ञ हुआ था यहाँ बड़ी संख्या में सर्प नष्ट कर दिये गये थे। कुछ लोगों का अनुमान है कि सर्प यज्ञ से सिदियन लोगों के पतन का अभिप्रायः है। कैथल से १० मील उत्तर की ओर पोलार टीले में सर-स्वती के दक्षिणी सीमा पर सिदियन सिक्के मिले हैं।

३२६ से ४८० ई० तक कर्नाल ज़िला मौर्य साम्राज्य का अंग रहा। ४८० ई० के बाद यहां हूण लोगों के आक्रमण होने लगे।

यहां अराजकता छा गई। छठी शताब्दी के अन्त में यहां के राजा प्रभाकर वर्धन ने हूणों को उत्तरी-पश्चिमी पंजाब से भगा दिया था। प्रभाकर वर्धन और उसके बेटे हर्षवर्द्धन के समय में थानेश्वर उत्तरी भारतवर्ष का एक प्रमुख राज्य बन गया था। सरस्वती और घग्गर के किनारे पुराने गांवों में

पत्थर के भग्नावशेष इस प्राचीन गौरव की साक्षी देते हैं। चीनी यात्री ह्वानसांग ने ६२९ से ६४५ ई० तक यात्रा करके इस साम्राज्य का विस्तार पूर्वक वर्णन किया है।

राजा हर्ष में अपरिमित शक्ति थी उसने अखंड भारत का स्वप्न देखा और बहुत कुछ अंश में उसे पूरा कर दिया गया। इस यात्रा के समय बौद्ध मत क्षीण हो रहा था। हिन्दू धर्म उन्नति कर रहा था। थानेसर का स्थान भारत के नगरों में सर्व प्रथम हो रहा था। अगले तीन सौ वर्ष तक इस भाग के इतिहास में कोई विशेष उल्लेखनीय घटना नहीं हुई। पर इसकी समृद्धि में कोई कमी नहीं हुई। इसी से १०१४ ई० में महमूद गजनवी ने इस शहर को लूटा। १०३९ ई० में उसके बेटे मसूद ने इस भाग को अपने राज्य में मिला लिया और यहाँ शासन करने के लिये सोनपत में एक सूबेदार छोड़ दिया। पर आठ वर्ष बाद हिन्दुओं ने इस भाग को फिर जीत लिया। डेढ़ सौ वर्ष तक यहां शान्ति रही और धनधान्य में वृद्धि होती रही। इससे मुसलमानी आक्रमण का घाव पूरा हो गया। ११९१ ई० में मुहम्मद गोरी ने राय पिथौरा पर चढ़ाई की। थानेसर से १२ मील दक्षिण की ओर नई नदी के किनारे नर्दक प्रदेश के नरैना गांव के पास युद्ध हुआ। मुहम्मद गोरी घायल हुआ और उसकी मुसलमान सेना बुरी तरह से हारी। पर दूसरे वर्ष हिन्दू सेना हारी। राय पिथौरा कैद कर लिया गया और मार डाला गया। फिर दिल्ली का पतन और वहां मुसलमानी राज्य स्थापित हो गया। गोरी ने अपने गुलाम कुतुबुद्दीन ऐबक को दिल्ली में अपना प्रतिनिधि स्वरूप छोड़ा। कुछ समय में वह स्वाधीन हो गया। उसने सुल्तान की उपाधि ग्रहण कर ली।

१२१० ई० में उसके मरने पर शम्सुद्दीन अलतमश दिल्ली की गद्दी पर बैठा। १२१६ ई० में उसने अपने विरोधी ताजउद्दीन को नरैना के युद्ध में हराया। बीस वर्ष बाद फिर उसके उत्तराधिकारी पुत्र ने इसी युद्ध क्षेत्र में अपने शत्रुओं को हराया। १२३६ ई० में दिल्ली में एक विद्रोह हुआ। सुल्ताना रज़िया गद्दी पर बैठी। उसने राज्य प्रबन्ध तो अच्छा किया पर वह एक हब्शी से विशेष प्रेम करने लगी। इससे कुछ अमीर उसके विरोधी हो गये। पहले वह भटिंडा के किले में बन्दी करके रक्खी गई। मुक्त होकर उसने एक सेना लेकर दिल्ली पर चढ़ाई की। पर कैथल के पास उसकी सेना हार गई और १२४० ई० में वह मार डाली गई।

बलबन के मरने पर (१२८७ ई०) में अराजकता छा गई। मुगलों के हमले होने लगे। खिल्जी वंश ने कुछ शान्ति स्थापित की। कहते हैं तुगलक वंश के फीरोजशाह (तुगलक) ने १३५५ ई० में बादशाही नहर खुदवाई। जो झींद, सफीदों और हान्सी के समीप की भूमि सींचती है। १३९० ई० में फीरोजशाह के मरने पर फिर गृहकलह फैली। पानीपत से ७ मील दक्षिण की ओर पसीना गांव के पास दो विरोधी सेनाओं में युद्ध हुआ। गृहकलह फैल ही रही थी। इसी बीच में १३९८ ई० में तैमूर ने इस जिले में होकर दिल्ली पर चढ़ाई की। तैमूर ने गुहला और पोलार के पास घग्गर और सरस्वती नदियों को पुल के ऊपर पार किया। कैथल से वह असांध होकर तुगलकपुर को गया। कहते हैं सल्वन में अग्नि के उपासक (पारसी) रहते थे। यहाँ से वह पानीपत की ओर बढ़ा दिल्ली के आदेश से लोगों ने पानीपत पहले ही खाली कर दिया था। पर यहां तैमूर के १,६०,००० मन गेहूँ तैमूर के हाथ लगा। दूसरे दिन छः कोस चल कर उसने पानीपत की नदी के किनारे सड़क पर पड़ाव डाला। सम्भवतः यह यमुना की पुरानी एक धारा या बूढ़ी नदी थी। यहां से वह कन्ही गजीं होकर यमुना के किनारे पल्ला नगर को गया। सेना की एक टुकड़ी दिल्ली की पहाड़ी तक पहुँच गई और समीप के प्रदेश को हैरान करने लगी। इस टुकड़ी के लौटने पर तैमूर ने यमुना को पार किया और लोदी किले को छापा मार कर ले लिया। ३ दिन के बाद उसने दिल्ली को जीत लिया। तैमूर के लौटने पर दिल्ली के राज्य में इतनी शक्ति न रही कि वह इस जिले को अपने अधिकार में रख सके। सरहिन्द से दिल्ली को जाने वाला राज मार्ग इस जिले में होकर जाता था। इसलिये यहां कई प्रसिद्ध लड़ाइयां हुईं।

१५२५ ई० में बावर ने एक मुगल सेना अलाउद्दीन अगलेम खां के साथ उसके भतीजे सुल्तान इब्राहीम लोदी से लड़ने के लिये भेजी। इन्दरी के पास पानीपत का पीरज़ादा मियां सुलेमान अपनी सेना के साथ मिल गया। दिल्ली के पास हारने पर अलाउद्दीन आलिम खां पानीपत को लौट आया यहां उसने अपने मित्र पीरजादा को तीन चार लाख रुपये का धोखा दिया। कुछ समय बाद वह बावर से मिल गया। दूसरे वर्ष मुगल सेना ने दिल्ली पर चढ़ाई की। अम्बाला को छोड़कर बावर शाहाबाद होकर थानेसर तहसलील में अलाहार के पास यमुना किनारे पहुँचा। यहाँ से यमुना के किनारे किनारे चलता हुआ कर्नाल पहुँचा। यहां बावर को पता लगा कि उसकी अग्रिम टोली का सेनापति अलाउद्दीन आलिम खां हार गया और गनौर को चला गया। घरौंडा सराय में अपने घोड़े पर सवार होकर बावर अपनी सेना को पानीपत ले आया। बावर ने इसी स्थान को रणक्षेत्र के लिये चुना। यहां नगर की आड़ में उसकी सेना के एक पक्ष की रक्षा होती थी। पानीपत से पूर्व की ओर दो कोस तक बावर ने अपनी सेना को सजाया। उसकी सेना का दाहिना पक्ष पानीपत की दीवारों को छूता था। इब्राहीम लोदी ने पानीपत से दक्षिण पश्चिम की ओर दो कोस तक अपनी सेना को सजाया। एक सप्ताह तक साधारण मुठभेड़ के अतिरिक्त कोई युद्ध नहीं हुआ। अन्त में १५२६ ई० के २१ अप्रैल को इब्राहीम की सेना आक्रमण करने के लिये आगे बढ़ी। पर बावर की सेना ने इब्राहीम की सेना को बुरी तरह हराया और दिल्ली तक खदेड़ा पर बावर पानीपत के पश्चिम में एक सप्ताह तक पड़ाव डाले रहा। उसने पानीपत को बड़ा शुभ स्थान समझा और लोगों के साथ अच्छा वर्ताव किया। इस लड़ाई में इब्राहीम लोदी मारा गया। तहसील और शहर के बीच में इब्राहीम की कब्र बनी। शेरशाह यहां एक मकबरा बनवाना चाहता था। युद्ध के बाद बावर ने यहां एक बाग मस्जिद और तालाब बनवाया। कुछ वर्ष बाद हुमायूँ ने पानीपत से ४ मील उत्तर की ओर सलेमशाह को हराया और इस विजय की स्मृति में उसने चबूतरा फतेहमुबारक बनवाया। यह सब काबुल बाग कहलाता है। १५२९ ई० में नर्दक के मानधर राजपूतों ने विद्रोह का झंडा उठाया। उनके सरदार मोहन ने शाही सेना को हरा दिया। इस पर बावर ने विद्रोही गांवों को जला दिया। आगे चलकर युद्ध बढ़ता ही गया। हुमायूँ को हिन्दुस्तान छोड़ना पड़ा। विद्रोही नेता फतेहखां जाट ने दक्षिण की ओर पानीपत तक समस्त देश उजाड़ डाला।

जब हुमायूँ दिल्ली में मरा तब नवयुवक अकबर पंजाब में था। उसका संरक्षक बैरामखां हिन्दू सेनापति हीमू से लड़ने के लिये दक्षिण की ओर बढ़ा। कर्नाल से १० मील उत्तर की ओर बैराम खां ने अपनी सेना सजाई। वह पानीपत पहुँचा। यहां से २ कोस पश्चिम की ओर अफ़गान सेना लिये हुये हीमू डटा था। एक सप्ताह की साधारण मुठ भेड़ के बाद अकबर ने एक सैनिक टोली हीमू के पृष्ठ भाग पर आक्रमण करने के लिये पानीपत शहर का चक्कर काट कर भेजी। ५ नवम्बर १५५६ ई० को अचानक पृष्ठ मार्ग पर आक्रमण होने से हीमू मारा गया और उसकी सेना पराजित हुई। दूसरे दिन अकबर बिना किसी विरोध के दिल्ली पहुँच गया।

अकबर के समय में मुगल राज्य इतना दृढ़ हो गया था। कि कर्नाल जिले का प्रथक अस्तित्व ही न रहा। १५७३ ई० में जब अकबर ने गुजरात में इब्राहीम हुसेन मिर्जा को हराया तब उसने उत्तरी भारत में गड़बड़ी फैलाने का प्रयत्न किया। उसने पानीपत और कर्नाल को लूटा। १६०६ ई० में जब खुसरो ने विद्रोह का झंडा उठाया तब वह भी दिल्ली से आगे इस जिले के गांवों को लूटता हुआ लाहौर को बढ़ा। जहांगीर स्वयं पीछा करता हुआ पानीपत आया। पानीपत में उसने काबुली मस्जिद में प्रति शुक्रवार को नमाज पढ़ने की आज्ञा निकाली। पानीपत के अन्तिम युद्ध में मरहठों ने इस मस्जिद पर अधिकार कर लिया। तभी यहां शुक्रवार की नमाज बन्द हो गई। मुगलों के शासन काल में प्रायः दो सौ वर्ष तक इस जिले में शान्ति रही। नहर से सिंचाई हुई। सड़कें बन गई। प्रति मंज़िल पर सराय बना दी गई। यात्रियों की सुविधा के

लिये प्रत्येक कोस पर एक मीनार और एक कुआं बना दिया गया। पक्की मीनार २४ फुट ऊंची होती थी। सत्रहवीं शताब्दी के अन्त में मुगल साम्राज्य का पतन और सिक्ख-राज का उदय होने लगा। १७०९ ई० में बन्दा बैरागी ने इस प्रदेश में विद्रोह का झंडा उठाया। सिक्खों की सेना ने यमुना के पश्चिम के सारे प्रदेश पर अधिकार कर लिया। उसने कर्नाल के पड़ोस की भूमि उजाड़ दी। उसने फौजदार को मार डाला और निवासियों का क़तल आम किया। १७१० ई० में बहादुर शाह ने सधौरा के पास सिक्ख सेना को हराया पर गुरु बन्दा स्वयं भाग निकले। उन्होंने गुरुदासपुर बसाया।

१७२९ ई० में कर्नाल परगने की जागीर दिलावर अली खां औरंगाबादी को सौंप दी गई। १७३८ ई० में जब दिल्ली दरबार ने नादिरशाह को बादशाह न माना तब उसे बड़ा क्रोध आया। उसने दिल्ली पर चढ़ाई की। १७३९ ई० की ८ जनवरी को वह सरहिन्द पहुँचा। यहां उसे पता लगा कि मुहम्मद शाह एक बड़ी सेना के साथ कर्नाल में पड़ाव डाले हुये है। नादिरशाह तरावरी की ओर बढ़ा। पर यह एक किले बन्द गांव था। इसलिये नादिर शाह को इस पर गोले छोड़ने पड़े। यहाँ नादिरशाह को कुछ कैदियों से पता लगा कि तरावरी से कर्नाल का जंगली मार्ग दुर्गम है। मुहम्मदशाह एक संकुचित वन में पड़ाव डाले है। तीन ओर वन से घिरा होने से मुहम्मदशाह इधर उधर नहीं मुड़ सकता है। अत. नादिरशाह ने दक्षिण-पूर्व के पक्ष से शत्रु पर आक्रमण करने का निश्चय किया। १५ जनवरी को तरावरी को छोड़ कर यमुना के किनारे चलता हुआ नादिरशाह पानीपत के पीछे की ओर आया। दिल्ली के पड़ाव के पास ही उसने अपना पड़ाव डाला। एक टोली उसने शाहजादे नसरुल्ला मिर्जा के साथ नहर के उत्तर में कर्नाल को भेजी। दिल्ली सम्राट को इस बात का पता भी न चला कि नादिर शाह समीप है। मुहम्मदशाह की सेना तीन महीने से कर्नाल में पड़ी थी। इसे पहले ही से भोजन की बड़ी कमी थी। पीछे की ओर नादिर की सेना के आ डटने से यह खुले मैदान से एकदम अलग हो गई। भोजन इतना कम हो गया था कि चार रुपये का एक सेर भी आटा नहीं मिलता था। अतः भोजन के अभाव से मुहम्मद शाह को आत्म समर्पण करना पड़ा। मुहम्मदशाह को लेकर नादिरशाह दिल्ली की ओर चला और राजधानी को खूब लूटा।

१७४८ ई० में अहमदशाह को मुहम्मद शाह के मरने की खबर मिली। पानीपत में उसने बादशाह की उपाधि ग्रहण करली। १७५६ ई० में वज़ीर गाजिउद्दीन आलमगीर द्वितीय को प्रायः एक बन्दी के रूप में पानीपत को ले आया। इससे सेना में विद्रोह फैल गया। वज़ीर को शहर की सड़कों पर घसीटा गया।

१७६० ई० के वर्षा काल सदाशिव राव या भाऊ ने कुंजपुरा पर चढ़ाई की। यह अफ़गानों का गांव था। यह कर्नाल के पास था। इस किले बन्द गांव में २०,००० अफ़गान सिपाही पड़ाव डाले हुये थे। भाऊ ने इन २०,००० अफ़गान सिपाहियों को तलवार के घाट उतार दिया और पड़ोस के देश को लूट लिया। अहमदशाह द्वाब में था वह यथा समय यमुना पार करने और इस दुर्घटना को रोकने में असमर्थ था। अन्त में उसने बागपत के पास यमुना को पार किया। इस समय मरहठों की सेना पसीना कलां गांव के पास पड़ाव डाले हुये थे। फिर यह पानीपत को लौट आई। दुर्रानी सेना ने मरहठों की सेना के सामने रिसालू और ऊजा गांवों के पास पड़ाव डाला। दोनों ओर के सैनिकों की संख्या प्रायः ४ लाख थी। पांच महीने तक दोनों सेनायें एक दूसरे की प्रतिक्षा करती रहीं। कोई विशेष युद्ध न हुआ। पर पड़ोस का देश उजड़ गया। यहां के लोग भाग गये। कहते हैं पानीपत को छोड़ कर केवल फुलरक. डाहा और बाला (तीन) गांवों में कुछ लोग बचे थे। दुर्रानी सेना सब ओर से अपने पड़ाव के पास आ सकती थी। पर मरहठों की सेना अपने पड़ाव में ही घिरी हुई थी। पानीपत में जो खाद सामग्री उपलब्ध थी वह मरहठों की सेना बहुत पहले ही समाप्त कर चुकी थी। अन्त में भोजन एक दम समाप्त हो गया। १७६१ के जनवरी मास में भाऊ ने युद्ध की तयारी की। मरहठों की हार हुई। बहुत से लोग पानीपत शहर में भगा दिये

गये। दूसरे दिन दुर्रानियों ने बच्चों और स्त्रियों को बांट दिया और मनुष्यों को कतल कर डाला। जो भागे वे जहां पकड़े गये वहीं मार डाले गये। कहते हैं लगभग दो लाख मरहठे इस लड़ाई में मारे गये। जहां खड़ा होकर भाऊ युद्ध का निरीक्षण कर रहा था वहां पहले आम का एक पुराना पेड़ था। अब वह वहां नहीं रहा। कहते हैं भाऊ ने तोपखाने के अध्यक्ष बहराम गोरी का अपमान किया था। इस से रुष्ट होकर उसने तोपों में गोले ही न भरे। खाली तोपों को चलाता रहा। यदि यह विश्वास घात न किया गया होता तो दुर्रानी की सेना कभी न जीतती।

जैसे ही मरहठे कुछ समय के लिये हटे वैसे ही सिक्ख लोग उठ खड़े हुये। १७६३ ई० में सिक्खों ने सरहिन्द दुर्रानी सूबेदार जैनखां को हरा कर समस्त सरहिन्द पर पानीपत के दक्षिण तक अधिकार कर लिया। सिक्ख जी तोड़ कर लड़ते थे। राजा गजपत सिंह ने झींद, सफीदों पानीपत और कर्नाल पर अधिकार कर लिया। गुरदीत सिंह ने लडवा और शामगढ पर अधिकार कर लिया। इन्दरी परगने का बहुत बड़ा भाग थानेसर के सरदार भंगा सिंह और भाग सिंह को मिला। कुछ भाग कैथल और लडवा के सरदारों को मिला। कुंजपुरा का नवाब बड़ी कठिनाई से अपनी जागीर का कुछ भाग अपने अधिकार में रख सका। कुछ पर वह शामगढ़ और चुर्नी के सरदारां को कर देने लगा।

सिक्खों की विजय से उत्तेजित होकर १७६७ ई० में अहमदशाह दूसरी बार हिन्दुस्तान को लौटा। सिक्खों को कई लड़ाइयों में हराकर वह लुधियाना तक आ गया। पर जैसे ही उसने पीठ फेरी वैसे ही फिर सिक्खों ने अपना अधिकार जमा लिया। १७७४ ई० में हान्सी के सूबेदार रहीमदादखां ने झींद पर आक्रमण किया। पर वह बुरी तरह से हारा। गजपतसिंह ने फिर कर्नाल छीन लिया। कुछ समय बाद शाही वजीर नजफखां स्वयं कर्नाल को गया। वहां सिक्खों से एक सन्धि हो गई। इसके अनुसार शेरा, मजरा जाटन, धर्मगढ़वाल जाटन, और बाला गांव गजपतसिंह के अधिकार में रहे। कर्नाल जिले के जीते हुये शेष भाग सिक्खों ने छोड़ दिये। यह सन्धि अधिक समय तक न चली। १७७१ ई० में मुगल दरबार की ओर से इस प्रदेश को जीतने का अन्तिम प्रयत्न किया गया। इसी वर्ष शाहजादा फर्खन्दा बख्त और नवाब मजीदुद्दौला २०,००० सैनिक लेकर चढ़ आये। लाहोर से कुछ सहायता आगई। शाही सेना को एक दम पानीपत की ओर लौटना पड़ा। इसी समय जिले के दक्षिणी भाग पर मरहठा सरदार धासराव का अधिकार था। १७८५ ई० में कुछ सिक्खों के बुलाने पर उसने कैथल और अम्बाला पर चढ़ाई की। फिर वह कर वसूल करके कर्नाल को लौट आया। कर्नाल में ही उसने अपनी राजधानी बनाई थी। १७८६ ई० में झींद के राजा गजपतसिंह का देहान्त हो गया। उसका बेटा राजा भागसिंह गद्दी पर बैठा। १७८७ ई० में बेगम समरू सिक्खों से लड़ने के लिये पानीपत को सेना भेज रही थी। १७८८ ई० में अम्बाराव ने कुछ सिक्खों को मिलाकर कैथल से फिर कर वसूल किया। १७८९ ई० में सिन्धिया ने गुलाम कादिर को कतल करके शाह आलम को फिर से दिल्ली के सिंहासन पर बैठाया। फिर वह दिल्ली से थानेसर और पटियाला को आया। उसने इस ओर शान्ति स्थापित की और पटियाला के दीवान को कर्नाल तक ले आया। १७९४ ई० में मरहठों की एक बड़ी सेना ने अन्ताराव के सेना पतित्व में यमुना को पार किया। झींद और कैथल ने आत्म समर्पण किया। पर पटियाला की सेना ने मरहठों पर रात्रि में अचानक छापा मारा। अन्ताराव कर्नाल को लौट आया। १७९५ ई० में मरहठे फिर उत्तर की ओर बढ़े। उन्होंने राजा भागसिंह को हराकर कर्नाल जार्ज टामस को सौंप दिया। जार्ज टामस ने मरहठों को सैनिक सहायता दी थी। उसे जज्झर की जागीरें भी मिल गई थीं। अतः वह पड़ोस के सिक्खों को हैरान करने लगा। इसी बीच में लडवा के सरदार गुरुदीत सिंह को कर्नाल मिल गया। १७९८ ई० में बेगम समरू की सेना पश्चिमी सीमा की रक्षा करने के लिये पानीपत में आ डटी। १७९९ ई० में शान्ति स्थापित करने के लिये सिन्धिया ने

सैनिकों को भरती किया। कुंजपुरा का नवाब उनसे मिल गया। १८०१ ई० में टामस ने धावा बोला वह कर्नाल और पानीपत होकर हान्सी को चला गया। सिक्खों ने मरहठों से सहायता मांगी। मरहठों और सिक्खों की संयुक्त शक्ति के सामने टामस टिक न सका। वह ब्रिटिश राज्य में भाग गया और वहीं मर गया। मरहठों ने सफीदो और धातरात (झींद-राज्य) सिक्खों को लौटा दिये।

१८०३ ई० के सितम्बर मास में दिल्ली की लड़ाई में लार्डलेक ने मरहठों को हराया। ३० दिसम्बर को सिरजी अंजनगांव की सन्धि के अनुसार दौलतराव सिन्धिया ने उत्तरी भारत का अपना राज्य ईस्ट इण्डिया कम्पिनी को दे दिया। लडवा और थानेसर के सरदार ५००० सिपाहियों को लेकर अंग्रेजों से लड़े थे। झींद के भागसिंह और कैथल के लालसिंह ने अँग्रेजों की आधीनता स्वीकार कर ली। और सरदारों को तो क्षमा कर दिया गया। पर लडवा के गुरुदीत सिंह पर अंग्रेजी सेना ने चढ़ाई की और उसका कर्नाल का किला छीन लिया। इस प्रदेश में इतनी अधिक अराजकता छा गई थी कि बहुत बड़े भाग में जंगल बढ़ गया। जंगली जानवर फैल गये और जनसंख्या घट गई। गांवों की रक्षा के लिये ऊँची चारदीवारी और गहरी खाई आवश्यक हो गई।

लार्ड वेलेजली के इङ्गलैंड लौटने और लार्ड कार्नवालिस के भारत आने पर अंग्रेजों की राजनीति में परिवर्तन हुआ। उन्होंने यमुना के पश्चिम के प्रदेश को छोड़ दिया। पर छोड़ने पर भी उन्होंने यहां जागीरदारों और नवाबों का एक गुट बना दिया। झींद, लडवा, थानेसर, शामगढ़ के राजाओं और कुंजपुरा के नवाब की शक्ति पूर्ववत बनी रही। बेगम समरू को सरधना की जागीर मिली। पर जब १८०६ ई० में महाराजा रंजीतसिंह सतलज को पार किया तब सतलज के इस पार के राज्यों को स्वाधीन मान लिया गया और राजा रंजीतसिंह सतलज के उस पार लौट गये। यहां कई छोटे छोटे राज्य बन गये। जो आपस में लड़ाई रहती थी। धीरे-धीरे अंग्रेजी सरकार ने इधर अपना नियन्त्रण कर लिया। जो राजा निस्सन्तान मर जाता। उसके राज्य को अंग्रेजी राज्य में मिला लिया जाता था। इस प्रकार अम्बाला और थानेसर जिलों की रचना हुई।

१८४५ ई० में प्रथम सिक्ख युद्ध आरम्भ हुआ। जिन राज्यों ने अंग्रेजों की सहायता की उनके अधिकार बने रहे। पटियाला, झींद, फरीदकोट, नाभा, मालेर कोटला, छछरौली (कल्सिया) रायकोट, बुड़िया और ममदोत के अधिकार अविछिन्न बने रहे। जो जागीरदार अंग्रेजों के विरुद्ध लड़े उनके गांव छीन लिये गये। इस प्रकार लडवा के राजा के ११० गांव अंग्रेजी जिले में मिला लिये गये। सिक्खों की दूसरी लड़ाई में पूरा पंजाब अंग्रेजी राज्य में मिला लिया गया। छोटे छोटे जागीरदारों का अन्त हो गया। कुंज पुरा थानेसर और शामग[ढ़] साधारण जागीरदार रह गये। उनके विशेष अधि[-] कार छिन गये।

१८५७ ई० के गदर के समय में पानी[पत का] मजिस्ट्रेट दिल्ली में था वहीं वह मार डाला [गया]। एक डिप्टी कलक्टर को छोड़ कर दूस[रे] कर्नाल जिले को छोड़ कर भाग गये। [जब] राजा ने विद्रोह की खबर सुनी तो उ[सने] शान्ति रखने के लिये एक सेना [भेजी]। पानीपत को भेजी गई। उसने [कि]ल्का छीन लिया। और म[जबूत] का प्रबन्ध किया। पटियाला [...] दी। नंदक के चौहानों ने [...] की। दिल्ली के विद्रोहियों के [...] को भेज दिया गया। स्टैम्प [...] कर दिया गया। जेल की मजबूत किले बन्दी की गई। कुछ गांवों में लोगों ने सरकारी इमारतों को जला दिया और लगान देना बन्द कर दिया। पर कुछ ही समय में शान्ति स्थापित हो गई और विद्रोहियों को दंड दिया गया।

के और १८६८ के द्वारा उन बारह [स]रकार द्वारा, उनमें सुन्दर व रक्षा किए जाने के प्रवेश-द्वार सज्जित हैं, जो लोहे के [प]ल्लियों से और भी [म]हाल द्वार, जो सीधा न व सदर तक जाता है, और इसका नाम [...] नष्ट

जन संख्या

कर्नाल जिले की जन संख्या प्रायः ८ लाख है। औसत से प्रति वर्ग मील में ४१० मनुष्य रहते हैं। प्रायः ९० प्रतिशत लोग गांवों में रहते हैं। १० प्रतिशत लोग कस्बों में रहते हैं।

जब कोई गांव बसाया जाता है तब पहले पशुओं को पानी पिलाने और कपड़ा धोने के लिये तालाब खोदे जाते हैं। इनमें वर्षा जल एकत्रित हो जाता है। ऊंचे भाग में गांव के घर बनते हैं। जैसे जैसे पुराने घर गिरते हैं और उनके स्थान पर नये घर बनते हैं वैसे वैसे गांव ऊंचा होता जाता है। नदक के कोई कोई पुराने गांव पड़ोस के तल से डेढ़ दो सौ फुट अधिक ऊँचे बसे हैं। गांव के पड़ोस में जो स्थान खाली रहता है उसमें गाय बैल रहते हैं। ईंधन रक्खा जाता है अथवा जुलाहे कपड़ा बुनते हैं। कुछ लोग रस्सी ऐंठते हैं। कुछ ईख पेरते हैं। पुराने गांव के चारों ओर प्रायः कच्ची चारदीवारी होती है। खाई भी खुदी रहती है। भीतर आने के लिये दरवाज़ा होता है। गाँव की गलियाँ तंग होती हैं। दो तीन चौपाल भी होती हैं।

अमृतसर

[पृष्ठ १२६ का मैटर]

४—क़स्बे, म्युनिसिपैलिटियाँ और छावनियाँ

सन् १८८१ की जनसंख्या होने पर, वे सब स्थान क़स्बे माने जाने लगे जिनकी जनसंख्या ५,००० से अधिक थी। इस नियम के अनुसार निम्नलिखित स्थान ज़िले के क़स्बे माने गए थे :—

तहसील	क़स्बा	मनुष्य	पुरुष	स्त्रियाँ
अमृतसर	अमृतसर	१५१,८९६	८६,७१४	६५,१८२
	जंडियाला	६,५३५	३,४६३	३,०७२
	मजीठा	६,०५३	३,२०६	२,८४७
	बुन्दाला	५,१०१	२,७८३	२,३१८
तरण तारण	वैरोवाल	५,४०६	२,७१८	२,६९१
	सर्दली कलां	५,१९७	२,८८८	२,३०९
	तरण तारण	३,२१०	१,८५०	१,३६०
अजनाला	रामदास	४.४९८	२,३४३	७१५५

क़स्बों के वासियों का धर्मानुसार वितरण और प्रति क़स्बे के घरों की संख्या नीचे की सूची में दिखाए गए हैं।

क़स्बों की जनसंख्या

		२	४	५	६	७	८	९	१०
तहसील	क़स्बा	कुल जन-संख्या	हिन्दू	सिक्ख	जैन	मुसलमान	दूसरे धर्म	बसे हुए घरों की संख्या	प्रति १०० बसेहुएघरों के आदमी
अमृतसर	अमृतसर	१५१,८९६	६१,२७४	१२८७६	९	७५,८९१	८४६	२६,३४६	५७७
	जण्डियाला	६,५३५	२,२८०	४०२	२५४	३,५९०	९	१,२००	५४५
	मजीठा	६.०५३	२,२०२	९७९	...	२,८६६	६	१,१७५	५१५
	बुन्दाला	५,१०१	१,५०१	२,१९२	...	१.४०८	...	५०९	१,००२
तरण तारण	वैरोवाल	५,४०९	१,४५४	४६५	...	३,४९४	...	९६३	५६८
	सर्दली कलाँ	५,१९७	१.०५९	२,१९५	...	१,९३९	४	४६८	१,११०
	तरण तारण	३,२१०	१,०४४	१,०७७	...	१,०८९	....	६२८	५११
अजनाला	रामदास	४,४९८	१,६८५	२६४	...	२,५४९	...	९५९	४६९

अब हम यहाँ पर हर क़स्बे का पूर्ण विवरण देंगे, जिसमें उसके इतिहास का संक्षिप्त निरीक्षण, उसकी आबादी की घटती—बढ़ती, उसके वाणिज्य, दस्तकारियाँ, म्युनिसिपल सरकार, विद्यालय, और सार्वजनिक भवनों का हाल रहेगा। व्यापार और दस्तकारियों की सूचियाँ भी सम्भवतः दी जाएँगी।

अमृतसर नगर—(वर्णन) अमृतसर का नगर ३१° ३७′ उत्तरी अक्षांश पर, तथा ७४° ५५′ पूर्वी देशान्तर पर स्थित है। इसकी जनसंख्या १४४, २१६ है, और बहि प्रदेशों तथा छावनियों को मिलाकर १५०, ६६५ है। यह व्यास और रावी के बीचो बीच ग्रांण्ड ट्रङ्क रोड पर स्थित है, और लाहौर से ३५ मील पूर्व की ओर है। नगर पंजाब के सबसे अधिक आबादी वाले और धनी नगरों में से एक है, यह उनमें से भी एक है जिनमें सबसे अधिक सफाई के सुधार हुए हैं। परन्तु यह साथ-साथ दुर्भाग्यशाली भी है क्योंकि अपने स्थान की शारीरिक दशाओं के लिहाज़ से सबसे बुरी स्थिति वाले कस्बों में से एक है। यह नगर, अपने मुख्य जल-स्रोत की रेखा के ऊपर के एक चौड़े मैदान की गहराई में बना हुआ है। इस दशा में प्रकृति के अनुसार यह ठीक नहीं है। इसकी मिट्टी हल्की पिंडोल की ऊपरी पर्त सी बनी हुई है, जो ६ से १० फीट तक गहरी है, और जिसमें यहाँ—वहाँ सख्त चिकनी मिट्टी के पतले प्रदेश हैं जिनमें चूने के पत्थर दबे हुये हैं, जिन्हें स्थानीय भाषा में 'कङ्कड़' बोलते हैं। ऊपरी पर्त के नीचे काफी गहराई तक रद्दी मिट्टी है, और उसके नीचे उत्तम रेत, इस निचली तह में पानी भी पाया जाता है। सूखे मौसम में इस ज़मीन के नीचे के पानी की धरातल से गहराई ८ से १८ फीट तक रहती है, वर्षा ऋतु में ज़मीन के नीचे का पानी हर जगह उठकर धरातल के निकट आ जाता है, और कुछ स्थानों में धरातल पर निकल आता है। नगर के आस पास धरातल के जलस्रोत का पतन प्रति मील एक फुट से कुछ अधिक है, और समस्त स्थान के क्षेत्रफल में बहुत सी सिंचाई की नहरें फैली हुई हैं जो बड़ी दोआब नहर से निकाली गई हैं जो नगर से २ या ३ मील के अन्दर बहती हैं। जलस्रोत के विचार से इस स्थिति में जो प्राकृतिक दुर्गुण हैं उनके कारण प्रदेश भर में पानी ही पानी है।

यह नगर समुद्र के धरातल से ७७० फीट ऊँचा है, इसकी धुरी पांच मील है, इसका अधिकतम लम्बा व्यास १¾ मील है, और इसका क्षेत्रफल लगभग ९०० एकड़ है, जिसमें से दो—तिहाई में मकान बने हुए हैं। सबसे अधिक बसे हुए नगर के हिस्से की आबादी ५२० मनुष्य प्रति एकड़ है, औसत आबादी प्रति एकड़ १६० है। नगर एक दीवार से चारों ओर घिरा हुआ है जिसकी औसत ऊंचाई १४ फीट है, और जिसमें १३ द्वार हैं। महासिंह द्वार नगर के दक्षिण की ओर हकीमानवाला के उत्तर-पूर्व में है, वहाँ से महाराजा रणजीतसिंह द्वारा बनवाई हुई दीवार के खण्डहर दिखाई देते हैं। इनमें लगभग १४ लाख की लागत लगी थी। बाद वाले फाटक से पहले वाले फाटक तक नगर के पश्चिम तथा उत्तर की ओर चारों तरफ दीवार और फाटक नयी बनावट के हैं, जो १८६६ और १८६८ के बीच में सार्वजनिक कार्य-विभाग के द्वारा बनवाए गए थे। राम बाग और महासिंह उन बारह फाटकों में से केवल दो हैं जो सिक्ख-सरकार द्वारा बनवाए गए थे और अब तक मौजूद हैं, उनमें सुन्दर राजगिरि देखने को मिलती है, वे रक्षा किए जाने योग्य हैं, और इनके आस-पास के प्रवेश-द्वार मज़बूत लकड़ी के फाटकों द्वारा सुरक्षित हैं, जो लोहे के गोलदार सिटकनियों, बल्लियों से और भी मज़बूत कर दिए गए हैं। हाल द्वार, जो सीधा रेलवे स्टेशन, सिविल लाइन व सदर तक जाता है, १८७६ में बनाया गया था, और इसका नाम कर्नल सी० एच० हाल के नाम पर रखा गया था, जो कई वर्ष तक अमृतसर के डिप्टी कमिश्नर रहे थे। यह फाटक एक पुराने बुर्ज की तरफ है; फाटक के बिल्कुल अन्दर वाला क्षेत्र १८७५ ई० तक जेल से घिर रहा था; जब कि ज़मीन और इमारतें म्युनिसिपल कमेटी ने खरीद ली थीं। जब ज़रूरी सड़कें बिछा दी गईं, तो बची-खुची भूमि व इमारतें व्यक्तिगत लोगों को बेच दी गईं। दीवार के अन्दर ही एक चौड़ी पक्की सड़क नगर के चारों ओर गई है; दीवार के बाहर और नगर के घेरे से लगे-लगे एक

बड़ी बुर्जदार नाली बनाई गई है। इस नाली में सारे गन्दे नाले आकर मिलते हैं, और यह उन्हें नगर से पाँच मील की दूरी तक ले जाती है। इस नाली के समानान्तर एक दूसरी चौड़ी पक्की सड़क गई है। इस सड़क के आगे पानी के बहुत से बड़े ताल हैं जिन्हें नगर के गढ़े कहते हैं। ये भूतकाल में जमीन खोदकर नगर में इमारतों के बनाने और सफील के लिए बनाए गए थे। इस गढ़े को भरने का काम आजकल उन्नति कर रहा है। नगर-भर में पक्की गलियाँ हैं जिनके दोनों ओर राजगीरी के नाबदान हैं। बहुत सी गलियाँ चौड़ी और खूब हवादार हैं, विशेष कर वह गली जो हाल-द्वार से टाउन-हाल तक जाती है, जिसके कुछ भाग में दोनों ओर पेड़ों की एक पंक्ति है। कूचों में ईंटों के रस्ते किनारे-किनारे हैं जिनके बीच में एक छोटी मोरी चलती है। नगर के सबसे पुराने भागों में, खास तौर से मन्दिर के चारों ओर, गलियाँ तङ्ग और अँधेरी हैं। मोरियों और गलियों में रोजाना दो बार झाड़ू दी जाती है। मोरियाँ साफ पानी से धोई जाती हैं। और गलियाँ भिश्तियों से छिड़की जाती हैं। पीने का पानी कुओं से ही लिया जाता है, जो लगभग १,९०० हैं। इन कुओं की खूब देख भाल रखी जाती है और ये समय-समय पर साफ किए जाते हैं। सिविल लाइन नगर से मिली हुई उत्तर की ओर हैं; सिविल लाइन से कुछ दूरी पर सदर है जहां दोनों योरोपीय और भारतीय पैदल फौजें रहती हैं।

इतिहास—अमृतसर बहुत अधिक प्राचीन नगर नहीं कहा जा सकता। तीन सौ वर्ष पूर्व इस आधुनिक नगर में मनुष्यों के बसने की केवल थोड़ी सी झोपड़ियां थीं; और सिक्खों के समूह के हाथ में शक्ति आ जाने के बाद भी बहुत समय तक, अमृतसर जो इसका पवित्र केन्द्र था, अपेक्षतया छोटा कस्बा ही रहा। यह निश्चय है कि अब रहने वाले लोग भी उन दिनों की याद करते हैं जब तीन-चौथाई अमृतसर (आजकल का) एक सरदार के आधीन होता था। इस स्थान पर सबसे पहले गुरु रामदास ने कब्जा किया था, जो सिक्खों की रिसाइद पाने में १५७४ ईसवी में सफल हुए थे। यहां पर पानी का एक छोटा प्राकृतिक ताल था, जिसके बारे में यह कहा जाता है कि यह बाबा नानक को अत्यन्त प्रिय था। इस ताल के किनारे गुरुरामदास ने स्वयं एक कुटिया खड़ी की। तदनन्तर ही, १५७७ में, उन्हें इस स्थान की मंजूरी मिल गई, इसके साथ बादशाह अकबर* से ५०० बीघा जमीन भी मिली, और इनको ७०० रुपया अकबरी टुङ्क के जमींदारों को देना पड़ा। जमीन इन्हीं जमींदारों की थी। ताल फौरन ही अपनी पवित्रता के लिए प्रसिद्ध हो गया, और गुरु के अनुयायी इस पवित्र स्थान पर आ-आ कर बसने लगे, यह एक छोटा-सा कस्बा बन गया। सबसे पहले इसे रामदासपुर, या गुरु-का-चक कहते थे। ताल में सुधार हुआ, और उसका एक बड़ा तालाब हो गया। इसका नाम अमृतसर पड़ गया। इसका अर्थ होता है "अमर होने का या अमृत का सरोवर (तालाब)"। इसी के ऊपर आधुनिक नगर का नाम पड़ा। इस बात में करीब-करीब सभी लोग विश्वास करते हैं; कुछ लोग यह भी कहते हैं कि अमृतसर का नाम अमरदास के नाम पर रखा गया था, जो रामदास से भूतपूर्व थे। उस दशा में, इसका प्राचीन नाम, अमरसर, या अमर (दास) का तालाब रहा होगा। यहाँ का मन्दिर "हर मन्दर" कहलाता था, और रामदास के उत्तराधिकारी गुरु अर्जन ने बनवाया था। इसकी स्थिति सरोवर के मध्य में थी, और इसकी बनावट का ढङ्ग मुसलमान सन्त, मियाँ मीर की जियारत-गाह से लिया गया था। यह जानकर बड़ी उत्कण्ठा होती है कि गुरु अर्जन ने मन्दिर की रचना में स्वयं मियाँ मीर की सहायता ली थी, और उन्हीं के हाथों से नींव भी डाली गई थी।†

---

*अब तक ज़मीन के मालिक कुछ मिले हुए लोग थे जिनमें सैयद, शेख और राजपूत खास थे। सैयद फ़तेह-शाह की कब्र, जो इस स्थान के पुराने मालिक थे, अब भी गोबिन्दगढ़ के किले के बाहर, पश्चिम की ओर फैली हुई है।

†इस कथा में चाहे जो सत्य हो, इसके पक्ष में इतना कहा जा सकता है कि यह सिक्ख और मुसलमान दोनों ही धर्मों के मानने वालों के द्वारा कही जाती है।

इस समय से लेकर अमृतसर का महत्त्व बढ़ता ही रहा, इसका भाग्य सिक्खों की सरकार पर निर्भर रहा, इसके बाद जब अहमद शाह भारत से चला गया तो यह राज्य करने वाली जाति का माना हुआ पारुल-सल्तनत बन गया। न जाने क्यों, इस समय यह गुरु का वास्तविक निवास-स्थान न रहा था। हरगोविन्द ने जिन्होंने फिर्के के कड़ाकू चरित्र की नींव डाली, अपना समय भारत के बहुत से स्थानों में बिताया, समय-समय पर पञ्जाब और अमृतसर में भी आते रहे। और बाद में होने वाले गुरुओं के मुख्य निवास-स्थान बहुधा जालन्धर जिले में कर्तारपुर में रहे। ग्रन्थ, या सिक्खों की पवित्र पुस्तक, हर गोविन्द के साथ भ्रमण करने के पश्चात् अन्त में वहीरमल के द्वारा कर्तारपुर में ले जाई गई। ये गुरु हर राय, हर गोविन्द के उत्तराधिकारी के भाई थे। इसकी एक प्रति बाद में हर मन्दर में भी रख दी गई। आधुनिक मन्दिर, जो नगर का एक बड़ा भाग भी है, १७६२ ई० से चला आता है। इससे एक वर्ष पूर्व, अहमदशाह लुधियाना के पास घुलू घारा के युद्ध के अनन्तर पश्चिम की ओर लौट रहा था। इस युद्ध में उसने सिक्खों को बहुत बुरी तरह से हरा दिया था। उसने अमृतसर के मन्दिरों को भी बिल्कुल तहस-नहस करा डाला, हर मन्दर को तो बारूद से उड़ा दिया, और गौ के रुधिर से प्रत्येक पवित्र स्थान को अशुद्ध कर दिया। परन्तु जब अहमदशाह बिल्कुल चला गया, तो सिक्ख लोग फिर अमृतसर में घिर आए। मन्दिर का पुनर्निर्माण हुआ और शहर धीरे-धीरे वर्त्तमान स्थिति को पहुँच गया। अबतक तो यहाँ पर प्रभावशाली सिक्खों के निवास-स्थानों का ही समूह था; किन्तु जब यह एक राजनैतिक राजधानी बन गया, तो इन सबको मिलकर एक नगर बन गया। नगर में अब तक इसकी पुरानी रियासत के खण्डहर अवशिष्ट हैं और कटरों (आँगनों) में विभाजित हैं। इनमें से हर कटरे में पुरातन काल में एक सिक्ख सरदार का राज्य था, जिसकी सीमा के अन्दर इसका अधि पति ही सब कुछ था। सबसे प्राचीन कटरों की संख्या १५ है, दूसरे सभी बाद में बने थे।*

सिक्खों के अधिकारी बन बैठने की नींव पड़ने के बाद कई वर्ष तक अमृतसर भङ्गी मिसल के सरदारों के हाथ में रहा, परन्तु अन्त में, १८०२ में रणजीतसिंह ने इस पर अधिकार कर लिया और अपने राज्य की नींव डाली। इस राजा ने समय-समय पर हर मन्दिर के ऊपर काफ़ी रुपया ख़र्च किया जो उसके समय से दरबार साहब कहा जाने लगा। दूसरी सजावटों में से उसने इसकी छत पर ताँबे की चादर चढ़वाई यही कारण है कि इसका नाम स्वर्णमय मन्दिर पड़ा। रणजीतसिंह ने राम बाग़ का मशहूर उद्यान भी बनवाया और गोविन्दगढ़ का क़िला बनवाया। निम्नलिखित कहानी अमृतसर के ताल की प्रसिद्धि की व्याख्या करने के लिए प्रायः उद्धृत की जाती है। लाहौर जिले में पट्टी की एक लड़की ने जो उस स्थान के एक धनाढ्य सरदार की बेटी थी अपने पिता को नाराज़ कर दिया और उसने उसे एक कोढ़ी के साथ ब्याह दिया। जिसे वह एक बँहगी में अपने कन्धे पर ले जाया करती थी। उसकी यात्राओं के मार्ग में ऐसा हुआ कि एक बार वह पानी के एक ताल पर पहुँची, उसने कोढ़ी समेत बँहगी को ज़मीन पर रख दिया और पड़ोस के एक गाँव (तुङ्ग या सुल्तानविन्द) में माँगने चली गई। उसकी अनुपस्थिति में कोढ़ी ने देखा कि एक कौआ पानी में गिर पड़ा और तत्काल सफ़ेद हो गया। इस पर वह पानी में नहाया और वह बिल्कुल ठीक हो गया, केवल एक छोटे से स्थान पर कोढ़ शेष रह गया। पत्नी के लौटने पर उसने अपने पति को न पहिचाना और विचारा कि उसके साथ कुछ धोखा किया जा रहा है। वह अपने पति को गुरु

---

*सबसे पुराने पन्द्रह कटरे ये हैं; दुल्लो का कटरा, हरिसिंह का कटरा; चरतसिंह का कटरा; बगियों का कटरा; निहालसिंह का कटरा; गुरु का बाज़ार; गुरु का महल; लून की मण्डी; लोहगढ़ दरवाज़ा; महाँसिंह का कटरा; रामघरियों का कटरा; फैजल्का पुरियों का कटरा; भागसिंह का कटरा; घनइयों का कटरा।

राम दास के सम्मुख ले गई, जिन्होंने उसे उसकी भूल समझा दी। तालाब के किनारे का वह स्थान जहाँ पर घटना हुई थी दुखभञ्जिनी कहलाता है (इसका अर्थ होता है कष्टों को दूर करने वाला) और एक ताँबा चढ़ी हुई चादर उस स्थान का चिन्ह बताती है। हर मन्दिर की नींव मियाँ मीर ने डाली थी जो एक भक्त मुसलमान पीर थे, इसके लिए गुरु रामदास ने इनसे प्रार्थना की थी जिनके और पीर के मध्य में घनिष्ट मित्रता थी। वर्ग पर ईंटें लगाने के हुनर में प्रवीण न होने के कारण मिस्त्री ने देखा कि ईंट तिरछी रख दी गई थी और फिर उसने इसे ठीक कर दिया जिस पर पीर ने कहा कि यदि ईंट वैसे ही रक्खी रहने दी गई होती जैसे मैंने रक्खी थी तो देवमन्दिर सदा ऐसे ही खड़ा रहता. परन्तु अब यह नहीं रहेगा। इस पूर्व-वाणी की पूर्ति अहमद शाह अब्दाली ने की और उसका पुत्र राजकुमार तिमूर ने भी ऐसा ही किया। तैमूर ने तो रामगढ़ के किले और इमारतों को नष्ट करके तालाब में उनके खण्डहर फेंक दिए जब कि उसके बाप ने लुधियाना के निकट सिक्खों को हरा कर और उजाड़कर (जो घूलू घारा की घटना से विख्यात है) अपने क्रोध को तभी शान्त किया जब उसने मन्दिर को भी तहस-नहस कर दिया। पवित्र सरोवर में वध की हुई गौओं को डाला और दूसरे अमानुषिक अत्याचार किए। अब्दाली के चले जाने के चार वर्ष उपरान्त अर्थात् १७६६ ईस्वी में मन्दिर फिर से बना और नगर में धीरे-धीरे सुधार व वृद्धि हुई।

टैक्स, व्यापार, आदि—अमृतसर में एक म्युनिसिपैलिटी अप्रैल १८६८ में पहले पहल बनी। यह सदा प्रथम श्रेणी की रही है। इसका स्वीकृत विधान यही था कि इसमें पाँच सरकारी और बीस ग़ैर-सरकारी सदस्य रहें। जिनमें से कुछ तो निर्वाचित हों तथा कुछ नामजद। सबसे पहले निर्वाचित १८६२ में हुआ था। फिर १८६५, १८७४ व १८७८ में भी हुआ। डिप्टी कमिश्नर सभापति होता था। नगर शासन-कार्य के लिए बारह विभागों में बँटा हुआ है। कर केवल चुङ्गी के रूप में लिया जाता है जो आय का मुख्य साधन है। चुङ्गी को पहले धरत चुङ्गी कहते थे जब से अमृतसर अंग्रेजी राज्य में मिलाया गया है। तभी से चुङ्गी माल का मुख्य साधन रही है। १८५० से १८५५ तक औसत सालाना आमदनी ४५,००० रुपये वार्षिक थी अगले पाँच वर्षों में अर्थात् १८६० तक ७६,००० रुपये वार्षिक १८६५ में अन्त होने वाले अगले पाँच वर्षों में १,३०,००० रुपये वार्षिक, अगले दस वर्षों में अर्थात् १८७५ के समाप्त होते-होते दो लाख से ऊपर। उसके बाद के वर्षों में और वर्तमान समय तक ढाई लाख से अधिक। महाराजा रणजीतसिंह के समय में अमृतसर केवल चुङ्गी से ही नौ लाख रुपये सालाना देता था। १८५० और आज के बीच में चुङ्गी की आय में जो वृद्धि हुई है वह खिराज की बढ़ी हुई दर के कारण नहीं है, वरन् व्यापार की उन्नति के कारण।

व्यापार का केन्द्र होने के नाते प्रान्त भर में सबसे अधिक महत्वपूर्ण कस्बा अथवा नगर अमृतसर ही है। इसके व्यापारियों के सम्बन्ध हिन्दुस्तान तक ही सीमित नहीं हैं, बल्कि बोखारा, काबुल और काश्मीर तक फैले हुए हैं और पुराने हो चुके हैं। ये सम्बन्ध ब्रिटिश सरकार के पञ्जाब में आगमन से बहुत पूर्व ही स्थापित हो गए थे। पेशावर के साथ रेल का आना-जाना खुल जाने से बहुत अन्तर हो गया है। बोखारा से आयात होने वाली चीजों में मुख्य रेशम है, और केवल इसी चीजों का व्यापार लगभग १४ लाख रुपये वार्षिक का है। इसके बदले में बोखारा और उसके आगे के देश चाय और छींटों के टुकड़े लेते हैं। काबुल फल, रंग, दवाएँ और किराने भेजता है। व्यापार की मुख्य वस्तुएँ साधारणतः अनाज, चीनी, धातु, रंग, मसाले और छींटों के टुकड़े होती हैं।

अमृतसर, दिल्ली व लाहौर से सिन्ध, पञ्जाब और दिल्ली की रेलों द्वारा मिला हुआ है। अमृतसर से एक लाइन पठानकोट को भी जाती है। जो पहाड़ियों की तली पर है। इस लाइन के द्वारा बहुत सा आने-जाने का मार्ग खुला हुआ है जिससे काङ्गड़ा घाटी और काश्मीर तथा दूसरे प्रदेशों के व्यापार अमृतसर से होते हैं। गुरदासपुर और

से घिरी हुई है। मन्दिर ४० फ़ीट ४ इंच का एक वर्ग बनाता है और ६७ फ़ीट वर्ग के चबूतरे पर तालाब के मध्य में स्थित है। यह ताल की पूर्वीय दिशा से एक संगमरमर की पगडंडी द्वारा मिला हुआ है, जो २०३ फ़ीट लम्बी है। इस ऊंची सड़क के प्रवेश-द्वार के सामने "अकाल बुङ्गा" (अमरत्व का खेमा) है जिसमें पहल अथवा बप्तिसमे का सिक्ख दस्तूर नौमुरीदों के साथ किया जाता है। मन्दिर स्वयं एक वर्ग है जिसकी छत गुम्बजदार है, जिसपर ताँबे की सोना-चढ़ी चादर लगी है। इसकी सारी दीवारें सङ्गमरमर की हैं जहांगीर की क़ब्र की लूट और दूसरे मुसलमानों की यादगारी के पत्थर और चित्रों तथा फूलों से सजी हुई हैं। इसके अन्दर ग्रन्थ की एक प्रति रखी है जिसकी चौकीदारी पुरोहित लोग करते हैं; ये ही लोग सुबह और शाम को पुजारियों के सामने इसके पृष्ठों से कुछ वाक्य पढ़ते हैं। ये बहुत संख्या में प्रतिदिन यहाँ जाते हैं और बड़े त्योहारों के अवसरों पर तो भीड़ की भीड़ एकत्रित हो जाती है। यह गुरु की शिक्षा है कि उनके अमृतसर के अनुयाइयों को दिन में कम से कम एक बार दरबार साहब के दर्शन करने चाहिए। जो सुबह को उपस्थित होते हैं ताल में स्नान करने के बाद अपना पूजा-पाठ करते हैं। ताल हसली नहर की एक शाखा द्वारा भरा हुआ है यह तहसील नहर इसी काम के लिये १९वीं सदी के प्रारम्भ होने के पूर्व खोदी गई थी।

महाराजा रणजीत सिंह ने मन्दिर की सजावट में बड़ी रक़में ख़र्च कीं और उन्हीं के समय से इस प्रान्त के राजा सरदार लोग इतने कृपालु रहे हैं कि उन्होंने मन्दिर पर सोना-चढ़ी चादरें लगवाई हैं और दूसरे सुधारों का खर्चा अपने कन्धों पर उठाया है। ऊँचा रास्ता जो मन्दिर को जाता है वहाँ एक चौगोशे पर से जाते हैं। यह चौगोशा अकाल बुङ्गाह (अमरत्व-भवन) के सामने है। वहाँ से एक द्वार मन्दिर की ओर जाने के लिये है जिसे प्रदर्शनी दरवाज़ा अथवा प्रार्थना का द्वार कहते हैं। चौगोशे के खरन्जे (संगमरमर के) पर खूबसूरत नक़्क़ाशी है। इसमें कई प्रकार के पत्थर लगे हुये हैं। पहल अथवा सिक्ख-बप्तिस्मे की विधि अकाल-बुङ्गाह में की जाती है और यहाँ वे हथियार रक्खे हैं और इसके विषय में यह कहा जाता है गुरुओं हरगोविन्द ने और गोविन्द ने चलाए थे इसके संरक्षण का भार गुरु गोविन्द के मतानुयायी अकालियों के ऊपर है। हर रात को ग्रन्थ या सिक्खों की धार्मिक पुस्तक स्वर्णमय मन्दिर से लाई जाती है और अकाल बुङ्गाह में रक्षार्थ रख दी जाती है। ताल के चारों ओर बंगे बने हैं, जिनकी संख्या ७० है और राज्य करने वाले महत्वपूर्ण सरदारों के हैं। जब कभी इनके मालिक उनके मित्र बन्धुगण मन्दिर देखने आते हैं तो वे इन बङ्गों में आराम करते हैं। पूर्व की ओर एक घण्टाघर है जो लाल ईंटों का मध्यकालीन यूरोपीय ढंग पर बना है इसका बनना १८६२—६३ में शुरू हुआ था और १८७३—७४ में समाप्त हुआ। इसके बनाने वाले स्वर्गीय जॉन गार्डन थे जो डी० पी० डब्ल्यू० के एक्जीक्यूटिव इञ्जीनियर थे। उन्होंने यह भी इरादा किया था कि चौगोशे को (क़स्बे की इमारतों के) सजावें। मीनार का निर्माण आरम्भ होने पर कस्बे की इमारतों का स्थान परिवर्तित कर दिया गया तथा मीनार पूरी की गई। दक्षिण की ओर दो ऊंची मीनारें हैं जो रामगढ़ियाँ खान्दान ने खड़ी करवाई थीं। इनकी चोटियों से नगर-भर का एक सुन्दर दिग्दर्शन हो सकता है जैसा कि बाबा अटल से भी हो सकता है जो एक सात-मंज़िला अपने ढङ्ग की मीनार है। जिसके बुर्ज पर सोने का पानी फिरा हुआ है। यह मन्दिर के दक्षिण-पश्चिम को है। यह मीनार चन्दे की रक़म से १७९८ ईस्वी में गुरु हरगोविन्द के पुत्र के आदर स्वरूप बनी थी और उन्हीं के नाम पर है। यह उस स्थान पर है जहाँ बाबा अटल का शरीर जलाया गया था। उनकी मृत्यु के समय अटल की अवस्था ७ वर्ष की थी इसीलिए सात मंज़िलें हैं। अटल की मृत्यु के ढङ्ग से सम्बन्धित एक सार्वजनिक आख्यायिका है, उसका वर्णन किया जाता है। बाबा अटल का एक खेलने वाला साथी मोहन नाम का था जिसके साथ उन्होंने एक होड़ बदी और खेल खेल में जीत भी गए और

सकती हैं। सारे काम में २,१४,२०० रुपए की लागत लगी थी।

नगर के उत्तर-पश्चिम में और दीवार से लगभग ९०० गज पर गोविन्दगढ़ का किला है, जिसे महाराजा रणजीतसिंह ने १८०५ और १८०९ ईस्वी के बीच में बनवाया था। यह कहा जाता है कि यह क़िला होल्कर के प्रस्ताव से बना था, यह रियासत के कोष की रक्षा का स्थान था जिसे महाराजा जमा किया करते थे नगर के एक अमीर बैंकर रामानन्द के यहाँ। क़िले का नाम सिक्खों के अन्तिम गुरु गोविन्द सिंह के ऊपर रखा गया। यह मजबूती से बना हुआ है, परन्तु बड़ी नाल वाली बन्दूकों के आक्रमण को अधिक देर तक नहीं सहन कर सकता इसका अधिकार नगर तथा रेल के स्टेशन पर है। नगर की इमारतों अथवा टाउन हाल का कुन्दा बड़ा है और ऊंची ईंटों का बना हुआ है। इसका बनना जान गार्डन के द्वारा १८६४ में शुरू किया गया था, और १½ लाख रुपए की लागत पर १८००० में खतम हुआ। सामने का भाग २६४ फ़ीट लम्बा और ४० फ़ीट चौड़ा है। मध्य में से होकर एक मिहराबदार राह है २० फ़ीट चौड़ी, इससे आने-जाने का मार्ग सुगम हो गया है। मिहराबदार राह की चोटी तक सड़क से ऊँचाई ३५ फ़ीट है दो छोटे गुम्बज सामने वाले कुन्दे के मध्य को विभूषित करते हैं। पूर्व व पश्चिम के परवाज-फ़ौज १०० फ़ीट लम्बे और २७ फ़ीट ऊँचे हैं। इस इमारत में स्माल काजेज का कोर्ट लगता है. नगर की पुलिस के हेड-क्वार्टर्स हैं, म्युनिसिपैलिटी के दफ्तर हैं, एक नि: शुल्क पुस्तकालय है, और एक सभाकक्ष है। यह सभाकक्ष ८० फ़ीट चौड़ा, तथा ४० फ़ीट ऊँचा है एक ओर को एक छोटा दालान है। टाउन हाल से मिला हुआ गवर्नमेण्ट कालिजियेट स्कूल है, जिसकी सुन्दर इमारत टाउन हाल के नमूने से मिलती जुलती है, जो एलिज़बेथ का है। स्कूल के बिलकुल पीछे और निकट ही कैसरबाग़ है। यह एक सार्वजनिक बाग़ है अथवा मनोरञ्जन स्थल समझ लीजिए, नगर के पुराने बाग़ों अर्थात् अजीब तालों में से एक पर यह स्थित है। वह स्थान जहाँ टाउन हाल और स्कूल का कुछ भाग खड़े हैं गत वर्षों में श्मशानघाट की तरह बर्त्ता जाता था। कैसर बाग़ के पश्चिम की ओर अहलूवाला मिसल का क़िला है; एक गढ़ अब भी दिखाई दे सकता है।

विद्यापीठ—इस बाग़ के पूर्व में तथा महासिंह द्वार के समीप चर्च मिशन हाउस है, जो दुमंजिला और खूबसूरत इमारत है। यह एक छोटे परन्तु सफ़ाई से रक्खे गए बाग़ के मध्य में है, और एक दीवार से घिरा हुआ है। इस इमारत में आजकल मिशन की महिलाएँ निवास करती हैं और जनता के मध्य में काम करती हैं। गुरु बाज़ार के निकट का मिशन स्कूल एक प्राचीन किन्तु सुन्दर भवन है। महासिंह द्वार के बाहर एक दूसरी दुमंजिला इमारत है, जहाँ एक नार्मल स्कूल शिक्षकों की शिक्षा के लिए लगता है। यह विद्यापीठ क्रिश्चियन वर्नाक्युलर एडुकेशनल सोसाइटी से सहायता पाता है। सिविल स्टेशन के मध्य में एक सुन्दर दुमंजिला इमारत है जो १९ वीं सदी के अन्त में चर्च मिशन सोसाइटी ने, अलेक्जेण्ड्रा स्कूल के नाम से बनवाई थी, यह हिन्दुस्तानी ईसाइयों की उच्चश्रेणी की लड़कियों की शिक्षा के लिए बनवाई गई थी। सेंट पाल का गिरजाघर एक अच्छी इमारत है। इसके उत्तर-पश्चिमी कोने पर एक मीनार है। इसमें अधिक लागत नहीं लगी। इसमें २०० लोगों के बैठने की जगह है। नेटिव क्रिश्चियन चर्च, नगर के रामबाग़ द्वार के बाहर स्थित है, इसकी वृद्धि और सुधार १९ वीं शताब्दी के अन्त में हुआ था, यह अब एक साफ़ भवन है, इसका नमूना रोमन कैथोलिक चेपेल के ढंग का है, जो क़िले गोविन्दगढ़ और सदर के बीच में है।

सिविल लाइन व सदर के बीच में, और नगर से क़रीब एक मील की दूरी पर, ज़िले के कोर्ट और खज़ाना हैं। उनकी इमारत लाल ईंटों से बनी है और सुन्दर है, इसका अगवाड़ा दुमंजिला है जिसके दो ओर बाज़ू हैं। कुन्दे को सरकार ने बनवाया था, और १८७६ में अधिकार किया था। रेलवे स्टेशन बहुत से बड़े बनने वाले स्टेशनों के नमूने का है, इसकी इमारत लम्बी है इसकी छत लोहे की है, लेकिन अगवाड़ा अधिक भव्य है, जिस पर साफ़ छत लगी है और एक ध्वज लहरा रहा है। कई

सन्तोकसर, रामसर, कँवलसर, ववेकसर और रामतलाव में बड़ी दोआब नहर से पुराने समय की हसली नहर शाखा द्वारा पानी पहुँचता है, यह १९ वीं सदी के आरम्भ होने से पहले खोदी गई थी। दूसरे तालों में नहर का पानी जैतोवाल रजवाहा के जरिए (बड़ी दोआब नहर की एक शाखा) पहुँचता है।

जण्डियाला क़स्बा—जण्डियाला अमृतसर तहसील में है, यहां एक पुलिस-थाना है। यह ग्राण्ड ट्रंक रोड पर अमृतसर से १२ मील दक्षिण-पूर्व को ३१५०' ४५" उत्तरी अक्षांश ७४°३७' पूर्वीय देशान्तर पर स्थित है।

इसकी आबादी, लगभग १०,००० है। यहाँ तृतीय श्रेणी की एक म्युनिसिपल कमेटी है। औसत वार्षिक आय ३,००० रुपए हैं जो सारी की सारी चुङ्गी से प्राप्त होती है। प्रति मनुष्य पर १४ आने से अधिक टैक्स नहीं पड़ता। एस० पी० एण्ड डी० रेलवे कस्बे के डेढ़ मील के अन्दर ही जाती है। रेलवे स्टेशन और कस्बा एक अच्छी पक्की सड़क से मिले हुए हैं। ग्रांड ट्रंक रोड की तरफ़ आरामघर, सराय सप्लाई डिपो और पड़ाव का स्थान है। वहाँ एक शाखा मिशन भी है जो एक लेडी मिश्नरी द्वारा संचालित होता है। यहाँ एक मिशन स्कूल और डिस्पेन्सरी भी है। सुबराँव और कसूर शाखा जो बड़ी दोआब नहर की है वह कस्बे से डेढ़ मील पूर्व के अन्दर ही होकर बहती है। जण्डियाला को जाटों ने बसाया था। इसकी नींव डालने वाले के पुत्र, जण्ड के ऊपर इस क़स्बे का नाम पड़ा है। इसे भी यह गौरव प्राप्त है कि एक दरबार साहिब और एक गुरू यहां रहते हैं, क्योंकि एक बाबा हुण्डल (१५६१ ई०) को गुरू अर्जन ने एक मञ्जी अथवा मस्नद दी थी। यह स्थान ऐतिहासिक नहीं है। केवल १७६२ ई० में जब यह नरञ्जनी नाम के एक हिन्दू गुरू के हाथ में था, तो इस पर महाराजा रणजीत सिंह के बाबा भरत सिंह ने नरञ्जनी को दण्ड देने के लिए आक्रमण किया, क्योंकि उन्होंने अहमद शाह के आगे सिर झुका दिया था और उसकी आधीनता स्वीकार कर ली थी, और इसीलिए गुरु गोविन्द के पक्ष वाले इनसे बदला लेने की धुन में थे। क़स्बे में साफ़ पीतल और तांबे के बर्तन बनाए जाते हैं और सभी जगह भेजे जाते हैं।

मजीठिया क़स्बा मजीठिया अमृतसर तहसील में है, यह अमृतसर से दस मील उत्तर-पूर्व की ओर ३१°४१'२०" उत्तरी अक्षांश तथा ७५°१' पूर्वीय देशान्तर पर स्थित है। इसकी जनसंख्या लगभग १०,००० है परन्तु जण्डियाला से कुछ कम है। अधिकतर कृषक यहां रहते हैं। यहां भी तृतीय श्रेणी की एक म्युनिसिपल कमेटी है। आय मुख्यतया चुंगी से होती है औसत लगभग १,००० रुपए वार्षिक का पड़ता है। फ़ी आदमी चार आने से अधिक चुङ्गी कभी नहीं ली जाती। मजीठिया अमृतसर से एक कच्ची सड़क द्वारा जुड़ा हुआ है। क़स्बे के पांच मील उत्तर-पूर्व को कथूनाङ्गल स्टेशन है जो अमृतसर और पठानकोट रेलवे पर है वहीं पर एक थाना, सराय और धर्मशाला है। बड़ी दोआब नहर की मुख्य शाखा मजीठिया और कथूनाङ्गल के बीच में होकर जाती है और दोनों की जमीनों को सींचती है। मजीठिया की नींव मद्दु ने डाली थी, जो एक गिल जाट था। वह अपने पिता का ज्येष्ठ पुत्र था, अतः ग्राम का नाम मद्दु जीठा पड़ा। पञ्जाबी में जीठा का अर्थ होता है "सब से बड़ा बेटा" जिससे बिगड़ते-बिगड़ते मजीठिया हो गया। मद्दु मजीठिया सरदारों का बाप-दादा था जिनमें से कुछ महाराणा रणजीतसिंह के समय में उच्च पदों पर प्रतिष्ठित थे और इतिहास उन्हें भूला नहीं है। सरदार लहना सिंह सरदार दयालसिंह के पिता, राजनैतिक तथा सामाजिक क्षेत्रों में काफ़ी प्रभावशाली व्यक्ति थे, और उनका दिमाग मशीन की तरह काम करता था। उनका पुत्र पञ्जाबियों की शिक्षित तथा नवीन विचारों के लोगों का नेता था। मजीठिया में एक मिशन स्कूल है और एक दवाखाना जिन्हें ज़िले के फ़ण्ड चलाते हैं। यह क़स्बा ज़िले के छोटे व्यापारी लोगों में से एक है।

बुन्दाला क़स्बा—बुन्दाला अमृतसर-नगर के नौ मील दक्षिण-पूर्व को ३१ ३०' उत्तरी अक्षांश तथा ७५°२'४०" पूर्वीय देशान्तर पर स्थित है। यहां की आबादी लगभग ७-८ हजार होगी, यहां का मुख्य

पैलिटी उठाती है, और जिलों से चन्दा करके जहां के कर्द्दी इसमें रक्खे जाते हैं। उत्तर-पश्चिमी कोने पर तालाब बहुत ऊंचा है जिसे राजकुमार नवनिहाल सिंह ने बनवाया था जिसकी चोटी से चश्मा लगा कर अमृतसर देखा जा सकता है।

तरण तारण इस प्रदेश के उस भूभाग की राजधानी है जिसे मांझा अथवा बीच की भूमि पुकारते हैं जो रावी से व्यास तक फैला हुआ है यहां घुड़सवार हिन्दुस्तानी सेना रहती है यह बहुत मज़बूत और ताक़तवर कृपाणों की जाति का स्थान है। हर महीने यहां एक मेला लगता है जिसमें भक्त लोग बड़ी तादाद में पहुँचते हैं। अमावस के मेले जो मार्च और अगस्त के महीनों में लगते हैं, कई हज़ार आदमियों से भरे रहते हैं जो तालाब में नहाते हैं। व्यापार पूर्णतया स्थानीय है यद्यपि क़स्बा प्रान्त के सबसे अधिक उजाऊ टुकड़ों में से एक के बीच स्थित है और फ़ीरोज़पुर, पट्टी और अमृतसर के मध्य होने वाले व्यापारी मार्ग पर बसा हुआ है। क़स्बे की जनसंख्या ५००० होगी। यहां भी तृतीय श्रेणी की एक म्युनिसिपैलिटी है। वार्षिक म्युनिसिपैलिटी है। वार्षिक म्युनिसिपल आय का औसत ३००० रुपया बैठता है और मुख्यत चुङ्गी से आता है, जो लगभग १ रुपये के हिसाब से पड़ता है। क्योंकि दर्शकगण बहुत संख्या में यहाँ आते हैं। एक पक्की सड़क तरण तारण को अमृतसर से मिलाती है। यह १९वीं शताब्दी के अन्त में बनी थी। सार्वजनिक इमारतें ये हैं—तहसील, एक दवाखाना डाकखाना, स्कूल घर, थाना, सराय और धर्मशाला। बड़ी दोआब नहर की सुबरांव शाखा क़स्बे से थोड़ी ही दूर पर बहती है और इस तालाब से इसमें पानी पहुँचता है। इसके लिए लगभग १८८० ई० में राजा फ़ाइड के ख़र्चे पर एक नाला बनवाया गया था।

रामदास क़स्बा—रामदास अजनाला तहसील में स्थित है यह अजनाला से १२ मील उत्तर-पूर्व को है इसका अक्षांश १९° डिग्री तथा देशान्तर ७४°५८′ पूर्वीय है। इसकी जनसंख्या लगभग ६००० है। म्युनिसिपल कमेटी तृतीय श्रेणी की है। आय का औसत १,००० रुपया वार्षिक होता है, जो चुङ्गी से मिलती है। प्रति मनुष्य ४ आने से अधिक का औसत नहीं बैठता। यहाँ की देखभाल का काम चौकीदार करते हैं जिन्हें म्युनिसिपैलिटी से वेतन मिलता है। क़स्बा बरसात के मौसम में पहुँच से बाहर हो जाता है क्योंकि किरन अथवा सुन्धी का स्रोत, जिस पर कोई पुल नहीं है, इसके दक्षिण और पूर्व में बहने लगता है, क़स्बे का नाम गुरु रामदास पर पड़ा था परन्तु इसकी नींव बाबा बूढ़ा गुरु नानक के एक शिष्य ने डाली थी, जो यहीं उत्पन्न हुआ और यहीं जिसने अन्तिम श्वास छोड़ी। क़स्बे में एक छोटा मन्दिर है और एक स्कूल भी। इस स्थान का वाणिज्य की दृष्टि से कोई महत्त्व नहीं है।

दूसरे क़स्बे—५,००० से कम जनसंख्या वाले क़स्बों में से कुछ उल्लेखनीय हैं:—

अटारी—यह ग्रैण्ड ट्रंक रोड पर एक बड़ा गांव है, इसका एक रेलवे स्टेशन भी है। क़स्बे को गौर सिंह एक सिधु जाट ने बसाया था। इसकी महत्ता मुख्यतः इसी में है कि यह अटारी के भली प्रकार विख्यात सरदारों का निवास-स्थान रहा है, जो गौर सिंह के वंशज थे। सिक्खों के राज्य में यह परिवार अत्यन्त महत्त्वपूर्ण समझा जाता था। यही बात रणजीत सिंह के समय में भी थी। इस कुटुम्ब का वर्त्तमान प्रतिनिधि बड़ा जागीरदार और अनाड़ी मजिस्ट्रेट होता है।

दूसरे क़स्बे अजनाला—अजनाला स्वयं एक तहसील है। यही एक परगना भी है और अमृतसर तथा स्यालकोट सड़क पर एक छोटा गांव है, यह अमृतसर से १६ मील उत्तर-पश्चिम को है। रुक्की की धारा एक पुराने पुल द्वारा यहां पर बालिरत से नापी जाती है। यह पुल सिक्ख राज्य में बना था। रुक्की धारा पास ही से बहती है। इस गांव को किसी बागा नाम के एक नज़ार जाट ने बसाया था। उसने इसका नाम नज़राला रखा था, जो तभी से बिगड़ते-बिगड़ते अजनाला हो गया है। नज़ार जाटों के पास अब भी जायदादी अधिकार हैं। तहसील का सदर मुक़ाम जो पहले सौरियां में था, अजनाला में इसलिए कर दिया गया कि यह केन्द्र में स्थित है और यह गुजरानवाला सड़क पर है। अब यहां

से अधिक करघे हैं। हर एक करघे पर दो आदमी काम करते हैं और पश्मीने की बनने वाली चीजों के बारे में अनुमान लगाया गया है कि आठ लाख रुपए अथवा ८०,००० पौण्ड का सामान बन जाता है। इस कारीगरी में बहुत अधिक निपुणता तथा महीन दस्तकारी की जरूरत होती है। काम करने वाले इसे बचपन से ही सीख लेते हैं। बच्चे हुनरदार काम करने वालों के शागिर्द बनते हैं, जो कुछ समय बाद उनकी नौकरी करने के लिए खर्च करते हैं, किन्तु बहुधा वे अपने नातेदारों से ही सीखते हैं। पहले से ही फ़ीस दे दी जाती है, और यदि कोई शागिर्द अपने मालिक को अपनी पेशगी का काम खत्म होने से पहले ही छोड़ देता है, तो अगला मालिक बकाया के लिए उत्तरदायी समझा जाता है।

पश्मीने के सामान का निर्यात अमृतसर से योरुप को पिछली सदी के मध्य में शुरू हुआ। आजकल लगभग २० लाख रुपए का सामान बाहर चला जाता है। इसमें वह भी शामिल है जो काश्मीर और दूसरे स्थानों से पुनर्निर्यात के लिए आयात किया जाता है। इसमें से, १६ लाख का सामान योरोपीय सौदागर जो पञ्जाब में बसे हुए हैं निर्यात करते हैं, और चार लाख का भारतीय सौदागर।

अमृतसर के सर्वोत्तम प्रकार के बड़े शाल ४००-५०० रुपए से कम के नहीं मिलते। द्वितीय श्रेणी के दुशाले, ३००-४०० रुपए से कम के नहीं मिलते, और तृतीय श्रेणी के, २००-३०० रुपए से कम के नहीं मिलते। वर्गाकार दुशाले बेचे जाते हैं, अगर प्रथम श्रेणी के हुए, तो २५० से ३०० रुपए तक में; दूसरी के हुए; तो १७५ से २५० रुपए तक में एवं तीसरी के हुए, तो १२५ से २०० रुपए तक के। जामावार एक दूसरी प्रकार का शाल होता है जिसमें भिन्नता यही है कि इसमें एक धारी, फूलदार वा साफ होती है, और रूमाल (वर्गाकार शाल, २५ से ५० रुपए तक में बिक जाते हैं। सबसे बढ़िया किस्म के शाल चाङ्ग यानी ऊन से बनते हैं, जो कूल और सबाथू होकर मंगाई जाती है, और वहां २ रुपए सेर के हिसाब से बिकती है। इस पश्म में शाल वाली बकरी का घटिया बाल भी काफी मात्रा में मिला रहता है, और काटने से पहले इसे साफ करने की जरूरत पड़ती है। यह काम बड़ी मुश्किल से होता है। दूसरी प्रकार के शाल चाङ्गथानी और किर्मानी ऊनों (आधी-आधी) की मिलौनी से बनते हैं और फिर इनको अलग करना बहुत कठिन होता है। तृतीय श्रेणी के शाल, जैसे जमावार। रूमाल सीधी लाइनें वाले, और दूसरे सभी घटिया किस्म के पश्मीने बिल्कुल किर्मानी ऊन से तैयार होते हैं। इस ऊन का दाम १ रुपया १० आने प्रति सेर होता है, और चूँकि इसमें घटिया बाल थोड़े से ही होते हैं, इसलिए बुनने वालों को इसे प्रयोग करने में कम तकलीफ और अधिक लाभ रहता है।

अमृतसर शाल काश्मीर के शालों से कुछ ही घटिया होते हैं परन्तु इस बात पर कोई ध्यान नहीं देता, और इसका कारण यही है कि काश्मीर की हवा और जलवायु इसके अनुकूल है, तथा रँगने में प्रयोग होने वाला जल बड़ा गुणकारी होता है आदि ये सब कारण कहीं तक माने जा सकते हैं। परन्तु सबसे मुख्य कारण काश्मीर के धागे के बढ़िया होने का यही है कि शाल की ऊन में किर्मानी की ऊन कभी नहीं मिलाई जाती। सचमुच किर्मानी ऊन तो काश्मीर में आने ही नहीं दी जाती। दूसरा कारण यह है कि काश्मीर में पश्म से घटिया बाल अलग करने की रीति और काटने की रीति, बहुत देखभाल की है। इसके विपरीत अमृतसर का गुलाबी रंग काश्मीर वाले से बढ़िया होता है, लाख का रङ्ग इस्तेमाल किया जाता है जो सस्ता होता है, और इसलिए उसमें कम मिलावट रहती है। भेद के जो कुछ भी कारण सत्य समझे जाएँ, इसमें कोई सन्देह नहीं है कि वास्तव में काश्मीर के शाल बाजार में अमृतसर के शालों से अधिक मूल्य में बिकते हैं।

रेशम का सामान—रेशमी छींट के टुकड़े बहुत बनाए जाते हैं, यद्यपि सिक्ख-राज्य के दिनों से किस्म घटिया हो चली है। इसका कारण यही है कि आजकल की माँगें सस्ते और आम धागों के लिए हैं। चौड़े और मोटे सूत जिनकी माँग प्राचीन काल में सिक्ख दरबारियों की पोशाक के लिए थी अब बिल्कुल नहीं है। भारतीय रेशम चमकीला और भड़कीला होता है, इसे योरुप वाले

पसन्द नहीं करते, किन्तु यह बहुमूल्य भी हो सकता है जब खूब मोटा और असरदार बनाया जाय। इसका बनना लाहौर के नगर से फैला। आजकल की बनाई जाने वाली किस्में सभी साफ रेशम की हैं जैसे दरयाई, धारीदार रेशम (गुलबदन) और धूपछाँव नाम का वह रेशम जिसमें दो भिन्न रंगों के डोरे एक दूसरे को काटते हैं। कच्चा रेशम अधिकतर अमृतसर में रंगा जाता है, और लाहौर तथा दूसरे कारखाने वाले स्थानों को भेज दिया जाता है।

छोटी शिल्पकाएँ—क्षार और रासायन भी किसी मात्रा में तय्यार होते हैं।, जैसे सल्फेट आव कापर (नीला थोथिया)। साबुन अधिकतर काङ्गला तथा उत्तर को भेजने के लिए बनता है। सोना और चाँदी का सूत, रिबन, सितारे वगैरह कारचोबी के लिए गोटा किनारा, सल्मा, कलाबत्तून, आदि नामों से तय्यार होते हैं। हाथी दाँत का खोदना काफी सफलता से किया जाता है, परन्तु यह विशेषत: कंघे कागज काटने के चाकुओं, ताश के डिब्बों और खिलौनों तक ही सीमित है; यद्यपि चीन तथा भारतवर्ष के दूसरे भागों से यहाँ का काम घटिया होता है, डिजाइन फिर भी काफी अच्छा हो जाता है, यदि इस बात को ध्यान में लाया जाय कि औजार जिनसे काम लिया जाता है रद्दी होते हैं। सूती कपड़े, बर्तनों वगैरह के बनाने में कोई विशेष बात नहीं है, क्योंकि यह काम तो सभी जगह होता है, और अमृतसर में इस काम की कोई खसूसियत नहीं पाई जाती। पञ्जाब भर में यह काम एकसाँ ही होता है।

लाहौर स्कूल आव आर्टस के प्रिंसिपल, मिस्टर लाकवुड किपलिङ्ग ने १९ वीं शताब्दी के अन्तिम चौथाई में जिले की मुख्य शिल्पकलाओं पर निम्नलिखित नोट लिखा था :—

सजावट—"इस जिले के इतिहास को देखने में यह पता चला है कि सिक्ख मन्दिरों के सबस छोटे हैं, उनमें कारीगरी उच्चकोटि की नहीं है, और उन पर सोने का पानी फिरी ताँबे की चादरें लगी हुई हैं, और वे अन्दर से सुन्दर ढङ्ग से सुसज्जित हैं। अच्छी प्रकार निरीक्षण करने से पता लगता है कि सिक्ख लोगों ने अपनी इमारतों का निर्माण करने में कोई असालत नहीं दिखलाई और इस बात से सन्तुष्ट थे कि उन्होंने मुसलमान इमारतों की नकल की व अक्सर उनके सामान लूटते रहे, फिर भी उन्होंने उस कला में कुछ उन्नति अवश्य की थी। सिक्खों ने मुसलमानी नमूने का अनुकरण अवश्य किया, परन्तु साथ ही साथ कुछ सुधार भी किया, जिसे देखकर साधारण नेत्रों को कुछ सुन्दरता प्रतीत होती है। उन्होंने जैनियों की भी काफी नकल की, और अब उनमें कुछ भिन्नता पाई जाती है। मिस्टर फर्गूसन अमृतसर के स्वर्णमन्दिर अथवा दरबार साहिब के विषय में कहते हैं कि यह लाभदायक है, क्योंकि इससे यह पता चलता है कि १९ वीं सदी में हिन्दुओं के मन्दिरों का नक्शा कैसा होता है, औ[र] इसलिए हमें इसका अध्ययन करना चाहिए। जैन और हिन्दू लोग अब भी इसमें बहुत सुधार करेंगे यदि वे योरोपीय अनुकरण के प्रभाव में न आ स[के] किन्तु अब उनका राज्य सिक्खों के हाथ से निक[ल] गया है, और हम उनके पण्डितों अथवा प्रजा [से] यह आशा नहीं करते कि वे ऐसा काम कर[ें] जिसे करने को उनका धर्म उन्हें आज्ञा नहीं [दे]ता अथवा उत्साह नहीं दिलाता।'

"ऐसे धर्म बहुत कम हैं जो दिखावट को [पसन्द] करते हों वे बहुधा इसका खण्डन करते हैं। [किन्तु] जब उनके आचार्य अमीर और सम्पन्न हो जाते [हैं] तो वे भी खूब सजधज करने लगते हैं। [दरबार] साहिब की न केवल ऊपरी मंजिल ही सोने [से] चमकने वाली तांबे की चादरों में ढकी हुई [है] किन्तु निचली मंजिल में भी संगमरमर का [काम] हुआ है और भिन्न-भिन्न प्रकार से मोती [जड़े] हुए हैं। आगरा मुम्ताज महल के पत्थरों पर [जैसा] काम है वैसा ही यहां के पत्थरों पर भी है। हिन्दुओं की भांति सिक्ख लोग भी [सजाव]ट पसन्द करते हैं और अपने मन्दिर को सुन्दर [बनाने] के लिए बहुत-सा धन व्यय करते रहते हैं। [सभी] वर्णों के धनी लोगों को भी इस बात की [छूट] है (और यह एक अच्छी नीति है) कि [वे] इसको सुन्दर बनाने में हाथ लगा सकते हैं। [अन्य] धर्मों में यह बात देखी जाती है कि वर्ण भिन्न होते हैं और एक वर्ण के लोग दूसरे

लोगों से सभी बातों में अन्तर रखते हैं। परन्तु यहाँ इस बात को देख कर विस्मय होता है।

१८८४ में मन्दिर की साधारण देख रेख का काम एक बड़े बूढ़े सज्जन राय कल्याण सिंह के हाथ में था, जिनके नीचे बहुत से आदमी काम करते थे। जब कभी भी कोई चीज टूट-फूट जाती है तो उसकी मरम्मत कर दी जाती है। कारीगर सिक्ख ही होते हैं जिनका रोजाना की मजदूरी लेने का ढङ्ग अन्य मजदूरों से कुछ भिन्न होता है। उनके काम और आगरा के पीटरा दूरा में यही बड़ा अन्तर है कि ये लोग जीवित जानवरों जैसे मछलियों, चिड़ियों और पशुओं के चित्र बनाते हैं कभी कभी किसी भक्त को तस्वीर बनाते हैं और उसकी दाढ़ी को प्राकृतिक सी कर देते हैं। आगरे के नमूने इटली के ढङ्ग पर हैं परन्तु अमृतसर के नहीं। इनका ढङ्ग भारतीय ढङ्ग से मिलता-जुलता है परन्तु कुछ-कुछ भिन्न भी है जो केवल देख कर पहचाना जा सकता है किन्तु वर्णन नहीं किया जा सकता।

धातुओं का काम—तांबे का काम जो मन्दिर में हुआ है वह छतेरों ने किया है जो कभी कभी चाँदी का काम भी करते हैं। केन्द्रीय भवन के द्वार जिनमें आदि ग्रन्थ दिन में रक्खा जाता है, चांदी से ढके हुए हैं और देखने में बहुत मनोहर तथा सुन्दर लगते हैं।

सिक्खों में यह रिवाज है कि स्वर्णमन्दिर को आरम्भ करने के पूर्व जब परामर्श लिया गया तो यह प्रस्ताव हुआ कि भवन में मोती जवाहर और स्वर्ण जड़ा जाय परन्तु लूटे जाने के भय से सोने का पानी फिरी हुई धातु की चादरें तथा संग-मरमर से जटित पत्थर प्रयोग में लाये गये। धातु की चादरों का नमूना बनारस के मन्दिरों से लिया गया है। उनमें से एक विशेश्वर के मन्दिर के लिये महराजा रणजीत सिंह ने गुम्बज को ढकने के लिये चादरें भेजी थीं। यह ध्यान में लाने की बात है कि पटना के मन्दिर का जो गुरु गोविन्द सिंह की जन्म-भूमि है बहुत सा भाग उन्हीं की अनुकम्पा से बना था और अब भी पञ्जाब के सिक्ख उसकी मरम्मत करवाते रहते हैं।

लकड़ी की नक़्क़ाशी—अमृतसर में नक़्क़ाशी की हुई लकड़ी की कई अच्छी चीजें हैं। और यद्यपि यह नहीं कहा जा सकता कि व्यापार बहुत बड़ा है नक़्क़ाशकार और बढ़ई कोई कोई बहुत बढ़िया सामान बनाते हैं। कहा जाता है कि यहीं पर प्रान्त भर की लकड़ी की नक़्क़ाशी के हुनर का सदर-मुकाम है। इस बात पर सन्देह हो सकता है कि यह सत्य है या नहीं। किन्तु यह निश्चित है कि पञ्जाब की नुमायश में सब से बढ़िया सामान जैसे नक़्क़ाशी किये हुये किवाड़ वग़ैरह अमृतसर से ही आते हैं।

धातु की चीजें—पीतल का सामान काफी मात्रा में बनता है और बाहर भेजा जाता है। नगर में धातु के काम के दो स्कूल हैं एक तो साधारण पीतल और तांबे का काम मैदानों वाला करता है और दूसरा काश्मीर की तरह के टीन मिले हुये पीतल का, जिसे काश्मीरी लोग इस्तेमाल करते हैं। पहले के बारे में अधिक नहीं कहना है।

पीतल का काम अच्छा होता है परन्तु उसमें रिवाड़ी या जगाधारी के काम की तरह सुन्दरता नहीं होती। हिन्दुओं के कुछ सुन्दर चित्र भी बनाये जाते हैं जो पञ्जाब भर के धातु में चित्र बनाने के काम की भाँति दक्षिणी भारत के काम से कहीं घटिया है।

थालियाँ तांबे की भी बनाई जाती हैं जिसमें टीन मिलाई जाती है।

जस्ते के जेवर निर्धन लोग प्रयोग करते हैं ये बहुत भद्दे बने होते हैं और कुछ सड़कों पर तो सारा का सारा काम खुली हवा में किया जाता है। यह स्पष्ट है कि यह सामान मध्य भारत तथा बम्बई प्रान्त के कुछ भागों में बनने वाले सामान से घटिया होता है। जहाँ यह सस्ता सामान खूब इस्तेमाल होता है और जहां इसकी जंजीरें भी तय्यार होती हैं।

यहाँ बहुत सा जेवर भी बनता है। पीतल रंगीन, शीशा मोती और सोने के तार आदि चीजें जेवर बनाने के काम में आती हैं। ये आभूषण मेलों में, नगरों में और बाजारों में, भी खूब बिकते

दरियां कलकत्ता की नुमायश में प्रदर्शित की जाती हैं।

रेशम—"अमृतसर का रेशम का व्यापार बड़ा है और भिन्न प्रकार का है। कच्चा रेशम कई साधनों से आयात किया जाता है किन्तु मुख्यतया बोखारा से काबुल होकर कच्चे माल में से जा पड़ोस के गुरदासपुर जिले में पैदा होता है जो सारा का सारा इङ्गलैण्ड में बनने के लिए भेज दिया जाता है, बिल्कुल भी अमृतसर में इस्तेमाल नहीं होता। बहुत सा रेशम रङ्गा जाता है और फूलकड़ियों के प्रयोग में आता है, जिनका व्यापार अब यहां बहुत होने लगा है। रेशम और सोने की पेटियों में कुछ लगता है और बुना हुआ रेशम काफी तय्यार होता है।

"रेशम की कारचोबी ऊनी अथवा पश्मीने के कपड़ों पर होती है। अब पहले की भांति योरोपीयों में इसका रिवाज नहीं रहा है। यहां मुल्तान वगैरह की भांति मिला हुआ रेशम और सूती कपड़ा नहीं तय्यार होता।

लुधियाना

जालन्धर कमिश्नरी का सब से अधिक दक्षिण-पूर्वी जिला लुधियाना है। जिले का प्रधान भाग ३०·३३ और ३१·१ उत्तरी अक्षांशों और ७५·२५ और ७६·२७ पूर्वी देशान्तरों के बीच में स्थित है। सतलज नदी इस जिले की प्राय: उत्तरी सीमा बनाती है। केवल कुछ गांव सतलज के दक्षिण में ऐसे हैं जो जालन्धर जिले में शामिल हैं। उत्तरी-पूर्वी कोने पर सतलज नदी लुधियाना जिले को होशियारपुर जिले से अलग करती है। लुधियाना के पूर्व में अमृतसर और पश्चिम में फीरोजपुर का जिला है। इसके दक्षिण में पटियाला, नाभा और मलेर कोटला राज्य हैं। सतलज नदी के पड़ोस में इस जिले की अधिक से अधिक लम्बाई ६० मील है। इसकी चौड़ाई २४ मील है। इस जिले में तीन तहसीलें हैं। पूर्व में समराल, बीच में लुधियाना और पश्चिम में जगरांव तहसील है। जिले के उत्तरी सीमा के प्राय: बीच में सतलज नदी से ६ मील दक्षिण की ओर लुधियाना शहर इस जिले की राजधानी है। लुधियाना शहर ग्रांडट्रंक रोड पर दिल्ली से १९१ मील और फीरोजपुर से ७६ मील दूर है। यह रेलवे जङ्क्शन भी है लुधियाना जिले की औसत ऊँचाई समुद्र-तल से ८०६ फुट है। समराल की ऊँचाई ८७० फुट और जगरांव की ऊँचाई ७६४ फुट है। जिले का निचला भाग नदी के समीप है और बेत कहलाता है। ऊँचा भाग ढैया कहलाता है।

सतलज नदी जिले की पूर्वी सीमा से २० मील की दूरी पर रूपार के पास शिवालिक पर्वत से नीचे गिरती है। ६० मील तक सतलज नदी जिले की उत्तरी सीमा के पास पूर्व से पश्चिम को बहती है। जगरांव तहसील के बाहर यह कुछ उत्तर की ओर मुड़ती है इसी मोड़ के पास ब्यास नदी का संगम है। शीतकाल में नदी बहुत घट जाती है। इस समय नदी की चौड़ाई १५० गज और गहराई केवल तीन चार फुट रह जाती है। बाढ़ की ऋतु को छोड़ कर वह नदी सब कहीं पांज हो जाती है। बाढ़ के समय वर्षा ऋतु में सतलज नदी फैल कर दो तीन मील चौड़ी हो जाती है फिल्लौर पुल के पास ऊँचे किनारों से घिरी होने पर भी सतलज की चौड़ाई १ मील से ऊपर हो जाती है। सर हिन्द नहर के निकलने से नदी के जल की मात्रा कुछ कम हो गई है। बाढ़ के समय सतलज नदी प्राय: अपना मार्ग बदल देती है। ऊँचे किनारे और नदी के बीच में बेत या निचला मार्ग है। लुधियाना शहर के पूर्व में प्राय: ३० मील तक बेत या निचले भाग की चौड़ाई प्राय: पांच या छ: मील है। पश्चिम की ओर ऊँचे किनारे और नदी के बीच में बेत की चौड़ाई एक दो मील से अधिक नहीं है।

ऊँचे किनारे या ढाल के एक दम नीचे सतलज की पुरानी धारा है। इसे बुड्ढा नाला कहते हैं। यह बुड्ढा नाला अम्बाला जिले की चमकौर तहसील के पास निकलता है। बहलोलपुर के पास यह

इस जिले में प्रवेश करता है। लुधियाना शहर के पास होता हुआ यह जगरांव तहसील में पहुँचता है और फीरोजपुर जिले की सीमा के पास यह सतलज में मिल जाता है। बाढ़ के समय इसका पानी दूर तक फैल जाता है। साधारण समय में इसकी चौड़ाई कुछ ही गज रह जाती है। बाढ़ को छोड़कर शेष समय में इसका पानी बहुत साफ रहता है और पीने के काम आता है। कहीं कहीं इसके पड़ोस में दल दल हो जाता है। कुछ भागों में इसके पड़ोस में कुओं में दो फुट खोदने पर ही पानी निकल आता है अधिक गहरे कुओं में भी १० फुट से कम गहराई पर ही पानी मिल जाता है। इसी से यह नाला सिंचाई के काम नहीं आता है। पश्चिम की ओर बूढ़े नाले के किनारे ऊँचे हैं। किनारों के ठीक नीचे तक खेती होती है। सरदी की ऋतु में यह नाला कुछ स्थानों पर पार किया जा सकता है। पर इसकी तली का भरोसा नहीं किया जा सकता। वर्षा ऋतु में यह सब कहीं इतना गहरा हो जाता है कि यह पैदल पार नहीं किया जा सकता। लुधियाना के पास इसको पार करने के लिये पुल बना है। जलन्धर को आनेवाली सड़क इसी पुल के ऊपर से इस नाले को पार करती है। दूसरा पुल मच्छी वारा के पास बना है। बाढ़ के समय में बेत या निचला भाग पानी में डूब जाता है। पर यह बाढ़ मैदान में वर्षा की अधिकता से ही आती है।

ऊँचे किनारे से दक्षिण की ओर ढैया का ऊँचा मैदान फैला हुआ है। इसमें कहीं कहीं रेतीले टीले मिलते हैं। ऊँचे किनारे के पास जो वर्षा होती है उसे सोख लेती है। ऊँचे किनारे से कुछ दूर राव या बरसाती नाला है। इनसे पड़ोस के खेतों और कुओं को बड़ी हानि होती है।

कुछ भागों में जंगल है। जंगल की नई भूमि में कई तरह की फसलें होती हैं। पूर्वी भाग में पवाध है। यहां मटियार है। सिंचाई की भी सुविधा है। इसलिये यहां कई तरह की फसलें होती हैं। लुधियाना जिला प्रायः सब का सब कछारी है इसलिये यहां खनिज सम्पत्ति का अभाव है।

जलवायु—लुधियाना जिले की जलवायु पंजाब के मैदान के समान है। सिवालिक का पर्वतीय प्रदेश अधिक दूर है। इसलिये इसका यहां प्रभाव नहीं पड़ता है। फीरोजपुर का जिला बीकानेर का रेगिस्तानी प्रभाव बीच में ही रोक लेता है। जो गरम और धूल भरी आंधियां फीरोजपुर में आती हैं वे यहां नहीं आने पाती हैं। जिला ढैया प्रदेश खुश्क और स्वास्थ्य कर है। पर नहरों के खुल जाने से इसके कुछ भागों की जलवायु नम और अस्वास्थ्य कर हो गई है। बेत और बूढा नाला के एक दम पड़ोस के ऊंचे भाग बहुत नम (आर्द्र) हैं। यहां मलेरिया बहुत फैलता है। लुधियाना, मच्छीवार, कुम और भोलापुर आदि स्थानों की जलवायु अच्छी नहीं है।

लुधियाना जिले की औसत से वार्षिक वर्षा २८ इंच होती है। समराला शिवालिक के पास है यहां सबसे अधिक (प्रायः ३० इंच) वार्षिक वर्षा होती है। जगरांव की तहसील सूखे फीरोजपुर ज़िले के पास है। यहां सब से कम (२७ इंच) [illegible] होती है। एक वर्ष समराला में ५७ इंच वर्षा हुई सब से कम वर्षा यहां एक वर्ष केवल १४ इंच हुई इसी प्रकार का अन्तर जिले के दूसरे भागों में भ[illegible] हुआ।

वनस्पति

लुधियाना जिले में खेती इतनी [illegible]धि[illegible] होती है कि प्राकृतिक वनस्पति के लिये बहुत [illegible] स्थान शेष बचा है। केवल कहीं कहीं कीकर (बबू[illegible] के झुंड मिलते हैं। कुछ भागों में ढाक का जंगल [illegible] ढाक को कड़ी मिट्टी और प्रचुर वर्षा की आ[illegible] होती है। जिन ऊसर भागों में वर्षा की कमी वहां करीर होता है। सरकारी सड़कों और [illegible] के पड़ोस में शीशम के वृक्ष लगाये गये हैं। [illegible] के पड़ोस में आम आदि फल वाले वृक्षों के [illegible] हैं। नदी के पड़ोस में जहां नई भूमि निकल [illegible] है वहां झाऊ अधिक होती है। ऊँचे भागों [illegible] में सरकंडा या सरवर अधिक होता है। यह रेतीले भागों में बालू को रोकने के लिये [illegible] जाता है। कुछ भागों में झरबेरी (जंगली बेरी झाड़ी बहुत उगती है।

पशु—जंगली, बिल्ली जंगली सुअर [illegible]

समीप सरकंडों से घिरे हुये भागों में पाई जाती है खरगोश, भेड़िया, और गीदड़ बहुत से भागों में पाया जाता है। कहीं कहीं नील गाय और हिरण पाये जाते हैं। तीतर, बटेर, मोर, टिटिहरी, सारस आदि पक्षी भी बहुत हैं। काला विषैला सांप सब कहीं पाया जाता है। दूसरे सांप भी अधिक हैं। सतलज में महसिर और दूसरी मछलियां बहुत हैं।

कृपि—नदी के एक दम पड़ोस में मांड, या कच्छ की पेटी होती हैं। यह प्रति वर्ष बाढ़ से डूब जाती है। किसी स्थान पर नदी का वेग कम होने पर बाढ़ के घटते ही कांप या चिकनी मिट्टी की तह बालू के ऊपर एकत्रित हो जाती है। दो तीन वर्ष में चिकनी मिट्टी की तह छः इञ्च मोटी हो जाती है। पहले इसके ऊपर घास उग आती है। फिर झाऊ बढ़ने लगती है। अन्त में झाऊ को साफ़ करके यहां खेती होने लगती है। कांप की मोटाई कहीं एक गज़ हो जाती है। कहीं कुछ ही इञ्च रहती है। प्रथम २० या तीस मील तक मांड प्रदेश अत्यन्त उपजाऊ है। साधारण परिश्रम से यहां बड़ी बढ़िया फसल होती है। पर नदी का मार्ग प्रायः बदलता रहता है। इसी से यहां एक साल अमीर एक साल फकीर की कहावत प्रचलित है। बाढ़ के घटने पर कभी उपजाऊ मिट्टी के ऊपर बालू की तह बिछ जाती है कभी बालू के ऊपर उपजाऊ मिट्टी जम जाती है। पक्का बेत पुराना है। यहाँ नई मिट्टी का आना बहुत दिनों से बन्द हो गया है। यहाँ पुरानी तहों की मुटाई एक गज़ से दो गज़ तक है। मांड की मिट्टी कुछ कड़ी होती है। कहीं कहीं यह कुछ नम और काली होती है। पक्का बेत अधिक खुश्क है। दस पन्द्रह मील तक यह अधिक उपजाऊ है। इधर वर्षा कुछ अधिक है। पर नदी में मिलने वाले छोटे छोटे बरसाती नालों ने इसे बहुत काट दिया है। कुछ भागों में कल्लार या रेह है। यहाँ खेती नहीं हो सकती है। शेष भागों में फसलें होती हैं।

ऊंचे किनारों के पड़ोस में ऊपरी तल पर कुछ पीली बालू है। यह हवा में इधर उधर उड़ती रहती है। यह रेतीला प्रदेश चार या पांच मील चौड़ा है। मालेर कोटला के पूर्व में आधे जिले की मिट्टी कड़ी और चिकनी है। न्याई मिट्टी में सिंचाई की सुविधा नहीं होती है। डाखर- मिट्टी बड़ी कड़ी होती है। जाट किसान ऊपरी भाग की सिंची हुई भूमि को सेंजू और बिना सिंचा को मारू कहता है। इसे टिब्बा या रेत भी कहते हैं। रेतीली मिट्टी को भूड़ कहते हैं। चैत मास में गन्ना और कपास के बोने का काम होता है।

बैसाख में चना, बिर्रा, गेहूँ आदि रबी की फसलें पककर तयार हो जाती हैं। इन फसलों की कटाई और गन्ना की सिंचाई होती है। जेठ में गेहूँ आदि के गहने (माडने) का काम होता है। कपास और गन्ना की सिंचाई होती है।

आषाढ़ (हार) में कपास की बुवाई समाप्त हो जाती है। खरीफ की फसल बोने के लिये वर्षा आरम्भ होते ही जुताई होने लगती है। सावन में मक्का और खरीफ की दूसरी फसलें बोयी जाती हैं। रबी की फसल की जुताई आरम्भ हो जाती है। भादों में रबी की फसल की जुताई और आवश्यकतानुसार खरीफ की फसल की सिंचाई होती है। असोज या आश्विन में बिना सींचे हुये खेतों में चना और बिर्रा बो दिया जाता है। कार्तिक में रबी की फसल बोने का कार्य जारी रहता है। जिन खेतों में सिंचाई की सुविधा है वे अन्त में बोये जाते हैं। खरीफ की फसल की कटाई और कपास की चुनाई आरम्भ हो जाती है। मगर या मार्ग शीर्ष (अगहन) में रबी की फसल का बोना समाप्त हो जाता है। कपास की चुनाई और खरीफ की कटाई होती रहती है। पोह (पौष) में कपास की चुनाई समाप्त हो जाती है। गन्ने की कटाई और पिटाई आरम्भ हो जाती है। रबी की फसल भी सींची जाती है। माघ में गन्ना काटा और पेरा जाता है। रबी की फसल सींची जाती है। फाल्गुन में रबी की फसल सींची जाती है। गन्ना और कपास के ढोने की तयारी होती है।

जिले की जनसंख्या में आधे से कुछ अधिक प्रायः ४ लाख मनुष्य खेती के काम में लगे हैं। इनमें कुछ मनुष्य अपने खेतों को उठा देते हैं। कुछ साझे में खेती करते हैं अधिकतर मनुष्य अपने खेतों में स्वयं काम करते हैं।

महीने में अच्छी वर्षा होने से चना की फसल अच्छी होती है। चना सितम्बर में बोया जाता है और अप्रैल में काटा जाता है। बेत प्रदेश की भूमि चना के लिये अनुकूल नहीं है। ढैया के जिन भागों में सिंचाई नहीं होती है उनमें चना प्रायः गेहूँ या जौ के साथ मिला कर बोया जाता है। बेरी के साथ सरसों भी बोई जाती है।

कपास चैत से आषाढ़ तक बोई जाती है। जो खेत एक फसल के लिये खाली पड़े रहते हैं उनमें कपास बहुत अच्छी होती है। रबी की फसल काटने के बाद एक दम उसी खेत में कपास प्रायः नहीं बोते हैं। जहां कहीं आषाढ़ में ऐसे खेतों में कपास बो भी देते हैं वहाँ फसल अच्छी नहीं होती है। ढैया के कुछ भागों में यह बिना सींचे हुये खेतों में बोई जाती है। पर प्रायः कपास के खेतों में कुओं से सिंचाई होती है। अक्टूबर मास से चुनाई आरम्भ होती है और नवम्बर के अन्त तक होती रहती है। चुनाई का काम प्रायः जाट स्त्रियां करती हैं। कभी कभी कपास के साथ तिल भी बो दिया जाता है।

सिंचाई—वर्षा की दृष्टि से फीरोजपुर की तुलना में लुधियाना एक मरुद्यान (नखलिस्तान) कहा जा सकता है। फिर भी यदि यह जिला केवल वर्षा पर ही निर्भर रहे तो यहां अधिकतर फसलें न हो सकें। बेत प्रदेश में पानी एक दम पास है। ढैया में १० फुट की गहराई पर कुओं में पानी निकल आता है। जंगल के गांवों में ऊपरी धरातल से डेढ़ दो सौ फुट की गहराई पर कुओं में पानी निकलता है। १८८३ ई० के पहले जिले में सब कहीं कुओं से सिंचाई होती थी। आजकल अधिकांश खेत नहरों के जल से सींचे जाते हैं।

सरहिन्द नहर की अबोहर शाखा से लुधियाना और जगरौंव तहसीलों के अधिकतर भाग सींचे जाते हैं। लुधियाना तहसील का थोड़ा सा दक्षिणी भाग भटिंडा शाखा से सींचा जाता है। प्रधान नहर १५वें मील पर बहलोलपुर गांव के पास समराल तहसील में प्रवेश करती है और पटियाला राज्य के मानपुर गांव के पास ३०वें मील तक पश्चिम की ओर जाती है। यहां प्रधान नहर दो शाखाओं में बँट जाती है। पश्चिमी शाखा ब्रिटिश जिलों को सींचती है। पूर्वी शाखा फुलकियां हैं राज्यों को सींचती प्रधान नहर को तली २०० फुट चौड़ी है यह प्रति सेकंड ८००० घन फुट पानी बहा ले जाती है। इसकी गहराई ११॥ फुट है इसमें भली भांति नावें चल सकती हैं। मानपुर से जो शाखा पश्चिम की ओर जाती है। और ब्रिटिश जिलों को सींचती है उसकी तली की चौड़ाई १३६ फुट है। पूरी भरी होने पर यह प्रति सेकंड ४००० घन फुट पानी ले जाती है। पूर्वी शाखा पटियाला पोषक (फीडर) नाम से प्रसिद्ध है। इसकी तली की चौड़ाई ७५ फुट है यह प्रति सेकंड ३०८० घन फुट पानी ले जा सकती है। दो मील बहने के बाद पश्चिमी शाखा फिर दो शाखाओं में बट जाती है। इन्हें अबोहर और भटिंडा शाखा कहते हैं। उत्तरी शाखा अबोहर शाखा है। इसकी तली की चौड़ाई ८८ फुट है। यह ३१५५ मील तक पानी पहुँचाती है। इसमें ३९ मील लुधियाना जिले में है। शेष बड़ा भाग फ़ीरोजपुर जिले को सींचता है। लुधियाना जिले में इस शाखा में सब कहीं नावें चल सकती हैं।

दक्षिणी या भटिंडा शाखा की तली की चौड़ाई ८४ फुट है। यह प्रति सेकंड २४३० घन फुट पानी बहाती है। यह १०० मील लम्बी है। इसमें १२ मील लुधियाना जिले में है। जिले भर के प्रायः २०० गांवों में इन नहरों से सिंचाई होती है। इनमें ११७ गांव लुधियाना तहसील में और शेष जगरांव तहसील में स्थित हैं। सींचे हुये खेतों का समस्त क्षेत्रफल २६७००० एकड़ है। नहर के दोनों ओर सर्व साधारण के लिये सड़क है। नहरों पर तार (टेलीग्राफ) की भी लाइन है।

जगरांव कस्बे के पास बाढ़ के जल को रोकने के लिये डेढ़ मील लम्बा बांध बना है। बेत प्रदेश में कुओं में पास पानी निकल आता है। इसलिये इस पानी को ऊपर लाने में अधिक कठिनाई नहीं पड़ती है। यहां अधिक कुएं कच्चे हैं। इनमें ढेंकली से पानी खींचा जाता है। कुछ कुएं पक्के हैं। ढैया प्रदेश में सब कुएं पक्के हैं। यहां चरसा से बैल पानी खींचते हैं।

कला कौशल—इस जिले में गुड़ और खांड या बूरा बहुत बनती है। कुछ मोची बढ़िया देशी जूता

बनाते हैं। गांव वालों के लिये चरसा, पैना बनाते हैं। कुम्हार मिट्टी के बर्तन और खिलौने बनाते हैं। इस जिले में प्रायः ४०,००० भेड़ें हैं। इनकी ऊन वर्ष में दो बार कतरी जाती है। यह काती जाती है। फिर इससे कम्बल और ऊनी कपड़े बनाये जाते हैं। १८३३ के अकाल में लुधियाना में कुछ काश्मीरी आ बस गये। यह काश्मीरी लोग पश्मीना के बढ़िया कपड़े बनाते हैं। बढ़िया पशम तिब्बत के (भोट) बकरे से मिलती है। रामपुरी ऊन पड़ोस की पहाड़ियों से आती है। रामपुर ऊन के व्यापार का बड़ा केन्द्र है। कुछ ऊन अमृतसर से आती है। तीसरे दर्जे की ऊन कर्मान (ईरान) से करांची बन्दरगाह के मार्ग से आती है। जिस ऊन से चादरें नहीं बनती हैं उससे मोजे और दस्ताने बनाये जाते हैं ऊन कातने का काम स्त्रियां करती हैं। यहां के बने हुये अलवान और चादरें संयुक्त प्रान्त को आते हैं। शाल भी प्रसिद्ध हैं।

कपास को कात कर रुई को कातने बुनने का और कपास बाहर जाती है। कपड़ा बम्बई और कानपुर से आता है। इङ्गलैंड से फौजी सामान और तरह तरह का दूसरा सामान आता है। शक्कर जालन्धर द्वाब से, लोहा करांची से नमक झेलम जिले से तांबे और पीतल के बर्तन दिल्ली से चावल मुल्तान, अमृतसर और साहसपुर से आता है।

आने जाने के साधन—सर हिन्द नहर के खुल जाने से सतलज नदी में इतना कम पानी रह गया है कि वर्षा ऋतु को छोड़ कर इसमें और समयों में नावें नहीं चल सकतीं, वर्षा ऋतु में इसमें इतना अधिक पानी हो जाता है कि इसे पार करने के लिये जिले में नावों के कई घाट हैं। घाटों का ठेका बेचने से डिस्ट्रिक्ट बोर्ड को कई हजार रुपये की आय होती है। शेरपुर (लुधियाना से २४ मील) जदवाल, खानपुर, चैमला, जवाल मजरा, महेवार लिसारा, करियाना, खारा, भुंदरी, सिधूवान तिहारा में सतलज को पार करने के लिये नावें रहती हैं। फिल्लौर घाट का प्रबन्ध नार्थवेस्टर्न रे

और ३५ मील तक जिले में जाती है। लधोवाल, लुधियाना, सहनेवाल, दोराहा, चावा और खन्ना प्रधान स्टेशन हैं। इनमें दोराहा पटियाला राज्य में स्थित है। लुधियाना से एक रेलवे दक्षिण की ओर जाखल को जाती है। एक लाइन लुधियाना से फीरोजपुर फाजिल्का और मैकलिओड गंज को गई है।

इस जिले की सड़कें बहुत अच्छी हैं। जिले के सभी बड़े बड़े नगर अच्छी और पक्की सड़कों से जुड़े हुये हैं। इन पर शिकरम, इक्का, मझोली और मोटर लारियां चला करती हैं। इस जिले में ग्रांड-ट्रङ्क रोड ३५ मील लम्बी है। लुधियाना से फीरोजपुर को जाने वाली सड़क २५ मील लम्बी है। लुधियाना से कोटला को जाने वाली सड़क १७ मील लम्बी है। कच्ची सड़कों की संख्या और लम्बाई कहीं अधिक है।

प्रसिद्ध स्थान

लुधियाना शहर बूढ़ा नाला या सतलज की पुरानी धारा के ठीक ऊपर ऊंचे किनारे पर बसा है। सतलज की वर्तमान धारा से यह ६ मील दूर है। यह लाहौर से ११६ मील दूर है। यहां से लाहौर, दिल्ली और फीरोजपुर को रेलवे लाइनें और पक्की सड़कें गई हैं। फीरोजपुर यहां से केवल ७२ मील दूर है। लुधियाना की जन संख्या प्रायः ५०,००० है लुधियाना नगर नया है पर इसकी स्थिति बहुत पुरानी है। यहां पर पहले मिढ़ोता नाम का गांव था। १४८१ ई० में निहङ्ग खां लोदी ने लुधियाना नगर बसाया। लोदियाना से बिगड़ कर लुधियाना नाम पड़ गया। नगर नदी के दक्षिणी किनारे पर उस ऊंचे स्थान पर बसाया गया जहां से यह नदी पार करते समय उस राज मार्ग का नियन्त्रण करता था जो मध्य एशिया से दिल्ली को आता था। एक प्रकार से लुधियाना नगर का इतिहास लुधियाना जिले का इतिहास है। लोदी बादशाहों के समय में यह इस ओर के प्रान्त की राजधानी था। यहां उन्होंने एक किला बनवाया था। मुगल बादशाहों ने सूबे की राजधानी सर हिन्द में बनाई। उनके समय में लुधियाना केवल एक महाल या जिला रह गया। नादिर शाह ने इस नाम के निवासियों का क़त्ल आम करा दिया। मुगल साम्राज्य के क्षीण होने पर १७६० में यहां राय लोगों का अधिकार हो गया। राय कल्हा ने यहां का किला सुधरवाया। १८०६ ई० में महाराजा रंजीतसिंह ने रानी भाग भरी से यह जिला और इधर का सारा प्रदेश जीत लिया। १८३५ ई० में राजा संगम सिंह के मरने पर लुधियाना नगर और पड़ोस की भूमि पर अंग्रेजों का अधिकार हो गया। उस समय लुधियाना नगर किले और टीले के बीच में निचले भाग में बसा था। वर्तमान चौरा बाजार से सब्जी मंडी इस भाग में थी। आगे हजूरी सड़क थी। वर्तमान म्यूनिसिपल और पीर रोशन का मक़बरा पुराने नगर की सीमा के बाहर पश्चिम की ओर स्थित है। पुरानी शाही सड़क नगर के पूर्वी भाग में प्रवेश करती थी जहां इस समय अमरीकन मिशन की बस्ती है। रेजीडेन्सी भी इसी ओर थी। छावनी कुछ पश्चिम की ओर थी। फिर नगर बढ़ा और दक्षिण की ओर फैल गया। यह अनाज, शकर और कपड़े के व्यापार का केन्द्र बन गया। व्यापार का सामान नावों पर लादकर किल्लौर की ओर से आता था। काश्मीरी जुलाहों की बस्ती यहाँ पुराने समय से थी। १८३३ में काश्मीर में जो अकाल पड़ा उसमें डेढ़ दो हजार काश्मीरी जुलाहे लुधियाना में आकर बस गये। १८४२ ई० में जब अंग्रेजी सेना काबुल से लौटी तब कुछ अफगानी (जिन्होंने अंग्रेजों का साथ दिया था) आकर लुधियाना में बस गये। उन दिनों लुधियाना अंग्रेजी राज्य की उत्तरी-पश्चिमी सीमा पर स्थित था। अमीर शुजाउल मुल्क का परिवार पहिले लुधियाना के पश्चिमी भाग में बस गया। फिर वह दक्षिण की ओर चला आया। इसी ओर इनका भवन और बाग इस समय भी विद्यमान है। प्रथम सिक्ख युद्ध के बाद लुधियाना जिला बना। ग्रांडट्रङ्क रोड यहां तक पक्की बना दी गई। १८५४ ई० में छावनी तोड़ दी गई। थोड़े से सिपाही किले में रख दिये गये। पर इससे नगर की उन्नति में कोई बाधा न पड़ी। नगर का व्यापार बढ़ता गया। जब किले के सिपाहियों ने विद्रोह किया और शान्ति हो जाने पर विद्रोही चले गये तब अंग्रेजी सेनापति

भी यहीं बहुत बिकता है। कुछ लोहे का सामान और हाथी दांत की चूड़ियां और बक्स भी बिकते हैं। यहां तहसील, सराय, थाना, अस्पताल, स्कूल और डाकखाना है। यहां दूसरे नम्बर की म्युनिसिपैलिटी है।

मच्छीवारा कस्बा समराल तहसील में बूढे नाले के किनारे लुधियाना से २० मील पूर्व की ओर स्थित है। यहां से समराल और लुधियाना को पक्की सड़क गई है। मच्छी वारा का अर्थ है मछली पकड़ने वालों का स्थान। यह स्थान बहुत पुराना है। महाभारत में भी इसका उल्लेख आता है। अब से प्रायः ८५० वर्ष पहले गोरी वंश के समय में यहां राजपूत बस गये। यहां राब और खांड (बूरा) का व्यापार बहुत होता है। यहां की सड़कें साफ पक्की और सीधी हैं। यहां थाना, अस्पताल, डाकखाना और स्कूल है। इसके पास ही कुछ पुरानी मस्जिदें हैं जो लोदी बादशाहों के समय १५१७ ई० में बनीं। पश्चिम की ओर देवी भद्रकाली का मन्दिर है। गुरु गोविन्द सिंह के आगमन की स्मृति में सिक्खों का एक गुरु द्वारा बना है। पड़ोस के खंडहरों में अति प्राचीन समय की बड़ी बड़ी पुरानी ईंटें मिलती हैं।

रायकोट कस्बा जगरांव तहसील में लुधियाना से २४ मील दक्षिण-पश्चिम की ओर एक पक्की सड़क पर स्थित है। रायकोट की जन संख्या प्रायः १२००० है। यहां अनाज, नमक कपड़ा और बर्तनों का कुछ व्यापार होता है। यहां थाना, डाकखाना स्कूल और अस्पताल है।

खन्ना कस्बा नार्थवेस्टर्न रेलवे पर लुधियाना से २६ मील दक्षिण-पश्चिम की ओर स्थित है। सिक्खों के शासनकाल में यह एक जागीर की राजधानी था। यहां एक क़िला भी था। यह गिरा दिया गया। १८७० ई० में रेलवे के खुल जाने से यहां का व्यापार बढ़ गया। पर पड़ोस के गांवों के लिये अच्छी सड़कें नहीं हैं। अधिकतर सामान ऊँटों और गधों पर लदकर आता है। यहां थाना, स्कूल, सराय और अस्पताल है।

बहलोलपुर गांव बूढ़े नाले के ऊँचे किनारे पर मच्छी वारा से ७ मील पूर्व की ओर और लुधियाना से ७ मील दूर है। सम्राट अकबर के समय में इसे बहलोल खां नामी अफ़गान ने बसाया था। इसके पड़ोस में एक झील है। इससे यहाँ की जलवायु स्वास्थ्यकर नहीं है। खांड का कुछ व्यापार होता है। पड़ोस में पुरानी मुसलमानी इमारतों के खंडहर हैं।

हातुर या अर्हतपुर गांव लुधियाना से ३४ मील दक्षिण-पश्चिम की ओर है। कहते हैं कि कनककेतु राजा के समय में यहां महावीर (जैन तीर्थंकर) ने चार मास बिताये थे। यहाँ पुराने समय के सिक्के मिलते हैं।

समराल गांव इसी नाम की तहसील का केन्द्र स्थान है।

साहनेवाल स्टेशन लुधियाना से ९ मील दक्षिण-पूर्व की ओर है। रेलवे के आजाने से यहां का बाजार बढ़ रहा है।

साहना थाना लुधियाना से ५४ मील दक्षिण-पश्चिम की ओर है। यहां मलौधवंश की एक गद्दी है। बाजार में कुछ दुकानें हैं। रायपुर लुधियाना से ११ मील दक्षिण में जाटों का एक गांव है। बाजार में कुछ दुकानें हैं। विहारा जिले के उत्तरी पश्चिमी सिरे पर लुधियाना से २ मील पश्चिम की ओर सतलज के ऊँचे किनारे पर बसा है। यह किसानों का एक साधारण गांव है। यहां से १ मील पश्चिम की ओर शाह दीवान का मकबरा है। कहते हैं यह अकबर के समय में बना था।

सराय लश्करी खां खन्ना से ८ मील पश्चिम की ओर सराय लश्करी औरंगजेब के समय में बनी थी। इसकी देख भाल के लिए एक सरकारी चौकीदार रहता है।

संक्षिप्त इतिहास

लुधियाना जिले की प्राकृतिक भू रचना में कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ। सतलज नदी अपना मार्ग वर्तमान घाटी में कुछ इधर उधर अवश्य बदलती रही। पर कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ। अठारहवीं शताब्दी में सतलज ने अन्तिम बार अपना मार्ग बदला। जहाँ इस समय बूढ़ा नाला है वहीं सतलज की प्रधान धारा बहती थी। वहीं सतलज ने इस पुराने मार्ग को छोड़ दिया और वर्तमान मार्ग

इकट्ठा करके बनवाया जो सुनेत के पास पड़ी हुई थीं। बाबर के आने पर लुधियाना के लोदियों की दशा बिगड़ गई। वे साधारण मुगल प्रजा रह गये। इनके नेता निहंग लोदी का मक़बरा भी लुप्त हो गया। खोखरों ने मुबारक शाह के समय में लुधियाना से रूपार का सारा प्रदेश लूट लिया था। बहलोल लोदी और सिकन्दर लोदी के समय में इस जिले की दशा सुधर गई थी।

मुगलों ने सरहिन्द को अपने सूबे की राजधानी बनाया। लुधियाना इस सूबे का एक महाल था। बाबर के मरने पर हुमायूं को हिन्दुस्तान छोड़ना पड़ा। यहां सूरवंश का राज्य हो गया। पर हुमायूं ईरान से एक सेना लेकर फिर लौटा, १५५५ ई० में लुधियाना से २५ मील पूर्व की ओर मच्छीवारा के पास हुमायूँ और सिकन्दर सूर के बीच में घमासान लड़ाई हुई। इस विजय से हुमायूं हिन्दुस्तान का बादशाह बन गया। अकबर के समय (१५५६--१६०५) में इस जिले में पूरी शान्ति स्थापित हो गई। जाट और दूसरे लोग फिर लौट आये और यहां बस गये। आईन अकबरी में तिहार, हतूर, भुंदरी, लुधियाना मच्छीवारा, पायल और दुराहा महालों (परगनों) का उल्लेख है। पायल और दुराहा आजकल पटियाला राज्य में शामिल हैं।

अकबर के मरने पर डेढ़ सौ वर्ष तक इस प्रदेश का इतिहास सिक्ख उत्थान से सम्बन्ध रखता है। इस बीच में सिक्खों और मुगल सूबेदारों के बीच में बराबर खटपट होती रही। सिक्ख धर्म के संस्थापक लोदी शासन के समय में पैदा हुये थे। छठे गुरु हरगोविन्द और जहांगीर की शाही सेना से जहांगीर के शासन काल के अन्तिम वर्षों में युद्ध आरम्भ हुआ। १६५७ ई० में औरंगजेब गद्दी पर बैठा। १६७५ में उसकी आज्ञा से सिक्खों के नवें गुरु तेग बहादुर दिल्ली में मार डाले गये। तेग बहादुर के बाद गुरु गोविन्द सिंह सिक्खों के अन्तिम गुरु हुये। उनके समय में सर हिन्द के मुसलमान सूबेदारों और सिक्खों के बीच में लम्बा युद्ध छिड़ा। इस जिले और दक्षिण के भाग में गुरु गोविन्द सिंह और मुसलमान सेनाओं से कई बार मुठभेड़ हुई। वे लगातार इस ओर विचरते रहे। १७०० ई० में गुरु गोविन्द सिंह की धर्म पत्नी और उनके बच्चे सरहिन्द में मार डाले गये। तब से सिक्ख लोग इस स्थान से घृणा करने लगे। इसी समय से सिक्ख लोग वीर सैनिक बन गये। वे औरंगजेब के कट्टर शत्रु हो गये। १७०७ में औरंगजेब और १७०८ ई० में गुरु गोविन्द सिंह की मृत्यु हो गई। गुरु गोविन्द सिंह के उत्तराधिकारी बन्दा ने शाही सेना को हराया और १७०५ ई० में सरहिन्द को लूटा। पर अन्त में शाही सेना ने बन्दा को पकड़ लिया। १७०६ ई० में उसको फांसी दी गई। एक पीढ़ी तक सिक्ख दबे रहे। उन पर तरह तरह के अत्याचार हुये। जब मुगल साम्राज्य की शक्ति क्षीण हो गई, तब सिक्खों ने फिर सिर उठाया। फुलकियां राज्यों और दूसरे सरदारों ने मुगल सम्राज्य के पतन होते ही अपनी शक्ति बढ़ाई। पटियाला के राजा रामसिंह और रायकोट के राय कल्हा द्वितीय स्वाधीन हो गये। १७६० ई० में लुधियाना नगर और किला रायवंश के हाथ में आ गया। नादिरशाह की सेना ने लुधियाना के पास सतलज को पार किया। फिर इस जिले में होकर उसकी सेना राजमार्ग से दिल्ली की ओर बढ़ी। कहते हैं १७३९ में नादिर शाह ने लुधियाना निवासियों का कतल आम करवा दिया था। १७४७ में अहमदशाह अब्दाली ने लुधियाना के पास सतलज को पार किया। यहां पर मुगल सेना ने उसका विरोध किया था। पर अहमद शाह ने दुर्रानी चाल से काम लिया। उसने रात भर सतलज के दाहिने किनारे पर अपनी सेना को मार्च करवाया और मच्छीवारा के पास सतलज को पार किया। इस चाल से उसकी सेना ने मुगल सेना को दो भागों में बांट दिया। समराल तहसील में खन्ना से कुछ मील उत्तर-पूर्व की ओर मनुपुर गांव के पास रेतीले मैदान में दोनों सेनाओं की मुठभेड़ हुई। शाही सेना एक अच्छे स्थान पर आ डटी। यहां दुर्रानी की सेना उसे न हटा सकी। कुछ दिनों तक निष्फल लड़ाइयां होती रहीं अन्त में एक लड़ाई में शाही सेना का सेनापति (मुगल बादशाह को वजीर) कमरुद्दीन मारा गया। पर उसके बेटे ने हाथी पर सवार होकर अपने पिता के शरीर को बैठने की

हालत में सिपाहियों को दिखलाया। सिपाहियों में फिर जोश आ गया। अहमद शाह को पराजित होना पड़ा। और पीछे लौटना पड़ा। दोनों सेनाओं को भारी क्षति उठानी पड़ी। मैदान लाशों से पट गया। बहुत दिनों तक इतनी दुर्गन्ध छा गई कि खेतों का जोतना बोना कठिन होगया। अहमदशाह ने आगे चल कर जो आक्रमण किये उनका विरोध फिर शाही सेना ने सरहिन्द के पास नहीं किया। पर सिक्ख सरदार अहमदशाह की सेना को लगातार तंग करते रहे। १७६० ई० में उसने राय को लुधियाना नगर और किले पर अधिकार कर लेने की आज्ञा दी। १७६१ ई० में उसने जैन खां को सरहिन्द का सूबेदार नियुक्त किया। दूसरे वर्ष सिक्ख सरदारों ने मिल कर जैन खां का विरोध किया। लाहौर में अहमदशाह को यह खबर मिली। उसने लगातार चल कर दो दिन में सतलज को पार किया। सिक्ख सेना जैन खां पर प्रहार कर रही थी ठीक उसी समय अहमदशाह सिक्ख सेना पर टूट पड़ा अचानक प्रत्याक्रमण होने से सिक्ख सेना काट डाली गई। पर इस पराजय से सिक्खों का उत्साह भंग नहीं हुआ। दूसरे वर्ष १७६३ ई० में उन्होंने और बड़ी सेना एकत्रित करके जैन खां पर चढ़ाई की। जैन खां हारा और मारा गया। सिक्खों ने जैन खां की राजधानी सरहिन्द पर अधिकार करके इसे बिस्मार कर दिया।

सरहिन्द के पतन से मुगल शाही का अन्तिम प्रभुत्व यहां से मिट गया। दूसरे वर्ष जब अहमद-शाह फिर इधर आया तो उसे भी सिक्खों की बढ़ती हुई शक्ति मान लेनी पड़ी। उसने पटियाला के राजा अलासिंह को इस भाग का सूबेदार स्वीकार कर लिया। १७६७ ई० में अहमदशाह अन्तिम बार लुधियाना पहुँचा। वह यहां से आगे न बढ़ सका। उसने अलासिंह के पौत्र अमर सिंह को सरहिन्द का सूबेदार स्वीकार किया और उसे महाराजा की उपाधि दी। इसके बाद इस प्रदेश से मुगल सम्राट का प्रभाव सदा के लिये चला गया। राय (रईस) ने अपने राज्य की सीमा लुधियाना तक बढ़ा ली। दक्षिण और पूर्व की ओर राय का राज्य मच्छी वारा के पास तक पहुँच गया। उत्तर की ओर सतलज नदी सीमा बनाती थी। लुधियाना तहसील के दक्षिण में मलौध-सरदारों का प्रभुत्व था। सरहिन्द के पतन के बारह वर्ष बाद १७८५ ई० में सतलज के मार्ग में बड़ा परिवर्तन हुआ। इस ओर पांच छः मील चौड़ा और ५० मील लम्बा बेत या कछार निकल आया। यहां काकर सरदारों का अधिकार बना रहा। यहां पहले गाँव न थे। इस बेत या कछार प्रदेश के गांव इसी डेढ़ सौ वर्ष के बीच में बसे हैं। राय लोगों का शासन बड़ा सुन्दर था। वे उपज का केवल एक चौथाई भाग लगान के रूप में लेते थे। किसानों की दशा बड़ी अच्छी थी। बहुत दिनों के बाद अब उन्हें शान्ति मिली थी। १७९४ ई० में ऊना के वेदी साहब सिंह ने मलेर कोटला के पठानों से धर्म युद्ध छेड़ दिया। एक सिक्ख सेना को लेकर उसने सतलज नदी को पार किया। इस बार पटियाला नरेश ने उसे रोक दिया। पर १७९८ ई० में उसने फिर सतलज को पार किया। इस बार रायकोट के राय पर चढ़ाई की गई। लुधियाना से १० मील दक्षिण-पश्चिम की ओर जोध के पास लड़ाई हुई। राय की सेना ६

बुलवा भेजा गया। हरीकी पांज (सो ग्रांव) के पास उसने सतलज को पार किया। इस बार उसने फरीदकोट और मलेर कोटला पर चढ़ाई की। इसी बीच में ईस्ट इण्डिया कम्पिनी और महाराजा रंजीत सिंह के बीच में सन्धि हो गई। इसके अनुसार सतलज और यमुना के बीच के राज्य अंग्रेजी छत्रच्छाया में आ गये। इस ओर महाराजा रंजीत सिंह ने १८०६ और १८०७ ई० में जो भाग जीत लिये थे वे उसके अधिकार में बने रहे। अंग्रेजी सेना लुधियाना में आ गई। प्रथम अंग्रेजी राजनैतिक अफसर आक्टर्लोनी था। आक्टर्लोनी ने लुधियाना में किले बन्दी की। महाराजा रंजीत सिंह ने इसके सामने और इसके जवाब में फिल्लौर में किले बन्दी की। जनरल आक्टर्लोनी यहां १८१५ ई० तक रहा। १८३५ ई० में झींद के राजा संगत सिंह का स्वर्गवास हो गया। उसके कोई लड़का न था। इससे अंग्रेजों ने लुधियाना के पड़ोस के ८० गांव ले लिये। केवल वह जागीर उत्तराधिकारी के लिये छोड़ दी जो राजा रंजीत सिंह ने प्रदान की थी। अंग्रेजी गांवों का लगान उस समय १ लाख रु० था।

१८३९ ई० में महाराजा रंजीतसिंह का स्वर्गवास हो गया। १८३८ में एक बड़ी अंग्रेजी सेना अफगानिस्तान की विजय के लिये फीरोजपुर में एकत्रित हुई थी। लुधियाना पहले ही से अंग्रेजी सेना का अड्डा था। रानी लच्छमन कौर के मरने पर १८३५ ई० में लुधियाना और फीरोजपुर के बीच का सारा प्रदेश अंग्रेजी राज्य में मिला लिया गया था। १८३८ ई० में गवर्नर जनरल का एजेण्ट जो अम्बाला में रहता था बस्तियां में रेजीडेन्सी बनाने लगा। यह मार्गों का केन्द्र था। यहां से पटियाला, नाभा और झींद राज्यों का भी नियन्त्रण हो सकता था। १८४२ ई० में जब अंग्रेजी सेना अफगानिस्तान से लौटी तब लुधियाना और फीरोजपुर के पास के भाग अंग्रेजी राज्य में शामिल कर लिये गये थे। पर इनके पड़ोस के भागों पर लाहौर दरबार का अधिकार था। १८४५ ई० में खाल्सा सेना ने सतलज को पार किया और प्रथम सिक्ख युद्ध आरम्भ हो गया। लुधियाना में साधारण सेना थी। अंग्रेजी सेना का अड्डा फीरोजपुर में था। अधिकतर सेना का आना जाना बस्तियां में होकर होता था १८४६ ई० में जनवरीमास में सिक्ख सेनापति रणजोधसिंह मजीथिया १०,००० पैदल, ६० तोपें और कुछ घुड़सवार लेकर फिल्लौर के पास आ गया और सतलज को पार करके इस पार पहुँच गया। निहालसिंह अहलू वालिया की सिक्ख सेना रणजोधसिंह से मिल गई। बंडोवल का लडवा सरदार भी सिक्खों से मिल गया। लुधियाना की सहायता के लिये हेरीस्मिथ फीरोजापुर से एक सेना ले आया। पर रास्ते में सिक्खों ने उसका सब सामान छीन लिया और उसके २०० सिपाही मार डाले। २२ जनवरी को रणजोधसिंह सतलज के किनारे भुंदरी के पास चला गया। २७ जनवरी को हेरीस्मिथ ने उस पर छापा मारा। सिक्खों की सेना सतलज के निचले भाग में थी। उनकी सेना का दाहिना पक्ष भुंदरी गांव के पास और बायां पक्ष ऊँचे किनारे के अलीवाल गांव के पास था। भुंदरी के पूर्व में सतलज की घाटी को ऊँचे भाग से अलग करने वाला टीला था। यह अर्द्ध वृत्ताकार में मुड़ जाता था। पांच छः मील भीतर की ओर दूरी पर इस पर गांव बसे थे। इस टीले और नदी के बीच में चौड़ा मैदान था। २८ जनवरी को इसी मैदान में होकर ब्रिटिश सेना अलीवाल को जीतने के लिये आगे बढ़ी। सिक्खों के दुर्भाग्य से अलीवाल की रक्षा के सैनिक शिक्षित न थे। भुंदरी में खालसा के चुने हुए वीर सैनिक थे। फल यह हुआ कि अलीवाल अंग्रेजों के हाथ आ गया। भुंदरी के सिक्ख सिपाही वीरता से लड़े। सिक्ख पैदल सिपाहियों के ऊपर से तीन बार घुड़सवार दौड़ा दिये गये। फिर भी वे कुछ ही समय में लड़ने के लिए तय्यार हो गये। अन्त में इस छोटी सिक्ख टुकड़ी के सामने पूरी अंग्रेजी सेना का जोर डाला गया। इस पर उन्हें बाध्य होकर पीछे हटना पड़ा। जिन सिक्ख सिपाहियों ने गहरी सतलज को पार किया उनमें बहुत से डूब कर मर गये। कुछ ऊँचे किनारे पर चले गये। अलीवाल की विजय से सतलज का मार्ग अंग्रेजों के लिये साफ हो गया। हेरीस्मिथ की सेना सतलज के निचले भाग वाली सेना

से मिल गई। ११ फर्वरी को सोब्राऊं की लड़ाई में अंग्रेजों की फिर विजय हुई। इससे प्रथम सिक्ख युद्धसमाप्त हो गया। १८०९ ई० की सन्धि का अन्त कर दिया। सतलज के इस पार का सारा प्रदेश अंग्रेजी राज्य में मिला लिया गया। लडना के सरदार का सारा राज्य छीन लिया गया। अहलू वाला के जो गांव सतलज के इस पार थे छीन लिये गये। जिन जागीरदारों ने अंग्रेजों का विरोध किया था उनके गांव छीन लिये गये। इन सब के मिलाने से १८४७ ई० में लुधियाना जिला बनाया गया। पहले कुछ समय तक ज़िले की राजधानी बदनी रही। अन्त में लुधियाना शहर ज़िले की राजधानी बनाया गया। युद्ध से लौटने के बाद एक ब्रिटिश रेजीमेण्ट के २१० मनुष्य आंधी से बारक के गिर पड़ने से दब कर मर गये। १८४९ ई० में पूरा पंजाब अंग्रेजी राज्य में मिला लिया गया। इस से लुधियाना का सैनिक महत्व कम हो गया। अब वह ब्रिटिश सीमा का पहरेदार न रहा। ब्रिटिश राज्य यहीं से बहुत आगे बढ़ गया। १८५४ ई० में यहां की छावनी तोड़ दी गई। क़िले में भी केवल कुछ सिपाही रक्खे गये। ग़दर के समय लुधियाना शहर लाहौर और दिल्ली के बीच आने जाने वाले राजमार्ग की कुंजी था। यह सतलज के ऊपर बने हुए पुलों की रक्षा करता था। शहर में आबादी की बड़ी खिचड़ी थी। यहां कुछ काबुली रहते थे जिन्हें अंग्रेजों की ओर से पेन्शन मिलती थी कुछ काश्मीरी शाल बनाने वाले थे। कुछ गूजर बौरिया और दूसरे लुटेरे थे। क़िलों में गोरे लोग न थे। जेल और खजाने की रक्षा के लिए कुछ ही सिपाही थे। अतः यहां के कलक्टर ने देशी राज्य से सेना मंगाई। नाभा और मलार कोटली ने जो सिपाही भेजे उन्हें लुधियाना शहर की रक्षा के लिये नियुक्त कर दिया गया। कुछ सिपाही खिलों की सड़कों, पांचों घाटों और पुलों की रक्षा के लिये भेज दिये थे। १५, मई को यहां का खजाना फिल्लौर के क़िले में पहुँचा दिया गया। यहां गोरे सिपाहियों के ज़मीदारों के घुड़सवार तहसीलों में पहुँचा दिये गये। २० जून को गोरे सिपाही पुलिस के सिपाहियों को साथ में लेकर लुधियाना शहर के प्रत्येक घर में घुसे और उन्होंने हथियार जब्त करके लोगों को निहत्था कर दिया। शहर के हर चौराहे पर पहरा था। कुछ घरों में गाड़ी भर हथियार मिले थे। जालन्धर के विद्रोही जब यहां आये तब यहां के लोग उनसे मिल गये। इन्होंने विद्रोहियों को भोजन और पानी दिया और योरूपीय अफ़सरों का पता बता दिया। सरकारी दफ्तर लूट लिये गये। मिशन का गिरिजा और दूसरे घर जला दिये गये। क़िले के भीतर पहुँचने परउन्हें एक बड़ा धोखा हुआ। उनके पास बन्दूकें और बारूद तो बहुत थीं पर कार्तूस नहीं थे। विद्रोही लुधियाना को खाली करके दिल्ली चले गये। अतः लुधियाना पर अंग्रेजी अफसरों का फिर अधिकार हो गया। उन्होंने २२ विद्रोहियों को फांसी दी और ५५२९४ रुपया जुर्माना वसूल किया। क़िले के पड़ोस में ३०० गज़ की दूरी तक शहर के जितने घर थे वे सब गिरा दिये गये। गूजर लोग शहर के बाहर निचले भाग में बसने के लिए निकाल दिये गये। सारे ज़िले के गूजरों के हथियार छीन लिये गये। उनकी नावें और व्यापार करने की मश्कें जब्त कर ली गईं। लुधियाना शहर में पंजाब के बाहर से आ[illegible] हुये सब हिन्दुस्तानी भगा दिये गये। इस विद्रोह [illegible] केवल मुसलमान गूजरों ने भाग लिया था। [illegible] जाट और सिक्ख स्वामिभक्ति बने रहे। इससे लु[illegible]याना शहर बच गया और ग्रांडट्रंकरोड पर [illegible] का अधिकार बना रहा।

वह १८८५ ई० में मर गया। १९०२ ई० में लुधियाना के किले को सेना ने खाली कर दिया और यह सिविल अफसरों को सौंप दिया गया। लुधियाना से ७ मील पूर्व की ओर किले के खंडहर हैं।

निवासी

सब का सब मैदान होने से और पहाड़ियों का अभाव होने से लुधियाना जिले में जन संख्या अधिक घनी बसी है। औसत से प्रति वर्ग मील में यहां ५०० आदमी रहते हैं। पूरे जिले में प्राय: ७ लाख मनुष्य बसे हुये हैं। लुधियाना तहसील में ३, ४०,०००, जगराव में प्राय: २ लाख और समराला तहसील में डेढ़ लाख से कुछ ऊपर मनुष्य बसे हैं। यहां से कुछ मनुष्य चनाव कलोनी और फिरोजपुर को चले जाते हैं। पटियाला और मलार कोटला से कुछ मनुष्य यहां चले आते हैं। आने जाने का औसत प्राय: बराबर होता जाता है। घने बसे हुये अम्बाला, जालन्धर और होशियार जिलों से कुछ मनुष्य यहां आ जाया करते हैं। लुधियाना के कुछ निवासी लाहौर, अमृतसर और फीरोजपुर के उन भागों में चले जाते हैं जहां नहरों से सिंचाई बढ़ गई है।

भाषा—इस जिले के प्रति १०,००० मनुष्यों में से ९८९० मनुष्य पंजाबी बोलते हैं। शेष में ११ मनुष्य राजस्थानी, ४४ पश्चिमी हिन्दी, १८ काश्मीरी, २ पश्तो और ९ फारसी बोलते हैं। यहां की पंजाबी बहुत शुद्ध है।

धर्म—इस जिले में प्राय: ९०० गांव हैं। इन में ५३३ हिन्दू और सिक्खों के गांव हैं। ७६ गांवों में मुसलमान जाट, ९८ मुसलमान राजपूत, ८० गांवों में गूजर और ४२ गांवों में अरैन बसे हैं। मुसलमान जाटों में २७ गांवों में कुर्सा, १० में तूर और ९ में मोलीवाल बसे हैं। ब्राह्मण पूजा पाठ करते हैं। खत्री, बनिया सुनार और सूद व्यापार में लगे हैं। जाट, राजपूत, गूजर अरैन और अवान खेती करते हैं। पूर्वी भाग के हिन्दू जाटों के गांवों में प्राय: सखी सर्वर सुल्तान का पीरखाना होता है। इसकी देख भाल एक भराई मुसलमान करता है। हर वृहस्पतिवार को यह भराई पीरखाने में जाते हैं और ढोल बजाते हैं। गांव के लोग कुछ अनाज या पैसा चढ़ाते हैं। इसे भराई ले जाया करते हैं। हर गांव के साथ प्राय: आधा बीघा भूमि धर्म कार्य में लगी रहती है। इसकी उपज भी भराई ले जाते हैं। उदासी सिक्खों के सम्प्रदाय की नींव गुरू नानक के बड़े लड़के श्रीचन्द्र ने डाली थी। यह प्राय: जाट चेले होते हैं। इस जिले में इनकी संख्या प्राय: २००० है। यह हिन्दू गांवों में धर्म शालाओं की देख भाल करते हैं। वे गुरू नानक और गुरू गोविन्द सिंह दोनों के ग्रन्थ साहब को पढ़ते हैं। और भूखों को भोजन कराते हैं। कुछ गांवों में बड़े बड़े लंगर होते हैं। कुछ महन्त ब्रह्मचारी रहते हैं। कुछ विवाह कर लेते हैं। कुछ निहंग होते हैं।

बैरागी लोग ठाकुरद्वारों और धर्मशालाओं की देख भाल करते हैं। कुछ मुसलमान फकीर, मदारी और जलाली होते हैं।

जिले में एक तिहाई से कुछ अधिक लोग जाट हैं। जिले की प्राय: दो तिहाई भूमि इन जाटों के अधिकार में है। इनमें ७३००० हिन्दू, १,३२,००० सिक्ख और २१००० मुसलमान हैं। योग २,२५००० है। सिक्ख जाटों की संख्या बढ़ती जा रही है। औरंगजेब के समय में कुछ जाट मुसलमान हो गये थे। सिक्ख या मुसलमान हो जाने पर भी जाट अपना गोत्र (गोत) नहीं बदलते हैं। हिन्दू जाट बड़े मेहनती किसान होते हैं। अधिकांश जाट गारेवाल हैं। कुछ गिल, सीधू, धारीवाल, भांडेर, सेखोल और ढिल्लन हैं।

जिले के सब से पुराने किसान राजपूत हैं। यह लोग भी बड़े अच्छे किसान होते हैं। मुसलमान राजपूत उतने मेहनती नहीं होते हैं। मंज, भट्टी, घोसेवाहा, पंवार, नारू, तवार और बरमा राजपूतों के अंग हैं।

गूजर (गौचर) लोग प्राय: ग्वाले होते हैं। वे पहाड़ की ओर से इस जिले में आकर नदी तट के पड़ोस में (चारागाह की सुविधा होने से बस) गये।

अरैन लोग मुल्तान की ओर से आये। वे कम्बो थे जो मुसलमान हो गये।

बंजारे लोग अधिकतर खेत में रहते हैं। इनके अतिरिक्त अल्प संख्या में और कई जातियां इस जिले में रहती हैं।

मलेर कोटला

मलेर कोटला का छोटा मुसलमानी राज्य उत्तर की ओर लुधियाना जिले और शेष ओर पटियाला और नाभा राज्यों से घिरा हुआ है। यह एक समतल मैदान है। रेतीले टीलों को छोड़ कर यहां एक भी पहाड़ी या नदी नहीं है। यहां २३ इंच वार्षिक वर्षा होती है। शीशम पीपल आदि पेड़ मिलते हैं।

इस जागीर की नींव सदरुद्दीन नामी एक सर्वानी अफगान ने डाली थी (वह खुरासान के दाराबन्द स्थान से आया था। वह मुल्तानी पीर रुख आलम का चेला था। वह सतलज की एक सहायक नदी के किनारे भुरसी स्थान में बस गया। जब बहलोल लोदी इधर आया तब उसने उसके यहां नौकरी कर ली। आगे चल कर इस नवाबी जागीर और सिक्खों से लगातार लड़ाइयां होती रहीं। गुरु गोविन्द सिंह के समय में यह जागीर नष्ट होने से बाल बाल बच गई। गुरु तेगबहादुर इसी जागीर में पकड़ लिये गये थे और दिल्ली भेज दिये गये थे। आगे चल कर १७८८ ई० जब इस ओर मरहठों का जोर बढ़ गया और मरहठों और अंग्रेजों से लड़ाइयां हुईं तो इस जागीर ने अंग्रेजों का साथ दिया। १८०८ ई० में महाराजा रञ्जीत सिंह ने कोटला पर चढ़ाई की और डेढ़ लाख रुपया मांगा। १ लाख रुपया तो दे दिया गया। ५०,००० में पांच गांव गिरवीं रख दिये गये। इस रकम को वसूल करने के लिये महाराजा रञ्जीत सिंह ने तहसीलदार और थानेदार नियत कर दिये। १८१० ई० में सिक्खों से पीछा छुड़ाने के लिये यह जागीर अंग्रेजों की शरण में आ गई। गुरखों से जो युद्ध हुआ उसमें इस राज्य ने रसद से जनरल अक्टर्लोनी की सहायता की। गदर में भी इस राज्य ने अंग्रेजों का साथ दिया। १९०३ में यहां के साहबजादे ने रामपुर के नवाब की भतीजी से व्याह किया। इस राज्य की जन संख्या प्रायः ७८००० है। इसमें २१,००० कोटला कस्बे में रहते हैं शेष गांवों में रहते हैं।

और गहरी कटी हुई घाटियां हैं। (२) दूसरा प्राकृतिक भाग पहाड़ की तलहटी में स्थित है इसमें ऊँचा मैदान है। केवल कहीं कहीं पहाड़ियां हैं। इसमें रावलपिंडी की समूची तहसील और कहुटा का कुछ भाग शामिल है। (३) तीसरा प्राकृतिक भाग पोह्वार या मैदान है। इसमें अधिकांश गूजर खां तहसील के अतिरिक्त रावलपिंडी तहसील का दक्षिणी-पूर्वी भाग और कहुटा का दक्षिणी-पश्चिमी भाग शामिल है। यह भाग कुछ ऊँचा नीचा अवश्य है। इसे कई पहाड़ी धाराओं ने गहरा काट भी दिया है। फिर भी यह भाग सब से अधिक मैदानी है। इस ज़िले की पहाड़ियां बाहरी हिमालय से सम्बन्ध रखती हैं। उत्तर में काश्मीर की ओर यह अधिक ऊँची है। दक्षिण में वे नीची हो गई हैं। मरी और कहुटा की पहाड़ियां एक प्रकार से इस ज़िले की पहाड़ियों की कुंजी है इन्हीं में पश्चिम की ओर मर्गला श्रेणी शामिल है। मर्गला श्रेणी हज़ारा ज़िले में होती हुई इस ज़िले में उस स्थान पर प्रवेश करती है जहां पर मरी, हरीपुर और रावलपिंडी तहसीलें एक दूसरे से मिलती हैं। इस स्थान से यह श्रेणी रावलपिंडी तहसील के उत्तरी भाग को पार करती हुई दक्षिण-पश्चिम की ओर जाती है। इस ज़िले के बहुत बड़े भाग में इस श्रेणी की औसत ऊँचाई ५२०० फुट (प्रायः १ मील है। यह मैदान के ऊपर एक दम सीधी खड़ी है। इसके ढाल सपाट हैं। अटक ज़िले की सीमा के पास पहुँचने पर यह नीची हो जाती है। रावल-पिंडी शहर से १५ मील उत्तर-पश्चिम की ओर मर्गला-दर्रा है। ग्रांडट्रंक रोड यहीं होकर जाती है। दर्रे के पश्चिम में श्रेणी फिर कुछ ऊँची हो जाती है। अटक की खेरमार और काला चीता पहाड़ियों के पास यह मैदान में मिल जाती है।

मरी और कहुटा पहाड़ों की पांच प्रायः समानान्तर पहाड़ियां उत्तर-पूर्व की ओर झेलम नदी तक चली गई हैं। इनमें मरी पहाड़ी सब से ऊँची और सबसे अधिक पश्चिम की ओर है। इसके सामने हज़ारा का ज़िला है। मरी नगर का सब से ऊँचा स्थान समुद्रतल से ७४६७ फुट है। मरी के उत्तर में कुनर नाले के पड़ोस में पहाड़ियां नीची होकर टीलों के रूप में बदल जाती हैं। पर पट्रियाटा पहाड़ी ऊँचाई में कुछ कम होने (७२१२ फुट) पर भी बड़ी सुन्दर है। यह झेलम नदी के किनारे से एक दम ऊंची खड़ी है। कोटली पहाड़ी पट्रियाटा के पूर्व में है। कहुटा तहसील के उत्तरी भाग में नारार पहाड़ी है। सोअन नदी के पड़ोस में पहाड़ी नीची होकर नदी तट तक पहुँच गई है। सोअन नदी पहाड़ी के पश्चिमी सिरे को काट कर एक सुन्दर नद कन्दरा बनाती है। इस कन्दरा के दक्षिणी सिरे पर पुराना गक्खर क़िला बना है। सोअन के दूसरे किनारे पर एक पहाड़ी आगे बढ़ती हुई रावलपिंडी के मैदान में पहुँच गई है। उतरीना पहाड़ी बहुत छोटी है। इसके ऊंचे भाग वनस्पति से ढके हैं। मरी में कुछ ही देवदारु वृक्ष मिलते हैं। इस पहाड़ी की ऊँचाई कहीं भी ३८०० फुट से अधिक नहीं है। कहुटा कस्बे से यह पूर्व को ओर बढ़ती है। जैसे जैसे यह पूर्व की ओर जाती है वैसे वैसे इसकी ऊँचाई बढ़ती जा रही है। नदी के पास पास जो पहाड़ी जाती है उसकी ऊँचाई कहीं भी ३००० फुट से अधिक नहीं है। बघाम के दक्षिण में इस पहाड़ी का अन्त हो जाता है।

रावलपिंडी ज़िले की यह पहाड़ियां और घाटियां अत्यन्त मनोहर हैं। अधिक ऊँचे टीलों पर कुछ वनस्पति है। मरी में देवदारु के वृक्ष विशेष रूप से लगाए गये थे। फर, सिन्दूर, बांझ, चिनार और दूसरी झाड़ियां बहुत हैं। निचली पहाड़ियों पर हरे देवदारु हैं। अधिक नीचे खैर, फलाह, जैतून और दूसरे वृक्ष हैं। सबसे नीचे तरह तरह की झाड़ियां हैं।

फफूंदी पहाड़ी पर बड़ा सुन्दर वन है। कहुटा और मरी पहाड़ियों पर हरे वृक्षों के पीछे ऊंची हिमाच्छादित पहाड़ियों का दृश्य बड़ा सुन्दर दिखाई देता है। कई घाटियां भी बहुत सुन्दर हैं। नरार और फफूंदी पहाड़ियों के बीच में नरई घाटी का दृश्य विशेष रूप से मनोहर है। नरई घाटी को घेरने वाली पहाड़ियां निचले भाग तक हरी वनस्पति से ढकी हैं। ऊपरी भाग में गहरे नीले देवदारु के वृक्ष हैं। सोअन नदी की एक छोटी सहायक नदी

के मार्ग में कई सुन्दर कुण्ड हैं। कहीं कहीं छोटे पहाड़ी गांव हैं। गांवों के पड़ोस में पहाड़ी ढालों पर खेती होती है।

इस जिले के धुर उत्तरी-पश्चिमी भाग में मर्गला पहाड़ी के उत्तर में पश्चिम की ओर अटक और पूर्व की ओर हरीपुर तहसील से घिरी हुई भूमि बड़ी उपजाऊ है। यह हारो नदी के पास तक चली गई है। यहां होकर ग्रांड ट्रङ्क रोड और नार्थ-वेस्टर्न रेलवे जाती है। मर्गला श्रेणी के दक्षिण में पश्चिमी सीमा से रावलपिंडी छावनी तक खग्रोरा का सूखा और कंकड़ीला पठार है। नालों के पड़ोस में पानी ने ऊपरी धरातल को काट कर भीतरी चट्टानों को प्रगट कर दिया है। कुछ मील तक एक ऊंची पहाड़ी उत्तर से दक्षिण को जाती है और रावलपिंडी छावनी के पास समाप्त हो गई है। इस पहाड़ी में बलुआ पत्थर की शिलायें सीधी खड़ी हैं कोई कोई शिलायें ४० फुट ऊंची और कुछ फुट मोटी हैं। यहां के लोग इसे चीर पार या कटी पहाड़ी कहते हैं। रावलपिंडी तहसील में इस प्रदेश का शेष भाग कच्छा और कांधी नाम से प्रसिद्ध है। कच्छा प्रदेश मरी पहाड़ियों की तलहटी और उनके बीच में स्थित है। यहां वर्षा बहुत होती है। चश्मे भी बहुत हैं। कुछ खेती होती है। कांधी प्रदेश पूर्व की ओर कहुटा और पश्चिम की ओर रावलपिंडी तक चला गया है। इसके पूर्वी भाग में मुलायम बलुआ पत्थर की निचली पहाड़ियां हैं। पश्चिम की ओर रावलपिंडी शहर के पास उपजाऊ मैदान है। यह भाग जिले भर में सब से अधिक उपजाऊ है। इस प्रदेश में समतल मैदान और उपजाऊ घाटियां हैं। इस मैदान के पूर्व में मरी और कहुटा पहाड़ों से जो बलुआ पत्थर की पहाड़ियां दक्षिण की ओर जाती हैं उन्होंने इस भाग को घाटियों और रेतीले पठार में बांट दिया है।

कहरु इलाका कहुटा तहसील के पूर्वी और दक्षिणी पूर्वी भाग में स्थित है। अधिकतर गांव जंजुआ वंश के कढ़वाल या गढ़वाल लोगों के हाथ में है। इसी से इलाके का नाम पड़ गया। इसके पूर्वी भाग में कंकड़ीले पथरीले टीले हैं। दक्षिण की ओर बलुआ पत्थर की निचली पहाड़ियां या बलुई भूमि है। यह भाग पड़ोस की गूजरखां तहसील के समान है। फिर भी पहाड़ की तलहटी में यह अत्यन्त विषम भाग है। रावलपिंडी तहसील का पहाड़ी भाग का विषम पहाड़ की तलहटी का प्रदेश दक्षिण की ओर सोहन नदी से घिरा है। यह पहाड़ी धारा मरी पहाड़ियों से निकल कर दो (उत्तरी-पूर्वी और दक्षिणी पश्चिमी) भागों में बाँट देती है।

सोहन नदी के समीप का भाग सोहन इलाका कहलाता है। सोअन नदी की तंग घाटी में छोटे छोटे पत्थरों से मिली हुई कछारी मिट्टी बिछी है। इसके दोनों ओर ऊंची पहाड़ियां खड़ी हैं। इससे यहां डरावना अंधेरा सा छाया रहता है। स.ए के दक्षिण में मैदान है। गूजर खां के नालों ने इ बहुत काट दिया है। यहां छोटे पत्थर कम हैं ले- सूखकर टूटने वाला बलुआ पत्थर कई भागों निकल आया है। सोहन, लिंग और दक्षिण ओर बाडला धाराओं के समीप नालों ने 5 ओर इतनी गहरी जमीन काट दी है कि २ आना जाना बड़ा दुर्गम हो गया है। [illegible] स्टेशन के पास रेलवे लाइन के दोनों ओर की उपजाऊ घाटी है।

इन नालों के द्वारा अलग हो गया है। कुछ नाले अधिक बड़े हैं। कुछ नाले अधिक गहरे हैं। कहीं इनकी तली पथरीली है। कहीं इसमें चिकनी मिट्टी है। इसमें दरारें पड़ गई है। प्रायः इन नालों के नाम नहीं होते हैं। कहीं एक ही नाले का एक स्थान पर एक नाम और दूसरे स्थान पर दूसरा नाम होता है।

जिन बड़े नालों में ऊपरी धरातल का वर्षा जल बह आता है उन्हें कास या कस्सी कहते हैं। अधिक छोटे नालों की तली वर्षा जल के बहने से ही बनती है। इन्हें भूरा या सूखा नाला कहते हैं।

रावल पिंडी जिले का वर्षा-प्रवाह बहुत सीधा सादा है। जिले का वर्षा जल पूर्व की ओर झेलम नदी में अथवा पश्चिम की ओर सिन्ध नदी में पहुँचता है। बीच में विषम जलविभाजक है। झेलम नदी में मिलने वाली प्रधान धारा कान्शी है। यह कहुटा तहसील में माटोर के पास से निकलती है। यह दक्षिण की ओर बहती है। पश्चिम की ओर से इसमें कई छोटी धाराएँ आ मिलती है। कल्ला कस्बे के पास यह गूजर खाँ तहसील में प्रवेश करती है। यहाँ से आगे यह दक्षिण की ओर ग्रांडट्रङ्क रोड की समानान्तर चलती है। झेलम जिले की सीमा के पास यह पूर्व की ओर मुड़ती है। यहां यह पथरीली तली में बहती हुई झेलम नदी में मिल जाती है। अपने मार्ग के अन्तिम २० मील में यह एक गहरी वेगवती नदी हो जाती है। इसमें कई धारायें आ मिलती हैं। ऊपरी भाग में इसका पेटा चौड़ा है। कहुटा तहसील में इसकी तली पथरीली है। गूजर खां तहसील में यह रेतीली हो गई है। इसमें प्रायः सदा पानी तेज़ी से बहता रहता है। केवल कहीं यह पानी पृथिवी के नीचे लुप्त होकर बहता है। कुछ मील इस प्रकार बहने के बाद यह फिर ऊपर प्रगट हो जाता है। रावल-पिंडी जिले में सरेह और गुलियाना इसकी प्रधान सहायक नदियाँ हैं। सरेह धारा कहुटा तहसील में नारा के दक्षिण में चट्टानों की एक राशि से निकलती है। दो दिली माटोर और दोबेरन पहाड़ियों से घिरी आरम्भ में एक तंग घाटी में बहती है। फिर यह खुले प्रदेश में बहती है। अन्त में. बेवल के पास यह गूजरखां तहसील में प्रवेश करती है। इस तहसील के पूर्वी भाग का पानी एकत्रित करके यह पूर्वी सिरे पर कान्शा में मिल जाती है। संगम के पास पहाड़ियों की एक नद कन्दरा है। गुलियाना कास सुखो के पास निकलती है पूर्व की ओर मुड़-कर यह गुलियाना गांव के पास बहती है और झेलम की सीमा के पास कान्शो से मिल जाती है। इसकी तली रेतीली है। पड़ोस में पहाड़ी दृश्य कम है। थलियारी कास चकवल मंडरा सड़क पर बसे हुये जटली गांव के पास निकलती है। यह दक्षिण की ओर चकवल तहसील में बहती है यह गूजर प्रदेश में बहती है। गूजरों के अधिकतर गांव इसी नदी के किनारे बसे हैं।

इन नदियों में कुछ न कुछ जल साल भर रहता है। वर्षा ऋतु में यह पानी की अधिकता और धारा के वेग से गर्जने लगती हैं। इनके किनारों पर पर स्थान स्थान पर गांव बसे हैं। इनके पेटे में कुओं की सिंचाई की सुविधा होने से खेती होती है। इन धाराओं के ऊंचे किनारों के नीचे कुएं खुदे हुये हैं। यहां पेटा चौड़ा है और मिट्टी उपजाऊ है। इन धाराओं की तली इतनी उपजाऊ है कि इनका पानी ऊंचे किनारों के पास वाले खेतों के सींचने के काम नहीं आ सकता। केवल कुओं से सिंचाई हो सकती है। पेटे में खेत इधर उधर बिखरे हुये हैं। यह बाढ़ में डूब जाते हैं। इन्हें सैलाब कहते हैं। पर भूमि उपजाऊ नहीं है। बाढ़ के पानी में कांप की अपेक्षा बालू अधिक रहती है। सर्वोत्तम खेत वहां हैं जहां नीचे का पानी भिद कर ऊपर आता है। झेलम की शेष सहायक नदियां पहाड़ी धारायें हैं। मरी और कहुटा तहसीलों में इनका मार्ग बहुत तंग है। इनके नाम पास वाले गांवों के नाम से प्रसिद्ध हैं। प्रायः इन्हें खड या कास कहते हैं। कुनेर धारा रावलपिंडी और हजारा के बीच में सीमा बनाती है। यह मरी नगर के पीछे की पहाड़ियों से निकलती है। आरम्भ में पाँच धारायें अलग अलग निकलती हैं। मलोत धूंदन गांव के पास वे सब मिल जाती हैं। ठीक उत्तर की ओर बह कर यह देवल के पास रावल-

यह सब कहीं पांज है। मनुष्य इसे पैदल पार कर सकते हैं। केवल बाढ़ आने पर यह भयानक हो जाती है। कई दिन तक इसके आर पार जाना वन्द हो जाता है। रावलपिंडी शहर से ४ मील दक्षिण की ओर इस नदी पर सुन्दर पुल बना है। ग्रांड ट्रंक रोड इसी पुल के ऊपर से जाती है। बाढ़ में सभी लोग पुल पर होकर जाते हैं। पुल के नीचे पड़ोस का पानी इसकी दो सहायक नदियों में पहले पहुँचता है। फिर इसमें आता है। पश्चिम की ओर सिल नदी है जो रावलपिंडी शहर के पड़ोस में निकलती है। इसका पेटा बहुत तंग है। अटक जिले की पिंडीगेब तहसील के पास यह सोहन नदी में मिल जाती है। इसमें कुछ न कुछ पानी सदा बना रहता है। वर्षा ऋतु में इसमें भारी बाढ़ आ जाती है। वैसे यह छोटी और अप्रसिद्ध नदी है। पूर्व की ओर वाडला नदी रावलपिंडी तहसील के रेवत स्थान के पास से निकलती है। पहले यह रावलपिंडी तहसील और गूजर खां तहसील के बीच में सीमा बनाती है। फिर यह गूजर खां तहसील को फतेहजङ्ग तहसील से अलग करती है। फिर यह पश्चिम की ओर मुड़ती है। और दक्षिणी-पश्चिमी कोने के पास सोहन नदी से मिल जाती है। ऊंचे और सूखे किनारे वाडला नदी को सोहन नदी से पृथक करते हैं। वास्तव में वाडला दुर्गम बरसाती नालों का समूह है। इसमें बहुत कम पानी रहता है। इसकी बालू उड़ उड़ कर पड़ोस के खेतों को निर्बल करती रहती है।

इस जिले में सोहन नदी के बायें किनारे पर मिलने वाली एक मात्र कुछ प्रसिद्ध सहायक नदी लिंग है। लिंग नदी नारार पठार की तलहटी से निकलती है। कहुटा के पहाड़ी भाग का वर्षा जल एकत्रित करके यह सपाट कन्दराओं द्वारा पहाड़ियों को चीरती हुई रावलपिंडी तहसील में प्रवेश करती है। ग्रांड ट्रंक रोड के पास सिहाला में यह सोहन से मिल जाती है।

कुरंग और लेह दाहिने किनारे की सहायक नदियां हैं। कुरंग नदी मरी पहाड़ी से निकलती है और चत्तार के पास मैदान में उतर पड़ती है। मर्गला और पूर्व की ओर मरी पहाड़ियों की तलहटी का वर्षा जल एकत्रित करके ग्रांड ट्रंक रोड के पास यह सोहन में मिल जाती है।

इस जिले में बड़ी झीलों का अभाव है। सब से बड़ी झील खान्ना झील है। वास्तव में यह दो दलदलों से बनी है। एक दलदल रावलपिंडी छावनी से ४ मील की दूरी पर सोहन गांव के पास स्थित है। कुरंग नदी ने यह दोनों दलदल बनाये हैं। इसके पड़ोस में धान और गन्ने की खेती होती है।

इस जिले में जल की मात्रा सन्तोषजनक है। मरी और कहुटा तहसीलों में पानी का अभाव कभी नहीं होता है। गूजरखां और रावलपिंडी तहसीलों में कुछ बड़े और कुछ छोटे सोतों में पड़ोस की पहाड़ियों से पानी आता है।

भूगर्भ—भूगर्भ विद्या की दृष्टि से मरी और कहुटा तहसीलों की पहाड़ियां तृतीय युग के बलुआ पत्थर, चूने के पत्थर और कछारी मिट्टी (कांप) की बनी है। यह बलुआ पत्थर हिमालय के सिरमौर और सिवालिक पहाड़ियों के अंग हैं। इनका रंग कहीं भूरा और कहीं लाल है। ऊँचे भाग में यह पत्थर अधिक कड़ा है। निचले भाग में यह शीघ्र टूट जाता है। कुछ तहों में बढ़िया इमारती पत्थर मिलता है। कुछ भागों में सरकारी सड़कों की गिट्टी के लिये पत्थर खोदा जाता है। कुछ भागों का पत्थर बिगड़ कर टूट जाता है। नारार पहाड़ी एकदम सफेद कड़े बलुआ पत्थर की बनी है। इनके बीच बीच की दरारों में खड़िया और चिकनी मिट्टी भरी है। इधर बहने वाली छोटी नदियों की तली में चूने के पत्थर की भेद्य चट्टाने हैं। इन्हें यहां के लोग कनियत कहते हैं। बीच बीच में लाल या नीली चिकनी मिट्टी की विस्तृत क्यारियां हैं। इनके घिसने से पड़ोस के खेतों की मिट्टी का भी यही रंग हो गया है।

मर्गला पहाड़ी में चूने का पत्थर बहुत है। इसकी तलहटी में बसे हुये गांवों की मिट्टी इसी के घिसने से बनी है। इसी से अत्यन्त उपजाऊ है। कुछ चूने का पत्थर मरी पहाड़ियों पर पाया जाता है। इसका रंग मटीला या कुछ पीला होता है। यह बहुत कड़ा होता है। कई स्थानों पर घर बनाने का

मरी का तापक्रम १०२ अंश फारेन हाइट हो गया। जुलाई और अगस्त में वर्षा होती है। पड़ोस की पहाड़ियां हफ्तों तक कुहरे से छिप जाती हैं। सितम्बर और अक्तूबर महीने खुश्क होते हैं। आकाश निर्मल रहता है। पर ज्वर फैलता है। यहां के लोग ग्रीष्म ऋतु को उन्हाल, वर्षा ऋतु को बरसात बसन्त को खुली बहार और शीतकाल को ठंडी बहार कहते हैं।

वर्षा—रावल पिंडी जिले में अधिकतर वर्षा गरमी की ऋतु बीतने पर बरसात में होती है। कुछ वर्षा सरदी की ऋतु में भी होती है। ग्रीष्म ऋतु की वर्षा समस्त जिले में होती है। ग्रीष्म ऋतु की वर्षा जुलाई में आरम्भ होती है और सितम्बर के दूसरे सप्ताह में समाप्त हो जाती है। अगस्त में कुछ दिन के लिये पानी बरसना बन्द हो जाता है। जिले के पूर्वी भाग में पश्चिमी भाग से अधिक वर्षा होती है। कभी कभी ऐसा होता है कि मर्गला जैसी पहाड़ी के ढाल पर वर्षा होती है और दूसरा ढाल सूखा रह जाता है। कभी कभी मैदान के गांवों में भी एक भाग में वर्षा होती। दूसरा भाग सूखा रह जाता है। कभी कभी ऐसा देखा गया कि रावलपिंडी शहर में प्रबल वर्षा हुई और छावनी में एक बूंद पानी नहीं बरसा।

दूसरी बार इस जिले में जनवरी मास में वर्षा होती है और मार्च के आरम्भ तक होती रहती है। इस वर्षा से रावलपिंडी, गूजर खां और कल्लार में वर्षा होती है। पहाड़ों पर अधिक वर्षा होती है। पहाड़ों से दूर होने पर वर्षा कम होती जाती है। सोहन नदी की घाटी में भी अच्छी वर्षा होती है। इस घाटी से कुछ ही मील की दूरी पर वर्षा कम होती है।

मरी और कहुटा तहसीलों में वर्षा अधिक और नियत समय पर होती है। ग्रीष्म ऋतु में मरी में तीस इंच और कहुटा में २० इंच से अधिक वर्षा होती है। इन दोनों तहसीलों में शीतकाल में भी नियमित रूप से वर्षा होती है। कहुटा तहसील में औसत से गरमी की ऋतु में २८ इंच और सरदी की ऋतु में १० इंच वर्षा होती है। मरी में इससे कुछ अधिक वर्षा होती है। दक्षिण की ओर रावलपिंडी और गूजर खां में कुछ कम वर्षा होती है। रावलपिंडी तहसील में ग्रीष्म की अपेक्षा शीत काल की वर्षा अधिक नियत समय पर होती है। जनवरी और मार्च महीनों में निश्चित रूप से वर्षा होती है।

रावलपिंडी में औसत से २९ इंच वर्षा साल भर में होती है। इसमें २१ इंच ग्रीष्म में और ८ इंच शीत ऋतु में वर्षा होती है। सोहन नदी के दक्षिण में वर्षा कम होती है। गूजर खां तहसील का दक्षिणी-पश्चिमी भाग अधिक खुश्क है।

वनस्पति—गूजर खां तहसील और पोथवर के मैदानी भाग में जंगल का अभाव है। खेतों में पेड़ बहुत कम दिखलाई पड़ते हैं। पर नालों में सूखी मुरझाई हुई झाड़ियां और कुछ पेड़ हैं। जिले की प्रधान सड़कों के दोनों ओर पेड़ लगाये गये हैं। कीकर, फुलाही, बेर और शीशम यहां के प्रधान पेड़ हैं। खेत साफ रहते हैं। इनमें जंगली घास कम उगती है। दाब, दूब यहाँ की प्रधान घास है। खारोडा, कांघी, रावलपिंडी और कहुटा तहसीलों के कुछ भागों में फुलाही पेड़ बहुत होता है। दक्षिणी खुश्क भाग में कीकर बहुत होता है। अधिक उत्तर में कीकर के स्थान पर शहतूत का पेड़ होता है। यहीं उत्तरी भाग में जंगली जैतून या काओ बहुत मिलता है। बेर सब कहीं पाया जाता है। दक्षिणी खुश्क भाग में भेकर, बेरी झाड़ियां भी बहुत हैं।

पहाड़ों की तलहटी में पितकी और गरांडा बहुत है। अधिक ऊंचे पहाड़ी भागों में सनाथ बहुत होता है। शीशम का पेड़ कुछ भागों में पाया जाता है। इन पेड़ों की संख्या अधिक नहीं होती है। इसकी लकड़ी बड़ी मज़बूत होती है। इस लिए यह पेड़ बड़ा कीमती होता है। मरी और कहुटा तहसीलों का अधिकतर पहाड़ी भाग मूल्यवान इमारती लकड़ी के पेड़ों से ढका है। इन दोनों तहसीलों में १०० से अधिक सरकारी वन हैं। पहाड़ी भाग इतना ठंडा है कि वहाँ कीकर का पेड़ नहीं उग सकता है। पहाड़ के निचले भाग का प्रधान पेड़ फुलाही है। भेकर प्रधान झाड़ी है। उत्तर में कहुटा के पड़ोस में आम के वृक्ष

बाजरा—इस ज़िले की प्रधान फसल है। मरी और कहुटा के पहाड़ी भाग में बाजरा की फसल अच्छी नहीं होती है। बढ़िया भूमि और खाद मक्का उगाने के लिए सुरक्षित रक्खी जाती हैं। भिन्न-भिन्न फसलों के बोने के विषय में यहाँ निम्न कहावत प्रचलित हैं।

"मोठ सुपत्तल तिल घने, दाद ताप ज्वार, गीठों उत्ते बाजरा, दहंगा उत्ते बार" मोठ दूसरे पौदों के साथ कुछ दूरी पर बोझ चाहिए। तिल बोना चाहिये। जितनी दूर मेढक एक छलांग मारता है उतनी दूरी पर ज्वार बोना चाहिये। बाजरा के बीज एक एक बीते की दूरी पर बोना चाहिये। कपास के बीज एक एक पग की दूरी पर बोना चाहिये।

ज्वार को पहाड़ी भाग में अन्न के लिये कभी नहीं उगाते हैं। मैदान में भी यह प्राय: चरी या चारे के लिये उगाई जाती है अन्न के लिये बहुत कम उगाई जाती है। इसका अन्न तो निर्धन ही खाते हैं। पर इसका चारा बड़ा सुन्दर होता है। खरीफ की फसल में कुछ भागों में अन्न के लिये बाजरा बोते हैं। ज्वार बाजरा के साथ ही उर्द मूग और मोठ भी बोते हैं। गूजर खां कहरू और कल्लार कहुटा इलाकों में उर्द-मूंग बहुत होती है। गूजर खां तहसील में बाजरे के बाद उर्द मूग का दूसरा स्थान है। पोथवार मैदान की प्रधान उपज मूंग है। मूग प्राय: पुरानी उजड़ी आबादो के खेतों में होती है। इन्हें पिंड कहते हैं। जो मूंग पिंडों में उड़ाती है वह दूसरे स्थानों की मूंग से बहुत बढ़िया होती है। रावलपिंडी तहसील में यह सोहन नदी के दक्षिण में उगती है। कहुटा और मरी में यह कल्लार कहुटा इलाके में होती है। मोठ और भी खराब जमीन में होती है।

मक्का—पहाड़ी भाग की प्रधान फसल मक्का है। मैदानी भाग में इसका स्थान खरीफ की फसल में दूसरा है। पहाड़ी भाग के लोगों का प्रधान भोजन मक्का है। मक्का के साथ दूध दही और मट्ठा भी बहुत खाया जाता है कुछ भागों में सफेद या चिट्टी मक्का होती हैं। कुछ भागों में पीली मक्का होती है। ठंड भागों में सैठी मक्का होती है। कुछ भागों में चवारी मक्का होती है। जिले के अधिकतर भागों में मक्का बोने के पहिले अथवा मक्का काटने के बाद जौ की फसल उगा लेते हैं। धान की फसल भारी और कहुटा के केवल आधी भागों में होती है। कल्लार कहुटा परगने में धान के खेत नालों के समीप निचले भागों में पाये जाते हैं।

आलू केवल मरी तहसील में उगाया जाता है। मरी नमर के पड़ोस के गांव अधिकतर आलू ही उगाते हैं।

कपास बहुत थाड़े भागों में उगाई जाती है वह भी घरेलू काम के लिये उगाई जाती है।

गेहूँ—जिले के मैदानी भाग की सर्व प्रसिद्ध फसल गेहूँ है। गूजर खां तहसील में सब से अधिक गेहूँ होता है। रावलपिंडी तहसील में इनना ही गेहूँ थोड़े परिश्रम से हो जाता है। पहाड़ी भाग में बहुत थोड़ा गेहूँ होता है। लोहा गली के उत्तर में गेहूँ बिल्कुल नहीं बोया जाता है। इधर इतनी ठंड और बरफ पड़ती है कि इस भाग की जलवायु गेहूँ के लिये अनुकूल नहीं। लोही सत्तार या रत्ती गेहूँ बढ़िया गिना गेहूँ प्राय: अक्तूबर मास में बोया जाता है। बोने से पहले अगस्त सितम्बर में प्रबल वर्षा होनी चाहिये। वर्षा देर में होने से गेहूँ भी देर (नवम्बर से जनवरी तक) में बोया जाता है। चैत या मार्च की वर्षा गेहूँ के लिये बड़ी लाभदायक होती है यहाँ कहावत है---वस्से चेतार न घर मेवे न खेतार वस्से अथवा चैत न खाल मित्ते न खेत अर्थात् यदि चैत मास में वर्षा हो तो अन्न इतना अधिक होता है कि इस रखने के लिये न घर में स्थान मिलता है न खेत में। मैदानी भाग में अप्रैल में और पहाड़ी भाग में जुलाई मास में गेहूँ पकता है। गूजर खां तहसील में गेहूँ के साथ सरसों बोई जाती है। कुछ भागों में जौ उगाया जाता है। कुछ गावों में चना उगाया जाता है।

मरी और कहुटा के पहाड़ी भागों में अखरोट सेब अंगूर नाशपाती लुकाटा बेर और आड़ू बहुत होते हैं। मैदानी भाग में आम होता है।

रावलपिंडी जिले के गाय बैल बहुत बढ़िया नहीं होते हैं। गूजर खां तहसील में ऊंट बहुत पाले जाते हैं। मरी और कहुटा में भेड़ बकरियां बहुत

पाली जाती हैं। पर रावलपिंडी का जिला घोड़ों के के लिये बहुत प्रसिद्ध है। मार्च मास में रावलपिंडी में घोड़ों की बिक्री का बड़ा मेला लगता है। पर जमींदार लोग घोड़ों से खच्चर को अधिक पसन्द करते हैं। यहाँ के गधे साधारण होते हैं।

खनिज—रावलपिंडी जिले में खनिज सम्पति अधिक नहीं है। रावलपिंडी शहर से १८ मील की दूरी पर रवाहोतार में मिट्टी का तेल पाया जाता है। मरी से पश्चिम की ओर पहाड़ की तलहटी में जिप्सम बहुत है। कहीं कहीं मरी पहाड़ियों पर थोड़ा कोयला भी मिल जाता है। झेलम और सिन्ध नदियों की सहायक नदियों की बालू में सोने के कण पाये जाते हैं। पर सोने की मात्रा इतनी कम है कि इन्हें निकालने में परिश्रम अधिक पड़ता है और लाभ बहुत कम होता है। झेलम के पश्चिमी किनारे से आकर कुछ हिन्दू सोहन नदी के किनारे बस गये हैं। प्रायः वही इस कार्य में लगे हैं। पांच छः सेर बालू एक छिछले परत में रखते हैं। यह बार बार धोई जाती है। हलकी बालू पानी के साथ बाहर बह जाती है। अन्त में भारी काले टुकड़े और चमकते हुये सोने के छोटे कण शेष रह जाते हैं। फिर इसमें पारा छोड़ा जाता है। सोने के कण पारे के साथ मिल जाते हैं। इनकी एक टिकिया सी बन जाती है। अन्त में गरम करके पारा अलग कर दिया जाता है। सोना शेष रह जाता है।

पहाड़ियों से बलुआ पत्थर और चूना निकाला जाता है। इसे काम पड़ने पर ठेकेदार निकलवाते हैं।

कलाकौशल

जिले की केवल ६ प्रतिशत जनसंख्या शहर में रहती है। शेष ९४ प्रतिशत लोग गाँवों में रहते हैं। गांव के लोग खेती के काम में लगे हुये हैं। कुछ जुलाहे, तेली, लुहार, काश्मीरी कातने वाले, तरखान (बढ़ई), मीरासी (गाने वाले), मुसल्ली (भङ्गी) सुनार, ब्राह्मण, खत्री आदि हैं। पर इन सब की संख्या अधिक नहीं है। इस जिले में कपास खूब होती है। इस लिये सूत कातना और गाढ़ा बुनना इस जिले का प्रधान पेशा है। काश्मीरी लोग भी बुनने का काम करते हैं। वे रेशम बुनने का काम करते हैं। वे रेशम बुनने और फूलकारी का भी कुछ काम कर लेते हैं। कहुटा तहसील में सालग्रांव और रावलपिंडी में कुरीदलाल के बढ़ई चारपाई के पाये बढ़िया रंगते हैं। यह पाये प्रायः शीशम, फुलाई या खैर की लकड़ी के रँगते हैं। वे पीढ़ा और चरखा भी बहुत बनाते हैं। कहुटा तहसील में लकड़ी बहुत है वहीं लकड़ी का अधिक सामान बनता है। यहां बहुत बढ़िया कामदार चौखट और खिड़कियां बनाई जाती हैं।

रावलपिंडी शहर बिशनदोत और कहुटा में घोड़ों के जीन अच्छे बनते हैं। बड़े बड़े कारखानों में मरी का शराब बनाने का कारखाना, रावलपिंडी का लोहे की ढलाई का कारखाना और रेलवे का कारखाना विशेष उल्लेखनीय है। गोरा गली का शराब बनाने का कारखाना मरी की सड़क रावलपिंडी से ३३ मील की दूरी पर स्थित है। १८६१ ई० में स्थापित हुआ था। रावलपिंडी का शराब का कारखाना टोपी में रावलपिंडी के सिविल लाइन से १ मील की दूरी पर स्थित है शराब के कारखानों के लिये गुड़ लायलपुर, स्य कोट और गुरुदासपुर जिलों से आती है। पिंडी जिले में गुड़ तयार नहीं होती है।

गूजर खाँ तहसील और रावलपिंडी तहसील के दक्षिणी-पूर्वी भाग का व्यापार गूजर खाँ कस्बे एकत्रित होता है। रावलपिंडी तहसील के भाग का व्यापार रावलपिंडी शहर में आता मरी तहसील का व्यापार मरी नगर में इकट्ठा है। कहुटा तहसील का व्यापार कई स्थानों में हुआ है। गूजर खां तहसील का अधिकतर व्य वहाँ के खत्रियों के हाथ में है। गूजर खां, गुलियाना, सुखो, दौलताला और सैय्यद ०० स्थान है। पहिले गूजर खाँ उत्तरी पञ्जाब में व्यापारिक केन्द्र था। यहां का गेहूँ कर जाता था। वहां से इंगलैंड पहुँचाता था। इस भी गेहूँ और मूँग बाहर भेजी जाती है। चावल और कपास यहां आती है। फौजी

होने के कारण रावलपिंडी शहर में बहुत सी लकड़ी, चारा, दूध, अंडे, गाय बैल और भेड़ें बाहर से आती हैं। कुछ काश्मीर का व्यापार भी रावलपिंडी होकर बाहर जाता है। रावलपिंडी तहसील में रावलपिंडी शहर के अतिरिक्त ढेरी शाहान में कुछ व्यापार हरीपुर और अटक तहसीलों से होता है। सोहन नदी के दक्षिण में कुछ बड़ी व्यापारिक मंडियाँ हैं। मनकियाला रेलवे स्टेशन के पास सगरी पहाड़ी घी, ऊन और खाल के लिये अन्तिम व्यापारिक मंडी है।

रावलपिंडी कचहरी के पास चकलाला रेलवे स्टेशन में नाम मात्र का व्यापार होता है। गोलरा स्टेशन में भी बहुत थोड़ा व्यापार का सामान उतरता है। यहीं कोहाट को जाने वाली रेलवे लाइन का जंकशन है। मनकियाला का व्यापार अधिक बढ़ती पर है। कहुटा के व्यापार का प्रधान स्टेशन सिहाला है। सराय काला स्टेशन ढेरी शाहान बाजार के पास है। यहीं हरीपुर का व्यापारिक सामान एकत्रित होता है। सोहन नदी के उत्तर में आने जाने के मार्ग और अधिक अच्छे हैं। कहुटा तहसील में कल्लार, कहुटा और नगर व्यापारिक स्थान हैं। घी चमड़ा और ऊन यहां के मुख्य निर्यात हैं। कुछ पहाड़ी फल भी यहां बिकने आते हैं।

मरी तहसील में मरी नगर प्रधान व्यापारिक केन्द्र है।

नार्थ वेस्टर्न रेलवे की प्रधान शाखा और ग्रांड ट्रंक रोड (सड़क) से बहुत कुछ आना जाना होता है। यह दोनों ही रावल पिंडी और गूजर तहसीलों को काटती हैं वे कहुटा और मरी तहसीलों से जुड़ी हुई हैं। कहुटा तहसील में आने जाने के साधन अच्छे नहीं हैं।

प्रसिद्ध स्थान

रावल पिंडी

यह इस जिले का सर्व प्रसिद्ध नगर है। जहां आज कल छावनी है वहां अब से २००० वर्ष पहले भट्टी वंश की राजधानी गजपुर या गजनिपुर नाम के नगर में थी। आजकल भी २ वर्ग मील क्षेत्र में यहां यूनानी सिक्के या पुरानी टूटी ईंटे मिल जाया करती हैं।

मुगल काल से कुछ पहले यहीं फतेहपुर बाओरी नाम का नगर था। पर मुगलों के आक्रमणों ने १४ वीं शताब्दी में इसे नष्ट कर डाला। ५५५ ईस्वी में महमूद गजनवी ने इसे गक्खर लोगों को सौंप दिया था। पर आक्रमणकारी सेनाओं के मार्ग में स्थित होने से यह उजड़ गया। झंडा खां नाम के एक गक्खर सरदार ने इसे फिर से बसाया। उसने इस नगर का नाम पिंडी या रावल पिंडी रक्खा। उस समय रावल नाम का गांव यहां से उत्तर की ओर था। १७६५ ई० में सरदार मिल्का सिंह ने इस पर अधिकार कर लिया। तब से इस नगर की बड़ी उन्नति हुई। मिल्का सिंह ने भेरा, मियानी, पिंड दादन खां और चकवल के व्यापारियों को यहां बुलाकर बसाया। १९ वीं शताब्दी के आरम्भ में काबुल के अमीर शाह जमान के भाई शाह शुजा ने भाग कर यहां शरण ली। उसने यहां एक घर बनवाया। यहीं गक्खर सरदार मुकर्रा खां ने लड़ाई लड़ी थी। यहीं गुजरात की लड़ाई के बाद १८४९ ई० में सिक्ख सेना ने आत्म समर्पण किया था। इसी समय दुखी होकर एक सिक्ख सिपाही ने कहा 'रंजीत सिंह आज मरे हैं।' ब्रिटिश शासन काल में यहां एक बड़ी छावनी बनी। १८५१ ई० में लार्ड डलहौजी पंजाब का दौरा करता हुआ यहां आया। यहीं उसने सेना का एक बड़ा केन्द्र बनाया। इसके बाद रावल पिंडी शहर तेजी से बढ़ा। पड़ोस की पहाड़ियों का वन कट कर इमारतों और ईंधन के काम आने लगा। १८७९ ई० में नार्थ वेस्टर्न रेलवे लाइन यहां तक आगई। १८८८ से इस पर यात्री चलने लगे। रावल पिंडी शहर ३३'३७ उत्तरी अक्षांश और ७३'६ पूर्वी देशान्तर में स्थित है इसकी जन संख्या प्राय: ९० हजार है। इसमें ५० हजार शहर में और ४० हजार छावनी में रहते हैं।

रावल पिंडी शहर लेह नाम की एक छोटी नदी के उत्तरी किनारे पर स्थित है। इसके किनारे सपाट और दलदली हैं। इस नदी के ऊपर एक लोहे का पुल उस स्थान पर बना है जहां मरी को सड़क जाती है। लेह नदी पर भिन्न भिन्न स्थानों पर चार और पुल हैं। लेह नदी रावलपिंडी शहर को छावनी और सिविल लाइन से अलग करती है। छावनी इस नदी के दाहिने किनारे पर है। शहर बायें किनारे पर है। छावनी के उत्तरी-पूर्वी कोने पर सिविल; लाइन डिप्टी कमिश्नर का दफ्तर और खजाना है। शहर से १ मील की दूरी पर लेह के किनारे पर रेलवे का कारखाना है। इस कारखाने में नदी का बहुत सा पानी खर्च हो जाता है। रावल पिंडी शहर निचले भाग में बसा है। केवल पश्चिम की ओर से यह कुछ दूर से दिखाई देता है। शहर का अधिकतर भाग नया बना है। पानी अधिक गहराई पर मिलता है। पानी की कमी से बगीचे बहुत कम हैं। म्यूनिसिपेलिटी का बगीचा बहुत सुन्दर बना है। शहर के पड़ोस में उपजाऊ भूमि है इस लिये खेती शहर के पड़ोस से आरम्भ होकर उत्तर की ओर मरी पहाड़ियों तक चली गई है। पश्चिम की ओर मारगल्ला श्रेणी तक खेत चले गये हैं। पुराना किला लुप्त हो गया है। शहर के पड़ोस में कोई प्राचीन भग्नावशेष नहीं है। नगर नया है। छावनी से यह अधिक प्रसिद्ध हो गया। काबुल की लड़ाई के बाद यह नगर तेजी से बढ़ा। नगर साफ सुथरा है। यहां कई बाजार हैं। साम्प्रदायिक दंगों में हिन्दू और सिक्ख घर बहुत नष्ट हो गये।

छावनी शहर से प्रायः १ मील की दूरी पर ढालू भूमि पर स्थित है। यहां कई नालों ने इसे गहरा काट दिया है। छावनी शहर से कुछ अधिक ऊंची है। पानी कुछ अधिक गहराई पर मिलता है। छावनी के पूर्वी सिरे पर किला है। यहीं बारूद घर है। कुछ दूरी पर और किले हैं। छावनी के सदर बाजार में कुछ दूसरी दुकाने हैं। शहर में हरदीत सिंह पुस्तकालय सिविल अस्पताल, माई बीरों का ताल और म्यूनिसिपल उद्यान देखने योग्य हैं।

मरी शहर समुद्र-तल से ७५१७ फुट की ऊंचाई पर रावल पिंडी शहर से केवल ३८ मील दूर है यहां से काश्मीर के हिमाच्छादित पहाड़ों का सुन्दर दृश्य दिखाई देता है। इस स्थान की जलवायु बड़ी सुन्दर है। यहां बहुत से मनुष्य गरमियों में सैर करने के लिये आते हैं। मरी पहाड़ी के सिरों को पिंडी टीला और काश्मीर टीला कहते हैं। काश्मीर टीला अधिक ऊंचा है। इनके बीच में एक चोटी ७५१७ फुट ऊंची है। इन सब स्थानों को ३ मील लम्बी एक सड़क जोड़ती है। इस नगर के घर इसी पहाड़ी के ढालों पर पेड़ों के बीच में बने हैं। यहीं रावलपिंडी से आने वाली सड़क मिलती है। यहां से एक मील की दूरी पर छावनी है। ऊपरी ढाल पर विलायती माल की बड़ी दुकाने हैं। नीचे देशी बाजार है। पोस्ट आफिस के पास से काश्मीर को सड़क जाती है। खजाने के पास से एबटाबाद को सड़क जाती है। मरी पहाड़ी हिमालय का अंग है। यह हिमालय से समकोण बनाती हुई उत्तर-पूर्व से दक्षिण-पश्चिम को गई है। इसके दोनों ओर कई समानान्तर पहाड़ियां चली गई। रावल पिंडी से २५३ मील चलने के बाद यह पहाड़ी पर्वत का [illegible] धारण करने लगती है। मरी पहाड़ी का उत्तरी [illegible] क्रमशः है और देवदारू और अखरोट के पेड़ों [illegible] ढका है। इसके नीचे गहरी घाटी है। दक्षिणी [illegible] सपाट है। इधर चौड़ी और उपजाऊ घाटी है सब कहीं खेत हैं। इनके बीच बीच में गांव है वर्षा ऋतु में यहां की सड़कें गीली और [illegible] हो जाती हैं। कुछ वर्षा अप्रैल और मई मास होती है। सब से अधिक वर्षा जुलाई और [illegible] में होती है। अप्रैल और नवम्बर में ओले गिर जाते हैं। यहां भूचाल भी प्रायः प्रति आते हैं।

१८५० ई० में यह स्थान सेना के लिये गया। १८५१ ई० में यहां प्रथम बार अंग्रेजी आकर ठहरी। १८५३ में यहां स्थायी बारकें गदर में पड़ोस के धूंद लोगों का विफल [illegible] हुआ। गूजर खां कस्बे में तहसील थाना बाजार है। यहां से कभी कभी प्रति दिन १० सन घेहूँ बाहर भेजा जाता था। गूजर खां [illegible] पंजाब भर में सर्वोत्तम होता है। पहले यहां [illegible]

से नमक का कुछ व्यापार होता था। इस समय यह एक तहसील का व्यापार केन्द्र है।

कहुटा

एक तहसील का केन्द्र स्थान और एक बड़ा गांव है। यहां का व्यापार अधिक बड़ा नहीं है। इस तहसील के अधिक उपजाऊ दक्षिणी भाग का व्यापार गूजर खां के साथ होता है। पर यहा पांच सड़कें मिलती हैं। एक अच्छी सड़क यहां से सिहाला रेलवे स्टेशन को जाती है। दूसरी सड़क मरी को गई है। तीसरी सड़क पूंच को गई है। एक सड़क काश्मीर राज्य को गई है। एक सड़क कल्लार को गई है। यहां के छोटे बाजार में घी, ऊन और चमड़े का व्यापार होता है।

कल्लार में भी कुछ व्यापार होता है। यहीं पेशावर के समस्त सिक्खों के नेता तथा वेदी गुरु रहते हैं।

फड़वाला

यह गक्खर लोगों के प्राचीन किले के भग्नावशेष हैं। किला एक नंगी वीरान पहाड़ी पर बना था। इसके नीचे सोहन नदी बड़े वेग से बहती है। यहीं पर यह नदी पहाड़ी भाग को छोड़ कर मैदान में प्रवेश करती है। आज कल यहां कुछ ही गक्खर किसान हैं।

ज़िला काङ्गड़ा

सीमा, आकार, तथा भूरचना

पंजाब के जलन्धर विभाग का सबसे उत्तर-पूर्व का ज़िला, ३१°२१′ और ३२°५९′ उत्तरी, तथा ७५°७३′ व ७८°४२′ पूर्वीय के मध्य स्थित है। इसका क्षेत्रफल ९,९७८ वर्गमील है। इसकी उत्तरी-पश्चिमी सीमा पर चम्बा रियासत है; उत्तर में काश्मीर राज्य; पूर्व में तिब्बत दक्षिण पूर्व में बशहर रियासत, दक्षिण में शिमला ज़िले के कोटगढ़ के गांव, और कुम्हारसाईं, संगरी, सुकेत, मण्डी, और बिलासपुर की रियासतें, दक्षिण-पश्चिम में होशियारपुर का ज़िला, और पश्चिम में गुरदासपुर है। यह चारों ओर जलन्धर के द्वाबों के मैदानों से पूर्व में हिमालय की श्रेणियों के भीतर तिब्बत की सीमाओं तक फैला है, और इसमें दो स्पष्ट भूभाग सम्मिलित हैं जो बाहरी हिमालयों के दोनों ओर स्थित हैं और बिलकुल भिन्न प्राकृतिक दशाएं उपस्थित करते हैं। इन दो टुकड़ों में से पश्चिमीय टुकड़े का जिसमें काङ्गड़ा खास है, इस लेख में वर्णन है। यह भाग, जो बाहरी हिमालयों की धवला धार श्रेणी के दक्षिण में स्थित है, एक टेढ़े-मेढ़े त्रिकोण की तरह है इसका आधार होशियारपुर की सीमा पर है। चम्बा और मण्डी भी देशी रियासतें इसके ऊपरी भाग को एक पतली गर्दन की तरह बनाती हैं, जिसे बङ्गाहल कहते हैं, जो एक स्थान पर १० मील से भी कम चौड़ा है। इसके आगे, पूर्वीय भाग फिर एक बार एक धूपघड़ी की तरह फैला हुआ है, और कूलू विभाग का छूता है, जिसमें कूलू और सराज की तहसीलें लाहौल और स्पिति की मध्य हिमालय-प्रदेशी छावनियां हैं, जिनमें से प्रत्येक अलग से वर्णन करने योग्य है।

अनुमान से इसका क्षेत्रफल ९,१७८ वर्ग मील लगाया जाता है, जिसमें से २,९३९ काङ्गड़ा खास में हैं। जनसंख्या तथा कृषि की दृष्टि से यह ज़िले का सबसे महत्वपूर्ण स्थान है, यह दो चौड़ी और उपजाऊ घाटियां बनाता है। काङ्गड़ा घाटी धवला धार और लम्बे टेढ़े,मेढ़े निचली पहाड़ियों के समूह के बीच में (जो पहाड़ियां उत्तर-पश्चिम से दक्षिण-दक्षिण-पूर्व तक धवला धार से बिलकुल समानान्तर चलती हैं) स्थित है। दूसरी घाटी इन पहाड़ियों और सोला सिंघी श्रेणी के बीच में गई है, और इस प्रकार काङ्गड़ा घाटी के समानान्तर स्थित है। उत्तर-पश्चिम में इस ज़िले में बाहरी ढाल हैं जो सोला सिंघी के उत्तरी भाग हैं, और व्यास तथा चक्की के किनारों तक नीचे आ जाते हैं। यह दक्षिण में इस श्रेणी के पश्चिमीय ढालों को भी छूता है। काङ्गड़ा घाटी अपनी सुन्दरता के लिए

पहाड़ियों में भरे पड़े हैं। पहाड़ी और मैदान दोनों के पक्षियों का जीवन सुन्दर है, और यदि शिकार बहुत काफी नहीं है। कई प्रकार के पक्षी पाए जाते हैं। निचली तलैहटी में लाल जंगली मुर्गी मिलती है। मैदानों में साधारण भूरी पार्टिज और ऊपरी हिमालयों में बर्फ की तरह सफेद पार्टिज मिलती कोल और स्नाइप कभी-कभी काफी संख्या में जिले में आ जाते हैं। बतखें, हंसिनी और दूसरी जल-चिड़ियां व्यास में ऊपर गर्मी के शुरू और आखीर में दिखाई देती हैं। मछली पकड़ना किसी बड़े परिमाण में नहीं किया जाता। ठेकेदारों को ३६ मछली पकड़ने के स्थान दिये गए हैं जो अधिकतर व्यास पर हैं, इनमें से बहुत थोड़े पहाड़ी झरनों के निचले भागों में हैं।

जलवायु

कांगड़ा कस्बे का औसत तापक्रम ५३° शीतकाल में, ७०° बसन्त में, ८०° गर्मी में, और ६८° पतझड़ में रहता है। कांगड़ा खास के दक्षिणी भाग का तापक्रम इससे कहीं अधिक रहता है। जब कि धवला धार के बसे हुये भागों का ८° रहता है। बुखार और गटर खास बीमारियां हैं। चावल की विस्तीर्ण खेती होने के कारण जिससे सारी कांगड़ा की तलैटी दलदल में तब्दील हो गई है। तन्दुरुस्ती पर बहुत घातिक प्रभाव पड़ता है।

वर्षा विभिन्न भागों में अलग-अलग होती है। औसत वार्षिक वर्षा ७० इंच से अधिक हो जाती धवला धार के किनारे किनारे १०० से अधिक होती है। जब कि १० मील के अन्तर पर ७० के करीब रह जाती है और दक्षिणी भागों में करीब ५०। बड़ा बंगाहल में जो धवला धार के उत्तरी ओर है, अपने ही ढंग की जलवायु है। महान चन्द्रला के दक्षिणी ओर ही बादल खत्म हो जाते हैं और मानसून में दो या तीन सप्ताह कुहरा और बौछार पड़ती है। वर्षा कुलू में कांगड़ा खास की वर्षा से इसी प्रकार बहुत कम है। ३० से ४० इंच तक तक औसत रहता है, जब कि लाहुल और स्पिति करीब करीब वर्षा रहित है।

४ अप्रैल १९०५ को एक भयंकर भूकम्प आया लगभग २०,००० प्राणी नष्ट हो गये, जीवन की हानि कांगड़ा और पालमपुर तहसील में सबसे भारी हुई। धर्मशाला का स्टेशन और कांगड़ा का कस्बा नष्ट हो गये। कांगड़े का किला और मन्दिरों को कभी न पूरी होने वाली हानि हुई और भवन निर्माण कला से पूर्ण बहुत दूसरी इमारतों को कुछ न कुछ नुकसान पहुँचा।

कांगड़ा खास की पहाड़ियां कई सदियों से अनगिनत छोटे-मोटे राजाओं का राज्य बनाती रही हैं. जिनमें से सभी जलन्धर के प्राचीन कटोच (राजपूत) राजाओं के वंशज हैं। महाभारत के इतिहास के अनुसार, उनका राजवंश प्रथमतः सतलज और व्यास के मध्य के देश में ईसवी सन् से १,५०० वर्ष पूर्व स्थापित हुआ। ईसा के बाद सातवीं शताब्दी में ह्वान शांग, चीनी बौद्ध यात्री ने उस समय जालन्धर राज्य को अविभक्त पाया। कुछ काल के अनन्तर. शायद मुसलमानी आक्रमण होने पर कटोच के राजा पहाड़ियों में भगा दिये गये, जहां कांगड़ा पहले से ही उनके मुख्य गढ़ों में से एक था और उनके सीमित राज्य बाद में प्रायः बहुत से छोटे मुखियों ने बांट लिये इनमें से नूरपुर, सीबा, गोलेर बंगाहल और कांगड़ा खास में शामिल हैं। लगातार आक्रमण होते रहने पर भी छोटे हिन्दू राज्य अपनी हिमालय की घाटियों में सुरक्षित अत्याचारी मुसलमानी शक्ति का बहुत दिनों तक मुकाबिला करते रहे। १००९ में नगर कोट मन्दिर की दौलत ने गजनी के महमूद को आकर्षित किया।

उसने हिन्दू राजाओं को पेशावर में हरा दिया, कांगड़ा का दुर्ग हथिया लिया, और सोने, चाँदी व हीरों की खूब लूटमार मचाई। किन्तु ३५ वर्ष बाद पहाड़ी लोग मुसलमानों के विरुद्ध उठ खड़े हुये। किले पर हमला करके उसे ले लिया, इसमें दिल्ली के राजा का भी हाथ था और वैसी ही मूर्ति बनवा ली जैसी महमूद ले गया था। इस समय से कांगड़ा १३६० तक के साधारण इतिहास में नहीं आता जब शहंशाह फीरोज तुगलक इसके विरुद्ध फिर एक सेना लाया। राजा ने उसका आधिपत्य स्वीकार कर लिया, और उसे अपने राज्य अपने पास रखने की आज्ञा मिल गई परन्तु मुसलमानों ने एक बार और मन्दिर को लूटा, और प्रसिद्ध

मूर्ति को मक्का भेज दिया, जहां यह आम रास्ते पर कुचली जाने के लिए डाल दी गई।

दो सौ वर्ष के बाद, १५५६ में, अकबर स्वयं एक सेना के साथ पहाड़ियों में आया और स्थायी रूप से कांगड़ा के किले को हथियाने में सफल हुआ।

उपजाऊ घाटी शाही घाटी बन गई और सिर्फ ऊपर पहाड़ियाँ देशी सरदारों के अधिकार में रह गईं। अकबर के प्रसिद्ध मन्त्री, टोडरमल की स्पष्ट भाषा में 'उसने गोश्त काट लिया था और हड्डियाँ रहने दी थीं।' फिर भी राजधानी के दूर होने के कारण तथा पहाड़ी जीवन की शक्ति के कारण राजपूत राजाओं ने विद्रोह किया और जब तक शाही सेनाएँ दो बार भगा न दी गई थीं तब तक कांगड़े का किला भूखों न मरा। तीसरी बार स्वयं खुर्रम की अध्यक्षता में (१६२०) एक सेना आई जिसके आगे इसने हथियार डाल दिए। आखिरी अवसर पर बाइस सरदारों ने आधीनता स्वीकार कर ली और चौथ देने का वायदा किया, और आगरे को आदमी भेजना मंजूर किया। एक बार जहांगीर ने घाटी में एक ग्रीष्म निवास-स्थान बनाना चाहा और प्रस्तावित महल का स्थान अब भी गरगरी के गाँव की जमीन में है। शायद काश्मीर के बढ़कर आकर्षण अधिक (जिसे सम्राट ने थोड़े समय पश्चात् देखा) के कारण उसने प्रथम प्रस्ताव रद्द कर दिया। जब शाहजहाँ गद्दी पर बैठा तो पहाड़ी राजाओं ने शान्तिपूर्वक सहायक राजा बनना स्वीकार कर लिया था और सम्राट के आदेश तत्काल माने जाते थे। सनदें अब भी मौजूद हैं, जो अकबर और औरंगजेब के शासनकाल में दी गई थीं। इनके अनुसार व्यक्ति बहुत से न्याय के तथा माल के दफ्तरों में नियुक्त हुये थे, और काजी कानूनगो या चौधरी जैसे स्थानों पर काम करते थे। कुछ उदाहरणों में खान्दान के वर्तमान प्रतिनिधि अब भी उन अधिकारों का लाभ उठाते हैं जो उनके पूर्वजों को मुग़ल सम्राटों द्वारा दिए गए थे। ये लोग अब भी उन नागचार खितायों को लिए हुए हैं, यद्यपि उन्हें कोई कर्त्तव्य नहीं पड़ता।

मुसलमानों के उन्नतिकाल में पहाड़ी राजाओं के साथ अच्छा वर्ताव किया जाता था। हमेशा उन्हें काफी अधिकार मिले रहते थे। और वे लम्बे भूप्रदेशों पर निष्कण्टक राज्य करते थे। परन्तु ऐसे भूप्रदेश बहुत थोड़े रह गए थे। उन्होंने किले बनाये एक दूसरे से लड़ाइयाँ लड़ीं, और छोटे-मोटे राजाओं के से कर्त्तव्य निभाते रहे। किसी सरदार के मर जाने पर उसका उत्तराधिकारी कुछ फीस देकर उसकी उपाधि पा जाता था, जिसके साथ आगरे या दिल्ली से आदरसूचक पोशाक भी मिलती थी। पहाड़ी राजाओं की स्वामिभक्ति ने उनके विजेताओं का प्रेम और विश्वास पा लिया था और प्रायः उन्हें भयङ्कर कार्य सौंपे जाते थे, और वे साम्राज्य की सेवा में बड़े विश्वासपात्र स्थानों पर नियुक्त किये जाते थे। इस प्रकार शाहजहां के जमाने में। १६४६ जगत मन्द नूरपुर का राजा १४,००० राजपूतों का शिरोमणि अपने देश उठा, और बल्ख और बदख्शाँ के विरुद्ध किन्तु सफल संग्राम किया फिर औरंगजेब के के प्रारम्भिक काल में (१६६१), राजा

परन्तु १७८५ में इसे सन्सार चन्द को दे दिया, जो कांगड़ा का अधिकार-सिद्ध राजपूत राजा था, जिसे इस प्रकार रियासत अकबर द्वारा हथियाई जाने के लगभग दो सदियों बाद वापिस मिली। इस राजा ने, कड़ी कार्रवाइयों द्वारा, अपने आपको तमाम कटोच प्रदेश में शिरोमणि बना लिया। वह सारी पड़ोस की रियासतों में अपने साथी सरदारों से चौथ लेने लगा। प्रतिवर्ष नियुक्त अवसरों पर, इन राजाओं को उसके दरबार में उपस्थित होना पड़ता था, और जब कभी वह लड़ाई के लिए फ़ौज ले जाता था तो इन्हें उसके साथ सेना सहित जाना पड़ता था। २० वर्षों तक उसने इन पहाड़ियों पर सिरमौर बन कर राज्य किया, और अपना नाम ख्याति की उस उच्च चोटी तक पहुँचा दिया जिस तक उसके वंश का कोई पूर्वज कभी न पहुँच पाया था। उसने किसी कारण वश अपने आपको सिक्खों का मुक़ाबिला करने में असमर्थ पाया, और जब उसने १८०३ व १८०४ में, दो बार सिक्ख राज्यों पर अपनी सेना उतारी, तो उसे रणजीतसिंह ने भगा दिया। १८०५ में सन्सार चन्द ने बिलासपुर की पहाड़ी रियासत (कहलूर) पर आक्रमण किया, उसने गुरखों की सहायता ली। गुरखे पूर्वमेव घाघरा और सतलज के मध्य के चौड़े प्रदेश के मालिक बने बैठे थे। गुरखों ने इसकी सुन ली और सतलज पार करके मई, १८०६ में महल मोरी पर कटोचों पर हमला बोल दिया। आक्रमणकारियों को पूरी सफलता मिली, कांगड़ा के पहाड़ी देश के अधिकतर भाग पर उनका अधिकार हो गया, और वे उन राजपूत सरदारों से जिनके पास शेष भाग था निरन्तर युद्ध करते रहे। जनता ने भागकर मैदानों में शरण ली, जब कि छोटे-मोटे राजाओं ने अपनी ओर से अराजकता की करतूतों द्वारा साधारण अशान्ति की आग में घी डाल दिया। गुरखा आक्रमण के भय अब भी लोगों की याद में दहकते हैं। देश में ख़ून की धार बह चली, खेतों पर अनाज का एक दाना भी देखने को न रह गया, और घास उग आई तथा चीते सुनसान क़स्बों की सड़कों पर फिरने लगे। अन्त में, अराजकता के ३ वर्ष के उपरान्त, संसार चन्द ने सिक्खों की सहायता लेने का निश्चय किया। रणजीतसिंह जो सदा आक्रमण करने के लिये हर मौके का लाभ उठाने को तय्यार रहते थे, कांगड़ा में घुसे और अगस्त, १८०९ में गुरखों से जंग छेड़ दी। लम्बी और भयङ्कर लड़ाई के उपरान्त, महाराजा सफल हुए, और गुरखों ने सतलज के आगे के अपने जीते हुए राज्य छोड़ दिये। रणजीतसिंह ने पहले तो सन्सार चन्द को कांगड़ा के क़िले और ६६ गांवों के अतिरिक्त उसके सारे राज्य का अधिकारी बना दिया, गाँव और क़िला उन्होंने सैनिक सहायता के लिए रखा, परन्तु उन्होंने धीरे-धीरे सारे ही पहाड़ी सरदारों का थोड़ा-थोड़ा करके राज्य ले लिया। सन्सार चन्द १८२४ में मर गया, वह लाहौर राज्य के आधीन राजाओं में प्रमुख था। उसका पुत्र, अनरुद्ध चन्द, उत्तराधिकारी बना, परन्तु चार वर्ष राज्य करने के उपरान्त अपना सिंहासन छोड़ कर, हरद्वार चला गया, उसने रणजीतसिंह की यह मांग न स्वीकार की कि सिक्ख मन्त्री ध्यान सिंह के एक लड़के को अपनी बहन ब्याह दे। १८२८ में अनरुद्ध के भागते ही, रणजीतसिंह ने उसके सारे राज्य को मिला लिया, और तभी शक्तिशाली कांगड़ा रियासत का अन्तिम भाग अन्त में सिक्खों के अधिकार में चला गया।

कांगड़ा प्रथम सिक्ख-युद्ध के अन्त में ब्रिटिशों के पास चला गया (१८४६ में), परन्तु क़िले का अधिकारी कुछ समय के लिए उसी ओर से रहा। जब मुल्तान में अप्रैल, १८४८ में विद्रोह हुआ, तो मैदान के लोगों ने आ-आकर पहाड़ी सरदारों को विद्रोह करने के लिए भड़काया, और उसी वर्ष अगस्त के अन्त में, रामसिंह, एक पठानिया राजपूत ने साहसी लोगों का एक गिरोह इकट्ठा किया और शाहपुर के क़िले पर टूट पड़ा। कुछ ही समय में, कटोच के सरदार ने ज़िले की पूर्वीय सीमा पर विद्रोह कर दिया, और शीघ्र ही जसवान व दतारपुर के राजा उसका साथ देने लगे, और सिक्ख पुजारी, बेदी विक्रमासिंह भी उसकी तरफ़ हो गया। किसी प्रकार, विद्रोह शीघ्र ही दबा दिया गया, और गुजरात की विजय के उपरान्त, सिर उठाने वाले सरदारों को अल्मोड़े के लिए देश निकाले का दण्ड

मिला, जब कि कांगड़ा शान्तिपूर्वक एक ब्रिटिश जिला बन गया। १८५७ में विद्रोह छिड़ जाने पर, कुछ झगड़े कुलू के विभाग में भी हुए। परन्तु कड़ी देखभाल की कार्रवाई ने (जो स्थानीय अधिकारियों ने की) और गुण्डों की पकड़ा-धकड़ी ने और विद्रोह को दबा दिया। कांगड़ा और नूरपुर की देशी सेनाओं के हथियार छीन लिए गये। यह काम शान्ति से हुआ, और इसमें कोई विरोध नहीं खड़ा हुआ। तब से जिले की शान्ति को भङ्ग करने वाला कोई भी काम नहीं हुआ है।

कारीगरी

कांगड़ा से अधिक प्राचीन जिला कोई भी नहीं है। पठयार का शिलालेख ईसा से पूर्व तीसरी शताब्दी का कहा जाता है, और कन्हियाड़ा का ईसा के बाद दूसरी सदी का। कांगड़ा क़स्बे के प्रसिद्ध क़िले की तारीख़ निश्चित करना असम्भव है। इसमें का एक मन्दिर १००९ में महमूद्ग़ज़नी ने लूट लिया था, और एक अपूर्णतः पठनीय शिलालेख जो पहले क़िले के द्वारों में से एक के बाहर था और अब लाहौर के अजायबघर में रखा है, ४०० वर्ष (कम से कम) पूर्व के समय का बताया जाता है। कांगड़ा का इन्द्रेश्वर का छोटा मन्दिर नवीं शताब्दी का है। किराग्राम का बैजनाथ का सुन्दर मन्दिर ४० वर्ष पूर्व तक उसी समय का बताया जाता था, परन्तु उसके बाद की खोजों से पता चलता है कि यह ३ या ४ सदी पहले का है। भवन, कांगड़ा के बहिः-प्रदेश, में जो वर्तमान बजरेश्वरी देवी का मन्दिर है, वह आजकल के ढंग पर बना हुआ है, परन्तु इसमें एक पुरानी इमारत, शायद १४४० के समय को, के खण्डहार हैं। इसे यह ख्याति मिली है कि यह उस मन्दिर के बाद का मन्दिर है जिसे महमूद ने लूटा था, परन्तु यह न्यायपूर्ण बात नहीं है। कांगड़ा में पाए जाने वाले खण्डहर यह सिद्ध करते हैं कि कभी एक अच्छा खासा जैनियों का केन्द्र था। नूरपुर में लिले में, जो सोलहवीं और सत्रहवीं शताब्दी में बना था, एक विचित्र लकड़ी का मन्दिर है, और १८८६ में उससे बहुत पहले का एक मन्दिर खोदा गया था। उसमें पंजाब में अब तक पाई गई दस्तकारी से विभिन्न दस्तकारी है। मसरूर में, देहरा तहसील में अनिश्चित समय के कुछ चट्टान-मन्दिर हैं। कुलू घाटी में, प्राचीन काल की मुख्य चीजें बजौरा के मन्दिर हैं। उनमें से एक, दोनों में से शायद बड़ा वाला, किसी सीमा तक मिट्टी और कंकड़ों से साफ़ कर दिया है जिनमें यह गड़ा हुआ था। दूसरा जिसमें बौद्धों की कारीगरी दिखाई गई है, और जो ग्यारहवीं सदी से चला आता है, अत्यन्त सुन्दर खुदावटों से सुसज्जित है। कांगड़ा कस्बे का क़िला और उसके मन्दिरों को १९०५ के भूकम्प में कभी न पूरी होने वाली हा[illegible] हुई।

जनसंख्या

जिले की आबादी इन चार मर्दुमशुमारियों [illegible] यह थी। (१८६८) ७४३, ८८२, (१८८१) ७३० ८४५, (१८९१) ७६[illegible],०३०, और (१९०१ ७६८, १२४। ये लोग ३ कस्बों और ७१५ गांवों हैं। यह सात तहसीलों कांगड़ा, नूरपुर, हमी[illegible] डेरा गोपीपुर, पालमपुर, कुलू, और सराज विभक्त है; जिनमें से पहली कांगड़ा खास में अन्तिम दो कुलू विभाग बनाती हैं। इनके [illegible] उन्हीं स्थानों में हैं, जिनके ऊपर इनमें से हरे का नाम पड़ा है, सिवाय कुलु और सराज जिनके दफ्तर सुल्तानपुर और बन्जर में [illegible] हैं। क़स्बे धर्मशाला की म्युनिसिपैलिटियां हैं, जिले, कांगड़ा, और नूरपुर का दफ़्तर हैं।

कांगड़ा जिले का क्षेत्रफल ९९७८ वर्ग मील इसमें ३ कस्बे और ७१५ गांव हैं।

कांगड़ा खास में हिन्दुओं की संख्या ६०८, अथवा कुल की ९४ प्रतिशत है; मुसलमानों २८,६८५, अथवा ६ प्रतिशत और सिक्ख, १,१[illegible] पहाड़ियों में खेती के अयोग्य बहुत भूमि है, कारण आबादी की सघनता केवल ७७ मनुष्य वर्ग मील है; पालमपुर तहसील में ३०० है कुलू में ६५.४; परन्तु यदि केवल खेती के भूमि में देखा जाय, तो सघनता ८३४ है, [illegible] में सभी से अधिक है। यहां के लोग बहु विभिन्न भाषाएँ बोलती हैं जो पहाड़ी हैं। पहाड़ियों की भाषा कहते हैं।

जातियां और उद्यम

आबादी की विशेषता यह है कि हिन्दुओं ने मुसलमानों के ऊपर सिक्का जमा रक्खा है। मुसलमानों की बस्ती कहीं-कहीं पर ही है। इस परिस्थिति में हिन्दुओं की जातियों का—वर्णों, विभागों, और रीति-रिवाजों का वर्णन दिलचस्प हो गया है।

ब्राह्मण (१०९.०००) कुल जन संख्या के लगभग ⅙ हैं। उनमें से लगभग सभी अपने आपको सारस्वत वंश का बताते हैं, परन्तु उनमें बहुत से छोटे-छोटे वर्ण विभाग हैं। प्रथम विशेषता तो यह है कि कुछ ब्राह्मण तो खेती का पेशा करते हैं, परन्तु अन्य ब्राह्मण खेती से डेढ़ हाथ जोड़ते हैं। वे लोग जो वर्ण के उचित उद्यमों में लगे हुए हैं शुद्ध ब्राह्मण समझे जाते हैं, जब कि दूसरे लोग जनता द्वारा उसी आदर की दृष्टि से नहीं देखे जाते।

राजपूतों की संख्या ब्राह्मणों से भी ज्यादा है. १५४,००० लोग अपने आप को आदर पूर्ण राजपूत बतलाते हैं। कटोच के राजा अपने खून को हिन्दुस्तान में सबसे राजसी कहते हैं, और उनके पक्षपात तथा वर्ण विभाग एक हजार वर्ष पुराने हैं। कटोच लोग बहुत थोड़े हैं, गिनती में कुल, ४,०००। राठी (५१,०००) घाटी की दो बड़ी खेतिहर जमातों में से ऊंचे हैं, और मुख्यतः नूरपुर और हमीरपुर तहसीलों में पाए जाते हैं। दूसरी जमात घिर्थों की है (१२०,०००), जो शूद्रों के समान हैं। सारे समतल और सिञ्चित भूभागों में, जहां कहीं भूमि उपजाऊ है, और उपज काफी, घिर्थ भरे पड़े हैं; जब कि घटिया उच्च भूमि में, जहां फसलें कम हैं और किसान को कठिन परिश्रम करके भूमि को ठीक करना पड़ता है, राठी अधिक संख्या में हैं। घाटियों में राठी को पाना उतना ही मुश्किल है जितना घिर्थ को पहाड़ियों में। दोनों अपनी-अपनी बस्तियों में शेर हैं, और भिन्न-भिन्न स्थानों पर उनकी विभिन्न आदतें और बातें हैं, इसी कारण उनके विचित्र चरित्र और शारीरिक बनावट अपने ही ढंग के हैं। राठी आम तौर से सुन्दर होते हैं। उनकी बनावट सुडौल और सुगढ़ होती है; उनका रंग हमेशा साफ होता है, और उनके अंग फुर्तीले, क्योंकि कड़ी भूमि उन्हें मजबूत बनाती है। इसके विपरीत घिर्थ काले रंग के और बेढ़ंगी बनावट के होते हैं, उनका शरीर छोटे कद का और रोगी होता है, और अकसर गटर की बीमारी उन्हें होती रहती है। राठी लोग ध्यान पूर्वक तथा देखभाल से खेती करने वाले हैं, उनकी औरतें खेत की मेहनत में नहीं के बराबर भाग लेती हैं। घिर्थ लोग पालम, कांगड़ा और रिहलू की घाटियों में अधिक हैं। इसके अलावा वे हल दून या हरीपुर घाटी में भी पाए जाते हैं, और अन्यत्र तो जिले के हर भाग में फैले हुए हैं, आम तौर से उनके पास सबसे अधिक उपजाऊ भूमि और पहाड़ियों में सबसे खुले हुए स्थान हैं। वे सब से अधिक सरल काम करने वाले तथा कभी न थकने वाले लोग हैं।

पहाड़ियों में धार्मिक लोगों में से, सबसे उल्लेखनीय गोंसाईं (१,०००) हैं, जो मुख्यतया नादऊँ तथा ज्वाला मुखी के पास में रहते हैं; परन्तु जिले भरमें थोड़ी संख्या में भी बिखरे हुए हैं। उनमें से बहुत से पहाड़ियों में पूंजीवादी तथा व्यापारी हैं, और वे काम का बीड़ा उठाने वाले तथा सीधे-सच्चे मनुष्य हैं। उनकी जाति का यह नियम है कि वे फुटकर का व्यापार नहीं करते और वे सदा बड़ा व्यापार करते हैं। इस प्रकार अफीम का व्यापार तो बिल्कुल उन्होंने हथिया लिया है, जिसे वे कुलू में खरीद लेते हैं और नीचे पंजाब के मैदानों में ले जाते हैं। वे चरस, शाल, ऊन, और कपड़े में भी तिजारत करते हैं। उनका व्यापार हैदराबाद जैसे दूरवर्त्ती स्थानों से होता है, और सचमुच में समस्त भारतवर्ष (अधिकतर दक्षिण में) के साथ होता है।

पहाड़ी फ़िर्कों में सबसे खास गद्दी हैं (९,०००) कुछ तो घाटियों में नीचे चले गये हैं। धवलाधार के तल के समीप रहते हैं, परन्तु अधिकतर ऊपर ऊँचाई पर रहते हैं। वे ३,५००, से ४००० फुट की ऊँचाई से ७,००० फुट तक की ऊँचाई पर पाये जाते हैं, ७,००० से अधिक ऊँचाई पर खेती नहीं के बराबर होती है। पञ्जाब के मैदानों से भाग कर शरण लेने वालों की सी रीति इनके यहां भी है।

ये कहते हैं कि इनके पूर्वज खुले हुये देश से मुसलमान आक्रमणों के भय से बचने के लिये भाग गये थे और फिर उन्होंने इन श्रेणियों में आश्रय लिया, जो उस समय बिलकुल निर्जन थीं। गद्दी का नाम एक साधारण नाम है जिसमें ब्राह्मण और खत्री और थोड़े से राजपूत राठी और ठाकुर सम्मिलित हैं। परन्तु अधिकतर लोग खत्री हैं। गोसाइयों के अतिरिक्त वाणिज्य करने वाले फिर्के खत्री ७०००) और ६००० शूद्र हैं। शागिर्द पेशे वालों में से चमार चमड़े का काम करने वाले सबसे अधिक संख्या में हैं ५७,०००। लगभग ७७ प्रतिशत जनसंख्या कृषि में लगी हुई है।

क्रिश्चियन मिशन

चर्च मिशनरी सोसाइटी का एक स्टेशन कांगड़ा कसबे में है, जो १८५४ ई० में स्थापित हुआ था। इसकी एक शाखा का कार्यालय धर्मशाला में है और वहां लाहुल में कीलांग पर एक स्टेशन मोरावियां मिशन का भी है जो १८५७ में स्थापित हुआ था। एक अमरीकन यूनाइटेड प्रसबेटीरियन मिशन सराज में है। जिले में १०१ में २०३ भारतीय ईसाई थे।

साधारण कृषि की दशाएँ

कांगड़ा तहसील में नीचे की भूमि बड़े बड़े कंकड़ों की परतों पर ठहरी हुई है। ये कंकड़ मुख्य श्रेणियों से बह बहकर नीचे चले गये हैं और ऊपर की सतह, जिसमें टूटी-फूटी ग्रेनाइट तथा हाल की डेट्रीटूस की चट्टानों के टुकड़े हैं, अत्यन्त उपजाऊ है। दूसरी श्रेणियों के आस पास की भूमि यद्यपि बहुत अच्छी किस्म की है उससे कम उपजाऊ है। क्योंकि यह जरा सख्त है और रेत इसमें मिला हुआ है। यह हलकी उपजाऊ जमीन है। जो आसानी से तोड़ी जा सकती है और पत्थर तो इसमें बिलकुल नहीं हैं। तीसरे प्रकार की जमीन वहां पाई जाती है जहां कहीं टर्शियरी काल का निर्माण है। यह ठंडी लाल रंग की रेह है और कम उपजाऊ है, इसमें थोड़े से पानी द्वारा घिसे हुये छोटे कंकड़ हैं, इस भूमि में एक भी पेड़ नहीं है और इसकी उपज चना और कई प्रकार की दालों तक सीमित है जब कि पहली वाली दो भूमियों में पहाड़ियों के पास की जमीन में बहुत से जंगल हैं। और हर प्रकार की फसल उगाई जाती है। खेती वाला क्षेत्र मैदानों में बँटा हुआ है जो साधारणतया चारों ओर से घिरे हुये नहीं होते हैं। परन्तु कुछ कुछ भागों में झाड़ियों या पत्थर की दीवारों का घेरा बना हुआ है। कांगड़ा घाटी में जहां चावल की खेती होती है। खेत एक के बाद दूसरे चबूतरे पर बने हुये हैं। चबूतरे समतल और घेरेदार हैं। जहां जमीन का ढाल तेज है वे बिलियर्ड की मेज से बड़े नहीं हैं। डेरा और नूरपुर तहसीलों के पश्चिम में जहां की भूमि कम ऊँची नीची है। खेतों का आकार बड़ा है और चौड़े ढलवां खेत, लाल भूमि और घनी हरी झाड़ियां इतनी सुन्दर हैं कि दृश्य बिल्कुल डेवनशायर से मिलता जुलता है। बहुत से भागों में और विशेषकर कांगड़ा घाटी में बहुत से खेतों में दो फसलें तयार होती हैं।

कुलू खास में ऊँचाई ही विशेष कारण है जि[illegible] पर बोई हुई फसलों की प्रकृति निर्भर है थोड़े [illegible] ही गांव ३,००० फुट नीचे हैं और कुछ तो ९,०० फुट तक ऊँचे हैं। दोनों कांगड़ा और कुलू खास बोने का समय ऊँचाई के साथ परिवर्त्तित होता है वसन्त की फसल सितम्बर से दिसम्बर तक [illegible] जाती है और पतझड़ की फसल अप्रैल से जुला[illegible] तक। सारा का सारा लाहुल और स्पिती दिसम्ब[illegible] से अप्रैल के अन्त तक बर्फ से ढका रहता

मुख्य कृषि-संख्या और मुख्य फसलें

बोने का काम जमीन साफ होते ही शुरू हो [illegible] है। तमाम जिले के लिये पतझड़ की फसल [illegible] महत्वपूर्ण है, जो ५३ प्रतिशत क्षेत्र की फ[illegible] (१९०३४) है।

मैदानों में तो लगभग सारी भूमि ही संस्था गांव की जातियों द्वारा अधिक है, परन्तु यहां जमीन पर व्यक्तिगत कृषकों का अधिकार है जि[illegible] अधिकारों का आरम्भ राजा की सनद द्वारा [illegible] जिसके अनुसार वे राजा के एक खेतों के कि[illegible] बन सकते थे। कुलू में ही जङ्गल और [illegible] योग्य तथा खेती की जाने वाली जमीनें नाप ली हैं, जिनका योगफल १,३४२ वर्ग मील होता है

१९०३-४ के मालगुजारी के रजिस्टरों द्वारा प्राप्त विशेषताओं के अनुसार ३,८५७ वर्गमील क्षेत्रफल है, जैसा नीचे दिखाया गया है।

बसन्त की कटाई की मुख्य फ़सल गेहूँ है जो ३४२ वर्ग मीलों में है, जौ ९७ वर्ग मीलों में और चना केवल ४२ में होता है। मक्का और चावल की कटाई खास तौर से पतझड़ में होती है, जो क्रमशः २२३ और १६४ वर्ग मीलों में बोये जाते हैं। दालें १०० वर्ग मीलों में बोई जाती हैं। ज्वार बाजरे में मन्डल इटली का ज्वार-बाजरा और चीना सब से खास हैं। कपास ६,०२६ एकड़ों में होती थी। चाय कांगड़े की एक खास उपज है, और १५ वर्ग मीलों में चाय ही चाय होती है। वहाँ ३४ बाग हैं जो योरोपीयों के हैं, और अनुमान लगाया जाता है कि वर्ष में दस लाख पौण्ड से अधिक की चाय पैदा होती है। जब कांगड़ा ब्रिटिश राज्य में मिला लिया गया तो आलुओं की बुआई भी शुरू हुई और अब तो ऊँची-ऊँची पहाड़ियों में आलुओं की खूब खेती होती है। गद्दी किसानों के घरों के चारों तरफ़ के खेतों में जहां पहले मक्का गेहूँ, या जौ बोया जाता था। (परन्तु उससे खेतों के मालिकों के परिवारों के खाने का गुज़ारा मुश्किल से होता था) अब आलू बहुतायत से होता है। कुलू खास में अफ़ीम एक खास फ़सल है, जो २,१०२ एकड़ों में होती है। कुलू की जलवायु खास तौर से सभी प्रकार के योरोपीय फलों व तरकारियों की पैदावार के अनुकूल है, और बहुत से योरोपीय पौधे लगाने वाले नासपाती और सेबों में बड़ी तिजारत करते हैं। लाहुल में जौ, गेहूँ, मटरें और बकव्हीट मुख्य फ़सलें हैं। और स्पिती में जौ।

खेती में सुधार

खेती के खास सुधार ये हुए हैं कि चाय और आलू होने लगे हैं। खेती का क्षेत्रफल लगभग ५ प्रतिशत बढ़ गया। इसका कारण व्यक्तियों का उद्योग था जिन्होंने अपने खेतों के पास की ऊसर भूमि का उपयोग किया था, परन्तु बहुत अधिक वृद्धि होने की सम्भावना नहीं है। सरकार से ऋणों की अधिक मांग नहीं है, १९०३-४ में अन्त होने वाले ५ वर्षों में ऐग्रिकलचरिस्ट्स लोन्स ऐक्ट के अनुसार केवल २०८ रुपये की वृद्धि हुई थी।

चौपाए, टट्टू और भेड़ें

शुद्ध नस्ल के चौपाए कम हैं परन्तु मजबूत हैं, और उन्हें सुधारने के प्रयत्न, हिसार से बैलों का मँगाना, सन्तोषपूर्ण नहीं हुए हैं, क्योंकि हिसार के बैलों के लिए अनुकूल यहां की जलवायु नहीं है, और वे इस योग्य भी नहीं हैं कि उनका सङ्गम छोटी पहाड़ी गायों से कराया जाय, धन्नी नस्ल के कुछ बैल, थोड़े ही वर्ष हुए झेलम जिले से मँगाए जाने लगे हैं, और यह उम्मीद है कि वे शीघ्र ही अधिक हितकर सिद्ध होंगे। गूजर ही ऐसे लोग हैं जो दूध और घी बेचने की तिजारत करते हैं, और जो भैंसों के झुंड पालते हैं, इनमें से कुछ का तो जिले में निश्चित निवास-स्थान है और वे अपने चौपायों को पड़ोस की ऊसर भूमि में चराते हैं जब कि दूसरे लोग अपने झुंडों को लिए घूमते हैं, अपनी गर्मी ऊँची श्रेणियों पर बिताते हैं और जाड़ा निचली पहाड़ियों के जंगली भागों में। भैंसों के झुण्डों को कुलू विभाग में नहीं जाने दिया जाता। लाहुल के चौपाए तिब्बत के यॉक और हिमालय की नस्ल के चौपायों की मिली हुई नस्ल के हैं। कांगड़ा खास में भेड़ें और बकरियों पर गद्दियों की चरवाहा जाति की गुजर खास तौर से निर्धारित है। ये गद्दी अपने झुण्डों को लिए घूमते हैं, जाड़ा निचली पहाड़ियों में बनों में बिताते हैं, बसन्त में (गर्मी शुरू होने से पहले) ऊपर बर्फ़दार श्रेणी की तरफ़ चले जाते हैं, और गर्मियों की भारी वर्षा से बचने के लिये इधर-उधर चले जाते हैं। बड़े झुंड कुलू और सराज तहसीलों में भी रखे जाते हैं। वहां जिले में बहुत थोड़े टट्टू हैं और खच्चर भी अधिक नहीं हैं, कांगड़ा और कुलू खास के टट्टू अच्छे नहीं हैं, परन्तु लाहुल और स्पिती के सख्त पैरों के लिए मशहूर हैं। एक टट्टूचर जिला बोर्ड रखता है।

सिंचाई

१९०३-४ में जितने कुल क्षेत्रफल में खेती हुई थी, उसमें से १८३ वर्गमील या २० प्रतिशत में

भूमि से प्राप्त होने वाली आय का लाभ हुआ, जो पहले राज्य की हुआ करती थी।

१८४६ में लार्ड लारेन्स ने एक छोटा समझौता किया, जो बिल्कुल सिक्खों के किराए के रजिस्टर पर आधारित था। उन्होंने १० प्रतिशत की कमी कर दी। उस समय लार्ड लारेन्स जलन्धर द्वाब के कमिश्नर थे। इनके साथ असिस्टेन्ट कमिश्नर, लेफ्टीनेन्ट लेक ने भी काम किया था। प्रथम नियमिक समझौते ने जो १८४९ में किया गया, 'सूखी भूमि' पर की मांग १२ प्रतिशत कम कर दी, परन्तु 'तर' भूमि पर पहले वाला ही कर रखा। १८६६-७१ में समझौते में कुछ परिवर्तन हुए, उसका उद्देश्य यही था कि अधिकारों का सही रिकार्ड तैयार किया जाय, परन्तु कर में १८८९-४ तक कोई परिवर्तन नहीं हुआ, उसके बाद ही १९ प्रतिशत की वृद्धि का ऐलान किया गया। दर १ रुपया ५ आना ४ पाई से लेकर १४ आने ७ पाई तक थी १९०३-४ में करों सहित कुल मांग, करीब १०७ लाख की थी। मालिकों के खेत का औसत क्षेत्रफल दो एकड़ है। जिले में बहुत सी बड़ी जागीरें हैं, जिनमें से मुख्य लम्बाग्राऊं, नादऊँ और दादो सीबा कांगड़ा खास में हैं और वजीरी रूपी कुलू में।

जबर्दस्ती काम कराने का एक तरीका जिसे बिगार कहते थे कांगड़ा की पहाड़ियों में ४० वर्ष पूर्व तक जारी था और अत्यन्त प्राचीन कहा जाता था। सारे वर्ग जो जमीन जोतते थे, समझौते के के अनुसार अपने परिश्रम का कुछ भाग राज्य के कार्य के लिये लगाने को बाध्य थे। पूर्व के राजवंशों समय में, जनता को हमेशा जबर्दस्ती जहां कहीं शासक चाहता वहां काम करने को भेज दिये जाते थे। परन्तु काम करने का समय सबके लिये नियत था। यह नीति इतनी प्रचलित थी कि दूसरे काम करने वाले लोग जिनका जमीन से कोई सम्बन्ध नहीं था। जबर्दस्ती के साथ अपने समय का कुछ भाग जनता की सेवा में लगाते थे। ब्रिटिश सरकार के आने पर यह तरीका जारी रहा और यात्रियों का सामान ढोने और उनके डेरों के लिये घास और लकड़ी पहुँचाने के काम लिये जाने लगे। परन्तु यह पद्धति १८८४ में कांगड़ा खास में बिल्कुल मिटा दी गई।

स्थानीय तथा म्युनिसिपल

जिले में तीन म्युनिसिपैलिटियां, धर्मशाला कांगड़ा और नूरपुर हैं। इनके बाहर स्थानीय कामों को एक जिला बोर्ड भी देखते हैं जिनके अन्दर के क्षेत्र उन्हीं नामों की तहसीलें हैं। उनकी आय का मुख्य साधन है स्थानीय दर कांगड़ा में जमीन की मालगुजारी पर ८ रु० ५ आ० ४ पा० का कर कुलू में १० रु० ६ आ० ८ पा० का और रियती की वजीरी में ७ रु० ८ आ० १० पा० का। १९०३-४ का व्यय १४५,००० रु० था। मुख्य खर्च सार्वजनिक कार्यों में हुआ था।

पुलिस और जेल

जिला १५ थानों में विभक्त है। १३ कांगड़ा खास में और २ कुलू में है। पुलिस के आदमियों की संख्या ४१२ की है। जिनमें ९०१ गांव के चौकीदार हैं। सुपरिण्टेण्डेण्ट के नीचे आमतौर से तीन इन्सपेक्टर होते हैं। हेडक्वार्टर की जेल में १२० बन्दियों के लिये जगह थी। किसी कारण-वश यह असुरक्षित के नाम से निन्दित थी और एक नई जेल खोल दी गई है।

शिक्षा

जनसंख्या की शिक्षा के अनुसार प्रान्त की अट्ठाइस जिलों में कांगड़े का सप्तम स्थान है। १९०१ में पढ़े लिखे लोगों का अनुपात ४-५ प्रतिशत था। (८-४ पुरुष और ०-३ स्त्रियां) पढ़ाई में लगे हुये शिक्षार्थियों की संख्या १८८०-१ में २,९१ थी, १८९०-१ में ३,८८१, १९००-१ में ३,३४१ और १९०३-४ में ३,८५२, १९०७ में जिले में ६ उच्च शिक्षा के और ५७ प्राइमरी सार्वजनिक स्कूल लड़कों के लिये और ९ लड़कियों के लिये थे और ३ अधिक उच्च शिक्षा और २० प्रारम्भिक शिक्षा (प्रायवेट) के मदरसे थे जिनमें सार्वजनिक में २६६ लड़कियां थीं और प्राइवेट मदरसों में ३८।

मुख्य विद्यालय पालमपुर का हाई स्कूल है। जिसकी स्थापना १८६८ में हुई थी और जिसकी देख भाल जिला बोर्ड करता है। और को सरकार

की सहायता मिलती है। शिक्षा का कुल व्यय प्राय: ३५,००० रु० होता है। जिसमें से ७,००० रु० फीस से ४,००० रु० सरकारी मददों से और २,००० रु० चन्दों और दानों से आता है। म्युनिसिपैलिटियों ने ४,००० रुपये दिये और कमी जिले के कोष से पूरी हुई।

अस्पताल और शफ़ाखाने

धर्मशाला के सिविल अस्पताल के अतिरिक्त जिले आठ बाहरी शफाखाने हैं। १९४४ में ८०० अन्दरी रोगियों और १०१, १५६ बाहरी रोगियों का इलाज किया गया और १,७६९ आपरेशन किये गये। खर्चा १९,००० रु० हुआ जिसमें से १४,००० रु० जिले से मिले और ३००० रु० म्युनिसिपैलिटी के कोष से।

टीके

सफल टीकों की संख्या १९४३४ में ४०,८२५ थी यह संख्या जनसंख्या की ५३ प्रतिशत थी (अच्छा अनुपात]. धर्मशाला में टीका लगवाना अनिवार्य है।

कांगड़ा तहसील

कांगड़ा जिला (पंजाब) की तहसील ३१०५४' और ३२'२३' उत्तरी तथा ७६'८' और ७६'४१' पूर्वीय के मध्य स्थित है क्षेत्रफल ४२६ वर्ग मील हैं। पूरी तहसील पहाड़ियों में स्थित है। धवला धार का पहाड़ इसे उत्तर में चम्बा से और दक्षिण में कालिधार पहाड़ियों से अलग करता है। बानगङ्गा और गज इसमें से होकर दक्षिण-पश्चिम दिशा में व्यास से मिलने के लिये बहती हैं। धवलाधार की मुख्य श्रेणी और इसके ढाल बहुत से स्थानों में जङ्गल से ढके हुए हैं। १९४१ में जनसंख्या १३६,३३५ थी जब कि १८९१ में १२५,१२८ में ही थी। इसमें धर्मशाला (आबादी, ६,९७१) और कांगड़ा (४,७४६। हेडक्वार्टर के कस्बे हैं, और यहाँ ३३४ गांव हैं जिनमें कन्हियाड़ा और भरी भवन-कला की सुन्दरता दिखाते हैं। जमीन की मालगुजारी और करों से १९४३-४ में २ लाख रुपया आया था।

पालमपुर तहसील

कांगड़ा जिला पंजाब की तहसील ३१°५९' और ३२'२९' उत्तरी, तथा ७६'२३' और ७७'२' पूर्वीय के मध्य में स्थित है क्षेत्रफल, ४४३ वर्ग मील है। सारी तहसील पहाड़ियों में स्थित है जो धवला धार से (उत्तर में) दक्षिण में व्यास तक फैली हुई हैं। इसे व्यास की कई सहायक नदियां पार करती हैं। १९४१ में जनसंख्या १४२,५५५ थी, जब कि १८९१ में कुल १२९,१६९' थी इसमें ११३ गांव हैं जिनका फालमपुर हेडक्वार्टर है। जमीन की मालगुजारी और करों का रुपया १९०३-४ में २ लाख हुआ था।

कुलू विभाग

कांगड़ा जिला, पंजाब का विभाग, ३१°२१' और ३२'५९° उत्तरी अक्षांश और ७६°४६' व ७८४२' पूर्वीय देशान्तर रेखाओं के मध्य में स्थित है। इसमें कुलू और सराज की तहसीलें और लाहुल स्पिती की वज़ीरियाँ हैं। हेडक्वार्टर कुलू नगर हैं, जो पुराने राजाओं का निवास-स्थान रहा है।

लाहुल

हिमालय की वजीरी अथवा कांगड़ा [illegible] पंजाब के कुलू उपविभाग की छावनी, ३२०८' [illegible] ३२'५९ उत्तरी तथा ७६४९' और ७७४७' पूर्वी के मध्य में स्थित है क्षेत्रफल, २,२५५ वर्ग मील, ज[illegible] संख्या (१९४१। ७,२०५ ही थी, यानी ४ [illegible] प्रति वर्ग मील से भी कम। यह कांगड़ा और [illegible] खास दक्षिण में, और स्पिती से पूर्व में [illegible] होता है, इसे दो पहाड़ी श्रेणियाँ अलग करती जिनके दक्षिण में व्यास और रावी और पूर्व स्पिती नदियाँ हैं, स्पिती सतलज की सहायक वे अपने मिलने के स्थान शुगँन तुंगा या देव[illegible] चोटी (२१,००० फ़ीट) पर मिलती हैं। उत्तर लाहुल काश्मीर के लद्दाख प्रान्त से सीमित और पश्चिम में चम्बा रियासत से। चन्द्रा [illegible] भागा स्रोत बाड़ा लाचा. या दर्रे १६,५०० [illegible] पर उत्तर में निकलती हैं, और पहले बिल्कुल [illegible] रीत दिशाओं में बहती हुई तन्डी में मिल जाती जहां से चन्द्रा भागा या चनाब का मिश्रित चम्बा में बह जाता है। इन दोनों नदियों के [illegible] में पहाड़ों का एक अलग समूह है जो और भी आकारों के हैं, उनमें एक लम्बा बर्फ का [illegible] जिसमें कहीं-कहीं पर नंगी चट्टान के पार न जा सकने वाले रोड़े हैं। सबसे ऊँची चोटी

भूमि से प्राप्त होने वाली आय का लाभ हुआ, जो पहले राज्य की हुआ करती थी।

१८४६ में लार्ड लारेन्स ने एक छोटा समझौता किया, जो बिल्कुल सिक्खों के किराए के रजिस्टर पर आधारित था। उन्होंने १० प्रतिशत की कमी कर दी। उस समय लार्ड लारेन्स जलन्धर द्वाव के कमिश्नर थे। इनके साथ असिस्टेन्ट कमिश्नर, लेफ्टीनेन्ट लेक ने भी काम किया था। प्रथम नियमिक समझौते ने जो १८४६ में किया गया, 'सूखी भूमि' पर की मांग १२ प्रतिशत कम कर दी, परन्तु 'तर' भूमि पर पहले वाला ही कर रखा। १८६६-७१ में समझौते में कुछ परिवर्तन हुए, उसका उद्देश्य यही था कि अधिकारों का सही रिकार्ड तैयार किया जाय, परन्तु कर में १८८९-४ तक कोई परिवर्तन नहीं हुआ, उसके बाद ही १९ प्रतिशत की वृद्धि का ऐलान किया गया। दर १ रुपया ५ आना ४ पाई से लेकर १४ आने ७ पाई तक थी १९०३-४ में करों सहित कुल मांग, करीब १०७ लाख की थी। मालिकों के खेत का औसत क्षेत्रफल दो एकड़ है। जिले में बहुत सी बड़ी जागीरें हैं, जिनमें से मुख्य लम्बाग्राऊं, नादऊँ और दादो सीवा कांगड़ा खास में हैं और वजीरी रूपी कुलू में।

जबर्दस्ती काम कराने का एक तरीका जिसे बिगार कहते थे कांगड़ा की पहाड़ियों में ४० वर्ष पूर्व तक जारी था और अत्यन्त प्राचीन कहा जाता था। सारे वर्ण जो जमीन जोतते थे, समझौते के के अनुसार अपने परिश्रम का कुछ भाग राज्य के कार्य के लिये लगाने को बाध्य थे। पूर्व के राजवंशों समय में, जनता को हमेशा जबर्दस्ती जहां कहीं शासक चाहता वहां काम करने को भेज दिये जाते थे। परन्तु काम करने का समय सबके लिये नियत था। यह नीति इतनी प्रचलित थी कि दूसरे काम करने वाले लोग जिनका जमीन से कोई सम्बन्ध नहीं था। जबर्दस्ती के साथ अपने समय का कुछ भाग जनता की सेवा में लगाते थे। ब्रिटिश सरकार के आने पर यह तरीका जारी रहा और यात्रियों का सामान ढोने और उनके डेरों के लिये घास और लकड़ी पहुँचाने के काम लिये जाने लगे। परन्तु यह पद्धति १८८४ में कांगड़ा ग्राम में बिल्कुल मिटा दी गई।

स्थानीय तथा म्युनिसिपल

जिले में तीन म्युनिसिपेलिटियां, धर्मशाला कांगड़ा और नूरपुर हैं। इनके बाहर स्थानीय कामों को एक जिला बोर्ड भी देखते हैं जिनके अन्दर के क्षेत्र उन्हीं नामों की तहसीलें हैं। उनकी आय का मुख्य साधन है स्थानीय दर कांगड़ा में जमीन की मालगुजारी पर ८ रु० ५ आ० ४ पा० का कर कुलू में १० रु० ६ आ० ८ पा० का और स्पिती की वजीरी में ७ रु० ८ आ० १० पा० का। १९०३-४ का व्यय १४५,००० रु० था। मुख्य खर्च सार्वजनिक कार्यों में हुआ था।

पुलिस और जेल

जिला १५ थानों में विभक्त है। १३ कांगड़ा खास में और २ कुलू में है। पुलिस के आदमियों की संख्या ४१२ की है। जिनमें ९०१ गांव के चौकीदार हैं। सुपरिण्टेण्डेण्ट के नीचे आमतौर से तीन इन्सपेक्टर होते हैं। हेडक्वार्टर की जेल में १५० वन्दियों के लिये जगह थी। किसी कारण-वश यह असुरक्षित के नाम से निन्दित थी और एक नई जेल खोल दी गई है।

शिक्षा

जनसंख्या की शिक्षा के अनुसार प्रान्त की अट्ठाइस जिलों में कांगड़े का सप्तम स्थान है। १९०१ में पढ़े लिखे लोगों का अनुपात ४-५ प्रतिशत था। (८-४ पुरुष और ०-३ स्त्रियां) पढ़ाई में लगे हुये शिक्षार्थियों की संख्या १८८०-१ में २,९१ थी, १८९०-१ में ३,८८१, १९००-१ में ३,३४१ और १९०३-४ में ३,८५२, १९०७ में जिले में ६ उच्च शिक्षा के और ५७ प्राइमरी सार्वजनिक स्कूल लड़कों के लिये और ९ लड़कियों के लिये थे और २ अधिक उच्च शिक्षा और २० प्रारम्भिक शिक्षा (प्रायवेट) के मदरसे थे जिनमें सार्वजनिक में २६६ लड़कियां थीं और प्राइवेट मदरसों में ३८।

मुख्य विद्यालय पालमपुर का हाई स्कूल है। जिसकी स्थापना १८६८ में हुई थी और जिसकी देख भाल जिला बोर्ड करता है। और को सरकार

की सहायता मिलती है। शिक्षा का कुल व्यय प्राय: ३५,००० रु० होता है। जिसमें से ७,००० रु० फीस से ४,००० रु० सरकारी मददों से और २,००० रु० चन्दों और दानों से आता है। म्युनिसिपैलिटियों ने ४,००० रुपये दिये और कमी जिले के कोष से पूरी हुई।

अस्पताल और शफ़ाखाने

धर्मशाला के सिविल अस्पताल के अतिरिक्त जिले आठ बाहरी शफाखाने हैं। १९४४ में ८०० अन्दरी रोगियों और १०१, १५६ बाहरी रोगियों का इलाज किया गया और १,७६९ आपरेशन किये गये। खर्चा १९,००० रु० हुआ जिसमें से १४,००० रु० जिले से मिले और ३००० रु० म्युनिसिपैलिटी के कोष से।

टीके

सफल टीकों की संख्या १९४३४ में ४०,८२५ थी यह संख्या जनसंख्या की ५३ प्रतिशत थी (अच्छा अनुपात] धर्मशाला में टीका लगवाना अनिवार्य है।

कांगड़ा तहसील

कांगड़ा जिला (पंजाब) की तहसील ३१०५४' और ३२'२३' उत्तरी तथा ७६'८' और ७६'४१' पूर्वीय के मध्य स्थित है क्षेत्रफल ४२६ वर्ग मील हैं। पूरी तहसील पहाड़ियों में स्थित है। धवला धार का पहाड़ इसे उत्तर में चम्बा से और दक्षिण में कालिधार पहाड़ियों से अलग करता है। वानगङ्गा और गज इसमें से होकर दक्षिण-पश्चिम दिशा में व्यास से मिलने के लिये बहती हैं। धवलाधार की मुख्य श्रेणी और इसके ढाल बहुत से स्थानों में जङ्गल से ढके हुए हैं। १९४१ में जनसंख्या १३६,३३५ थी जब कि १८९१ में १२५,१२८ में ही थी। इसमें धर्मशाला (आबादी, ६,९७१) और कांगड़ा (४,७४६, हेडक्वार्टर के कस्बे हैं, और यहाँ ३३४ गांव हैं जिनमें कन्हियाड़ा और भरी भवन-कला की सुन्दरता दिखाते हैं। जमीन की मालगुजारी और करों से १९४३-४ में २ लाख रुपया आया था।

पालमपुर तहसील

कांगड़ा जिला पंजाब की तहसील ३१°४९' और ३२°२९' उत्तरी, तथा ७६°२३' और ७७°२' पूर्वीय के मध्य में स्थित है क्षेत्रफल, ४४३ वर्ग मील है। सारी तहसील पहाड़ियों में स्थित है जो धवला धार से (उत्तर में) दक्षिण में व्यास तक फैली हुई हैं। इसे व्यास की कई सहायक नदियां पार करती हैं। १९४१ में जनसंख्या १४२,९५५ थी, जब कि १८९१ में कुल १२९,२६९ थी इसमें ११३ गांव हैं जिनका फालमपुर हेडक्वार्टर है। जमीन की मालगुजारी और करों का रुपया १९०३-४ में २ लाख हुआ था।

कुलू विभाग

कांगड़ा जिला, पंजाब का विभाग, ३१°२१' और ३२°५९° उत्तरी अक्षांश और ७६°४६' व ७८४२' पूर्वीय देशान्तर रेखाओं के मध्य में स्थित है। इसमें कुलू और सराज की तहसीलें और लाहुल और स्पिती की वजीरियाँ हैं। हेडक्वार्टर कुलू नगर में हैं, जो पुराने राजाओं का निवास-स्थान रहा है।

लाहुल

हिमालय की वजीरी अथवा कांगड़ा जिला पंजाब के कुलू उपविभाग की छावनी, ३२०८' और ३२'५९ उत्तरी तथा ७६४९' और ७७४७' पूर्वीय के मध्य में स्थित है क्षेत्रफल, २,२५५ वर्ग मील, जनसंख्या (१९४१) ७,२०५ ही थी, यानी ४ मनुष्य प्रति वर्ग मील से भी कम। यह कांगड़ा और कुलू खास दक्षिण में, और स्पिती से पूर्व में अलग होता है, इसे दो पहाड़ी श्रेणियाँ अलग करती है जिनके दक्षिण में व्यास और रावी और पूर्व में स्पिती नदियाँ हैं. स्पिती सतलज की सहायक हैं, वे अपने मिलने के स्थान शुर्गन तुंगा या देवतिब्बा चोटी (२१,००० फ़ीट) पर मिलती हैं। उत्तर में लाहुल काश्मीर के लद्दाख प्रान्त से सीमित है, और पश्चिम में चम्बा रियासत से। चन्द्रा और भागा स्रोत बाड़ा लाचा, या दर्रे १६,५०० फ़ीट पर उत्तार में निकलती हैं, और पहले बिल्कुल विपरीत दिशाओं में बहती हुई तन्डी में मिल जाती हैं, जहां से चन्द्रा भागा या चनाव का मिश्रित जल चम्बा में बह जाता है। इन दोनों नदियों के बीच में पहाड़ों का एक अलग समूह है जो और भी बड़े आकारों के हैं, उनमें एक लम्बा बर्फ का मैदान है, जिसमें कहीं-कहीं पर नंगी चट्टान के पार न किये जा सकने वाले रोड़े हैं। सबसे ऊँची चोटी के

दक्षिण में जो समुद्रतल २१,४१५ फ़ीट से ऊँची है, एक बर्फ़ की नदी नीचे को १२ मील तक जाती है, जबकि पहाड़ियाँ पूर्व और पश्चिम में यद्यपि ऊंचाई में कुछ कम है, फिर भी बर्फ़ की लाइन की सीमा तक पहुँच जाती हैं, और हर तरफ उनके घाटी हैं सिवाय चिनाब के बाहरी तंग बहाव की ओर के। चट्टान और बर्फ़ की ऊसर भूमि में गाँव केवल कुछ अपेक्षाकृत अनुकूल स्थानों में बसाये जा सकते हैं, वह भी चन्द्रा और भागा की निचली घाटियों में पुराने कोक्सर (चन्द्रा पर) से लेकर दार्चा (भागा पर) तक। लाहुल का शेष भाग बिल्कुल निर्जन है, सिवाय गर्मियों में कुछ हफ्तों के लिए जब कांगड़ा के गड़रिये अपने झुण्ड चराने के लिए ले आते हैं। किसी प्रकार यहां वहां अकेली चट्टानों में घरों की सुन्दर गाँठे दिखाई देती हैं, और हरे सिंचित मैदानों के बीच में होने के कारण हिमालय की सुन्दर वनस्पति से बहुत ख़ूबसूरत मालूम पड़ती हैं। गर्मियां वर्षा से बिल्कुल रहित होती हैं, परन्तु जाड़े में भारी हिमवर्षा होती है और सारा प्रदेश दिसम्बर से अप्रैल तक ढका रहता है। भागा की घाटी में काडंग का औसत तापक्रम २९° दिसम्बर में और ५९° जून में रहता है। चन्द्रा और भागा घाटियों के निवासी बौद्ध हैं और संयुक्त चन्द्रा-भागा के निवासी हिन्दू हैं। लाहुल घाटी के बसे हुए भागों की ऊंचाई का अनुमान ११,३४५ फ़ीट समुद्रतल से लगाया जाता है। कंगसेर, सर्वोच्च गांव, ११,३४५ फ़ीट की ऊंचाई पर है। मुख्य गांव हैं केलंग और करडङ्ग जो भागा की विपरीत दशाओं में कुलू और बारा लाचा से रोहतंग दर्रे से होकर लदाख को जाने वाले व्यापारी मार्ग पर है।

लाहुल की घाटी का ज़िक्र सप्तम शताब्दी में ह्वान शाङ्ग ने किया है, जो चीनी बौद्ध यात्री था और जिसने इसे लो-हु-लो के नाम से देखा था उस समय यह कुलू के उत्तर-पूर्व का ज़िला था। बहुत प्राचीन समय में शायद यह तिब्बतीय राज्य के अन्तर्गत था और दसवीं शताब्दी में उस राज्य के अन्त होने पर यह लदाख के राज्य में मिलाया गया जान पड़ता है। हमारे पास उस काल को प्रदर्शित करने की कोई सूचना नहीं है कि यह कब स्वतन्त्र हुआ। पर कुछ कारण ऐसे हैं जिनसे यह विश्वास करना पड़ता है कि १५२० में लदाख के पुनर्संस्थापित होने के पूर्व ऐसा हुआ।

कुछ समय के लिए भारतीय राज्य हो गया, इसमें छोटे-मोटे सरदार (ठाकुर) राज्य करते रहे, इस ज़माने में बहुत से स्थानीय परिवारों को चम्बा को चौथ देनी पड़ी। इन कुटुम्बों में से चार-पाँच तो अब तक मौजूद हैं, और अब भी अपने प्राचीन राज्यों पर अधिकार रखते हैं, जो उन्हें जागीर में मिले हैं, परन्तु उन्हें चौथ या नज़राना देना पड़ता है। १७०० के लगभग, कुलू का अधिकार इनपर हो गया, और बुद्ध सिंह राजा जगत सिंह (शाहजहाँ और औरंगजेब के समय का) का बेटा राज्य करने लगा। तब से, लाहुल का भाग्य कुलू पर निर्भर रहता रहा, इसके बाद वे दोनों ब्रिटिश राज्य में १८४६ में चले गए। कुल क्षेत्रफल २,५५५ वर्ग मीलों में से, ५ वर्ग मील से कम में खेती होती है। जौ मुख्य फ़सल है, परन्तु गेहूँ निचली घाटियों में उगता है। काश्तकारी पूरी तौर से छोटी सिंचाई की नहरों पर निर्भर है, जो गावों के ज़मींदारों ने बनवाई हैं और जिनकी मरम्मत का प्रबन्ध वे ही करते हैं। पैदा होने वाला अनाज स्थानीय खर्च के लिए काफ़ी नहीं है, और कुलू से आयात करके काम चलता है। लाहुलियों के हाथ में एक ओर तो लदाख और मध्य एशिया के मध्य का व्यापार है, और दूसरी ओर कुलू और पंजाब का। उत्तर में पटसेव से सौदा इकट्ठा करके (पटसेव, दार्चा से कुछ मील उत्तर में है जहां), लदाख, मध्य एशिया, तिब्बत, और कुलू से आ-आकर सौदागर एक बड़ा पड़ाव डालते हैं। वे लोग हर साल गर्मियों के अन्त में कुलू में चले जाते हैं, और अपने साथ टट्टू और गधे, बकरियाँ और भेड़ें, पशम या शाल की ऊन घोड़े या भेड़ पर लादकर ले जाते हैं, जबकि लौटने पर वे धातुओं के बर्तन, चीनी, चावल, गेहूँ, तम्बाकू, मिर्च, अदरक, और दूसरी चीज़ें लाते हैं।

लाहुली लोग केवल थोड़ी सी भेड़ें और बकरियाँ रखते हैं, क्योंकि जाड़ों में बर्फ इतना अधिक और इतना गहरा गिरता है कि झुंड दर्वाज़े से बाहर बहुत समय तक नहीं रह सकते जैसे कि लदाख में रहते

हैं। इसलिए मुख्य घाटियों के ऊपरी किनारों (जो निर्जन हैं) और बसे हुए भागों में गांवों के ऊपर की जमीनों का उपयोग कांगड़ा, चम्बा, और कुलू के गड़रियों ने किया है। जून के शुरू होने पर इन स्थानों में बर्फ़ गायब होने लगता है; गड़रिये साधारणतया लाहुल में उस मास के अन्त होने से पूर्व प्रवेश नहीं करते और वे फिर इसे सितम्बर के शुरू में छोड़ देते हैं, क्योंकि उस समय पाला पड़ने लगता है, और बाहरी हिमालयों की वर्षा ऋतु अन्त हो जाती है। लाहुल की उत्तम शुष्क जलवायु में भेड़ों को पैरों के सड़ने की और अन्य बीमारियां नहीं होती जिनका हमला निरन्तर उन झुंडों पर होता रहता है जो बरसात में बाहरी हिमालय के दक्षिणी ढालों पर रखे जाते हैं। भेड़ें बुरी तरह से पतली होकर आती हैं परन्तु यहां से जाने के समय तक वे खूब अच्छी हो जाती है।

लाहुल का शासन कुलू का असिस्टेण्ट कमिश्नर करता है, जिसके नीचे ठाकुर साहब पुराने शासकों का एक वंशज है और एक मजिस्ट्रेट द्वितीय श्रेणी का तथा एक मुन्सिफ़ काफ़ी स्थानीय प्रभाव रहता है। करों में परिवर्तन होने के बाद, जमीन की मालगुज़ारी ४,९१६ रु० हो गई थी।

स्पिती

(स्पिती)। हिमालय की वज़ीरी या कांगड़ा जिला पंजाब के कुलू उपविभाग की छावनी, ३१°४२ व ३२°५९' उत्तरी तथा ७७°२६' व ७८°४२' पूर्वीय के मध्य स्थित है क्षेत्रफल २१५५ वर्ग मील। जन-संख्या (१९०१) कुल ३,६३१ अथवा २ मनुष्य प्रतिवर्ग मील से कम है। स्पिती चारों तरफ़ से ऊंची पहाड़ी श्रेणियों से बिल्कुल घिरा हुआ है जिनकी औसत ऊंचाई १८,००० फ़ूट है जो इसे लाहुल से पश्चिम में बशहर से दक्षिण में बड़े तिब्बत से पूर्व में और लदाख से उत्तर में अलग करती हैं। इसमें स्पिती नदी की ऊपरी घाटी सम्मिलित है, जो पश्चिमीय हिमालय में निकल-कर (लगभग १६,००० फ़ीट पर) दक्षिण पूर्व को बहकर तिब्बत में जाती है और वहां से बशहर में ११,००० फ़ुट की ऊंचाई पर प्रवेश करती है, और अन्त में अपना जल सतलज में गिराती है, पारा नदी की ऊपरी घाटी जो भी तिब्बत में प्रवेश करती है और तब स्पिती में गिरती है उनकी संयुक्त धाराएं सतलज से मिलने के समय आय-तन में सतलज के बराबर हो जाती हैं, इसाम्प की घाटी, जिसका जल सिन्धु में गिरता है और ऊपरी चन्द्रा घाटी का पूर्वार्द्ध भी इसी में शामिल हैं। इनमें से चार घाटियों में से सिर्फ़ स्पिती वाली में बस्ती है। स्पिती नदी की सबसे महत्वपूर्ण सहायक नदी पीन है, जो मध्य-हिमालय के तथा मानीरंग श्रेणियों के कोण में निकलती है और ४५ मील का रास्ता तय करने के बाद स्पिती में मिल जाती हैं इनका मिलन दनकर के ऊपर होता है जो घाटी का मुख्य गाँव है। स्पिती के पर्वत फिर भी पड़ोस के लाहुल प्रदेश के पर्वतों से अधिक ऊंचे हैं। बाहरी हिमालय में २३,०६४ फ़ुट की एक चोटी है और इस लाइन पर की बहुत सी चोटियां २०,००० से भी अधिक ऊंची हैं। मध्य हिमालय की दो चोटियां २१,००० फ़ुट से अधिक हैं और दक्षिणी श्रेणी में मानीरंग की ऊंचाई २०,६४६ फीट है। मुख्य श्रेणियों से पहाड़ों की तिरछी पंक्तियां दोनों तरफ़ घाटी में दूर तक चली गई हैं और कई स्थानों पर केवल एक संकीर्ण मार्ग बनाती हैं जिसमें से होकर स्पिती नदी बहती है। ये छोटी श्रेणियां भी चोटियां रखती हैं जिनमें से कई की ऊंचाई १७,००० फ़ुट तक हो गई है। स्पिती घाटी की औसत ऊंचाई समुद्र-तल से १२९८१ फ़ुट है। बहुत से गांव १३००० फ़ीट से अधिक ऊंचाई पर स्थित हैं, और एक या दो की ऊंचाई १४,००० फ़ुट है। नंगे और चट्टानदार पहाड़ी ढालों पर कोई वनस्पति नहीं है फिर भी दृश्य बेढङ्गी सुन्दरता से रहित नहीं है जब कि चोटियों का गहरा और अपने ढङ्ग का रंग अक्सर निर्जन दृश्यों को मनोहरता प्रदान करता है। चट्टानों का रंग अधिकतर लाल और पीला है जो पीछे की ज़मीन की सफ़ेद बर्फ़-दार चोटियों और गहरे नीले ऊपरी आकाश से बिल्कुल भिन्न है। गाँव अधिकतर छोटे चपटे करारों पर स्पिती नदी की पहाड़ियों के ऊपर वाले स्थित हैं तथा उनके सफ़ेद घर जो हरे कास्त के

स्थानों में इधर-उधर हैं पथरीली मिट्टी (जो पहाड़ों की बगलों को ढके हुए हैं) के रेगिस्तान में गिने-चुने नखलिस्तानों की तरह हैं। वर्षा बिलकुल नहीं होती। परन्तु जाड़ों की हिमवर्षा बहुत भारी होती है। ऊपरी स्पिती घाटी का औसत तापक्रम १७° जनवरी में और ६०° जुलाई में रहता है।

स्पिती का इतिहास लदाख के राज्य के पहले पहल बनने से आरम्भ होता है, जिस घटना के बाद घाटी कुछ समय के लिए उस सरकार से अलग हो गई थी, और किसी दूसरी अस्थिर तिब्बतीय रियासत में मिला दी गई थी। १६३० के लगभग यह सिनागी नामग्यात के हाथों में पड़ गया, जो लदाख का राजा था, और जिसने इसे अपने तीसरे लड़के तेंचवोग को दे दिया। इसके बाद शीघ्र ही यह गूज राज्य का भाग बन गया, जो पूर्व में उस जगह था जहां अब चीनी तिब्बत है; और यह फिर लदाख के राज्य में लगभग १७२० तक नहीं आया। उस वर्ष लदाख के राजा ने गूज और लासा के युद्ध के अन्त होने पर तिब्बतीय नायक लड़की से शादी कर ली और उसके दहेज में उसे स्पिती मिला। तब से घाटी लदाख का एक प्रान्त बनाती रही; पर इसकी स्थिति दूरवर्ती और सुगमता से न पहुँच सकने योग्य जगह पर थी, इसलिए इसका अधिकतर स्वयं शासन करने के लिए छोड़ दिया गया, लेह से भेजा हुआ कारिन्दा आमतौर से तभी गायब हो जाता था जब कटाई का सामान इकट्ठा हो जाता था और थोड़ी सी मालगुजारी वसूल हो जाती थी। यहां के निवासी लड़ाकू जाति के नहीं हैं, इसलिए वे अपनी ऊसर घाटी की सैनिक रक्षा के लिए कर देना पसन्द करते थे।

जब सिक्खों ने पड़ोस का कुलू राज्य १८४१ में मिला लिया उन्होंने एक सेना स्पिती को लूटने के लिए भेजी। निवासी अपनी साधारण चाल के अनुसार पहाड़ों में भाग गए और अपने घर वगैरह लुटने और जलाए जाने के लिए छोड़ गए। सिक्खों ने शीघ्र ही जिस चीज पर हाथ पड़ा उसी पर अधिकार कर लिया और चले गए और घाटी को कुलू में मिलाने की अथवा इसे लदाख से अलग करने की कोशिश न की। १८४६ में किसी प्रकार सतलज के आर-पार की रियासतों के प्रथम सिक्ख युद्ध के अनन्तर ब्रिटिशों के पास चले जाने पर सरकार ने चांग ठांग के ऊन के जिलों को जाने वाली सड़क ले लेने के उद्देश्य से, स्पिती को कुलू में मिला लिया और दूसरे वाले राज्य को काश्मीर के महाराजा को बदले में दे दिया। उसी वर्ष, कप्तान (बाद में सर ए०) कनिंघम और मिस्टर वन्स ऐग्निउ ने स्पिती अदाख और चीनी तिब्बत के मध्यसीमा खींच दी। उस तारीख से घाटी पर शान्तिपूर्ण शासन देशीय उत्तराधिकारी शासक या नोनो का रहा है कुलू का असिस्टेण्ट कमिश्नर भी सहायक रहता है। नोनो की सहायता के लिये पांच बड़े लोग या गटपोस होते हैं और वास्तव में छावनी के अन्दरूनी मामलों का सारा प्रबन्ध स्पिती रेगुलेशन (नं० १,१८७३ का) के अनुसार करते हैं। ब्रिटिश कोर्टों के नियम स्पिती में लागू नहीं होते थे जब तक कि विशेष रूप से बढ़ाए न जाएँ।

यहां के निवासी तातारी हैं और बौद्ध धर्म को मानते हैं और बहुत से मठ प्रायः गांवों के ऊपर की निचली पहाड़ियों पर इकट्ठे दिखाई देते हैं। सबसे मुख्य और सबसे दौलत मन्द वहीं है। तंगियुत में नोनो के परिवार के आदमी आते हैं, जब कि दन्खर कम महत्वपूर्ण मठ है। इन तीनों के भिक्षु गेलक्पा कहलाते हैं। पीन में एक छोटा मठ है बह दुख्पा लागों का है। वह शादी करने की आज्ञा देता है और इसके चलाने वालों के वंशज अब भी नाचने-गाने का अभ्यास करते हैं। जैसा कि उनके संचालक ने आदेश दे रखा है। तलों में एक बड़ी लामासराय है, जिसे देवताओं ने एक रात में बनाया था। क्योंकि इसे बौद्धों ने नहीं बनाया था, यह मठ (गोया) के समान नहीं समझा जाता। इसमें लगभग जीवित आकार की मूर्तियाँ खूब इकट्ठी की गई हैं, और एक चम्बा की तो १६ फुट ऊंची है। गोपों के असदृश जो सब के सब ऊंचे स्थानों पर बने हुए हैं यह एक समतल स्थान पर स्थित है और इसमें लगभग ३०० भिक्षु हैं। वे मठ जिनमें खेतों से लाकर अनाज (पुन) रखा जाता है बड़ी इमारतें हैं और गांवों से दूर

स्थित हैं। ढेर के मध्य में जनता के लिए कमरे हैं। वे पूजा के स्थान, सभा-स्थान या सामान घरों का काम देते हैं, उनके चारों तरफ़ अलग-अलग कमरों (गुहाओं) का समूह है जिनमें भिक्षु रहते हैं। हर जमींदार के खान्दान का अपना खास ताशा (या गुहा) मठ में होता है जिसका उत्तराधिकार रहता है और इसमें खान्दान के सभी भिक्षु—चचा, भतीजे और भाई—एक साथ रहते हुए पाये जाते हैं। भिक्षु लोग साधारणतया इन अलग हिस्सों में खाना पकाते हैं और अपनी किताबें, कपड़े, पकाने के बर्तन, और दूसरा निजी सामान उनमें रखते हैं। कुछ लोग अलग एक-एक करके खाना पकाते हैं दूसरे दो या तीन मिलकर। यदि किसी भिक्षु लड़के के कोई चचा उसकी देख-भाल करने के लिए नहीं होता तो वह किसी बूढ़े भिक्षु का शिष्य बना दिया जाता है और उसकी गुहा में रहता है वहां साधारणतया दो या तीन पूजा के कमरे होते हैं—एक जाड़े के लिए दूसरा गर्मी के लिए और तीसरा शायद महन्त या सबसे बड़े लामा का निजी पूजा-गृह होता है।

भिक्षु लोग पूजागृह में सेवा करने को मिलते हैं जो साधारणतया धार्मिक पुस्तकों के अध्ययन के रूप में की जाती है एक वाक्य पढ़ा जाता है और फिर सारी सभा उसे दुहराती है। तंग दरियां लम्बी लम्बी करके फर्श पूजागृह) पर बिछा दी जाती हैं, हरेक पर एक-एक भिक्षु बैठता है हर एक का बैठने का स्थान नियत रहता है और पढ़ने वाले के लिए एक विशेष आसन होता है। सबसे बड़ा लामा आदरसूचक विशेष आसन पर विराजमान होता है जो एक फर्श के साधारण तल से जरा ऊंचा उठा होता है पूजागृह अच्छे खासे कमरे हैं जो नीचे को केन्द्र की ओर खुलते हैं जो लकड़ी के खम्भों की पंक्तियों द्वारा तरफों से अलग होता है। दूर के सिरे पर एक ऊंचा चबूतरा है जिस पर रंगीन चित्रों की एक पंक्ति बनी हुई है, जो वर्तमान युग के बुद्ध के अवतार की अगले युग में होने वाले अवतार की और गुरु रिम्बोची, आतिश, और दूसरे सन्तों की तस्वीरें हैं। कुछ पूजागृहों में कई छोटी पीतल की मूर्तियां चीन से मँगाकर चबूतरे के एक ओर की अलमारियों में रखी हुई हैं और दूसरी ओर धार्मिक ग्रन्थों से भरा हुआ एक किताब घर है, ग्रन्थ अलग अलग कागजों के बण्डलों के रूप में है जो कई सदियों के तिब्बत के रिवाज के अनुसार खुदी हुई चट्टानों से छापे गए हैं। पूजागृह के चारों ओर की दीवारें देवी-देवताओं, सन्तों, और असुरों के चित्रों से रंगी हुई हैं या उन पर कपड़े की तस्वीरें (जिनपर रेशम का बौर्डर है) रंगी हुई हैं। कपड़े की ऐसी ही तस्वीरें पूजागृह के पास रस्सियों पर भी लटकी हुई हैं। सर्वोत्तम चित्र विशाल तिब्बत से मठ के लिए भेंट स्वरूप उन भिक्षुओं द्वारा लाई गई हैं जो लासा से जिलांग की उपाधि लेकर लौटते हैं अथवा जो कुछ वर्षों से उस देश के किसी एक मठ में रह रहे हैं। वे विचित्र और प्राचीन ढङ्ग से छपी हुई हैं, परन्तु उसमें ड्राइंग और रंग भरने का भी काफ़ी काम हुआ है। बड़े-बड़े सिलिण्डरनुमा प्रार्थना के पहिए जो उँगली के जरा छूते ही घूम जाते हैं, कमरे के चारों तरफ़, या चबूतरे के दोनों तरफ रखे हुए हैं। सामान के कमरों में जनता के सामान में से पोशाकें, हथियार, या चेहरे (चाम या धार्मिक नाटकों में प्रयोग होने वाले) रखे जाते हैं। ढोलक और मजीरे और वे कपड़े और अद्भुत टोपियां भी हैं। जिन्हें उच्च श्रेणी के भिक्षु खास उत्सवों पर पहनते हैं।

सार्वजनिक रसोई कुछ त्योहारों के अवसर पर ही प्रयोग में आती हैं, जो कभी-कभी कई दिन के होते हैं उस समय पूजागृहों में विशेषोत्सव होता है। जब ये त्योहार होते हैं, तो भिक्षुगण एक साथ खाना पकाते हैं और खूब डट-डट कर गोश्त, जौ, मक्खन, और चाय खाते-पीते हैं। मुख्य साधन जिससे इन दावतों का खर्च चलता है दान है, जो भिक्षुओं के मध्य में अलग-अलग कोठरियों के रोजमर्रा के व्यय के लिये नहीं बँटता। अपनी कोठरी के लिए हर भिक्षु को सबसे पहले तो वह सब मिलता है जिसे वह अपने परिवार से 'लामा के खेत' की उपज की या किसी दूसरे रूप में पाता है। दूसरे बूला या मौत की भेटों का और कटाई का दान भी मठ में अपने पथ के अनुसार, मिलता है। तीसरे वह

बारातों में उपस्थित होकर या दूसरे जलसों में जाकर कुछ पा जाता है। रामी के उपहार जो मठों में किसी गृहस्थी के किसी मनुष्य के मरने पर दिए जाते हैं, रुपये पैसे, कपड़ों, बर्तनों और कढ़ाइयों, अनाज, मक्खन आदि के होते हैं। फ़सल के कटने पर जो दान दिए जाते हैं, वे उस अनाज के होते हैं जिसे पांच-छः भिक्षु भिक्षा-भ्रमण के लिए इकट्ठे जाकर कटाई होते ही एकत्रित करते हैं। वे स्पिती भर में चक्कर लगा आते हैं। वे इधर-उधर पूरी पोशाक में घर घर जाते हैं, और एक लाइन में खड़े होकर कुछ मंत्र गाते हैं, जिनका सार यह होता है—'हम वे लोग हैं जिन्होंने दुनिया को छोड़ दिया है, हमें दान में, जीवन की चीजें दो, ऐसा करने से तुम ईश्वर को ख़ुश करोगे, जिसके हम सेवक हैं, उन्हें काफ़ी सामान हस्तगत हो जाता है, क्योंकि हर घर कुछ न कुछ पार्टी को देता है। भिक्षु की मृत्यु होने पर उसकी निजी जायदाद जो या तो उसकी कोठरी में रखी हुई मिलती है या परिवार के सरताज के घर में जमा की गई, मठ की नहीं हो जाती, बल्कि उसके कुटुम्ब को चली जाती है—पहले तो इसके भिक्षुओं को और उनके न होने पर, सबसे बड़े अथवा कांगचिम्पा को मिलती है। जब कोई भिक्षु अपनी उपाधि लेने के लिए लासा के लिए प्रस्थान करता है, तो कांगचिम्पा को उसे उसकी यात्रा का खर्च देना पड़ता है, परन्तु केवल अच्छी तरह खा-पी सकने वाले लोग ऐसा कर सकते हैं। बहुत से लोग जो ल्हासा को जाते हैं तिब्बतीय सरकार की अच्छी नौकरी पा जाते हैं, और मठों-स्तूपों का शासन करने को तथा वहां बरसों तक रहने को भेज दिए जाते हैं, बूढ़े होने पर वे स्पिती में अपने मठ को लौट आते हैं, और अपने साथ बहुत सा धन भी लाते हैं जिसमें से कुछ वे हमेशा अपने परिवारों को तत्काल दे देते हैं।

स्पिती में काश्त किया जाने वाला क्षेत्रफल कुल २ वर्ग मील है। मुख्य फ़सल जौ है। निर्यात की जाने वाली वस्तुओं में दालें, बुना हुआ कपड़ा, याक और याक की पूँछें हैं। आयात की वस्तुएँ हैं नमक, तम्बाकू और चाय लासा से ऊन, लाल, पीले और लकड़ी के बर्तन कनावाड़ से, रद्दी कपड़ा, रंग और सोडा लद्दाख से और लोहा मण्डी और कनावाड़ से। ख़ूबसूरत नस्ल के टट्टू चमर्ती से मँगाए जाते हैं। वहां कोई पुलिस, स्कूल, अथवा शफ़ाखाने नहीं हैं। कुलू से स्पिती को जाने वाला सबसे छोटा रास्ता हम्ता दर्रे (१५,२०० फ़ीट के ऊपर को होकर है, जो चन्द्रा घाटी के ऊपर को होता हुआ बड़े शिग्री ग्लेशियर को जाता है, और फिर कन्जम ला या दर्रे (१४,९०० फुट) के ऊपर को जाता है. इसलिए यह निस्सन्देह स्वाधीन भारत के राज्य के अन्तर्गत सबसे दुर्गम भाग है। दन्खर मुख्य गांव है और नोनो के रहने की जगह भी है।

कुलू तहसील

कांगड़ा जिला, पंजाब के कुलू उपविभाग की तहसील है, ३१°५०' व ३२°२६' उत्तरी तथा ७६°५६' व ७७°३३' पूर्वीय के मध्य स्थित है. इसका क्षेत्रफल १,°५४ वर्ग मील है। जनसंख्या प्रायः ७०,००० है। इसमें ४२ गांव हैं, कुछ नगर हैं जहां उपविभाग के हेडकर्टर हैं, और सुल्तानपुर जहां तहसील के हेडक्वार्टर हैं। जमीन की मालगुजारी और करों से प्रायः एक लाख रुपया मिलता है।

तहसील में नामचार के लिए लाहुल और स्पिती की वजीरियां भी शामिल हैं। कुलू खास चार वजीरियों में बँटा हुआ है (पैरोल, लग सरी, लग महराजा, और रूपी, सब की सब व्यास की ऊपरी तलहटी में स्थित हैं। व्यास की तलहटी बहुत ऊँची पहाड़ी श्रेणियों से घिरी हुई है, वे श्रेणियां इसे स्पिती, चिनाब और रावी की घाटियों से अलग करती हैं। उनकी औसत ऊँचाई १८,००० फुट है। निचली श्रेणी, जो इसे सतलज की घाटी से अलग करती है। सराज की तहसील में स्थित है। व्यास कुलू खास के उत्तर में रोहतंग दर्रे की चोटी पर, जो १३,३२६ फुट समुद्रतल से ऊँची है, निकलती है, और ६० मील के मार्ग के अनन्तर मण्डी की रियासत में ३,००० फुट की ऊँचाई पर प्रवेश करती है, इसकी मुख्य सहायक नदियां हैं, पार्वती, सैंज और तीरथान, जिनकी घाटियां भूभाग के पूर्वार्द्ध का अधिकतर हिस्सा बनाती हैं। व्यास पर शाम्सी में

दफ़ दनवर की फ़ौलाद की रस्सी का लटकने वाला पुल बना हुआ है, दूसरा लटकने वाला पुल लर्जी और बजौरा के बीच में है, और पाँच दूसरे स्थानों में लकड़ी के कैन्टीलीवर (साँघे) पुल बने हुए हैं। इसका मार्ग एक के बाद एक महान् दृश्यों को उपस्थित करता है, जैसे झरने, तंग मार्ग एक दम ऊँचे उठे हुए टीले, और पाइन के जंगलों से ढके हुए पहाड़, जो ऊपर के भाग में होते हैं जब कि निचले चट्टानी भागों में देवदार के वन बहुतायत से हैं। सब से ऊँचे गाँव समुद्रतल से ९,००० फुट से अधिक ऊँचे नहीं हैं, और काश्तकारी के तथा बसे हुए हिस्सों की औसत ऊँचाई ५००० फुट के लगभग है। कुलू खास के कुल क्षेत्रफल में से, काश्त किया जाने वाला भाग कुल ६० वर्ग मील में है, और बाकी में जंगल और ऊसर पहाड़ी निर्जन भूमि है। (पेड़ों के उगने की सीमा से ऊपर) वार्षिक वर्षा ३१ से ४२ इंच तक होती है, जाड़े में जमीन बर्फ़ से स्थिति के अनुसार दिनों या महीनों तक लगातार ढकी रहती है, यद्यपि बर्फ़ साधारणतया ६,००० फुट से कम की ऊँचाई पर बहुत दिनों तक नहीं रहता, श्रीकन्द दर्रे (१५,००० फ़ीट) पर ५५ फ़ीट बर्फ़ नापा गया है, परन्तु दुल्ची का दर्रा, जिसके ऊपर को कांगड़ा को जाने वाली मुख्य सड़क गई है साधारणतया साल भर ही खुला रहता है।

कुलू का छोटा राज्य रावी और सतलज के बीच की पुरानी ११ राजपूती रियासतों में से एक रियासत बनाता था, और शायद किसी छोटे मोटे कटोच राजवंशी का था, जो जलन्धर के बड़े राज्य की शाखाएँ थीं। ह्वान साङ्ग, चीनी बौद्ध यात्री ने इसे सप्तम शताब्दी में देखा था, और स्थानीय गाथाओं में सत्तासी राजाओं के नाम आते हैं जिन्होंने एक के बाद एक करके इस दूरवर्त्ती पर्वतीय घाटी में राज्य किया था। प्राचीन इतिहास में किसी कारणवश, पहले पहल कुलू का ज़िक्र पन्द्रहवीं शताब्दी में आता है, जब कि राजा सुद्ध सिंह राजसिंहासन पर बैठे थे। यह गाथानुसार राजवंश के प्रथम संचालक से पीढ़ी में चौहत्तरवाँ स्थान रखते थे। उनके वंशजों ने घाटी में उन्नीसवीं सदी के आरम्भ तक राज्य किया, उनका सारा राज्यकाल खून-खच्चरों, और राजवंशीय झगड़ों में बीता जिनका उल्लेख भारतीय कोर्ट के इतिहास में आता है। जब गुरखे लोग नैपाल के अपने घर से निकल पड़े, और उन्होंने सतलज के किनारों तक के समस्त देश को जीत लिया, तब उन्होंने कुलू की राजगद्दी पर विक्रम सिंह को पाया। दूसरे पड़ोस के सरदारों की भांति विक्रम सिंह अपनी सतलज की सल्तनत के लिए आक्रमणकारियों को चौथ देता था, और साथ ही कुलू के लिए कांगड़ा के कटोच राजा संसार चन्द को भी देता था। १८०९ में किसी प्रकार रणजीतसिंह ने जिसको संसार चन्द ने बुलाया था अपने आपको पहाड़ियों का मालिक बना लिया और कुलू के जवान राजा अजीत सिंह से चौथ लेने लगा जो विक्रम सिंह का गैरकानूनी लड़का था। तीन वर्ष पश्चात् सिक्खों ने ५०००० रुपये का वार्षिक कर मांगा और राजा के मना कर देने पर उसकी राजधानी सुल्तानपुर पर धावा बोल दिया और उसके महल को लूट लिया। आखिरकार अजीतसिंह ने सिक्खों को रिश्वत देकर उन्हें लौटा दिया।

इसमें उसे वह सब रुपया देना पड़ा जो वह इकट्ठा कर सका था। गुरुखों के निकाले जाने के बाद राजा सतलज की सल्तनत के लिए ब्रिटिशों के आधीन राजा बन गया। १८४० में जनरल वेन्चुरा एक सिक्ख सेना को पड़ोस की मण्डी रियासत के विरुद्ध ले गया, जिसे जीत लेने के बाद उसके एक लेफ्टीनेण्ट ने कुलू पर हमला बोल दिया और शत्रुता के व्यवहार का बहाना कर दिया। राजा ने कोई विरोध न किया और अपने आपको बन्दी बन जाने दिया, परन्तु जब उसको गिरफ्तार करने वालों ने उसके साथ पशुओं की तरह निर्दयता का व्यवहार किया तो पहाड़ी लोगों की जन्मसिद्ध स्वामिभक्ति भड़क उठी। एक गुप्त चाल चली गई और जब आक्रमणकारी सराज के बाहर बसलेव दर्रे से होकर निकले तो पहाड़ी लोगों ने उनके ऊपर एक तङ्ग नाले में धावा बोल दिया। अपने राजा की रक्षा कर ली और एक-एक सिक्ख का खून कर डाला। अजीत सिंह सतलज पार करके शांगरी को चला

गया जो उसे ब्रिटिश सरकार से गुरखों के निकाले जाने के समय से मिली थी और इस प्रकार अपने आपको लाहौर के प्रतिकार की पहुँच से बाहर कर लिया। इसके बाद ही एक सिक्ख फ़ौज सराज पर चढ़ी लेकिन उसने इसे बिल्कुल उजाड़ पाया क्योंकि निवासी पहाड़ियों की पहुँच से बाहर के जंगलों में भाग गये थे। अत: उन्होंने इस देश को खेत के रूप में मण्डी के राजा को सौंप दिया और कुलू में कुछ फ़ौज अपना बड़प्पन रखने के लिए छोड़ दी। अजीतसिंह शांगरी में १८४१ में मर गया और सिक्खों ने वज़ीरी रूपी उसके पहले चचेरे भाई ठाकुर सिंह को दे दी और शांग्री एक दूसरे नातेदार के हाथों में रहा। १८४६ में प्रथम सिक्ख-युद्ध के अन्त होने पर जलन्धर का दोआब और पास की पहाड़ी रियासतें ब्रिटिशों के हाथ में चली गईं और कुलू तथा लाहुल और स्पिती नये कांगड़ा ज़िले की एक तहसील बन गये। सरकार ने ठाकुर को राजा का खिताब पक्का कर दिया और वज़ीरी रूपी के अन्दर उसे राजसी अधिकार दे दिये। १८५२ में उनकी मृत्यु होने पर उसके लड़के ज्ञान सिंह ने जो शायद ग़ैरक़ानूनी था। राय का घटिया खिताब पाया आधी भूमि मिली परन्तु राजनीतिक अधिकार एक भी नहीं मिले। शेष आधा भाग उसे लौटा दिया गया है परन्तु सरकार के पक्ष में कुछ सीमित कर दिया गया है। १८९२ में राय मेघ सिंह ने रूपी की जागीर उत्तराधिकार में पाई परन्तु कुछ परिवर्तनों के साथ राम एक आनरेरी मजिस्ट्रेट और अपनी जागीर में मुन्सिफ होता है।

सराज तहसील

कांगड़ा ज़िले के कुलू उपविभाग की तहसील, ३१°३२' और ३१°५०' उत्तरी अक्षांश तथा ७७°१७' व ७७°४७' पूर्वीय देशान्तर के मध्य में स्थित है। क्षेत्रफल २८९ वर्ग मील है। यह उत्तर-पूर्व में स्पिती द्वारा सीमित है पूर्व दक्षिण में बशहर और शिमला की पहाड़ी रियासतें हैं और पश्चिम में सुकेत और मण्डी है आबादी ५०,६३१ थी जब कि १८९१ में कुल ५०,५५१ थी। इसमें २१ गांव हैं जिनके हेडक्वार्टर बन्जार में है। तहसील दो वज़ीरियों या भीतरी और बाहरी सराज की छावनियों में विभाजित है। ये दोनों एक दूसरे से जलोरी पहाड़ी द्वारा अलग होती है जिसकी औसत ऊंचाई १२००० फ़ीट है। भीतरी सराज व्यास की तलैटी में है और प्राकृतिक भागों में कुलू की तहसील से मिलता-जुलता है। बाहरी सराज सतलज की घाटी का है और देश जलोरी पहाड़ी से नदी तक ढलवां होता चला गया है जो यहां समुद्रतल से ३,००० फ़ुट ऊंचाई पर ही है। ज़मीन की मालगुज़ारी और करों से प्राय: ५०,००० रुपये की आय होती है।

हमीरपुर तहसील

कांगड़ा ज़िला पंजाब की तहसील ३१°२५' व ३१°५८ उत्तरी तथा ७६°९' व ७६°४४' पूर्वीय के मध्य में स्थित है इसका क्षेत्रफल ६०२ वर्ग मील है। यह दक्षिण में बिलासपुर रियासत से घिरी हुई है और पूर्व में मण्डी रियासत द्वारा तथा उत्तर में व्यास और दक्षिण में सतलज के बीच में है। उत्तर-पूर्वीय कोना ऊबड़-खाबड़ और दुर्गम है, और सोला सिंघी श्रेणी दक्षिण-पश्चिम सीमा के किनारे-किनारे गई है पहाड़ियों के तितर-बितर समूह क़रीब सारी तहसील ढके हुए हैं परन्तु कुछ भागों में वहां अच्छी-खासी समतल भूमि के टुकड़े हैं। आबादी १७०,००० है इसमें ६४ गांव हैं जिनमें हमीरपुर, हेडक्वार्टर और सुजानपुर टीरा हैं। ज़मीन की मालगुज़ारी और करों से दो लाख रुपया होता है।

डेरा गोपीपुर

कांगड़ा ज़िले की तहसील ३१°४०' और ३२°१३' उत्तरी तथा ७५°५५' व ७६°२२' पूर्वीय के मध्य में स्थित है क्षेत्रफल ५१५ वर्ग मील है। यह उत्तर-पूर्व की ऊंची पहाड़ी से जो इसे कांगड़ा तहसील (व्यास की घाटी के पार) से अलग करती है, दक्षिण पश्चिम में जस्वीन श्रेणी तक जो इसे होशियारपुर से अलग करती है, फैली हुई है। उपजाऊ मैदान जो गज और व्यास के मध्य में स्थित है गज और बुनेर की धाराओं द्वारा सींचा जाता है। आबादी १२०,००० है। इसमें १४५ गांव

हैं। डेरा गोपीपुर हेडक्वार्टर. हरीपुर और ज्वालामुखी प्रमुख हैं। जमीन की मालगुजारी और करों से २ लाख रुपये की आय होती है।

नूरपुर तहसील

पंजाब कांगड़ा जिले की तहसील ३१'५८' व ३२'२४' उत्तरी तथा ७५'२७' व ७६'९' पूर्वीय के मध्य में स्थित है और इसका क्षेत्रफल ५२५ वर्ग मील है। इसमें पहाड़ियों का मिला हुआ समूह है, जिनमें से अधिकतर जंगलों से घिरी हुई हैं यह तहसील उत्तर-पूर्व में धवला धार की श्रेणी से सीमित है जो इसे चम्बा से अलग करती है। आबादी ११०,०० है। नूरपुर (आबादी, ४.४६२) का कस्बा हेडक्वार्टर है और वहां १९१ गाँव है। जमीन की मालगुजारी और करों से प्रायः दो लाख रुपये की आय होती है।

लम्बाग्रांव

यह पंजाब के कांगड़ा जिले रियासत है। क्षेत्रफल १२५ वर्गमील है। १९०८ में यहाँ का राजा जयचन्द था पुराने कटोच राजाओं का वंशज था। (कांगड़ा के) इस गाँव में वीस गांव हैं।

नादऊँ रियासत

पंजाब के कांगड़ा जिले हमीरपुर तहसील में रियासत, क्षेत्रफल ८७ वर्गमील है। १६१० में इसके अधिकारी विख्यात राजा संसार चन्द के एक पोते थे और इस प्रकार यह लम्बाग्राव की तरह कांगड़े के प्राचीन कटोच राजवंश के एक प्रतिनिधि थे। इसकी जागीर में १४ गाँव हैं और ३२००० रुपया सालाना वसूल हो जाता है।

गोलेर

पंजाब के कांगड़ा जिले की डेरा तहसील में रियासत है क्षेत्रफल २५ वर्गमील है। कहते हैं कि हरीचन्द कांगड़ा के कटोच राजा एक बार शिकार करते समय एक सूखे कुएँ में गिर पड़े। उनके साथी उनसे छूट गये थे। उन्हें मरा समझ कर उनका उत्तराधिकारी राजा बना दिया गया। जब कुएँ से बच कर हरीचन्द आये तो फिर अपनी गद्दी का दावा न कर सके, परन्तु उन्होंने एक अलग राज्य गोलेर (राजधानी हरीपुर) की नींव डाली। शाहजहां के राज्य में राजा रूपचन्द को एक कटोच विद्रोह को दबाने का काम मिला था और अकबर के समय में अकबर, मानसिंह और उनके पुत्र जगत सिंह ने काफी काम किया। १५८५ में काबुल मानसिंह को सौंप दिया गया। सिक्खों के जमाने में राजा भूप सिंह पहले तो कटोच राजाओं के विरुद्ध रणजीतसिंह के दोस्त रहे, परन्तु १८१२ में उनका राज्य बिगड़ गया। ब्रिटिश राज्य में मिला लिये जाने पर उसका पुत्र शमसेर सिंह २० गांवों की एक जागीर पा गया। वह सनदबाद में उसके भतीजे राजा रघुनाथसिंह को मिल गई और इसकी मालगुजारी लगभग २६,००० रुपये की होती है।

बैजनाथ

(प्राचीन कीरा ग्राम)—कांगड़ा जिला पंजाब में गांव, ३२'२' उत्तरी और ६'४३' पूर्वीय पर पालमपुर से ११ मील पूर्व में स्थित है। आबादी १९४१ में ८,५५५। यहां के दो हिन्दू मन्दिरों में पुरानी शारदा ढंग की खुदावटें हैं। उनसे राजानकों अथवा कीराग्राम के राजाओं के गोत्र का पता चलता है जो जलन्धर या त्रिगर्त्त के राजाओं के नातेदार तथा आधीन थे। शिलालेखों की तारीख अनिश्चित है। पहले वे नवीं शताब्दी के प्रारम्भिक भाग की कही जाती थीं, परन्तु हाल के एक खोजकर्त्ता का कथन है कि वे तीन या चार सदी पहले के समय की हैं। इनमें से एक मन्दिर को ४ अप्रैल १९०५ के भूकम्प में भारी क्षति पहुँची।

बंगाहल

कांगड़ा जिला पंजाब के बाहरी हिमालय की छावनी। ३२'१५' व ३२'२९' उत्तरी तथा ७६'४९' और ७६'५५ पूर्वीय के मध्य में स्थित है। यह कांगड़ खास को कुलू के बहिरुप विभाग से अलग करती है। धवला धार छावनी को दो मुख्य घाटियों में विभक्त करती है, जिनमें से उत्तर वाली बड़ी या ग्रेटर बंगाहल कहलाती है और दक्षिण वाली छोटी या लेसर बंगाहल। पहले वाली का क्षेत्रफल २९० वर्ग मील है। इसमें सिर्फ एक गांव है जिसमें थोड़े से कनेत परिवार रहते हैं। समुद्रतल से ८,५०० फुट की ऊँचाई पर। रावी नदी का उद्गम इस घाटी में

है और यह चम्बा की रियासत में प्रवेश करने के पूर्व अच्छा खासा स्रोत रहती है। इसके किनारे से पहाड़ एकदम उठे चले गये हैं और १७००० तथा २०,००० फुट तक की चोटियां बनाते हैं जो बर्फ की नदियों और स्थायी बर्फ से ढकी रहती हैं। निचले नालों में बहुत से पाइन के वन हैं और ऊपरी ढालों पर बड़े बड़े झुन्डों के चरने के स्थान हैं। छोटा वंगाहल भी १०,००० फुट ऊँची एक श्रेणी द्वारा दो घाटियों में विभाजित होता है। पूर्वीय में कनेत और दागी लोगों की अट्ठारह तितर-वितर झोपड़ियां हैं। यहीं ऊल नदी निकलती है।

बाड़ा लाचा

कांगड़ा जिला पंजाब के कुलू उपविभाग की लाहुल छावनी से पहाड़ी दर्रा ३२°४९' उत्तरी अक्षांश और ७७°२८' पूर्वीय देशान्तर पर स्थित है। यह मध्य एशियाई व्यापारी मार्ग पर है। दर्रा समुद्रतल से १६,५०० फुट की ऊँचाई पर है। इसे बोझ से लदे हुये याक और टट्टू केवल गर्मी में पार कर सकते हैं। चन्द्रा और भागा (चिनाब) नदियां दर्रे के दोनों ओर से निकलती हैं।

चरी

पंजाब के कांगड़ा जिले में एक गांव है। यह कोट कांगड़ा के निकट स्थित है। १८५४ में एक मन्दिर की नींव और एक खुदा हुआ पत्थर खोदे जाने के बाद पहली बार यहां मिला था। खुदावट में बौद्ध मत के नियम थे और पत्थर के सामने की ओर खुदे हुये सात सुअरों के चित्र थे। वह तान्त्रिक देवी वज्र-वराही की मूर्ति थी।

दन्खर

स्पिती की छावनी की प्राचीन राजधानी पंजाब के कांगड़ा जिले के कुलू उपविभाग में स्थित है और अब भी नोनो या स्पिती के उत्तराधिकारी सूबेदार की राजधानी है। जनसंख्या प्रायः १००० है। यह समुद्र-तल से १२,७०० फुट ऊँचे एक ढाल पर स्थित है। किले की जायदाद सरकार की है और गेलुप्का के बौद्ध भिक्षुओं का एक मठ किले के एक ओर को है। यहां के निवासी असली तिब्बतीय हैं।

धवला धार

पंजाब के कांगड़ा जिले की पहाड़ी श्रेणी बाहरी हिमालय की श्रेणी का एक निकला हुआ भाग है। यह कांगड़ा घाटी और चम्बा के बीच की सीमा बनाती है। मुख्य श्रेणी यहां निचली भूमि से एकदम उठी चली गई है। इसमें कोई छोटी पहाड़ियां नहीं हैं। इसकी ऊंचाई नीचे की घाटी से १३,००० फुट है। श्रेणी दानेदार पत्थर की बनी है, यह श्रेणी इतनी एकदम उठी हुई है कि इसकी चोटी पर बर्फ ठहर नहीं सकता। नीचे बर्फ के ऊसर मैदानों के बाद देवदारू के पेड़ हैं, उनके नीचे सिन्दूर के पेड़ हैं और अन्त में खेती की जाने वाली घाटी है जो स्थायी धाराओं द्वारा सींची जाती हैं। सब से ऊंची चोटी समुद्र-तल से १५,९५६ फुट की ऊंचाई पर है, घाटी के ऊपर इसकी ऊंचाई लगभग २,००० फुट है। धर्मशाला कांगड़ा जिला का हेडक्वार्टर, धवला धार के दक्षिणी ढाल पर स्थित है। धवला-धार का अर्थ है 'सफेद' या 'सफेद श्रेणी'।

धर्मशाला

पंजाब के कांगड़ा जिले का हेडक्वार्टर इस पहाड़ी स्टेशन में है। यह ३२°१३' उत्तरी पर है आबादी प्रायः ७,००० है धर्मशाला धवला-धार के एक ढाल पर कांगड़ा से १६ मील उत्तर-पूर्व में स्थित है। यहां प्राकृतिक सुन्दर दृश्य हैं। यह पहले एक छोटी सी छावनी थी।

धवला धार के ढालों पर एक ऐसा स्थान मिला जहां ऊसर भूमि में एक पुरानी हिन्दू धर्मशाला थी। इसी से छावनी का यह नाम पड़ा है। बस्ती का ऊपरी भाग ७,१११ फुट ऊँचा उठा हुआ है यहां डाकखाना और दो बाजार हैं। ऊपरी और निचली बस्तियां बहुत सी सड़कों द्वारा मिली हैं। जिनमें से एक लम्बाई में पांच मील है। इसका ढाल साधारण है और इस पर गाड़ियां चल सकती हैं। अन्य सड़कें पहाड़ी के पास हैं और एकदम ऊँची नीची हैं। ऊपरी बस्ती में तीन समतल सड़कें हैं। एसेम्बली की इमारत बहुत सुन्दर

है। उसमें एक सार्वजनिक हाल, एक लाइब्रेरी और वाचनालय हैं। बस्ती के एकदम ऊपर ही धर्मकोट नाम की एक पहाड़ी उठी हुई है। वहां कुछ सुन्दर झरने भी हैं जो घूमने योग्य हैं। ये झरने भागसू नाथ में हैं। ४ अप्रैल १९०५ के भूकम्प में १,६२५ आदमी धर्मशाला में ही नष्ट हुये, यह निश्चित कर कर दिया गया है कि धर्मशाला में जिले का हेडक्वार्टर रहेगा। दफ्तर भी बन गये हैं।

धर्मशाला का दृश्य अपने ही ढंग की महत्ता का है। बस्ती धवलाधार के ही एक ढाल को घेरे हुये है और इसमें ओक और दूसरे जङ्गली पेड़ों के वन हैं। इसके ऊपर देवदारु से ढका हुआ पहाड़ी भाग उच्च शिखरों की ओर ऊँचा होता चला गया है। यह छः महीने बर्फ से ढके रहते हैं और इतने ऊँचे हैं कि आकाश को छूते जान पड़ते हैं। और इस पर एक जीर्ण किला (चोटी पर है) नीचे हरी-भरी कांगड़ा घाटी है, जिसमें चावल के खेतों की हरियाली देखते ही बनती है और ग्रामीण-शान्ति का एक दृश्य देखने को मिलता है। बैलगाड़ी की सड़कें इसे मैदानों से मिलाती हैं जो दक्षिण में होशियारपुर से और पश्चिम में पठानकोट होकर गई है। पठानकोट से एक तांगा चलता है और एक टेलीग्राफ की लाइन धर्मशाला और पालनपुर को अमृतसर व लाहौर से जोड़ती है। वर्षा बहुत भारी होती है, और वायुमण्डल विचित्र ढङ्ग से बरसात के तीन मासों में गीला रहता है। औसत वर्षा १२६ इंच होती है यह संख्या प्रान्त के किसी दूसरे भाग में नहीं पाई जाती। जनवरी, फर्वरी और मार्च में भी तूफान बहुत आते हैं। डाल की झील पर डाल का मेला लगता है। उसमें बहुत से गद्दी और दूसरे हिन्दू उपस्थित होते हैं। भागसू नाथ का प्रसिद्ध मन्दिर बस्ती से २ मील पूर्व को है।

हरीपुर

पंजाब के जिले कांगड़े की डेरागोपी पुर तहसील का पुराना किला व गांव बानगंगा-धारा के किनारे, कांगड़ा किले से ९ मील दक्षिण-पश्चिम की तरफ स्थित है। प्रायः इसको तेरहवीं सदी में हरीचन्द (कांगड़ा के कटोच राजा) ने बसाया था। १८१३ में यह रणजीतसिंह के अधिकार में चला गया।

ज्वाला मुखी

पंजाब के कांगड़ा जिले की डेरा गोपीपुर तहसील में प्राचीन स्थान है। यह कांगड़ा बदाऊं जाने वाली सड़क पर एकदम ऊंची उठी हुई पहाड़ियों की श्रेणी की तलैटी में स्थित है जो व्यास घाटी की उत्तरी सीमा बनाती हैं। यह मुख्यतया ज्वालामुखी देवी के मन्दिर के लिए विख्यात है। कहते हैं कि ज्वालामुखी देवी के मुंह में से आग निकलती रहती है। इनका मन्दिर व्यास-घाटी में स्थित है और देखने योग्य स्थान पर बना है। एक दूसरी गाथा के अनुसार जलन्धर नाम के असुर के मुंह से आग की लपटें निकलती थीं। जलन्धर दैत्यों का राजा था। शिव जी ने पहाड़ों पर भेज दिया था इसी से जलन्धर के दोआब का नाम पड़ा है। इसकी छतरी पर सोने का पानी चढ़ा है और इसमें चांदी की तश्तरियों का एक मुड़ने वाला दरवाजा बहुत सुन्दर है। इसे सिक्खों के राजा खड्ग सिंह ने भेजा था। मन्दिर के अन्दर का भाग ३ फुट गहरे एक वर्गाकार गढ़े का बना हुआ है जिसके चारों ओर एक पगडण्डी है। बीच में चट्टान कुछ खोखली है उसमें एक बड़ा छेद बना हुआ है, और रोशनी छोड़ने पर गैस की लपट निकलने लगती है। गैस गढ़े की दीवारों की नालियों से दूसरे बहुत से बिन्दुओं पर भी निकलती है। यह बहुत धीरे-धीरे इकट्ठा होती है और उपस्थित ब्राह्मण जब यात्री बहुत से होते हैं घी डालकर लपटों को बनाए रखते हैं। वहां किसी प्रकार की कोई मूर्ति नहीं है, लपटें निकालने वाली दरार देवी का अग्निमुख समझा जाता है, जिनका शिररहित शरीर भवन के मन्दिर में बताया जाता है। मन्दिर की आय भोजकी पुरोहितों की होती है। किसी समय कटोच के राजाओं ने यहां की वसूलियों के कुल अथवा अधिकतर भाग का अनुमान लगाया था और मुसलमानी राज्य में एक आने का चुंगी का कर सभी यात्रियों पर लगा दिया था। वर्ष भर की इनकी संख्या बहुत बड़ी

हो जाती है और सितम्बर, अक्टूबर के खास उत्सव पर ५०,००० की तादाद इकट्ठा हो जाती है, जिसमें से बहुत से दूर-दूर के स्थानों से आते हैं। दूसरा उत्सव मार्च में होता है। छः गर्भ खनिज पदार्थ के चश्मे पास में पाये जाते हैं इनमें साधारण नमक तथा कई प्रकार के खनिज पदार्थ मिश्रित रहते हैं। पटियाला के राजा के द्वारा बनवाई हुई एक सराय मन्दिर से लगी हुई है, और वहां आठ धर्मशालाएं अथवा यात्रियों के लिए विश्राम घर हैं। मन्दिर को ४ अप्रैल १९०५ के भूकम्प से बहुत थोड़ी हानि हुई।

काँगड़ा क़स्बा

(नगर कोट, कोट कांगड़ा)। पंजाब के कांगड़ा ज़िले में क़स्बा है। पहले ज़िले का हेडक्वार्टर था, अब कांगड़ा तहसील का हेडक्वार्टर निचली श्रेणियों के उत्तरी ढाल पर वाकय जो ज़िले के केन्द्र में से होकर गई हैं यह धर्मशाला के सामने है और यहां से बहुत अच्छी तरह कांगड़ा घाटी दिखाई देती है। इसके निचले बहिप्रदेश में (भवन नाम के) देवी बजरेश्वरी का मन्दिर है, जिसकी सुनहली टोपी, १९०५ के भूचाल तक देखने की वस्तु रही थी और जिसमें १४३० के लगभग का संस्कृत का प्राचीन लेख खुदाया था। इस पत्थर पर कांगड़ा के कटोच राजा संसार चन्द प्रथम का भी उल्लेख है। कस्बे के दक्षिण की ओर ऊपर की ऊंची पहाड़ी पर कोट कांगड़ा या 'किला' खड़ा है जो तीन ओर से दुर्गम टीलों द्वारा घिरा हुआ है। इसके सबसे ऊंचे भाग में कांगड़ा के पुराने कटोच राजाओं के निवास-स्थान और मन्दिर थे। क़स्बा किले मन्दिरों सहित ४ अप्रैल, १९०५ के भूकम्प में नष्ट हो गया था जिसमें १,३३९ जानें इस कस्बे से गई थीं।

कांगड़ा प्राचीन काल से कटोच राजाओं का मज़बूत किला रहा है। फिरिश्ता ने अपने भूमिका के परिच्छेद में कन्नौज के पूर्व काल के एक राजा की लूटमार का बयान करते हुए जो कमाऊं से कश्मीर तक की पहाड़ियों पर चढ़ गया था और जिसने ५०० छोटे-मोटे सरदारों को दबा दिया था। स्पष्टतया नगरकोट के राजा का उल्लेख किया है। मन्दिर की दौलत ने ग़ज़नी के महमूद का ध्यान आकर्षित किया, जिसने १००९ में किले को ले लिया और मन्दिर को लूट लिया और कहा जाता है कि ७०,००० सोने के दीनार, ७०० मन सोने और चांदी की तश्तरी, २०० मन शुद्ध सोना २,००० मन कच्ची चांदी, और २० मन जवाहिरात (जिनमें मोती, मूंगे, हीरे, और लाल थे) ले गया। वह मन्दिर जिसे महमूद ने लूटा था शायद किले के अन्दर बना हुआ था और भवन की देवी का मन्दिर नहीं था (जैसा कि समझ लिया गया है)। पैंतीस वर्ष उपरान्त कहा जाता है कि इस पर चार महीने तक लगातार हमला होता रहा और अन्त में इस पर फिर से हिन्दू राजाओं का अधिकार हो गया यह दिल्ली के राजा के आधीन थे। १३६० में कांगड़ा फ़ीरोज़ शाह के हाथ में चला गया। उसने फिर से मन्दिर को लूटा और १३८८ में राजकुमार महमूद तुग़लक दिल्ली से भागा और उसने यहां एक शफाखाना खोला, फिर बाद में १३९० में उसे गद्दी मिल गई। कांगड़े में फौज स्थायी रूप से मुग़लों के समय में रहती थी और १७५२ में मिलाए जाने पर इसे अहमद शाह दुर्रानी के हाथ में चला जाना चाहिए था, मगर सूबेदार सईफ अली खाँ ने इसे छोड़ने से इन्कार कर दिया और स्वयं २० वर्ष तक किले में डटा रहा। १७७४ में उसकी मृत्यु हो जाने पर कांगड़े के राजा संसारचन्द ने किले पर धावा बोला पर स्वयं हथियाने में असमर्थ होकर उसने सिक्ख नेता जय सिंह कन्हैया को बुलाया। जय सिंह ने किसी कारण से १७८५ में में अपनी सेना हटा ली और संसार चन्द ने किले पर कब्ज़ा कर लिया। कांगड़े पर १८०६ से १८०९ तक गुरखों के हमले होते रहे। रणजीत सिंह की मदद से गुरखे भगा दिये गये। पर सिक्खों का अधिकार हो गया। यह १८४६ में मिला लिया गया। सूबेदार ने पहले तो छोड़ने से इन्कार कर दिया था, परन्तु जब क़िले पर हमला हुआ तो दो ही महीनों में हाथ से निकल गया। ज़िले के हेड क्वार्टर पहले तो काँगड़े में रखे गये, परन्तु १८५५ में धर्मशाला को बदल दिए गये।

देवी का मन्दिर जिसका जिक्र पहले आ चुका है उत्तरी भारत के सबसे प्राचीन और प्रसिद्ध मन्दिरों में से एक है और यहां बहुत से यात्री मैदानों से मार्च, अप्रैल, और अक्टूबर में होने वाले बड़े उत्सव पर आते हैं। कांगड़ा घाटी की गाड़ी की सड़क पर स्थिति होने के कारण यह भीतरी व्यापार का महत्त्वपूर्ण केन्द्र बन गया है। यहां एक ऐंग्लो वर्नाक्यूलर मिडिल स्कूल और अस्पताल है।

कन्हियाड़ा गाँव

जिले की तहसील कांगड़ा में है। यह धर्मशाला से ४ मील पूर्व में स्थित है। कृष्ण-यशः-आराम अथवा शायद कृष्ण-विहार का अपभ्रंश है। यहां ब्राह्मी और खरोष्ठी की घसीटों में दो बड़ी पत्थर की चट्टान खुदी हुई मिली हैं। द्वितीय शताब्दी (ईसा के बाद) में इस स्थान पर एक बौद्ध-मठ (आराम) था। गांव में और पड़ोस में स्लेट निकाली जाती है। कन्हियाड़ा को ४ अप्रैल १९०५ के भूकम्प में नुक़सान पहुँचा।

कीलङ्ग

(कैलङ्ग)।—कांगड़ा जिले के कुलू उपविभाग की लाहुल छावनी में मुख्य ग्राम है। यह भागा नदी के दाहिने किनारे पर चन्द्रा के सङ्गम से क़रीब ४ मील ऊपर बसा हुआ है। यहां से होकर रोहतंग से मुख्य व्यापारिक मार्ग बाड़ा लाचा दर्रे को जाता है। यहां गर्मी के महीनों में एक डाकखाना रखा जाता है, और यह गांव बहुत वर्षों से मोरावियन मिशन का एक स्टेशन रहा है, जो एक मदरसा और एक शफ़ाखाने का संचालन करता है। इसमें लाहुल के ठाकुर का दरबार घर और एक प्रयोगशाला (समुद्रतल से १०,०८७ फुट ऊंची) भी हैं।

नादऊँ क़स्बा

कांगड़ा जिले की हमीरपुर तहसील में छोटा-मोटा कस्बा व्यास के बाएं किनारे पर कांगड़ा कस्बे के दक्षिण-पूर्व में २० मील की दूरी पर स्थित है। यह कभी राजा सन्सार चन्द का प्रिय निवास-स्थान रहा था।

नगर

कांगड़ा जिले के उपविभाग और तहसील कुलू में एक गांव है। यह व्यास नदी के बाएं किनारे पर सुल्तानपुर से १४ मील उत्तर में स्थित है। इसमें तहसील के हेडकार्टर हैं। नगर कुलू राजाओं की राजधानी रहा था, जिनके प्राचीन निवास-स्थान एक महत्त्वपूर्ण जगह पर बने हैं जहां से १००० फुट के लगभग की ऊंचाई से नदी दिखाई देती है, और अब वह कुलू के असिस्टेण्ट कमिश्नर के रहने के काम आता है। ४ अप्रैल १९०५ के भूकम्प में इसे बहुत नुकसान हुआ। इसका दृश्य अति सुन्दर है। और यही इस गांव की मुख्य विशेषता है। नगर में कुलू वन-विभाग तथा कुलू के असिस्टेण्ट इन्जीनियर के हेडेकार्टर हैं यहां डाक और तार घर भी है।

निर्मन्द

कांगड़ा जिले के कुलू उपविभाग में ग्राम स्थित है। प्रायः इसके समीप ही एक पुराना मन्दिर परशुराम की स्मृति में खड़ा है, जिसमें एक तांबे की तश्तरी पर संस्कृत में सनद लिखी हुई रखी है, यह शायद ६१२ वर्ष ईसा के बाद की है। इसमें यह लिखा है कि सुलिसग्राम का गांव राजा समुद्र सेन द्वारा ब्राह्मणों को दिया जाता है जिन्होंने निर्मन्दा में अथर्ववेद का अध्ययन किया था। उस समय निर्मन्दा एक मन्दिर था जो त्रिपरन्तक देव अथवा शिव का कहा जाता था और मिहिरेश्वर वा सूर्यदेव के मन्दिर के नाम से पुकारा जाता था।

नूरपुर क़स्बा

कांगड़ा जिले के उसी नाम की तहसील का हेडक्वार्टर है। यह धर्मशाला के पश्चिम में ३७ मील पर पठान कोट को जाने वाली सड़क पर एक पहाड़ी की पश्चिमीय दिशा में है। नूरपुर का पुराना नाम धर्मेरी था, उसके बाद इसका 'नूरपुर' नाम शाहंशाह नूरुद्दीन जहांगीर के सम्मानार्थ रक्खा गया। इसमें एक विचित्र लकड़ी का मन्दिर है। क़िले से पहले यहां पर एक पत्थर का मन्दिर था। मन्दिर की संग तराशी उस क़िस्म

की हैं जो प्रान्त में कहीं और देखने को नहीं मिलती। यहाँ के राजा ने सिक्खों से अपने राज्य की रक्षा करने में पूरे ज़ोर लगा दिया। अन्त में रणजीतसिंह ने नूरपुर को १८१५ में ले लिया।

मुख्य निवासी राजपूत, कश्मीरी और खत्री हैं। खत्री उन लोगों के वंशज हैं जो लाहौर से भागकर आये थे। इनके भागने का कारण बाद के मुसलमान शासकों की ज्यादती थी। काश्मीरी लोग १७८३ में नूरपुर में बस गये क्योंकि वे अपने देश से अकाल के कारण भाग आये थे। वे अपने साथ अपने देश की घाटी के राष्ट्र के बने हुये पशमीना ऊन के दुशाले लाये थे और शीघ्र ही उन्होंने क़स्बे को इनके और दूसरे ऊनी कपड़ों के बनने के लिए प्रसिद्ध कर दिया। फ्रांस और प्रशा की लड़ाई के बाद यहां के शालों को बहुत धक्का पहुँचा और व्यापार शिथिल पड़ गया, और अब केवल थोड़े से शाल और घटिया क़िस्म के ऊनी कपड़े तय्यार होते हैं। नूरपुर बहुत समय तक जिले का मुख्य क़स्बा और व्यापारिक केन्द्र रहा। इसकी मुख्य कला (शाल बुनना) के नष्ट हो जाने से यह अब बहुत घट गया है। यहां एक ऐंग्लो वर्नाक्युलर मिडिल स्कूल और अस्पताल है।

पठयार

कांगड़ा जिले में यह गांव धर्मशाला से १२ मील दक्षिण-पूर्व को स्थित है। यहां पुराने ढङ्ग का एक शिलालेख पाया गया है। उस पर ब्राह्मी और खरोष्ठी लिपियों की खुदाई है। उनके अक्षर उल्लेखनीय आकार के हैं। उनमें शायद तृतीय शताब्दी (ईसा से पूर्व) में एक तालाब का ज़िक्र आया है। गाँव को अप्रैल ४, १९०५ के भूकम्प में बहुत हानि हुई।

रोहतंग

कांगड़ा ज़िले के कुलू उपविभाग में दर्रा हिमालय की श्रेणी के आरपार है जो कुलू घाटी को लाहुल से विभक्त करती है। दर्रे से होकर लाहुल में कोक्सर से कुलू में कोठी मनाली से रलहा तक जाया जा सकता है। ऊँचाई कुल १३,३२६ फुट है। यह अत्यन्त नीचा तल है क्योंकि दोनों ओर की ऊँचाई १५,००० और १६,००० फुट है, पड़ोस में १२ मील के अन्दर २०,००० फुट से अधिक ऊँची चोटियां हैं। कुलू और कांगड़ा से जाने वाली ऊँची सड़क इस दर्रे पर से होकर लेह और यारकन्द को जाती है। इस दर्रे पर से होकर लदे हुये खच्चर और टट्टू चले जाते हैं। दर्रा खतरनाक है और साधारणतया नवम्बर से मार्च के अन्त तक अथवा उसके बाद तक भी दुर्गम रहता है। इसमें से होकर मानसूनी वर्षा चन्द्रा घाटी तक पहुँच जाती है व्यास इसके दक्षिणी ढाल से निकली है।

सुजानपुर तीरा

कांगड़ा जिले की हमीरपुर तहसील में एक गांव है। यह व्यास पर बसा हुआ है। दूसरा भाग तीरा या 'महल' पर पड़ा है जिसे १७८५ में कांगड़ा के कटोच राजा अभय चन्द ने शुरू करवाया था। उसके पोते सुजान चन्द ने कस्बे की नींव डाली, और सन्सार चन्द महान कटोच शासक ने इसे पूरा कराया और अपना दरबार यहां लगाया। स्थान देखने योग्य है, यहां एक उत्तम परेड का मैदान है और घास का मैदान भी है जो पेड़ों से घिरा हुआ है; परन्तु महल (जो एक शानदार शाही भवन था) टूटफूट गया है।

सुल्तानपुर गाँव

पंजाब के कांगड़ा जिले की कुलू तहसील का हेडक्वार्टर है। यह कुलू उपविभाग में स्थित है। यह व्यास और सरवरी के संगम पर और भूभूदर्रे के नीचे ४,०९२ फुट की ऊंचाई पर बसा हुआ है। इसकी नींव कुलू के राजा जगतसिंह द्वारा सत्रहवीं सदी में पड़ी थी। यह स्थान पंजाब और लेह तथा मध्य एशिया के मध्य के व्यापार का महत्त्वपूर्ण केन्द्र है। यहां एक शराबख़ाना है जहां देशी शराब बनती है; यहां एक वर्नाक्युलर मिडिल स्कूल और एक सरकारी शफ़ाखाना है। १९०५ में ४ अप्रैल के भूकम्प में गांव प्रायः नष्ट हो गया था।

ज़िला शिमला

प्राकृतिक वर्णन

शिमला नाम 'शामला' से बिगड़कर बना है। पहले यह जिला पञ्जाब के दिल्ली-विभाग में था। इसमें नौ छोटे प्रदेश सम्मिलित हैं। ये प्रदेश शिमला की पहाड़ी रियासतों में स्थित हैं। ये ३०° ५८' और ३१°२२' उत्तरी अक्षांश तथा ७७°७' और ७७°४३' पूर्वीय देशान्तर के मध्य में स्थित हैं। इनका कुल क्षेत्रफल १०१ वर्ग मील है। कस्बा उन ढालों पर स्थित है जो जक्को की पहाड़ियों से नीचे को गए हैं, एवं ६ वर्ग मील के क्षेत्रफल में फैला हुआ है। इसके उत्तर-पूर्व में कोट खाई और कोटगढ़ के परगने हैं, पहला शिमले से सड़क द्वारा ३२ मील पर गिरी की घाटी में है। दूसरा हाटू श्रेणी के उत्तरी ढाल पर २२ मील (सड़क से ५०) सतलज की घाटी के ऊपर है। भरौली प्रदेश पहाड़ी भूभाग की एक सङ्कीर्ण पट्टी है। यह सबाथू से क्यारीघाट तक फैली हुई है। लगभग ८ मील लम्बी है और २ से ६ तक चौड़ी। इन टुकड़ों के अतिरिक्त, जुतोघ, सबाथू, सोलोन, दगशाई, और सनावर (लारेंस फ़ौजी पड़ाव का स्थान) की छावनियां इसी जिले में शामिल हैं।

पश्चिमीय हिमालय की महान् केन्द्रीय श्रेणी की दक्षिणी सीमा पर ये पहाड़ियां तथा देशी रियासतें स्थित हैं। बाशहर रियासत में स्वयं मुख्य श्रेणी से ही धीरे-धीरे करके वे नीची होती चली जाती हैं और अम्बाला जिले में पञ्जाब के मैदान के साधारण तल पर पहुँच जाती हैं। इस प्रकार ये गङ्गा तथा सिन्धु के बड़े मैदानों के बीच में (जिनका प्रतिनिधित्व यहां पर उनकी सहायक नदियां जमुना तथा सतलज करती हैं) टेढ़ा दक्षिण-पश्चिमीय ढाल बनाती हैं। शिमले से कुछ मील उत्तर-पूर्व को ढाल दो मुख्य पहाड़ियों में बँट जाता है, जिनमें से एक सतलज की घाटी के चारों ओर मुड़कर उत्तर-पश्चिम को मुड़ जाती है। दूसरी, पहाड़ी जिस पर शिमला का स्वास्थ्यप्रद स्थान स्थित है, दक्षिण-पूर्व को मुड़कर सबाथू के उत्तर में कुछ मील पर एक विन्दु पर पहुँच जाती है, जहां यह समकोणों पर बाहरी अथवा उप-हिमालय-श्रेणी के पर्वतों से मिल जाती है; उप-हिमालय-श्रेणी मुख्य श्रेणी के समानान्तर गई हुई है। शिमला के दक्षिण-पूर्व में, सतलज और टौन्स के मध्य की पहाड़ियाँ चौर की बड़ी चोटी को केन्द्र बनाती है, जो समुद्र से ११,९८२ फीट है। तमाम पहाड़ियों भर में देवदार के जंगल भरे पड़े हैं। शीत कटिबंध के पेड़ स्थायी हिम की सीमा तक के ढालों पर खड़े हैं। शिमले के आस-पास की प्रकृति उत्तम दृश्यों का समूह उपस्थित करती है। ये दक्षिण में अम्बाले के मैदानों को छूते हैं। सामने ही सबाथू तथा कसौली की पहाड़ियां हैं और चौर का बड़ा पर्वत जरा बाईं ओर को है जब कि दर्शक के पैरों के ठीक नीचे बड़ी नालियां हैं जो पर्वतीय-प्रदेशों की गहरी घाटियों में चली गई हैं। उत्तर की ओर आँख को आपस में मिली हुई श्रेणियों का जाल दिखाई देता है एक श्रेणी दूसरी के ऊपर उठती हुई दिखाई देती हैं और कुछ ही दूर पर बर्फदार चोटियों का चढ़ाव दृष्टिगोचर होता है। ये चोटियां निर्मल आकाश-खण्ड से लड़ती हुई अपनी वीर-प्रकृति का परिचय देती हैं। अड़ोस-पड़ोस की मुख्य नदियां सतलज, पबर, गिरी गङ्गा, गम्भर और सरसा हैं।

भूगर्भ

शिमले के पास में पाई जाने वाली चट्टानें सारी की सारी कार्बोनिशियस रीति से बनी हैं और चार विभागों में विभक्त हो जाती हैं क्रोल, इन्फ्रा-क्रोल, ब्लैनी, और इन्फ्रा ब्लैनी, या शिमला की स्लेटें सब से निचले तल पर दिखाई देती हैं, उनके बाद ब्लैनी का विभाग आता है, जिससे कंकड़दार स्लेट के दो बड़े टुकड़े हैं, ये सफेद घिसी हुई स्लेटों से अलग होते हैं (ब्लीच स्लेटें) और इनके ऊपर गुलाबी डोलोमाइट के पत्थर के चूने की चट्टान है। ब्लैनी विभाग के ऊपर काली कार्बोनिशियस स्लेट की चट्टान है। ऊपर के तलों में बहुत सी क्वार्टजाइट और स्क्रिट की बड़ी चट्टानें हैं, जिन्हें बोइलियोगंज

की तली कहते हैं; वे शिमले का काफी भाग ढके हुए हैं और जुतोंव तक फैली हुई हैं। इनके ऊपर क्रोल है, जिसमें कार्बोनेशियस स्लेटें और कार्बोनेशियस और क्रिस्टेलीन चूने के पत्थर हैं। इनमें हार्नब्लेण्डेगार्नेट स्किस्ट की तलियां भी हैं जो शायद पुरानी ज्वालामुखी राख की तहों को दिखाती हैं; वे अधिकतर प्रास्पेक्ट पहाड़ी और जुतोघ में विकसित होती हैं। भूगर्भ के अन्दर बनी हुई ज्वालामुखी लावा की डायोराइट चट्टानें जुतोघ के दक्षिणी ढालों पर क्रोल विभाग के निचले चूने के पत्थरों के बीच में पाई जाती हैं। इन चट्टानों में कोई भी जानवरों के अवशिष्ट भाग नहीं हैं, और फलस्वरूप उनका भूरचना-काल अज्ञात है।

वनस्पति

'फ्लोरा सिमलेन्सिस' नामक पुस्तक (मिस्टर डब्ल्यू० बी० हेम्सले के द्वारा सम्पादित) में स्वर्गीय सर हेनरी कॉलेट ने पेड़ों और उगने वाले पौधों की १,३३७ प्रकारें गिनाई हैं; परन्तु यह संख्या खूब बढ़ाई जा सकती है यदि छोटी देशी रियासतों के पेड़ों की भी संख्या मिल जाय और यदि बशहर का पहाड़ी भाग कनावार सहित मिला लिया जाय (जिसके विषय में उपरोक्त पुस्तक में कुछ भी नहीं लिखा है। देवदार, पाइन, और फर नाना प्रकार के ओक व मैपिल इहोडोडेण्ड्रन का पेड़ हिमालय का हार्स-चेसनट, और भिन्न-भिन्न प्रकार के बकथार्न व स्पिंडिल पेड़ (इहमनूस व यूनिमस), तथा फिकस व सेल्टिस, साधारणतया पाए जाते हैं; आइवी, अंगूर, व हाइड्रेंगिया की बेलें भी देखने को मिलती हैं, जिनमें की झाड़ियाँ और घासें यूरोप की वनस्पति से मिलती-जुलती हैं। बशहर में पर्वतीय वनस्पति विविध प्रकार की भरी पड़ी है, और कनावाड़ की बिल्कुल तिब्बत की तरह की है।

जानवर

शिमला की पहाड़ियों में तेंदुए और भालू बहुत हैं। ऐमू या सिरो, गुलाल, काकर अथवा भौंकने वाला हिरन, और दूसरे प्रकार के हिरन मिलते हैं। बहुत तरह के फीजेण्ट जानवर ऊँची श्रेणियों में हैं, चकोर और जंगली मुर्गी निचली श्रेणियों पर बहुतायत से पाई जाती हैं।

जलवायु तथा तापक्रम

योरोपीय लोगों के लिए जलवायु प्रशंसनीय तथा रहने क़ाबिल है, और यह जिला इसी लिए बहुत से अस्पतालों तथा छावनियों के स्थान के लिए चुना गया है। शिमले में चार मौसम होते हैं। जाड़ा दिसम्बर से फ़र्वरी तक रहता है, औसत उच्चतम तापक्रम ४९° व ४४° के बीच में रहता है, परन्तु तेज पालों और भारी हिमवर्षा के कारण औसत अल्पतम तापक्रम कभी-कभी ३४° तक रह जाता है। तापक्रम फ़र्वरी से मार्च तक तेज़ी से बढ़ता है, और मार्च से जून तक गर्म-मौसम की दशाएँ रहती हैं, तब औसत उच्चतम तापक्रम ५६° (मार्च में) से ७४° (जून में) तक चला जाता है। मई, १८७९ में सबसे अधिक तापक्रम ९४° तक पहुँच गया था। उतना कभी फिर बढ़ा नहीं। वर्षा ऋतु जुलाई से सितम्बर तक रहती है। सितम्बर के क़रीब-क़रीब मध्य में मानसून हवाएँ लौटने लगती हैं, और अक्टूबर व नवम्बर के दिनों में अच्छा मौसम रहता है तथा तापक्रम तेज़ी से गिरने लगता है। हैज़ा शिमला सबाथू, और दगशई में १८५७, १८६७, १८७२, और १८७५ में फैला था, हालाँकि कोई न कोई स्थान हर बार बच ही गया था। १८५७ में योरोपीय लोगों की मृत्यु हैज़े के कारण ३·५ प्रति हजार हुई, और १८६७ में ४२ प्रति १,००० हुई। गोइटर, कोढ़, और पत्थर फैलने वाली बीमारियाँ हैं, और सिफ़लिस तो पहाड़ी लोगों में अति साधारण कही जाती है।

वर्षा

वार्षिक वर्षा का औसत शिमले में ६१ इंच, कोटगढ़ में ४६, और किल्त्रा में ४० है। मानसून के तीन महीनों में शिमले की औसत वर्षा ४१ इंच है।

इतिहास

शिमला जिले का निर्माण करने वाले प्रदेश के टुकड़े, १८१५-१६ के गुरखा-युद्ध के समय से मिलाए जाने लगे। बहुत ही जल्दी पहाड़ी रियासतें,

तथा काङ्गड़ा जिले का बाहरी भाग, जलन्धर (जुलुन्दुर) के कटोच राज्य के भाग बन गए; और, उस मुख्य राज्य के नष्ट हो जाने पर उनका राज्य छोटे-मोटे राजाओं के द्वारा उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ तक होता रहा। जब गुरखों ने इन पर अपना जबर्दस्ती अधिकार जमाना चाहा तो उनके राज्यों पर १८१५ में हमला किया गया, और तब ब्रिटिश फ़ौजों के अधिकार में शारदा व सतलज के बीज का सारा पहाड़ी इलाक़ा था। कुमाऊँ और देहरादून ब्रिटिश राज्य के भाग बन गए; कुछ अलग के स्थान फ़ौजी पड़ाव के स्थान रखे गए, और केवन्यल रियासत का कुछ भाग पटियाला के राजा राजा को बेच दिया गया। इनके अलावा, किसी भी प्रकार, १८१५ में जीता हुआ भू-भाग पहाड़ी सरदारों को लौटा दिया गया, जिनसे इसे गुरखों ने छीन लिया था। गढ़वाल रियासत संयुक्त प्रान्त में मिला दी गई; परन्तु बचे हुए राज्य पंजाब के पराधीन राज्य बन गए, और मिलकर शिमले की पहाड़ी रियासतें कहलाते हैं। शिमले का छोटा जिला इन्हीं में से एक न एक का कुछ भाग लेकर बना है। पहाड़ी का कुछ भाग जिसके ऊपर शिमले का पहाड़ी नगर फैला है सरकार ने १८१६ में रखा था, और बाद में ज़मीन की एक पट्टी केवन्थल से १८३० में ली गई। जुतोघ नाम का ढाल, जो स्टेशन के केन्द्र से ३½ मील है, पटियाला के बदले में १८४३ में मिला था, यह भरौली के दो गाँवों की समता का था। कोट खाई और कोटगढ़, फिर, अँगरेजों के हाथों में आ गए, क्योंकि राना ने उन्हें छोड़ दिया; राना ने मामूली रियासत का मालिक बनने से इन्कार कर दिया था। सबाथू पहाड़ी शुरू से ही फ़ौजी क़िला रखी गई; और दूसरे टुकड़े (जिले के) भिन्न तारीखों में जोड़े गए। १८९९ में कुछ शासन-पद्धति में परिवर्तन हुए, जिनके कारण, कसौली और कालका, जो तब तक इस जिले में थे, अम्बाला में तब्दील कर दिए गए।

जनसंख्या

जिले में ६ क़स्बे और ४५ गाँव हैं। तीन जन-गणना में से हरएक में यह आबादी थी: (१८८१) ३६,११९, (१८९१) ३५,८५१, और (१९०१) ४०३५१। १९०८ तक यह १२.६ प्रतिशत के हिसाब तक बढ़ गई। तब से बराबर बढ़ ही रही है। ये जनसंख्याएँ जाड़ों में हुई थीं, इसलिए इसकी गर्मी की आबादी का ठीक अनुमान नहीं लगाया जा सकता। गर्मी की आबादी अकेले शिमले के क़स्बे में १९०४ में, ४५,५८७ (म्युनिसिपैलिटी की सीमा में ३५,२५०, बाहर के क्षेत्र में १०,३३७) थी। यह जिला दो छोटी तहसीलों शिमला-व-भरौली और कोट खाई-व-कोटगढ़ में विभाजित है। इनके मुख्य दफ़्तर क्रमशः शिमले और कोट खाई में हैं। महत्वपूर्ण क़स्बा केवल शिमला है, जो भारतीय सरकार के गर्मियों के दफ़्तर का स्थान है, छावनियों का जिक्र पहले ही आ चुका है। ग्रामीण जनसंख्या सारी की सारी हिन्दू है, थोड़े से मुसलमान निवासी भी हैं जो अधिकतर यात्रीगण हैं। आबादी की सघनता प्रति वर्ग मील २९९.५ आदमी हैं। ग्रामों में बोली जाने वाली भाषा पहाड़ी है।

जातियाँ तथा उद्यम

कनेटे लोग (९०००) गाँवों में सबसे खास बाशिन्दे हैं। सारी पहाड़ी जातियों की तरह, वे साधारण दिमाग़ के सभ्य लोग हैं, चुपचाप शान्ति से अपना काम करते हैं और सरकार का हुक्म मानते हैं। दागी और कोली लोगों की (४,०००) मुख्य निचली जातियाँ हैं। कुल आबादी की ३९ प्रतिशत के लगभग कृषक है।

ईसाइयों के मिशन

शिमला बैप्टिस्ट मिशन १८६५ में चला था। अमेरिकन प्रेस्बीटिरियन मिशन का एक बाहरी-स्टेशन सबाथू में है, जो १८३७ में हथियाया गया था, और यह एक कोढ़ियों के शफ़ाखाने का इन्तज़ाम करता है और बहुत से मदरसों की भी देखभाल करता है। चर्च मिशनरी सोसाइटी की कोटगढ़ शाखा, १८४० में स्थापित हुई थी, वह पहाड़ी जातियों के लिए एक घूमने वाला मिशन है। चर्च मिशनरी सोसाइटी की भी एक शाखा, व एक एक मिशन गिरजाघर, शिमले में हैं, ... च में किया

इटी का एक स्टेशन, गारपेल जनाना मिशन की उन्नति के लिए है। १९०१ में जिले में ३६८ देशी ईसाई थे।

साधारण कृषि दशा

सारी निचली घाटियों में खेती होती है। जहाँ कहीं जमीन का ढाल माफिक पड़ता है, वहीं पहाड़ी पर चबूतरे बनाकर खेत बना लिए जाते हैं, अवश्य ही जमीन को ठीक करने में बहुत परिश्रम पड़ता है। यहाँ के निवासी भूमि का विभाग सिंचाई तथा खाद के अनुसार ही करना जानते हैं; वे जमीनें जिनमें सिंचाई होती है अथवा खाद डाली जाती है आम तौर से साल में दो फ़सल तय्यार कर देती हैं इसके विपरीत रही ढलवाँ खेत जो घरों से कुछ दूर पर होते हैं, और जिनमें न तो सिंचाई होती है और न खाद ही डाली जाती है, या तो कभी-कभी गेहूँ या जौ की फ़सलें वसन्त में उगाते हैं, या फिर निकृष्ट पतझड़ ऋतु का अनाज। हरएक किसान के पास, खेती करने की भूमि के अतिरिक्त, घासदार ज़मीन भी पर्याप्त मात्रा में है जिसमें मानसून वर्षा आरम्भ होने पर चराना बन्द कर दिया जाता है, और जो अक्टूबर व नवम्बर में काट ली जाती है।

कोटगढ़ में पैदा होती है, जहाँ ४१ एकड़ से चाय की पत्तियाँ १९०४ में तोड़ी गई थीं।

खेती के तरीक़े में सुधार

पिछले तीस-चालीस वर्षों में उल्लेखनीय वृद्धि काश्त किए जाने वाले क्षेत्रफल में नहीं हुई है; जब शिमले का क़स्बा आस-पास की पहाड़ियों पर बढ़ाया गया तो माँग घास, जंगली लकड़ी, और मजदूरों की प्राप्ति के लिए थी, न कि खेती की पैदावार के लिए। वास्तव में लोग सरकार से कुछ भी पेशगी नहीं लेते।

पशु, टट्टू, भेड़ें और सिंचाई

चौपाए छोटी पहाड़ी नस्ल के हैं। बहुत थोड़े टट्टू रखे जाते हैं, और भेड़ों और बकरियों की कोई महत्ता नहीं है। १९०३-४ में जितने क्षेत्रफल में काश्त की गई थी, उसमें से ७४५ एकड़, अथवा लगभग ७ प्रतिशत, में छोटी नहरों द्वारा सिंचाई हुई थी, जिनके द्वारा पहाड़ी स्रोतों का पानी ले जाया जाकर चबूतरेदार खेतों में डाला जाता है।

शिल्पकला व कारखानों का काम

उत्तरी भारत के हुनर की बहुत सी शिल्पकलाएँ शिमले के क़स्बे में देखने को मिलती हैं, क्योंकि गर्मियों में कलाकार यहाँ आ जाते हैं, परन्तु उनमें से बहुत थोड़े ही इस जिले के असली निवासी होते हैं। सबाथू में शाल बनाए जाते हैं जिन्हें काश्मीरियों का एक मुहल्ला तय्यार करता है; अन्य उल्लेखनीय दस्तकारियाँ कोट खाई में रद्दी लोहे का गलाना और टोकरियों का बुनना है।

वाणिज्य तथा व्यापार

चीनी तिब्बत से काफ़ी तिजारत होती है. यह तिजारत कोटगढ़ के निकट, वांगटू में रजिस्टर में दर्ज है। अधिकतर व्यापार, कुछ कारणवश, (बशहर में) रामपुर के साथ होता है। बाहर से आने वाली वस्तुएँ मुख्यतः ऊन, और नमक हैं; और यहाँ से जाने वाली चीज़ केवल सूती छींट के टुकड़े हैं। शिमले के निवासियों को प्रयोग के लिए जिन विविध वस्तुओं की आवश्यकता पड़ती है वे ख़ास तौर से मैदानों से आती हैं।

रेलें व सड़कें

कालका-शिमला रेलवे (२ फ़ीट ६ इंच चौड़ी पटरी की) शिमले में ख़त्म होती है। शिमला कालका से एक बैलगाड़ी वाली सड़क से और कसौली होकर एक दूसरी सड़क से भी मिला हुआ है। हिन्दुस्तान-तिब्बत की सड़क द्वारा शिमले से रामपुर और चीनी बशहर में जाया जा सकता है, एवं एक सड़क सुल्तानपुर (कुलू में) से आकर इससे नारकन्दा में मिलती है, इस प्रकार वह शिमला और लेह के बीच में आने-जाने के मार्ग को अत्यन्त सुगम बनाती है। उससे रामपुर से एक सड़क निकलकर मसूरी को चली गई है। एक दूसरी पश्चिम की ओर बिलासपुर को जाती है, जहाँ से यह एक तरफ़ तो मण्डी और सुकेत को चली गई है, और दूसरी तरफ़ नदौन व काङ्गड़ा को। सबाथू, दगशई. सोलोन, सनावर और कसौली सब के सब छोटी-छोटी सड़कों द्वारा मिले हुए हैं।

अकाल

जिले में कभी अकाल नहीं पड़ा, क्योंकि वर्षा बराबर होती रहती है और फ़सलें हमेशा यहाँ की थोड़ी कृषक-आबादी के लिए काफ़ी हो जाती हैं।

आबादी के विभाग और अधिकारीगण

दोनों छोटी तहसीलें, शिमला-व-भरौली और कोटखाई-व-कोटगढ़, एक-एक नायब-तहसीलदार के शासन में हैं। डिप्टी कमिश्नर की जो पहाड़ी रियासतों का सुपरिण्टेण्डेण्ट भी है, सहायता के लिए दो असिस्टेण्ट अथवा एक्स्ट्रा असिस्टेण्ट कमिश्नर होते हैं, जिनमें से एक जिले के कोष पर भी अधिकार रखता है। शिमला और पहाड़ी रियासतें प्रजा-विभाग मुहकमे का एक कार्य-विभाग बनाते हैं, और एक वन-विभाग भी।

दीवानी जज और अपराध

डिप्टी कमिश्नर, डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट की हैसियत से जिले के फ़ौजदारी के न्याय के लिए उत्तरदायी है; दीवानी का न्याय का काम एक डिस्ट्रिक्ट जज के हाथ में रहता है; और दोनों अफ़सरों के काम की देखभाल अम्बाला सिविल डिवीज़न का का डिवीज़नल जज (जो सेशन जज भी होता है) करता है। डिस्ट्रिक्ट जज शिमले व जुतोघ के स्मॉल कॉज़ेज़ कोर्टों का भी जज होता है। कसौली, जुतोघ, दगशई. सोलोन, और सबाथू का कैन्टुनमेण्ट मजिस्ट्रेट जिले भर का न्याय देखता है। उसके पास जुतोघ को छोड़कर बाकी इन सारी छावनियों के स्माल काज़ कोर्ट के अधिकार भी रहते हैं। दगशई, सोलोन, सबाथू, और जुतोघ के स्थानीय सरकारी अफ़सर जिले में तृतीय श्रेणी न्यायाधीश नियुक्त किए जाते हैं, किन्तु ये अपनी अपनी छावनियों के अन्दर ही अधिकार रखते हैं।

ज़मीन की मालगुज़ारी का शासन

शिमले की पहाड़ियों के मिलाए जाने से पूर्व यहाँ मालगुज़ारी की क्या पद्धति थी, इसके बारे में कुछ भी मालूम नहीं है। जब १८३४ और १८५६ के बीच में बहुत से छोटे समझौते हुए, तो एक स्थायी समझौता भी १८५६ व १९५९ के बीच में किया

७,००० रुपये हुये। यह छोटी तहसील बिलकुल पहाड़ियों में है।

कोट खाई व कोटगढ़ (कोटगुरू)

इन दोनों प्रदेशों से पंजाब के शिमला जिले की एक छोटी तहसील बनती है, जो ३१'४' व ३१'२२' उत्तरी तथा ७७'२९' व ७७'४३' पूर्वीय के बीच में स्थित है। इसका क्षेत्रफल ५२ वर्गमील है। यह सब ओर से शिमले की पहाड़ी रियासतों से घिरी हुई है। इसकी आबादी १८९१ में ११,५८१ थी परन्तु १९०१ में घटकर १०,६८१ रह गई। कोट खाई में मुख्य दफ्तर है। इसमें दस ग्राम हैं और १९०३-४ की मालगुजारी व टैक्सों का जोड़ १४,००० रुपये हुआ था। यह छोटी तहसील सारी पहाड़ियों में है जो विशेषकर कोट खाई में जंगलों से ढकी हुई हैं। कोटगढ़ हातू श्रेणी के एक ढाल पर बसा है जहां से सतलज दिखाई देती है।

दगशई

पंजाब के शिमला जिले की पहाड़ी छावनी ३०'५३' उत्तरी व ७७'४' पूर्वीय पर स्थित है। यहां कालका से शिमला जाने वाली बैलगाड़ी की सड़क दिखाई देती है। यह शिमले से ४०'४ मील की दूरी पर है। इसकी जमीन पटियाला के महाराजा ने १८४७ में दी थी। दगशई में एक ब्रिटिश पैदल रेजीमेण्ट का हेड कार्टर है, और गर्मियों के महीनों में वहां अम्बाला गैरासन की ब्रिटिश इन्फैण्ट्री का एक टुकड़ा आकर रहता है। आबादी (मार्च, १९०१), २, १९९।

केवन्थल के राजा के राज्य के अन्दर है, परन्तु वास्तव में शिमले का भाग होने के कारण राजा ने इसे १८८४ (*अट्ठारह सौ चौरासी*) में छोड़ दिया और इसकी एक अलग म्युनिसिपैलिटी बन गई, जिसके काम शिमले का डिप्टी-कमिश्नर करता है। १९०२-३ में अन्त होने वाले १० वर्षों में म्युनिसिपैलिटी की आय और व्यय का औसत ५,६०० रुपए था १९०३-४ में आमदनी ६,२०० रुपए हुई, यह मुख्यतः घरों और जमीनों के टैक्सों से आई; और व्यय ६,३०० रुपए हुआ। आबादी मार्च, १९०१), १७०।

सबाथू

(*सुबाथू*)।—*शिमला जिला, पञ्जाब की पहाड़ी छावनी, ३० ५९' उत्तरी तथा ७७'०' पूर्वीय पर* स्थित है। यह शिमला श्रेणी के किनारे के एक पठार पर बसा है। यहां से घग्घर नदी दिखाई देती है। यह कालका से शिमला जाने वाली पुरानी सड़क के ऊपर, कसौली से ९ मील और शिमला स्टेशन से २३ मील है। १८१६ में अन्त होने वाली गुरखा-लड़ाई के बन्द होने के समय से सबाथू फौजी पड़ाव का स्थान रहा है। एक ब्रिटिश पैदल रेजीमेण्ट का एक टुकड़ा तो साधारण रूप से यहां रहता है। पैरेड-स्थान के ऊपर एक छोटा किला है, यह पहले सैनिक महत्व का था, परन्तु अब स्टोर-घर की तरह इस्तेमाल होता है। अमेरिकन प्रेस्बीटिरियन मिशन एक मदरसे की देख रेख करता है। कोढ़ियों के लिए एक शफाखाना भी खुला हुआ है जो स्वयं-

जिसे आब्जर्वेटरी हिल कहते हैं, वाइसराय-भवन के स्थान होने का महत्त्व प्राप्त है। जक्को के पश्चिमीय आधार पर गिरजाघर खड़ा है. जिसके नीचे, पहाड़ी की दक्षिणी तरफ, हमारी नगरी की वस्ती का एक सिरा दूसरे से अलग होता है। पूर्वीय भाग छोटा शिमला कहलाता है. जब कि बिल्कुल पश्चिम की सीमा बोइल योगंज है। एक सुन्दर उत्तरी ढाल, मुख्य पहाड़ी के साथ समकोण बनाता हुआ और सदैव ओक तथा पुराने रहोडोडेण्ड्रन के पेड़ों से ढका हुआ, स्वर्गीय अनुपम दृश्य स्थित करता है। पश्चिमी सिरे से कुछ ही दूर पर, हथियारघर की दो बैटरियाँ जुतोघ की भिन्न पहाड़ी को घेरे हैं। आस-पास के प्रदेश की रम्य प्रकृति के सुन्दर दृश्यों का वर्णन अकथनीय है।

भारतीय सरकार तथा पंजाब की ग्रीष्मकाल की राजधानी होने के साथ-साथ, शिमला सैनिक राजधानी के बहुत से मुहकमों का स्थान भी हैं। यही पर वनों के डिप्टी-संरक्षक, शिमला विभाग तथा एक्जीक्युटिव इन्जीनियर शिमला विभाग के हेडक्वाटर हैं साधारण जिले का दफ्तर भी यहीं है, और पहले तो दिल्ली-विभाग के कमिश्नर का गर्मी का हेडक्वर्टर भी यही था। वालन्टियरों का एक बटालियन द्वितीय पंजाब (शिमला) राइफिल्स यहीं ठहरता है। चर्च आव इङ्गलैंड के चार गिरजाघर यहां हैं। क्राइस्ट चर्च (स्टेशन चर्च) जो १८४। में खुला था बोलियोगंज में एक छोटा गिरजा बिशप काटन स्कूल से मिला हुआ एक भारतीय गिरजा और बाजार में एक देशी गिरजा। यहां एक रोमन कैथोलिक कैथेड्रल और दो कन्वेंएट भी हैं और एक बिना नाम का चर्च भी जिसमें प्रेस्बीटिरियन ढंग से पूजा होती है। चर्च मिशनरी सोसाइटी गास्पेल जनाना मिशन की उन्नति के लिए सोसाइटी और बैप्टिस्ट मिशन की शाखाएँ कस्बे में हैं। यहां दो राज-मजदूरों के सभा-भवन भी हैं। शिमले में यूनाइटेड सर्विस इन्सटीट्यूशन आव इंडिया और एक बड़ा क्लब भी है। सरकारी दफ्तर अधिकतर बड़े-बड़े भवनों में स्थित हैं और टाउन हाल में एक थियेटर वाचनालय तथा नृत्यालय है। अनन्डेल शिमले की क्रिकेट खेलने की भूमि तथा दौड़ने की जगह बहुत बढ़ गई है। म्युनिसिपैलिटी १८५० में बनी थी। १९०२-३ में समाप्त होने वाले १० वर्षों की आय का औसत ४-२ पैंठा था; और व्यय का ४-१ लाख। आमदनी (१९०३-४ में) ५-५ लाख हुई जो मुख्यतः चुंगी (१-७ लाख) घरों और जमीनों के टैक्स (१-३ लाख) म्युनिसिपल जायदाद और जुर्माना वगैरह (५१,००० रुपए) और सरकार से ऋण (३६,००० रुपए) से आई। ५-४ लाख का व्यय इस प्रकार हुआ। साधारण शासन ५७,००० रुपए) जल-वितरण (८१ ००० रुपए), सफाई (३३,००० रुपए) अस्पताल व शफाखाने ३६,००० रुपए), सार्वजनिक रक्षा ३७,००० रुपए) सार्वजनिक कार्य (१ लाख) ऋण पर ब्याज (४३,००० रुपए) और ऋण की अदाई ६५,००० रुपए)। नगरी को जल वाटर-वर्कस के एक सिस्टम द्वारा पहुँचाया जाता है जो करीब ६ लाख रुपए की लागत पर बना था तथा जिसमें प्रतिदिन कम से कम ३००,००० गैलन पानी आ सकता है। वितरण, किसी कारणवश कस्बे की शीघ्रता से बढ़ने वाली आवश्यकताओं के लिए पर्याप्त नहीं है। लगभग ६ लाख रुपए की लागत पर एक ड्रेनेज सिस्टम अब बढ़ गया है। इस प्रकार म्युनिसिपैलिटी का एकत्रित ऋण क़रीब १२ लाख हो गया है।

शिमले का वाणिज्य मुख्यतः ग्रीष्मकाल के दर्शकों तथा उनके नौकरों की आवश्यकताओं के सामान की पूर्ति करना है परन्तु यह कस्बा चीन तथा तिब्बत के व्यापार के लिए एक केन्द्रीय स्थान है। यहाँ योरोपीय दूकानों की बड़ी संख्या है और चार बैंक भी हैं। कस्बे के मुख्य निर्यात शराब और तेजाब हैं, क्योंकि यहां २ शराबखाने और एक तेजाबघर है।

मुख्य विद्यालय ये हैं बिशप कॉटन स्कूल योरुपीय लड़कों के लिए एक सार्वजनिक स्कूल जिसकी स्थापना बिशप काटन ने १८६६ में की और इस प्रकार १८५७ के विद्रोह में जो ब्रिटिश भारत में पकड़े गए थे उनके छुटकारे का धन्यवाद दिया; आकलैण्ड हाई स्कूल लड़कियों के लिए; लड़के व लड़कियों के लिए क्राइस्ट चर्च के दिन के स्कूल दो

कन्वेण्ट स्कूल और एक कन्वेण्ट अनाथालय; योरोपीय तथा मरेशियाई अनाथ कन्याओं के लिए मेयो अनाथालय और एक म्युनिसिपल हाई स्कूल दो मुख्य दवाघर रिपन व वाकर अस्पताल हैं, जिनमें से बाद वाले की स्थापना १६०२ में कृपालु सर जेम्स वाकर सी० आई० ई० ने की थी। वाकर अस्पताल योरोपीय लोगों के लिए खोला गया था।

सोलोन

शिमला जिला पंजाब की पहाड़ी छावनी, ३०°१५' उत्तरी अक्षांश तथा ७७°७' पूर्वीय देशान्तर रेखाओं पर क्रोल पर्वत के दक्षिणी ढाल पर से शिमला को जाने वाली बैलगाड़ी की सड़क पर शिमले से ३० मील की दूरी पर स्थित है। १८६३-६४ में इसकी जमीन राइफिल-रेञ्ज के लिए ली गई थी और बाद में बैरक खड़े किए गए। सोलोन में गर्मियों में एक ब्रिटिश पैदल रेजीमेण्ट का हेडक्वार्टर रहता है।

अटक ज़िला

स्थित तथा विस्तार

इस ज़िले का नाम अटक नामक प्रसिद्ध नाले तथा क़िले के अनुसार पड़ गया है। यह नाला तथा क़िला ज़िले के उत्तर-पश्चिम कोण पर स्थित हैं। अटक ज़िले का क्षेत्रफल ४,१५८ वर्गमील है। यह ३२°३२ उत्तरी अक्षांश से ३४ अंश उत्तरी अक्षांश तथा ७१°१७' पूर्वी देशान्तर से ७२°५' देशान्तर तक फैला हुआ है। यह लगभग आयताकार है और उत्तर से दक्षिण इसकी अधिक से अधिक लम्बाई ९६ मील तथा पूर्व से पश्चिम तक इसकी अधिक से अधिक चौड़ाई ७२ मील है।

पश्चिम की ओर लगभग अस्सी मील तक सिंध नदी सीमा बनाती है। सिन्ध नदी के उस पार सीमा प्रान्त के पेशावर और कोहाट ज़िले हैं। अधिक आगे मियां वाली ज़िले की ईसा खेल शेष पश्चिमी-सीमा मियां वली ज़िले की मियां वली तहसील बनाती हैं। पूर्व की ओर झेलम ज़िले की चकवल तहसील तथा रावलपिंडी ज़िले की गूजरखां और रावलपिंडी तहसीलें हैं। उत्तरी सीमा के पूर्वी भाग में पहाड़ियां हैं। पश्चिमी भाग में २० मील तक सिंध नदी से घिरा है। पहाड़ियों के दूसरी ओर हज़ारा ज़िले की हरीपुर तहसील तथा पेशावर की मरदान तहसील हैं। ये अटक. ताला गांव, पिंडीगेब और फतेह जंग तहसीलें हैं। अटक तहसील उत्तरी भाग को घेरे हुये हैं। वर्गाकार तालगांव तहसील दक्षिण में है। ज़िले के पूर्वी भाग में फतेहजंग तहसील है। पश्चिमी भाग में पिंडीगेव तहसील है। अटक तहसील काला चिट्टा पहाड़ियों द्वारा समस्त ज़िले से अलग कर दी गई है। इस तहसील में कलाचिट्टा पहाड़ियों तथा हज़ारा पहाड़ियों के मध्य का समस्त भाग स्थित है। इस भाग के केवल कुछ गांव फतेहजंग तहसील में शामिल हैं।

इस तहसील के उत्तरी-पश्चिमी भाग में छाछ का बड़ा मैदान है। इसका केन्द्र हाज़रो है। ज़िले का यह भाग सबसे अधिक उपजाऊ है। इसके उत्तर तथा पश्चिम की ओर सिंध नदी बहती है और पूर्व की ओर गंगागढ़ पहाड़ी फैली हुई है। दक्षिण की ओर बालू का. सीधा ढालू मैदान है जो तहसील के पश्चिमी अर्ध भाग में पूर्व से पश्चिम तक फैला हुआ है। शायद प्राचीन काल में यहां सिंध नदी के पूर्व कोई विशाल झील वर्तमान थी जो पेशावर ज़िले तक फैली हुई थी। यहां के लोगों का मत है कि छाछ शब्द छाव शब्द से बिगड़ कर बना है जिसका अर्थ दलदल होता है।

अब नदी की बालू तथा चट्टानें हैं। पश्चिमी गंड-गढ़ पहाड़ी के नीचे का भाग पथरीला और कम उपजाऊ है। जैसे जैसे भूमि ऊंची होती गई है वैसे वैसे उपज भी कम होती गई है।

बालू के टीले से कैम्पबेलपुर तक बिना पानी का मरुस्थल है जो पांच या ६ मील लम्बा है। कैम्पबेलपुर से आगे भूमि कुछ कड़ी हो गई है। हारो नदी को पार करने पर भूमि कंकड़ीली पथ-रीली हो जाती है। इस भाग में नदी नाले बहुत हैं। आगे चल कर कालाचिट्टा की पहाड़ियां हैं। यह भाग सरवल नाम से प्रसिद्ध है। कैम्पबेलपुर के दक्षिण तथा हारो के उत्तर की भूमि कम बलुही है और पानी भी समीप है। हारो को पार करने के पश्चात् मिट्टी सख्त हो जाती है यदि वर्षा ठीक रूप से हुआ करे तो वहाँ की भूमि में अच्छी उपज हो सकती है।

कालाचिट्टा पहाड़ी श्रेणी का उत्तरी भाग जो पतेहजंग तहसील के गाँवों के समीप फैला हुआ है नाला भूमि के नाम से प्रसिद्ध है। इस भाग में हारो नदी पहाड़ी भूमि में होकर बहती है। छोटे छोटे नाले तथा नदियां बहुत हैं भूमि पहाड़ी है। समस्त उत्तरी भाग की भूमि कटी-फटी है। पूर्व की ओर मध्यवर्ती भाग में पंज कट्ट है जो उपजाऊ है उसके पश्चात् वाह और हसन अब्दाल के चारों का भाग पहाड़ी ऊंचा-नीचा और कटा-छटा है जो कंधारीपुर तथा लूंदी तथा खेरवाड़ा की पहाड़ियों तक चला गया है। उसके आगे पहाड़ी कंदराएं और सागर का कुएं वाला भाग है। इससे आगे सरवल का बलुहा प्रदेश है।

नाला भूमि का दक्षिणी भाग खुला मैदान है जो दक्षिण की ओर हारो से कालाचिट्टा पर्वत श्रेणी तक ढालू होता गया है। यह फतेह जंग तहसील तक फैला है। यहां की मिट्टी में चूना मिला है पर पश्चिम की ओर पथरीले टीले आजाते हैं। पूर्व की ओर सूखी भूमि है। इस भाग में अटक तहसील की अधिकांश भूमि सम्मिलित है जहां सैकड़ों नदी नाले बहते हैं जो कालाचिट्टा पहाड़ियों का पानी हारो नदी में ले जाकर डालते हैं।

तल्लागांव तहसील लगभग वर्गाकार है। सोहन नदी द्वारा यह तहसील जिले से अलग हो जाती है। इस तहसील की समस्त दक्षिणी सीमा साल्ट रेञ्ज (नमक की पहाड़ी) की उत्तरी पहाड़ियों से घिरी है। नमक की पहाड़ियाँ तहसील के दक्षिणी-पश्चिमी कोने में प्रवेश करती हैं। यहां साकेसर चोटी पहुँच गई है।

इस तहसील की भूमि ऊंची पठारी है। पठार उत्तर-पश्चिम की ओर धीरे-धीरे नीचे होते चले गये हैं और सोहन पर जाकर समाप्त हो गये हैं। समस्त प्रदेश में नमक की पर्वत श्रेणी से आने वाले नदी-नाले फैले हुये हैं।

कहीं कहीं इन छोटी नदियों के बीच की भूमि उपजाऊ है। बड़े वेग वाले नालों के समीप की भूमि अधिक जटिल हो गई है और धरातल पहाड़ी तथा ऊंचा नीचा है। ऐसा प्रतीत होता है कि यहां की भूमि बिल्कुल पथरीली है क्योंकि जब कभी भी ऊपरी धरातल की मिट्टी पानी से बह जाती है तो पत्थर ऊपर निकल आते हैं। सोहन नदी के समीप वेग पूर्वक बहने वाले नालों तथा नदियों के निचले स्थानों पर छोटे छोटे उपजाऊ स्थान कछारी मिट्टी के हैं जहां उपज होती है। प्रत्येक गांव के लोग बड़े ऊंचे ऊंचे बांध बनाकर वर्षा का पानी एकत्रित कर लेते हैं जो पशुओं के पीने के काम आता है। कुएं कम गहरे होते हैं उनमें पानी कम निकलता है और बालू खोदकर तथा चट्टानों को काट कर बनाए जाते हैं। इनकी संख्या भी बहुत कम है जब वर्षा अच्छी नहीं होती और सूखा पड़ जाता है तो बांध वाले सरोवरों के पानी के सूख जाने से बड़ा कष्ट होता है। जब कुएं आदि सूख जाते हैं तो लोगों को पानी की खोज में कई मील तक जाना पड़ता है तब कहीं जाकर उन्हें पीने को पानी मिलता है।

यद्यपि तहसील की भूमि बहुत ऊंची नीची है फिर भी यहां कोई विशेष ऊंची पहाड़ी नहीं है। पठारों की ऊंचाई समुद्र धरातल से साधारणतः एक हजार फुट है। सोहन के समीप पठार २२०० फुट समुद्र धरातल से ऊंचे हो गये हैं।

मध्यवर्ती पठार—जिले का मध्यवर्ती भाग पिंडी गेब तथा फतेह जंग नामक दो तहसीलों में विभा-

जित कर दिया गया है। इस भाग के उत्तर में काला चिट्टा पर्वतीय श्रेणी तथा दक्षिण में सोहन नदी स्थित हैं। पूर्व की ओर सिंध नदी है सामान्य रूप से समस्त भूमि पठारी है। इस भाग के तीन छोटे भाग ऐसे हैं जो दोनों तहसीलों के शेष भागों से प्राकृतिक रूप से अलग हैं।

इन तीन भागों में से एक सील सोहन वाला प्रदेश है। यह प्रदेश शेष ज़िले से खैरी मुरात पहाड़ी दीवार द्वारा अलग हो गया है। खैरीमुरात भीत को आर पार करके कोई मार्ग नहीं जाता है केवल सकरी मार्ग हैं जिनके द्वारा आना जाना सम्भव है। इसके कारण भीतरी आवा-गमन के साधनों में बड़ी कठिनाई पड़ती है और भीतरी व्यापार होना सम्भव नहीं है। इस भाग में रावलपिंडी जिला से निकलने वाली तीन नदियां बहती हैं सिंध के उत्तरी भाग की पहाड़ी भूमि ऊपर की ओर ढालू हैं। खैरीमुरात कंदराओं के मध्य में तेज बहने वाले नदी नाले हैं जिससे वहां के धरातल की भूमि बड़ी विचित्र रूप की हो गई है। सिल तथा सोहन के मध्य दक्षिण की ओर एक कंकड़ीली पथरीली भूमि की पट्टी है। सोहन नदी की घाटी बलुही कछारी है। इसके किनारे के गांवों की भूमि इतनी उपजाऊ है कि वहां घने बनों के मध्य स्थित ह वहां कुएं इतनी अधिक मात्रा में बने हैं कि यदि वर्षा नहीं होती तो भी लोगों को किसी प्रकार का कष्ट नहीं होता है और वर्षा से खेती को अधिक हानि नहीं होती है। सोहन के आगे चल कर पुनह ऊंची पहाड़ी भूमि आजाती है। इस पठारी भूमि द्वारा अलग होकर बदाल का प्रदेश स्थित है। बदाल नदी का प्रदेश भी उपजाऊ तथा निचला है वहां भी कुएं बहुत हैं। बदाल नदी का कछारी प्रदेश सिल तथा सोहन की अपेक्षाकृत कम उपजाऊ है नदी की बाढ़ से मिट्टी कट कर आया करती है और बहुधा वह बदलती रहती है। जिससे खेती करने वालों को असुविधा का सामना करना पड़ता है। बदाल के दक्षिण गूजरखाँ और चकवाल सीमा तक का प्रदेश स्गाम नाम से प्रसिद्ध है। स्गाम में कुएं नहीं हैं। यहां की भूमि कम उपजाऊ है। यहां छोटे छोटे गाँव बसे हैं जहां बरानी की अच्छी उपज होती है। सचमुच स्गाम लुंडी पट्टी इलाका का एक भाग है जो झेलम ज़िले के चकवल तहसील में स्थित है। स्गाम का अर्थ अज्ञात देश का होता है। यह शायद लुंडी पट्टी संस्कृत नाम का ही दूसरा नाम है। लुंडी पट्टी का अर्थ है। बिना पूंछ वाली पट्टी है। अर्थात् यह पट्टी न तो धन्नी न पोथवार में और न सोहन में है वरन् फिर भी सभों के समीप स्थित है। इस प्रदेश को साधारण रूप से लोग लुंडा मेरा कहते हैं। जिसका अर्थ यह है कि वह एक बरसी प्रदेश है जिसमें सिंचाई नहीं होती है और पानी की बहुत कमी है।

मखाद इलाक़ा

यह पिंडीगेब का दक्षिणी-पश्चिमी भाग है। यह एक जङ्गली पहाड़ी प्रदेश है। इस प्रान्त में सिंध नदी के किनारे किनारे एक पहाड़ी श्रेणी जाती है जिसके उत्तर में रेशी नदी और दक्षिण में सोहन नदी है। कहीं कहीं पर यह इलाक़ा समुद्र धरातल से ३ हजार फुट ऊंचा होगया है। इस इलाके में पथरीले पठार को बलुही भूमि तथा गहरी घाटियों में खेती होती है। कुएं कम हैं।

जंगल का इलाका रेशी से कलचिट्टा पहाड़ियों तक फैला हुआ है। इसके पूर्वी सीमा पर अटक और कालबाग वाली सड़क है। इस प्रदेश में कहीं कहीं चट्टाने तथा पहाड़ी कंदराएं हैं पर शेष भूमि सुन्दर बलुही मिट्टी की बनी है जहाँ चने की सुन्दर खेती है। थोड़ा गेहूँ की खेती भी होती है। खरीफ फसल बहुत कम उपजती है सिंचाई की सुविधा कम है।

इन दोनों तहसीलों की शेष भूमि मैदानी है जो पूर्व से पश्चिम तक ७० मील लम्बी तथा ४० मील चौड़ी है। इस भूमि का अधिकांश भाग उजाड़, बंजर है बीच में कहीं कहीं पर उपजाऊ भाग आ गये हैं। बीच वाले पठारी भाग में पतली मिट्टी के परत वाली भूमि में खेती है पर पौधे उगने के पश्चात् उन्हें लगातार पानी की आवश्यकता रहती है नहीं तो कुछ बढ़ने के पश्चात् वे सूख जाते हैं। इसके उत्तर वाली भूमि कड़ी लाल मिट्टी की है जो

धीरे धीरे आगे चल कर जंदाल के बालू में समाप्त हो जाती है। फतेहजङ्ग का पूर्वी भाग प्राकृतिक बनावट में रावलपिंडी के खैरोरा भाग की भांति है जो पूर्व की ओर बलुहा है और पश्चिम की ओर की भूमि धीरे धीरे कड़ी होती गई है जहाँ बाग लगाए जा सकते हैं। पश्चिमी भाग की भूमि पीली है जो आगे चल कर सिंध नदी के समीप पहाड़ियों में समाप्त हो जाती है। इस भूमि में फसल कम उगती है। जब पानी खूब बरसता है तो कुछ पैदावार हो जाती है पर जब पानी नहीं बरसता है तो पैदावार बिलकुल नहीं होती है।

पहाड़ी प्रदेश

यद्यपि समस्त जिले की भूमि पहाड़ी है और छोटी छोटी पहाड़ियाँ सभी भागों ये वर्तमान हैं फिर भी वे पहाड़ियाँ एक दूसरे से सम्पर्क रखती है जिससे कहा नहीं जा सकता कि जिले में किसी मुख्य नाम की कोई पर्वतीय श्रेणी है यद्यपि अंतर्गत रूप से सभी पहाड़ियों का सम्बन्ध एक दूसरे से लगा हुआ है।

नमक श्रेणी (साल्ट रेंज)

सचमुच यह पर्वतीय श्रेणी इस जिले की नहीं है। नमक की पर्वतीय श्रेणी तल्लागांव तहसील की दक्षिणी सीमा पर स्थित है जिसके निचले ढाल जिले में सम्मिलित हैं। दक्षिण-पश्चिम की ओर सकेसर पहाड़ी का भाग आ जाता है। इस भाग में ५००० फुट की ऊँचाई पर एक स्वास्थ वर्धक स्थान है।

गंदगढ़श्रेणी

जिले के उत्तरी भाग में गंदगढ़ पर्वतीय श्रेणी हजारा की पहाड़ियों से उतर कर आती है। श्रेणी का प्रधान भाग जिले में नहीं है बरन् इसके पश्चिमी ढाल जिले के भीतर प्रवेश कर गये हैं जो छाछ प्रदेश में समाप्त हो जाते हैं इस श्रेणी का कुछ भाग होरा नदी के उत्तर वाले प्रदेश में घुस गया है।

इस पर्वतीय भाग का मुख्य अंग खेरीमार या "चन्दन नष्ट करने वाला" है। यह पहाड़ी भाग नाला प्रान्त में पूर्व से पश्चिम की ओर फैला हुआ है और ८ मील लम्बा तथा ८ मील से भी कम चौड़ा है। इस पर्वतीय भाग की ऊँचाई कहीं भी २४०० फुट से अधिक नहीं है। इस में सरकार की ओर से सुरक्षित वन हैं पर वन सघन नहीं हैं। लुण्डी और कंधारीपुर छोटी छोटी पहाड़ियाँ हैं।

खेरीमार पहाड़ी श्रेणी के कुछ पश्चिम हसन अब्दाल, बुद्ध, वजर और पुर्मियाना की पहाड़ियाँ हैं। यह सभी गन्दगढ़ पहाड़ी की श्रेणियां हैं प्रत्येक पहाड़ी गन्दगढ़ से और एक दूसरे से अलग हैं। वे सभी पहाड़ियां उजाड़ तथा बनैली हैं।

खेरीमार पहाड़ी ५ मील दक्षिण-पश्चिम की ओर कवागर की पहाड़ी है जिसे जैतून की पहाड़ी भी कहते हैं। यह एक खुले मैदान में स्थित है। यह खेरीमार पहाड़ी की समानान्तर चलकर ९ मील तक अटक तथा फतेहजंग तहसीलों के मध्य सीमा बनाती है। उसके आगे सात मील तक यह रूखरा इलाकामें चली गई है उसके पश्चात् कैम्पबेलपुर के सामने होरा नदी ने इसका मार्ग रोक दिया है। इस पहाड़ी की ऊँचाई कहीं भी २ हजार फुट से अधिक नहीं है। यह पहाड़ी काले संगमरमर की है जिस पर एक पीली नस सी पड़ी रहती है। पालिश करने पर यह पत्थर बड़ा ही सुन्दर प्रतीत होने लगता है। इस पत्थर से काट कर प्याले, तश्तरियाँ तथा बर्तन बनाए जाते हैं। यहाँ के निवासी इसे "अन्री" कहा करते हैं। यह पहाड़ी सरकार की ओर से सुरक्षित है। यहाँ पर कुछ जैतून के वृक्ष हैं जिसके कारण इस पहाड़ी का नाम जैतून की पहाड़ी पड़ गया है।

अटक की पहाड़ी बड़ी सूनी तथा उजाड़ है। यह स्लेट पत्थर से बनी है। स्लेट के बीच बीच में चूने के पत्थर तथा श्वेत संग मरमर की चट्टानें आजाती हैं। इसकी सब से अधिक ऊंचाई २ हजार फुट से कुछ ही ऊँची है इस पहाड़ी के उत्तरी पश्चिमी कोण पर सिंध नदी के तट पर अटक का नगर तथा क़िला स्थित है। यह पहाड़ी भी दूसरी पहाड़ियों से अलग है। शायद यह नदी द्वारा पेशावर की पहाड़ियों से अलग हो गई है। यह ग्रीष्म काल में अपनी उष्णता के लिये प्रसिद्ध है।

जिले में कालचिट्टा पहाड़ियां सब से अधिक प्रसिद्ध हैं पहाड़ियों की यह दीवार जो लगभग जिले

के समस्त उत्तरी भाग में स्थित है अटक तहसील को दूसरी तहसीलों से अलग कर देती है। इस पहाड़ी का केन्द्र सिंध नदी पर है जैसे जैसे यह पूर्व को जाती है वैसे वैसे सँकरी होती गई है अंत में फतेहजङ्ग और रावलपिंडी तहसीलों की सीमा पर आकर समाप्त हो गई है। केन्द्रीय स्थान पर पहाड़ी की चौड़ाई लगभग १२ मील है और लम्बाई ४५ मील है यह पहाड़ी दो भागों में विभाजित है जो रूप रेखा में एक दूसरे से बिलकुल अलग हैं। यह भूगोल विद्या के पण्डितों के लिये बड़ी उपयोगी है।

इसका दक्षिणी-पश्चिमी भाग काला पहाड़ के नाम से प्रसिद्ध है। यह बिलकुल काले पत्थर का पहाड़ है। पानी तथा वर्षा के कारण इसमें और भी अधिक कालापन आ जाता है। काले पत्थर से मिला हुआ भूरा पत्थर पाया जाता है और लाल मिट्टी भी मिलती है। काला पहाड़ समस्त पिंडीगेब तहसील में फैला है इस लिये इसकी लम्बाई ३५ मील और चौड़ाई ४ मील है।

चित्त अथवा स्वेत पहाड़ी चित्त पर्वतीय श्रेणी की समस्त लम्बाई में उत्तर की ओर स्थित है। सिंध नदी पर अपने केन्द्रीय स्थान पर इसकी चौड़ाई ८ मील है। स्वेत पहाड़ी का समस्त भाग चमकदार सफेद चूने, पत्थर का बना है पर स्वेत पत्थर के बीच बीच में कहीं-कहीं पर काला पत्थर भी पाया जाता है। यह पहाड़ी चूने तथा अपने वन के लिये बड़ी उपयोगी है।

बलुहे पत्थर वाले भाग में फलों के वृक्ष तथा वनैली झाड़ियां हैं घास कम पाई जाती है। चूने वाले पहाड़ी भाग में इसके विपरीत अधिक उपयोगी वन हैं जहाँ फल, काहू (जैतून) सनथ, खैर आदि के सघन बन पाए जाते हैं उपयोगी झाड़ियां भी बहुत हैं। यदि इस भाग की थोड़ी भी देख रेख की जावे तो यह बड़ा ही उपयोगी सिद्ध हो सकता है।

कालचिट्टा पहाड़ी श्रेणी के बीच में गहरी घाटियाँ हैं। सब से अधिक ऊँचाई ३,५२१ फुट है। अधिकांश चोटियां २ हजार से ३ हजार फुट तक ऊंची हैं। कुछ घाटियां अधिक चौड़ी हैं जहाँ खेती अच्छी उपजती है इनमें गंडकाज और कालही दोनों प्रमुख हैं। पूर्व की ओर पहाड़ियाँ अधिक नीची हो गई हैं। इन पहाड़ियों के बीच बीच में कुछ नदियां हैं और कुछ इन में से निकलती हैं पर उनमें से कोई भी प्रसिद्ध या उपयोगी नहीं है।

गढ़ही हस्सू स्थान पर नंदुआ नदी इस पहाड़ी मूरत के भीतर प्रवेश कर जाती है और आर पार होने के पश्चात् खैरी मूरत स्थान के समीप पुनह उदय होती है फिर हारो नदी में आकर प्रवेश कर जाती है।

इस पर्वतीय भाग की जलवायु शुष्क तथा उष्ण है इस लिये जिन पौधों को अधिक पानी की आवश्यकता नहीं है और गरमी सहन करने योग्य होते हैं वे ही यहाँ पाए जाते हैं। यहाँ की जलवायु तथा बन समान ऊँचाई वाली मरी तथा काहुना पहाड़ियों से भिन्न है। यहाँ वहाँ से वर्षा कहीं कम और गरमी कहीं अधिक होती हैं। इस पहाड़ी के कई एक भाग बड़े ही वनैले तथा उजाड़ है जहाँ पहले दोषी लोग छिप कर आश्रय लिया करते थे। श्रेणी का अधिकाँश भाग सरकार ने संरक्षित बन बना लिया है।

यहाँ के वृक्षों की लकड़ी सामान आदि बनाने के लिये तो उपयोगी नहीं है वरन् समीपवर्ती नगरों तथा स्थानों को जलाने के लिये काम में लाई जाती है।

उत्तरी-पश्चिमी रेलवे लाइन का कैम्पबेलपुर स्टेशन एक ऐसे सुगम स्थान पर स्थित है जहां से इसके उत्तरी भाग के बनों की लकड़ी सुगमता से आ जाती है। खुशालगढ़ लाइन के कई एक स्टेशन ऐसे सुन्दर स्थानों पर हैं जहां से दक्षिणी बनों की लकड़ी बाहर भेजी जाती है। संरक्षित बन के बीच होकर एक बड़ी सुन्दर सैनिक सड़क थट्टा से छोई गढ़ियाला को जाती है। इसके अतिरिक्त कई एक दूसरी सड़कें हैं जिनमें होकर ऊँटों का काफिला जाता है।

कालचिट्टा पहाड़ियों के दक्षिण पिंडीगेब तहसील के दक्षिणी-पश्चिमी कोण पर नर्रा या मखाद पहाड़ियां हैं। यह कंकड़-पत्थरों का एक ढेर सा है जो सिंध नदी के तट पर स्थित है। इसकी अधिक से अधिक ऊँचाई १,८२२ फुट है। कटक प्रदेश की

ओर यह पहाड़ी हकनी की टक्करगाह के नाम से प्रसिद्ध है। यहां मोटी घासें तथा झाड़ियां उगा करती हैं। नर्रा इलाका में कुछ उपजाऊ घाटियां हैं जहां पैदावार कम होती है। हूरीयाल नाम स्थान पर शिकार खेलने लोग जाते हैं।

खड़ी मूर्त श्रेणी

यह श्रेणी अपनी प्राचीन परियों तथा देवताओं की गाथा के लिये प्रसिद्ध है। भौगोलिक दृष्टि से यह रावलपिंडी की चीर-फाड़ पहाड़ी की एक श्रेणी है। इस श्रेणी के दोनों ओर मैदान हैं। इसकी ऊँचाई अधिक से अधिक हजार फुट है। यह रावल पिंडी जिले से आरम्भ होती है और फतेह जंग तहसील के बीच होकर जाती है। यह गेब के मैदान को सोहन घाटी से अलग करती है। इसकी समस्त लम्बाई २८ मील है। पहाड़ी चूने, वलुहे तथा मिट्टी के पत्थर से बनी है। दक्षिणी भाग में चट्टानी कंदराएँ तथा पथरीले टीले हैं जो धीरे धीरे सोहन की घाटी में आकर समाप्त हो जाते हैं। इस पहाड़ी के बन सरकार द्वारा सुरक्षित हैं।

दृश्य

इस जिले में कोई विशेष दृश्य देखने योग्य नहीं हैं। कालचिट्टा पहाड़ी का सिंध नदी वाला भाग सुन्दर दिखलाई पड़ता है। छाछ मैदान के हरे मैदान देखने योग्य हैं। सब से अधिक आकर्षक मध्यवर्ती पठारी भाग है जहां के ऊँचे-खुले स्थान अपनी कला के अनोखे हैं। इनके कुछ खुले स्थान बड़े हरे भरे तथा सुहावने हैं।

सिंध नदी

अटक जिले का समस्त पानी बहकर सिंध नदी में जाता है। हजारा जिले को छोड़ कर जब सिंध नदी यहां आती है, तो वह यहां अटक नदी के नाम से पुकारी जाती है। यहां आकर नदी यकायक चौड़ी हो जाती है और छाछ के मैदान को यूसुफजई से अलग कर देती है। यहां पर नदी बहुत चौड़ी हो कर कई शाखों में बंटकर कई एक टापू बना देती है उसके पश्चात् जब नदी अटक के समीप पहुँचती है तो फिर यकायक सँकरी हो जाती है। यहां इसी में दाहिनी ओर पश्चिम से काबुल नदी आकर प्रवेश कर जाती है। काबुल नदी के संगम के पश्चात् नदी का नाम सिंध हो जाता है। यहां नदी एक बड़े पहाड़ी कंदरा में होकर बहती है जहां इसके दोनों ओर सीधे ऊंचे पहाड़ी तट हैं। अटक का किला इसके बाएँ तट पर स्थित है। किले से तीन मील नीचे की ओर नदी पर एक सुन्दर लोह-पुल बना हुआ है। नीलाब बाग के समीप नदी पुनह एक झील का रूप धारण कर लेती है उसके पश्चात फिर सँकरी होकर पहाड़ी कँदराओं में होकर बहती है मखाद के समीप एक स्थान पर इसकी चौड़ाई केवल ६० फुट है। अटक तक नदी में नावें चला करती हैं पर मखाद और अटक के मध्य नावों का चलना बहुत कठिन है। नावों को धारा के ऊपर की ओर खींच कर ले जाना असम्भव तथा बड़ा खतरनाक है। नदी में अधिकांश हिम का पानी आता है और बहुधा बाढ़ आ जाती है। अटक के समीप इसकी गहराई शीतकाल में अनुपात से १७ फुट और ग्रीष्म ऋतु में ५० फुट रहती है। खुशालगढ़ में नदी के ऊपर दूसरा रेलवे पुल बना है। सिंचाई के ध्यान से सिंध नदी जिले के लिये उपयोगी नहीं है।

जिले में तीन पानी के बहाव वाले भाग हैं जो दो जल विभाजक भूमि से अलग अलग कर दिये गये हैं। उत्तरी पानी अलग करने वाला प्रदेश काल-चिट्टा पहाड़ी की चोटी से आरम्भ होता है और जिले को पार करता हुआ फतेह जंग तक जाता है उसके पश्चात् ठीक दक्षिण खैरी मूरत (खड़ी मूर्त) की ओर घूमता है अंत में उत्तर-पूर्व की ओर घूम कर रावलपिंडी सीमा को चला जाता है। इसके उत्तर हारो नदी का जल-क्षेत्र है।

दूसरा जलविभाजक क्षेत्र मक़द या मखाद स्थान से चलता है और धुर पूर्व को फतेह जंग तक जाता है उसके पश्चात् खैरी मूरत पर दक्षिण की ओर घूमता है उसके पश्चात् खैरी मूरत श्रेणी की चोटी होकर उत्तर-पूर्व को घूम कर जिले की पूर्वी सीमा तक चला जाता है। कालचिट्टा के दक्षिण तथा फ़तेह जंग के पश्चिम वाला भाग जो इस जल विभाजक के उत्तर पड़ता है उसका समस्त पानी सिंध नदी में जाता है। यहां की मुख्य नदी ऋषी

रेशी है। इस जल विभाजक के दक्षिण जिले के सभी भाग का पानी बहकर सोहन नदी में जाता है।

उत्तरी बहाव वाले प्रदेश (जिसमें अटक तहसील फतेह जंग का नाला प्रदेश और गेब प्रदेश का उत्तरी पूर्वी भाग शामिल है) का पानी सिंध नदी में बह कर जाता है। यहां पर चेल तथा हारो दो खास नदियां हैं।

चेल नदी

यह छाछ मैदान की एक मात्र नदी है जो मैदान के दक्षिणी सीमा होकर बहती है। इस नदी में छाछ और सरकल के मध्यवर्ती भाग की छोटी नदियां तथा नाले आकर गिरते हैं। यह नदी हाज्रो के समीप हट्टी से निकलती है और धुर पश्चिम की ओर बहती हुई २० मील चलकर अटक से कुछ दूरी पर सिन्ध नदी में मिल जाती है।

हारो नदी

हारो नदी मरी के समीप हजारा जिले से निकलती है और अटक से १२ मील की दूरी पर सिन्ध नदी में गिरती है। यह उद्गम से निकल कर खाँपुर को पार करती हुई रावलपिंडी जिले में प्रवेश करती है, फिर अटक, रावलपिंडी और हजारा जिलों की सीमा के पास अटक जिले में घुसती है और लगभग १० मील उत्तर-पूर्व बहने के पश्चात् पश्चिम को घूमकर २० मील तक बहती है लारेंसपुर के पूर्व यह दक्षिण को घूमती है और खेरीमार पहाड़ी को बाएँ हाथ छोड़ती हुई नाला प्रदेश होकर कलागर श्रेणी के पश्चिमी कोण पर पहुँचती है। उसके पश्चात् धुर पश्चिम को बहती है। यहीं कैम्पबेलपुर इसके दक्षिणी किनारे पर स्थित है। आगे सरवल में १५ मील का मार्ग तैकर के सिन्ध नदी में मिल जाती है।

हारो एक संकरी गहरी नदी है और पहाड़ी प्रदेश होकर कंदराओं के मध्य बहती है। इसका पानी स्वच्छ नीले रंग का है। इसकी तली पथरीली है इस कारण पानी सदैव साफ रहता है। तेज बहने तथा कम चौड़े होने और पर्वतीय होने के कारण इसको पार करना खतरनाक है। ग्रैंड ट्रंक सड़क पार करने के लिये लकड़ी का पुल बना है। इसी के समीप एक लोहे का रेलपुल भी है। अटक से मखाद जाने वाली सड़क पर इसका छोटी गारियाला घाट है जहां पार करने के लिये नाव लगी रहती है। बाढ़ के सिवा इसका पार करना सरल रहता है। चावलट, सागर, नन्द्र और शकर दर्रा इसकी सहायक नदियां हैं जो दक्षिण से आकर इसमें मिलती हैं।

सब से अधिक प्रसिद्ध सहायक नदी नन्द्र है। यह खैरी मूरत के ढालों; फतेह जंग गेब और नाला प्रदेश का पानी लाकर हारो में डालती है। शकर दर्रा पूर्ण-रूपेण पहाड़ी है।

खेती के ध्यान से हारो नदी लाभ दायक है। नाला इलाका तथा रावलपिंडी तहसली में इससे नहरें निकाली गई हैं जिन्हें "कत्था" कहते हैं। इस भाग में लगभग २० गांव स्थित हैं जो पञ्ज कत्था के नाम से प्रसिद्ध हैं। इस भाग में तेरह नाले हैं जिनसे खेतों की सिंचाई होती है। हारो के तट पर कई एक आटा पीसने वाली चक्कियां हैं। नदी में मछली का शिकार भी अच्छा होता है।

हारो तथा उसकी सहायक नदियों में मार्च से सितम्बर मास तक मछली का शिकार किया जाता है। हारो और चावलत नदियों के कुछ भाग सरकार द्वारा मछली के शिकार के लिये सुरक्षित रक्खे गये हैं। यह सुरक्षा प्रबंध उत्तरी मछली मारने वाली संस्था द्वारा होता है जिसका केन्द्र रावलपिंडी में है।

ऋपी या रेशी

यह नदी फतेह जंग के पश्चिमी कालचिट्टा के नीचे से निकलती है। उद्गम स्थान के समीप इसका नाम तुतहल है। जंदाल के समीप इसका नाम ऋपी हो जाता है। इसके तट गहरे तथा पथरीले हैं। नदी बहुत सँकरी है। यह खेती के काम की नहीं है और उत्तर दक्षिण यातायात में बाधक है।

सोहन

अटक जिले के आधे से अधिक भाग का पानी सोहन नदी में बहकर आता है। यह मरी के

समीप से निकलती है और पिंडी जिले से होती हुई चौंत्रा गांव के समीप फतेह जंग तहसील में प्रवेश करती है खैरी मूरत श्रेणी के समस्त दक्षिण भाग का पानी बहकर नदी में आता है। फतेह जंग तहसील छोड़ने के पश्चात् ६० मील बहकर मखाद के समीप सिन्ध में गिरती है। सोहन नदी चौड़ी तथा तेज़ बहने वाली नदी है। इसको पार करने में धोका हो जाता है और प्रति वर्ष कुछ न कुछ लोग डूब कर मर जाते हैं। वर्षा होने के पश्चात् कई दिन तक इसको पार करना कठिन रहता है। इसकी तली का बालू सदैव चलायमान रहता है और उसमें पैर धंस कर धंस जाने का सदैव खतरा रहता है। लार्ड डलहौज़ी का हाथी पार करते समय ऐसे ही फँस गया था। इसी प्रकार हाथियों के फंस जाने की घटनाएँ अनेकों बार हो चुकी हैं।

नदी का पाट काफी चौड़ा तथा बलुहा है। इसके दोनों तटों पर कछारी बलुही मिट्टी की उपजाऊ पट्टियां हैं जिनमें घने वन हैं तथा अधिकांश मात्रा में कुएं हैं जिससे वर्षा न होने के कारण कभी भी अकाल पड़ने का भय नहीं रहता है। बाढ़ के न रहने पर नदी सदैव पार करने योग्य रहती है। सिंचाई के लिये कुछ नाले या नहरें नदी का तट काट कर बनाए गये हैं पर वे अधिक संख्या में नहीं हैं। नदी में वर्षा ऋतु (जुलाई अगस्त) तथा शीतकाल (जनवरी, फरवरी) में बाढ़ आती है। बाढ़ बहुत आती है इसी कारण सिंचाई के लिये स्थाई रूप से नहरों का बनाना सम्भव नहीं हो रहा है। फतेह जंग तहसील में इसकी दो सहायक नदियां हैं।

फतेहजंग सील नदी

रावलपिंडी के समीप से निकलती है और पिंडीगेब के समीप सोहन नदी के उत्तरी तट पर आकर उसमें प्रवेश कर जाती है। फतेहजंग तहसील में नदी के किनारे किनारे सोहन नदी तक कछार हैं वर्षा की ऋतु में बाढ़ आजाया करती है। इसकी लम्बाई लगभग ३० मील के है।

वदाला

यह फतेहजंग की सहायक नदी है, रावलपिंडी में रावत स्थान के समीप से यह नदी निकलती है और रावलपिंडी तहसील को गूजर खान से और गूजर खान को फतेहजंग तहसील से अलग करती हुई पश्चिम की ओर मुड़कर फतेहजंग तहसील में प्रवेश कर जाती है। फतेहजंग में सोहन की समानान्तर यह लगभग २० मील तक बहती है और झेलम जिले की चकवाल तहसील की सीमा पर सोहन नदी से मिल जाती है। वहां पर झेलम जिले की लराही, आग्नेह और सख नदियां आकर मिलती हैं। यह संगम पञ्चनद के नाम से प्रसिद्ध है। यह नदी अपने तटीय खेतों में प्रति वर्ष बालू लाकर पाट देती है जिससे खेत की मिट्टी खराब हो जाती है और उपज नहीं होने पाती है।

पिंडीगेब सील नदी

यह सोहन नदी की सहायक नदी है। यह खैरी मूरत के पश्चिमी कोण से निकलती है और सैकड़ों नदी नालों का पानी लेती हुई पिंडीगेब तहसील में एक पर्वतीय नदी के रूप में प्रवेश करती है। यहां संकरी होने के कारण तुथाल कहलाती है जब यह पिंडीगेब के समीप चौड़ी हो जाती है तो इसका नाम सील हो जाता है। सील वाले भाग में कछारी तट है जहां खेती अच्छी होती है।

तल्ला गांव तहसील का पानी छोटे छोटे नालों द्वारा सोहन नदी में आता है जिन्हें "केस्र" कहते हैं। इनमें दो जो सब से बड़े हैं उन्हें गबीर कहते हैं। यह दोनों ही जाबा के समीप नमक की पहाड़ी से निकलते हैं। यह दोनों सोहन नदी में गिरते हैं। इनके अतिरिक्त डूँगर, औंकर, लेटी आदि छोटी नदियां भी सोहन में जाकर गिरती हैं।

झीलें

जिले में कोई भी झील नहीं है। अटक से १२ मील की दूरी पर हट्टी नामक ताल है जो ग्रैंड ट्रंक सड़क पर स्थित है। यह साधारणतः "चेल" नाम से प्रसिद्ध है। इसका क्षेत्रफल ६०७°२८ एकड़ है। यहां कुछ चावल उपजाया जाता है और चिड़ियों का शिकार किया जाता है।

सिंचाई के साधन

जिले में सिंचाई के साधन नहीं हैं। अटक

तहसील, फतेहजंग तहसील का उत्तरी भाग तथा सोहन नदी की घाटी में सिंचाई की कुछ सुविधा है। इन प्रदेशों में कुएँ भी हैं जिनसे सिंचाई का काम होता है पर अन्य स्थानों पर कुएँ नहीं हैं। जहां कहीं भी कुवां खोदा जाता है नीचे पत्थर की चट्टानें आजाती है जिससे अधिक गहराई तक कुएँ का खोदना कठिन हो जाता है। कुओं के कम गहरे होने से पानी कम रहता है जिससे वे सूख जाते हैं।

बनावट

तल्ला गांव तहसील की भूमि हल्की भूरी चट्टान की बनी है जिसका ऊपरी भाग बलुही मिट्टी का है जिले का शेष कालचिट्टा श्रेणी के दक्षिण का भाग काले बलुहे पत्थर का बना है। खैरी मूरत तथा कालचिट्टा श्रेणी का दक्षिणी भाग इसी का बना है। ऊपरी धरातल से थोड़ा ही नीचे बलुहा पत्थर है जिससे पौधों की उपज में बड़ी कठिनाई होती पिंडीगेब तहसील में यह चट्टान अधिक मिट्टी के समीप है। कंकड़ीली भूमि भी यहां बहुत है। चूने वाले पत्थर की मिट्टी भी बहुत है। सब कहीं कॉंकर पाया जाता है। छाछ, सरवल का कुछ भाग कछारी है शेष भाग (अटक तहसील का) बलुहे पत्थर का बना है जो भौगोलिक दृष्टि से गंडगढ़ श्रेणी से मिला हुआ है। कहीं कहीं पर बञ्जर भूमि भी आ जाती है। रेह वाली भूमि भी अधिक है। अनुमान करने तथा देखने से पता चला है कि जब वर्षा अधिक होती है तो कुछ तो नमक की पहाड़ियों द्वारा लाई हुई रेत के आने से और कुछ भाप द्वारा नीचे की भूमि से नमक ऊपरी भाग में आ जाने से रेह वाली मिट्टी अधिक हो जाती है जिससे उपज में बाधा पड़ती है।

बनस्पति

यहाँ बन प्रदेश अधिक उपयोगी नहीं हैं। केवल कालचिट्टा पहाड़ी के बन उपयोगी हैं। खेरीमार, क़बागार खैरी मूरत पहाड़ियां तथा नरी क्षेत्र के बन सरकार की ओर से सुरक्षित हैं। जमींदार तथा भूमिपत लोग अपनी भूमि में बन तथा घास रखते हैं और उसे किसी अन्य को उपयोग नहीं करने देते हैं। साधारण रूप से समस्त जिले का अधिकांश भाग उजाड़ है। बनस्पति की बहुत कमी है तथा बन बहुत ही कम है।

जिले में सब कहीं फुलाही का वृक्ष साधारण रूप से पाया जाता है। इसके केवल थोड़े से वृक्ष मोटे बड़े तने वाले पाए जाते हैं। अधिकतर खोखले तथा छोटे तने वाले वृक्ष होते हैं। फुलाही का पेड़ जिले में सब से अधिक प्रसिद्ध वृक्ष है जो सब कहीं पाया जाता हैं। यह भेड़, बकरियों की खूराक का काम देती हैं। इसकी लकड़ी काली और मजबूत होती हैं। बड़े वृक्षों से तेल पेरने के कोल्हू बनाए जाते हैं। छोटे वृक्षों की लकड़ी खेती के काम में तथा गृहस्थी के प्रत्येक काम में प्रयोग की जाती है। चूंकि यह पौधा अधिक समय में बढ़ता है इसलिये और दूसरे वृक्षों की अपेक्षा इसकी लकड़ी भी अधिक मजबूत होती है पर जब यह अपनी पूर्ण जवानी पर आजाता है तो अगर इसे काटा नहीं जाता है तो इसकी लकड़ी शीघ्र ही खराब भी हो जाती है।

खेती वाली भूमि तथा सड़कों के किनारे कीकर के वृक्ष होते हैं। सोहन नदी की घाटी में कीकर के बाग लगाए जाते हैं और सुरक्षित रक्खे जाते हैं। शायद इस वृक्ष पर शीत का बुरा प्रभाव पड़ता है इस कारण यह पहाड़ियों के ऊपर नहीं होता है। आरम्भ काल में यदि इसे शीत लग गई तो फिर इसका बढ़ना समाप्त हो जाता है और यह नष्ट हो जाता है। जहाँ कहीं यह उगता है वहां बड़ी शीघ्रता से उगता है। यह शायद जिले का सब से अधिक उपयोगी वृक्ष है। यह जल्दी उगता, बढ़ता भी है और साथ ही साथ इसकी लकड़ी मजबूत तथा टिकाऊ होती है। कुएँ की चरखियों, हलों, बैलगाड़ियों इत्यादि कामों के लिये इसकी लकड़ी बड़ी उपयोगी है। इसकी लकड़ी जलाने का भी काम देती है। इसकी छाल तथा फूल-फल चमड़ा कमाने के काम आते हैं। फूल और फल को भेड़ तथा बकरियां खाती हैं पत्तियाँ भी बकरी तथा भेड़ खाती हैं। अकाल के समय में सभी पशु इसकी पत्ती खाते हैं। इसकी जो गोंद होती है वह औषधि के लिसे बड़ी उपयोगी है।

काल तथा ग्रीष्म काल में आंधियां चला करती हैं। शीत काल में आंधिया अधिकाधिक आती हैं।

इतिहास

इस जिले का इतिहास ठीक रूप से अज्ञात है। प्राचीन इतिहास का सामान बहुत कम है जो कुछ पता भी चलता है उसका वहां के निवासी जिस प्रकार अर्थ लगाते हैं वह संदेहजनक है। सिक्खों के समय से ऐतिहासिक रूप से इतिहास का पता चलता है।

तक्षशिला का प्राचीन नगर जो इतिहास में बहुत प्रसिद्ध है और जिसका वर्णन सिकन्दर के हिन्द-आक्रमण में आया है वह शाह-धेरी के समीपवर्ती खंडहर प्रदेश में रावलपिंडी जिले में अटक तहसील की सीमा पर स्थित था।

हसन अब्दाल नगर ग्रैंड ट्रंक सड़क पर कैम्पबेलपुर से बीस मील की दूरी पर स्थित है। यहां की पहाड़ियां अकबर के काल से ही अपनी सुन्दरता के लिये प्रसिद्ध हैं पर यहां सुन्दरता की कोई वस्तु नहीं हैं। यहां पानी के सोतों के होने के कारण; बाग अच्छे सुन्दर बन गये थे। कहते हैं कि एक बार जब इस प्रदेश होकर अकबर सम्राट निकले तो एक बाग को देख कर वे बहुत प्रसन्न हुये और उनके मुख से वाह शब्द प्रशंसा में निकल गया। उसी पर यहां की वाटिकाओं के इस प्रदेश का नाम वाह हो गया है। अब यहां उजाड़ सा रहता है। काश्मीर जाते समय सम्राट् अकबर यहीं रुका करते थे ठहरने वाले स्थान पर एक बारादरी बनी है।

यहीं समीप ही वाह नदी है। हसन अब्दाल पहाड़ी के नीचे बाबा वाली सरोवर है। इसे लोग पञ्जा साहब के नाम से पुकारा करते हैं। यह सरोवर एक नदी के पानी से भरा रहता है। यह सरोवर चारों ओर से ईंट के बने हुये मन्दिरों से घिरा हुआ है। सरोवर में मछलियां बहुत हैं। सरोवर के एक कोण पर एक चट्टान के ऊपर हाथ के पञ्जे का चिन्ह बना हुआ है जिसके नीचे से गुप्त नदी का पानी सरोवर में आता रहता है।

कहते हैं कि सिक्खों के गुरु नानक बाबा ने इस स्थान पर अपना पञ्जा जमा कर नदी को पाताल से सरोवर भरने के लिये आमंत्रित किया था उसी पर पाताल से नदी पर फूट कर निकल आई अब तक पञ्जे का चिन्ह बना है।

पञ्जा साहब सरोवर के समीप ही एक चहारदीवारी के भीतर एक मक़बरा बना है जिसे कहा जाता है कि सम्राट् अकबर की किसी रानी का मक़बरा है। मक़बरे के दोनों ओर दो प्राचीन सरोवर के वृक्ष हैं। यह स्थान देखने योग्य है।

पञ्जा साहब के सम्बंध में हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख तथा ईसाइयों के मध्य अलग अलग कहानियां प्रसिद्ध हैं। हसन अब्दाल मक़बरे के एक फकीर ने जनरल कनिंघम से एक अद्भुत कहानी पञ्जा साहब के सम्बंध में बताई थी।

उसके अनुसार महाराज जनक के दो नौकर थे एक का नाम मोती राम और दूसरे का नानक था। किसी बलिदान के समय मोती राम को द्वारपाल का कार्य और नानक को जिस बर्तन में भोजन रक्खा था उसकी पत्तियां हटाने का कार्य सौंपा गया था। बलिदान के समय एक कुत्ता द्वार होकर कमरे में आया और राजा की ओर चला गया। मोती राम ने कुत्ते का पीछा किया और उसकी पीठ को एक डंडा मार कर तोड़ डाला जिस पर नानक ने उसे ऐसी निर्दयता पर बहुत बुरा भला कहा। इस पर महाराज जनक ने अपने दोनों नौकरों की ओर संकेत करके कहा—"मोती तुमने मलेच्छों जैसा कर्म किया है और नानक तुमने एक दयावान की भांति कार्य किया है"। यह घटना सतयुग की है। "कलयुग में तुम दोनों फिर पैदा होगे। नानक तुम्हारा जन्म तालबन्दी में कल्लू खत्री के यहां और मोती तुम्हारा जन्म कंधार में एक मुग़ल के यहां होगा और तुम वली होगे।"

कलयुग में नानक फिर पैदा हुये तो वह कंधार में वली के यहां गये और कहा—"क्यों वली तुमने मुझे पहचाना या नहीं?" वली ने कहा 'मेरी आंखें खोल दो तो तुम्हें पहचान लूँ" इस पर नानक ने उसकी आंखें खोल दीं। आंखों के खुलने पर वली को पूर्व जन्म की घटना की याद आगई और वह नानक के पैरों पर गिर पड़ा। उसके पश्चात् नानक नें अपने को जल तथा वली को वायु के रूप में बदल दिया और दोनों हारो नगर आए जिसे अब

श्रावण, भादों और असोज (वर्षा वाले) मासों में तो ये नर तथा मादा अलग अलग रहते हैं पर उस के पश्चात् इनके जोड़ा खाने की ऋतु आ जाती है तो फिर ये अधिक दिखलाई पड़ने लगते हैं। अप्रैल मास के अंत तक में इनके बच्चे पैदा होते हैं। दो तीन दिन तक बच्चे चलने फिरने से मजबूर रहते हैं उसके पश्चात् चलने फिरने लगते हैं लोग पालने के ध्यान से इन छोटे बच्चों को पकड़ लेते हैं पर अधिकांश संख्या में पकड़े हुये बच्चे मर जाते हैं। एक या दो वर्ष का नया अरियल, खीरा या चापरा कहलाता है। २ वर्ष का डंडा, ४ साल का चंगा और ६ वर्ष का ढिंगा कहलाता है। इससे ऊपर का पूर्ण जवान माना जाता है। चापरा की सींगे १० इञ्च और चंगा की सींगें २१ इञ्च तक बड़ी होती हैं। ढिंगा के डाढ़ियाँ निकल आती हैं जो पहले काली रहती है। पर फिर बाद में वृद्ध अवस्था आने पर सफेद हो जाती है। इसकी आयु का निर्णय इसके दांत देख कर किया जाता है।

चिंकारा जिसे हिरण कहते हैं बहुधा पर्वतीय कंदराओं में पाया जाता है। यह मैरा, पिंडीगेब के दक्षिण पठारों पर मिलता है। कहते हैं कि हिरण साल में दो बार एक तो अप्रैल-मई और दूसरे अक्तूबर-नवम्बर में बच्चे देते हैं। इनकी सींग १० या ११ इञ्च लम्बी होती है। यहाँ काले हिरण नहीं पाए जाते हैं। खरहे और लोमड़ियाँ सब कहीं मिलती हैं।

चिड़ियां

कबूतर, पेड़की (फाख्ता), चकोर, सुत्ते, तीतर भर्तेतर, सारस, बतख, बाज, गृद्ध आदि पक्षियां पाई जाती हैं।

पहाड़ियों पर सांप मिलते हैं जिसमें करेट और कोब्रा मुख्य हैं। भूरा सांप भी पाया जाता है। धामिन भी सब कहीं पाया जाता है। बिच्छुड़यां कई प्रकार की होती हैं। गोह कंदराओं में रहा करती है।

जिले में नदियों तथा झीलों और सरोवरों में महसीर, रोहू मछलियां अधिक खाई जाती हैं। और मछलियें भी भांति भांति के होते हैं।

जलवायु

इस जिले में ग्रीष्म काल में बहुत अधिक गरमी तथा शीतकाल में बहुत अधिक ठंड पड़ती है। कालचिट्टा श्रेणियों पर गरमी में गरमी बहुत पड़ती है पर जाड़े के समय में उत्तर की ओर से अधिक ठंडी हवा के आने से भीषण सरदी पड़ने लग जाती है। अटक तहसील में ग्रीष्म काल छोटा होता है पर शीत काल लम्बा और ठंड होता है।

यहां की जलवायु पश्चिमी पंजाब की भांति साधारण नहीं है। अप्रैल के अंत से गरमी पड़नी आरम्भ हो जाती है और जून मास तक बढ़ेव गरमी पड़ती है। जून के अंतिम सप्ताह से वर्षा आरम्भ हो जाती है। वर्षा होने पर भी गरमी पड़ती रहती है और कुछ इलाकों, अटक के चट्टानी पठारों, जेदाल के पठारों, नदी और मक्रद के ढालों पर इतनी अधिक गरमी पड़ती है कि वहां के निवासी भी व्याकुल हो जाते हैं। कुएँ तथा सरोवर सूख जाते हैं। लू चलने लगती है। सूर्य की धूप बलुहे प्रदेश तथा लाल पठारों पर इतनी तेज होती है जो असहनीय होती है। सितम्बर के आरम्भ से जब वर्षा सिलसिले से होने लगती है तो रात को सरदी होने लगती है अक्टूबर मास से सरदी पड़ने लगती है। अक्तूबर और नवम्बर का महीना बड़ा सुहावना होता है। सितम्बर-अक्तूबर में बुखार से लोग पीड़ित हो जाते हैं। जाड़े के दिनों में दिसम्बर के अंत से फरवरी मास तक शीत काल की वर्षा हो जाया करती है। माघ के महीने से धूप तेज होने लगती है। अप्रैल से अगस्त तक का समय स्वास्थ वर्धक माना जाता है।

वर्षा ठीक रूप से सब कहीं नहीं होती है। कहीं तो पानी इतना बरस जाता है कि नदियां उमड़ आती हैं और कहीं वे उसी काल में सूखी पड़ी रहती हैं। वर्षा १२ इंच से २० इंच तक होती है। शीत काल की वर्षा गेहूँ के लिये उपयोगी है इस-लिये गेहूँ यहां पैदा होता है। जिले में खरीफ तथा रबी दो फसलें होती हैं। यहां के लोग ग्रीष्म ऋतु को अनहाल, वर्षा को बसांत, बसन्त को खुली बहार और शीत काल को ठंडी बहार कहते हैं। शीत

काल तथा ग्रीष्म काल में आंधियां चला करती हैं। शीत काल में आंधिया अधिकाधिक आती हैं।

इतिहास

इस जिले का इतिहास ठीक रूप से अज्ञात है। प्राचीन इतिहास का सामान बहुत कम है जो कुछ पता भी चलता है उसका वहां के निवासी जिस प्रकार अर्थ लगाते हैं वह संदेहजनक है। सिक्खों के समय से ऐतिहासिक रूप से इतिहास का पता चलता है।

तक्षशिला का प्राचीन नगर जो इतिहास में बहुत प्रसिद्ध है और जिसका वर्णन सिकन्दर के हिन्द-आक्रमण में आया है वह शाह-धेरी के समीपवर्ती खंडहर प्रदेश में रावलपिंडी जिले में अटक तहसील की सीमा पर स्थित था।

हसन अब्दाल नगर ग्रैंड ट्रंक सड़क पर कैम्पबेलपुर से बीस मील की दूरी पर स्थित है। यहां की पहाड़ियां अकबर के काल से ही अपनी सुन्दरता के लिये प्रसिद्ध हैं पर यहां सुन्दरता की कोई वस्तु नहीं हैं। यहां पानी के सोतों के होने के कारण; बाग अच्छे सुन्दर बन गये थे। कहते हैं कि एक बार जब इस प्रदेश होकर अकबर सम्राट निकले तो एक बाग को देख कर वे बहुत प्रसन्न हुये और उनके मुख से वाह शब्द प्रशंसा में निकल गया। उसी पर यहां की वाटिकाओं के इस प्रदेश का नाम वाह हो गया है। अब यहां उजाड़ सा रहता है। काश्मीर जाते समय सम्राट् अकबर यहीं रुका करते थे ठहरने वाले स्थान पर एक बारादरी बनी है।

यहीं समीप ही वाह नदी है। हसन अब्दाल पहाड़ी के नीचे बाबा वाली सरोवर है। इसे लोग पञ्जा साहब के नाम से पुकारा करते हैं। यह सरोवर एक नदी के पानी से भरा रहता है। यह सरोवर चारों ओर से ईंट के बने हुये मन्दिरों से घिरा हुआ है। सरोवर में मछलियां बहुत हैं। सरोवर के एक कोण पर एक चट्टान के ऊपर हाथ के पञ्जे का चिन्ह बना हुआ है जिसके नीचे से गुप्त नदी का पानी सरोवर में आता रहता है।

कहते हैं कि सिक्खों के गुरू नानक बाबा ने इस स्थान पर अपना पञ्जा जमा कर नदी को पाताल से सरोवर भरने के लिये आमन्त्रित किया था उसी पर पाताल से नदी पर फूट कर निकल आई अब तक पञ्जे का चिन्ह बना है।

पञ्जा साहब सरोवर के समीप ही एक चहारदीवारी के भीतर एक मक़बरा बना है जिसे कहा जाता है कि सम्राट् अकबर की किसी रानी का मक़बरा है। मक़बरे के दोनों ओर दो प्राचीन सरोवर के वृक्ष हैं। यह स्थान देखने योग्य है।

पञ्जा साहब के सम्बंध में हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख तथा ईसाइयों के मध्य अलग अलग कहानियां प्रसिद्ध हैं। हसन अब्दाल मक़बरे के एक फकीर ने जनरल कनिंघम से एक अद्भुत कहानी पञ्जा साहब के सम्बंध में बताई थी।

उसके अनुसार महाराज जनक के दो नौकर थे एक का नाम मोती राम और दूसरे का नानक था। किसी बलिदान के समय मोती राम को द्वारपाल का कार्य और नानक को जिस बर्तन में भोजन रक्खा था उसकी पत्तियां हटाने का कार्य सौंपा गया था। बलिदान के समय एक कुत्ता द्वार होकर कमरे में आया और राजा की ओर चला गया। मोती राम ने कुत्ते का पीछा किया और उसकी पीठ को एक डंडा मार कर तोड़ डाला जिस पर नानक ने उसे ऐसी निर्दयता पर बहुत बुरा भला कहा। इस पर महाराज जनक ने अपने दोनों नौकरों की ओर संकेत करके कहा—"मोती तुमने मलेच्छों जैसा कर्म किया है और नानक तुमने एक दयावान की भांति कार्य किया है"। यह घटना सतयुग की है। "कलयुग में तुम दोनों फिर पैदा होगे। नानक तुम्हारा जन्म तालवन्दी में कल्लू खत्री के यहां और मोती तुम्हारा जन्म कंधार में एक मुग़ल के यहां होगा और तुम वली होगे।"

कलयुग में नानक फिर पैदा हुये तो वह कंधार में वली के यहां गये और कहा—"क्यों वली तुमने मुझे पहचाना या नहीं" वली ने कहा "मेरी आंखें खोल दो तो तुम्हें पहचान लूँ" इस पर नानक ने उसकी आंखें खोल दीं। आखों के खुलने पर वली को पूर्व जन्म की घटना की याद आगई और वह नानक के पैरों पर गिर पड़ा। उसके पश्चात् नानक ने अपने को जल तथा वली को वायु के रूप में बदल दिया और दोनों हारो नगर आए जिसे अब

हसन अब्दाल कहते हैं। वहां आकर नानक ने अपना हाथ चट्टान पर रख दिया और वे दोनों मनुष्य हो गये। उसी समय से उस चट्टान से अब तक बराबर शीतल जल निकला करता है और उस प्रदेश में सदैव शीतल वायु चलती रहती है।

नगर सोते से ५ मील दक्षिण पूर्व की ओर दो पहाड़ियों के मध्य एक कंदरा है जहां लगभग १०० फुट ऊंचा एक अशोक का स्तूप है। यहीं पर एक बौद्ध साधु स्थान भी था। इस स्थान का ह्यून सांग प्रसिद्ध चीनी दूत ने भ्रमण किया था। कहते हैं कि इसी स्थान पर बुद्ध भगवान ने भविष्य वाणी की थी कि मैत्र बुद्ध (अशोक) का जन्म कब होगा। पर स्तूप के सम्बन्ध में एतिहासकारों की राय अलग अलग है। मेरा, कालर आदि मन्दिर प्राचीन हैं। पहाड़ी स्थानों पर जहां कहीं भी प्राचीन मन्दिर मकान आदि बने हैं उनके सम्बन्ध में कुछ न कुछ कहानियां अवश्य प्रसिद्ध हैं।

आरम्भ कालीन इतिहास

भारतवर्ष पर प्राचीन काल से जितने आक्रमण हुये हैं वे सभी छाछ मैदान होकर हुये हैं। इस कारण अटक जिले की जनसंख्या विभिन्न जातियों से मिल कर बनी है और यहां के निवासियों में भांति भांति की जातियों का रुधिर मिला हुआ है पर अधिकांश संख्या अब मुसलमानों की है। सिकन्दर महमूद गजनवी, गौरी, बाबर, तैमूर आदि आक्रमणकारी इसी मार्ग से आये। उनके अब यहां के निवासियों के मध्य किसी प्रकार के चिन्ह वर्तमान नहीं रह गये हैं यद्यपि यहां के प्राचीन स्थानों का घनिष्ठ सम्बन्ध इन व्यक्तियों से लगा हुआ है। बौद्ध धर्म के चिन्ह अधिक हैं जो प्राचानी कालीन घटनाओं का सञ्चय करने में बड़े सहायक हैं। प्राचीन बौद्ध कालीन गाथाएँ भी बहुत प्रचलित हैं। आर्यकालीन गाथाएँ भी प्रसिद्ध हैं। सिकन्दर के समय तक का इतिहास प्राचीन इतिहासकारों के लिये बड़ा उपयोगी है।

कुछ इतिहासकारों के अनुसार आर्य जाति के पश्चात् भारत में टक्क या तक्ष जाति के लोग आए थे। यह जाति भारत में लगभग १९२६ वर्ष ईसा से पूर्व आई थी। सिन्ध नदी और झेलम के मध्य को प्रदेश सम्य कहलाता था और वहां अंबा जाति का शासन था। पेशावर तथा सिन्ध नदी के पश्चिम के भाग में गंधारी जाति के लोग बसे थे।

तक्क या तक्ष प्राचीन तूरानी जाति के हैं। सिन्ध-सागर द्वाब पर इनका अधिकार था। कुछ इतिहास लेखकों का कहना है कि तक्षशिला (प्राचीन बौद्ध कालीन नगर) का नाम करण इसी जाति के नाम पर हुआ है। यह नगर सिन्ध तथा झेलम नदी के मध्य स्थित था और सबसे बड़ा तथा धनी नगर था। शाह धेरी या धेरी शाहान के खंडहर इसी प्राचीन नगर के हैं।

तक्ष जाति ने समस्त उत्तरी भारत पर अपना अधिकार जमा लिया था और बाद में उसने बौद्ध धर्म स्वीकार कर लिया था। यह घटना ६०० वर्ष ईसा के पूर्व की है। प्रासू का राजा नन्द इसी वंश का था।

लगभग ५०० वर्ष ईसा के पूर्व दैरियस ने पश्चिमी भारत पर अधिकार किया। ३३१ वर्ष ईसा के पूर्व सिकन्दर ने भारत पर आक्रमण किया था। उस समय रावलपिंडी के उत्तर अबिसार जाति का, झेलम के पूर्वी प्रदेश पर पोर का और सिंध तथा झेलम के मध्य तक्ष जाति का राज्य था। ४०० ई० में चीनी दूत ने इस भाग का भ्रमण किया था और उसने बौद्ध धर्म के प्राचीन इतिहास का वर्णन एकत्रित किया था।

सिकन्दर के चले जाने के ५ वर्ष पश्चात् तक्षशिला के लोगों ने मगध के राजा बिंदुसार के विरुद्ध विप्लव कर दिया था। महाराजा अशोक ने उनपर पुनः अपना अधिकार जमाया था। वहां जो शिलालेख तथा स्तूप मिलते हैं उसी काल के हैं उसी समय से वहां बौद्ध मत का प्रचार हुआ था।

ह्यून सांग ने अटक जिले का भ्रमण ६३० ई० में और फिर ६४३ ई० में किया था।

महमूद गजनवी ने जब भारत पर आक्रमण किया तो १००८ ई० में उससे और महाराज पृथ्वी राज से लड़ाई हुई थी। पृथ्वीराज महाराज ने ३० हजार सेना लेकर सामना किया था और छाछ के मैदान में आक्रमणकारी सेना को लगभग हरा दिया

था पर होनी कुछ और थी जिससे हिन्दू सेना को पराजय हो गई। इस पराजय का प्रभाव भारत वर्ष पर गहरा पड़ा। उसी समय से अटक जिले पर इस्लाम धर्म की नींव पड़ी थी। महमूद के चले जाने के पश्चात् लोग फिर हिन्दू हो गये थे। १२०५ ई० में अटक जिले के उत्तरी भाग में गक्खर जाति के राजा तथा शहाबउद्दीन गौरी से युद्ध हुआ था। गौरी ने गक्खर जाति के राजा को परास्त करके अपना अधिकार जमाया था।

चौदहवीं सदी में मुगल लोग भारत में आए। तैमूरलंग की सेना ने अटक तहसील होकर भारत में प्रवेश किया था। १५१९ ई० में बाबर इस जिले की भूमि होकर आया और सोहन नदी को पार करता हुआ भेरा, खुशाब तथा चिनवत गया था।

अटक जिले की भूमि में उसकी प्राकृतिक दशा देख कर ही मुसलमान आक्रमणकारियों ने अधिक ध्यान नहीं दिया। पहाड़ी तथा उजाड़ होने के कारण विदेशी सेनाओं का ध्यान ही इसकी ओर नहीं जाता था क्योंकि मुसलमान लोगों के अधिकांश आक्रमण धन की लालच से ही हुये हैं। जो सेना भी आती थी उसे यहां के सरदार या छोटे मोटे शासक घोड़े, ऊँट आदि देकर अपनी जान बचाने में समर्थ होते थे। उसी समय यह जिला विभिन्न छोटे-छोटे भागों में विभाजित था और प्रत्येक भाग का शासन वहां के छोटे मोटे शासक द्वारा होता था। यह छोटे छोटे राजा लोग आपस में लड़ा करते थे और एक दूसरे को किसी न किसी भांति नीचा दिखाने का प्रयास किया करते थे।

मुगल काल तक इस प्रदेश की यही दशा चलती रही। शासन व्यवस्था नष्ट होते देखकर यह भाग सिन्ध सागर सरकार में मुगल सम्राट द्वारा मिला लिया गया। सम्राट अकबर ने गक्खर जाति के बलवे को स्वयं दबाया था। पर मुगल सम्राटों ने यहां के छोटे शासकों से कर लेने के सिवा अधिक ध्यान नहीं दिया। मुगल साम्राज्य के अंत कालीन समय में इस जिले का नाम अधिक प्रसिद्ध हो गया था क्योंकि जिस सड़क होकर नादिरशाह, अहमद शाह, तिमूर शाह दुर्रानी और जमन शाह आदि की आक्रमणकारी सेनाएँ आई थीं और दिल्ली की ओर बढ़ी थीं वह सड़क इसी प्रदेश होकर आती है। अंतिम मुगल शासक अपने आनन्द के सामने जब तक शत्रुसेना दिल्ली के समीप नहीं पहुँचती थी तब तक चिंताही नहीं करते थे। इसलिये मुगल साम्राज्य के जिलों के सरदारों तथा अमीरों को अपनी रक्षा का प्रबंध स्वयं करना पड़ता था इस लिये इस प्रदेश के सरदार भी लगभग स्वतंत्र थे। समय समय पर केवल नजराना मुगल सम्राट को दिया करते थे।

धीरे धीरे पञ्जाब में सिक्ख जाति का उत्थान हो रहा था। १७६५ ई० में गूजरसिंह भांगनी ने गुजरात में गक्खर जाति को परास्त किया। उसके पश्चात् उसने झेलम नदी पार की और रावलपिंडी तथा नमक श्रेणी की रहने वाली जातियों पर अपना अधिकार जमाया। उसी समय फतेहजंग के सोहन इलाका पर सिक्ख सरदार छत्रसिंह ने अपना अधिकार जमा लिया। धीरे धीरे सिक्ख जाति का प्रभुत्व बढ़ता गया और महाराज रणजीतसिंह के समय में अटक जिले का समस्त प्रदेश सिक्ख साम्राज्य में मिला लिया गया। अटक तथा फतेहजंग तहसीलें पेशावर के मार्ग में पड़ती थी इस लिये सिक्खों ने इन्हें अपने सीधे शासन में उन्नीसवीं सदी के आरम्भ ही से कर लिया था। कर की वसूली ठीकेदारी के रूप में की जाती थी। कोहाट के पठान सरदार इस प्रदेश में आकर बस गये थे और उन पर शासन करना सरल नहीं था। शासन में आय से कहीं अधिक खर्च हो जाता था। खान लोगों को यहां के इलाके ठीके पर दे दिये जाते थे और वही सरकार की आय होती थी। सिक्ख कार्यकर्त्ता करदार कहलाते थे।

फतेहसिंह या दूलसिंह कल्यान वाला (१९१८-१८२१) धन्नासिंह मालला, बोधसिंह सिध्यान वाला आदि प्रधान ठीकेदार थे। जब कभी भी ठीके पर इलाकों को उठाना सम्भव नहीं हो पाता था तो सिक्ख लोग स्वयं शासन तथा वसूली अपने हाथ में ले लेते थे। बड़े बड़े जमींदारों को चहारम (चौथाई) दिया जाता था। वे लोग जितना लगान वसूली करते थे उसका तीन चौथाई सरकार के यहां दाखिल करते थे और एक चौथाई स्वयं ले लेते थे। मालगुजारी जो ठीकेदारों से वसूल की जाती थी

उसमें भी बड़ी कठिनाई होती थी ठीकेदार लोग बहुधा मालगुजारी देने से इंकार कर जाते थे। सरदारों और ठीकेदारों में आपसी वैमनस्य भी गहरा चलता था।

१८३१ ई० में सरदार अत्तार सिंह कल्याण वाला जो उस समय सिक्ख साम्राज्य की ओर से अटक प्रदेश का अफसर था उसने मौक़ा पाकर कोट के खाँ राय मोहम्मद को अपने यहां बुलाया और वह पहाग के क़िले में मार डाला गया। बुद्धा खाँ मल्लाल आदि ने उसे कत्ल कर डाला था। जिसका बदला राय मोहम्मद के पुत्र ने बुद्धा खाँ के समस्त कुटुम्ब का सर्वनाश कर के चुकता किया।

पहाग के हत्याकांड के कारण राय फतेह खाँ का मार्ग खुल गया और वह कोट का स्वतंत्र शासक बन गया। वह एक शूरवीर था। हट्टा कट्टा और डीलडौल का तगड़ा था। वह बड़ा साहसी था मित्रों के प्रति उसका व्योहार बड़ा अच्छा था पर शत्रुओं के प्रति वह सदैव धोकाबाज़ी तथा निर्दयता का बर्तांव किया करता था। उसने अंग्रेजी शासन के भीतर अपनी राजगीर का संगठन किया। १८९८ ई० में १०० वर्ष की आय में उसका स्वर्गवास हो गया। उसकी मृत्यु पर इलाके के लोगों को बड़ा पश्चाताप हुआ। १८३५ ई० में सुल्तान सिंह करदार मालगुजारी वसूल करते समय कुँडा में मार डाला गया। उसी समय से कुँडा, खैर और कमलियाल इलाकों में गल्ले की वसूली बन्द कर नक़द रुपये के रूप में मालगुजारी ली जाने लगी और इन्हीं इलाकों के रहने वालों के हाथ चहारुम पर इलाके दे दिये गये। आखिरकार ये इलाके भी ब्रिटिश शासन में शामिल कर लिये गये। शामिल करने से बड़ी-बड़ी कठिनाइयाँ उत्पन्न हो गईं। इस प्रान्त के गाँव के रहने वालों ने समस्त जिम्मेदारी मलिक के ऊपर डाल दी जो पृथ्वी का मालिक समझा जाता था। उस समय वहाँ का मलिक अल्हयार था।

प्रथम सिक्ख युद्ध के समय इस जिले के निवासियों ने कुछ भी भाग नहीं लिया केवल फतेहखाँ ने लाहौर सिक्ख सरकार को कमजोर समझ कर १८४५ ई० में बगावत कर बैठा पर अगस्त १८४६ ई० में उसने सरदार छत्रसिंह के सामने हथियार डाल दिये। छत्रसिंह ने उसे अपने यहां नौकर रख कर प्रान्त में शान्ति स्थापित करने का विचार किया पर दो मास के पश्चात् अमीरचन्द मिश्र ने गलती या धोका से उसे मुक्त कर दिया। उसपर वह मुक्त हो कर पुनः लड़ने के लिये तयार हो गया। बाद में कर्नल लारेंस ने उस पर फिर अपना शासन जमाया था।

१८४८ ई० तक द्वितीय सिक्ख युद्ध चला उस समय अटक जिले के समस्त निवासी दरबार और अंग्रेजों के साथी बन गये। हज़ारा जिले में अबट नामक अफसर बन्द कर दिया गया और अटक किले में हर्बेट को घेर लिया गया। निकोल्सन झेलम और रावलपिंडी जिलों में इधर उधर मारा २ फिरता रहा। टेलर बन्नू की ओर और दक्षिण की ओर एडवर्ड मुल्तान की तरफ लड़ाई कर रहा था। इस प्रकार सैनिक दृष्टि से यह जिला बड़ा महत्वपूर्ण था। जिले के निवासियों पर ही आवागमन की सुरक्षा थी। विभाजित ब्रिटिश सेना को एकत्रित कर में सहायता देना और सिंध नदी पार करने में सहायक होना जिले के निवासियों पर ही निर्भर था। अंग्रेज जनता से इसी सुगमता की चाह रखते थे। कोट के फतेह खां, पिंडीगेब के अल्लाह यार मलिक, अटक के करम खाँ और उसके पुत्र मोहम्मद हयात खाँ आदि ने अंग्रेजों का साथ दिया जिससे सिक्खों को पराजय का सामना करना पड़ा। उसके पश्चात् अटक जिला ब्रिटिश शासन में मिला लिया गया। ब्रिटिश शासन में आजाने से जिले की उन्नति दिन प्रति दिन होने लगी। जिले में राजनैतिक उत्थान की अपेक्षा सामाजिक उत्थान अधिक हुआ है। १९०४ ई० में अटक का जिला शासन प्रणाली के ध्यान से एक अलग जिला बना दिया गया। इस प्रकार इस जिले को बने हुये ४३ वर्ष हो चुके हैं। इसके पूर्व तल्लागांव के अतिरिक्त समस्त भाग रावलपिन्डी जिले में मिला था।

अंग्रेजी संस्था स्थापित होने के पूर्व जिले की प्रधान सड़कें खतरे से कभी खाली नहीं रहती थीं। चलने वाले काफिलों का बीच बीच में होशियारी के साथ जाना पड़ता था और रिश्वत देकर जान

बचानी पड़ती थी। जिले का पश्चिमी भाग चोरी, मार-काट तथा हत्यायों के लिये प्रसिद्ध हैं वहां अंग्रेजी सत्ता स्थापित होने के पश्चात् भी कई वर्षों तक यही दशा वर्तमान रही। इन निर्दयता पूर्ण हत्या कांडों में जन्दाल का हत्याकांड प्रमुख है। जंदाल गाँव बालगेब या अपरगेब प्रदेश में स्थित है। वहां गेब लोग रहते हैं और अपने को मुग़ल वंशज कहते हैं। वहाँ के मुख्य सरदार महमूद की युवा लड़की शाह नेवाज़ नामक एक युवक से शादी करना चाहती थी। शाहनेवाज महमूद के शत्रु घराने का था। लड़की तथा शाहनेवाज में घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित हो गया था। लड़की के पति का देहान्त हो चुका था। वह शाहनेवाज के घर आया जाया करती थी। इसका भेद महमूद को मालूम हो गया एक दिन उसने अपनी लड़की से पूछा कि क्या तुमसे और शाहनेवाज से स्त्री-पुरुष का संबंध स्थापित हो गया है और क्या तुमने उसे कभी आलिंगन किया है! लड़की ने उत्तर दिया मैं उससे शादी करना चाहती हूँ। इस पर मामला समाप्त हो गया। उसी दिन रात को महमूद ने अपने साथियों की सहायता से पहले तो अपनी लड़की का सिर काट लिया और शाहनेवाज के मकान के मार्ग में उसे फेंक दिया उसके पश्चात् शाहनेवाज के मकान पर गया और द्वार मार्गों पर लकड़ी रखकर घर में आग लगा दिया। मकान जल गया और उसके साथ मकान के ७ प्राणी जल मरे २ प्राणी दीवार से कूद कर नीचे आए तो तलवार के घाट उतार दिये गये। घटना करने के पश्चात् लोग भाग गये और अफरीदियों के बीच जा छिपे उनकी जायदादें छीन ली गईं और दूसरों को दे दी गई थीं। इसी प्रकार की अनेकों घटनाए वहाँ घटित होती रहीं। अब जाकर कुछ शांति हुई है फिर भी कुछ न कुछ हो ही जाता है।

जनसंख्या

पञ्जाब में कुल २९ जिले हैं। जनसंख्या के ध्यान से अटक जिले का तेईसवां नम्बर है। यहां प्रतिवर्ग मील में लगभग १०५ व्यक्ति रहते हैं। जिले का आधा से अधिक भाग खेती करने योग्य नहीं है। जिसमें पहाड़ियां, पठार, पहाड़ी कंदराएं आदि स्थित हैं। खेतिहर गावों की आबादी सघन है और प्रति वर्ग मील में लगभग ९०० के हैं। जिले की कुल जनसंख्या ६ लाख है।

छाछ के उपजाऊ मैदान की जनसंख्या पञ्जाब के किसी भी सघन बसे हुये प्रान्त से कम नहीं है। इस मैदान में ४ नगर तथा ६१८ गांव हैं। अटक, हाज्रो, कैम्पबेलपुर और पेंडीगेब नगरों में हाज्रो नगर की जनसंख्या सबसे अधिक लगभग १५ हजार है। यह नगर व्यापार तथा नगरी व्यवस्था के कारण बढ़ता गया है। अटक भी उन्नति की ओर अग्रसर होता जा रहा है।

अटक जिले के बड़े गांव आबादी और छोटे गांव धोक कहलाते हैं। चूंकि वहां उपजाऊ भूमि के छोटे छोटे टुकड़े अलग अलग विशेष दूरी पर पाए जाते हैं इस लिये जहां कहीं भी लोग खेती करते हैं वहीं अपना घर भी बना लेते हैं। जंगली तथा लड़ाकू प्रदेश होने के कारण लोग अपनी रक्षा के लिये बड़े गावों (आबादी) में रहते हैं। पर जहां कहीं जमींदारों द्वारा किसानों की रक्षा भली भांति की जाती है वहां लोग धोकों में रहना ही पसन्द करते हैं। घर लोग पत्थर के बनाते हैं और मिट्टी का पलास्तर करते हैं। घर कुढंगे होते हैं। कायदे के साथ कार्य नहीं होता है। परदे का रिवाज गांवों में कम है। भेड़, बकरी और दूसरे जानवर जो पालते हैं उनके लिये भी स्थान बनाते हैं। अटक के गावों की जनसंख्या औसत से लगभग ८०० है।

अटक तहसील में १९४, फ़तेह जंग में २०२, पिंडी गेब में १३५ और ताल्ला गांव में ८६ गांव स्थित हैं। अधिकांश गांवों की आबादी ९०० के लगभग है। फतेहजंग तहसील में किसी भी गांव की जनसंख्या ३ हजार से अधिक नहीं है। समस्त जिले की जनसंख्या ५ लाख से कुछ अधिक है। छाछ तथा अटक में जनसंख्या धीरे धीरे बढ़ती गई है। फौज में जिले के लोग बहुत हैं इसलिये वे लोग बाहर ही अपना जीवन व्यतीत करते हैं। जब फसल अच्छी नहीं होती या वर्षा की कमी होती है तो जिले के लोग कोहाट, बन्नू, पेशावर रावलपिंडी आदि जिलों में चले जाते हैं। यहां के

लोग बाहर जाकर व्यापार किया करते हैं। व्यापार के लिये ये लोग आस्ट्रेलिया आदि सुदूर पूर्वी स्थानों को जाते हैं।

लड़के के उत्पत्ति के समय बड़ी खुशी मनाई जाती है और सम्बन्धी, मित्रगण लोग शुभामनाओं के समाचार सुनाते हैं। मुसलमानों के यहां बच्चे के पैदा होते ही मुल्ला बुलाया जाता है और वह बच्चे के कान में अज़ान की आवाज देता है उसको इसके बदले में एक रुपया दे दिया जाता है। यदि लड़की पैदा होती है तो मुल्ला साहब को केवल थोड़ा सा नाज दे दिया जाता है। उसके पश्चात् अजवाइन और गुड़ मिला कर कुछ दाने बच्चे के मुँह में डाल दिया जाता है। इसी प्रकार तीन दिन तक काम होता है। चौथे दिन समस्त नातेदार स्त्रियां एकत्रित होती हैं और बच्चे की बुआ (बाप की बहिन) बच्चे को मां की गोद में दूध पिलाने के लिये बैठाती है। बुआ को इसके लिये कुछ इनाम मिलता है। उसी समय से बच्चा मां का दूध पीने लगता है। एक सप्ताह के पश्चात् नाई बच्चे का मुंडन करता है। उसी दिन घर का मालिक बच्चे का नाम करण करता है भोजन तथा मिठाई आदि बांटी जाती है। उसी दिन बच्चा तथा उसकी मां को स्नान कराया जाता है। नाई, धोबी, पासी, चमार आदि परजों को इनाम दिया जाता है। लड़की तथा लड़के की उत्पत्ति में एक ही प्रकार की रसमें मनाई जाती हैं अन्तर केवल यह है कि लड़के का समारोह अधिक उत्साह के साथ मनाया जाता है

मुसलमान बच्चों की सुन्नत ४ से ८ वर्ष तक में नाई द्वारा होती है। सुन्नत के समय गुड़ अथवा मिठाई बाटी जाती है। और नाई को १ रुपया से दस रुपया तक इनाम मिलता है।

हिन्दू लोग जो अपने को सिक्ख कहते हैं और केशधारी होते हैं। उनके यहां नाम करण संस्कार उत्पत्ति के समय से एक मास पश्चात् होता है। बच्चे को धर्मशाल, ग्रंथ साहब (सिक्खों की धार्मिक पुस्तक) के पास ले जाते हैं और भाई या किसी दूसरे आदरणीय व्यक्ति द्वारा पुस्तक खोली जाती है। जो पृष्ट खुलता है उसके प्रथम शब्द का प्रथम अक्षर बच्चे के नाम का भी प्रथम अक्षर होता है। मोन हिन्दुओं के मध्य भी इसी प्रकार नाम करण होता है या कुटुम्ब के सब से बड़े आदरणीय व्यक्ति द्वारा होता है। ४, ६ या ९ वर्ष तक में मुंडन संस्कार होता है उसी समय ब्रादरी का खाना-पीना होता हैं।

जिले के मुसलमान सिक्ख और हिन्दू सभी लोगों के बीच स्त्रियों की कमी है। लड़के अधिक उत्पन्न होते और बढ़ते हैं। लड़कियां एक तो पैदा कम होती हैं दूसरे लड़कपन ही में अधिकांश संख्या में मर जाती हैं। यद्यपि यहां के लगभग सभी मुसलमानो की उपज हिन्दू जाति से हुई तो भी इन पर मुसलमानी धर्म का इतना गहरा प्रभाव पड़ा है कि जिससे शादी में बड़ी अड़चन होती है। मुसलमान शादी के लिये समीप वर्ती लड़की के लिये तलाश करता है जहां तक चचा, फुवा, मामा की लड़की उपलब्ध होती है अन्य किसी के साथ व्याह नही होता है। सय्यद सब से कुलीन माने जाते हैं उन्हें लड़कियां सुगमता से मिल जाती हैं मुसलमान लोग शादी में कुल की बड़ी परवाह करते हैं वे अपनी लड़की को सदैव अपने से उत्तम कुल में देना स्वीकार करते हैं। व्याह के पूर्व नाता या कुर्माई संस्कार होता है।

अटक के अतिरिक्त सभी तहसीलों के मुसलमानों के मध्य शादी का रिवाज यह है कि लड़के का पिता एक नाई के सिर पर रखकर दस बारह सेर गुड़, कपड़ा और आभूषण आदि तथा पांच रुपये लड़की के पिता के यहां भेजता है। लड़की का पिता गुड़ नाई से लेकर घर रख लेता है और आये हुये मेहमानों को भोजन सत्कार कराता है दूसरे दिन लड़की के नाते दार आते हैं और उनके सामने आया हुआ समस्त सामान रक्खा जाता है। मुल्ला भी मौजूद रहता है जो उन्हें शरा पढ़ाता है। शरा जवानी तीन चार लड़की तथा लड़के द्वारा दुहराया जाता है यदि वे छोटे हुये तो उनके माता पिता शरा दुहराने की प्रथा अदा करते हैं। इस समय लड़की के हाथ में एक रुपया निशानी रक्खी जाती है। उसके बाद गुड़ जन समूह में बांट दिया जाता है। मुल्ला को एक रुपया और नाई को ६

आना इनाम दिया जाता है। भोजन आदि होने के पश्चात् चलते समय लड़के के पिता को एक पगड़ी और एक रुपया मिलता है। उनके चले जाने के पश्चात् लड़की वाला अपने सम्बन्धियों की दावत देता है। स्त्रियाँ-समारोह में गीत गाती हैं।

अटक तहसील में विवाह संस्कार दूसरे रूप में मनाया जाता है और हूजरा, खोरा, थाल, शर्बत, मिलनी, पेश्ररगल आदि संस्कारों के पश्चात् व्याह होने की सम्भावना आती है। और विवाह की तिथि निश्चित की जाती है। और रिश्तेदारों के यहाँ नाई द्वारा गुड़ भेज कर निमंत्रण दिया जाता है। शादी के समय ४ या पांच दिन तक लगातार दोनों ओर की स्त्रियाँ गीत गाती हैं। शादी में दूल्हा घोड़े पर सवार होकर जाता है। शादी के समय मोलवी निकाह पढ़ाता है। व्याह के जितने रसूम मनाए जाते हैं उनको अध्ययन करने से पता चलता है कि आर्य संस्कृति का उसपर गहरा प्रभाव पड़ा है

छाछ में शादी का समस्त व्यय दूल्हे के माता-पिता को ही चुकाना पड़ता है। शादी १० वर्ष से १५ वर्ष के भीतर होती है।

जिस प्रकार व्याह में मुसलमानों के यहाँ निकाह संस्कार प्रधान है उसी प्रकार हिंदुओं के यहाँ कन्या दान संस्कार प्रधान है। इस संस्कार द्वार वेदद्-ध्वनि की जाती है और माता-पिता या लड़की का दूसरा कोई प्रधान उसका दान वर के हाथ करता है। हिंदुओं के यहाँ चार रोज तक बरात लड़की के पिता के यहाँ ठहरती है। लड़की के पिता को दहेज देनी पड़ती है। शादी के पश्चात् कन्या का गोत्र बदल जाता है और वह वर के गोत्र की हो जाती पर मुसलमानों के मध्य यह बात नहीं है उनके यहां शादी के पश्चात् भी लड़की पिता के ही कुल की मानी जाती है।

हिंदुओं के यहां एक से अधिक व्याह करने का रिवाज नहीं है और न स्त्री को छोड़ने ही की चलन है पर मुसलमानों के यहां एक से अधिक व्याह करने की प्रथा है। अमीर, धनी जमीदार एक से अधिक शादी करते हैं। तिलाक़ (स्त्री को छोड़ देना) की रसम भी मुसलमानों में प्रचलित है।

जिले की प्रधान भाषा पञ्जाबी है। पठानों की आबादी होने के कारण जिले के कई भागों में पुश्तो भाषा प्रचलित है। उर्दू भी बोली जाती है पर उर्दू का प्रयोग बहुत कम होता है।

अटक जिले में हिंदू, सिक्ख, सय्यद, जंजुवा, अवाँ, गूजर, भट्टी, जाट, जोध्र, खत्तर, पठान, चौहान राजपूत, घेब, खत्री, शेख, मलियार, मुगल, अरोरा; जुलाहा, गक्खर, जंजुवा, गेब आदि जाति के लोग निवास करते हैं जो हिंदू, सिक्ख और मुसलमान तीन प्रधान धर्मों में बंटे हैं। जिले के व्यापार तथा ऋण देने का रोजगार खत्रियों, अरोरों और ब्राह्मणों के हाथ है। हिंदुओं में अधिकांश जन-संख्या खत्रियों की है।

जिस प्रकार हमारे प्रान्त (संयुक्त प्रान्त) में भिन्न भिन्न जाति के लोग विभिन्न रोजगार करते हैं उसी प्रकार अटक जिले में भी है। सोनार चांदी, सोने के गहने बनाता है। कुम्हार मिट्टी के बर्तन बनाता है। बुनकर कपड़ा बिनने का काम करता है नाई बाल बनाता है। तेली तेल पेरता है। मल्लाह नाव चलाते हैं। धोबी कपड़ा धोते हैं। मीरासी लोगों का काम गाना बजाना है। यह लोग उत्सव के समय लोगों को प्रसन्न करने के लिये बुलाये जाते हैं।

जिले में प्रधान आबादी मुसलमानों की है उसके बाद सिक्ख और हिंदू हैं। कूका मत के मानने वाले भी हैं। यह मत सिक्ख धर्म से ही निकला है। हाजो में दलसिंह अरोरा नामक एक व्यक्ति थे उनके दो पुत्र थे जिनका नाम बालिक सिंह और मान सिंह था। उस समय पीर दाद में एक दुर्ग था जो हाज्रो के समीप था। हाज्रो में सिक्ख अफसरों का दफ़्तर था। इन सिक्ख अफ-सरों को भोजन सामग्री दलसिंह के पुत्रों से मिला करती थी। भाई बालिक सिंह ने सिक्ख धर्म स्वी-कार कर लिया और उसी का प्रचार करने लगा धीरे धीरे वह एक बड़ा साधु हो गया और हाज्रो की समीपवर्ती प्रजा उसी की शिक्षा पर चलने लगी। उसके कई एक चेले भी हो गये। जब सिक्ख शासन का अंत हो गया तो भी लोग उसी की शिक्षा पर चलते थे। बालिक सिंह की मृत्यु के पश्चात् कूका के समय में वहां विप्लव हुआ जिसमें

बालिक सिंह को रामसिंह पकड़ कर रंगून भेज दिया गया। उसी काल से इस मत का नाम कूका चला आता है। इस धर्म के मानने वाले कू-कू-कू शब्द का उच्चारण करते हुये मग्न हो जाते हैं। रावलपिंडी में इस मत को जगरासी कहते हैं। सियाल कोट में इसके मानने वाले नाम धारी कहलाते हैं।

जिले के लगभग प्रत्येक गांव में मुसलमानों ने अपनी प्रर्थना के लिये मसजिद बना रखी है। बड़े गांवों तथा नगरों में हिन्दुओं के शिवाला, ठाकुरद्वारा तथा धरमशाला आदि बने हैं। मसजिद में इमाम या मौलवी रहते हैं जो अज़ान देते तथा नमाज पढ़ाते हैं। वह मसजिद की देख भाल रखते हैं। लड़कों को क़ुरान रटाते हैं। इनकी सहायता गांव के निवासी मुसलमान चन्दे द्वारा करते हैं। इन मौलवियों में कुछ तो सचमुच ही बड़े फकीर हो जाते हैं और फिर उनका एक स्थान पर रहना असम्भव हो जाता है ऐसे फ़कीर सूफी कहलाते हैं। मन्दिर शिवाला और धर्मशाला में ब्राह्मण पुजारी काम करते हैं। अटक जिले में नौकरी पेशा करने वालों के अतिरिक्त और कोई दूसरे ईसाई मत मानने वाले नहीं हैं। यहां पर ईसाई धर्म प्रचारक संस्थाए नहीं है।

जिले में अंधविश्वाश भारत के अन्य भागों की भांति ही प्रचलित है। लोग जिन्नों से बहुत डरते हैं और उन्हें प्रसन्न रखने का प्रयास करते हैं। मन्दिरों, मसजिदों और क़ब्रों के समीप लोग भूमि पर सोते हैं। इसी प्रकार आने जाने में भी शुभ साइत तथा शुभ वस्तु का विचार किया जाता है। प्रत्येक नये कार्य के समय शुभ लग्न देखी जाती है। वहाँ भी ठीक उसी प्रकार अंधविश्वास की चलन समाज में है जैसी कि हमारे प्रान्त में जनसाधारण में पाई जाती है।

जिले के लोग अधिकांश किसान हैं जो अपने खेती के कार्य में लगे रहते हैं। कमाई करना पुरुषों का काम समझा जाता है। जब तक शादी नहीं होती है लड़कियों के लिये कोई विशेष काम नहीं रहता है शादी होजाने के पश्चात् पति के गृह में कुछ समय तक उसे छुट्टी रहती है उसके पश्चात् उसके सिर पर जिन्दगी भर का भार आ जाता है घर साफ करना, पानी भरना, गोबर उठाना, आटा पीसना, भोजन तयार करना तथा पति को खेत में भोजन पहुँचाना, सूत कातना कपड़ा सीना, लड़कों की देख माल करना आदि कार्य उसे करने पड़ते हैं और उसे किञ्चित मात्र भी छुट्टी नहीं मिलती है।

जिले में काम के हिसाब से हिन्दू तथा मुसलमानों ने दिन को कुछ भागों में बांट दिया है जिस से उन्हें बड़ी सुविधा होती है। प्रत्येक जाति वाले का कार्यक्रम ६ बजे प्रातःकाल से आधी रात तक रहता है। दिन के भोजन का समय लगभग दस बजे होता है। दोपहर बारा बजे काम बन्द करके फिर कुछ भोजन होता है। आठ बजे से १० बजे रात तक का समय सोता कहलाता है। इसी समय लोग रात्रि का भोजन करते हैं।

अटक जिले में जब लोग एक दूसरे से मिलते हैं तो आदर के ध्यान से एक दूसरे के पैर के गुठनों की ओर हाथ बढ़ा देते हैं। सलाम भी करते हैं। संकेत करने का इस जिले में अजीब हाल है। जैसे कि यदि कुछ पूछना होता है तो वह अपने सिर को पीछे की ओर झटक देते हैं। सिर ठोकने का मतलब नहीं होता है। ऊंगली भीतर करने का अर्थ भी नहीं का है। भीतर की ओर हथेली को उठाना या सिर हिलाने का मतलब मना करने का होता है। हाथ के अंगूठे के उठाने का अर्थ घृणित भाव से इनकार करना है। यदि किसी की ओर बीच की उंगली उठा दी जाय तो वह क्रोध कर बैठता है और हथेली का सामने उठा देना तो अनादर करना समझा जाता है।

गेहूँ, बाजरा, मक्का, चना, चावल, मोथो, जौ साग आदि लोग साधारण रूप से भोजन में प्रयोग करते हैं। जाड़े के दिनों में बाजरा, चने का साग आदि अधिक खाया जाता है। घी दूध का प्रयोग धनी लोग करते हैं। कुर्ती, पाजामा, पगड़ी, चद्दर आदि वस्त्रों का प्रयोग पुरुष करते हैं। स्त्रियाँ कुर्ती, सुथ्थन (पाजामा) भोचान (ओढ़नी) का प्रयोग अधिक करती हैं। हिन्दू स्त्रियाँ तथा पुरुष धोती का प्रयोग करते हैं।

पुरुष हाथ की उंगली में चाँदी की अंगूठी

पहनते हैं जिसे छाप कहते हैं। बांह या गले में तावीज़ पहनी जाती है। लड़के हस्सी (हार) पहिनते हैं और कान में मुंदरा (बाली) पहिनते हैं। स्त्रियां पाजेब, कड़ा (हाथ का) चूड़ियां, छाप (मुन्दरी), छल्ला, हंसली, इत्ती, बहादारियां (कान का गहना) टावित्री (मस्तक पर), कील, बुलाक, नाथ (नाकमें), वहुँटिया, चन्द्र कान, पटरी, टीका धोलन, हौलदिली या दिलराखनी, तावीज़ और जुगनी आदि आभूषण पहिनती हैं। ये आभूषण सोने या चांदी के बनाए जाते हैं। कान, नाक, सिर गले के गहने अधिकांश रूप से सोने के होते हैं।

समस्त जिले में लोगों के घर में कमरे, आंगन और बरामदे किसी किसी के होते हैं। कमरों को यहां कोठा कहते हैं आंगन को वेहरा या सहन कहते हैं। मकान पत्थर, मिट्टी और सीमेंट तथा चूने के बनाए जाते हैं। अमीर लोगों के घरों को छोड़ कर सभी घरों की दीवारें बड़ी कमज़ोर होती हैं। ऊपर छत चपटी बनाई जाती है जिस पर ग्रीष्म काल में लोग सोते हैं। छतें खम्भों के सहारे बनाई जाती हैं। दीवारें तो केवल पर्दे के रूप में रहती हैं। घर के बग़ल में ही गौशाला या वगर (जानवरों के लिये घर) होते हैं। वगर में पशुओं को चारा खिलाने के लिये खुरली (चरनी) रहती है। भेड़, बकरियों के लिये वाड़ा बनाया जाता है। घरों में द्वार होते हैं पर खिड़कियां कम होती हैं। मकान साफ सुथरे रहते हैं। दीवारें तथा फर्श लीपे-पोते रहते हैं। अनाज रखने के लिये किसानों के घरों में कुलीह और घोलोट बनाए जाते हैं। कुलीह सफेद मिट्टी और भूसे से आयताकार कोठी के तौर पर बनाई जाती जिसमें पच्चीस-तीस मन नाज भर दिया जाता है। ऊपर द्वार पर ढक्कन लगा रहता है। बगल में नाज निकालने के लिये नीचे सूराख़ रहता है। घोलोट गोलाकार कोठी होती है यह छोटा होता है और तीन या चार मन नाज रक्खा जाता है। घर में चारपाइयां; खत, स्टूल, चरखे, करघे आदि होते हैं। भोजन बनाने तथा रखने और पानी रखने के लिये भी भांति भांति के बर्तन होते हैं। आटा पीसने के लिये चक्की प्रायः सभी घरों में होती है। जमींदारों के घरों में किसानों तथा गरीबों की अपेक्षा अधिक बैठने, उठने, लेटने आदि के सामान होते हैं।

मरने पर मुसलमान लोग लाश को कब्र खुदा कर गाड़ देते हैं। कब्र में रखते समय शरीर के साथ कुछ भोजन सामग्री भी रख दी जाती है। मुल्ला नमाज़ पढ़ाते तथा प्रार्थना कराते हैं। मुल्ला को इमाम कहते हैं।

मृतक को दफनाते समय कुछ दान पुण्य किया जाता है। घर लौटने पर कुछ जल-पान होता है। उसके बाद वे ही रसूम मनाए जाते हैं जो हमारे प्रान्त में प्रचलित हैं।

जिले में अधिकतर शादी-व्याह के समय लोग आनन्द मंगल मनाते हैं पर बीच बीच में भी पीर कबड्डी, मुगदर उठाना, तरार उठाना, मुङ्गली फेरना बीनी, (कलाई पकड़ना आदि खेल गांवों में होते हैं जिनमें किसान भाग लेते हैं। सम्मी, लोधी, भंगड़ा धमाल आदि नाच हैं जो यहां प्रचलित हैं। लड़के लम्बी कूद, कबड्डी, अंख मुंदौला, कन्हूरी ताला और पिंजी तड़प आदि खेल खेलते हैं।

मेले

प्रायः जिले के प्रत्येक धार्मिक स्थानों पर दर्शन के लिये जाते हैं और प्रसाद चढ़ाते तथा बांटते हैं। भोजन भी गरीबों को बांटा जाता है। जब्बी, उर्स (मखद में) कोट, अटक, ठीका रियान, हसन अब्दाल, पञ्जा साहब आदि हैं। उर्स का मेला साल में चार बार मखद स्थान पर नूरीशाह की ज्यारत पर लगा करता है। समाधि की गद्दी का मालिक एक प्रधान फकीर रहता है जो चढ़ाए गये सामान को लेने का अधिकारी होता है।

वैसाख मास में फतेह जङ्ग तहसील में कोट का प्रसिद्ध मेला लगता है। भादों मास के प्रथम गुरुवार को अटक में सुल्तान सतर उद्दीन बुखारी की समाधि पर मेला लगता है। इसमें हिन्दू तथा मुसलमान दोनों भाग लेते हैं। थिकारियां (अटक तहसील) स्थान पर मियांवली साहब की खान-काह पर एक मेला होता है जहाँ भांति-भांति की बीमारी से पीड़ित लोग जाते हैं और वहाँ की मिट्टी मस्तक या आंख पर लगाने से बीमारी दूर हो जाती है।

हसन अब्दाल की पहाड़ी पर वलींकधारी की खानकाह है यहाँ प्रत्येक बृहस्पतिवार को मेला लगता है। पञ्जा साहब सरोवर पर यूँ तो सदैव मेला लगता है पर वैसाख में खास तौर पर मेला होता है।

कृषि

कृषि के ध्यान से अटक का ज़िला चार भागों में विभाजित हैं। (१) वह भूमि जिसमें खेती की जाती है उसका क्षेत्रफल ६१२,७६० एकड़ है। दूसरी वह भूमि है जहां खेती की जा सकती है पर पहाड़ी अथवा बलुही होने के कारण और सिंचाई के साधनों के कमी के कारण कृषि नहीं होती है। ऐसी भूमि लगभग १६ लाख एकड़ है। लगभग २ लाख १६ हज़ार एकड़ में सरकारी वन है। इसके अलावा लगभग ११ लाख ७ हज़ार एकड़ भूमि बेकार है जिसमें पहाड़ी कंदराएं, पहाड़ी नदियां, पहाड़ियां तथा दूसरी नदियां हैं।

साधारण रूप से अटक जिले की भूमि नीचे वाली वर्तमान चट्टानों से बनी है इसलिये या तो खेती वाली भूमि चूने के पत्थर वाली है या बलुहे पत्थर वाली है जो भूकम्प या नदी के बहाव द्वारा बन गई है। इसके अतिरिक्त और दूसरे प्रकार की उपजाऊ भूमि भी पाई जाती है।

छाछ के मैदान में वह भूमि जो छाछ का दिल कहलाती है बड़ी उपजाऊ है। यहां पानी भी समीप ही पाया जाता है जिससे कुएं बड़ी सरलता से सिंचाई के लिये खोद लिये जाते हैं। ईख, तम्बाकू मक्का, गेहूँ की उपज इस भूमि में खूब होती है। इस मैदान के दक्षिण की भूमि नीची तथा दलदली है। यह भूमि चेल नदी की है। यहां कुछ ही इंच नीचे पानी वर्तमान है। अधिक ऊँची भूमि की मिट्टी में नमक अधिक है वहां पानी की कमी हो जाती है वहां का पानी भाप बन कर उड़ जाता है या नीचे वाली भूमि में चला आता है। इन कारणों से इस भाग में केवल रबी की फसल होती हैं खरीफ की फसल अधिक पानी होने से बहुधा खराब हो जाती है।

मैरा वाली भूमि में मिट्टी तथा निमक वर्तमान है। इस भूमि में खेती होती है पर खेती वर्षा पर निर्भर है। यदि लगातार दो तीन वर्ष तक वर्षा न हुई तो खेत बिना जोते-बोए पड़े रह जाते हैं और अचानक वर्षा हो जाने पर समस्त मैरावाली भूमि खेती से भर जाती है। यहां ज्वार, बाजरा मक्का तथा चना की उपज होती है।

अटक के नाला वाली भूमि में खारी बहुत है। कछारी भूमि भी वर्तमान हैं। साधारण रूप से यहां की भूमि अच्छी नहीं कही जा सकती है पर जिस वर्ष वर्षा अच्छी हो जाती है उस साल इतनी अधिक उपज हो जाती है कि उसका काटना, मांड़ना कठिन हो जाता है।

फतेह जंग नाला के समीपवर्ती गांओं की भूमि अच्छी कछारी हैं। यहां नदियां भी अधिक हैं और बड़ी अच्छी उपज होती है।

गेब का मैदान कालचिट्ट तथा खैरी मूरत पहाड़ियों के मध्य स्थित है। इसका पूर्वी भाग बलुहा पर उपजाऊ है। पश्चिमी भाग की मिट्टी सूख जाती है और कड़ी है। मामूली तौर पर मिट्टी अच्छी है और वर्षा होने पर बड़ी अच्छी उपज होती है यदि वर्षा न हुई तो फिर खेती के पौधे धूप तथा गरमी का सामना नहीं कर सकते और सूख जाते हैं।

जंदाल के मैदानी गांव की मिट्टी समस्त जिले से कहीं भिन्न है। यहां पहाड़ी कंदराएं बहुत कम हैं। केवल कहीं कहीं पहाड़ी चट्टाने मिट्टी के ऊपर निकल आई हैं। इस प्रदेश के अधिकांश भाग की मिट्टी साधारण बालू की बनी है। यहां सोतों या कुओं से बहुत कम सिंचाई होती है। चना यहां की मुख्य उपज है। गेहूँ भी होता है। खरीफ की फसल भी होती है पर कम होती है।

उपज के ध्यान से अटक जिले की फतेह जंग और पिंडी गेब की भूमि ८ भागों में विभाजित है। चाही—वह भूमि है जिसमें कुएं से सिंचाई होती है आबी भूमि की सिंचाई सोतों या कुओं से होती है। नहरी भूमि की सिंचाई नहर से होती है। सैलाब—वह भूमि जहां बाढ़ आती है और प्राकृतिक रूप से वहां की मिट्टी सदैव गीली रहती है। लिपारा—वह भूमि जो गांव के समीप वाली है और जहां गांव वाले खाद खेतों में डालते हैं तथा गांव का पानी बहकर खेतों में जाता है। इस भूमि

में साल में दो बार अच्छी फसल उगाई जाती है। लास वाली भूमि को पानी बाहर से मिलता है या खा बहाव का पानी बांध बना कर रोका जाता है। इन बांध वाले खेतों की भूमि बड़ी उपजाऊ होती है। मैरा—साधारण मरानी मिट्टी वाली भूमि है। राकड़—वह भूमि जो अधिक पहाड़ी तथा ढालू पहाड़ों की है जहां की मिट्टी बिलकुल उपजाऊ नहीं है।

तालागांग तहसील में चाही, आबी, सैलाब हैल (गांव के समीप वाली), बरानी अव्वल, मैरा और राकड़ मिट्टी पाई जाती है।

अटक तहसील में चाही, आबों, नहरी दो फसली नहरी एक फसली, सैलाब, लिपाड़ा, मैरा और राकड़ मिट्टी पाई जाती है।

यहां १५ जनवरी अर्थात् माघ के महीने से जोतने बोने का काम आरम्भ होता है और समस्त फाल्गुन मास तक होता रहता है तब तक सरसों तथा गेहूँ के छोटे पौधे जानवरों को खिलाने के लिये तयार हो जाते हैं।

चैत मास में जुताई होती रहती है और तरबूज, खरबूजा तथा कपास बो दी जाती है। बैसाख महीने में मोय बोई जाती है और सरसों, तारामीरा जौ, चना और गरम स्थानों का गेहूँ काट लिया जाता है। जेठ के महीने में गेहूँ की फसल तयार हो जाती है और उसकी कटाई हो जाती है उसके बाद मंड़ाई का काम आरम्भ होता है।

असाढ़ मास में गेहूँ की तयार फसल मांड़ी जाती है तथा पांसे हुये खेतों में मक्का, बाजरा जुवार और मूंग बोए जाते हैं। श्रावण मास में जुताई का खूब काम होता है और मक्का तथा बाजरा बोया जाता है। भादों मास में वसंत ऋतु की फसल के लिये जुताई होती है और बाजरा तथा मक्का की फसल काटा जाती है।

असौज (कुवार) मास में गेहूँ, चना, सरसों जौ आदि नाज बोए जाते हैं तथा बाजारा, ज्वार और मक्का को कटाई होती है। कातिक में भी रबी फसल के नाज बोने का काम होता है तथा खरीफ फसल की कटाई होती है।

अगहन मास में यदि वर्षा हुई तो लिपारा भूमि में रबी की फसल बोई जाती है। पूस में कपास चुनी जाती है। और दूसरा खेती का काम बन्द रहता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि जिले में साल भर लगातार किसान कृषि कार्य में लगे रहते हैं।

इस प्रकार जिले में खरीफ की फसल में ईख, बाजरा, मक्का, ज्वार, मूंग, उड़द, कपास आदि फसलें उपजती हैं और रबी में गेहूँ, जौ, चना, सरसों, अलसी, तम्बाकू, मसूर आदि फसलें होती हैं।

कुओं के समीप वाटिकाएँ लगाई जा सकती हैं और वहां की कीमती फसलें पैदा की जा सकती हैं पर जमींदार लोग ऐसा करना अपना अपमान समझते हैं और दूसरों को खेत देते नहीं हैं इस कारण फसलें पैदा नहीं की जा सकती हैं। जिले में तीन प्रकार के किसान हैं। (१) असामी कदीमी (प्राचीन किसान) (२) मुस्तकिल पुराना (३) मुस्तकिल नया या जदीद किसान।

खनिज सम्पत्ति

अटक जिले में खनिज सम्पत्ति बहुत कम है। कोयला कालचिट्ट के उत्तर की ओर मुंगी, चोई, बाघ, निलाव और सोधांदा बाट गाँवों के समीप पाया जाता है। इन गावों के समीप कोयले की बड़ी खानें वर्तमान नहीं हैं वरन् भूमि में छोटे छोटे गढ़ों में पाया जाता है। यह धरती की ऊपरी धरातल से १० फुट से ५० फुट की गहराई तक मिलता है। यहां का कोयला अधिक उपयोगी नहीं है।

सोना—सिन्ध, सिन्ध की सहायक नदियों, रेशी सील आदि के बहाव में सोना पाया जाता है। तालागांग की पहाड़ी नदियों की बहाव में भी मिलता है। इन स्थानों पर इतना अधिक कर लगा हुआ है कि सोने का साफ करना ही बहुत कठिन है। सोना साफ करके निकालने में बड़ी कठिनता होती है और फिर इतनी कम मात्रा में सोना निकलता है कि लाभ बहुत कम होता है। इसी कारण इस व्यवसाय में ध्यान कम दिया जाता है।

जिले में सोना साफ करके निकालने की विधि सीधी सादी है। १० या १२ पौंड बालू परात में

रखकर पानी डाल दिया जाता है और फिर घोल कर पानी तथा हलके बालू के कण बाहर पसा दिया जाता है इसी प्रकार उस समय तक क्रम जारी रहता है जब तक कि परात या थाल में नीचे काला चमकदार भाग शेष रह जाता है। इसके पश्चात् उसे आग पर चढ़ा दिया जाता है जिससे पारा अलग हो जाता है और सोने का एक छोटा गोला बन कर अलग हो जाता है।

पिट्रोल—कालचिट्ट पहाड़ी प्रदेश तथा उसी के समीपवर्ती स्थानों में पाया जाता है। सर्व प्रथम सद्‌काल नामक स्थान पर जो फतेहजंग से तीन मील की दूरी पर है १८७० ई० में एक कुआं खोदा गया था उसके पश्चात् साढ़े चार इंच व्यास के पांच और सूराख पृथ्वी में भिन्न स्थानों में ५० फुट गहरे किये गये और नीचे से पानी में मिला हुआ तेल निकाला गया। पर अभ्यास से सिद्ध हुआ कि पिट्रौल की मात्रा अधिक नहीं है। एक बार एक बोरिंग तो ८०० फुट गहरी की गई पर उससे अधिक लाभ नहीं हुआ। सूराखों में पानी भर जाने पर तेल दिखलाई पड़ता है।

कावागढ़ पहाड़ियों पर आबरी संगमरमर मिलता है पहले इससे प्याले, तश्तरी आदि बनाए जाते थे पर अब बनाने का काम कम हो गया है इसका मुख्य कारण यह है कि यह पत्थर बहुत कड़ा होता है और सामान तयार करने में बड़ी मेहनत पड़ती है तथा समय भी अधिक लगता है साथ ही कुशल कारीगरों की भी कमी है। अटक में बैरमखां की वाटिका के स्तम्भ इसी पत्थर के बने हैं।

चूना—कालचिट्ट श्रेणी के उत्तरी भाग का समस्त पत्थर लगभग चूने का है। इस भाग की चूने की खानों का ठीका सरकार की ओर से होता है। जमींदारों को भी चूना फूंकने की आज्ञा सरकार की ओर से ठीकेदारी पर मिल जाती है। पब्लिक वर्कस विभाग की ओर से चूने निकालने का कार्य होता है।

कला-कौशल

कला-कौशल के ध्यान से यह जिला बहुत पीछे है। जिले में कोई कारखाना नहीं है और न अधिक जनसंख्या के केन्द्र ही है। जो कुछ भी सामान तयार किया जाता है वह जिले के निवासी किसानों के लिये तयार किया जाता है। जिले में सुंघनी को छोड़ कर कोई भी ऐसा सामान नहीं तयार किया जाता है जो जिले से बाहर भेजा जाता हो।

हाज्रो में अरोरा तथा काशमीरी लोग सुंघनी तयार करने का व्यवसाय करते हैं। मरखाद और पिंडीगेब में भी कुछ मात्रा में सुंघनी तयार की जाती है। कोहाट, अमृतसर और कराची को यहां से सुंघनी भेजी जाती है।

जूते का काम

पिंडीगेब और फतेहजङ्ग में चमड़े से जूते तथा घोड़े की जीन बनाने का काम होता है और उत्तरी पश्चिमी सीमावर्ती सूबे को भेजा जाता है। यहां के चप्पल तथा सैंडिल जूते प्रसिद्ध हैं।

इनके अतिरिक्त गांवों में शीशम, फुलाही और खैर की लकड़ी के सामान चारपाई के पेरुआ, कुर्सी आदि तयार किये जाते हैं। मियांवाला (पिंडीगेब), हसन अब्दाल और मरखाद में लोहे के घड़े, कड़ाही बाल्टियां आदि तयार किये जाते हैं जो बाहर भेजे जाते हैं। यहां कड़ाही और तावे भी अच्छे बनते हैं।

गांवों में कम्बल तथा रेशमी और सूती कपड़े बनाने का भी काम खूब होता है। स्त्रियाँ फूलकारी (कपड़े पर) का काम भी खूब करती हैं। तेल पेरने का काम फतेह जङ्ग में होता है। अटक और मरखाद में सिंध नदी के तट पर नावों के बनाने का काम होता है।

शासन

अटक जिला रावलपिंडी कमिशनरी में है। यहां का प्रधान शासक डिप्टी कमिशनर है। डिप्टी कमिशनर का हेडक्वाटर कैम्पबेलपुर में है। जिला चार तहसीलों में बंटा है। अटक तहसील का हेडक्वाटर कैम्पबेलपुर में है। तहसील का प्रधान अफसर तहसीलदार है। तहसीलदार का सहायक नायब तहसीलदार है। नायब तहसीलदार के नीचे गिरदावर कानूनगो है और उनके नीचे पटवारी हैं। प्रत्येक गांव में मुखिया हैं जिन्हें गांव की माल-

गुज़ारी का ५ प्रतिशत मिलता है डिप्टी कमिश्नर डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट का भी काम करता है। एक असिस्टेंट कमिशनर है जो अटक के अतिरिक्त तीन दूसरी तहसीलों का मालिक है। इसके अतिरिक्त तीन अधिक असिस्टेंट कमिशनर हैं उनमें से एक डिस्ट्रिक्ट जज है जो खजाने का मालिक है और एक मालगुजारी का सहायक अफसर है। पुलीस सुपिरिन्टेन्डेन्ट के अधिकार में जिले की पुलीस है। जेलों का प्रधान निरीक्षक सिविल सरजन है। सिविल मुकदमों के फैसले के लिये जिले में दो मुनसिफ हैं।

कोट फतेह खां का छोटा राज्य कोर्ट आफ वार्डस के अंतर्गत है जिसका प्रबन्ध एक डिप्टी कमिशनर तथा एक तहसीलदार करते हैं।

न्याय

अटक जिले का न्याय सम्बन्धी प्रधान कार्य रावलपिंडी का डिवीजनल तथा सेशन जज करता है। इसके अतिरिक्त डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट, ४ प्रथम श्रेणी के मजिस्ट्रेट, ८ तहसीलदार तथा नायब तहसीलदार और आनरेरी मजिस्ट्रेट हैं जो फौजदारी का न्याय करते हैं। माल के मुक़दमों का फैसला एक अतिरिक्त असिस्टेन्ट कमिशनर द्वारा होता है जो माल के मामलों में प्रधान माना जाता है। चार तहसीलदार हैं जिन्हें माल के कामों में त्रितीय श्रेणी की न्याय सम्बन्धी शक्ति प्रदान की गई है। इनके अतिरिक्त कैम्पबेलपुर और पिंडीगेब में मुनसिफ हैं।

डिप्टी कमिशनर ही रजिस्ट्रार का काम करता है। हेडक्वाटर में एक सब रजिस्ट्रार रहता है। तहसीलों की रजिस्ट्री का काम तहसीलदार करते हैं।

कैम्पबेलपुर और अटक में सेना रहती है। जो आवश्यकतानुसार शासन सम्बन्धी कार्यों में सहायता प्रदान किया करती है।

शिक्षा

शिक्षा में यह जिला बहुत पीछे है। यहां की जनसंख्या के लगभग ५ प्रतिशत लोग पढ़े लिखे हैं। स्त्रियां तो नहीं के बराबर शिक्षित हैं। प्राचीन ढङ्ग की शिक्षा का अंत हो गया है। प्राइमरी तथा मिडिल स्कूल हैं अब अटक और कैम्पबेलपुर में कई एक हाई स्कूल खुल गये हैं। सभी स्कूल रावल पिंडी के स्कूल के इन्सपेक्टर के आधीन हैं और हाज्रो, फतेहजंग अखवाल, पिंडीगेब, ताला गांग, कैम्पवेलपुर अटक में हैं। डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के आधीन लगभग ५० प्राइमरी स्कूल लड़कों के लिये और लगभग १४ स्कूल लड़कियों के लिये हैं। इनके अतिरिक्त २० सहकारी 'जमींदारों के स्कूल तथा २ म्युनिसपल स्कूल हैं। स्कूलों में प्रायः उर्दू तथा गुरमुखी की पढ़ाई होती है।

औषधालय

एक सिविल स्पताल तथा ६ डिसपेन्सरियां हैं जो हाज्रो हसन अब्दाल, फतेह जंग, पिंडीगेब, तालागांग और लाना में स्थित हैं। हाज्रो और पिंडीगेब में असिस्टेन्ट सरजन और अन्य में हास्पिटल असिस्टेन्ट प्रधान हैं। टीका लगाने के लिये डिस्ट्रिक्ट बोर्ड की ओर से प्रबन्ध होता है जिसका प्रधान वैक्सिनेशन का सुपरिनटेन्डेंट है। गांवों में दवा-दारू का काम हकीम लोग करते हैं जो अपने घरों में देशी दवाएं रखते हैं और लोगों की सहायता समय पड़ने पर करते हैं। इनके अलावा वैद्य, सन्यासी; फकीर और मोलवी लोग भी औषधि दिया करते हैं। ग्राम वासियों का उन पर अगाध-विश्वास है।

प्रसिद्ध स्थान

अटक

अटक का किला सड़क के ऊपर बना है। क़िले के सामने ही सिंध नदी पर नावों का पुल है। अटक का बाजार नीचे चट्टान पर स्थित है। अटक के समीप सिंध नदी की चौड़ाई एक मील है। जिस चट्टान पर अटक का स्टेशन बना है वहां से नदी और उसके बालू के मैदान का सुन्दर दृश्य दिखाई पड़ता है। अटक क़िले से कुछ ऊपर की ओर काबुल नदी आकर सिंध नदी से मिलती है उसके पश्चात् दोनों नदियों का जल मिलकर तेजी के साथ बहता है और किले से २ मील नीचे, जलालिया तथा कमालिया चट्टानों पर आकर जब नदी का पानी टक्कर खाता है तो पानी में सुंदर विशाल भवरें बनती हैं। इसी के समीप नदी पर

एक विशाल लोहे का पुल बना हुआ है जिस पर हो कर नार्थवेस्टर्न रेलवे जाती है रेलवे लाइन के नीचे होकर ग्रैंड ट्रंक सड़क जाती है।

जब अकबर के भाई मिर्ज़ा हकीम ने पञ्जाब पर आक्रमण किया तो अकबर उसे दबाने के लिये काबुल गया था वहीं से लौट कर उसने अटक का क़िला १५८१ ई० में बनवाया था। अटक स्थान पर ही सिकंदर ने बोटों का पुल बना कर सिंध नदी पार किया था। अकबर ने क़िले का नाम अटक बनारस रक्खा था। यहां पर हिन्दुस्तान से लाकर सम्राट अकबर ने मल्लाहों को बसाया था जिस से वे घाट पर जाने आने वालों को आर-पार लगाया करें। इन मल्लाहों की बस्ती अलग है जो मल्लाही टोला के नाम से प्रसिद्ध है। यहां भारत से आये हुये मल्लाहों की औलादें अब भी हैं उन्हें छाछ में एक गांव गुज़ारे के लिये जो अकबर ने दिया था वह अब भी उनके पास है। १८१२ ई० में यहां का क़िला रंजीत सिंह के हाथ चला गया उसके पश्चात् १८४८ ई० में अंग्रेज़ों ने क़िले पर अधिकार कर लिया। जून १८८३ ई० में यहां का पुल प्रजा के लिये खोल दिया गया। इसकी रक्षा सैनिक लोग हर समय किया करते हैं। जब तक रेलवे का पुल नहीं बना था तब तक यहां नाव का पुल बनाया जाता था और मल्लाह लोग घाट खेया करते थे। यहां पर नदी का पार करना खतरनाक है क्योंकि काबुल नदी के मिलने से नदी में भवरें बहुत पैदा होती हैं कमालिया तथा जलालियां नामक चट्टानों से नदी का पानी और अधिक बिगड़ जाता है इससे नदीमार्ग और अधिक जटिल हो जाता है। कमालिया तथा जलालिया चट्टानों का नाम कमाल उद्दीन तथा जलाल उद्दीन नामक व्यक्तियों के नाम पर पड़ा है यह लोग सम्राट अकबर के समय में इन्हीं चट्टानों से नदी में फेंक दिये गये थे। यह रोशनाई मत के फैलाने वाले थे।

अटक के प्रधान व्यापारी पराचा लोग हैं। यह मुसलमान हैं और भारत का माल मध्य एशिया ले जाते हैं और वहां रूसी, तिब्बती, तातारी तथा चीनी माल से परिवर्तन किया करते हैं, अटक का किला तथा कंजीरी की दरगाह देखने योग्य हैं।

अटक का रेलवे पुल एक प्रसिद्ध पुल है। पुल की कोठियां तथा स्तम्भ पानी के भीतर वाली चट्टानों पर बनाए गये हैं। रेल की पटरियां नदी के धरातल से १३६ फुट ऊँचा हैं। रेलवे मार्ग के नीचे सड़क का मार्ग है जो १६ फुट चौड़ा तथा १८ फुट ऊँचा है इस लिये बड़ी से बड़ी मोटर तथा पशु पुल होकर जा सकता है। १८८० ई० में पुल के बनाने का कार्य आरम्भ हुआ था और जून १८८३ ई० में आने जाने के लिये खोला गया। यह पुल बड़ी चतुराई के साथ बनाया गया है क्योंकि नदी की धारा बहुत तेज है। लोह स्तम्भों के सामने पानी काटने के लिये पत्थर की कोठियां बनाई गई हैं जिससे भीषण से भीषण बाढ़ के समय में भी पुल बहने की सम्भावना अब तक नहीं हुई।

कैम्पबेलपुर

कैम्बेलपुर अटक जिले का हेडक्वाटर तथा कन्टोमेंट है। इसी के समीप कामिलपुर नामक सय्यद लोगों का गांव है। कन्टोमेंट तथा रेलवे के मध्य सिविल स्टेशन है। यहां के सिविल बाजार को सरकार ने बनवाया है और वहाँ पर लोगों को घर बनाने के लिये भूमि सरकार की ओर से नीलाम में मिलती है। कैम्पबेल पुर में सेना की छावनी है यहां हाथी तथा ऊँट की भी सेना रहती है। भारत आक्रमण होने वाले मार्ग पर स्थित होने के कारण सरकार की ओर इसकी रक्षा का विशेष प्रबन्ध रहता है। यहां किले की तथा मैदानी तोपों की सेना रहती है।

कन्टोमेंट के दक्षिण हारो नदी बहती है। हारो नदी में मछली का शिकार अच्छा होता है। समीप ही कालचिट्टा पहाड़ी पर शिकार गाह है।

हाज़्रो

यह एक छोटा सुन्दर नगर कैम्पबेलपुर के रेतीले मैदान तथा सिंध नदी के मध्य उपजाऊ छाछ के मैदान में स्थित है। यहाँ की जनसंख्या लगभग १२ हजार है। लहराते हुये हरे भरे खेती के मैदानों के मध्य यहां की स्वेत मसजिद तथा गुम्बद दूर से ही दिखाई पड़ते हैं। बीच बीच में सुन्दर ऊँचे ताड़ के वृक्ष हैं। यहीं १००८ ई० में

महमूद गजनवी तथा भारतीय नरेशों के मध्य घोर संग्राम हुआ था जिसमें २० हजार सैनिक मारे गये थे। अफ़गानों ने इसे अपना उपनिवेश बना लिया था और बार बार के आक्रमणों के होने तथा लूट पाट के कारण यह स्थान उन्नतशील नहीं हो सका। अब जब से आक्रमण बन्द हुये हैं तब से इसकी लगातार उन्नति हो रही है। उपजाऊ मैदान में स्थित होने के कारण यहाँ चारों ओर प्रत्येक भांति का अनाज विकने आता है तथा यूसुजई आदि स्वतंत्र रियासतों से अफ़गान व्यापारिक सामान यहां बिक्री के लिये लाते हैं। यहां पर प्रथम श्रेणी की सुंघनी तयार की जाती है। इंगलैंड से कपड़ा तथा नील यहां आता है और फिर स्वतंत्र अफ़ग़ान रियासतों को जाता है।

नगर के लगभग चारों ओर पक्की दीवार से घिरा हुआ है यहां के बाजार बड़े साफ सुथरे हैं। यहां पुलीस स्टेशन, स्कूल, स्पताल तथा कचेहरियां हैं। यहां पर पठानों तथा हिन्दुओं की आबादी आधोआध है। नगर की जनसंख्या लगभग ८ हज़ार है।

हसन अब्दाल—हसन अब्दाल में प्राचीन भग्नावशेष हैं। यहीं पर पञ्जा साहब सरोवर है जिसके सम्बन्ध में इतिहास के पाठ में वर्णन किया जा चुका है। नगर के लगभग एक मील की दूरी पर एक पहाड़ी के ऊपर पञ्जा साहब की समाधि है। समाधि मन्दिर के नीचे वर्गाकार स्वच्छ जल का सरोवर है जिसमें असंख्य मछलियां रहती हैं। सरोवर के चारों ओर मन्दिर हैं। पश्चिम की ओर एक चट्टान के नीचे से पानी निकला करता है जहां से पानी निकलता है वहीं पर हाथ का एक निशान बना है जिसे सिक्ख लोग नानक साहब के हाथ का निशान कहते हैं।

हसन अब्दाल की पहाड़ियां अपनी सुन्दरता के लिये मुग़ल समय से ही प्रसिद्ध हैं। पञ्जा साहब की समाधि के दक्षिण होरा नदी के दूसरे तट पर वाह नाम की बाटिका है। मुग़ल सम्राट अपने काश्मीर के मार्ग पर यहीं निवास किया करते थे। अब यहां भग्नावशेष हैं जो जंगलों से परिपूर्ण हैं। बाटिका के सामने होरा के दूसरे तट पर अकबर बादशाह के बीबी की समाधि है जिसके दोनों ओर दो सरोवर के सुन्दर वृक्ष हैं।

फतेहजंग—यह एक बड़ी बस्ती है। यहां की जनसंख्या ५ हजार से ऊपर है। १८५६ ई० में यह तहसील की राजधानी बनाया गया। रावलपिंडी से कोशाल गढ़ तथा कोहाट तथा रावलपिंडी से काला बाग जाने वाली सड़कों पर स्थित है।

इससे तीन मील की दूरी पर सदकाल स्थान है जहां पिट्रौल पाया जाता है। यहां नाज, साग तरकारी, तेल, चमड़े का सामान, साबुन लुंगी आदि का व्यापार होता है। यहां तहसील थाना और डिस्ट्रिक्ट बंगला हैं। रामजीमल मिश्र का भवन बड़ा ही सुन्दर बना हैं।

कोट—जेबा वंश की यह राजधानी है। यह भतेहजंग—कालाबाग सड़क पर स्थित है। यहां चेबा सरदार का निवास स्थान तथा साधु भाई थान सिंह की समाधि देखने योग्य हैं। इससे १ मील की दूरी पर पेहाग क़िले के भग्नावशेष हैं।

पिंडीगेब—पिंडीगेब नगर अपने नाम की तहसील की राजधानी है और सील नदी पर बसा है। इसकी नींव जोधरा मलिक ने डाली थी यह उनकी राजधानी माना जाता है। यह नगर जंगलों के मध्य स्थित है जिससे इसकी सुन्दरता बढ़ जाती है। पानी समीप होने से यहां सुन्दर बाटिकाएं हैं। केले के बाग़ अधिक हैं। सरकारी भवनों के अतिरिक्त यहां और कोई बड़े भवन नहीं हैं। यहां से एक मील की दूरी पर डांडो है।

नाज, तेल और लकड़ी का व्यापार होता है। देशी कपड़ा जूते तथा साबुन बनाए जाते, जो बाहर भेजे जाते हैं। यहां की जनसंख्या ५ हज़ार से कुछ अधिक है।

मखाद—अटक ज़िले के दक्षिण-पश्चिम कोण पर सिंध नदी के तट पर मखाद नगर बसा है। यहां की जनसंख्या ४ हज़ार से ऊपर है। प्राचीन काल में जब सिंध नदी द्वारा व्यापार अधिक होता था तो यह एक प्रसिद्ध स्थान था। पहाड़ी की ढाल पर बसे होने के कारण यह एक सुन्दर स्थान है।

पराछा लोग अब भी सिंध नदी द्वारा यहां से व्यापार किया करते हैं।

लावा—यह तालागांग तहसील में नमक की पहाड़ी तथा सकेसर चोटी से कुछ मील उत्तर की ओर स्थित है। जनसंख्या लगभग ८ हज़ार है। इस नगर के अधिकांश निवासी किसान हैं। नगर में आवां चौधरियों का घराना है जिनमें आपसी

हज़ारी बाग (लाहौर की बारादरी)

झगड़ा सदैव चलता रहता है। मध्यवर्ती भाग की वस्ती घनी है शेप १२५ वर्गमील में धोक बस्तियां फैली हुई हैं। यहां पुलीस थाना तथा स्पताल है।

तालांग—यह तहसील की राजधानी है और अटक जिले के दक्षिणी भाग में स्थित है। नगर की जनसंख्या लगभग ८ हज़ार है। यहां पर बाज़ार, स्पताल स्कूल, पुलीस स्टेशन, सरकूट हाउस आदि हैं नगर से दक्षिण की ओर एक सुन्दर सरोवर तथा वाटिका है। सरोवर बहुत बड़ा है जहां वर्षा का पानी एकत्रित होता है और नगर निवासियों तथा समीपवर्ती वस्तियों का काम उसी पानी से चलता है।

यह नगर आवां जाति वालों का बसाया हुआ है पहले यह उनकी राजधानी रहा, फिर सिक्खों का रहा और अब तहसील की राजधानो है। पठार पर स्थित होने से यहां की जलवायु अच्छी है। यह स्थानीय व्यापार का केन्द्र है।

झेलम

झेलम का जिला पूर्व से पश्चिम तक ११० मील लम्बा है। उत्तर से दक्षिण तक इसकी औसत चौड़ाई ३६ मील है। तल्ला गांव तहसील के आर-पार इसकी चौड़ाई केवल २८ मील है। लिल्ला और उल्ला तहसीलों में इसकी चौड़ाई प्रायः ४५ मील है। झेलम जिला रावलपिंडी कमिश्नरी में शामिल है। इस जिले का क्षेत्रफल ३१५९ वर्गमील है। झेलम जिला सिन्ध सागर द्वाब के उत्तरी सिरे पर एक पहाड़ी प्रदेश है। यह जिला ३२,२६ और ३३,१५ उत्तरी अक्षाशों और ७१,५१ और ७३,५० पूर्वी देशान्तरों के बीच में स्थित है। इसके उत्तर में रावलपिंडी दक्षिण में गुजरात और शाहपुर के जिले हैं। इसके पश्चिम में अटक जिला और पूर्व में काश्मीर-जम्मूराज्य है। यह जिला ४ तहसीलों में बंटा है। पूर्वी भाग में झेलम तहसील और पश्चिमी भाग में तल्ला गांव तहसील है मध्यवर्ती भाग के उत्तर में चकवल तहसील और दक्षिणी भाग में पिंडदादनखां तहसील है। इस जिले में केवल दो (झेलम और पिंडदादनखां) नगर ऐसे हैं जिनकी जनसंख्या १० हज़ार से कुछ अधिक है क्षेत्रफल की दृष्टि से झेलम जिले का पंजाब प्रान्त में पन्द्रहवां स्थान है पर जनसंख्या की दृष्टि से इसका स्थान २१ वां है।

झेलम शहर के चारों ओर समतल मैदान फैला हुआ है, यह मैदान एक तंग पेटी के रूप में दोनों ओर चला गया है जिले के शेष भागों में कटी फटी विषम भूमि है। अधिकतर भाग में नमक की पर्वत-श्रेणी है। यह पर्वत श्रेणी जिले में धुर दक्षिणी पश्चिमी सिरे पर प्रवेश करती है। यही साकेसर पर्वत के अन्तिम टीले तल्ला गांव तक उतर आये हैं। तल्ला गाँव की समस्त निचली सीमा पहाड़ियों से घिरी हुई है फिर भी पहाड़ियों का अधिकतर मार्ग शाहपुर जिले की ओर है पिंड-दादनखाँ तहसील की सीमा के पास पहुँचने पर पहाड़ियाँ एकदम झेलम जिले में आ जाती हैं। यहाँ पहाड़ियों की दो पंक्तियां एक दूसरे से ५ मील की दूरी पर पश्चिम से पूर्व की ओर समानान्तर चली आई हैं। प्रायः प्रति १० मील की दूरी पर पहाड़ियाँ मुड़कर एक दूसरे के पास आ जाती हैं। फिर वे अलग हो जाती हैं। १० मील के बाद फिर वे पास आकर मिल जाती हैं। पिंडदादनखाँ तहसील में पहाड़ियाँ प्रायः २००० फुट ऊँची हैं। उनके बीच में समतल उपजाऊ पठार घिरे हुये हैं। इनमें अच्छी खेती होती है और घनी आबादी है। पहाड़ियों का दक्षिणी ढाल वीरान और सपाट है। यहाँ पहाड़ियाँ कएदम झेलम नदी की ओर उतर आई हैं। झेलम की घाटी यहाँ समुद्र-तल से ७०० फुट ऊँची है। उत्तर की ओर यह पहाड़ियाँ चकवल पठार की ओर क्रमशः ढाल हो गई हैं। चकवल का पठार समुद्र-तल से प्रायः १५,०० फुट ऊँचा है। पहाड़ियों का पूर्वी सिरा साधारण है। पश्चिम की ओर चूने के पत्थर के ऊँचे टीले हैं। यहीं कन्दवाल झेलम की सहायक नीली वाहन नदी बहती है। उत्तर की ओर मैदान ऊँचा है पहाड़ियाँ नीची मालूम होती हैं। बीच बीच में चेल कारंगल आदि कुछ ऊँची चोटियाँ हैं। इधर पहाड़ियों के ढाल बहकर सनाथ और फुलाही झाड़ियों से ढके हैं। जंगली जैतून भी बहुत है। वर्षा की कमी से बड़े पेड़ों का अभाव है। वर्षा जल ऊँचे ढालों की मिट्टी बहाता हुआ निचले भागों में एकत्रित हो जाता है। इन्हीं निचले भागों में अच्छी खेती होती है।

साल्टरेंज (नमक की पहाड़ियां) के पूर्वी सिरे पर बाघ घाटी है। लुँडी पट्टी के मैदान के ऊपर दिल जमा पहाड़ियाँ खड़ी हुई हैं। घोरी गला दर्रे के पास नीली पहाड़ियाँ आ मिलती हैं। इस दर्रे के आगे झेलम तहसील के आर-पार २४ मील तक यह पहाड़ियाँ सुहावा गाँव तक फैली हुई है। यहाँ से ७ मील आगे करूटा में वे समाप्त हो जाती हैं। बाद की पहाड़ियाँ बुन्हा नाले की ओर एकदम नीचे उतर आती है। इस नाले के दूसरे किनारे पर टिल्ला श्रेणी आरम्भ होती है। बुन्हा से आगे टिल्ला पहाड़ियां पूर्व की ओर एक दूसरे के समानान्तर चली गई हैं। जोगी टिल्ला सबसे अधिक ऊँचा है। इसके आगे पहाड़ियाँ नीची हो गई हैं।

ग्रांडट्रंक रोड से ३६ मील आगे वे लुप्त हो गई हैं। दीना पड़ाव के आगे बटाली ढेर (पहाड़ी) आरम्भ होती है और जिले की पूर्वी सीमा के पास तक चली गई है। यहाँ इसे लेहरी पहाड़ी कहते हैं साल्ट रेंज की तरह इन पहाड़ियों का भी एक ढाल सपाट और दूसरा क्रमशः है। यह पहाड़ियां एक ओर और कभी कभी दोनों ओर नालों से घिरी हुई है।

पहाड़ियों की दुहरी पंक्ति ने जिले को तीन प्राकृतिक भागों में बांट दिया है। एक भाग पहाड़ियों के नीचे नदी के समीप है। दूसरा भाग पहाड़ियों के भीतर का है। तीसरा भाग पहाड़ियों के पीछे है।

नदी तट का प्रदेश कुछ चौड़ा कछारी मैदान है। यह झेलम नदी और पहाड़ियों के बीच में स्थित है। यह कछारी मैदान झेलम तहसील के पंडोरी गांव से पिंडदादन खां के कण्डवाल गांव तक फैला हुआ है। नदी तट के किनारे किनारे इस मैदान की लम्बाई १०० मील है। इसकी औसत चौड़ाई ८ मील है। इसके बीच वाले भाग में मटियार है। नदी तट के पास यह रेतीला है। पहाड़ के समीप यह पथरीला है। पहाड़ी नालों ने इसे गहरा काट दिया है। पर यह नाले अपने साथ उपजाऊ मिट्टी बहा लाते हैं। जिले के पूर्वी कोने के पास झेलम शहर के पड़ोस में यह मैदान कुछ ऊंचा और उपजाऊ है। नदी के पास वाली भूमि अधिक उपजाऊ है। झेलम शहर के पश्चिम में नदी तट कुछ ऊंचा और पथरीला हो गया है। पर कहान नदी के आगे यह फिर नीचा हो गया है। यहां से जलालपुर पहाड़ियों तक नीचा उपजाऊ भाग है। टिल्ला पहाड़ियों की तलहटी में यह मैदान ऊंचा हो गया है। तलहटी के पास जमीन पथरीली और निकम्मी है। पर बीच वाले भाग में जमीन अच्छी है। यहां पहले ढाक का वन था। पर हाल में पहाड़ी नालों ने इसे बिगाड़ दिया है। जलालपुर के आगे साल्टरेंज और झेलम नदी के बीच में मैदान अत्यन्त उपजाऊ है। यहां बसे हुये गांव बड़े धनी हैं। पिंडदादन खां के पूर्व में तीन प्रकार के गांव हैं। कुछ गांव पहाड़ियों के ठीक नीचे हैं। बीच वाले गांव बहुत अच्छे हैं। यहीं कुएं हैं। नदी के एक दम पास वाले खेतों में नदी की नमी से सिंचाई का काम चल जाता है और कुओं की आवश्यकता नहीं पड़ती है।

पहाड़ों के पड़ोस में कुएं नहीं खोदे जा सकते हैं। यहां पहाड़ी ढालों का एकत्रित पानी सिंचाई के काम आता है। इस पानी को मिट्टी के ऊंचे किनारों से रोक लिया जाता है। जब एक खेत सिंच जाता है तब दूसरे में पानी छोड़ा जाता है। इन पहाड़ी गांवों से बाहर पानी नहीं जाने पाता है। पहले पानी कुछ नमकीन होता है। पर ऊपरी मिट्टी बह जाने के बाद शुद्ध वर्षा जल आता है। पर जब पर्याप्त वर्षा नहीं होती है तब नमकीन तह जम जाती है और फसल नष्ट हो जाती है। जो नमक इन गांवों से बचकर नीचे बह जाता है, वह मध्यवर्ती प्रदेश में इकट्ठा हो जाता है। यहां नमक एकत्रित हो जाने से प्रतिवर्ष एक या दो कुएं व्यर्थ हो जाते हैं। इसलिये पिंडदादन खां के पूर्व में स्थिति १५ गांवों को प्रतिवर्ष एक या दो नये कुएं खोदने पड़ते हैं। पहाड़ की तलहटी में लाल कड़ी मिट्टी है। मध्यवर्ती भाग में कुछ काली उपजाऊ भूमि है। यहां नाले भी कम हैं। इसलिये यहां घनी आबादी है। नदी के एकदम पास नमी इतनी अधिक है कि कुओं की सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है।

पिंडदादन खां के पश्चिम में दो प्रकार के गांव हैं। यहां मध्यवर्ती या कुएं वाले गांवों को नमक ने नष्ट कर दिया है। पिंडदादन खां से जिले के सिरे तक जमीन की एक चौड़ी पेटी वीरान हो गई और खेती के योग्य नहीं रही। इस वीरान पेटी के उत्तर में उपजाऊ लाल मिट्टी है। यहां पहाड़ियों के वर्षा-जल से सिंचाई होती है। वीरान पेटी के दक्षिण में भी नदी तट के पास उपजाऊ भूमि है। वर्षा होने पर वीरान पेटी से ऐसी रपटनी हो जाती है कि इस पर चलना असम्भव हो जाता है। सूखने पर ही फिर इस पर चलना हो पाता है।

जिले का ऊंचा पठार दोहरी पहाड़ियों के बीच में स्थित है। साल्टरेंज का पठार पिंडदादन खां तहसील में स्थित है। टिल्ला और नीली पहाड़ियों के बीच का पठार झेलम तहसील में स्थित है। साल्टरेंज का पठार समुद्र-तल से दो तीन हजार

फुट ऊंचा है। यह बड़ा उपजाऊ है। यह प्रायः समतल है और सब कहीं इस प्रकार पहाड़ियों से घिरा है कि इसकी अच्छी मिट्टी के बह जाने का कोई डर नहीं है। पहाड़ियों से जो वर्षा जल यहां बह आता है उसके साथ उपजाऊ मिट्टी मिली रहती है। इस प्रदेश में बुनहार, कहून और झांगर नदियां बहती हैं। इन तीनों के पड़ोस की भूमि बड़ी उपजाऊ है। इसी से यहां घनी आबादी है। झांगर के समीप अधिक वर्षा होती है। यहां सबसे अधिक आबादी है।

झेलम तहसील का पठार टिल्ला और नीली पहाड़ियों के बीच में स्थित है। इसे नालों ने ऐसा काट दिया है कि यह खंडहर कहलाता है। यह पठार सब कहीं कटा फटा है। नदी तट से तो यह ऊंचा है पर साल्टरेंज के पठार से बहुत नीचा है। समुद्र-तल से यह प्रायः १२०० फुट ऊंचा है। बुन्हा नाले के दोनों ओर जमीन ऊंची और रेतीली (भूसली) है। अधिक उत्तर और पूर्व में बड़ा गोवा के पास चिकनी मिट्टी मिली हुई है। यह ऊपरी भागों से अधिक जल बह आता है। भेठ के आस पास टिल्ला के ठीक नीचे ऐसी पथरीली भूमि है कि यहां खेती नहीं हो सकती है। खड्ड अधिक गहरे हैं। उत्तर की ओर कहान नदी के किनारे रोहतास के नीचे भूमि नीची और उपजाऊ है। अधिक उत्तर की ओर लेहरी और लंगरपुर पहाड़ियों के बीच में घोलर नाम की कड़ी चिकनी मिट्टी दिखाई देती है। वर्षा होने पर यह अत्यन्त उपजाऊ हो जाती है। पर सूखा पड़ने पर बेकार पड़ी रहती है। यहां से बहकर जो पानी नीचे की ओर जाता है वह इस भाग और नदी के बीच में बसे हुये गांवों की मिट्टी को उपजाऊ बना देता है। दुलियाल गांव तक का प्रदेश छम्ब कहलाता है। यह तहसील भर में सबसे अधिक उपजाऊ है। खड्डर में नालों के पड़ोस में ही खेती हो सकती है। जिन भागों में सिंचाई हो जाती है वहां अच्छी फसल होती है। जो खेत सबसे नीचे होते हैं और ऊंची मेड़ों से घिरे होते हैं वे सर्वोत्तम होते हैं।

साल्टरेंज (नमक की पहाड़ी) के उत्तरी टीलों और नीली पहाड़ियों के आगे विषम और ढालू भूमि को पार करने पर चकवल और तल्ला गांव तहसीलों का पठार आता है। यह ऊंचा मैदान है। सोहन नदी के पास इस में कुछ पहाड़ी टीले हैं। चकवल तहसील के पूर्व में समस्त पठार रावलपिंडी जिले का अंग है। झेलम जिले का तंग और विषम पठार पब्बी इलाका कहलाता है। इस बड़े भाग के कई स्थानों में छोटे छोटे नाले हैं। साल्टरेंज से निकल कर नीचे गिरने वाली पहाड़ी धाराओं ने इसे गहरा काट दिया है। दो नालों के बीच की भूमि महराब के सामन दिखाई देती है। अधिक गहरे नालों के किनारे सपाट हैं। अपने निचले भागों में जहां पहाड़ी नाले सोहन या सवान नदी में मिलते हैं वहां इनके पड़ोस की भूमि उपजाऊ हो गई है। यहीं कुओं से सिंचाई हो जाती है। पठार के ऊंचे भागों में कुओं का अभाव है। बहुत से गांव वालों ने वर्षा जल को रोकने के लिये बांध बनाकर तालाब बना लिये हैं। यहीं ढोर पानी पीते हैं। सूखा पड़ने पर कुएं और तालाब सूख जाते हैं। पानी का बड़ा कष्ट हो जाता है। गांव वालों को कई मील की दूरी से पानी लाना पड़ता है। चकवल तहसील के पश्चिमी भाग में भारी चिकनी मिट्टी है। वर्षा होने पर यहां अच्छी फसलें होती हैं।

जिले का साधारण दृश्य बड़ा विषम है। नदी से दूर कहीं लगातार दो मील ऐसे न मिलेंगे जहां भूमि समतल हो। पर वन और पानी की कमी से दृश्य मनोहर नहीं है। साल्टरेंज की चेल, करंगल और टिल्ला चोटियां कुछ सुन्दर हैं। इन चोटियों से समीपवर्ती भागों का दृश्य बड़ा सुन्दर दिखाई देता है। पहाड़ी के दक्षिण में गहरी नदकन्दरायें हैं। चोआ रेलवे स्टेशन के पास साल्टरेंज और गन्धाला घाटी का दृश्य बड़ा सुन्दर है। कल्लार कहार झील का दृश्य भी सुहावना है। जिले के पूर्वी भाग में शीतकाल में पीर पंजाल की हिमाच्छादित चोटियां दिखाई देती हैं। नदी तट के पास कुछ वन है। घास उग आने पर लहरदार कुछ ऊंचा नीचा मैदान और पठार भी बड़ा सुहावना लगता है।

नदियां

जिले के पूर्वी भाग का वर्षा जल कहान और बुन्हा नदियां बहा कर झेलम नदी में गिरा देती हैं। जिले के पश्चिमी भाग का पानी सौज, गंभीर, अंकार और दूसरी छोटी नदियां सवान या सोहन नदी में गिराती हैं। सोहन नदी इस पानी को सिन्ध नदी में डाल देती है। यह सब पहाड़ी नदियां हैं। प्रबल वर्षा होने पर वे उँमड़ पड़ती हैं। वैसे वे प्रायः सूखी पड़ी रहती हैं। सबसे बड़ी नदी झेलम है। यह काश्मीर राज्य से और दक्षिण-पूर्व की ओर १२० मील तक जिले की सीमा बनाती हैं। प्राचीन समय में यह विदस्ता या वितस्ता कहलाती थी। इसके किनारे झाड़ियों से ढकी हुई निचली पहाड़ियों से ढके हैं। पहाड़ियों से बाहर आने पर झेलम दक्षिण-पश्चिम की ओर बहती है। पहाड़ियों से २४० मील की दूरी पर यह चनाव नदी में मिल जाती है। मैदान में झेलम के किनारे खुले हुये और नीचे हैं। फिर भी जब झेलम शहर ३ मील रह जाता है तब इसका दाहिना किनारा इतना नीचा हो पाता है कि इस में बाढ़ का पानी ऊपर आ पाता है। पहाड़ी भाग में झेलम की तली पथरीली और भयानक है। पर झेलम शहर से ८ मील ऊपर यह तली रेतीली हो जाती है। फिर इस जिले और जिले के बाहर तली रेतीली ही बनी रहती है। केवल कहीं कहीं बालू के नीचे कड़ी चट्टानें छिपी रहती हैं। नदी कुछ तेज बहती है पर धारा शान्त रहती है। केवल चट्टान से टकराने पर इसका वेग बढ़ जाता है और फिर नदी में नाव चलाने में बाधा पड़ती है। फिर भी झेलम नदी में झेलम शहर से १० मील ऊपर से देशी नावें चलती रहती हैं। शीतकाल में झेलम नदी की गहराई ९ फुट रहती है। ग्रीष्म काल में बरफ के पिघलने पर इसकी गहराई १२ फुट हो जाती है। इसकी चौड़ाई भी २००० फुट से प्रायः १ मील हो जाती है। स्थान स्थान पर तली में निचले द्वीप (बेल) प्रगट हो जाते हैं। पहले यह वीरान होते हैं। फिर इनमें झाऊ उगने लगती है। बाढ़ में कई बार अच्छी मिट्टी (कांप) की तह बिछ जाने पर इनमें खेती होने लगती है। नदी के पानी में कुछ मिट्टी प्रायः साल भर बनी रहती है। इसका पानी शीतकाल में तो ठंडा होता ही है कुछ कुछ ठंडा यह ग्रीष्म में भी बना रहता है।

जिले में छोटी छोटी कई धारायें हैं। इन्हें कस या कस्सी कहते हैं। इनमें वर्ष भर में कुछ ही दिन पानी रहता है। अधिकतर समय में वे सूखी पड़ी रहती हैं। केवल कहीं कहीं इनमें कुंड (त्रिमकन या धन बन जाते हैं। पर सूखी रेतीली तली में कुछ ही गहरा खोदने पर पानी निकल आता है। गांव वाले इसी पानी को पीते हैं।

सिन्ध और झेलम का जल विभाजक

समस्त पूर्वी साल्टरेंज, और झेलम तहसील की पहाड़ियों का वर्षा जल झेलम नदी में बह आता है। इन पहाड़ियों का लम्बा ढाल उत्तर की ओर नीचा हो गया है। इधर जो वर्षा होती है उसका पानी नालों में पहुँच कर नीचे मैदान में इकट्ठा होता है। पहाड़ की दूसरी ओर यह पानी एकत्रित होते होते इतना शक्तिशाली हो जाता है कि वह पहाड़ को काट कर इस पर आ जाता है। सरूली, बुन्हा और कुटियान ऐसे ही नाले हैं जो एक ढाल का पानी दूसरी ओर ले जाते हैं।

झेलम नदी में गिरने वाले दो प्रधान नाले कहान और बुन्हा हैं। झेलम तहसील के मध्यवर्ती और पूर्वी भाग का पानी कहान नाले में बह आता है। यह नाला नीली पहाड़ियों से आने वाली कई धाराओं के मिलने से बना है। यह धारायें डुमेली के पास एक दूसरे से मिलती हैं। ठीक पूर्व की ओर बहने के बाद रोहतास को दीवारों के नीचे टिल्ला श्रेणी चीरता है और अन्त में सदर छावनी के पास यह झेलम नदी में मिल जाता है। बुन्हा नाला सुरला के सरकारी रख के पास है। चकवल तहसील में पहाड़ों के उत्तरी ढाल से बाहर निकलता है। यहां से यह पूर्व की ओर मुड़ता है। ढहमन के पास इसमें कुलियां, कुटियां और सराली नाले मिलते हैं। इस प्रकार इसमें चकवल तहसील के पूर्वी भाग और साल्टरेंज के उत्तरी भाग का समस्त वर्षा जल आ मिलता है। संयुक्त धारा गोरी गला दर्रे में होकर खड्डर प्रदेश के पश्चिमी भाग को पार करती है। टिल्ला पहाड़ियों के दक्षिणी

भाग में होती हुई यह धारा फैला कर प्रायः २ मील चौड़ी रेतीली तली में बहती है दारापुर और भीमवार के बीच में यह झेलम नदी में मिल जाती है।

झेलम नदी के गिरने वाले दूसरे छोटे नाले साल्टरेंज के दक्षिणी ढाल से सीधे आते हैं।

जिले के जिस भाग का वर्षा जल बहकर सिन्ध नदी में मिलता है वह प्राय साल्टरेंज के उत्तरी ढाल से आता है। यह पानी पहले पहाड़ी नालों के रूप में सवान या सोहन नदी में गिरता है। फिर यह नदी सिन्ध में मिल जाती है। सवान नदी रावलपिंडी जिले से आती है। और ८० मील तक दोनों जिलों के बीच सीमा बनाती है। सवान नदी, विचित्र है। किसी दिन सूखी पड़ी रहती है। किसी दिन इसमें इतना पानी हो जाता है कि मशक के सहारे इसे पार करना पड़ता है। कराही, भागनेह और सौज नाले दुल्ला के पास इसमें मिल जाते हैं। एक नाला पचनद या पचनद के पास इसमें मिलता है। पचनद के पश्चिम में कई कास या पहाड़ी नाले हैं। इनमें गंभीर प्रधान नाला है। धाव कल्लार कहार के पास निकलता है और मुड़कर धाबी गांव के पास गभीर में मिलता है। इसीकी सूखी तली २ मील चौड़ी है। केवल कुछ भागों में यह तंग और गहरी है। इसके पड़ोस की भूमि बड़ी उपजाऊ है। तल्ला गांव में गभीर नाम के दो नाले हैं। एक नाला उत्तर पूर्व की ओर मुड़ता है और इस तहसील को चकवल और पिंडदादन खां से अलग करता है। दूसरा नाला पश्चिम की ओर मुड़ता है और पुराने बन्नू जिले की सीमा बनाता है। दोनों नाले सवान नदी में गिर जाते हैं। डूंगर, कोट सारंग; अंकार और लेटी दूसरे नाले हैं। लेटी नाला सबसे अधिक गहरा है। इसके पड़ोस में खेती के योग्य जमीन नहीं है। इसके किनारे ऊंचे और पथरीले हैं। आगे चलकर यह चौड़ा हो गया है। और इसके किनारे कई गांव बस गये हैं। डूंगर के किनारे भी सपाट हैं। केवल कहीं कहीं इसकी तली में कुएं हैं।

इन नालों में बाढ़ आने पर ही इनके समीप के खेतों में सिंचाई होती है। जो नाले साल्टरेंज (नमक की पहाड़ी) के सोतों से निकलते हैं उनसे उस समय सिंचाई होती है जब उनका पानी मीठा रहता है। चोआ सैदानशाह की घाटी ऐसे ही एक नाले से सींची जाती है। कल्लार कहार इस जिले की एक मात्र झील है।

जलवायु

पिंडदादन खां के पश्चिम में थाल का सूखा मैदानी भाग भारतवर्ष के अत्यन्त गरम भागों में गिना जाता है। मई और जून में यहां ११५° अंश फारेनहाइट तापक्रम हो जाता है। यही इस जिले का सबसे अधिक गरम भाग है। नीली पहाड़ी के दक्षिणी ढाल पर स्थित दुमेली भी बहुत गरम है। गरम भागों में शीतकाल भी छोटा होता है। यहां आधे नवम्बर और आधे फर्वरी की गरमी भी अच्छी नहीं लगती है। पहाड़ी भाग ठंडा रहता है। यहां शीतकाल में किसी किसी वर्ष बरफ भी गिर जाती है। पर बरफ अधिक समय तक पड़ी नहीं रहती है। १८९२ ई० में यहां ऐसी बरफ गिरी कि उसने न केवल साल्टरेंज वरन् इसके उत्तर के समस्त पठार को ढक लिया। जिले के शेष भाग में शीतकाल आधे अप्रैल तक समाप्त हो जाता है। मई और जून सबसे अधिक गरम महीने होते हैं। जून के अन्तिम सप्ताह अथवा जुलाई के प्रथम सप्ताह में मानसूनी वर्षा होते ही गरमी कुछ कम हो जाती है। वर्षा ऋतु के बीच बीच में निर्मल आकाश की कड़ी धूप असह्य हो जाती है। सितम्बर के आरम्भ में वर्षा समाप्त हो जाती है और शीतकाल आरम्भ हो जाता है। शीतकाल में आकाश निर्मल रहता है। दिन मे काफी अच्छी धूप होती है। पर रात में कड़ा जाड़ा पड़ता है। दो महीने पाला बहुत पड़ता है। दो चार दिन कुछ पानी बरस जाता है। मार्च के अन्त में तूफान आते हैं और कड़ी धूप पड़ने लगती है।

झेलम शहर में २३ इंच, तल्ला गांव में १८ इंच पिंडदादन खां में १६ इंच और चकवल में १७ इंच वर्षा होती है। पिंडदादन खां के पश्चिमी थाल (मैदान) में सब से कम (केवल १२ इंच) पानी बरसता है। कभी कभी इस जिले में भूकम्प और

बाढ़ से हानि होती है। १८९३ ई० की बाढ़ में झेलम शहर तो बाल बाल बच गया पर पिंडदादन खां को बड़ा धक्का पहुँचा। नदी तट के पास वाले सैलाब गांवों की फसलें डूब गईं और जानवर मर गये।

वनस्पति

विषम धरातल होने के कारण जिले के भिन्न भिन्न भागों में कई प्रकार की वनस्पति है। जलवायु खुश्क होने से बड़े बड़े पेड़ नदी तट के पास ही मिलते हैं। झेलम शहर के पड़ोस और नदी के मध्य में सरकारी बेला में शीशम के पेड़ बहुत हैं। कुछ शीशम दूसरे भागों में भी पाये जाते हैं। पहाड़ियों के पीछे वाले भाग में शीशम बहुत कम मिलता है। केवल चकवल के नालों में कहीं कहीं शीशम मिलता है।

कछारी मैदान में कीकर (बबूल) सब कहीं पाया जाता है। पहाड़ी भागों के पाले में बबूल के नये पौधे ठंड से मर जाते हैं। नदी तट के पास बेर बहुत होते हैं। इसके फल खाने के काम आते हैं। बेरी या झर बेरी सब कहीं जंगली उगती है। इस की सूखी पत्तियां दूध देने वाली गायों को खिलाई जाती हैं। पठार और पहाड़ियों पर फुलाही वृक्ष बहुत हैं। इसकी काली मजबूत और भारी लकड़ी कोल्हू बनाने के काम आती है। पहाड़ी भागों में ही काऊ या जंगली जैतून होता है। इसका फल तो नहीं खाया जाता है पर भेड़ बकरियां इसके पत्ते बहुत खाते हैं। पानी के समीप बरगद और पीपल के वृक्ष बहुत होते हैं। जिन पहाड़ी भागों में सिंचाई की सुविधा है वहां तूत या शहतूत बहुत होता है। मैदानी भागों में करील, झाऊ और आक बहुत है।

बागों में आड़ू, संतरा, खट्टा, मीठा नीबू, अनार, अमरूद, खुमानी, अखरोट और सेब होते हैं। इस ज़िले में कई प्रकार की घास होती है।

बनबिलाव और गीदड़ सब कहीं मिलता है। पहाड़ी नालों में हिरण पाये जाते हैं। जंगली सुअर केवल साल्टरेंज में मिलते हैं। कुछ खोहों में भेड़िया पाया जाता है। बन्दरों का अभाव है। तीतर बतख आदि चिड़ियां बहुत हैं। नदी में मछली मिलती हैं। सांप पहाड़ और मैदान दोनों भागों में पाया जाता है। कभी कभी यहां टिड्डी दल आता है। और किसान की फसल चट कर जाता है।

इस जिले में पानी की कमी है। जो गांव नदी के पास हैं उनमें कुएं मिलते हैं। यदि कहीं कुआं नहीं तो आसानी से खोदा जा सकता है। पिंडदादन खां तहसील का जालप इलाका कुओं से भरा पड़ा है। पर पहाड़ी भाग में और पहाड़ियों के पीछे कुओं का अभाव है। पहाड़ी भागों में जहां कहीं कास (नाले) के मार्ग में कुएं बनाये भी गये हैं वहां उनके बनाने में बड़ा खर्च हुआ है। पहाड़ी भाग में चश्मे या तालाब से ही पानी मिलता है। वह भी अधिक गरमी में सूख जाता है।

भूगर्भ

इस जिले का भूगर्भ वास्तव में साल्टरेंज का भूगर्भ है। जिले का अधिक तर भाग सिवालिक श्रेणी के बलुआ पत्थर और कंकड़ पत्थर पर स्थित है। दक्षिण की ओर साल्टरेंज के दक्षिणी भाग में जलज चट्टानों की तहें हैं। सबसे निचली तह नमकीन मिट्टी और नमक की है। यहीं से नमक निकाला जाता है। यह भाग कितना पुराना है इसका ठीक ठीक पता नहीं चल सका है। साल्टरेंज के पूर्वी भाग में चूने के पत्थर का अभाव है। दंदोत और बघान वाला के पास कोयला मिलता है। खेउड़ा के पास नमक की प्रसिद्ध मेयो खान है। जिले के बहुत बड़े भाग में कल्लार शोर (नमकीन शोरा) मिलता है। पिंडदादन खां तहसील के कुछ भागों में यह इतना अधिक है कि वहां खेती नहीं हो सकती है। एक भाग में ३६ मील लम्बे और औसत से १ मील चौड़े प्रदेश को इसी शोरे ने निकम्मा बना दिया है। जब प्रबल वर्षा होती है तब यह शोरा घट जाता है। सूखा पड़ने पर बहुत बढ़ जाता है।

कृषि

इस जिले की ४१ प्रतिशत भूमि में खेती होती है। ७ प्रतिशत खेती के योग्य भूमि उजाड़ पड़ी है। १२ प्रतिशत भूमि में सरकारी वन हैं। ४० प्रतिशत भूमि ऊसर है जिस भूमि में खेती होती है उसे सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। कुओं से सींची जाने वाली भूमि चाही कहलाती है। जिसमें नहर से सिंचाई होती है उसे नहरी कहते हैं। सोतों के पानी से सींची जाने वाली भूमि आबी कहलाती है। जो भूमि बाढ़ में डूब जाती है उसे सैलाबी कहते हैं। बिना सींची भूमि में केवल खाद के बल पर खेती होती है उसे हायल कहते हैं। जिस भूमि में ऊपरी ढालों का वर्षा जल सिंचाई के काम आ जाता है उसे बारानी अव्वल कहते हैं। साधारण बिना सिंची समतल भूमि मैरा कहलाती है। ढालू पथरीली भूमि राकड़ कहलाती है। राकड़ भूमि निकृष्ट होती है। यहां जो पानी बरसता है वह भी यहां नहीं ठहरता है। वह नीचे बह जाता है। समस्त जिले में औसत से ३ फी जमीन चाही, नहरी या आबी है। २ फीसदी जमीन सैलाबी है। १७ फीसदी जमीन हायल या बारानी अव्वल है। ७७ फी सदी मैरा या एकड़ है। पर्याप्त वर्षा न होने अथवा सिंचाई की कमी से साधारण वर्षों में एक चौथाई खरीफ और रबी की फसल नष्ट हो जाती है। रबी की फसल के समय तापक्रम नीचा रहता है। सरदी की ऋतु में कुछ वर्षा भी हो जाती है। पर अकाल पड़ने पर रबी और खरीफ दोनों ही फसलें नष्ट हो जाती हैं। नदी तट के खेत कभी कभी बाढ़ और अति वृष्टि से ऐसे डूब जाते हैं कि उनकी फसल ही नष्ट हो जाती है। चकवाल तहसील के वढ़ियाल गांवों में जुताई ठीक नहीं होती है। इसलिये लगातार दो तीन वर्ष खेती करने के बाद भूमि जंगली पौधों से भर जाती है। फिर उसमें खेती नहीं हो सकती ऐसी भूमि बूढ़ी कहलाती है और छोड़ दी जाती है। भूमि अधिक होने के कारण बूढ़ी भूमि का आधा भाग तीन वर्ष तक चौमासा की भांति छोड़ दिया जाता है और शेष आधे भाग में खेती की जाती है। तीन वर्ष के पश्चात् फिर कृषि वाली भूमि तीन वर्ष के लिये छोड़ दी जाती है और पहले छोड़ी हुई भूमि में खेती की जाती है इसी क्रम से कृषि का काम चालू रहता है।

कपास मार्च के महीने में बोई जाती है और अक्तूबर से दिसम्बर मास तक में उसकी चुनाई होती है जिससे लगभग साल भर भूमि फंसी रह जाती है। इसी कारण किसान कपास की खेती अच्छी भूमि में न कर के बरानी भूमि में करते हैं। कपास चुन लेने के पश्चात् उनके पौधे नीचे भूमि के समीप से काट दिये जाते हैं। जिस वे बसंत ऋतु में फिर पनप आते हैं और दूसरे वर्ष उनमें अधिक अच्छी फसल होती है कुछ स्थानों पर कपास के पौधे दूसरी फसल के बाद भी काट दिये जाते हैं और तीसरी फसल उनसे तयार की जाती है पर तीसरी फसल बहुत कमजोर होती है।

तल्ला गाँव तहसील की बरानी भूमि में पांस नहीं डाली जाती है। किसानों का कहना है कि पांस डालने से पौधे जल जाते हैं। पिंड दादन खां, झेलम और चकवाल तहसीलों में बरानी भूमि में पांस डाली जाती है और बरानी अव्वल भूमि में सालमें दो फसलें तयार की जाती हैं।

झेलम जिले की। भूमि समतल कम है अधिक ढालू भूमि होने के कारण किसानों को खेत की मिट्टी तथा पांस बह जाने के भय से डांड़ या मेंड़ चारों ओर बनाना पड़ता है। यदि चारों ओर बांध न बनाया जाय तो न केवल पानी ही बह जाता है वरन् वह अपने साथ साथ खेत का अच्छी मिट्टी तथा पांस भी बहा ले जाता है और कुछ ही साल में खेत नाला बन जाता है।

बड़े किसान या जमींदार लोग बहाव वाले गांवों में बड़े बांध बना देते हैं और वहां दूर दूर से पानी आता है पानी निकालने के लिये कुछ छोटे मार्ग इधर उधर बना दिये जाते हैं जिससे पानी तो निकलता रहता है परन्तु अपने साथ लाई हुई मिट्टी को वह छोड़ता जाता है। जब वर्षा समाप्त हो जाती है तो बांध काट कर उसका पानी निकाल दिया जाता है और फिर भूमि सूखने पर उसकी जोताई की जाती है। ऐसी भूमि को लस कहते हैं। यह बड़ी उपजाऊ होती है। लस भूमि को बोने

योग्य बनाने के लिये कठिन परिश्रम करना पड़ता है और अधिक मजदूर तथा बैलों की आवश्यकता होती है इसलिये उसमें लगातार पन्द्रह, बीस दिन तक या महीना भर काम लगा रहता है। परिश्रम तथा व्यय के साथ ही साथ उसमें उपज भी खूब होती है।

खरीफ वाली फसल मिला जुला कर बोई जाती जैसे बाजरे और जुवार के साथ साथ मोथ, मूंग अरहर तथा उरद और तिल आदि बोते हैं। कपास के साथ भी मोथ बोई जाती है।

जिले की समस्त साल भर की फसल का ३५ प्रतिशत भाग खरीफ में और ६५ प्रतिशत भाग रबी में पैदा होता है। गेहूँ की उपज मुख्य है। कुल फसल का ५० प्रतिशत भाग गेहूँ और १८ प्रतिशत भाग बाजरा होता है। खरीफ में बाजरा, जुवार, दालें (मोथ उड़द, मूङ्ग आदि) कपास, तिल, मक्का आदि फसलें और रबी में गेहूँ, जौ, चना. सरसों, अलसी मटर आदि फसलें तयार की जाती हैं।

पञ्जाब के और जिलों की भांति झेलम जिले में भी बैल के साथ साथ गाएं भी हल में जोती हैं। ढाई वर्ष में वह जोतने योग्य हो जाती हैं। साढ़े तीन वर्ष में वह बच्चे देने लग जाती हैं दूध कम देने पर उन्हें हल जेतने के लिये प्रयोग किया जाता है।

झेलम में अच्छी नसल के घोड़े होते हैं मुगल काल से ही यहां से घोड़े प्रसिद्ध रहे हैं और अब भी प्रसिद्ध हैं। गाय, बैल, घोड़े, खच्चर, गदहे, भेड़ बकरियां आदि पशु पाले जाते हैं।

नहरें, कुएं, बांध, नदियां आदि खेती सींचने के साधन हैं।

झेलम जिले में दो प्रकार के जङ्गली इलाके हैं जिन्हें रक कहते हैं। यह सरकार द्वारा दो बिभागों में विभाजित है। १—पहाड़ी जिसमें कृषि वाली भूमि छोड़ कर सभी पर्वतीय प्रदेश सम्मिलित है २—मैदानी रक हैं जिनमें चकवाल और तल्ला गांव के पठारी प्रदेश हैं। प्रथम श्रेणी के जङ्गल अधिक हैं जो सरकार की ओर से सुरक्षित रक्खे गये हैं और जङ्गल विभाग के आधीन हैं। दूसरी श्रेणी पर डिप्टी कमिश्नर का अधिकार रहता है। इसमें घास के मैदान अधिक हैं। यह मैदान लोगों को चराई के लिये ठीके पर नीलाम किये जाते हैं। इनका कुछ भाग ६ माह तक सुरक्षित रक्खा जाता है और फिर उसकी घास या तो सरकार अपने कार्य के लिये कटा लेती है या नीलाम कर देती है।

खनिज सम्पत्ति

झेलम जिले में नमक की पहाड़ियों से नमक, चूना और मकान बनाने के पत्थर निकाले जाते हैं। इनकी खोदाई के लिये ठीके दिये जते हैं और फिर निकाल कर दूसरे स्थानों को भेजे जाते हैं। खेरवा और मायो की नमक की खानें बड़ी बड़ी हैं। इनके अतिरिक्त नमक श्रेणी के शेष भागों में जो नमक की खानें हैं उनकी रखवाली सरकार की ओर से की जाती है।

नमक श्रेणी में तथा नदी और नालों की रेत में सोना मिलता है। रेत से सोना देशी ढंग से निकाला जाता है पर व्यय तथा परिश्रम अधिक पड़ता है और आय कम होती है इस लिये सोना निकालने का कार्य कम होता है।

कोयला, कालाबाग, चिचल्ली श्रेणी बाघनवाला खेवड़, पीढ़ डंडोत, मकराच और नूरपुर की खानों से निकाला जाता है। कोयला नमक श्रेणी में समुद्र धरातल से लगभग २ हजार फुट की ऊंचाई पर आ जाता है बाघन वाला में कोयले के चट्टान की तह ३२ फुट मोटी है।

मरी और लाल बाग में स्वच्छ श्वेत या लाल रंग का हीरा पाया जाका है। झेलम की पहाड़ियां में भी मिलता है। पहाड़ियों में तूतिया भी पाई जाती है। तांबा भी पहाड़ी श्रेणियों में मिलताहै। पर बहुत कम है।

करंगली की पहाड़ी में सुरमा तथा सीसा मिलता है। जिले के विभिन्न भागों में मिट्टी के सुन्दर बर्तन बनाने के लिये अच्छी मिट्टी पाई जाती है। लाल तथा पीली मिट्टी भी मिलती है जो घरों की दीवारों के पोतने का काम देती है।

कलाकौशल

गांव में मोची चमड़ा कमाते हैं और चमड़े से जूता आदि सामान बनाते हैं। जुलाहे मोटा गाढ़ा

या खद्दर बुनते हैं। मुसल्ली टोकरी बनाते हैं। लुहार लोहे की चीजें बनाते हैं। तरखान या बढ़ई लकड़ी का सामान बनाते हैं। तेली तेल पेरते हैं और सुनार सोने चांदी के आभूषण बनाते हैं। पिंड दादनखां में सुरमी लुंगी बुनी जाती है। नूरपुर और पचनद में धारीदार अच्छा कपड़ा बुना जाता है। पिंडदादन खां में चांदी की मूठ वाले चमड़े के कोड़े बनते हैं। बल कस्सर और दूसरे गांवों में सस्ते कम्बल बुने जाते हैं। झेलम के ऊपर सुल्तान पुर तहसील के गक्खर गांव में पठान चूरीगर शीशे की चूड़ी बनाते हैं। पहले वे नदी की तली से पत्थर इकट्ठे करके कूट लेते और चूरे में नवां भाग सज्जी मिलाकर स्वयं शीशा बना लेते थे। सज्जी और पत्थर के बुरादे को वे २४ घंटे भट्टी में गरम करते थे। आजकल वे शिकोहाबाद इटावा और दूसरे स्थानों से सस्ता कांच इकट्ठा मंगा लेते हैं। एक मन कांच में १००० चूड़ियां बन जाती हैं। एक चूड़ीगर औसत से एक दिन में २५० बड़ी अथवा ५०० छोटी चूड़ी बना लेता है। भट्टी के निचले भाग में गला हुआ रंगीन कांच रहता है। कारीगर दाहिने हाथ से लोहे की छड़ से पिघला हुआ शीशा निकालता है और बायें हाथ में नुकीला सांचा लिये रहता है। इसी पर घुमाकर वह चूड़ी बना लेता है। गरम चूड़ी पर अलग से दूसरे रंग

मोम नीचे एक छेद से निकाल दिया जाता है। ऊपर एक छेद से पिघला हुआ कांसा डाला जाता है। ठंडा होने पर वह कड़ा हो जाता है। फिर मिट्टी छुड़ा कर ढला हुआ बर्तन को खराद कर चमका लेते हैं। जिन बर्तनों का मुँह तंग होता है उन्हें दो भागों में ढालते हैं और अन्त में जोड़ लेते हैं। जिन बर्तनों को चद्दर से गढ़ कर बनाते हैं उनके लिये पीतल या तांबे की चद्दरें बाहर से मंगा लेते हैं। पिंडदादन खां में सज्जी से साबुन भी बनाया जाता है। पिंडदादन खां के पास चक हमीद लाल, काले, पीले और दूसरे रंग के लकड़ी के खिलौने और दूसरे सामान बनाये जाते हैं। चकवल के कुछ गांवों में ब्याह के अवसर पर काम आने वाली रंगीन जंजीरें बनाई जाती हैं पिन्नावल में पहाड़ी लकड़ी से कंघे बनाये जाते हैं। चकवल और छकहमीद में सुनहले कामदार जूते बनते हैं। झेलम शहर की स्त्रियां बढ़िया कपड़े या फूलकारी बनाती हैं। मुनारा में चटाइयां और आसनी बनते हैं। कुछ बड़े कस्बों में आतिशबाजी बनती है। झेलम, जलालपुर और पिंडदादन खां में बेड़ी (बड़ी नावें) बनाई जाती हैं। यह १००० मन तक बोझ ले जा सकती हैं। कुछ लोग विलायती ढंग महुआ और देशी ढंग की डूगा (छोटी नावें) बनाते हैं। जिले भर में प्रायः २०० पनचक्कियां हैं।

नावें चल सकती हैं। रेल मार्ग ७४ मील लम्बी है। ४० मील पक्की सड़क और प्रायः ११०० मील कच्ची सड़क है। नार्थ-वेस्टर्न रेलवे झेलम तहसील को पार करती है। सिन्ध सागर द्वाब रेल-शाखा पिंडदादन खां के मैदान को पार करती है। मारी-अटक लाइन तल्ल गांव के एक कोने को काटती है। दिंजरा प्रधान स्टेशन है। ग्रांड ट्रंक रोड की पक्की सड़क रेलवे के समानान्तर चलती है और झेलम शहर होती हुई आगे बढ़ती है। कच्ची सड़कें जिले भर में फैली हुई हैं। साल्टरेंज में कई दर्रे हैं, जो मार्ग चोआसै दानशाह लेकर पिंडदादन खां से चकवाल को गया है उसमें गाड़ियां चल सकती हैं। झेलम शहर के पास झेलम नदी के ऊपर पुल बना है। यहीं होकर पक्की सड़क भी जाती है। सिन्ध सागर द्वाब रेल-शाखा का जो पुल पिंडदादन खां से ७ मील ऊपर चकनिजाम में बना है वहां होकर केवल पैदल चलने वालों के लिये पगडंडी बनी हैं।

जनसंख्या

झेलम जिले में चार नगर तथा ९७४ गांव हैं झेलम नगर की जन संख्या लगभग १८ हजार, पिंडदादन खां नगर की लगभग १५ हजार, चकवल नगर की लगभग ८ हजार और भौन नगर की लगभग ७ हजार है। इनमें से झेलम तथा पिंडदादन खां में म्यूनिसपैलिटी हैं।

झेलम जिलों में चार तहसील हैं जिनमें से पिंडदादन खां तहसील की जनसंख्या १ लाख ९० हजार, झेलम तहसील को लगभग दो लाख, चकवल की १ लाख ८० हजार और तल्ला गांव तहलील की लगभग १ लाख के है। पंजाब प्रान्त के जिलों में जनसंख्या के भाव से झेलम का उनतीसवां नम्बर है।

पंजाब प्रान्त के अन्य दूसरे जिलों की भांति झेलम जिले के गांव भी बसे हैं। बड़े गांव की आबादी कहते हैं। आबादी के चारों ओर धोक (पुरवा) होते हैं। धोक वह छोटा सा गांव है जहां कम से कम एक और अधिक से अधिक १० या १५ घर होते हैं। अधिकांश धोकों में ५ या ७ घर होते हैं। यह धोक प्रधान गांव या आबादी के चारों ओर रहते हैं। आबादी में जमींदार रहता है और धोकों में किसान रहते हैं। धोकों में बसने का मुख्य कारण यह है कि जिले में उपजाऊ भूमि सब कहीं बराबर नहीं है। उपजाऊ भूमि के छोटे छोटे टुकड़े छिटके हुये यहां वहां वर्तमान हैं जहां कहीं उपजाऊ भूमि का टुकड़ा है वहीं किसान बस गये हैं।

जिले के पूर्वी भाग में पश्चिमी भाग की अपेक्षा अधिक धोक हैं। झेलम के लेहरी तथा पधरी गांवों में चालीस चालीस धोक हैं। जिले के पश्चिमी भाग में गांव अधिक संख्या में हैं। यहां के गांव बड़े भी हैं। कुछ गांव तो बहुत बड़े हैं जैसे लाव गांव का क्षेत्रफल १२५ वर्गमील, थोव महाराम खां का ८६, त्राप का लगभग ८० और कंदवाल गांव का क्षेत्रफल २७ वर्ग मील है।

जैसा कि समस्त भारतवर्ष में देखा गया है। कि गत चालीस वर्षों में जनसंख्या की अधिक वृद्धि हुई है उसी के अनुसार झेलम जिले की जनसंख्या भी बढ़ी है। साधारणतः झेमल जिले के निवासी मोटे-हट्टे-कट्टे होते हैं। हिन्सा का भाव उनमें अधिक पाया जाता है पर शरारती कम होते हैं। हां धर्म के कट्टर अनुयायी होने के कारण दूसरे धर्म वालों के साथ उनका व्योहार अच्छा नहीं है। झेलम निवासियों के मध्य पुरानी शत्रुता, स्त्री तथा भूमि झगड़ों के बहुधा कारण बन जाते हैं। चकवाल और तल्ला गांव तहसीलों में इस प्रकार के झगड़े बहुत होते हैं जिनसे हवाओं की संख्या बहुत बढ़ जाती है। इसी कारण झेलम के निवासी झूठ बोलने के आदी हो गये हैं और झूठ साबित हो जाने पर उन्हें किसी प्रकार की लज्जा भी नहीं लगती है।

उत्पत्ति तथा ब्याह

मुसलमानों के घरों में जब बच्चा पैदा होता है तो मुल्ला बुलाया जाता है वह बच्चे के कान में आकर मंत्र फूंकता है। एक हफ्ते के पश्चात् बच्चे का मुंडन कर दिया जाता है और खाना-पीना होता है तथा नाई-धोबी आदि परजों को इनाम दिया जाता है। लड़के की उत्पत्ति में लड़की की अपेक्षा अधिक-खुशी मनाई जाती है। चार वर्ष के पश्चात्

लड़के की सुन्नत या मुसलमानी नाई द्वारा कराई जाती है और मिठाई बांटी जाती है। मुसलमान घेरों में बच्चों का नामकरण घर को प्रधान या सबसे अधिक बूढ़ा व्यक्ति करता है।

हिन्दू अथवा सिक्ख जो कशधारी होते हैं उनके यहां पैदा होने के पश्चात् बच्चे को धरमशाला या ग्रंथ साहब के पास ले जाकर, धार्मिक पुस्तक का पृष्ट अचानक खोला जाता है और जो पृष्ठ खुलता है उसके प्रथम शब्द के प्रथम अक्षर पर ही बच्चे का नाम करण होता है। हिन्दू जो बाल नहीं रखाते हैं उनके यहां भी या तो इसी प्रकार नाम करण होता है या घर का मलिक नाम रखता है। चार, छा, नौ मास के पश्चात् मुंडन संस्कार होता है। मुंडन संस्कार वंश की प्रथा के अनुसार ही होता है किसी किसी वंश में तो ५ वर्ष के पश्चात् मुंडन होता है। मुंडन के समय खुशी मनाई जाती है। मुंडन संस्कार के पश्चात् जनेऊ संस्कार होता है। जनेऊ संस्कार के समय नाते दारों को निमंत्रण दिया जाता है और खुशी मनाई जाती है तथा खाना-पीना होता है। प्रायः सिक्खों के घरों में हिन्दू तथा मुसलमान घरों की अपेक्षा कम लड़कियां पैदा होती हैं।

झेलम जिलों के प्रायः सभी मुसलमान हिन्दू बंश के हैं तो भी उनके यहां मुसलमानी धर्म का गहरा प्रभाव पड़ा है और जहां तक सम्भव होता है शादियां अधिक समीपवर्ती रिश्तेदारों के यहां की जाती है। लड़का अपने चचा, मामा या फुफा की लड़की के साथ शादी करता है। शादी के पहले नाता या कुर्माई संस्कार होता है जो १५ वर्ष तक में अवश्य ही हो जाता है।

हिन्दू घरों में भी शादी के पहले संगनी की रसम चालू है। मुसलमानों तथा हिन्दुओं दोनों के यहां प्रायः एक ही भांति के रीति-रिवाज-प्रचलित है अंतर नामों का है। मुख्य अंतर यह है कि मुसलमानों के यहां शादी का अंत निकाह पढ़ा कर होता है और हिन्दुओं के यहां कन्यादान संस्कार है। कन्यादान संस्कार पिता या माता और न होने पर कन्या का पोषक करता है वर तथा कन्या उस समय गठ-बंधन की दशा में अग्नि की परिक्रमा ७ बार करते हैं। उस समय पंडित लोग मंत्रों का पाठ करते रहते हैं।

व्याह के पश्चात् मुसलमान स्त्रियों का वंश नहीं बदलता है पर हिन्दू स्त्रियों का गोत्र व्याह के पश्चात् बदल जाता है और वह अपने पति की गोत्र में चली जाती है। हिन्दुओं तथा सिक्खों के यहां विधवा विवाह प्रचलित नहीं है। मुसलमानों के यहां प्रचलित है पर गक्खर, जंजुवा और मैर जातियों के लोग विधवा विवाह नहीं करते हैं। प्रायः सभी सम्पन्न तथा उच्च घरों में विधवा विवाह को बुरा मानते हैं। अंग्रेजों के आने के पहले जब कोई स्त्री विधवा हो जाती थी तो मैर जाति के लोग उस स्त्री को इस भय से जान से मार डालते थे कि कहीं वह दूसरा व्याह न कर बैठे।

जाति तथा धर्म विभाग

झेलम तहसील के पूर्वी भाग में गूजर जाति के निवासी, दक्षिणी-पश्चिमी भाग में जंजुवा जाति के और शेष भाग में गक्खर जाति के लोग बसे हैं। उन्हीं को वहां जमींदारी भी है। पिंडदादन खां तहसील के पूर्वी पहाड़ियों का अधिकांश भाग तथा पूर्वी मैदान का कुछ भाग जंजुवा जाति वालों के अधिकार में और शेष भाग जालप, फाफर और खोक्खर आदि जातियों के अधिकार में है। अधिक पश्चिमी भाग में अवां जाति बसी हुई है। लल्ला गांव के अधिकांश भाग में अवां जाति का अधिकार है। चकवाल तहसील में कई जातियों के लोग हैं जिनमें मैर कस्सर और काहूत मुख्य हैं।

धर्म के हिसाब से झेलम जिले में मुसलमान हिन्दू तथा सिक्ख बसे हैं। मुसलमानों की संख्या अस्सी प्रतिशत से अधिक है शेष में हिन्दू तथा सिक्ख हैं। ललभग सभी भूमिपति मुसलमान हैं। हिन्दुओं में खत्री और अरोरा मुख्य हैं जो व्यापारी महाजन या सरकारी नौकर हैं। जिले भर में १६ प्रतिशत अवां जाति के लोग और १२ प्रतिशत जाट लोग हैं।

मुसलमानों में सय्यद सब से उत्तम माने जाते हैं उसके पश्चात् कुरैशी लोगों का मान है। सभी मुसलमान अपनी लड़कियां सय्यद बंश वालों को देना पसंद करते हैं।

दूसरी मुसलमान जातियों में गक्खर जाति का प्रथम नम्बर हैं उसके पश्चात् जंजुवा, पँवार, सोहलन चिभ और खोक्खर आदि लगभग बराबर वाली जातियां हैं। उसके पश्चात् जाल्पा और अवां जाति के लोगों का मान हैं। अवां जाति के मुखिया की उपाधि मलिक की है। मुगल जाति के उच्च लोग मिर्जा कहलाते हैं। मैर, करसर तथा काहूत जाति के लोग अच्छे माने जाते हैं। जंजुवा, गक्खर और खोक्खर जाति के मुखिया राजा कहलाते हैं। चकवाल जाति के लोग चौधरी कहलाते हैं।

जाट लोगों में प्रधान लोग चौधरी या मेहर नाम से पुकारे जाते हैं। गूजर जाति वाले भी इसी उपाधि से पुकारे जाते हैं। मलियार मुसलमान मध्यम श्रेणी के माने जाते हैं। निचली श्रेणी के मुसलमान कमीन हैं जिनमें धोबी नाई आदि हैं।

हिन्दुओं में ब्राह्मण सर्वोच्च माने जाते हैं उसके पश्चात् मूहिआल, खत्री, गधिओक तथा अरोरों का मान है।

समस्त जातियों की उत्पत्ति का इतिहास अलग अलग है। गूजर और जाट लोग अपने को राजपूत वंशी बतलाते हैं और कहते हैं कि हम जयपाल तथा अनन्द पाल के वंशज हैं। हिन्दुओं में सोनार, तरखान, (बढ़ई गीरी करने वाले) लोहार, कुम्हार, कोरी, नाई, तेली, काछी, मल्लाह, धोबी और मोची आदि जातियां नीचे श्रेणी की मानी जाती हैं।

भूमि पतियों में चौधरियाल और जमींदार या चौधरी दो वर्ग माने जाते हैं। चौधरियाल लोग प्राचीन तालुकेदार हैं और जमींदार या चौधरी बाद वाले प्रतिनिधि वर्ग वाले भूमि पति हैं जो सिक्ख काल में बने।

अंध विश्वास

अन्य भारतीय स्थानों की भांति झेलम जिले के निवासियों के मध्य भी अंध विश्वास बहुत पाया जाता है। हिन्दू तथा मुसलमान दोनों ही अंध विश्वासी हैं। यहां के भूमपति लग तो कट्टर अंध विश्वासी हैं वे जिनों से बहुत डरते हैं और उन्हें भगाने के लिये लोहे की वस्तु का प्रयोग करते हैं। खलिहान में जब नाज का ढेर लग जाता है तो उसके चारों ओर एक रेखा खींच दी जाती है उसमें लोहे की कोई वस्तु डाल दी जाती है तथा मुसलमान ईश्वर का नाम लिख कर ऊपर रख देते हैं। स्त्रियां समीप नहीं जाने पाती हैं क्योंकि वह अधिक अशुद्ध मानी जाती हैं। जूता पहिन कर ढेर के समीप लोग नहीं जा सकते हैं।

छोटे पन में और शादी के समय लोग बिना लोहे के हथियार के बच्चों को नहीं जाने देते हैं उनका विचार है कि जिन उन पर सवार हो जावेगा। इसके सुबूत के लिये प्रत्येक गांव में सैकड़ों उदाहरण बताये जाते हैं। शादी होने के लगभग एक मास बाद तक मुसलमानों के मध्य वर तथा कन्या अपने अपने पास एक छुरा रखते हैं। किसी भी समाधि स्थान पर कोई खाट या ऊंचे स्थान पर सो नहीं सकता है उसे भूमि पर ही सोना पड़ता है। भवँडर जब जब चलता है तो लोग उससे दूर भागते हैं उनका विश्वास है कि उसमें जिन रहता है जो उन्हें उड़ा ले जावेगा। एक ही लिंग वाले तीन बच्चों के लगातार उत्पत्ति के पश्चात् भिन्न लिंग वाले बच्चे की उत्पत्ति अशुभ मानी जाती है। हिन्दू लोग अधिकतर नक्षत्रों पर विश्वास करते हैं इस लिये प्रत्येक नक्षत्र से उनके कार्य प्रभावित माने जाते हैं। मुसलमान लोग मंगलवार तथा शनिवार को कार्य आरम्भ करना अधिक शुभ समझते हैं।

विभिन्न भांति के कष्टों के लिये जिलों में विभिन्न भांति के उपचार भी हैं। पब्बी गांव में एक वंश ऐसा है जो फोड़े पर थूक कर उसे अच्छा करता है। गूजर चौधरी लोग सिर का एक बाल उखाड़ कर शरीर की व्यथा का निवारण करते हैं। फकीरों तथा साधुवों की समाधियां पीड़ा, तथा कष्ट दूर करने में बड़ी सहायक हैं। लोग जब कष्ट में होते हैं तो प्रसाद चढ़ाने या कपड़ा चढ़ाने, समाधि पोताने आदि की मनौती कर देते हैं और उन्हें उससे लाभ भी पहुँच जाता है। नजर में सभी लोग विश्वास करते हैं। कुदृष्टि का प्रभाव भी बुरा पड़ता है उसके लिये लोग मंत्र—आदि पढ़कर फूँक मार कर निवारण करते हैं।

रीत रिवाज

किसानों ने अपनी सुविधा के अनुसार दिन का विभाजन कर रक्खा है। मर्द लोग खेती के कार्य में लगे रहते हैं स्त्रियां घर का काम काज करती हैं। पानी भरना, गोबर उठाना, भोजन तयार करना तथा मर्दों को भोजन खेत में पहुँचाना, सीना-परोना, पीसना, घर की सफाई करना, घरके पशुओं को चारा देना, बच्चों की रखवाली आदि का सभी भार स्त्रियों पर होता है। जब व्याह के पश्चात् दूल्हन घर पर आती है तो प्रायः साल भर उससे कोई काम नहीं लिया जाता है और उसे सुन्दर भोजन तथा वस्त्र दिया जाता है साल भर के पश्चात् वह गृहस्थी में हाथ बटाती है।

स्त्रियों को पुरुषों जैसा अधिकार प्राप्त नहीं है घर के बाहर उन्हें कम जाना पड़ता है भोजन तयार होने पर पुरुष वर्ग पहले भोजन करता है। सवेरे के समय भोजन के साथ लसी का प्रयोग होता है।

पहनावा:—पुरुष कुर्ता, पायजामा, साफा चप्पल, सैंडिल और तहमत का प्रयोग करते हैं। स्त्रियां कुर्ता, सुथ्थन (पायजामा) धोती आदि पहिनती हैं तथा सोने चांदी के आभूषण धारण करती हैं। घर अधिकतर मिट्टी के बनाए जाते हैं। साधारण घरों में दो या तीन कमरे होते हैं जिन्हें कोठा कहते हैं। कोठों के सामने एक घिरा मैदान होता है। मकान से मिला हुआ पशुओं के रहने का स्थान होता है। घरों में नाज रखने के लिये मिट्टी के सकार, कोठी और गाही बनाए जाते हैं।

मेले

झेलम जिले में ३२ मेले लगते हैं। यह प्रायः धार्मिक होते हैं और किसी न किसी साधु अथवा फकीर की समाधि स्थान पर लगते हैं जहां जाकर लोग मनौती चढ़ाते हैं तथा गरीबों और साधुओं को भोजन बांटते हैं। इनमें से ४ मेले प्रधान हैं।

१—मियांन मोहरा का मेला झेलम तहसील में पाची स्थान पर होता है। यहां शाह सुफैद की समाधि है। इसी समाधि पर वैसाख मास में प्रत्येक वृहस्पतवार को मेला लगा करता है जो लोग कोढ़ रोग से पीड़ित होते हैं वह यहां उससे छुटकारा पाने के लिये आते हैं और समाधि पर अपनी मनौती करते तथा प्रसाद चढ़ाते हैं। मेले में कबड्डी खेल तथा तीतर लड़ाने का तमाशा भी होता है मेले में लगभग ४ हजार लोग भाग लेते हैं।

गरात का मेला कुवार, चैत और वैसाख मास में होता है। यह स्थान भी झेलम तहसील में है। मेले में लगभग १० हजार लोग सम्मिलित होते हैं। यहां पर छोटा सा सोता है जिसके जल में सुन्दर औषधियों तथा खनिज पदार्थों का मिश्रण रहता है। पानी में स्नान करने से शरीर के रोग दूर हो जाते हैं। कहते हैं कि इस सोते को शाह उसमान गाजी ने वर्दान दिया था। पानी थोड़ा है इसलिये बहुधा झगड़ा हो जाया करता है प्रबन्ध के लिये पुलिस का प्रबन्ध रहता है। टिल्ला जोगी का मेला शिवरात्रि पर होता है।

कटास का मेला वैसाख की परीवा से आरम्भ होता है और पछिमसी तक चलता है। यहां मेले में १० हजार से अधिक लोगों की भीड़ एकत्रित होती है। कटास स्थान पिंडदादन खां तहसील में स्थित है।

चोव सैदान शाह पिंडदादन खां तहसील में है। यहां चैत शुक्ल पक्ष की एकादशी से मेला आरम्भ होता है और वैसाख कृष्ण पक्ष की द्वितीया तक रहता है। कटास तथा चोव सैदान शाह लगभग २ मील की दूरी पर स्थित हैं। यहां धार्मिक मेले होते हैं इसलिये कटास में हिन्दुओं की और चोव सैदान शाह में मुसलमानों की भीड़ होती है। धार्मिक होने के कारण इन स्थानों पर बहुधा २० या २५ हजार से भी अधिक भीड़ इकट्ठा हो जाती है। इनके अतिरिक्त भावी तथा सव्वी के मेले भी प्रसिद्ध हैं।

इतिहास

झेलम जिले में गक्खर, जंजुवा, मैर, कसार खुत, अवां गूजर और जाट जातियां निवास करती हैं। इन जातियों के आदि कालीन इतिहास के के सम्बन्ध में बहुत कम बातें मालूम हैं। फिर इनकी उपज के सम्बन्ध में इतिहास कारों ने अपनी

अपनी राय अलग बतलाई है जिससे परिणाम पर पहुँचना और भी अधिक कठिन हो जाता है। उदाहरण के रूप में आवां जाति को ही देखिये कुछ एतिहासिकों का कहना है कि यह उन राजपूतों के वंशज हैं जो सिकन्दर के आने के पहिले यहां आवाद थे दूसरे इसे यूनानियों का वंशज कहते हैं। आवां जाति के लोगों का कहना है कि वे महमूद गजनवी के साथ अरब से आये थे। जातियों की अपनी वंशज कुण्डलियां भी हैं। जिनसे पता चलता है कि उनकी उत्पत्ति बड़ी ही प्राचीन है। इनमें से सब से अधिक सुरक्षित वंशावली जंजुवा जाति की है। महाराज पृथ्वी राज जिन्हें ११९२ ई० में मोहम्मद बीन शाह ने पराजय दी थी वह वंशावली वृक्ष के अनुसार सत्ताइसवें राजा हैं। राजा माल जो महमूद के समय में १००० ई० में थे चौसठवें राजा हैं। फिर यह कहा जाता है कि राजा मल प्रथम राजा थे जिन्होंने मुसलमानी धर्म स्वीकार किया किया पर राजामल के पश्चात् सात ऐसे राजा हुये जिनके नाम के सामने 'देव' शब्द का प्रयोग किया गया है जो हिन्दू जाति का चिन्ह है। वंशावली वृक्ष के अनुसार एकहत्तरवें राजा का नाम मुसलमानी है और अब छीयासीवीं नसल चल रही है जब कि एक नसल के लिये ३० वर्ष समय दिया गया है।

सिकन्दर और पुर राजा

इस जिले से सम्बन्धित सबसे प्राचीन घटना सिकन्दर और पुर राजा की लड़ाई है जो ईसा मसीह से ३२६ वर्ष पूर्व ग्रीष्म काल में लड़ी गई थी। इतिहास लेखकों में इस सम्बन्ध में मतभेद है कि सिकन्दर की सेना ने किस स्थान पर नदी पार किया था। कुछ लोगों कहना है कि सिकन्दर की सेना ने जलालपुर के समीप नदी पार किया कुछ कहते हैं कि झेलम स्थान पर सिकन्दर की सेना ने नदी पार की तो कुछ लोगों का मत है कि यूनानी सेना ने अहमदाबाद स्थान पर नदी पार किया था। कुछ भी हो सिकन्दर की सेना ने झेलम नदी को पार किया और पुर राजा से युद्ध हुआ। इस समय पुर राजा पञ्जाब का एक प्रसिद्ध राजा था सिकंदर को उसका सामना करने के लिये तयारी करनी पड़ी थी इसी कारण उसने तक्षिला के राजा से भी सहायता ली थी। जब राजा पुर की ओर सिकन्दर बढ़ा तो उसके पास ५० हजार से अधिक सेना थी। उसकी सेना में ५ हजार भारतीय सेना थी जो तक्षिला की थी। महाराजापुर के पास भी ५० हजार सेना थी।

झेलम नदी के एक पार तो सिकन्दर की सेना थी और दूसरे तट पर पुर राजा की सेना थी। दोनों सेनायें छा मील लम्बे मैदान में पड़ी थीं। जिस रात सिकन्दर ने आक्रमण किया उस रात को बड़े जोरों का तूफान आ गया, घोर वर्षा होने लगीं, आंधी चलने लगी और बिजली तड़पने लगी बादल गरजने लगे। रात भी घोर अंधकार मयी थी उसी समय समय सिकन्दर ने नदी पार करने का इरादा किया जिससे पुर की सेना के स्काउट उसकी सेना को देख न सकें। नदी के मध्यवर्ती भाग में एक टापू था जो जंगली था इसी टापू के होने के कारण सिकन्दर की सेना छिप सकी थी।

सिकन्दर की सेना के पार करने का समाचार पाकर पुर राजा ने अपने लड़के को आगे भेजा। उसकी अध्यक्षता में वीर भारतीय सेना ने यूनानी सेना पर भीषण आक्रमण किया और सेना नायक बुसीफालस को बुरी तरह घायल कर दिया पर अन्त में पुर का पुत्र मारा गया यह समाचार पाकर राजा पुर आगे बढ़ा इधर सिकन्दर ने पुर की सेना पर दोनों दाहिने तथा वांएं ओर से घोड़-सवार सेना से आक्रमण कर दिया। पुर की घोड़-सवार सेनायें दबाती हुई हाथी सेना की ओर हटीं। इसी बीच चोट खाकर हाथी सेना बिगड़ गई और हाथी इधर उधर भागने लगे जिससे उन्होंने अपनी पैदल सेना के अधिकांश भाग को कुचल डाला। राजापुर की पराजय हुई और वह विजय सिकन्दर के सामने पहुँचाया गया जहां उसने अपनी वीरता का अपूर्व परिचय दिया था। सिकन्दर के पूछने पर कि उसके साथ क्या बरताव किया जाय उसने तत्काल उत्तर दिया कि उसके साथ वही होना चाहिये जो राजा राजा के साथ किया करते हैं

सिकन्दर बीर था उसने पुर की वीरता देख कर उसे मुक्त कर दिया।

सिकन्दर के चले जाने के पश्चात् यूनानी आक्रमण या कला कौशल का कुछ भी चिन्ह जिले में नहीं रह गया। वहां के निवासी सिकन्दर के सम्बन्ध में कुछ भी नहीं जानते हैं और न उनके मध्य उस काल की कथायें ही प्रचलित हैं।

इसके पश्चात् पञ्जाब के जिले महाराज अशोक वर्धन के साम्राज्य में सम्मिलित हो गये थे किलास का स्तम्भ उसी काल का है। अशोक के पश्चात् हिंदी-यूनानी राजाओं का अधिकार पंजाब पर हो गया और २२० वर्ष तक उनका शासन रहा। जब हिन्दी-सिथियन जाति आई तो उसने हिन्दी-यूनानी राजों का पतन करके अपना राज्य स्थापित किया। इस काल का हाल केवल इस काल के राजाओं के मुद्राओं से मालूम होता है जो यहां मिलते हैं। ५३० ई० में मेहरकुल राजा यहां का राजा था। वह बौद्ध धर्म का विरोधी था।

उसके पश्चात् इतिहास का ६३१ ई० तक अंधकाल है। ६३१ ई०.में इस भाग की यात्रा चीन दूत ह्वान सांग ने की थी। उस समय यह जिला काश्मीर के हिन्दू राजा के अधिकार में था और नवीं शताब्दी तक काश्मीर के हिन्दू राजा का शासन रहा। दसवीं सदी में काबुल के ब्राह्मण राजाओं का अधिकार इस जिले पर होगया। काबुल के ब्राह्मण राजा महमूद गजनवी के समय तक राज्य करते रहे। यह घराना इतिहास में काबुल के हिन्दू शाही वंश के नाम से प्रसिद्ध हैं। महमूद गजनवी के समय में अनन्दपाल और जयपाल राजाओं का जो वर्णन आता है वह राजा इसी काबुल के हिंदू शाही वंश के थे और लाहोर के राजा थे। भारत के प्रसिद्ध मन्दिर सोमनाथ का सर्वनाश कर के जब महमूद लौटा था तो उसकी सेना को नमक की पहाड़ियों के प्रदेश में बसी हुई जाट जाति ने परेशान किया था उसी परेशानी के कारण महमूद ने दूसरे ही वर्ष अपना अंतिम भारत पर आक्रमण किया था। इतिहास में जो कहानी प्रसिद्ध है कि महमूद के लड़के मसूद ने लाहोर पर चढ़ाई करते समय शराब को तिलांजलि दी और अपना शराब का समस्त सामान झेलम में फेंक दिया उसका कुछ भी वर्णन इस जिले के इतिहास में नहीं मिलता है।

यद्यपि बारहवीं सदी के आरम्भ काल में पञ्जाब पर मुसलमानों के अधिकार का वर्णन पाया जाता है। पर पूर्णरूप से मुसलमानों का राज्य पञ्जाब प्रान्त पर महमूद गौरी के (११९३ ई०) समय में हुआ था। मोहम्मद गोरी के प्रसिद्ध सिपाहियों कुतुब उद्दीन ऐबक तथा पाल्दोज को इस जिले के निवासी गक्खर जाति ने बहुत परेशान किया था और उनसे कई लड़ाइयां लड़ी थीं अंत में गक्खर जाति के राजा ने मुसलमानी धर्म स्वीकार कर लिया और मुसलमान धर्म प्रचार करने में बड़ी सहायता प्रदान किया। १२०५ ई० में इसी जिले के धामियक नामी गांव में गक्खर जाति के लोगों ने मोहम्मद गौरी की हत्या की थी।

जहां कुशी नामक पुस्तक में वर्णन मिलता है खिल्जी सुल्तान जलाल उद्दीन ने १२१५ ई० में अपने एक सेना नायक को जूद पर्वतों पर भेजा उसने जाकर उस प्रदेश में खूब लूट मार की और बहुत सा सामान पाया। सुल्तान को भी वहां के रायकोकर सकनीन की पुत्री ब्याह में मिली थी।

जब सुल्तान नासिर उद्दीन (१२४६-६५में) भारत का बादशाह हुआ तो उलुग खां को बलबन का खिताब देकर जूद पहाड़ियों के निवासियों को परास्त करने के लिये भेजा था क्योंकि उन्होंने मुगलों का साथ दिया था। उसके पश्चात् जब बलबन स्वयं राजा हुआ तो भी उसने वहां जाकर वहां के निवासियों को दबाया था और बहुत से घोड़े नौकर लौटा था। झेलम जिले के उत्तरी भाग में अभी तक अच्छी नसल के घोड़े होते रहे हैं।

उसके पश्चात् जलालउद्दीन खिल्जी (१२९०-५ में भी जूद के निवासियों को दबाने के लिये चढ़ाई की थी और निर्मम हत्याएं की थीं।

तैमूर—जब (१३९८-९९) तैमूर ने भारतवर्ष पर आक्रमण किया तो उसके आते और लौटते समय यहां के निवासियों ने उसका स्वागत किया था इसलिये उसने यहां के निवासियों के साथ अच्छा बर्ताव किया था।

अपनी राय अलग बतलाई है जिससे परिणाम पर पहुँचना और भी अधिक कठिन हो जाता है। उदाहरण के रूप में आवां जाति को ही देखिये कुछ एतिहासिकों का कहना है कि यह उन राजपूतों के वंशज हैं जो सिकन्दर के आने के पहिले यहां आबाद थे दूसरे इसे यूनानियों का वंशज कहते हैं। आवां जाति के लोगों का कहना है कि वे महमूद गजनवी के साथ अरब से आये थे। जातियों की अपनी वंशज कुण्डलियां भी हैं। जिनसे पता चलता है कि उनकी उत्पत्ति बड़ी ही प्राचीन है। इनमें से सब से अधिक सुरक्षित वंशावली जंजुवा जाति की है। महाराज पृथ्वी राज जिन्हें ११९२ ई० में मोहम्मद बीन शाह ने पराजय दी था वह वंशावली वृक्ष के अनुसार सत्ताइसवें राजा हैं। राजा माल जो महमूद के समय में १००० ई० में थे चौसठवें राजा हैं। फिर यह कहा जाता है कि राजा मल प्रथम राजा थे जिन्होंने मुसलमानी धर्म स्वीकार किया किया पर राजामल के पश्चात् सात ऐसे राजा हुये जिनके नाम के सामने 'देव' शब्द का प्रयोग किया गया है जो हिन्दू जाति का चिन्ह है। वंशावली वृक्ष के अनुसार एकहत्तरवें राजा का नाम मुसलमानी है और अब छीयासीवीं नसल चल रही है जब कि एक नसल के लिये ३० वर्ष समय दिया गया है।

सिकन्दर और पुर राजा

इस जिले से सम्बन्धित सबसे प्राचीन घटना सिकन्दर और पुर राजा की लड़ाई है जो ईसा मसीह से ३२६ वर्ष पूर्व ग्रीष्म काल में लड़ी गई थी। इतिहास लेखकों में इस सम्बन्ध में मतभेद है कि सिकन्दर की सेना ने किस स्थान पर नदी पार किया था। कुछ लोगों कहना है कि सिकन्दर की सेना ने जलालपुर के समीप नदी पार किया कुछ कहते हैं कि झेलम स्थान पर सिकन्दर की सेना ने नदी पार की तो कुछ लोगों का मत है कि यूनानी सेना ने अहमदाबाद स्थान पर नदी पार किया था। कुछ भी हो सिकन्दर की सेना ने झेलम नदी को पार किया और पुर राजा से युद्ध हुआ। उस समय पुर राजा पंजाब का एक प्रसिद्ध राजा था सिकंदर को उसका सामना करने के लिये तयारी करनी पड़ी थी इसी कारण उसने तक्षिला के राजा से भी सहायता ली थी। जब राजा पुर की ओर सिकन्दर बढ़ा तो उसके पास ५० हजार से अधिक सेना थी। उसकी सेना में ५ हजार भारतीय सेना थी जो तक्षिला की थी। महाराजापुर के पास भी ५० हजार सेना थी।

झेलम नदी के एक पार तो सिकन्दर की सेना थी और दूसरे तट पर पुर राजा की सेना थी। दोनों सेनायें छा मील लम्बे मैदान में पड़ी थीं। जिस रात सिकन्दर ने आक्रमण किया उस रात को बड़े जोरों का तूफान आ गया, घोर वर्षा होने लगीं, आंधी चलने लगी और बिजली तड़पने लगी बादल गरजने लगे। रात भी घोर अंधकार मयी थी उसी समय समय सिकन्दर ने नदी पार करने का इरादा किया जिससे पुर की सेना के स्काउट उसकी सेना को देख न सकें। नदी के मध्यवर्ती भाग में एक टापू था जो जंगली था इसी टापू के होने के कारण सिकन्दर की सेना छिप सकी थी।

सिकन्दर की सेना के पार करने का समाचार पाकर पुर राजा ने अपने लड़के को आगे भेजा। उसकी अध्यक्षता में वीर भारतीय सेना ने यूनानी सेना पर भीषण आक्रमण किया और सेना नायक बुसीफालस को बुरी तरह घायल कर दिया पर अन्त में पुर का पुत्र मारा गया यह समाचार पाकर राजा पुर आगे बढ़ा इधर सिकन्दर ने पुर की सेना पर दोनों दाहिने तथा बाएं ओर से घोड़-सवार सेना से आक्रमण कर दिया। पुर की घोड़-सवार सेनायें दबाती हुई हाथी सेना की ओर हटीं। इसी बीच चोट खाकर हाथी सेना बिगड़ गई और हाथी इधर उधर भागने लगे जिससे उन्होंने अपनी पैदल सेना के अधिकांश भाग को कुचल डाला। राजापुर की पराजय हुई और वह विजय सिकन्दर के सामने पहुँचाया गया जहां उसने अपनी वीरता का अपूर्व परिचय दिया था। सिकन्दर के पूछने पर कि उसके साथ क्या बरताव किया जाय उसने तत्काल उत्तर दिया कि उसके साथ वही होना चाहिये जो राजा राजा के साथ किया करते हैं

सिकन्दर वीर था उसने पुर की वीरता देख कर उसे मुक्त कर दिया।

सिकन्दर के चले जाने के पश्चात् यूनानी आक्रमण या कला कौशल का कुछ भी चिन्ह जिले में नहीं रह गया। वहां के निवासी सिकन्दर के सम्बन्ध में कुछ भी नहीं जानते हैं और न उनके मध्य उस काल की कथायें ही प्रचलित हैं।

इसके पश्चात् पञ्जाब के जिले महाराज अशोक वर्धन के साम्राज्य में सम्मिलित हो गये थे कितास का स्तम्भ उसी काल का है। अशोक के पश्चात् हिंदी-यूनानी राजाओं का अधिकार पंजाब पर हो गया और २२० वर्ष तक उनका शासन रहा। जब हिन्दी-सिथियन जाति आई तो उसने हिन्दी-यूनानी राजों का पतन करके अपना राज्य स्थापित किया। इस काल का हाल केवल इस काल के राजाओं के मुद्राओं से मालूम होता है जो यहां मिलते हैं। ५३० ई० में मेहरकुल राजा यहां का राजा था। वह बौद्ध धर्म का विरोधी था।

उसके पश्चात् इतिहास का ६३१ ई० तक अंधकाल है। ६३१ ई० में इस भाग की यात्रा चीन दूत ह्वान सांग ने की थी। उस समय यह जिला काश्मीर के हिन्दू राजा के अधिकार में था और नवीं शताब्दी तक काश्मीर के हिन्दू राजा का शासन रहा। दसवीं सदी में काबुल के ब्राह्मण राजाओं का अधिकार इस जिले पर होगया। काबुल के ब्राह्मण राजा महमूद गजनवी के समय तक राज्य करते रहे। यह घराना इतिहास में काबुल के हिन्दू शाही वंश के नाम से प्रसिद्ध हैं। महमूद गजनवी के समय में अनन्दपाल और जयपाल राजाओं का जो वर्णन आता है वह राजा इसी काबुल के हिंदू शाही वंश के थे और लाहोर के राजा थे। भारत के प्रसिद्ध मन्दिर सोमनाथ का सर्वनाश कर के जब महमूद लौटा था तो उसकी सेना को नमक की पहाड़ियों के प्रदेश में बसी हुई जाट जाति ने परेशान किया था उसी परेशानी के कारण महमूद ने दूसरे ही वर्ष अपना अंतिम भारत पर आक्रमण किया था। इतिहास में जो कहानी प्रसिद्ध है कि महमूद के लड़के मसूद ने लाहोर पर चढ़ाई करते समय शराब को तिलांजलि दी और अपना शराब का समस्त सामान झेलम में फेंक दिया उसका कुछ भी वर्णन इस जिले के इतिहास में नहीं मिलता है।

यद्यपि बारहवीं सदी के आरम्भ काल में पञ्जाब पर मुसलमानों के अधिकार का वर्णन पाया जाता है। पर पूर्णरूप से मुसलमानों का राज्य पञ्जाब प्रान्त पर महमूद गौरी के (११९३ ई०) समय में हुआ था। मोहम्मद गोरी के प्रसिद्ध सिपाहियों कुतुब उद्दीन ऐबक तथा पाल्दोज को इस जिले के निवासी गक्खर जाति ने बहुत परेशान किया था और उनसे कई लड़ाइयां लड़ी थीं अंत में गक्खर जाति के राजा ने मुसलमानी धर्म स्वीकार कर लिया और मुसलमान धर्म प्रचार करने में बड़ी सहायता प्रदान किया। १२०५ ई० में इसी जिले के धामियक नामी गांव में गक्खर जाति के लोगों ने मोहम्मद गौरी की हत्या की थी।

जहाँ कुशी नामक पुस्तक में वर्णन मिलता है खिल्जी सुल्तान जलाल उद्दीन ने १२१२ ई० में अपने एक सेना नायक को जूद पर्वतों पर भेजा उसने जाकर उस प्रदेश में खूब लूट मार की और बहुत सा सामान पाया। सुल्तान को भी वहां के रायकोकर सकनीन की पुत्री ब्याह में मिली थी।

जब सुल्तान नासिर उद्दीन (१२४६-६५में) भारत का बादशाह हुआ तो उलुग खां को बलबन का खिताब देकर जूद पहाड़ियों के निवासियों को परास्त करने के लिये भेजा था क्योंकि उन्होंने मुगलों का साथ दिया था। उसके पश्चात् जब बलबन स्वयं राजा हुआ तो भी उसने वहां जाकर वहां के निवासियों को दबाया था और बहुत से घोड़े नौकर लौटा था। झेलम जिले के उत्तरी भाग में अभी तक अच्छी नसल के घोड़े होते रहे हैं।

उसके पश्चात् जलालउद्दीन खिल्जी (१२९०-५ में भी जूद के निवासियों को दबाने के लिये चढ़ाई की थी और निर्मम हत्याएं की थीं।

तैमूर—जब (१३९८-९९) तैमूर ने भारतवर्ष पर आक्रमण किया तो उसके आते और लौटते समय यहां के निवासियों ने उसका स्वागत किया था इसलिये उसने यहां के निवासियों के साथ अच्छा वर्ताव किया था।

अपनी राय अलग बतलाई है जिससे परिणाम पर पहुँचना और भी अधिक कठिन हो जाता है। उदाहरण के रूप में आवां जाति को ही देखिये कुछ एतिहासिकों का कहना है कि यह उन राजपूतों के वंशज हैं जो सिकन्दर के आने के पहिले यहां आबाद थे दूसरे इसे यूनानियों का वंशज कहते हैं। आवां जाति के लोगों का कहना है कि वे महमूद गजनवी के साथ अरब से आये थे। जातियों की अपनी वंशज कुण्डलियां भी हैं। जिनसे पता चलता है कि उनकी उत्पत्ति बड़ी ही प्राचीन है। इनमें से सब से अधिक सुरक्षित वंशावली जंजुवा जाति की है। महाराज पृथ्वी राज जिन्हें ११९२ ई० में मोहम्मद बीन शाह ने पराजय दी थी वह वंशावली वृक्ष के अनुसार सत्ताइसवें राजा हैं। राजा माल जो महमूद के समय में १००० ई० में थे चौसठवें राजा हैं। फिर यह कहा जाता है कि राजा मल प्रथम राजा थे जिन्होंने मुसलमानी धर्म स्वीकार किया किया पर राजामल के पश्चात् सात ऐसे राजा हुये जिनके नाम के सामने 'देव' शब्द का प्रयोग किया गया है जो हिन्दू जाति का चिन्ह है। वंशावली वृक्ष के अनुसार एकहत्तरवें राजा का नाम मुसलमानी है और अब छीयामीवीं नसल चल रही है जब कि एक नसल के लिये ३० वर्ष समय दिया गया है।

सिकन्दर और पुर राजा

इस जिले से सम्बन्धित सबसे प्राचीन घटना सिकन्दर और पुर राजा की लड़ाई है जो ईसा मसीह से ३२६ वर्ष पूर्व ग्रीष्म काल में लड़ी गई थी। इतिहास लेखकों में इस सम्बन्ध में मतभेद है कि सिकन्दर की सेना ने किस स्थान पर नदी पार किया था। कुछ लोगों कहना है कि सिकन्दर की सेना ने जलालपुर के समीप नदी पार किया कुछ कहते हैं कि झेलम स्थान पर सिकन्दर की सेना ने नदी पार की तो कुछ लोगों का मत है कि यूनानी सेना ने अहमदाबाद स्थान पर नदी पार किया था। कुछ भी हो सिकन्दर की सेना ने झेलम नदी को पार किया और पुर राजा से युद्ध हुआ। उस समय पुर राजा पंजाब का एक प्रसिद्ध राजा था सिकंदर को उसका सामना करने के लिये तयारी करनी पड़ी थी इसी कारण उसने तक्षिला के राजा से भी सहायता ली थी। जब राजा पुर की ओर सिकन्दर बढ़ा तो उसके पास ५० हजार से अधिक सेना थी। उसकी सेना में ५ हजार भारतीय सेना थी जो तक्षिला की थी। महाराजापुर के पास भी ५० हजार सेना थी।

झेलम नदी के एक पार तो सिकन्दर की सेना थी और दूसरे तट पर पुर राजा की सेना थी। दोनों सेनायें छा मील लम्बे मैदान में पड़ी थीं। जिस रात सिकन्दर ने आक्रमण किया उस रात को बड़े जोरों का तूफान आ गया, घोर वर्षा होने लगीं, आंधी चलने लगी और बिजली तड़पने लगी बादल गरजने लगे। रात भी घोर अंधकार मयी थी उसी समय समय सिकन्दर ने नदी पार करने का इरादा किया जिससे पुर की सेना के स्काउट उसकी सेना को देख न सकें। नदी के मध्यवर्ती भाग में एक टापू था जो जंगली था इसी टापू के होने के कारण सिकन्दर की सेना छिप सकी थी।

सिकन्दर की सेना के पार करने का समाचार पाकर पुर राजा ने अपने लड़के को आगे भेजा। उसकी अध्यक्षता में वीर भारतीय सेना ने यूनानी सेना पर भीषण आक्रमण किया और सेना नायक बुसीफालस को बुरी तरह घायल कर दिया पर अन्त में पुर का पुत्र मारा गया यह समाचार पाकर राजा पुर आगे बढ़ा इधर सिकन्दर ने पुर की सेना पर दोनों दाहिने तथा बांएं ओर से घोड़सवार सेना से आक्रमण कर दिया। पुर की घोड़सवार सेनायें दबाती हुई हाथी सेना की ओर हटीं। इसी बीच चोट खाकर हाथी सेना बिगड़ गई और हाथी इधर उधर भागने लगे जिससे उन्होंने अपनी पैदल सेना के अधिकांश भाग को कुचल डाला। राजापुर की पराजय हुई और वह विजय सिकन्दर के सामने पहुँचाया गया जहां उसने अपनी वीरता का अपूर्व परिचय दिया था। सिकन्दर के पूछने पर कि उसके साथ क्या बरताव किया जाय उसने तत्काल उत्तर दिया कि उसके साथ वही होना चाहिये जो राजा राजा के साथ किया करते हैं

सिकन्दर वीर था उसने पुर की वीरता देख कर उसे मुक्त कर दिया।

सिकन्दर के चले जाने के पश्चात् यूनानी आक्रमण या कला कौशल का कुछ भी चिन्ह जिले में नहीं रह गया। वहां के निवासी सिकन्दर के सम्बन्ध में कुछ भी नहीं जानते हैं और न उनके मध्य उस काल की कथायें ही प्रचलित हैं।

इसके पश्चात् पञ्जाब के जिले महाराज अशोक वर्धन के साम्राज्य में सम्मिलित हो गये थे कितास का स्तम्भ उसी काल का है। अशोक के पश्चात् हिंदी-यूनानी राजाओं का अधिकार पंजाब पर हो गया और २२० वर्ष तक उनका शासन रहा। जब हिन्दी-सिथियन जाति आई तो उसने हिन्दी-यूनानी राजों का पतन करके अपना राज्य स्थापित किया। इस काल का हाल केवल इस काल के राजाओं के मुद्राओं से मालूम होता है जो यहां मिलते हैं। ५३० ई० में मेहरकुल राजा यहां का राजा था। वह बौद्ध धर्म का विरोधी था।

उसके पश्चात् इतिहास का ६३१ ई० तक अंधकाल है। ६३१ ई० में इस भाग की यात्रा चीन दूत ह्वान सांग ने की थी। उस समय यह जिला काश्मीर के हिन्दू राजा के अधिकार में था और नवीं शताब्दी तक काश्मीर के हिन्दू राजा का शासन रहा। दसवीं सदी में काबुल के ब्राह्मण राजाओं का अधिकार इस जिले पर होगया। काबुल के ब्राह्मण राजा महमूद गजनवी के समय तक राज्य करते रहे। यह घराना इतिहास में काबुल के हिन्दू शाही वंश के नाम से प्रसिद्ध हैं। महमूद गजनवी के समय में अनन्दपाल और जयपाल राजाओं का जो वर्णन आता है वह राजा इसी काबुल के हिंदू शाही वंश के थे और लाहौर के राजा थे। भारत का समस्त सामान झेलम में फेंक दिया उसका कुछ भी वर्णन इस जिले के इतिहास में नहीं मिलता है।

यद्यपि बारहवीं सदी के आरम्भ काल में पञ्जाब पर मुसलमानों के अधिकार का वर्णन पाया जाता है। पर पूर्णरूप से मुसलमानों का राज्य पञ्जाब प्रान्त पर महमूद गौरी के (११९३ ई०) समय में हुआ था। मोहम्मद गौरी के प्रसिद्ध सिपाहियों कुतुब उद्दीन ऐबक तथा याल्दोज को इस जिले के निवासी गक्खर जाति ने बहुत परेशान किया था और उनसे कई लड़ाइयां लड़ी थीं अंत में गक्खर जाति के राजा ने मुसलमानी धर्म स्वीकार कर लिया और मुसलमान धर्म प्रचार करने में बड़ी सहायता प्रदान किया। १२०५ ई० में इसी जिले के धामियक नामी गांव में गक्खर जाति के लोगों ने मोहम्मद गौरी की हत्या की थी।

जहां कुशी नामक पुस्तक में वर्णन मिलता है खिल्जी सुल्तान जलाल उद्दीन ने १२१५ ई० में अपने एक सेना नायक को जूद पर्वतों पर भेजा उसने जाकर उस प्रदेश में खूब लूट मार की और बहुत सा सामान पाया। सुल्तान को भी वहां के रायकोकर सकनीन की पुत्री ब्याह में मिली थी।

जब सुल्तान नासिर उद्दीन (१२४६-६५में) भारत का बादशाह हुआ तो उलुग खां को बलबन का खिताब देकर जूद पहाड़ियों के निवासियों को परास्त करने के लिये भेजा था क्योंकि उन्होंने मुगलों का साथ दिया था। उसके पश्चात् जब बलबन स्वयं राजा हुआ तो भी उसने वहां जाकर वहां के निवासियों को दबाया था और बहुत से घोड़े नौकर लौटा था। झेलम जिले के उत्तरी भाग में अभी तक अच्छी नसल के घोड़े होते रहे हैं।

तैमूर के आक्रमण के पश्चात् भारत में विभिन्न राज्य स्थापित हो गये थे इसलिये इस जिले में भी कोई सत्ता बाकी नहीं रह गई थी और तब से १५२६ ई० तक यह जिला स्वतंत्र रहा और स्थानीय सरदार लोग शासन करते रहे।

बाबर—सांगदाकी स्थान से बाबर अपनी सेना को लेकर चला और सोहान स्थान पर लगभग एक बजे दोपहर नदी पार किया। बाबर ने तुज्क बाबरी में अपनी यात्रा वर्णन बड़ी रोचकता के साथ किया है। वह लिखता है :—

"बहरा से सात कोस पर उत्तर की ओर एक पहाड़ी है, जफार नामा तथा दूसरी पुस्तकों में इसे जूद की पहाड़ी कहते हैं। पहले मैं इस नाम से अनभिज्ञ था बाद को मुझे पता चला कि इस पहाड़ी पर दो जातियां निवास करती हैं जो एक ही पिता की वंशज हैं। इनमें से एक का नाम जूद और दूसरे का नाम जंतुवा है। प्राचीन काल से ही इस पहाड़ी, इल्स, यूलूसेस को शासक रही है। इनमें आपस में भाई चारे का बर्ताव है। वे एक दूसरे से अपनी इच्छानुसार वस्तुएं छीन नहीं सकती हैं। जैसा पहले से निश्चय है उसी के अनुसार वे वहां की उपज का बटवारा करते हैं उसके अतिरिक्त एक दाना भी वे एक दूसरे को लेते देते नहीं हैं। वे सेना में भी काम करते हैं। जूद तथा जन्तुवा जाति कई वंशों में विभाजित हैं। यह पहाड़ी जो बहराह से ७ कोस पर है दक्षिण-पश्चिम की ओर मुड़ती है और दीन-कोट के समीप समाप्त होती है। दीनकोट सिंध नदी पर स्थित है। इस पहाड़ी के एक ओर जूद तथा दूसरी ओर जन्तुवा जाति बसी है। इस जाति के सरदारों की पदवी राय होती है और उनके लड़के मालिक कहलाते हैं।

मलिक हस्तजंतुआ (जो इल्स और यूलूसेस का शासन था) की आधीनता का वर्णन करते हुये बाबर आगे लिखता है।

"मेरे कैम्प के चारों ओर भेड़ बकरियों के गिरोह चर रहे थे। चूंकि हिन्दुस्तान विजय करने की बात मेरे दिल में थी और बहराह, चेनाब, खुशाब तथा चिनपट जिनके मध्य में मैं इस समय था वे बहुत समय से तुर्कों के अधिकार में रही हैं, मैं इन्हें अपनी जायदाद समझता था इस लिये संधि अथवा युद्ध से मैं इन्हें प्राप्त करना चाहता था। इसलिये मेरे लिये आवश्यक था कि मैं वहां के निवासियों के साथ सद् व्यवहार के साथ पेश आऊँ दूसरे दिन हम कुछ देरी से चले इसलिये दोपहर की नमाज के समय कल्दाह कहार पहुँचे जहां हम ठहर गये। वहां चारों ओर नाज के हरे भरे खेत थे। यह स्थान जूद की पहाड़ी के मध्य में स्थित है और बहराह से १० कोस की दूरी पर है। जूद की पहाड़ी के मध्य में एक बड़ा तीन कोस वृत का सरोवर या झील है जिसमें समीपवर्ती पहाड़ी तथा वर्षा का पानी एकत्रित होता है। इसके उत्तर में चुम्बी की घाटी, पश्चिम की ओर पहाड़ी के समीप पानी का एक सोता है जो झील के ऊपर लटकती हुई पहाड़ी से निकलता है। इसे एक सुन्दर उपयुक्त स्थान समझ कर मैंने यहां एक बाग लगवाया यह बाग बागे-शफा के नाम से प्रसिद्ध है। यहां की जलवायु बड़ी स्वच्छ, स्वास्थप्रद है और स्थान बड़ा ही सुन्दर है।

दूसरे दिन सूर्योदय होने पर हम लोग कल्दाह कहार से चल पड़े। हुम्बात् घाट पर हम लोगों को पेशकाशे (नजराना लिये हुये लोग मिले और अपने राजभक्त होने की बातें कीं भोजन करने के समय तक हम लोग घाट के नीचे पहुँचे। घाट पार करने के पश्चात् मैंने सेना को संगठित किया और उसका दायां, बायां तथा मध्यवर्ती बाजू बनाया और बहराह की ओर बढ़ा। जब हम बहराह के समीप पहुँचे तो वहां के सरदार हमें ऊँट तथा घोड़े पेशकश रूप में लेकर मिले और राजभक्त होने का वचन दिया। दोपहर नमाज के पश्चात हम लोग बहराह के पूर्व बेहूत (झेलम) नदी के तट पर पहुँच कर ठहर गये। जिस स्थान पर हम लोग ठहरे वह घास का मैदान था हम लोगों ने बहराह के निवासियों को किसी प्रकार का कष्ट नहीं दिया।

बुधवार बाईसवीं ता० को मैंने बहराह के चौधरियों के सरदार को बुलाया और ४ लाख शाहरुखी देने के लिये कहा। उसके जमा करने के लिये आमदी प्रस्तुत कर दिये गये। जब मैंने सुना कि मेरी सेना के कुछ सैनिक बहराह वालों के साथ

अत्याचार कर रहे हैं तो मैंने अपनी सेना की एक टुकड़ी पता लगाकर उन्हें पकड़ लाने के लिये भेजा जब वे पकड़ कर आये तो उनमें से कुछ को मैंने तलवार के घाट उतरवा दिया और कुछ की नाकें कटवा ली तथा कैम्प के भीतर घुमाने का हुक्म दिया। चूंकि एक तुर्क की हैसियत से देश को अपना समझता था इस कारण मैं किसी प्रकार की लूट पाट सहन नहीं कर सकता था।

४ मार्च सोमवार के दिन मैंने बहराह प्रदेश को हिन्दूबेग के हाथ सौंप दिया।

नीलाब तथा बहराह के मध्य काश्मीर पहाड़ के प्रदेश में जाट तथा गूजर जाति के लोग रहते थे। ये लोग गक्खर जाति के हैं और जूद तथा जंतुवा लोगों की भांति ही हैं। उस समय वहां के शासक तातार तथा हाती गक्खर थे। तातार की राजधानी परहाला में थी। उसी समय हाती ने तातार पर आक्रमण करके उसका सत्यानाश कर डाला था। १३ मार्च को रविवार के दिन शान्ति स्थापना की व्यवस्था करके मैं काबुल की ओर लौट पड़ा। और कल्दाह-कहार में आकर रुका।

कल्दाह कहार में बाबर को समाचार मिला कि हाती लोगों पर अत्याचार कर रहा है इसलिये वह अपनी सेना लेकर परहाल की ओर लौट पड़ा। यह १५१९ ई० की घटना है। उसके पश्चात् १५२२ ई० १५२४ ई० तथा १५२५ ई० में बाबर फिर इस जिले में शान्ति स्थापित करने के लिये आया था।

शेरशाह सूरी—बाबर के बाद हुमायूँ राजा हुआ पर शेरशाह सूरी से परास्त होकर वह कंधार चला गया था। शेरशाह ने हुमायूँ के लौटने के भय के कारण तथा गक्खर जाति को दबाने के कारण अपनी सेना लेकर इस जिले पर चढ़ आया और सुल्तान सारंग नामी गक्खर सरदार को परास्त किया उसकी लड़की को लेकर अपने जनरल ख्वास-खां को दे दिया। उसने सारंग को कोड़े लगवा कर मार डालने की सजा दी थी और शरीर का चमड़ा निकलवा कर भूसा भराया था। रोहतास स्थान पर उसने एक किला बनवाया और वहां ३० हजार सेना रक्खी।

हुमायूँ—शेरशाह के लौटने के कुछ ही दिन पश्चात् हुमायूँ लौटा और उसने जिले के लगभग ५० गावों को लूटा पर जब इसलाइम शाह के सेना सहित बढ़ने का समाचार उसे मिला तो वह फिर काबुल लौट गया। उसके पश्चात् हुमायूँ फिर उसी मार्ग से भारत अंतिम बार आया इस बार रोहतास के किले के संरक्षक ने उसका सामना नहीं किया और भाग खड़ा हुआ।

अकबर—महाराज अकबर के समय में इस जिले का वर्णन नहीं मिलता है पर आईन अकबरी में अवाँ, बलूलीधान, दाय मार चाक, हवेली रोह-तास, धाब कहार दरवाजा, मखिआला, किरखाक, मलोत आदि स्थानों का वर्णन पाया जाता है। इन स्थानों पर अवां गक्खर, जानुहा, खोखर आदि जातियों के सरदार शासन करते थे।

जहांगीर—राजगद्दी पर बैठने के एक वर्ष पश्चात् इस जिले का भ्रमण किया था और उसने रोह-तास, टिल्ला भाक्रा (बकराला) और हटिया आदि स्थानों का सुन्दर वर्णन किया है। उस समय रोह-तास से गारगल तक का प्रदेश गक्खर जाति के अधिकार में था। इस जाति को जहांगीर ने जंगली बतलाया है और लिखा है कि वे सदैव आपस में लड़ते झगड़ते रहते थे। उसके पश्चात् अपने गद्दी पर बैठने के २० वर्ष बाद जहांगीर काबुल जाते समय पुनह जिले में आया और झेलम नगर में रुका। झेलम नदी को पार करने के लिये जहांगीर ने नावों का एक पुल बनवाया। ठीक उसी समय महाबत खां ने बंगाल से चार पांच हजार राजपूत लेकर उस पर आक्रमण कर दिया और जहांगीर तथा नूरजहां को पकड़ लिया। उसके बाद महाबत खां कुछ समय तक शक्तिशाली बना रहा। इस संबन्ध में जो घटना यहां घटी उसका वर्णन करना आवश्यक है। जब महाबत खां की सेना ने आक्र-मण किया और जहांगीर तथा नूरजहां को पकड़ लिया तो बहादुर रानी बचकर भागी और कुछ सैनिकों को लेकर पुल पार करना चाहा इतने में महाबत खां ने पुल में आग लगवा दी जिससे सेना नदी में डूब गई और बह गई। स्वयं नूरजहां का हाथी, कोचवान तथा उसकी गोद में बैठी हुई शहर-यार शहजादा की लड़की घायल हो गई। हाथी भी

चोट खाकर नदी में बह चला पर तीन चार गोता खाने के पश्चात् किनारे जा लगा। जब रानी ने देखा कि खुल्लम खुल्ला युद्ध में विजय प्राप्त न होगी तो उसने दूसरी चाल चली और अपने को भी गिरफ्तार करवा दिया उसके पश्चात् धीरे धीरे अफसरों को मिलाने लगी। एक दिन अफसरों की निगाह बचाकर जहांगीर को साथ लेकर बाहर निकल गई और लाहौर जाकर सेना एकत्रित कर महावत का सामना किया।

अंतिम मुगल सम्राटों के समय में पंजाब प्रांत ने भारतीय राजनीति में विशेष भाग लिया था। नादिर शाह, अहमद शाह दुर्रानी, तैमूर शाह दुर्रानी और जमन शाह की सेनाएँ इसी जिले होकर दिल्ली की ओर बढ़ीं थीं। उस समय दिल्ली के शासक भोग विलास में पड़ गये थे और आक्रमणकारी सेना का सामना उस समय तक नहीं करने के लिये उठते थे जब तक कि वह लाहौर या दिल्ली के द्वार तक नहीं पहुँच जाती थी। दुर्रानी लोग रोहतास के किले की सामरिक स्थिति को भली भांति जानते थे इस कारण उन्होंने वहां अपना गवर्नर नियुक्त कर दिया था।

सिक्ख—जब कि मुगल साम्राज्य का पतन हो रहा था सिक्ख लोग धीरे धीरे उत्थान कर रहे थे। १७६५ ई० में सिक्खों ने गुजरात की लड़ाई में गक्खर लोगों को पूर्ण रूप से परास्त कर दिया। उसके पश्चात् काला के गूजर चौधरियों ने उन्हें झेलम के पार आने का निमंत्रण भेजा। १७६८ ई० में जैसे ही अहमद शाह ने पी० फेरी सिक्खों ने घेरा डालकर रोहतास पर अधिकार कर लिया और सिंध नदी की सीमा तक अपना प्रभुत्व जमा लिया।

रणजीतसिंह—१८०१ में महाराज रणजीतसिंह इस भाग की गड़बड़ दशा देख कर धन्नी आए और विप्लवकारियों को दबा कर शासन सत्ता स्थापित किया उसके पश्चात् ४०० घोड़े लेकर लहौर वापस चले गये। १८०५ ई० में महाराज रणजीतसिंह और चनाब तथा झेलम के मुसलमान शासकों में संधि हो गई। १८१० ई० तक झेलम का समस्त जिला पूर्ण रूप से सिक्खों के अधिकार में हो गया। सिक्ख काल में इस जिले का शासन ठीक रूप से नहीं चला कारण कि जिले के विभिन्न सरदार सदैव एक दूसरे से लड़ते रहे और लूट, हत्या का बाजार सदैव गरम रहा। सिक्ख शासन करदारों तथा सरदारों के द्वारा होता था। जम्मू के गुलाबसिंह, झेलम के छत्रसिंह, उत्तमसिंह, छाछी सरदार तथा धन्ना सिंह आदि प्रसिद्ध शासक रहे।

जब अंग्रेजों के विरुद्ध द्वितीय सिक्ख युद्ध चला तो १८४९ ई० में इस जिले के समस्त शासक छत्रसिंह के साथी बन गये थे और चिलियान वाला तथा गुजरात की लड़ाइयों में वीरता के साथ अंग्रेजी सेना का सामना किया था। मेजर निकोलसन अँग्रेज सेनापति ने अपना प्रभुत्व जमाने के पश्चात् इन वीरों को प्राणदंड आदि की सजाएँ दी थीं।

अँग्रेजी शासन—२३ मार्च १८४५ ई० को झेलम जिले पर पूर्ण रूप से अँग्रेजी सत्ता स्थापित करके अँग्रेजों ने झेलम का जिला बनाकर पिंडदादनखां को जिले की राजधानी बनाया। उस समय झेलम जिले में पिंडदादन खां, चकवाल, तल्लागांव और जब्बी तहसीलें थीं। उसी साल रावलपिंडी से अलग करके रोहतास तहसील भी इसी में मिला दी गई। १८५० ई० में जब्बी की तहसील तोड़ दी गई। मखाद और पिंडीगेब के इलाके रावलपिंडी में मिला दिये गये। तहसील का शेष भाग तल्लागांव तहसील में मिला दिया गया। उसी समय रोहतास के स्थान पर पर झेलम तहसील बनाई गई और जिले की राजधानी पिंडदादनखां से बदल कर झेलम में कर दी गई। १८५१ ई० में रावलपिंडी से पब्बी इलाका निकाल कर झेलम तहसील में मिला दिया गया और कोहाली थाथी तथा नाथोट नामक गांव पिंडदादनखां से निकाल कर झेलम तहसील में कर दिये गये। १८१७ ई० तथा १८६३ ई० में भी तहसीलों में कुछ परिवर्तन किये गये।

विप्लव—जब १८५७ ई० में समस्त भारत में अँग्रेजों के विरुद्ध स्वतंत्रता का प्रथम संग्राम छिड़ा और सेना ने विद्रोह कर दिया तो झेलम के प्रधान अफसरों ने अपने जिले को योरुपीय सेना से खाली देख भारतीय सेना को तोड़ देने का विचार किया

और एक महीने के भीतर धोका देकर चौदहवीं तथा उन्तालीसवीं सेना को छिन्न-भिन्न कर दिया।

७ जुलाई को रावलपिंडी से कुछ योरुपीय सेना तोपों के साथ झेलम के लिये भेजी गई। इस सेना को आते देख चौदहवीं सेना के सिक्ख सैनिक भी इसके साथ हो गये। जब झेलम के सैनिकों ने देखा कि यह सेना आगे बढ़ रही है तो उन्होंने अपने अफसरों पर गोलियां चलानी आरम्भ कर दिया। सेना भंग हो गई और सैनिक अपने अपने लाइनों में जाकर अपनी रक्षा का प्रबन्ध करने लगे। धीरे धीरे यह वीर सैनिक गावों में चले गये। इन वीर सैनिकों ने कितने ही अँग्रेज अफसरों को युद्ध में मार गिराया था चौबीसवीं ब्रिटिश सेना के प्रधान कर्नल एलिस बुरी तरह घायल हो गये थे और कैप्टन स्प्रिंग मैदान में मार डाले गये थे। उसके पश्चात् कर्नल जिरार्ड ने अपनी अध्यक्षता में अँग्रेज सेना को उस गांव की ओर बढ़ाया जहां भारतीय सैनिक जाकर रुके थे। पर वहां भी अँग्रेज सेना हार कर पीछे लौटी। इसके पश्चात् भारतीय सैनिक दूसरे स्थानों को चले गये जो लोग काश्मीर गये वे वहां पकड़ लिये गये और अँग्रेजों को सौंप दिये गये।

अँग्रेजों ने अपनी सत्ता उखड़ते देख कर आपस में फूट पैदा कर दी और अपनी ओर लालच देकर लोगों को मिलाने लगे तथा विरोधी लोगों पर भीषण अत्याचार करने लगे। आखिरकार भीषण अत्याचार तथा धोके बाजी के पश्चात् अँग्रेज झेलम जिले में अपनी सत्ता स्थापित करने में पुनह् सफल हो गये।

जब से झेलम जिला अँग्रेजों के अधिकार में आया है तब से वहां के शासक डिप्टी कमिश्नर होते रहे हैं जिनमें कर्नल जे० एम० ब्रिस्टोव, मिस्टर आर्थर ब्रांडरिच और मि० जी० एम० ओगिलवी के नाम प्रसिद्ध हैं।

दर्शनीय स्थान

अहमदाबाद—यह नगर झेलम नदी के दाहिने किनारे पर बुरारी पहाड़ियों के समीप स्थित है। कुछ एतिहासिकों का कहना है कि सिकन्दर ने इसी स्थान पर झेलम नदी पार किया था। इसी के समीप बुकेफाला या भद्रवती नगरी प्राचीन काल में स्थित थी जिसके भग्नावशेष अब तक वर्तमान हैं। कहते हैं कि पहले अहमदाबाद के ही स्थान पर भेरा का प्राचीन नगर स्थित था। अहमदाबाद में प्राचीन भग्नावशेष हैं।

बाघन वाला—यह नगर पिंडदादनखां तहसील में स्थित है। यह रेलवे का स्टेशन है। इसके समीपवर्ती स्थानों पर कोयला निकाला जाता है।

भौन—यह स्थान चकवाल तहसील में स्थित है। चकवाल से पूर्व की ओर केवल ८ मील की दूरी पर स्थित है। नगर की जनसंख्या लगभग ७ हजार है। यहां स्कूल, डाकखाना, थाना आदि हैं। एक पक्की सड़क द्वारा यह नगर चकवाल से मिला है। यहां की जलवायु खुश्क तथा स्वास्थ बर्धक है।

चकवाल—यह नगर अपने नाम की तहसील की राजधानी है। यह झेलम नगर से लगभग ५४ मील पश्चिम की ओर स्थित है। यहां की जनसंख्या लगभग ८ हजार है। यहां एक बड़ा बाजार, डाकखाना, स्कूल, कालेज, अस्पताल, थाना तथा तहसील की कचेहरियां और सरकूट बंगला आदि हैं। पिंडदादन खां से रावलपिंडी जाने वाली प्रधान सड़क यहीं होकर जाती है। कचेहरी भवन के समीप फौज के ठहरने का मैदान है। यह एक प्राचीन नगर है। इसकी नीव जम्मू के मैर राजपूत ने डाली थी जिनके वंशज अब भी चकवाल के समीपवर्ती भूमि के भूमिपति बने हैं। यह अब भी मैर राजपूतों की राजधानी है। यह एक ऊँचे स्थान पर स्थित है। यहां गेहूँ तथा चने की मंडियां हैं। जूते चप्पल और सैंडिल बहुत सुन्दर तयार किये जाते हैं जिन पर सुन्दर कारीगरी भी की जाती है और बाहर भेजे जाते हैं। फूलकारी का काम बहुत अच्छा होता है।

दंदोत—पिंडदादनखां तहसील में एक बड़ी बस्ती है। यहां से होकर सिन्ध सागर रेलवे लाइन का खरेवा शाखा जाती है। यहां नमक तथा चूना निकालने की खाने हैं। यहां स्कूल, अस्पताल, डाक और तार घर थाना आदि हैं।

दारापुर—यह गांव झेलम तहसील में झेलम नदी के तट पर झेलम नगर से ३० मील पश्चिम की ओर स्थित है। पहले यहां दारापुर तथा दिलावर

नाम की दो बड़ी बस्तियां वर्तमान थीं जिनके भग्नावशेष अब भी दो बड़े टीलों के रूप में वर्तमान हैं। टीलों के खोदने पर प्राचीन कालीन सिक्के मकान तथा दूसरी वस्तुएँ मिलती हैं। यहां स्कूल, डाकखाना तथा कचेहरी भवन बने हैं।

धमक या धमयक एक प्राचीन बस्ती है प्राचीन भग्नावशेष पाये जाते हैं। यहीं पर गोक्खर जाति के किसी व्यक्ति ने मोहम्मद गौरी की हत्या की थी। इतिहास कारों ने इसका दमेक, दामियक, बरम्हेक और राथक आदि नामों से उल्लेख किया है। लाहौर से सीमा प्रान्त को जाने वाली प्राचीन सड़क पर स्थित है।

धंग्रोट—यह गांव पूंच तथा झेलम के संगम पर स्थित है। यहां नदी में मछली मारने का अच्छा व्यवसाय होता है।

दिलावर—दारापुर के समीप एक बस्ती है जहां प्राचीन भग्नावशेष हैं।

जलालपुर—इसका पुराना नाम गिरझाक है जिसका वर्णन आईन-अकबरी में सिन्ध सागर के गिरझाक नाम से मिलता है। जलालपुर से पीछे वाली मंगलदेव पहाड़ी पर जो किला है उसे अब भी गिरझाक कहते हैं। सम्राट अकबर के समय में इस नगर का नाम गिरझाक से बदल कर जलालउद्दीन अकबर के नाम पर जलालपुर कर दिया गया मुगलकाल में यह एक बड़ा नगर था। इसी के समीप बुकेफाला नगर प्राचीन काल में स्थित था जब कि सिकन्दर का आक्रमण हुआ था। कुछ इतिहास लेखकों का कथन है कि सिकन्दर ने इसी स्थान पर झेलम नदी पार किया था। यह नगर पिंडादादन खां तहसील में तहसील की सीमा पर झेलम नदी के तट पर स्थित है। यहां थाना, स्कूल अस्पताल तथा प्रजाकार्य विभाग के दफ़्तर हैं।

काला यह गांव झेलम नगर से चार मील उत्तर की ओर एक प्राचीन बस्ती है। यहाँ पर जैन मन्दिर का एक प्राचीन काला-स्तम्भ है शायद उसी के नाम पर इसका नाम भी काला पड़ गया है।

दक्षिण एक प्राचीन स्थान है। यहां झालर या सस्सी डा कल्लार का प्राचीन मंदिर है। मन्दिर बिगड़ी दशा में है। मन्दिर की लम्बाई सवा बाईस फुट, चौड़ाई १६ फुट, ऊँचाई साढ़े तेईस फुट है। भीतर की ओर साढ़े सात फुट वर्गाकार है। मंदिर प्राचीन काश्मीरी कला का बना है जिसमें प्राचीन काल की बड़ी बड़ी ईंटें लगाई गई हैं। अम्ब के मंदिरों की भांति यह भी है।

कल्लार कहार की झील जिले की नमक श्रेणी के उत्तरी ढाल पर स्थित है। झील का पानी खारी है। झील लगभग वृत्ताकार है और पाट लगभग एक मील तथा गहराई लगभग ४ फुट है। झील के समीप ही कल्लार कहार का बड़ा उपजाऊ प्रदेश है और उत्तर की ओर चुम्बा घाटी है। कहा जाता है कि पहले झील का पानी मीठा था। एक दिन एक स्त्री झील से पानी लेकर आ रही थी मार्ग में उसे एक साधु मिला और उसने स्त्री से पानी मांगा, स्त्री ने कहा पानी खारा है। साधु ने कहा 'ऐसा ही हो' तभी से झील का पानी खारा हो गया है।

जब बाबर ने १५१६ ई० में भारत पर आक्रमण किया था तो वह इसी झील पर आकर रुका था। स्थान को सुन्दर देख कर बाबर का मन लुभा गया और उसने झील के ऊपर पहाड़ी पर एक बागे-शफा लगवाया जिसकी देख भाल मुगल काल में होती रही है और अब भी बाग उजड़ी दशा में वर्तमान है।

झील के उत्तर में एक साधु की समाधि है। इस समाधि के सम्बन्ध में एक कहानी प्रचलित है कहते हैं कि किसी समय में एक साधु आ रहे थे मार्ग में उन्हें एक हिरण मिला और उनके पीछे हो लिया। साधु पहाड़ी पर आकर ठहरे और वहीं मर गये। हिरण को साधु के मरने पर चैन न मिला और उसने अपने प्राण वहीं त्याग दिये। इसके पश्चात् जो भी पशु वहां चरने पहुँच जाता

वहां जाने से बहुधा मनुष्य भी बीमार पड़ जाते थे। एक दिन मखदूम जहांनिया नाम साधु का उधर आगमन हुआ। उनके बस्ती के लोगों ने जिनका विवरण कह सुनाया। मखदूम साहब पहाड़ी पर गये और निवास किया उसके पश्चात् उन्होंने बस्ती के लोगों से कहा भाई वहां तो जिन नहीं रहता है वरन् कोई साधु निवास करते हैं। उसके पश्चात् वहाँ साधु के लिये समाधि बना दी गई तब से जो जानवर उस पहाड़ी पर चरने जाते हैं वह वहां की घास चर कर खूब मोटे ताजे हो जाते हैं। अब समाधि को लोग सखी अहो बाबा के नाम से पुकारते हैं। यह समाधि बौद्ध कालीन प्रतीत होती है।

खेवड़ा—नामक श्रेणी में स्थित है। यहां खानों से नमक तथा कोयला निकाला जाता है। यह नगर कोयले की उपज के लिये प्रसिद्ध है। यहाँ रेलवे स्टेशन, अस्पताल, कचेहरियां, थाना, डाक तथा तार घर आदि हैं। पिंड दादन खां तहसील का एक प्रसिद्ध कस्बा है और पिंडदादन खां से लगभग ८ मील उत्तर की ओर स्थित है।

कितास या कतास—यह स्थान पिंडदादन खां तहसील में पिंडदादन खां से १५ मील की दूरी पर नमक श्रेणी के मध्य में २००० फुट की ऊँचाई पर स्थित है। यहां एक सरोवर है तथा चारों ओर ब्राह्मणों की बस्ती है तीर्थ महात्म पुस्तक में इसका वर्णन मिलता है। यहां प्राचीन शिव मंदिर तथा दूसरे बहुत से मंदिर हैं।

कहते हैं कि जब सती ने अपने प्राण त्याग दिये तो शिव भगवान को बड़ा शोक हुआ। वे अपनी अश्रुधारा न रोक सके उसी से अजमेर का पुष्कर क्षेत्र तथा कतास सरोवर बने हैं। इस सरोवर की लम्बाई २०० फुट और चौड़ाई ९० फुट तथा गहराई २३ फुट है। सरोवर के भीतर ही भीतर स्रोतों से पानी निकलता रहता है। यहां वैसाखी पूर्णिमा को बड़ा भारी मेला होता है जिसमें भारतवर्ष के कोने कोने से लोग आते हैं। सरोवर में स्नान करने से लोगों के शरीर के समस्त रोग दूर हो जाते हैं। सरोवर के ऊपर एक ढाई फुट मोटी तथा १९ फुट ऊँची दीवार है। इसी के समीप ही चोव सैदान शाह स्थित है। कहते हैं कि कितास में ही पांडवों ने बनबास समय के बारह वर्ष व्यतीत किये थे। यहां प्राचीन कालीन नगर तथा दो किलों का भग्नावशेष अब भी वर्तमान है। यह बड़ा ही प्राचीन आर्य कालीन स्थान है।

कूसक—पिंडदादन खां में एक पहाड़ी चोटी पर बस्ती है। यह एक प्राचीन गांव है। यहां पर प्राचीन कालीन एक पुराना किला बना है जब जंजुवा राजाओं की यह राजधानी थी तो राणा रणजीत सिंह ने किले का घेरा डाल कर इसे जीता था। जंजुवा गांव समीप ही है जहाँ अब भी जंजुवा लोगों की बस्ती है और वे ही वहां के भूमिपति भी हैं। गांव की जब खोदाई हुई थी तो दो प्राचीन अनोखी मिट्टी की बोतलें मिली थीं। जो लाहोर म्यूजियम में रक्खी हैं। प्राचीन काल में यात्री इन बोतलों को लेकर शायद कितास जा रहे थे और शायद यहीं मर गये थे। बोतलों का पता नहीं चला कि वे किस काल की बनी हैं।

झेलम

यह नगर ३२°५६ उत्तरी अक्षांश तथा ७३°४७ पूर्वी देशान्तर पर स्थित है। जन संख्या लगभग २० हजार है। झेलम नदी के दाहिने तट पर बसा है। नदी से नगर की छटा बड़ी ही अनोखी दिखाई पड़ती है। पहाड़ियों का दृश्य भी बड़ा अनोखा है मुख्यतः जब पहाड़ियों पर बरफ पड़ी रहती है। रेलवे पुल से शीतकाल में बर्फीली पहाड़ियों का दृश्य बड़ा ही सुहावना लगता है।

नगर से लगभग एक मील उत्तर की ओर सिविल लाइन और सरकारी भवन तथा कचेहरियां आदि हैं। नगर से लगभग एक मील दक्षिण की ओर कंटोमेंट स्थित हैं। पहाड़ी प्रदेश होने के कारण वाटिकाएं कम हैं और वृक्षों का बढ़ना संभव नहीं होता है।

झेलम का प्राचीन नगर नदी के बाएं तट पर बसा था। सिकन्दर के समय यह बहुत प्रसिद्ध हो गया था। जहां आधुनिक नगर बसा है वहां पहले पहल कुछ मल्लाह जाकर बसे थे फिर कंटोनमेंट बनाया गया उसके बाद धीरे धीरे नगर बस

गया। झेलम का किला अन्दर कोट कहलाता है। नगर में दो प्रधान सड़कें हैं एक पूर्व से पश्चिम को और दूसरी उत्तर से दक्षिण को जाती है। नगर के मध्यवर्ती भाग में जहां ये सड़कें एक दूसरे को काटती हैं वहीं पर नगर की चौक है। जिसका कोई खास नाम नहीं है। झेलम नमक तथा दूसरी वस्तुओं के व्यापार का केन्द्र है। अभी हाल ही में १५ अगस्त को भारत के स्वतंत्र होने पर १६ अगस्त को पंजाब के बंटवारे का जो फैसला हुआ है उसके अनुसार पंजाब दो भागों में बंट गया है। पूर्वी भाग के गवर्नर श्रीमान त्रिवेदी जी ने कुछ काल के लिये झेलम में ही अपना प्रधान दफ्तर लेकर चले गये हैं जिससे वह वहां के हिंदू-मुस्लिम झगड़े को शान्त कर सकें इस से आशा की जाती है कि आगे चलकर झेलम नगर की महत्ता बढ़ जावेगी।

अपने जिलों की राजधानी होने के कारण यहां अस्पताल, स्कूल, कालेज, कचेहरियां, चच होटल, पुलिस दफ्तर, फौजी छावनी, जेल, सरकारी ट्रेजरी आदि के भवन बने हैं। अब यहां भारत सरकार की सेना का जमघट सा रहने लगा है।

स्टेशन के समीप मंगल सेन और देवी दास नामक दो प्रसिद्ध सराएँ हैं जहां पर दूर-दूर से यात्री आकर ठहरा करते हैं।

यहां पर म्युनिसपैलिटी है जिसमें दो बड़े सरोवर हैं। एक सरोवर कोट खां साहब में और दूसरा कोट सुल्तान तथा पिंडदादनखां के मध्य स्थित है। झेलम नदी से नगर को पानी पीने के लिये मिलता है। पीने के लिये पानी लेने के लिये झेलम नदी से नहर निकाली गई है। एक बड़े कुएँ से भी पानी लिया जाता है। कुओं का पानी खारा होता है।

इस कस्बे की नींव १६२३ ई० में खोक्खर राजदूत सरदार दादन खां ने डाली थी। उसके पश्चात् दूसरे सरदारों या राजाओं ने कोट सुल्तान तथा कोट खां साहब की नींव डाली। नमक की खानों के के कारण यह स्थान पहले से ही प्रसिद्ध था पर रेलवे लाइन के कारण इसकी ख्याति और भी बढ़ गई है। यहां कपड़ा बुनने, रंगने और पीतल के बर्तन बनाने का काम होता है। नमक, कोयला, नाज लुंगी, घी, लोहा, रेशम, फल, फर, ऊनी कपड़ा आदि का यह व्यापारिक केन्द्र है और पंजाब प्रान्त के विभिन्न भागों को सामान आदान प्रदान करता रहता है।

यहां कचेहरियां, स्कूल, पुलिस लाइन डाक तार घर, अस्पताल आदि हैं।

भवन नष्ट हो गये। इनका पता पड़ोस की खुदाई से चल सकता है। तल्ला गांव इसी नाम की तहसील का प्रधान स्थान है। यह जिले के पश्चिमी भाग में झेलम शहर से ८० मील उत्तर-पश्चिम की ओर स्थित है। यहां तहसील, थाना; डाकखाना बाजार स्कूल और अस्पताल हैं। प्रायः एक मील की दूरी पर एक पक्का बड़ा ताल और बाग है। कहते हैं अब से प्रायः ३०० वर्ष पूर्व अवान कबीले के एक सरदार ने इसे बसाया था। ऊँचे पठार स्थित होने से इसकी जलवायु स्वास्थ्यकर है।

शाहपुर ज़िला

स्थित तथा विस्तार

झेलम नदी के तट के समीप शाहपुर एक छोटा सा कस्बा है जहां पर शाह शाम्स की समाधि है। इसी कस्बे के नाम पर शाहपुर जिले का नाम रक्खा गया है। यह जिला ३१°३२ तथा ३२°४४ उत्तरी अक्षांशों और ७१°३७ तथा ७३°१८ पूर्वी देशांतरों के मध्य रावलपिंडी कमिश्नरी में स्थित है। इस जिले के उत्तर में अटक जिले की तल्ला गांव तहसील तथा झेलम नदी है। पूर्व में गुजरात जिला और चनाव नदी है जो इसे गुजरानवाला से अलग करती है। दक्षिण की ओर झांग जिला और पश्चिम की ओर मियांवाली जिला है। पूर्व से पश्चिम तक जिले की औसत लम्बाई ९६ मील और चौड़ाई उत्तर से दक्षिण औसत चौड़ाई ५० मील है। बीच में चौड़ाई २७ मील तथा पश्चिमी सीमा के समीप चौड़ाई ७२ मील हैं। क्षेत्रफल ४१०१ वर्ग मील है। जिले की राजधानी साराज है।

प्राकृतिक नदियां

इस जिले की खुशाब तहसील के उत्तर का भाग नमक श्रेणी का है। जिले का शेष भाग सिंध-गंगा के बड़े मैदान का है। जिले की भूमि की ऊँचाई समुद्रतल से ५५० फुट से ७०० फुट तक है। दक्षिण-पश्चिम के ओर जिले की भूमि ढालू होती गई है। चनाब और झेलम नदियाँ जिले में होकर प्रवाह करती हैं जिन्होंने धरातल से १५ या २० फुट नीची बड़ी बड़ी घाटियां बना दिया है। चनाव तथा झेलम के बीच का ऊँचा प्रदेश बार और झेलम तथा सिंध के बीच का ऊँचा प्रदेश थाल कहलाता है।

चनाव नदी और उसकी घाटी

चनाव नदी को जिले के निवासी चनहाल कहते हैं। यह नदी दक्षिण-पूर्व की ओर जिले की लगभग १५ मील तक सीमा बनाती है। चनाव नदी अपना मार्ग लगभग जल्दी जल्दी बदला करती है पहले यह नदी अपने वर्तमान स्थान से और पश्चिम की ओर बहती थी। वर्तमान स्थित से १० से १५ मील पश्चिम की ओर इसका पुराना तट है जिसे नक्का कहते हैं यह तट चनाब की घाटी को बार प्रदेश से अलग करता है। इस तट के नीचे वाले प्रदेश में बहुत से बलुहे पानी के सोते हैं। यह चनाब नदी की पुरानी शाखाएं हैं और बूढ़ी नाम से पुकारे जाते हैं। इनमें से एक का नाम मीढ़ और दूसरे का हल्की वाह है। हल्की वाह जिले की सीमा के कुछ आगे से प्रधान शाखा से अलग होती है। यह चिनहट तहसील से ऊपरी भाग में इतनी गहराई पर प्रवाह करती है कि बाढ़ का भय नहीं रहता है। बाढ़ केवल नदी के तट से २ से ६ मील चौड़ाई तक सीमित रहती है।

चनाब नदी की मिट्टी हलकी-बलुही तथा कम उपजाऊ है। चनाव नदी की बाढ़ से जो मिट्टी प्रति वर्ष आकर घाटी में पड़ती है वह झेलम की लाई हुई मिट्टी की अपेक्षा कम उपजाऊ तथा अधिक बलुही होती है। नदी की घाटी की भूमि का चप्पा चप्पा प्रतिवर्ष जोता-बोया जाता है इसलिये उपज प्रति वर्ष कम होती जाती है। कारण कि एक तो भूमि कमजोर है दूसरे पुरानी भूमि में जो कुछ शक्ति उपज की है वह प्रति वर्ष उपज करने के कारण और भी कमजोर होती जाती है। मार्च महीने से चनाव नदी में बाढ़ आनी आरम्भ हो जाती है और जुलाई तथा अगस्त मास में भीषण बाढ़ रहती है। नवम्बर से फरवरी तक नदी में पानी बहुत कम रहता है। नदी की बाढ़

रोकने के लिये बांध बनाये गये हैं। चनाव नदी के घाटी में नदी के समीप धरातल के बहुत समीप पाया जाता है और कुछ फुट खोदने पर ही कुवां तयार हो जाता है जिससे सिंचाई होती है और अधिक दूर जाने पर १३ से २० फुट गहराई तक कुएं बनाने पड़ते हैं। कुओं का पानी स्वच्छ तथा बड़ा मीठा होता है। लोअर तथा अपर चनाव नहरें बन जाने से सिंचाई में और भी अधिक सुविधा हो गई है पर लोग कुएं तयार करके भी सिंचाई खूब करते हैं। चनाव नदी तथा उसके बांध के मध्य की भूमि की सिंचाई नहरों से की जाती है। बार प्रदेश में नहरों के द्वारा सिंचाई होती है और बहुत अच्छी उपज होती है।

बार का उंचला प्रदेश तथा लोअर झेलम नहर

नक्का तट के ऊपर चढ़ने पर बार प्रदेश आ जाता है। इस प्रदेश की चौड़ाई लगभग २० मील है झेलम घाटी में जाकर यह प्रदेश फिर नीचा हो जाता है। बार प्रदेश की भूमि चनाव घाटी से बहुत भिन्न है। यहां की मिट्टी सख्त, नमकीन तथा मटियार है। पानी भी ४० से ८० फुट नीचे पाया जाता है। कुओं का पानी बहुधा खारी होता है। यहां घाटी वाली भूमि से कहीं अच्छी उपज होती. है। मिट्टी बड़ी उपजाऊ है। नहरों के द्वारा सिंचाई होती है। बार प्रदेश में अभी परती भूमि भी पड़ी है जहां चरागाह हैं जिनमें गांव वाले भेड़ तथा बकरियों के गल्ले चराया करते हैं। बार प्रदेश में वृक्ष भी ऊंचे होते हैं पर चरागाहों में बड़े वृक्षों का अभाव है झाड़ियां बहुत हैं। दक्षिण-पश्चिम की ओर शाहपुर तहसील में बार प्रदेश की भूमि कुछ बलुही हो गई है। बार प्रदेश में चनाव नदी की घाटी की भांति ही पुराने पानी के सोते हैं जो घुमावदार मार्ग बनाते हुये प्रदेश को पार करते हैं।

शाहपुर तहसील के पूर्व भंग जिले की किनरा पर्वतीय श्रेणी का भाग आ गया है। यहां पहाड़ी की सब से ऊँची चोटी १ हजार फुट ऊँची है जिस के ऊपर एक प्रसिद्ध साधुओं का मठ है। जिले की पहाड़ियों की बनावट अरावली पैहाड़ी की भांति ही यह पर्वतीय श्रेणी बहुत प्राचीन है। इसकी चट्टानों की तहें बहुत घिसी हैं। नमक श्रेणी से वह कहीं अधिक पुरानी है। जिले के दक्षिण की ओर आरा प्रदेश है। यह खेती कुओं की सिंचाई की सहायता से की जाती है। लोअर झेलम नहर के बन जाने से अब इस प्रदेश में बड़ी अच्छी खेती होने लगी है। गांवों के निवासी घोड़े खूब पालते हैं। यहां अच्छी नसल के घोड़े होते हैं।

निचली झेलम नहर

झेलम जिले के मुंग रसूल गांव के समीप से लोअर (निचली) झेलम नहर निकलती है और दक्षिण की ओर इस जिले की सीमा बनाती है। नहर की प्रधान शाखा भेरा तहसील में है। जिले में उसकी तीन खाश शाखाएँ हैं जिन्हें उत्तरी दक्षिणी तथा कादिर फिडर कहते हैं। इन तीनों शाखाओं से झेलम चनाव द्वाबा के समस्त प्रदेश की सिंचाई होती है। आरा प्रदेश की सिंचाई सुल्की शाखा से होती है। उत्तरी शाखा सरगोध से चलती है। जिले का अंतिम दक्षिणी भाग अब भी उजाड़ है क्योंकि भूमि या तो बहुत कड़ी है या बलुही है। वर्षा कम होती है और नहर का अंतिम भाग इस प्रदेश में है जिससे पानी कम पहुँच पाता है।

झेलम नदी

बार प्रदेश से डांडा किनारे से आगे बढ़ने पर झेलम नदी की घाटी आ जाती है। बनावट में झेलम घाटी, चनाव घाटी से मिलती जुलती है। पर झेलम घाटी का प्रदेश अधिक उपजाऊ, हरा भरा और सघन बसा हुआ है। यहां सुन्दर बाग तथा वृक्ष पाये जाते हैं। इसका मुख्य कारण यह है कि झेलम नदी कछारी उपजाऊ मिट्टी लाकर अपनी घाटी में डालती रहती है। झेलम का प्राचीन नाम वेदास्ता और हेदास्प है। झेलम जिले के लोग झेलम को झेलम या वहात कहते हैं। झेलम नदी काश्मीर के पहाड़ों से निकलती है झेलम नहर के समीप पहाड़ियों से मुक्त होकर मैदान में आती है शाहपुर के समीप यह धुर दक्षिण की ओर बहने लगती है और फिर चनाव से मिल जाती है। मार्च महीने से नदी में पानी चढ़ने लगता है और मई, जून मास तक औसत ऊँचाई तक पानी पहुँच जाता है।

जुलाई, अगस्त की भीषण वर्षा में भी भीषण बाढ़ आने लगती है। भीषण बाढ़ के समय नदी के सोते तथा नालियां नदी के दोनों ओर दूर तक समीप वर्ती भूमि को पानी से भर देते हैं और बाढ़ का पानी समस्त प्रदेश में पहुँच जाता है जिससे बोई हुई फसल भी नष्ट (यदि पानी अधिक समय तक रुका रहा) हो जाती है। पर बाढ़ के कारण नदी चारों ओर अच्छी उपजाऊ मिट्टी डाल देती है जिससे बाढ़ समाप्त होने पर सुन्दर अच्छे मिट्टी वाले खेत बन जाते हैं जहां गेहूँ खूब उगता है। जाड़े के दिनों में जब पहाड़ियों पर शीत काल की वर्षा होती है तो एक आध बार बाढ़ आ जाती है पर वह एक दो दिन से अधिक नहीं रुकती हैं। इसलिये फसल को हानि नहीं पहुँचती हैं। पंजाब प्रान्त की दूसरी नदियों की अपेक्षा झेलम नदी में पहले ही बाढ़ आनी आरम्भ हो जाती है।

झेलम नदी की घाटी शाहपुर में आकर २ मील से बढ़ कर १२ मील चौड़ी हो जाती है। साहीवाल के समीप उसकी चौड़ाई १५ मील हो जाती है। झेलम घाटी के एक ओर डाह तट और दूसरी ओर धाह तट स्थित हैं। इन दोनों तटों के मध्य नदी के कई प्रवाह हैं जहां किसी न किसी समय में नदी का प्रवाह रहा है। शाहपुर के समीप ये पुराने नदी के मार्ग दीधार कहलाते हैं और अधिक दक्षिण की ओर इन्हें रीन कहते हैं। रानीवाह सोता डाह तट के साथ साथ बहता है और झेलम घाटी की पूर्वी सीमा बनाता है। जौरा तथा हमाके स्थानों पर झेलम नदी डाह तट को रगड़ता हुआ बहता है और थाल प्रदेश को काटता जा रहा है। कई सौ वर्षों से नदी का प्रवाह पश्चिम की ओर रहा है और अब भी है।

नदी के पश्चिम ओर बहाव होने के कारण घाटी के पश्चिमी भाग में पतली उपजाऊ पट्टियां बन गई हैं इसके प्रतिकूल पूर्वी भाग में चौड़ा कछारी मैदान जहां बहुत अच्छी उपज होती है। यहां पानी धरातल से १५ से ५५ फुट के नीचे पाया जाता है। नदी से सरकार की ओर से और व्यक्ति गत रूप से बहुत सी नहरें निकाली गई हैं जिससे समस्त घाटी की भूमि सदैव भीगी रक्खी जा सकती है। नदी के तट पर बहुत घनी आबादी है। गांव बहुत समीप समीप बसे हैं। कुएं भी बहुत अधिक संख्या में हैं। चारों ओर हरा भरा मैदान दिखाई पड़ता है तथा गेहूँ के लहलहाते खेत दृष्टिगोचर होते हैं। यह भाग इतना अधिक उपजाऊ है तथा बस्ती इतनी अधिक घनी है कि इस भाग में समस्त जिले की जनसंख्या का तिहाई भाग बसा हुआ है। गांवों के आस पास सुंदर बाग दिखाई पड़ते हैं। मिमानी से शाहपुर तक का प्रदेश सबसे अधिक उपजाऊ तथा घना बसा है।

थाल मरु स्थल

झेलम नदी की घाटी से आगे पश्चिम की ओर थाल के मरू प्रदेश का आरम्भ हो जाता है। यह मरू स्थल समस्त सिन्ध-सागर द्वाब में फैला हुआ है। इसमें बीच बीच में बालू की पर्वतीय श्रेणियां उत्तर से दक्षिण को फैली हुई हैं। बालू की पहाड़ियों के मध्य कड़ी मिट्टी वाली पट्टियां वर्तमान हैं जहां चरागाह हैं। गांव बहुत कम और दूर दूर बसे हैं। पहिले गांव के निवासी गल्ले बानी करते थे और चरागाहों में भेड़ बकरी चराते थे तथा बाजरा, अरहर, उरद तथा मूंग की कुछ उपज कर लेते थे। पानी अधिक गहराई में पाया जाता है इस लिये कुएं भी बहुत कम हैं। लोअर झेलम नहर के बन जाने से अब यहां खेती होने लगी है और गेहूँ तथा चना की उपज की जाने लगी है। आशा की जाती है कि कुछ समय के पश्चात् यह एक वृहद उपजाऊ प्रदेश बन जायगा।

मोहार

साल्टरेञ्ज (नमक श्रेणी) तथा थाल रेगिस्तान के मध्य मोहार का पर्वतीय प्रदेश स्थित है। इस प्रदेश की भूमि बहुत कड़ी पथरीली तथा नमकीन है। यहां वर्षा बहुत कम होती है। कुओं का बनाना कठिन है जो कुएँ तयार भी किए जाते हैं उनका पानी खारी होता है। इसलिये नमक श्रेणी से आने वाली नदियों का पानी पीने के लिये प्रयोग किया जाता है। पहाड़ियों के मध्य तालाब बना लिये

इतिहास

शाहपुर जिले का इतिहास चार भागों में विभाजित किया जा सकता है (१) मुग़ल साम्राज्य का पतन काल (२) अफ़गान तथा सिक्ख काल (३) सूकर'चकिया काल (४) अँग्रेजों का शासन काल।

जिले में प्राचीन काल की सामग्री नहीं के बराबर है अतः प्राचीन कालीन इतिहास का वर्णन नहीं मिलता है। मोहम्मद शाह के समय में भेरा से शाहपुर तक का प्रदेश आनन्दवंश के खत्री राजा सलामत शाह के शासन में था। खुशाब और उसके अंतर्गत प्रदेश नवाब अहमद यार खां के अधिकार में थे। चनाब नदी का समीपवर्ती भाग तथा जिले का दक्षिणी भाग मुल्तान के गवरनर कौरामल के अधिकार में था। थाल बलोच लोगों की जागीर थी। मुग़ल काल में इस जिले के शासन की व्यवस्था खराब थी इस कारण चारों ओर से आक्रमण हो रहे थे और भीतर भी विप्लव की ज्वालायें सुलग रही थीं। सिक्खों ने इस मौके को अनुकूल समझ कर उससे खूब लाभ उठाया।

जब १७६७ ई० में अहमदशाह के विरुद्ध सिक्खों को पूर्ण विजय प्राप्त हो गई तो समस्त साल्ट प्रदेश पर छत्रसिंह ने अधिकार कर लिया। नमक श्रेणी तथा चनाब के प्रदेश पर भंगियों ने अधिकार जमा लिया। मीढ़ और मूसा, चूहा के जैल मिस्ल सरदार गंडासिंह और झन्डासिंह के अधिकार में आये। मिआनी तारासिंह को मिला और भेरा तथा अहमदाबाद मानसिंह को दिये गये जो १७६६ ई० में धन्नासिंह और चरतसिंह को मिल गये। शाहीपाल मिर्थातिवाना और कुशाब के मुसलमान सरदार स्वतन्त्र हो गये और सिक्खों का सामना करते रहे। झेलम पार तिवाना लोग मलिक शेरखां की सरदारी में नूरपुर तथा उसके समीपवर्ती प्रदेश के मालिक बन बैठे। तिवाना सरदारों ने अपनी शक्ति और दूसरे सरदारों को हराकर बढ़ा ली पर अन्त में महाराजा रणजीतसिंह ने इस तालुके को अपने राज्य में मिला लिया। द्वाब में भंगियों के अतिरिक्त झंग के सियाल सरदार भी शासक थे। इस प्रकार जिले के भिन्न-भिन्न प्रदेश में भिन्न-भिन्न शासक थे।

झंडासिंह और गंगासिंह के मरने के बाद भंगी संघ का कोई सरदार बाकी न रह गया और १७८१ ई० में महासिंह कादिराबाद का शासक बन बैठा। मीढ़ और मूसा के तालुका उसके हाथों में चले गये। दो वर्ष के पश्चात् उसने तारासिंह से मिआनी भी छीन लिया। १७९१ ई० में महासिंह की मृत्यु हो गई उसके बाद महाराणा रणजीत सिंह गद्दी पर बैठे उस समय उनकी अवस्था केवल १३ वर्ष की थी। लाहौर के चारों ओर छुटपन में ही उनकी धाक जम गई थी। वह अपना राज्य धीरे २ बढाना चाहते थे। १८०३ ई० में धन्नासिंह के मरने पर उसका पुत्र जोधसिंह भेरा का शासक बना पर वह प्रजा पर अत्याचार करने लगा इसलिये युवक राजा रणजीत सिंह अपनी सेना लेकर मिआनी से आगे बढ़ा और किले पर अधिकार कर लिया और नदी के दोनों पार की भूमि उसके अधिकार में आ गई।

१८०४ ई० में शाहीवाल तथा खुशाब के इलाका को रणजीत सिंह ने बिलोच सरदारों के हाथ सौंप और उनपर सालाना कर लगा दिया। यह कर बाद में बढ़ा कर १२ हज़ार कर दिया गया। बलोच सरदार कर न दे सके इस पर १८०९ ई० में रणजीत सिंह ने शाही वाल पर आक्रमण कर दिया और मंगोवाल में जाकर डेरा डाला। वहां से रणजीत सिंह ने सरदार अत्तार सिंह को कहला भेजा कि वह बिलोच सरदार को लेकर हाज़िर हो पर ऐसा न हुआ तो रणजीत सिंह ने पहले जाफ़िर खां पर और फिर फतेह खां पर आक्रमण कर के विजय प्राप्त कर ली और सरदारों को बन्दी बना कर लाहोर ले गये। जाते समय रणजीत सिंह ने जीते हुये प्रदेश को खड़ग सिंह को जागीर रूप में दे दिया। उसके पश्चात् शाहपुर बक्कर के समीपवर्ती छोटे राज्य, फारूका, कोलावाल और झंग के सियाल सरदारों के इलाके भी राजा के हाथ आगये।

१८१६ ई० में मिश्र दीवान चन्द्र की अध्यक्षता में एक सुदृढ़ सेना मीथ तिवाना के मालक के विरुद्ध राजा रणजीत सिंह ने भेजा। तिवानामलिक नूरपुर की ओर चला गया। उसने सोचा कि मरुस्थल में सिक्ख सेना कुएं बनाती हुई आगे मरुस्थल

में चली गई। आखिरकार मलिक तिवाना को अपने पुराने बैरी डेराइस्माईल खां के नवाब के राज्य में शरण लेनी पड़ी पर नवाब को पुरानी शत्रुता याद थी इसलिये उसने उन्हें मार कर बाहर निकाल दिया। उसके पश्चात् मलिक खां मोहम्मद तथा उसके पुत्र दो वर्ष तक इधर उधर मारे मारे फिरते रहे आखिरकार उन्होंने अपने जाति वालों से सहायता मांगी और एक सेना लेकर अपने पुराने नगर पर चढ़ आए और अचानक अधिकार जमा लिया। १८१८ ई० में सिक्ख शासक फिर एक बड़ी सेना लेकर लौटा और उसने मलिक को मार भगाया। उसके पश्चात् तिवाना प्रदेश नालवा के सरदार हरी सिंह को जागीर रूप में दे दिया गया जो १८३७ ई० तक उसके हाथ में रहा।

उसके पश्चात् खान मोहम्मद अपने लड़कों को साथ लेकर महाराणा रणजीत सिंह से लाहौर जाकर मिला। महाराजा ने उसे माफ कर दिया तथा झेलम के किनारे १० हजार रुपये की जागीर उसे देदी और छोटे सरदारों को अपनी सेना में स्थान दे दिये। खां मुहम्मद तथा उसके बड़े पुत्र अहमद यार खां के मृत्यु के पश्चात् मलिक खुदयार खां और उसके भतीजे क़ादिर बक्श ने राजा गुलाब सिंह को मिला लिया इससे खुदयार खां तथा उसके पुत्र फ़तेह खां का सिक्खों के मध्य बड़ा मान होगया।

जब हरीसिंह की मृत्यु का समाचार लाहौर पहुँचा और अहने पैतृक तालुकों को जागीर रूप में सिक्खों से मांगा। वह उसे दे दिये गये। उसके पश्चात ध्यान सिंह को मिलाकर वह अपनी जागीर बढ़ाता रहा। कुछ दिनों के बाद ध्यान सिंह मार डाला गया इसलिये फतेहसिंह चन्नू भाग गया पर फिर वापस आया और सरदार जवाहर सिंह का साथी बन बैठा। पर सरदार मंगल सिंह ने उन्हें भावलपुर मार भगाया जहां वह १८४४ ई० तक रहा। २८४४ ई० में हीरा सिंह की मृत्यु हो गई।

जब जवाहर सिंह मार डाले गये और तेजसिंह तथा दीना नाथ शक्ति में आए तो उन्होंने उसे कर का हिसाब देने के लिये बुलाया। फतेह खां हिसाब न दे सका इसलिये वह जेल में डाल दिया गया। आखिर लेफ्टिनेंट एडवर्ड ने अपना काम निकालने के लिये उसे जेल से मुक्त करा दिया। जब मुल्तान में बलवा हो गया तो लेफ्टिनेंट टेलर को छुड़ाने के लिये उसे मुल्तान भेजा गया। पर उसी समय सिक्ख सेना ने बलवा कर दिया और फतेह खां और उसके साथियों को घेर लिया आखिरकार वह मार डाला गया। उसके पश्चात् फतेह खां के पुत्र मलिक फतेह शेरखां तथा कादिर बक्श के पुत्र शेर मोहम्मद खां ने अंग्रेजों का बड़ा साथ दिया और सिक्ख सरदारों को दबाने में बड़ी सहायता प्रदान की। दूसरे सिक्ख-युद्ध के समय यह लोग अंग्रेजों के प्रधान सहायक रहे।

मुल्तान विजय होने और सिक्खों के परास्त होने के पश्चात् शेर मोहम्मद खां तथा फतेह शेर खां में झगड़ा होने लगा। दोनों जानते थे कि अंग्रेजों से इनाम मिलेगा इसलिये दोनों ही अपने राज्य की चाह में थे तथा अपने लिये प्रथम श्रेणी की सरदारी भी चाहते थे। सरकारी पदवी के दोनों इच्छुक थे।

अंत में अंग्रेजों ने दोनों को खुश रक्खा दोनों एक श्रेणी के सरदार माने गये। दोनों को ६००० रुपये सालाना की जागीरें दी गईं तथा २ हजार मलिक फतेह शेर खां को और ३,२४० शेर मोहम्मद खां को पेंशन दी गई। १८५७ ई० के भारत के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम जिसे अंग्रेज विप्लव के नाम से पुकारते हैं उस समय तिवाना सरदारों ने अंग्रेजों की सहायता की जिससे उन्हें फिर उनकी ओर से इनाम दिये गये और खां बहादुर की पदवी मिली।

शालीवाल सरदार फतेह खां ने भी रणजीत सिंह का साथ दिया उसे भी जागीर दी गई थी बाद में वह अंग्रेजों का साथी बना रहा और उसे अंग्रेजों ने २ हजार की जागीर तथा आजीवन पेंशन दी। उसके मरने के पश्चात् उसके पुत्र लांगरखां को पेंशन तथा जागीर मिली। उसके पश्चात् मोहम्मद हयात खां को जागीर तथा पेंशन मिली।

लम्बा वंश के लोग भी रणजीत सिंह के दोस्त बने रहे। गुरुमुख सिंह को सन तालुका मिला था पर जब अंग्रेजों ने अधिकार जमाया तो तालुका को अपने आधीन कर के गुरुमुख सिंह को नौशहर की

रियासत दे दी जिसकी सालाना आय लगभग चार हजार है। गुरुमुख सिंह की मृत्यु १८५३ ई० में हुई। उनके बाद उनके लड़के अत्तार सिंह राजा हुये।

१८५७ ई० में इस जिले ने बहुत कम भाग लिया था। यहां के निवासी अंग्रेजों के साथी बने रहे। शाहपुर में अंग्रेजों को २ लाख पचास हजार रु० की इकट्ठी रकम मिली थी जिससे उनके कार्य में बड़ी सहायता मिली थी।

जब से जिले पर अंग्रेजों का अधिकार हुआ तब से अब तक में जिले में बीसों बार परिवर्तन किये गये हैं पर जिले की उन्नति बराबर होती चली आई है। अंतिम परिवर्तन १९१८ तथा १९१७ ई० में किये गये। १९४७-४८ में यहां भीषण मार काट हुई।

जन संख्या।

इस जिले में केवल दस हजार संख्या से अधिक आबादी वाले केवल ८ नगर हैं। भियानी शाहपुर, सरगोधा नगरों में से प्रत्येक की जनसंख्या लगभग १० हजार के है। भेरा की जनसंख्या लगभग २० हजार, कुशाब की लगभग १४ हजार, शाहीवाल की लगभग १२ हजार और सकेसर की लगभग ८ हजार है। गांवों में कुल आबादी के लगभग ९० प्रतिशत लोग निवास करते हैं। जिन भागों में खेती होती है वहां प्रति वर्ग मील में ३६० मनुष्य रहते हैं। जिले में ६ बड़े नगर हैं। नगरों और गांवों की संख्या एक हजार से कुछ अधिक है।

शाहपुर जिले की कुल जनसंख्या लगभग ७ लाख है। नमक की श्रेणी में जलवायु अच्छी होने के कारण जनसंख्या बढ़ती जाती है। यहां के उपजाऊ प्रदेश के गांवों में बहुत घनी बस्ती है और प्रति वर्ग मील में ४१५ मनुष्य रहते हैं। बार और थाल के मरु स्थलों में नहरों के बन जाने से कृषि अधिक होने लगी है इसलिये आबादी भी बढ़ती जा रही है। शाहपुर जिले में दूसरे प्रदेश से लोग आकर बसते जा रहे हैं इस कारण जन संख्या और अधिक बढ़ती जा रही है।

भाषा

जिले में पंजाबी, लहँदा, हिन्दुस्तानी, उर्दू, हिन्दी पश्तो, राजस्थानी, पश्चिमी पहाड़ी, बलोच, काश्मीरी सिन्धी, गुजराती, बंगाली आदि भारतीय भाषायें बोली जाती हैं। पंजाबी भाषा के प्रयोग करने वालों की संख्या लगभग ९० प्रतिशत है। पञ्जाबी के बाद लहँदा और पश्चिमी हिन्दी भाषा बोलने वालों की संख्या है।

निवासी

जिले में मुसलमान, हिन्दू और सिक्ख तीन धर्म के मानने वाले निवास करते हैं। ईसाइयों की संख्या बहुत कम है। हिन्दू लोगों के मध्य जाति व्यवस्था प्रचलित है पर सामाजिक नियम उतने कठिन नहीं हैं जैसे कि भारत के पूर्वीय प्रान्तों में हैं। मुसलमानों की आबादी हिन्दुओं और सिक्खों से कहीं अधिक ८० प्रतिशत है। जिले में बलोच पठान, राजपूत, जाट, अवां, खोक्खर, अराईन, ब्राह्मण, सैय्यद, शेख, कुरैशी, अरोरा, खत्री, खोजा सोनार, तरखान, लोहार, कुम्हार, जुलाहा, नाई, तेली, माछी, कस्सान, धोबी, चमार तथा मोची, मीरासी, मुसल्ली, चुहरा आदि जातियों के लोग निवास करते हैं। ब्राह्मण, खत्री, अरोरा और सोनार जातियों को छोड़कर लगभग सभी जातियों के लोगों ने मुसलमानी धर्म स्वीकार कर लिया है। मुसलमानों में ९१ फीसदी सुन्नी कहे जाते हैं।

हिन्दू जाति के लोगों में सनातन धर्मी आर्य और राम दासिया तीन प्रकार के लोग हैं। सनातन धर्म में वैष्णव, शैव, देवी उपासक, सन्यासी, जोगी, वैरागी, उदासी आदि हैं। आर्य समाजी लोग अधिकतर नगरों तथा कस्बों में निवास करते हैं। सिक्खों के बीच भी कई वर्ग के लोग पाये जाते हैं। हजूरी सिक्ख गुरू गोविन्द सिंह के मानने वाले हैं। यह लोग दूसरों के हाथ का बना हुआ भोजन करना अच्छा नहीं समझते हैं। सखी सरवर के मानने वाले सिक्ख सरवरिया कहलाते हैं यह हलाल करके पशु का मांस खाते हैं। नानक पंथी सिक्ख लोग ग्रंथ साहब को मानते हैं और साथ ही साथ ब्राह्मणों का आदर करते हैं और मूर्ति पूजक हैं। पाकिस्तान का युग हो जाने से अब यहां बहुत ही कम हिन्दू और सिक्ख रह गये हैं।

तीर्थ तथा मेले

किराना स्थान पर कोह किराना को समाधि है। जहां फाल्गुण मास में अमावस्या से द्वितोया तक मेला लगता है। मेले में हिन्दू तथा मुसलमान दोनों भाग लेते हैं। शाहपुर में शाह शम्स और शाह-मोहम्मद की मजारें हैं यहां चैत मास के दूसरे पखवारे की अष्टमी, नवमी और दशमी को मेला लगता है। गिरोट में दिलाल भावन, कुशाव में हाफिज दीवान, शेखपुर में सुल्तान इब्राहीम, हजारा (चनाव तट) में शाह शाहम्दी, तुर्तीपुर में पीर अधम सुल्तान, सियाल शरीफ में ख्वाजा शमसुद्दीन निहांग में पञ्जपीर, पीर सब्ज शाहीशाह में शाह सहाबल, भेरा में पीर कायनाथ और धरम में सुल्तान हबीब की समाधि है।

लगभग सभी स्थानों पर साल की भिन्न-भिन्न तिथियों पर मेला लगता है जहां हिन्दू तथा मुसलमान दोनों ही भाग लेते हैं। दियलि भावन का मेला गिरोट में लगता है यहां बच्चों का मुंडन तथा जनेऊ संस्कार होता है। शेखपुर में सुल्तान इब्राहीम का मेला चैत्र तथा बैशाख के प्रथम दो रविवारों को लगता है। यहां लोग आकर चैत तथा बैशाख के रविवारों को अपने सिर का मुंडन कराते हैं जिससे वे साल भर बीमारी से सुरक्षित रह सकें।

भेरा तहसील के चाव नाम स्थान पर नाशाही फकीर लोग धार्मिक गान गाकर बीमार को बेहोश करते हैं तथा उसे पेड़ पर उल्टा टांग देते हैं। होश आने पर बीमार अपनी बीमारी से मुक्त होता बताया जाता है।

नरसिंह पहाड़, कथ और सकेसर में हिन्दू लोगों का मेला होता है जहां चारों ओर से लोग आते हैं। इनके अतिरिक्त नवाब साहब इनायत विजायत खुशाब में बादशाह साहब शाहपुर से सात मील की दूरी पर शाहयूसुफ हफीज रहमत बल्ला महादी झील के उत्तर नरसिंह पहाड़ और लोदी वाली सड़क पर सुल्तान मेंहदी, आमब में सुल्तान इब्राहीम थाल में महमूद शाहिद और खबक्की झील के पश्चिम सखी मोहम्मद खुशाल की समाधियां हैं जहाँ लोग अपने दुख निवारण के लिये आते हैं और प्रसाद आदि चढ़ाते हैं।

रहन-सहन

चरागाहों में लोग गल्ले बानी करते हैं और जानवरों को पानी पिलाने तथा दूध दुहने के अतिरिक्त उनके पास कोई काम नहीं रहता है इसलिये लोग सुस्त रहते हैं। खेतिहर प्रदेश में किसान लोग साल भर लगातार किसी न किसी काम में लगे रहते हैं। खास कर कुवों से सिंचाई वाले प्रदेश में तो लोग सदैव काम करते हैं। घर का काम स्त्रियों के ऊपर निर्भर रहता है। भोजन बनाना, आटा पीसना, गोबर उठाना मकान की सफाई करना, कपड़ा सीना, बच्चों की देख भाल करना और मर्दों को भोजन पहुँचाना सूत कातना आदि कार्य स्त्रियां करती हैं।

जिले के लोग सीधा सादा भोजन करते हैं। गरमी के दिनों में गेहूँ के आटे को दूध तथा गुड़ मिला कर सानते हैं और उससे रोटी तयार करते हैं। जाड़े के दिनों में इसी भांति ज्वार-बाजरे की रोटी तयार की जाती है। रोटी के साथ मट्ठा, दाल और तरकारी का प्रयोग होता है। थाल मरुस्थल में हिनमाना का प्रयोग भोजन में अधिक होता है।

जिले के मर्द लोग माफ्ला, कुर्ता, चादर पाग लुंगी, तैंबिल धोती आदि वस्त्र पहिनते हैं। स्त्रियां (मुसलमान) चोली, चोला भोच्छन, पायजामा आदि का प्रयोग करती हैं। हिन्दू स्त्रियां सूथन, चादर, कुर्ता, घाघर धोती आदि वस्त्र पहिनती हैं। स्त्रियों के कपड़े रंगीन और रेशमी अधिक होते हैं। अब फैशन वाले वस्त्रों का भी प्रयोग बढ़ने लगा है। स्त्रियां चांदी सोने के आभूषण धारण करती हैं।

जिले के किसानों के घर सीधे सादे होते हैं। घर में एक या अधिक कमरे होते हैं जिन्हें कोठी कहते हैं। सामने आंगन रहता है घर से लगी हुई जानवरों के लिये भी बगर बनाई जाती है। घर बनाने का काम गांवों में बढ़ई तथा कुम्हार करते हैं जिन्हें जब तक मकान बनता रहता है

भोजन मिलता है और काम समाप्त हो जाने पर वस्त्र तथा रुपये इनाम के रूप में दिये जाते हैं।

गांवों में लोग चपली तथा पीरकवड्डी का खेल खेलते हैं। ज़मींदार तथा उच्च श्रेणी के लोग जिनके पास घोड़े होते हैं वह चपली खेलते हैं। घुड़सवार एक स्थान पर एकत्रित होते हैं और अच्छी घुड़दौड़ होती है।

लड़के भांति भांति के खेल खेला करते हैं। जिनमें कवड्डी, चाबुक-सट्ट, गुल्ली डंडा, लुक-छिप आदि बहुत खेल खेले जाते हैं। समारोह तथा खुशी के समय नाच-गान भी होता है।

कृषि और सिंचाई

जिले की भूमि का बंटवारा सिंचाई के ध्यान से कई भागों में किया गया है।

(१) चाही—वह भूमि जिसकी सिंचाई कुवों तथा झालारों से होती है।

(२) नहरी—वह भूमि जहां की सिंचाई नहरों से होती है।

(३) सैलाब—वह भूमि जहां नदियों की बाढ़ आ जाया करती हैं।

(४) बारानी अव्वल वह भूमि जहां पहाड़ी नदियों का पानी आता है और बांध बना कर रोक लिया जाता है मुहार सरकिल में ऐसी भूमि को नालादार और पहाड़ी सरकिल में हेल कहते हैं।

(५) चाही-नहरी—वह भूमि जिसका कुछ भाग कुओं से सींचा जाता है और कुछ भाग बाढ़ वाली नहरों से सींचा जाता है।

(६) झालारी—वह भूमि जहां झालार से सिंचाई होती है।

(७) आबी—वह भूमि जहां धरती के नीचे से ऊपर सोते फूट आते हैं और भूमि नम कर देते हैं।

(८) बरानी दोयम—वह भूमि जहां ऊँचे प्रदेश से बहकर पानी आ जाता है और बारानी अव्वल में सम्मिलित नहीं है। मोहार में ऐसी भूमि को रतीदार और पहाड़ियों में मैरा कहते हैं।

(९) बारानी सोयम—वह तमाम भूमि जिस की गणना बारानी अव्वल तथा दोयम में नहीं है।

(१०) बंजर—वह खराब भूमि जो खेती के योग्य नहीं है। यदि ऐसी भूमि में ८ वर्ष तक खेती नहीं होती है तो उसे बंजर कदीम कहलाती है और इससे कम समय वाली बंजर जदीद कही जाती है।

(११) ग़ैर मुमकिन—वह तमाम भूमि जो कृषि के लिये उपलब्ध नहीं है और जहां वन हैं। वन साफ होने पर खेती हो सकती है।

खेती का काम बैसाख मास से आरम्भ हो जाता है जब कि बाढ़ वाली नहरों में पानी आ जाता है और वर्षा भी होनी आरम्भ हो जाती है। इस समय कपास बोने की भूमि तयार की जाती है और चरी आदि बोई जाती है। जून के अंतिम सप्ताह से खरीफ फसल के खेत तयार किये जाते हैं और सावनी फसल के बीज बोए जाते हैं। जुलाई अगस्त तक ज्वार, बाजरा, अरहर, मूंग, तिल, बरद मक्का आदि बो दिये जाते हैं। नवम्बर तथा दिसम्बर मास तक खरीफ की फसल तयार हो जाती है। रबी या हारी फसल के बीज सितम्बर मास की वर्षा के पश्चात् बोए जाते हैं। रबी की फसल मार्च-अप्रैल तक तयार हो जाती है। खरीफ और रबी के बीच तोरिया की फसल होती है जो जनवरी मास तक कट जाती है।

बीज साधारण रूप से या तो खेत में छींट दिया जाता है या माला-बांसा की सहायता से बोया जाता है। हल के पिछले भाग में नगारा में बांस का पोरा बांध दिया जाता है उसी में बोने वाला बीज डालता हुआ हल के पीछे पीछे चलता है। सींचने के लिये खेतों में कियारी तथा बरहे बना दिये जाते हैं। चाही भूमि में खूब पांस डाली जाती है चूंकि जिले में लकड़ी काफी पाई जाती है इसलिये गोबर की उपली बहुत कम बनाई जाती है और उसकी पांस खूब तयार की जाती है।

जिले में दो फसली भूमि नहीं है। बहुत कम किसान दो फसली खेती करते हैं। कुएं की समीप वाली भूमि में किसान साग तरकारी, मिर्च, धनिया सोया, मेथी, तम्बाकू, हल्दी, ईख आदि आदि वस्तुएं साल भर लगातार हमारे प्रान्त की भांति उगाते हैं।

गेहूँ की खेती जिले में सब से अधिक होती है। प्रत्येक भांति की भूमि में गेहूँ बोया जाता है। गेहूँ के खेत जनवरी महीने से ही जोते जाने लगते हैं और साल भर जोते जाते हैं। जब वर्षा नहीं होती है तो गेहूँ के खेतों को १० या १२ बार सींचना पड़ता है। यदि वर्षा अच्छी हुई और तेजी से पढ़ा तो उसे चरा दिया जाता है या ऊपरी भाग काट दिया जाता है। गेहूँ को लोग कनक कहते हैं।

गेहूँ के बाद कपास का नम्बर है। समस्त खेती वाली भूमि के दसवें भाग में कपास बो दी जाती है। नहरी तथा कुवों के समीप वाली भूमि में कपास बोई जाती है। जिले में देशी, विलायती तथा नम्बर ४ कपास बोई जाती है। कपास को दो बार निराना पड़ता है। अक्तूबर मास से कपास की चुनाई होने लगती है और जैसे जैसे पेड़ पकते तथा फूटते जाते हैं कुछ दिन के अन्तर दे देकर चुनाई दिसम्बर मास तक होती रहती है।

सरसों, अलसी तथा तिल की खेती जिले के ८ प्रतिशत खेती वाली भूमि में होती है। इसी प्रकार लगभग ८ प्रति शत खेती वाली भूमि में चना की खेती होती है। २ प्रतिशत भूमि में ज्वार और ८ प्रतिशत भूमि में बाजरा उगाया जाता है। आरा और झेलम घाटी में सैलावी तथा नहरी भूमि में चावल की खेती होती है। एक प्रतिशत भूमि में जौ बोया जाता है। मूंग, उरद तथा ज्वार और बाजरे के साथ बोए जाते हैं। नहरी भूमि तथा सिंचाई वाली भूमि में ईख की खेती होती है। साल्टरेञ्ज में तम्बाकू की अच्छी खेती होती है। लगभग ७०० एकड़ भूमि में मेंहदी बोई या लगाई जाती है। मेंहदी की पत्ती से रंग तयार किया जाता है। पोस्ता की खेती भी होती है। पहले इसकी खेती अधिक होती थी पर अब कम होती है। इससे अफीम तयार की जाती है। मरु प्रदेश में खरबूजा और छिनमाने की खेती अच्छी होती है। गाय, बैल, भैंस, भैंसें, भेड़, बकरी, घोड़े, खच्चर गदहे, ऊँट आदि जानवरों को किसान पालते हैं जो कृषि में काम आते हैं।

घोड़ों का मेला

जिले में अच्छी नसल के घोड़े पैदा होते हैं इसलिये शाहपुर तथा सरगोधा में घोड़ों का बड़ा मेला होता है। मेलों में दूर दूर से लोग घोड़े लेकर आते हैं। यह मेले आर्मी रिमाउंट डिपार्टमेंट की ओर से होते हैं। अच्छे घोड़े रखने वाले लोगों को सरकार की ओर से पारितोषिक दिया जाता है। मेलों के अवसर पर दूसरे पशु भी लाते हैं उन पर भी डिस्ट्रिक्ट बोर्ड की ओर से पारितोषिक मिलता है। मेलों में खेल-कूद की भी व्यवस्था की जाती है जिससे अधिक लोग मेलों में भाग ले सकें।

खनिज सम्पत्ति

नमक श्रेणी के समस्त दक्षिणी भाग में नमक की खाने वर्तमान हैं। नमक की खानों पर सरकार का अधिकार है और खानों का ठीका होता है। जिले में प्रति वर्ष लगभग डेढ़ लाख मन नमक निकाला जाता है। इस नमक का रंग ललामी लिये होता है।

खेवड़ा, नूरपुर तथा वार्छा में नमक से शोरा निकाला जाता है। काथा (तजुवाला) तथा सघरल) (अक्कर कोट) में खानों से कोयला निकाला जाता है। अनुमान किया जाता है कि इन खानों में लगभग १३ लाख टन कोयला वर्तमान है।

रक्स खयछी, मर्दवाल, धद्दर सोधी, कंदरा, गोसर, मोथ, गढ़ाली वाला और तिलियोतार वाला स्थानों पर पिट्रोल पाया जाता है।

खुशाब, खेवड़ा, भेरा बार की खानों से चूना निकाला जाता है। सोधी के समीप खांगर पत्थर निकाला जाता है। निकलने के समय यह बड़ा मुलायम होता है पर हवा लगने पर बहुत कड़ा हो जाता है।

साल्ट श्रेणी के नीचे, आरा प्रदेश, शाहपुर तहसील के दक्षिण और साहीवाल के उत्तर रेह बहुत होती है। खार और सज्जी से सोडा तयार किया जाता है।

कला-कौशल

जिले के लगभग प्रत्येक गाँव में कपास होती है इसलिये चरखा से सूत कातने और खद्दर तयार करने का काम गाँवों में होता है। गिरोट और खुशाब खद्दर के केन्द्र हैं। खुशाब में देशी सूत से

लुंगी, केश और बुलबुल चश्म नाम के सुन्दर कपड़े तयार होते हैं। खुशाब में रेशम काता, तथा बुना जाता है जिससे सुन्दर कपड़े तयार किये जाते हैं।

भेरा, खुशाब, नूरपुर आदि नगरों में भेड़, बकरी और ऊँट के ऊन से कम्बल, कपड़ा तथा लोई आदि सामान तयार किये जाते हैं। चाकू, छुरी, करौली आदि सामान भेरा, खुशाब आदि स्थानों पर तयार किये जाते हैं। नमक श्रेणी में संग मरमर निकलता है जिससे सामान तयार किये जाते हैं। भेरा, चिनिअट, मियानी आदि स्थानों में लकड़ी का सामान तयार किया जाता है। शाहीवाल में लकड़ी के रंग बिरंगे सामान तथा खिलौने तयार किये जाते हैं। मीथा तिवाना में चांदी के सुन्दर आभूषण तयार किये जाते हैं।

जब्ब, झंग आदि स्थानों में सुन्दर चमड़े का काम होता है और सैंडिल, चप्पल तथा जूते तयार किये जाते हैं। खुशाब, सुरक्की और कुफरी में मिट्टी के सुन्दर बर्तन तयार किये जाते हैं। भेरा, खुशाब, शाहपुर आदि नगरों में बारूद तयार की जाती है। बारूद से आतशबाजी के सामान तयार होते हैं। खुशाब में साबुन तयार किया जाता है। सरगोध भालवल, सिल्लान वाली, फुलरवां आदि स्थानों पर भिन्न भिन्न सामान तयार करने के कारखाने हैं।

व्यापार तथा आने जाने के साधन

शाहपुर जिले में फुलारन, भलवल, सरगोध और सिल्लान वाली में नाज की बड़ी मंडियां हैं जहाँ गेहूँ, तोरिया, रुई, चना, मक्का, बाजरा, सरसों आदि सामान जिले से बाहर भेजा जाता है। लगभग एक करोड़ रुपये का नाज प्रति वर्ष कराची भेजा जाता है।

कपड़ा, फुटकर सामान, धातु, चीनी, चावल, फल आदि सामान बाहर से जिले में मंगाया जाता है। जिले को निर्यात से अच्छी आय होती है। रेल सड़क तथा नदियों द्वारा व्यापार होता है। जिले में तीन प्रधान सड़कें हैं पहली सड़क झंग से गुजरात जाती है दूसरी लाहौर से डेराइस्माइल खां और तीसरी लाहौर से बन्नू जाती है। सड़कों पर बीच बीच में पड़ाव बने हैं।

जिले में नदियों के ऊपर नावें चलती हैं जो व्यापार में सहायक होती है। नदियों को पार करने के लिये भी नावों का प्रयोग किया जाता है। जिले में कुल १५ घाट हैं जिनके नाम कोहलियान, चंग सुर्लक सदकम्बोह, धाक, चापर, शाहपुर, खुशाब, टांकीवाला, हमोक, शेखोवाल, थट्टी हरगांव लांगर वाला, टटेरी जौरा कलां और मजोक हैं। इन नदी के घाटों से सरकार को लगभग तीस हजार सालाना की आय होती है।

जिले में जेचद्दाब, झेलम सिंध सागर शाखा और भेरा ब्रांच रेलवे लाइने हैं।

शासन

शाहपुर जिले का शासन रावलपिंडी के कमिश्नर तथा सुपरिन्टेन्डेन्ट के हाथ में है जिनके प्रधान दफ्तर रावलपिंडी में है। जिले के साधारण दफ्तर सरगोध में हैं। जिले का कलक्टर तथा रजिस्ट्रार भी है। एक असिस्टेन्ट कमिश्नर तथा तीन अधिक असिस्टेन्ट कमिश्नर हैं जिनमें से एक खजाने का मालिक और दूसरा मालगुजारी अफसर हैं। जिलाधीश तथा सेशन जज की कचेहरियां सरगोध में हैं पर कशाब तहसील का कुछ काम मियांवाली का जिलाधीश तथा सेशन जज करता है। इनके अतिरिक्त सब जज तथा छोटे जज हैं जो न्याय का काम करते हैं।

कुशाब तहसील का प्रबन्ध डिप्टी कलक्टर के हाथ में है जो शाहपुर में रहता है। प्रत्येक तहसील का प्रबन्धक एक तहसीलदार होता है जिसकी सहायता के लिये नायब तहसीलदार भी रहता है। समस्त जिले में २१ कानूगो तथा २६२ पटवारी हैं।

भेरा, सरगोध और शाहपुर में मुन्सिफों की कचेहरियां हैं जहां मुन्सिफ न्याय करते हैं। इनके अतिरिक्त आनरेरी मजिस्ट्रेट भी काम करते हैं।

सरकारी अफसरों की सहायता के लिये जैलदार इनामखोर, मुखिया आदि होते हैं।

प्रसिद्ध स्थान

भेरा—भेरा नगर शाहपुर के २० मील पूर्व झेलम नदी के बाएं तट पर स्थित है। तहसील

की राजधानी है। जनसंख्या लगभग २० हजार के है। यहां की म्यूनिसपैलिटी का निर्माण १८६७ ई० में हुआ था। नगर के चारों ओर एक दीवार है जिसका कुछ भाग पक्का तथा कुछ कच्चा है। दीवार में ८ द्वार हैं। लाहोरी द्वार पूर्व की ओर और थान वाला द्वार उत्तर की ओर है। यह दोनों प्रधान द्वार हैं। जिले भर में यह नगर सब से अच्छा है। नगर के सभी घर पक्की ईंट के बने हैं। नगर में बहुत से प्राचीन मकानात हैं, जिनकी कारीगरी तथा पच्चीकारी बड़ी अनोखी है। नगर के बाहर कुछ सुन्दर वाटिकाएं हैं जिनमें थानवाला तथा मीरन सय्यद मोहम्मदी की वाटिकाएं देखने योग्य हैं। नगर में स्कूल, सराय, थाना, डिसपेंसरी स्त्रियों का अस्पताल, पशुओं का अस्पताल, टाऊन हाल और दो हाई स्कूल हैं।

यह पुराना नगर है। पुराना नगर नदी के दाहिने किनारे पर था। बाबर ने इस नगर का वर्णन अपनी किताब में किया है। १५१९ ई० में बाबर ने यहीं अपना डेरा डाला था। किसी समय यह नगर काबुल के ब्राह्मण राजाओं की राजधानी रहा है।

नवीन भेरा नगर की नींव १५८० में शेरशाह सूरी के समय में पीर काया नाथ के निवास स्थान पर पड़ी। पीर साहब के चेले अब भी वहां रहते हैं। आईन अकबरी में इस नगर का नाम लाहोर सूबे के अन्दर आता है। यह महाल का केन्द्र था जहां से ५ लाख की मालगुजारी अकबर को मिलती थी। यहीं मुद्रा तयार किया जाता था। नूरुद्दीन ने नगर को नष्ट कर डाला था उसके पश्चात् भङ्गी मिस्ल के सरदारों ने इसे फिर बसाया। यहां खोजा और पिराचा लोगों की बस्ती है जो काबुल के साथ व्यापार करते हैं। कपड़ा, साबुन, लोहे का सामान लकड़ी का सामान, पत्थर का सामान, फेल्ट आदि नगर में तयार किये जाते हैं।

प्रति वर्ष नदी नगर का कुछ भाग बहा ले जाती है जिससे लोगों को हट कर दूर घर बनाना पड़ता है। नगर के चारों ओर मिट्टी की एक दीवार बनी है जिसमें चार द्वार हैं। लाहौरी द्वार पूर्व की ओर और काश्मीर द्वार उत्तर की ओर स्थित है।

यह एक प्राचीन नगर है। बाबर ने इसका वर्णन अपनी किताब में किया है। तैमूर के पश्चात् सरदार लाल खां तथा जाफर खां इस नगर के शासक थे। शेरशाह सूरी ने नगर को अच्छी उन्नति दी। ईदगाह उसी की बनवाई हुई है। पुराने मकान, किला, बाग आदि सभी नदी में बह गये हैं और नगर की बहुत कम प्राचीन भाग शेष रह गया है।

नगर में नवाब अहमद यार खां, बादशाह साहब, हजरत पीर दस्तगीर की समाधियां हैं।

नगर से कपास, ऊन, घी, सूती कपड़ा बाहर भेजा जाता है। तहसील, थाना, स्कूल, अस्पताल, सराय और टाऊन हाल आदि भवन नगर में हैं। यहां से डेरा इस्माइल खां, मियां वाली, बन्नू, तल्लां गांव को सड़कें जाती हैं। शीतकाल में नदी के ऊपर नावों का पुल बना दिया जाता है। यह सिंध सागर ब्रांच रेलवे का स्टेशन है। यहां म्यूनिसपैलिटी है।

शाही वाल

सरगोधा से झंग जाने वाली सड़क पर स्थित है जन संख्या लगभग ८ हजार है। नगर के समीप ही शाही वाल नहर है। नगर के चारों ओर कच्ची दीवार है जिसमें ६ द्वार हैं। पूर्व में लाहोरी द्वार तथा उत्तर में काश्मीर द्वार है। यह पुराना नगर है। बिलोच सरदारों ने इसे बसाया था। १८६७ई० में यहां की म्यूनिसपैलिटी बनी थी।

नगर में लड़कों तथा लड़कियों के लिये स्कूल अस्पताल, जानवरों का अस्पताल, सराय, थाना, टाउन हाल आदि भवन हैं। नगर के चेयरमैन तहसीलदार हुआ करता है। यहां आनरेरी मजिस्ट्रेटों तथा सिविल जज की कचेहरियां हैं।

सकरी गलियों का था। १८६९ ई० में नए नगर की नीव पड़ी और डैवीसगंज बसा। प्राचीन काल से ही यह नगर नमक के लिये प्रसिद्ध है। प्राचीन नगर का नाम शमशाबाद था। शमशाबाद नदी के बहजाने पर शाहजहां के ससुर की देखभाल में माधो दास तथा शिवराम ने इस नगर को बसाया। भेरा नगर की भांति इस नगर की भी उन्नति और अौनति मुग़ल साम्राज्य के साथ ही साथ हुई। १७८७ ई० में महासिंह (रणजीत सिंह के पिता) ने पुनह इसे बसाने का प्रयत्न किया। नमक का संग्रह होने के कारण यह लूनमियानी कहलाने लगा। रेल बन जाने से अब यहां के द्वारा नमक का व्यापार बन्द हो गया है पर चूना अब भी बनाया और बाहर भेजा जाता है।

यहां १८६७ ई० में सर्व प्रथम म्युनिसपैलिटी बनी। यहां तहसीलदार म्युनिसपैलिटी का चेयरमैन है। नगर में थाना, अस्पताल, टाऊनहाल, स्कूल, सराय तथा धरमशाला है। अदालत की कचेहरियां भी हैं।

सरगोध

२२ फरवरी १९०३ ई० में सरगोध नगर की नीव पड़ी १९०९ ई० में सरगोध का सिविल स्टेशन भी इसमें शामिल कर लिया गया। १९१४ ई० में म्युनिसपैलिटी बनी। नगर के ८ भाग हैं। जुम्मा मसजिद, गुरुद्वारा, आर्य समाज, मिशन रीडिंग रूम, म्युनिसिपल हाल, स्कूल, जेलघर, रुदकिंग पुस्तकालय यहां के प्रसिद्ध भवन हैं।

नगर में कपास कातने के लिये ८ पुतलीघर हैं। सिविल स्टेशन में प्रजा विभाग, मौज रियाजन्ट दफ्तर नहर दफ्तर, डाकघर, रेलवे दफ्तर, डिस्ट्रिक्ट बोर्ड शेशन जज कचेहरी; पुलीस लाइन तहसील थाना, जेल, सिविल विश्रामघर आदि हैं। जिले की राजधानी बन जाने से नगर की महत्ता और भी अधिक बढ़ गई है जिससे सरकारी कर्मचारियों के रहने के लिये सिविल लाइन में बंगले बन गये हैं निजी लोगों ने भी अपने बंगले बनवा लिये हैं। नगर की जन संख्या अब लगभग १५ हजार के है।

शाहपुर

शाहपुर एक छोटा सा नगर है। जनसंख्या लगभग ६ हजार के हैं। झेलम नदी से दो मील की दूरी पर बसा है। शाहपुर के समीप नाथूवाला, जलालपुर और कोटला सैयदन गांव हैं। शाह की समाधि नगर के समीप स्थित है जहां प्रति वर्ष एक बड़ा मेला लगा करता है। लाहौर से डेरा इस्माइल खां वाली सड़क पर नगर स्थित है। यह नगर सरगोध से तेईस मील और खुशाब से ५ मील की दूरी पर स्थित है। यहां एक बड़ा बाजार है।

नगर में चार स्कूल हैं नगर से बाहर सैयद क़िला के आगे सिक्ख किले के खंडहर हैं। यह एक नोटी फाइड एरिया का नगर है।

सिविल स्टेशन शाहपुर

१८४९ ई० में झेलम नदी की भीषण बाढ़ ने नगर का सत्यानाश कर दिया था शाहपुर नगर से ३ मील पूर्व की ओर लाहोर वाली सड़क पर यह सिविल स्टेशन बनाया गया। यहां पर एक बाजार है। नहरों सड़कों तथा वाटिकाओं से नगर सुसज्जित है। यहां एक बड़ा अस्पताल, दो स्कूल, तीन सरोवर तीन सुन्दर वाटिकाएं, तीन विश्रामघर और एक सराय हैं।

जिले की राजधानी हट जाने से नगर को धक्का पहुँचा है पर फिर भी रेलवे स्टेशन हो जाने से उन्नति की आशा है। अब यहां तहसील की कचेहरियां आदि हैं। पहले जो जेलघर था अब वहां सैनी टोरियम है।

भालवाल

यह एक नाज की मंडी है। यह १९०१ ई० में खोली गई। यह जब द्वाब रेलवे लाइन पर बनाई गई और इसका नाम भालवाल गांव के नाम पर रक्खा गया है। भेरा नगर से ग्यारह मील दक्षिण-पश्चिम और भालवाल से २८ मील पश्चिम स्थित है। लोअर झेलम नहर से सींचे जाने वाले झेलम के उपजाऊ चकों के मध्य स्थित होने के कारण यहाँ पर चारों ओर से खूब नाज एकत्रित होता है जिससे यह एक बड़ी मंडी है यहां से

नाज वाहर भेजा जाता है। यह सब तहसील की राजधानी है।

भाल वाल से चारों ओर चकों को सड़कें जाती हैं जिससे भेरा-भाल वाल, शाहपुर-चकरामदास तथा शाहपुर लाक और कोट आदि चकों को सड़कें जाती हैं।

इस मंडी में तीन रुई के कारखाने, तीन बड़ी योरुपीय दुकानें, थाना, सब तहसील, डिसपेंसरी, स्कूल, डाक तथा तार घर, सराय, विश्राम घर, लगभग ढाई सौ दुकानें आदि हैं। मंडी की जनसंख्या लगभग ८ हज़ार है। प्रति वर्ष यहां से कई लाख मन नाज दूसरे स्थानों को भेजा जाता है।

फुलखाँ मंडी

फुलखां स्टेशन पर यह मंडी १९०३ ई० में खोली गई है। यह जेचद्वाब रेलवे लाइन पर है। भेरा से ८ मील दक्षिण की ओर स्थित है। भेरा तहसील के पूर्वी प्रदेश, चकों और समीपवर्ती प्रदेश के गांवों का गल्ला यहां एकत्रित होता है और फिर यहां से करांची भेजा जाता है। गेहूँ, तोरिया और रुई यहां की मुख्य निर्यात वाली वस्तुएं है। प्रति वर्ष लगभग ५ लाख मन सामान बाहर भेजा जाता है।

मंडी की जनसंख्या लगभग ३ हजार के है। यहां २ रुई के कारखाने, दुकाने, डाक-तारघर थाना स्कूल, सराय, योरुपीय दुकानें, विश्रामघर आदि हैं। कस्बे का प्रबंध कस्बे की कमेटी के हाथ में है।

सिल्लां वाली मंडी

सिल्लां वाली स्टेशन जो कि जेच द्वाव रेलवे पर स्थित है वहां यह मंडी १९०३ ई० में खोली गई। मंडी की गणना नोटी फाइड एरिया वाले कस्बों में है। कस्बे की कमेटी कस्बे का प्रबन्ध करती है।

मंडी से चारों ओर खेतिहर प्रदेश को सड़कें गई हैं जिससे चारों ओर के गांवों की उपज मंडी में आती है और फिर यहां से कराची भेजी जाती है झेलम चकों में यह सब से बड़ी मंडी है। लगभग २०० गांवों का सामान यहां आता है। ये गांव लोअर झेलम नहर से अपनी सिंचाई किया करते हैं। प्रति वर्ष इस मंडी से गेहूँ, तोरिया और रुई आदि सामान (लगभग ८ लाख मन) कराची भेजा जाता है।

मंडी में चार रुई के कारखाने, ५ योरुपीय बड़ी दुकानें, थाना, स्कूल, तार-डाक घर, अस्पताल, सराय दुकानें, विश्राम घर आदि हैं। जनसंख्या लगभग ५ हज़ार है।

अम्ब

इस जिले में सब से प्राचीन स्थान अम्ब है। यह नमक श्रेणी में सकेसर से ५ मील की दूरी पर स्थित है। यहां पहाड़ी कंदराओं के मध्य तीन मंदिरों के भग्नावशेष हैं जिनके देखने से पता चलता है कि किसी समय में यह एक प्रसिद्ध स्थान रहा होगा। पंजाब सरकार ने इन भग्नावशेषों की सुरक्षा के लिये प्रबन्ध किया है। मंदिरों की बनावट काश्मीरी कला की है।

अम्ब से पूर्व की ओर एक पुरानी लम्बी दीवार है जिसमें एक द्वार है। सकेसर के ऊपर बौद्ध मन्दिर है। पहाड़ी के इस प्रदेश में जगह जगह पर शिला के रंग बिरंगे बड़े चबूतरे से बने हैं जिन्हें बतलाया नहीं जा सकता कि क्या हैं पर प्रतीत होता है कि प्राचीन हिन्दू अथवा बौद्ध काल की समाधियां हैं क्योंकि चबूतरे में चौकोर विभिन्न रंगों की चार शिलाएं एक दूसरे में घुसेड़ कर रक्खी गई हैं।

खूरा

नमक श्रेणी में कथवई से २ मील उत्तर-पूर्व स्थित है। यहां १८८८ ई० में एक शिला लेख मिला था जो लाहौर के अजायब घर में रक्खा है। इस शिला लेख से पता चलता है कि यह बौद्ध काल की है। मही सरू पंथी साधु रोत-सिद्धवर्धी का नाम शिला लेख में है। शिला लेख में नरचीरा नामक नगर का वर्णन है जो शायद वर्तमान नौशरा नगर है।

नमक श्रेणी में जगह जगह पर प्राचीन काल के मुद्रे पाए गये हैं जो दसवीं तथा ग्यारहवीं सताब्दी के हैं।

बार प्रदेश

चनाव तथा झेलम नदियों के मध्य बार प्रदेश

में २७० भीटे हैं जिनमें पुरानी ईंटें तथा मिट्टी के बर्तनों के टूटे-फूटे भाग शामिल हैं। शायद ये प्राचीन गांवों तथा नगरों के स्थान रहे हों। मियानी से तीन मील पश्चिम उच्छी के समीप नोगजो के ६ टाम्ब हैं जिसे वहां के लोग चक सब्ज कहते हैं। यहां हिन्दी सिथियन काल की दो मुद्राएं मिली हैं जिन से उस काल के राजाओं का पता चलता है।

तख्त हजारा जो यहीं पर मियानी में है कहते हैं कि पहले इसका नाम जहांगीर नगर तख्तहजारा था। इसका वर्णन आईन अकबरी में है। यहां पुराने मुगल शाही फकीरों की समाधियां हैं।

पञ्जपीर

नमक श्रेणी में तख्त हजारा के समीप ही स्थित है। किसी काल में यह भी एक बड़ा नगर रहा होगा कहते हैं कि यहीं पर पांडवों ने अपने बनवास काल में निवास किया था। मुसलमानों का कहना है कि यहाँ पांच फकीरों ने निवास किया था जिनकी कब्रों के निशान समीप ही पाए जाते हैं। पर इस स्थान पर मुगल काल के पहले कुछ सिक्के मिले थे जिससे पता चलता है कि वे बहुत प्राचीन हैं।

यहीं पर गुञ्जियाल स्थान है जहां पर प्राचीन काल की बनी हुई एक बावली या वान हैं।

मियांवली ज़िला

१—प्राकृतिक वर्णन

स्थिति, क्षेत्रफल, और नाम

मियांवली पञ्जाब के रावलपिंडी विभाग का सब से दक्षिण-पश्चिमीय जिला है। यह ७१ व ७२ डिगरी पूर्वीय देशान्तर रेखाओं और ३१ व ३३ डिगरी उत्तरी अक्षांश रेखाओं के बीच में स्थित है। इसका क्षेत्रफल ४३६८ वर्गमील है। इसमें ४६४७ मीलें सिंधु के इसी ओर हैं। केवल खेल नाम की तहसील सिन्ध के पश्चिम में है इस तहसील का क्षेत्रफल ७११ वर्ग मील है। जिले की पूरी लम्बाई उत्तर से दक्षिण को १८० मील है। इसकी चौड़ाई मियांवली और 'इसा खेल' की तहसीलों में से होकर करीब ५० मील है। लेकिन भक्कर में यह ७० मील तक चौड़ा हो गया है। भक्कर पूर्व की ओर झेलम नदी से कुछ ही मील उधर तक फैला हुआ है।

जब नया उत्तरी-पश्चिमी सीमान्त प्रान्त १९०१ में बना तो पुराने बन्नू जिला की दो तहसीलें मियाँवली और इसा खेल और पुराने डेरा इस्माइल खाँ जिले की दो तहसीलें भक्कर और लियाह उस सूबे से निकाल दी गईं। इनसे मिलकर मियांवली का नया जिला बना। इसका मुख्य दफ्तर मियांवली में रखा गया, जो मियांवली नाम की तहसील का मुख्य कस्बा था। पहले मियांवली और इसा खेल के उपविभाग का अफसर भी यहीं रहता था। मियांवली का अर्थ है, 'मियां का।' यह नाम एक छोटे गांव का रखा गया था, जिसे एक सन्त मियाँ अली ने बनाया था। मियां आदरभाव दिखाने की एक उपाधि है। यही अब नये जिले के मुख्य दफ्तर का केन्द्र है। यह खान्दान अधिक महत्वपूर्ण होता चला गया और इस गांव के पास 'कच्ची' नामक तहसील का मुख्य दफ्तर बनाया गया। कुछ दिनों बाद इसी 'कच्ची' तहसील का नाम मियांवली कर दिया गया। भक्कर और लियाह की तहसीलें पुराने डेरा इस्माइल खां जिले का एक उपविभाग बनाती थीं और हालां कि यह उपविभाग नया जिला बनने पर हटा दिया गया था परन्तु फिर से स्थापित कर दिया गया और इसका मुख्य दफ्तर भक्कर में रखा गया। किसी प्रकार लियाह की तहसील बाद में मुजफ्फरगढ़ जिले में बदल दी गई (१ अप्रैल १९०९ से) और अब भक्कर के उपविभाग में केवल एक तहसील है और मियांवली के जिले में केवल तीन तहसीलें हैं।

सीमाएँ

जिले के उत्तर में अटक और कोहाट के जिले

हैं। इसके पश्चिम में बन्नू और डेरा इस्माइल खाँ के जिले हैं। दक्षिण में लियाह की तहसील है। और पूर्व में इससे लगी हुई झाँग शाहपुर और अटक के जिले हैं। ऊपरी आधे हिस्से में जिला उत्तरी-पश्चिमी सीमोत्तर-प्रदेश से पहाड़ियों की एक शृंखला द्वारा अलग है। ये पहाड़ियां इसा खेल की तहसील को घेरे हुए हैं। सिन्ध के पार आजकल पंजाब का कोई ऐसा टुकड़ा नहीं है (केवल इसा खेल की तहसील को छोड़कर) जहां पठानी बस्ती हो। बाकी पश्चिमीय सीमा सिन्ध नदी की तली में है। सिन्ध के इधर का हिस्सा 'सिन्ध-सागर द्वाब' का काफ़ी भाग घेरे हुए है। यह द्वाब झेलम और सिन्धु नदियों के बीच का है।

साधारण आकार

यदि हम मियांवली के नक्शे को एटलस में देखें, तो पता चलेगा कि इस जिले की अजीब शक्ल है। यह आदमी के ऊपरी धड़ की तरह है जिसके मुँह का सामना पूर्व को है। मियांवली तहसील चेहरा और गले का कुछ हिस्सा बनाती है क्योंकि इसकी सकेसर पहाड़ी इस तरह झुकी हुई है कि बिल्कुल एक नुकीली नाक सी मालूम पड़ती है। इसा खेल की तहसील सिर का पिछला हिस्सा बनाती है, भंगी खेल सिरे का एक चोटी की तरह निकला हुआ है। भक्कर तहसील धड़ का निचला आधा भाग बनाती है।

प्राकृतिक विभाग

उत्तर की दो तहसीलें सिर का भाग बनाती हैं ये दक्षिण की 'भक्कर' नाम की तहसील से इतनी भिन्न हैं कि हम इन दो भागों का अलग-अलग वर्णन करेंगे।

उत्तरी तहसीलें

जिले के उत्तरी सिरे पर कोहाट की सिन्ध और खटक पहाड़ियों के बीच में इसा खेल की तहसील सींग की तरह निकली हुई है। इसका दूसरा नाम भंगी खेल है। यह जंगली और पहाड़ी प्रदेश है। इसमें एकदम ऊँची पहाड़ियां और गहरे नाले हैं। चपटी पहाड़ी चोटियों पर नगर के दोनों तरफ या पहाड़ी चश्मों की तलियों के सहारे खेती होती है। इस सींग के आधार पर पहाड़ियां दो हिस्सों में बँट जाती हैं। एक श्रेणी जिसका नाम मैदानी या खटक नियाजी है, इसा खेल के उत्तर और पश्चिम को घेरे हुए है। यह एक धनुष के आकार की है। यह बाद में डेरा इस्माइल खां जिले की खिसोर और पनियाला पहाड़ियों से जा मिली है। ये दर्रा-तंग पर मिलती हैं। दर्रा-तंग, एक दर्रा है जिसे कुर्रम नदी के पानी ने काट दिया है। खिसोर की पहाड़ियाँ इसा खेल की तहसील की दक्षिणी सीमा के किनारे-किनारे फैली हुई हैं और फिर नदी के समानान्तर चली गई हैं। ये मियांवली तहसील की दक्षिणी सीमा तक इसके पूर्व में नदी के किनारे-किनारे चली गई हैं। दूसरी श्रेणी आधार से सिन्ध की तंग धारा के द्वारा अलग हो गई है। यह दक्षिण-पूर्व की ओर मियाँवली की तहसील से होकर गई है, और सकेसर पर 'साल्टरेंज से मिल गई है। यह ढाल मियांवली तहसील के मुख्य भाग से एक छोटा सा भाग अलग करता है।

इसका नाम खुदरो है। इसमें जमीन रही है और छोटी-मोटी पहाड़ियों के टीलों से भरी पड़ी है। इसमें बहुत से नाले और पहाड़ी झरने भी बहते हैं जिन्होंने जमीन को काट दिया है। इस श्रेणी और खटक नियाजी के बीच का टुकड़ा एक साधारण घाटी है जिसके चारों तरफ पहाड़ियों का घेरा है। इसके दक्षिण में हलकी रेतीली भूमि है। यह धीरे धीरे खुशब तहसील के थल से पूर्व में और भक्कर के दक्षिण में मिल गई है। घाटी के मध्य में बड़ी नदी सिन्ध बहती है। इसके दोनों ओर भंगी खेल की पूर्वी सीमा के किनारे-किनारे चट्टाने हैं और इसीलिये यह नदी बहुत कम चौड़ी है। इसकी धारा बहुत तंग है। जब यह बहती हुई कालाबाग के आगे निकल जाती है और तब इसका पानी बहुत चौड़े प्रदेश में होकर बहता है। इस टुकड़े की मुख्य विशेषताएँ ये हैं (१) आस पास की पहाड़ियां पहाड़ी झरनों द्वारा मैदानों को पानी पहुँचाती हैं। मैदान एक प्रकार की घाटी सी बनाते हैं और (२) सिन्धु पानी

पर्याप्त मात्रा में बहा लाती हैं और अपनी सहायक नदियों के लिये प्रसिद्ध है। नदी के ऊँचे किनारों के ऊपर की ज़मीनें खेती के लिये विशेषकर पहाड़ियों के पानी या स्थानीय वर्षा पर निर्भर रहती है। सिन्धु की बाढ़ें भी खेती के योग्य उन ज़मीनों को पानी देती हैं जो इसके विस्तृत प्रवाह के आस-पास हैं। कुर्रम सिन्धु के मुकाबले में कुछ भी नहीं है, परन्तु फिर भी एक बड़ी जल धारा है यह इसा खेल की तहसील में तंग दर्रे पर प्रवेश करती है और तहसील के दक्षिणी भाग में से होकर सीधी पूर्व को बहती है। फिर यह सिन्धु के पानी में मिल जाती है। साधारणतया यह एक छोटा और आसानी से पार की जा सकने वाली पहाड़ी स्रोत है किन्तु बरसात में यह बन्नू की पहाड़ियों से बहुत अधिक मात्रा में पानी लाता है। ये बाढ़ें बहुत समय तक नहीं ठहरतीं। पर जब नदी बढ़ी हुई होती हैं तो धारा की तेजी व बालू की कमज़ोर प्रकृति की वजह से इसको रोकना असम्भव हो ज़ाता है। नदी पानी देती है किन्तु नहरें बहुत थोड़ी हैं। इस पानी से इसी खेल की तहसील के दक्षिण की ज़मीनों का काम चलता है।

इसकी प्राकृतिक विशेषता यह है कि जिले का ऊपरी आधा भाग चार बड़े प्राकृतिक विभागों में बँट जाता है (१) भङ्गी खेल, इसकी स्थिति और दशाएँ अपने ही ढंग की है (२) टूटा-फूटा प्रदेश जो मुख्य पर्वत से नमक-श्रेणी के ढाल द्वारा अलग होता है यह ढाल कालाबाग से सकेसर तक चला गया है और इसका नाम खुदरी (खराब ज़मीन) या पाखर पड़ा है और पहाड़ियों से घिरा हुआ मैदान जिसमें शेष दो तहसीलें भी शामिल हैं इस तरह वे तहसीलें विभाजित हो सकती हैं (३) सिन्धु की घाटी, (४) सिन्धु के ऊँचे किनारों और पहाड़ियों के बीच का पठार या मियांवली तहसील के बिल्कुल दक्षिण में, खुशब का थाल, इसा खेल तहसील के दक्षिण में कुर्रम नदी से निकलने वाली नहरों से सींचे जाते हुये गांवों का समूह पाचवाँ विभाग बनाता हैं। यह विभाग प्राकृतिक नहीं है, केवल बनावटी है।

भक्कर तहसील

ज़िले का दक्षिणी आधा हिस्सा जिसमें भक्कर तहसील है, दो बड़े प्राकृतिक हिस्सों में बंटा हुआ है: (१) सिंधु की घाटी या सिंधु नदी के दो ऊँचे किनारों के बीच के प्रदेश का वह भाग जो उस बनावटी सीमान्त रेखा के पूर्व में है जिस से ज़िला डेरा इस्माइल खां मियांवली से अलग होता है, और (२) थाल, यह बड़ा रेतीला रेगिस्तान है। ऊँचे किनारे के ऊपर का घास का मैदान भी इसी में शामिल है। नदी अपने ऊँचे किनारे से काफी पीछे हट गई है, इसलिए सिंधु नदी के पूर्वी हिस्से में ऊँची पटरियों और धारों के द्वारा बाढ़ लाई जाती है। ये मियांवली की तरह हैं, मगर इससे ज्यादा चौड़ी भी हैं। ज्यादा पश्चिम में गांवों को पानी सीधा नदी से मिल जाता है।

थाल

भक्कर तहसील का थाल दो प्राकृतिक हिस्सों में तकसीम किया गया है, जिनके नाम थाल कला और डगर हैं।

थाल

यह समूचा टुकड़ा २,४५१ वर्ग मील के क्षेत्रफल में फैला हुआ है। यह समस्त क्षेत्र अपनी काश्तकारी के लिए कुओं की सिंचाई पर निभर है। जहाँ सिन्ध का पानी बहकर निचली थाल की भूमियों में आ ज़ाता है वहां जरूर कुओं की जरूरत नहीं पड़ती मगर ऐसे स्थान बहुत कम हैं। इस हिस्से में कम बारिश होती है। यहां की ज़मीन रेतीली है, यहां पेड़ बिलकुल नहीं हैं। इधर-उधर चरागाह अलबत्ता दिखाई पड़ते हैं। इन्हीं वजहों से यह पंजाब के सबसे ज्यादा ऊजाड़ और सुनसान टुकड़ों में से है। इसका अधिकतर भाग बिल्कुल रेगिस्तान है, जो ऊसर और बेजान है। यहां पर चिड़ियां और जानवर ही देखने को नहीं मिलते बल्कि बनस्पति का भी कहीं नाम नहीं है। यह प्रदेश उत्तर में सबसे ऊंचा है, इसका ढाल एकदम दक्खिन की तरफ़ ढालू होता चला गया है। थाल कलाँ इस टुकड़े के सारे पूर्वी भाग में बसा है। ऊंची बालू की पहाड़ियों की कतारें, ज्यादातर

हिस्से में उत्तर-पूर्व से दक्षिण-पश्चिम को चली गई हैं। इनके बीच-बीच में सख्त जमीन की तंग तलियाँ हैं, मगर यहां भी रेत की बहुतायत है। थाल के बीच में पहाड़ियाँ नीची हो गई हैं और बनावट बिगड़ गई है। थाल कलाँ के पच्छिम में डग्गर का प्रदेश आता है।

पहाड़ियां यहां निचली हैं और एक कतार नहीं बनातीं और बालू भी कम दीख पड़ती है। परन्तु डग्गर की खसूसियत यह है कि इसका केन्द्रीय भाग मज़बूत और चपटी जमीन की एक तङ्ग पट्टी से बनी है जो एक नदी की तरह उत्तर से दक्खिन को डग्गर के गांवों के मध्य में चली गई है। कुओं की कतार इस पट्टी में पाई जाती है यहां से डग्गर का नाम पड़ा। डग्गर प्रदेश के पच्छिम में पोवाह नाम का प्रदेश है। यह सिन्ध के किनारे है। सिन्ध का तट ऊंचाई में करीब २० फीट है। पोवाह उत्तर में करीब तीन मील चौड़ा है, उत्तर में यह बहुत ऊबड़-खाबड़ और रेतीला है, परन्तु दक्खिन में कम चौड़ा और चपटा हो गया है। इसमें नदी के किनारे के गांव ज्यादा हैं। ये गाँव ऐसी जगहों पर बने हैं जहां नदी की बाढ़ नहीं पहुँच सकती। ऊंचा प्रदेश जो नदी के किनारे के पास है ढाला के नाम से पुकारा जाता है।

दृश्य

जिले का ऊपरी आधा हिस्सा देखने के लायक है। भंगी खेल की नंगी पहाड़ियां आम तौर से अच्छी नहीं लगतीं परन्तु इसके उत्तर की तरफ बहुत से ख़ूबसूरत हरे टुकड़े (भूमि के) हैं जो अक्सर काश्त से भरपूर रहते हैं। इनके चारों तरफ ऐसे मन को लुभाने वाली पहाड़ियों का घेरा है। नालों में पेड़ और झाड़ियाँ उगी हुई हैं। इन पहाड़ियों की चोटियों से नज़ारा बहुत तारीफ के लायक दिखाई देता है। पहाड़ियाँ २,००० से लेकर ४००० फीट तक समुद्र की सतह से ऊंची हैं, लक्कर पहाड़ी की सबसे ऊंची ४,५०० फीट से भी ऊंची है। इसका नाम सितकई सीर है। सारे जिले में सबसे दर्शनीय स्थान कालाबाग है जहां सिन्ध पहाड़ियों से अलग होती है। नदी के दोनों तरफ की पहाड़ियाँ बिच्छू की पूँछ की तरह फैली हुई हैं। इनके सामने एक बड़ा मैदान है और पीछे कुछ दूरी पर पहाड़ियाँ हैं। ये सब आंख को खुश करते हैं। कुकरनवाला बन्धा नाम का एक गाँव जो मरी के दूसरी तरफ वाक्य है और कालाबाग के ऊपर का कुछ मीलों में फैला हुआ प्रदेश एक अनोखा स्थान है। यहाँ से सूर्यास्त के समय का दृश्य बड़ा मनलुभावना लगता है। मैदानी और ढाक की श्रेणियां नंगी और खराब हैं। सिन्ध की घाटी बिल्कुल समतल है और जाड़ों में यहां मीलों तक हरी-हरी फसलें दिखाई पड़ती हैं। बीच-बीच में कहीं बालू का द्वीप या सेंटों का घना जंगल भी पड़ जाता है मियाँवली और इसाखेल की तहसीलों के ऊंचे प्रदेश पहाड़ी झरनों से कटे हुए हैं और सूखा पड़ने वाले साल में यह प्रदेश बुरी तरह से खुश्क दीखता है। परन्तु जिस साल बारिश अच्छी हो जाती है उस साल समस्त प्रदेश हरियाली का एक टुकड़ा मालूम पड़ता है।

मियांवली की तहसील में जो खुदरी नाव का टुकड़ा है वह देखने में इतना खराब है जितना पार करने में मुश्किल। खासतौर से उत्तर में इसका दृश्य बहुत खराब है। किसी प्रकार सकेसर की पहाड़ी एक बड़े समतल प्रदेश के केन्द्र में एक ऊँची इमारत की तरह खड़ी है हरियाली से परिपूर्ण और अच्छी खासी ठंडी है (यह समुद्र की सतह से ४९९२ फीट है)। यहां मियांवली शाहपुर और अटक—इन तीन जिलों से लोग अपनी तन्दुरुस्ती बनाने के लिए आते हैं। 'सकेसर' नाम दो अक्षरों 'शुक' और 'ईश्वर' से बना है। 'शुक' का अर्थ होता है 'तोता' और 'ईश्वर' से मतलब देवता का है। शुकेश्वर के माने तोते।देवता' हुए। वास्तव में पहाड़ी की शक्ल एक लम्बी हरी चिड़िया से मिलती जुलती है। किसी दिन सवेरे जब सूरज साफ निकला हो अगर हम पहाड़ी की चोटी पर चढ़ जाएं तो चारों तरफ का नज्जारा बहुत सुहावना प्रतीत होता है। खास तौर से अगर वर्षा होने के बाद हम चढ़ें तो हमें उत्तर-पूर्व की तरफ काश्मीर

पहाड़ियों तक फैला हुआ एक अद्भुत दृश्य दिखाई देता है। इसके एक ओर को सिन्धु बहती है और दूसरी ओर झेलम। उत्तर-पश्चिम और पश्चिम में कोहाट पहाड़ियों (शेख बुदीन और तख्त सुलेमान तक) का दृश्य दिखाई देता है। पूरब में हम दूर तक चपटा प्रदेश देख सकते हैं और चनाब की भी एक झलक मिल सकती है। दक्षिण में बड़े थाल प्रदेश में कोई वस्तु देखने योग्य नहीं है।

इस जिले के ऊपरी आधे हिस्से में घाटी के अन्त में पहाड़ियों के आ जाने से समतल मैदानों का दृश्य कई प्रकार का हो गया है। लेकिन ज्यों ही हम मियांवली थाल की दक्षिणी सीमा पार करते हैं फिर दृश्य बुरा लगने वाला आता है और हमें चारों तरफ समतल भूमि के अलावा और कुछ नहीं दिखाई देता। पूर्व में तो रे का बड़ा भारी समुद्र दीख पड़ता है। सिन्धु नदी की घाटी का दृश्य जरूर कुछ अच्छा है क्योंकि उसमें हरे भरे पेड़ हैं परन्तु ऊँचे किनारे के ऊपर पेड़ केवल थोड़ी सी जगहों पर हैं। ज्यादातर वे कुओं के आस पास हैं। ये कुएँ भी थोड़े हैं और एक दूसरे से बहुत दूरी पर हैं।

काछी प्रदेश का प्राकृतिक वर्णन

सिन्धु का तल चौड़ा है और जाड़े भर इसके रास्ते में ऊसर बालू के बड़े-बड़े टुकड़े दीख पड़ते हैं। नदी के किनारों के प्रदेशों में जो छोटी मोटी नहरें बहती हैं उनकी चौड़ाई औसत दर्जे की है। साल में ज्यादा दिन वे अपने किनारों के ऊपर से बहने लगते हैं। कुएँ झालरें और गांव इन चश्मों के किनारे दूर दूर पर स्थित हैं और काश्त की जाने वाली जमीन पानी के किनारे तक चली गई है।

सिन्धु की घाटी एक मनोरम प्रदेश है। करीब करीब आधा क्षेत्रफल जोता जाता है बाकी में लम्बी सार घास बुरी तरह से उगी हुई है और नदी के पास निचला लई का जंगल है। नदी के द्वीपों में अक्सर कान्ह के घने जङ्गल उगे रहते हैं। कान्ह भक्कर तहसील के जङ्गली सूअरों के छिपने के काम में आता है। थाल के किनारे से दो या तीन मील तक यहां बहुत से कुएँ हैं। हर कुएँ के पास आम तौर से एक छोटा गांव है। उसमें किसानों के खेत और छोटी मोटी झोपड़ियों के अतिरिक्त और कुछ नहीं रहता। बड़े गांव ज्यादातर थाल के किनारे पाये जाते हैं। यहां से सिन्धु की घाटी दिखाई पड़ती है। यहां उन तक बाढ़ की पहुँच नहीं सकती। वे लोग जो काछी के (जो नदी के किनारे है) प्रदेश में रहते हैं इतने सुस्त और काहिल हैं कि जब उनकी फसल कट जाती है तो उसे थाल तक नहीं ले जा सकते। वे अपने कुओं और गांवों के नजदीक ऊँचे टीलों पर उनका ढेर लगा देते हैं। इसका नतीजा यह होता है कि उनको भारी बाढ़ के सालों में काफी नुकसान उठाना पड़ता है। काछी का वह हिस्सा जो सिन्धु की तरफ है आम तौर से कुओं से रहित है। वहां की खेती सारी सैलाबा होती है। काछी के सारे भीतरी भाग में गांवों और कुओं के चारों ओर पेड़ों के बहुत से मनोहर समूह हैं। तहलियां और बेर ज्यादा हैं और सरीन्ह या पीपल कम। यह भाग खूब जङ्गली है। इस टुकड़े के बाहर के भाग के जो सिन्धु की तरफ है थोड़े पेड़ हैं जो नहीं के बराबर हैं परन्तु यहां वहां घनी जंगल दीख जाते हैं। खजूर के बाग भक्कर के नदी के किनारे के प्रदेश में हैं। ये आम तौर से ऊँचे किनारे के समीप हैं। इनमें से सबसे बड़े बाग क़स्बों के चारों तरफ या कस्बों के निकट के हैं।

भक्कर थाल एक रेतीला रेगिस्तान है। इसमें आम तौर से एक झाड़ी होती है जिसे लाना; फोग और बुई कहते हैं। कहीं कहीं पर करी और जिल्द के पेड़ दीख जाते हैं। थाल का डग्गर नाम का प्रदेश जो नदी के ऊँचे किनारे के पास है। जल्द और जाल के पेड़ों से भरा पड़ा है। जल्द का पेड़ थाल भर में और कुओं के आस पास सुरक्षित रह जाता है और खग्गल वहीं आसानी से उगता है। जहां वह सुरक्षित रहता है। कुएँ थाल के आस पास इधर उधर हैं। उनके पास निचले लाक हैं। लाक सख्त, काश्त की जा सकने वाली जमीन के चपटे टुकड़े को कहते हैं। ये बालू की पहाड़ियों के बीच में स्थित हैं पेड़ों के झुंड ऐसे दिखाई देते हैं जैसे किसी रेगिस्तान में नखलिस्तान। थाल की पहाड़ियां आम तौर से उत्तर से दक्षिण को गई हैं और

आकार में बड़ी हैं और प्रदेश में दक्षिण और पूर्व में ज्यादा ऊँची हैं उत्तर में अधिक चपटी भूमि है। इसलिये हमें बारानी की खेती खूब देखने को मिलती है और छेम्पर सई तथा दूसरी घासें बारिस के बाद निकल आती हैं और जानवरों के लिये बहुत अच्छे चारे के रूप में इस्तेमाल होती हैं। जिस साल अच्छी बारिश होती है उस साल थाल बहुत सुन्दर दिखाई देता है, परन्तु जिस साल सूखा पड़ता है उस साल यह बहुत भयानक हो जाता है और यहां ठहरने तक को जी नहीं करता।

नदियाँ और झीलें

सिन्धु नदी नमक की श्रेणी (पर्वत का नाम) को फाड़ कर बहती है। कालाबाग के ऊपर से एक तंग धारा में बहती हुई यह इस जिले में प्रवेश करती है। यहां से जमीन एक मील पर एक फुट के हिसाब से नीची होती चली गई है। लगभग ४० मील तक यह दक्षिण की तरफ बहती है। पहाड़ों की रुकावटों को पार कर लेने के बाद, यह शीघ्रता से मैदान में फैल जाती है, यहां तक कि इसकी तली एक किनारे से दूसरे किनारे तक १२ मील तक चौड़ी हो जाती है। ईसा खेल के बाद चौड़ाई फिर कम होने लगती है। इसकी तली के अन्दर बदलने वाली धाराओं का एक जाल सा बिछा हुआ है। इन्हीं में से एक न एक में मुख्य धारा बहती है। लगभग १०० वर्ष पूर्व, सिन्धु जैसी बड़ी नदी ईसा खेल की तरफ बहती थी परन्तु फिर भी ऊँचे किनारे से इतनी दूर रहती थी कि बीच में उपजाऊ बढ़िया जमीन की एक पट्टी पड़ती थी जिसकी चौड़ाई आध मील से दो मील तक होती थी। धीरे-धीरे नदी ने इस पट्टी पर अधिकार जमाना शुरू किया, यहां तक कि कुछ ही समय बाद सारा का सारा उपजाऊ प्रदेश पानी में डूब गया। १८५६ के करीब इसके मार्ग में परिवर्तन हुआ, लेकिन इतने धीरे-धीरे होने लगा कि पहले तो देखने में ही न आता था। फिर भी मुख्य धारा मियांवली की तरफ की एक पुरानी धारा का रूप धारण कर रही थी। और १८६३ व १८६४ के अन्दर यह काम पूरा हो गया। तब यह कोई खास बात न रह गई थी कि नदी में एक दम अपनी तली पश्चिम की ओर लगभग ८ मील तक हटा ली थी। इसकी जांच बाकायदा सरकारी कारिन्दों द्वारा हुई थी। धारा के बहाव के बदलने की वजह यही बताई जाती है कि १८५६ में कालाबाग के नीचे एक छोटी नहर काटी गई थी ताकि एक पुरानी और बिलकुल सूखी नहर जो मियांवली की तरफ थी सिन्धु नदी से जुड़ जाय। इससे कुछ पानी उधर चला गया, और अगले वर्ष २६ अगस्त को एक बड़ी-भारी बाढ़ आई, इसने इस छोटी नहर को एक चौड़ी गहरी नहर बना दिया। १८६४ से १८७३ तक सिन्धु अपना बायां किनारा धीरे-धीरे बढ़ाती रही, एक के बाद एक गांव इसकी तली में आता चला गया, और इसका पुराना ऊँचा किनारा भी टूट गया और जो गांव इस पर १०० साल से ज्यादा से बसे हुये थे वे भी नष्ट हो गये। इस तरह पक्की मोछ, रोखरी, शाहबाज खेल, यरू खेल, मियांवली (सिविल स्टेशन के कुछ भाग समेत) बल्लू खेल, कुण्डिया और पिलपन थोड़े-बहुत नष्ट हो गये। लगभग १८७३ में नदी ने अपना भार अपने बाएं किनारे पर से कम कर दिया, और उन गांवों को बर्बाद करना शुरू कर दिया जो अब तक बच गये थे, और फलतः इसकी तली में सबसे उपजाऊ और सर्वोत्तम थे।

जब यह मियांवली से बहती हुई नीचे भक्कर तहसील में आती है, तो नदी में पानी का बहाव बहुत कम तेज रह जाता है। जब यह कालाबाग के तंग दर्रे से होकर निकलती है तो बड़े जोर शोर से बहती है। परन्तु भक्कर तहसील भर में इसका मार्ग बहुत कुछ बँधा हुआ है। दो ऊँचे किनारों के बीच के क्षेत्रफल का पूर्वी आधा हिस्से में कुदरती दरारों का एक जाल सा बिछा हुआ है। उसमें मनुष्य द्वारा बनाए हुये स्रोत भी हैं और बाढ़ का पानी देश भर में इन्हीं स्रोतों के जरिये फैल जाता है। इन स्रोतों को रोकने के लिये बांध बने हुए हैं, जिन पर जिले के अधिकारी विभाग की देख भाल रहती है। नदी की तरंगें इस प्रदेश के पश्चिमी आधे हिस्से में ही उठती हैं जहाँ पानी बिना किसी रोक थाम के छलकता है और मुख्य धारा एक स्थान से दूसरे स्थान को बदलती रहती है। दरारों और बांधों का वर्णन हम आगे में करेंगे।

इस जिले में किसी काम की कोई झील है तो वह नम्मल झील है जो बनावटी तौर से बनाई गई है। नम्मल और मूसा खेल के बीच के तंग दर्रे पर एक बड़ा बांध बनाया गया है। उसी से यह झील बनी है।

भूगर्भ

जिले के जमीन की बनावट जानने योग्य है, क्योंकि इसमें सिंधु के इस ओर और सिन्धु के उस ओर दोनों तरफ के नमक की श्रेणी के हिस्से शामिल हैं। इस पर्वतमाला में जानने योग्य खास बातें ये हैं कि यहां पर पुरानी तलियां गायब हो गई हैं और नई चट्टानों का बनना हो रहा है। नमक की चट्टान और चट्टानी नमक अब भी सबसे निचले हिस्सों में नई बनावट नहीं है। अच्छी किस्म का कोयला ईसा खेल की तहसील की निचली तहों में है और नमक कालाबाग में निकाला जाता है।

ढाक श्रेणी की जमीन के अन्दर की चीजों को हम बहुत आसानी से मालूम कर सकते हैं। इसके लिए हमें उस तंग रास्ते में जाना पड़ेगा जिस के पूर्वीय सिरे पर नम्मल का बांध बना हुआ है। यहाँ पर मुलायम भरे और हरे भूरे बालू के पत्थर की तहें एक दूसरे पर लगी हुई हैं। चूने के पत्थर के ऊपर लाल और कत्थई रंग की चिकनी मिट्टी की तह पाई जाती है। यह चूने का पत्थर अलग-अलग जगहों पर अलग अलग तरह का पाया जाता है। बांध जहाँ पर बना है वहाँ चूने का पत्थर उत्तर-पूर्व में काफी गहराई पर मिलता है। इसकी तहें कुछ ऊपर को उठी हुई हैं खास तौर से इस तङ्ग रास्ते के पच्छिमी सिरे पर। चूने के पत्थर की पहाड़ी के पास के बालू के पत्थर और चिकनी मिट्टी ऊपर से घिस चुके हैं, और इस तरह पहाड़ी के समानान्तर एक उत्तर-दक्षिण को जाने वाली घाटी बनाते हैं। गर्म पानी और गन्धक के सोते कई जगहों से निकलते हैं और एक ही तरह के नहीं होते। नम्मल बाँध के ही नीचे बहुत से हैं। गर्म पानी और गन्धक मिली हुई पानी की गैस चट्टान की कई दरारों से निकलती हैं। कहीं-कहीं पर तो गर्म पानी काफी मात्रा में बहुत सी गैस के साथ तीव्रता से बाहर आता है और जगहों पर चुपचाप तालाबों की तली में घना काला कीचड़ जमा है।

वनस्पति

यहां की वनस्पति पश्चिमी पंजाब का एक भाग है, परन्तु यहां पश्चिमी एशिया की और रूमसागर की भी वनस्पतियों की खूब मिलौनी हुई है। पेड़ कम हैं। जहां लगाये गये हैं वहां बहुतायत से हैं। परन्तु तहली सिन्ध के किनारे बहुत पाया जाता है। नमक की श्रेणी की वनस्पति काला बाग में अपने ही ढंग की है। यह उस वनस्पति से मिलती-जुलती है जो सिन्ध के पूरब की श्रेणियों पर ऐसी ही जगहों पर मिलती है। थाल की बालू की पहाड़ियाँ बड़े हिन्दुस्तानी रेगिस्तान की विस्तार हैं और उनकी वनस्पति उत्तरी पश्चिमी राजपूताना की सी है। जिले के तीन विभिन्न भाग हैं पहाड़ियां, उच्च भूमि और काचा इनकी वनस्पति अलग अलग अच्छी तरह समझाई जा सकती है।

लंगी दिसम्बर से फर्वरी तक यानी तीन महीने रहने दी जाती है। थोड़े से पेड़ छाया के लिए रक्खे जाते हैं और यहां-वहां किसी मरे हुये सन्त की कब्रों के चारों तरफ के पेड़ों को भी कोई नहीं छूता क्योंकि इससे उस सन्त का निरादर होता है।

बेर कुओं पर थाल में लगाया जाता है। इसका फल खाया जाता है और इसी के लिये यह मशहूर है।

जाल, डग्गर और थाल में खूब होता है। फल खाया जाता है। इसके फल को पिल्हू बोलते हैं, और पेड़ ऊंटों के चरने के काम भी आता है।

करी या बिना पत्ती का पेड़ जंगली तरीके से बढ़ता है। इसके छोटे पेड़ से खुरदरी लकड़ी मिलती है और फल खाया जाता है।

बहिवत एक छोटी काँटेदार झाड़ी है जिससे बकरियों के चराने का काम निकलता है।

फोग एक छोटी बिना पत्ती की लकड़ीदार झाड़ी है, जिस पर भेड़ें और बकरियाँ चरती हैं

और जो ईंधन के काम में आती है। इसका फल फोगली खाता है, मगर हानिकारक होता है। पीपल कस्बों और बस्तियों के करीब में पाया जाता है।

योहार नदी के तटों पर पाया जाता है।

साधारण झाड़ियां ये हैं—

लाना एक पौधा है जो हलकी रेतीली जमीन पर अच्छी तरह उगता है और जाल या फोग के करीब में बहुत कम पाया जाता है, क्योंकि जाल या फोग को ज्यादा सख्त जमीन की जरूरत होती है। लाना, थाल में पाई जाने वाली सबसे खास झाड़ी है, जहां यह गर्मियों में ऊँटों की खास गिजा का काम देती है, और बसन्त में इसे भेड़ बकरियां खाती हैं। थाल का लाना खार या सज्जी लाना से भिन्न होता है। खार से सोडा कार्बोनेट बनता है, और लानी और दमन के गोरा लाना से भी बनाया जाता है।

खीप एक छोटी बिना पत्तियों की झाड़ी है जो थाल में होती है। यह सिर्फ ईंधन या झोंपड़ी बनाने में काम आती है। बुई ऊसर के रेतीले भागों में कसरत से होती है। यह एक छोटी झाड़ी है जिसमें मार्च के करीब कुछ अंकुर निकल आते हैं जिन्हें चारे की कमी होने पर भेड़ बकरियां खा लेती हैं। यह सिर्फ हलकी जमीन पर उगती है।

आक कसरत से होता है। बकरियाँ छोटे अंकुरों को खा डालती हैं। अकरी एक छोटा पौधा है जिसकी शक्ल आक से बहुत मिलती जुलती है। घासें बहुत सी होती हैं और नीचे लिखी मुख्य हैं:—

छेम्बर एक फुट ऊँची हो जाती है। यह रेत में बारिश के बाद बड़ी तेजी से निकलती है मगर उतनी ही जल्दी मुर्झा भी जाती है। इसका चारा बढ़िया होता है और इसके होने का वक्त बसन्त और पतझड़ दोनों में होता है।

सई एक लम्बी घास है इसकी जड़ें एक जकड़े हुए झुंड में रहती हैं। यह पतझड़ में होती हैं जब यह कमर तक ऊँची खड़ी हो जाती है। पशुओं और घोड़ों के लिए यह उत्तम चारे का काम देती है। इसकी एक किस्म और होती है जिसे फितसई कहते हैं जो साल में दो बार अपने अंकुर निकालती है और जिसे चौपाए व भेड़ें खाती हैं। सई की तरह यह सिर्फ उत्तरी थाल में होती है।

दूसरी छोटी मोटी पैदावारों में से जो ऊसर थाल के क्षेत्र फल में होती है नींबू की घास या खवी भी पाई जाती है, मगर यह चारे के बिल्कुल काम की नहीं है। ऊँट का कांटा (जवा) डगर में पाई जाती, थाल में नहीं। बखरा एक छोटी लता है यह भी बहुतायत से होती है इसको भेड़ व बकरियाँ चरती हैं, और बीजों को लोग स्वयं खा जाते हैं (जब कभी खाने की कमी होती है)। छोटी चारे की घासों में ये खास हैं:—मधाना (इसका यह नाम इसलिये पड़ा है कि इसकी शक्ल चरई या मथने वाली डण्डी से मिलती जुलती होती है। दोपक एक लता की घास है उठपेड़ा या ऊँट का पैर, गोरखपान बानबेरी, एक लम्बी लता सिजूभना या सूर्योदय नीलबटी एक जंगली नील जिसे ऊँट खाते हैं भट्टल सिर्फ उत्तरी थाल में मिलती है; फूली और स्याह चार जिनका फूल छोटा और सफेद होता है लुदरी और बुदिया; सील और अंगर भकरा से मिलती हुई कमाली। बूटी जिसकी पत्ती चपटी और कांटे की तरह होती है; पोचकी एक लता होती है जिसकी पत्तियां चौड़ी और गोल होती हैं बन्नू एक कड़वी घास और हेमचा एक हलकी छुई मुई घास है। पदाबहेड़ा भी खूब होती है और कुम्भी पतझड़ की बारिश में बालू की पहाड़ियों पर आजादी से उगती है। बड़ी वाली कुंभार हजम नहीं की जा सकती। लेकिन चल्ली कुंभी का स्वाद अच्छा होता है। विष्पा एक खाने लायक फतरी की तरह की घास है जो करी के पेड़ों की जड़ से निकलती है टाँडला एक दूब की तरह की घास है जो जन्द के पेड़ों को जड़ से निकलती है; कोतम्मा या तमा पीली घास है इनकी तासीर ठंडी होती है। सूकल एक छोटा पौधा है जो कूओं पर गेहूँ के साथ निकल आता है; दोनों पौधा और इसका बीज पंजाब के अन्य प्रदेशों की तरह लोगों द्वारा खाए जाते हैं (घास की कमी होने पर)। दमान्ह और हर्मील छोटे पौधे हैं जिनका बीज दवाओं में इस्तेमाल होता है। जौदल जिसे कभी कभी फितकनक भी कहते हैं सिंजी बंतू मशहूर

पौधे हैं जो और जगहों की तरह यहाँ कुओं के आस पास जंगल की भांति उगते हैं। पीता पारा उसी तरह निकलता है और दवाओं में इस्तेमाल होता है; इसी प्रकार छोटा चीभर पतझड़ की फसल में खूब उगता है।

काचा

काचा के खास पेड़ ये हैं। काचा नदी के किनारे का प्रदेश है यह तो आपको याद होगा ही।

भान जो नई जमीनों पर खूब उगता है जहाँ कहीं मिट्टी काफी जमा हो जाती है। लकड़ी हल्की होती है और बिस्तरों दरवाजों के चौखटों और छतों में काम आती है।

लई भी कुदरती तरीके से वहीं उगता है जहां नई मिट्टी के जमा हो जाने से जमीन बनी है। आम तौर से इसका आकार बड़ा नहीं होता। शाखाएं छप्परों के लिए और तख्ते बनाने के लिए और लकड़ी ईंधन के लिए इस्तेमाल होती हैं।

तहली, कीकड़ और बेर भी पाए जाते हैं, मगर ये आम तौर से बोए जाते हैं।

खास-खास पौधे और घासें ये हैं:—

सरकाना जिसे ज्यादातर मुंजकाना बोलते हैं नई बनी हुई जमीन पर बहुतायत से उगता है, और बहुत काम का है। डंठल का ऊपरी हिस्सा (तीली) डलियों में इस्तेमाल होता है इसकी मूंज को पीटकर रस्सियाँ बनाई जाती हैं। डंठल (काना) का इस्तेमाल झोपड़ी बनाने और दूसरे बहुत से कामों में होता है फूल (बुल्लू) गायों को दवाई के तौर पर दिये जाते हैं। कान्ह एक सैंटा है जो एक प्रकार के अच्छे चारे का काम देता है, और छप्पर छाने में भी इसकी जरूरत पड़ती है।

कुन्दर नदी के किनारों पर दरारों में और छिछले पानी में उगता है। यह ज्यादातर चटाइयां टोकरियां और डोरे बनाने के काम में आता है।

तल्ला के पेड़ से घोड़ों के चरने की सबसे बढ़िया घास मिलती है और पशुओं के द्वारा भी खाई जाती है।

द्राभ एक रद्दी घास होती है जो नमकीन जमीन पर भी उग आती है। इसकी जड़ें लम्बी होती हैं और इसे चौपाये खाते हैं पर इसका चारा मामूली होता है।

नीचे लिखी घास-फूसें बहुत पाई जाती हैं सिंजी, मैना, जवान्ह या ऊंट का कांटा लिहू एक काँटा जोहद्रा (जंगली जई) ओंजी और खीवी।

खजूर और बागों के पेड़

बाग भक्कर में ऊंचे किनारे के पास और कालाबाग व इसा खेल के कस्बों में होते हैं। साधारण बागों के पेड़ ये हैं आम, सन्तरा, अनार शहतूत, नींबू लौकाट, नासपाती और अंगूर।

खजूर के पेड़ भक्कर की तहसील में उगते हैं ज्यादातर ऊंचे किनारे के आस-पास खजूर के पेड़ के हर हिस्से का एक अलग नाम होता है। खजूर के फल को खज्जी कहते हैं। खड़े हुए डंठल को मून्ध बोलते हैं जब यह कट जाता है और इसकी टहनियां तोड़ ली जाती हैं तो छान्दा पुकारते हैं। पेड़ों का कुंज झट्ट कहलाता है। पत्ती का डंठल होता है रेशों का जाल जो हर पत्ती के डंठल के चारों तरफ होता है कावल कहाता है। पत्तियों का झुन्ड जो खजूर की चोटी पर होता है उसे गाचा कहते हैं। गाचा के अन्दर की पत्तियों का गिरोह गरी कहलाता है। काँटे थुआ नाम से जाने जाते हैं, ज्यों-ज्यों फल पकता जाता है त्यों-त्यों उसके नाम बदलते जाते हैं और जब बिल्कुल पक जाता है तो उसे पिण्ड कहकर पुकारते हैं।

जानवर चीते

चीते खिसोर पहाड़ी के पास के जंगलों में मिला करते थे। खिसोर पहाड़ियां इसा खेल और बिलोट के बीच में हैं। लेकिन अब चीतों का मिलना मुश्किल है।

तेंदुए, पारा नाम के

तेंदुए या पहाड़ियों के चीते नमक की श्रेणी नामक पर्वत में पाये जाते हैं। परन्तु वे आम तौर पर एक से ही दिखाई पड़ते हैं और अक्सर उनके गोली मार दी जाती है।

रीछ

इस जिले में रीछ एक भी नहीं है लेकिन जब कभी कड़ाके की सर्दी पड़ती है तो कभी-कभी

उत्तर-पश्चिम से काले रीछ नीचे उतर आते हैं और मैदानी श्रेणी के इस ओर एक-दो दफा देखे गए हैं।

भेड़िए

भेड़िये छोटी पहाड़ियों के किनारे मिलते हैं और रात में सफर करके नदी के किनारे के प्रदेशों में पहुँच जाते हैं और यहाँ कभी-कभी वे दिन में छिपे रहते हैं। किसी वजह से उनकी तादाद ज्यादा नहीं है और अगर उनका पता लग जाता है तो उनका शिकार खेला जाता है और वे दाग दिये जाते हैं।

लकड़बग्घे

लकड़बग्घे भी निचली पहाड़ियों के लगे पाये जाते हैं। उन्हें आदमी इस तरह पकड़ते हैं कि माँद में जाकर या रेंगकर एक हाथ में चिराग़ (रोशनी) और दूसरे में एक फन्दे में बँधी रस्सी ले जाते हैं। और फन्दे को लकड़बग्घे के गले में डाल देते हैं क्योंकि वह रोशनी की तरफ देखता रह जाता है। तब आदमी वापिस आते हैं, अब भी रोशनी उनके हाथ में रहती है और माँद से बाहर निकलकर रस्सी खींचते हैं और अपने साथियों की मदद से लकड़बग्घे को बाहर खींच लेते हैं और उसे पकड़ लेते हैं।

हरियर

हरियर (ऊरियल) नमक की श्रेणी में भंगी खेल और पनियाला पहाड़ियों में बड़ी संख्या में मिलता है। 'कालाबाग़ के मालिक' जावा (नमक की श्रेणी में) में इन जानवरों का प्रिय-निवास है, इसीलिये अक्सर शिकारी लोग मालिक की आज्ञा से जावा में आते हैं। २० से २५ इंच तक के सींगों के जानवर आम तौर पर मिलते हैं। और २५ से ३० इंच तक के सींग अच्छे समझे जाते हैं, लेकिन उनकी भी कमी नहीं है।

हरियर के बच्चे को चपरा कहते हैं।

मर्खोर

मर्खोर कहीं-कहीं मिलता है इसके रहने की जगह कालाबाग़ और मरतीय (भंगी खेल) के बीच।

पहाड़ियों की वनस्पति

पहाड़ियों पर वनस्पति है तो सही पर कम है और सकेसर पहाड़ी की चोटी को छोड़कर या भंगी खेल के बीच के हिस्से को छोड़कर पेड़ सिर्फ निचली ज़मीन में और निचले ढालों पर उगते हैं। साधारण तौर से पाए जाने वाले पेड़ों के नाम ये हैं—फुलाही, सनाथ, कंगन, फन या जैतून, धामक, कीकड़, अनार, खवारी या जंगली अंजीर का पेड़ शहतूत, बोहार;।

पहाड़ियों पर किसी प्रकार पौधों और झाड़ियों की कमी नहीं है जिनमें से सबसे खास ये हैं—बिनन, मस्तियारा, हरी, बिथामन, गन्जर, कोहिर।

उच्च प्रदेश

उच्च प्रदेश में आम पेड़ ये हैं:—

तुलहा या खग्गल। यह जिले भर में उगता है और बहुत थोड़ी नमी के सहारे पनप सकता है। परन्तु आम तौर से इसको हाथ से लगाना पड़ता है और हमेशा कुछ सालों तक इसकी रक्षा करनी पड़ती है। लकड़ी ज्यादा काम की नहीं होती।

कीकड़ तराई के प्रदेशों में पाया जाता है। यह नदी के ऊँचे किनारों के पास में भी मिलता है। लकड़ी सख्त होती है और खेती के औजारों को बनाने के काम में आती है। इससे छतें भी पाटी जाती हैं।

टहली क़स्बों के नज़दीक मिलती है, परन्तु ज़रा कम।

जन्द थाल भर में साधारण रूप से पाया जाता है, खास तौर से कुओं और गाँवों के आस-पास इसे लँगियों के लिए बड़ी देख-भाल से रखते हैं। लँगी से भेड़ों और बकरियों के लिए सुन्दर चारा मिल जाता है। जाड़े भर जब घास बहुत कम रह जाती है तो ये जन्द के पेड़ धीरे-धीरे ठूँस की तरह खड़े रह जाते हैं क्योंकि उनकी छोटी टहनियां तोड़ ली जाती हैं और उनमें कुछ भी बाक़ी नहीं बचता।

गुजरात

गुजरात जिले का नाम गुजरात शहर के अनुसार पड़ा है। गुजरात शहर का आरम्भ उस किले के पड़ोस में हुआ जिसे सम्राट अकबर ने १५८० ई० में बनवाया था। यहां समीप के गूजर लोग आकर बस गये थे। इसलिये यह गुजरात कहलाने लगा। आरम्भ में सम्राट के सम्मानार्थ गुजरात अकबराबाद कहलाता था। गुजरात का जिला रावलपिंडी कमिश्नरी में शामिल है। इसका क्षेत्रफल २१७१ वर्ग मील है। यह जिला ३२°१० और ३३° उत्तरी अक्षांशों और ७३°१८' और ७४°३१' पूर्वी देशान्तरों के बीच में स्थित है। आकार में यह एक विषम चतुर्भुज है। यह झेलम और चनाब नदियों के बीच स्थित चज द्वाब का अंग है।

इस जिले के उत्तर-पूर्व में काश्मीर राज्य, उत्तर पश्चिम में झेलम नदी इस जिले को झेलम जिले से अलग करती है। दक्षिण की ओर चनाब नदी इसे गुजरानवाला और स्यालकोट जिलों से अलग करती है। ठीक पूर्व की ओर तवी नदी इस जिले और स्यालकोट के बीच में सीमा बनाती है। गुजरात जिले के ठीक पश्चिम में शाहपुर का जिला है। पश्चिम की ओर उत्तर में झेलम नदी से दक्षिण में चनाब नदी तक २० मील की दूरी है। पर पूर्व की ओर इन्हीं दो नदियों के बीच में ४३ मील की दूरी है। इस जिले की औसत चौड़ाई ३० मील और पूर्व से पश्चिम तक औसत लम्बाई ६० मील है। इस जिले में ३ तहसीलें हैं। फालिया तहसील समस्त पश्चिमी भाग घेरे हुये है। पूर्व की ओर उत्तरी भाग में खरियान तहसील है। दक्षिणी भाग में गुजरात तहसील है। इस जिले में केवल दो (गुजरात १९००० और जलालपुर ११०००) ऐसे नगर हैं जिनकी जन-संख्या १०,००० से ऊपर है। गुजरात शहर चनाब नदी से ५ मील उत्तर की ओर ग्रांड-ट्रंक रोड पर स्थित है। यही इस जिले का सबसे बड़ा नगर और राजधानी है। पंजाब के २९ जिलों में गुजरात का क्षेत्रफल में १९ वां और जनसंख्या में १२ वां स्थान पंजाब के विभाजन में गुजरात पश्चिमी पञ्जाब पाकिस्तान में पड़ता है। इस जिले में पञ्जाब का मैदान अपनी उत्तरी चरम सीमा को पहुँच गया है। जिले के उत्तरी पूर्वी कोने पर पब्बी पहाड़ियां हैं। यह पहाड़ियां काश्मीर राज्य के भीमबार गांव से इस जिले में आती हैं और उत्तरी-पूर्वी कोने पर मैदानी भाग को झेलम नदी से अलग करती है। पब्बी पहाड़ियां झेलम नदी के किनारे पर बसे हुये रसूल गांव तक चली गई है। नदी के दूसरे किनारे पर भी पहाड़ियां हैं। ऐसा जान पड़ता है कि झेलम नदी ने इन पहाड़ियों को काटकर अपना मार्ग किसी प्रकार बनाया है। झेलम नदी के उत्तरी किनारे की पहाड़ियां आगे चल कर साल्टरेंज से मिल गई हैं। ग्रांडट्रंक रोड यहां समतल मैदान को पार करके पहाड़ियों और नालों की भूल-भुलैयों में प्रवेश करती है और पश्चिम पेशावर को चली जाती है। पब्बी या गुजरात श्रेणी की ऊँचाई समुद्र-तल से १४०० फुट और पड़ोस के मैदान के ऊपर ९०० फुट है। यह पहाड़ियां शीघ्र टूटने वाली बलुआ पत्थर की चट्टानों की बनी हैं। कहीं कहीं कंकड़ पत्थर मिट्टी की मिली हुई शिलाएँ हैं। यह पुराने समय के पशु और वृक्षों के ढांचे मिलते हैं। पब्बी प्रदेश एकदम वीरान है। यहां नङ्गी पहाड़ियों को सपाट नालों ने गहरा काट दिया है। पर जिस भाग में सर्वसाधारण को लाने और पशु चराने से रोक दिया है उसमें छोटे छोटे वृक्ष उग आये हैं। वृक्षों ने भूमि को अधिक कटने से भी बचा लिया है। झेलम नदी की अचानक बाढ़ से ऊपरी झेलम नहर को बचाने के लिये झेलम नदी की ओर वाले ढालों पर नियमित रूप से वृक्ष लगाये गये हैं। पर ऊँचे ढालों पर इतनी कम मिट्टी शेष बची है कि वृक्ष बहुत धीरे धीरे बढ़ते हैं। पब्बी पहाड़ियों के उत्तर में एक त्रिभुजाकार प्रदेश है। यह कहीं भी ६ मील से अधिक चौड़ा नहीं है। यह झेलम नदी तक चला गया है। पश्चिम की ओर रसूल से यह पतला नुकीला सा हो गया है। इस भाग को नालों ने गहरा काट दिया है। इनका पानी झेलम में बह जाता है। झेलम के पास ही इन नालों ने बालू छोड़ दी है।

पब्बी को छोड़कर जिले के प्रधान भाग में हिमालय के सबसे नीचे ढाल हैं। यह डिंगा कस्बे तक चले गये हैं। डिंगा से पश्चिम की ओर मध्यवर्ती पंजाब की तरह कछारी मिट्टी का पठार है। पठार को कई स्थानों पर चनाब और झेलम नदियों ने गहरा काट दिया है। गुजरात का जिला निम्न ४ प्राकृतिक भागों में बांटा जा सकता है।

१—पहाड़ की तलहटी की पेटी २—मध्यवर्ती पठार

या बार ३—नदी की पुरानी पेटी ४—नदी की बाढ़ से डूब जाने वाली पतली पेटी।

१—तलहटी की पेटी में हिमालय की बाहरी पहाड़ियों के सबसे नीचे ढाल हैं। जिले के पूर्वी सिरे पर कोटला तक कंकड़ और बालू के ढेर हैं। वहां की मिट्टी अच्छी कड़ी मैरा वाली है जिसमें बालू मिली है और लाल रंग की है। ग्रैंड ट्रंक सड़क तक भूमि ढालू है उसके पश्चात् ढाल कम हो जाते हैं। इस भाग में बहुत से नदी नाले हैं जो जम्मू की पहाड़ियों से पानी लाते हैं। इनमें से भीमबार और भंडार मुख्य हैं। इस भाग की छोटी नदियां डल्ली या डोरा कहलाती हैं। वर्षा के दिनों में यह तमाम नदी नाले उमड़ पड़ते हैं इनके द्वारा पहले भारी बालू बह आती है और मार्ग में पट जाती है उसके पश्चात् हल्की मिट्टी आती है और रेत के पड़ जाने से वह पानी के साथ नई भूमि में पड़ जाती है। इस प्रकार खेती वाली भूमि में बालू पड़ जाती है। यद्यपि कभी कभी अधिक नीची भूमि को इस बही हुई मिट्टी से लाभ भी पहुँच जाता है। अधिकांश नाले मार्ग में ही समाप्त हो जाते हैं। भीमबार पहले चनाब नदी में गिरती थी पर अब अपर झेलम नहर के बन जाने से उसका पानी नहर की ओर घुमा दिया गया है। इससे लाई हुई मिट्टी से यद्यपि हानि होने की आशंका है फिर भी वर्षा के पानी के आ जाने से नहर उमड़ आती है और उन गांवों तक पानी पहुँच जाता है जहां पहले नहीं पहुंचता था। भीमबार के पश्चिम दूसरी छोटी नदियों का पानी बूढ़ी नदी द्वारा खैराबाद के समीप चनाब में पहुँचता है। इस नदी का समस्त बहाव प्रदेश दो भागों में बटा है। एक वह जहां कि भूमि अधिक ढालू है और नदियों की तली तथा मार्ग साफ तौर पर बने हैं और दूसरा वह ग्रैंड ट्रंक सड़क के पश्चिम है जहां पानी फैल जाता है और अपनी मिट्टी से भूमि की मिट्टी को और अधिक कड़ी बना देता है। इस भाग में कुवों का बनाना तटों के अतिरिक्त कठिन है।

२—मध्यवर्ती पठार या बार लाल रंग का अच्छी कड़ी मिट्टी वाला है। साधारण रूप से यह भाग समतल चपटा है। यह भाग डिंग से आरम्भ होता है और जिले की पश्चिमी सीमा तक चला जाता है उसके पश्चात् शाहपुर जिले के बार प्रदेश से मिल जाता है। इस प्रदेश का चनाब नदी की ओर का किनारा जो कि प्राचीन नदी का तट है ऊँचा है कहीं कहीं इस किनारे की ऊँचाई २० फुट है। पुराने तट का स्थानीय नाम नक्का है। झेलम की ओर रसूल से अला तक एक दूसरा ऐसा ही ऊँचा तट है। अला से नीचे बार ढाल नीचे होते गये हैं और नदी में जाकर मिल गये हैं। केन्द्रीय पठारी भूमि उपजाऊ है पर चूंकि वर्षा कम (१८ से २० इंच तक) होती है इसलिये मिट्टी की पूरी शक्ति उन्हीं स्थानों पर पता चल पाती है जहां पर कुएँ बने हुये हैं या भूमि नीची है। यहां कुवों में पानी ४० फुट से १५० फुट नीचे तक पाया जाता है इस कारण कुएँ कम हैं। अब अपर झेलम नहर से इस भाग की सिंचाई होती है इसलिये उपज अच्छी होने लग गई है।

३—चनाब नदी के प्राचीन मार्ग के दोनों ओर ऊँचे तट हैं। गुजरात तहसील के भूत इलाके में यह तट बहुत ऊँचे हैं। यह २० फुट ऊँचे हैं। उसके आगे से गुजरात नगर के पश्चिम तक नदियों के बहाव के कारण भूमि नीची हो गई है जहां छोटी नदियों ने आकर मिट्टी बिछा दी है उसमें भूमि उपजाऊ हो गई है। इस भाग की भूमि नदी की तटीय भूमि से अच्छी है। गुजरात और फलिया तहसीलों की सीमाओं पर नदी के आदि तटों की ऊँचाई फिर आरम्भ हो जाती है। यहां बूढ़ी नावा के अतिरिक्त और कोई नदी नाला कछारी भूमि नहीं डालता है इसलिये भूमि का असली रूप देखी जा सकती है। नक्का प्रदेश के नीचे नदी का वह मार्ग नीचा है जिससे होकर चनाब नदी ने अपना मार्ग बदला है। अब भी नदी प्रति वर्ष ऊँचे किनारे बना देती है। जिले के इस शेष भाग की भूमि नदी की प्राचीन तली है जिसमें नीचे रेत तथा ऊपर मिट्टी की परत पड़ी है। यहां पानी धरातल के समीप ही वर्तमान है और कुवों की गहराई १० से २० फुट तक है पर कहीं की भी मिट्टी अच्छी नहीं है।

झेलम नदी की पुरानी तली की भूमि भी इसी प्रकार की थी पर अब वह अच्छी हो गई है जिसके दो कारण हैं। एक तो झेलम नदी अच्छी मिट्टी बहाकर लाती है और चनाब रेत बहाकर लाती है दूसरे बार प्रदेश से झेलम की कंदराओं में चनाब की अपेक्षा अधिक मिट्टी बह कर आती है। इन दोनों नदी के मार्गों में कुओं का बनाना सरल है। ऊपरी धरातल के नीचे इस प्रदेश में बालू वर्तमान है पर नहर के पानी से सिंचाई होती है जिससे उपज हो जाती है।

४ आधुनिक नदी मार्ग—झेलम नदी के अधिक मार्ग की भूमि चनाब नदी की अपेक्षा अधिक अच्छी तथा

उपजाऊ है क्योंकि झेलम कम रेत बहाकर लाती है। चनाब में बालू अधिक बहकर आती है।

नदियाँ—शीत काल में झेलम नदी में पानी बहुत कम हो जाता है रसूल स्थान पर इसका समस्त पानी रोककर लोअर-झेलम नहर की ओर फेर दिया जाता है। गरमी आने पर जब काश्मीर की बरफ पिघलती है और वर्षा होती है तो नदी में बाढ़ आती है और इसका पानी दो मील चौड़ाई में फैल जाता है। पंजाब की और दूसरी नदियों की अपेक्षा झेलम में पहले बाढ़ आती है इसका मुख्य कारण यह है कि इस नदी में बरफ के पिघलने से ही पानी आता है। नदी के दोनों ओर नीची पहाड़ियों पर जब घोर वर्षा हो जाती है तो अचानक बाढ़ नदी में आ जाया करती है। सितम्बर मास में बाढ़ समाप्त हो जाती है जिससे नदी के खादर वाली भूमि खाली हो जाती है और उसी में गेहूँ बो दिया जाता है।

चनाब एक बड़ी नदी है। यह नदी इस जिले की दक्षिणी-पूर्वी सीमा बनाती है। झेलम की भाँति यह नदी भी चक्कर खाती हुई बहती है। इस नदी के किनारे निचले हैं और नदी का प्रवाह तेज है। यह नदी गुजरात जिले की भूमि की ओर घुमती आ रही है और सियालकोट जिले में भूमि डालती आ रही है। इस नदी से ऊपर चनाब तथा अपर झेलम नहरों का पानी मिलता है। दूसरी और नदियां छोटी है। तावी नदी जम्बू प्रदेश से आकर चनाब नदी में गिरती है और जिले की पूर्वी सीमा बनाती है। गुजरात जिले के कुछ गांव इसके दूसरे तट पर स्थित हैं। चनाब की भाँति यह नदी भी अधिक रेत बहाकर लाती है। भीमबार एक बड़ी नदी है जिसका वर्णन पहले किया जा चुका है। बाबा एक छोटी नदी है जो पब्बी पहाड़ियों के उत्तरी ढालों से आती है और झेलम में गिरती है। अपर झेलम नहर इसके ऊपर से इसे पार करती है।

जिले की अधिकांश भूमि की बनावट बहुत साधारण है। डिंग से पश्चिम की ओर की भूमि पहाड़ी है जिसमें घाटी तथा मिट्टी के मैदान बारी बारी से सब कहीं वर्तमान है। डिंग से पूर्वी भाग में हिमालय श्रेणी की निचली पहाड़ियों का पट्टान वर्तमान है। इनमें पब्बी की पहाड़ियां मुख्य हैं।

जिले के लगभग समस्त प्रदेश में वन मौजूद हैं। जिले की आवश्यकता के लिये वनों से काफी मात्रा में लकड़ी तयार हो जाती है। चनाब नदी के समीपवर्ती प्रदेश में शीशम खूब उगता है। सिविल स्टेशन में शीशम के वृक्षों की अच्छी पंक्ति लगाई गई है। सीरस के वृक्ष भी अधिकांश संख्या में पाये जाते हैं। यह वृक्ष अधिक छायादार होता है और शीशम की अपेक्षा कमज़ोर तथा कम टिकाऊ होती है। फुलाई का वृक्ष भी खूब उगता है। इसकी लकड़ी शीशम से भी अधिक कड़ी होती है। इसका प्रयोग हल जुआ आदि खेती के सामानों में किया जाता है इसके फूल का प्रयोग भी होता है कीकर या बबूल बहुत होता है। बेर के वृक्ष सब कहीं पाये जाते हैं। बेर कई भाँति के होते हैं कुछ के फल बड़े स्वादिष्ट होते हैं। इसकी पत्ती पशुओं के चारा का काम देती है और बबूल की छाल चमड़ा तयार करने में प्रयोग की जाती है। लाल और सफेद दोनों प्रकार के तून के वृक्ष अधिक संख्या में सब कहीं पाए जाते हैं। तून की लकड़ी परशियन व्हील के तयार करने में प्रयोग की जाती है। पीपल के वृक्ष की यदि परवाह की जाय तो बहुत अच्छा उगता और बढ़ता है पर कम पाया जाता है। बरगद के वृक्ष तमाम जिले में पाए जाते हैं। यह बहुत बड़ा होता है और छाया अच्छी देता है पर आरम्भ काल में पांच या छः वर्ष तक कुहिरे और पाले से इसकी रखवाली करनी पड़ती है। बार प्रदेश में कैपर का वृक्ष बिना पत्ती वाला होता है। काल पड़ने पर इसके फल को लोग खाते हैं। आम का वृक्ष जिले में नहीं उगता है। भूमि में कुछ ऐसी विशेषता पाई जाती है कि आम का वृक्ष बढ़ नहीं पाता और नष्ट हो जाता है। इसके अतिरिक्त जाल, सागर, फराश, पीचल, अमिलतास, लसोड़ा, सोंजा, खिरनी, कमरख, बबूल आदि के वृक्ष अधिक संख्या में सब कहीं पाए जाते हैं। वाटिकाओं में प्रत्येक भाँति के नींबू, संतरे तथा नारंगियां आदि के वृक्ष लगाए जाते हैं। एक प्रकार का छोटा सेब भी होता है। अमरूद, अंगूर, अंजीर, अनार, केला, आलूबुखारा आदि के वृक्ष खूब लगाए जाते हैं और उनसे अच्छी आय होती है।

इनके अतिरिक्त लता-पात वाली बेलों के पौधे होते हैं। आकाश-बेल बेर के वृक्षों पर होती है। यह खून साफ करती है मालकांगनी की बेल खेतों में उगती है और खून साफ करने के हेतु प्रयोग की जाती है। बन्नी प्रदेश में यह अधिक होती है बहुफली का पौधा वर्षा-ऋतु में उगता है। यह ज्वर को शान्त करने में उपयोगी है। दोधांक का पौधा लगभग एक फुट का होता है और पशुओं के बात अच्छा करने की औषधि का काम देता है।

विशखापड़ का पौधा पीड़ा को हर लेता है और निद्रा लाता है पर अधिक मात्रा देने पर मृत्यु का भय है। इतिसिल का पौधा वर्षा ऋतु में होता है और आँख की दवा का काम देता है। घीकुवार एक अमूल्य औषधि है जो विभिन्न रोगों में प्रयोग किया जाता है। भांग का पौधा भी खूब उगता है और नशे के लिए प्रयोग किया जाता है। इनके अतिरिक्त मदार इंद्रायन, धतूर, राजहंस, पतनू, भुगत, गरखपान, सौंचाल, काकनाज, पितपापड़ा, सलहारा, पुटकांडा, कंडियारी, नकछिकनी, बहेकड़ ईसपगोल, बपूल, चितड़ा ककड़ा सिंघी, हाल्योन, पथुवा, सरफ नाग, निलोफर, दूंदा, लेहली हरनोल, हरमल आदि पौधे जिले में खूब उगते हैं और औषधि के लिये बड़े उपयोगी हैं।

पशु—जिले में भेड़िया, जङ्गली सुवर, लोमड़ी, सियार, नीलगाय, हिरन आदि पशु पाए जाते हैं। बतख, फाख्ता, कव्वाली, सारस, बाज, चील आदि भांति भांति के पक्षी पाए जाते हैं। चनाब नदी में रेत के कारण कम मछली पाई जाती है। झेलम नदी में रोहू, मशीर, डिंघारे, डौला, मेकंड और पटरी मछलियां पाई जाती हैं। मछली मारने वाले जाल डाल कर मछली का शिकार करते हैं।

जलवायु तथा वर्षा

जिले की जलवायु बड़ी अच्छी तथा स्वास्थ प्रद है। जिले का पश्चिमी भाग शाहपुर के पार प्रदेश की भांति गरमी में बहुत गरम हो जाता है। अक्तूबर मास तक में ग्रीष्म काल का अंत हो जाता है और मौसम साफ, ठंडा तथा साफ रहता है। जनवरी तथा फरवरी महीने में पाला पड़ता है और कड़ाके की सरदी पड़ती है। कभी तो फ्रीजिंग प्वाइंट तक सरदी रात में पड़ जाती है। मार्च महीने के पश्चात् गरमी पड़ने लग जाती है। नहरों के बन जाने तथा वनों की अधिकता हो जाने से गरमी में कुछ न्यूनता अवश्य आ जाती है पर मौसमी बुखार की अधिकता हो जाती है।

जिले के विभिन्न भागों में विभिन्न भांति से वर्षा होती है। हिमालय प्रदेश से जैसे जैसे दक्षिण को जाते हैं वैसे वैसे वर्षा कम होती जाती है। सूखे ऊँचे भागों की अपेक्षा नदी के तटों पर अधिक वर्षा होती है।

जम्मू की सीमा पर ४० इञ्च वर्षा होती है। खारिया में २९.७५ इञ्च, गुजरात में २६.३८ इञ्च, डिंग में १९.७४ इञ्च, फालिया में २०.१५ इञ्च और जिले की पश्चिमी सीमा पर १८ इञ्च पानी बरसता है। डिंग के पश्चिम कम वर्षा होती है और बराबर वर्षा नहीं होती है इस कारण वहां जिस वर्ष वर्षा नहीं होती उस वर्ष बरानी भूमि में खेती नहीं हो पाती है। ग्रैंड ट्रंक सड़क के पूर्व की ओर सदैव अच्छी वर्षा हो जाती है पर पश्चिम की ओर बहुधा वर्षा नहीं होती है जिससे अकाल पड़ जाता है और उपज बिल्कुल नहीं होती। तटीय पहाड़ियों पर वर्षा अधिक हो जाने पर बाढ़ आजाती है जिस से जिले के तटीय गाँवों को बड़ी हानि पहुँचती है।

इतिहास

इस जिले का अधिकांश प्राचीन इतिहास अज्ञात है। वर्तमान गुजरात नगर आधुनिक है। इसके स्थान पर प्राचीन काल में उदानगरी नामक नगर था जिसकी नींव गंगा के निचले मैदान के सूर्य वंशी राजपूत राजा बचन माल ने डाली थी। गुजरात के प्रचलित गाथाओं से पता चलता है कि १५८ ई० में बद्रसेन की स्त्री रानी गुजरान ने नगर को फिर से बसाया था। गुजरात से २५ मील पश्चिम की ओर पब्बी पहाड़ियों के नीचे पट्टी कोठी नामक प्राचीन स्थान है। इसलाम गढ़ दूसरा प्राचीन नगर गुजरात से १० मील उत्तर-पश्चिम की ओर है। इसके अतिरिक्त रसूल और मोंग नगर भी पुराने नगर हैं।

हेलाल में प्राचीन प्रसिद्ध भग्नावशेष पाये जाते हैं पर उनके ठीक इतिहास का पता नहीं है। अठारहवीं सदी की युद्ध मुद्राएं वहां मिली हैं पर मुसलमानी काल के पहले के सामान नहीं मिले हैं। सम्राट अकबर और मिर्जा शेख अली बेग की समाधि है। उनका बसाया हुआ गांव शेख अलीपुर अब भी है।

जाबा नाला के तट पर पट्टी कोठी नामक

प्राचीन स्थान है। इसके बारे में यहां के निवासी कुछ भी नहीं जानते हैं पर नगर के भग्नावशेषों की प्राचीन बड़ी ईंटों से पता चलता है कि वह बहुत प्राचीन काल की हैं।

रसल नामक गांव में एक प्राचीन मसजिद में १००० हिजरी का एक शिलालेख मिला है जो मसजिद बनने का काल निर्धारित करता है।

इसलामगढ़ के प्राचीन गांव का टीला बहुत प्राचीन है। यह स्थान चौरासी के वारैच जाटों की राजधानी था। समीप ही जलालपुर में वारैच चौधरियों के घर तथा जायदादें हैं।

मोंग एक बहुत प्राचीन कालीन स्थान है। यहां इंडो-ग्रीक राजा अजाज तथा राजाओं के राजा (जिसका नाम मुद्रा पर अंकित नहीं है) के समय की मुद्राएं मिली हैं।

ख्वासपुर स्थान काबुल मार्ग पर स्थित है। यहां मुसलमानों के समय के सराय तथा बावलियां बनी हैं। ९५२ हिजरी में ख्वास खां ने ख्वासपुर की सराय बनवाई थी। ख्वास खां शेरशाह और उसके पुत्र सलीम शाह के समय में एक बड़ा अफसर था। उसकी मां शाही महल में नौकरानी थी। बादशाह ने उसका व्याह स्वयं किसी गोक्खर लड़की से किया था और उसे इस भाग में शासन करने के लिये भेजा था। उसने यहां के सराय के भठियारों तथा मोचियों को मुसलमान बनाया था।

खारयों में दो बड़ी बावलियां हैं। एक पूर्व की ओर और दूसरी पश्चिम की ओर बनी है। पश्चिमी बावली की मरम्मत पूर्ण रूप से सरदार लहना सिंह ने कराया था। पूर्वी बावली पत्थर की बनी है और अपने असली रूप में है। इसकी सीढ़ियों पर एक गुम्बद है जिस पर इसके बनने का समय १०१३ हिजरी लिखा है। सम्राट अकबर ने फतेह उल्ला को इसके बनाने की आज्ञा दी थी। इसके बनाने में १२ हजार अकबरी रुपये खर्च हुये थे।

औरंगाबाद की सराय को सम्राट औरंगजेब ने बनवाया था। और उसे आलमगीर की पदवी दिया था। गलती से इसका नाम औरंगाबाद है।

चौकंडी स्थान आलमगढ़ के समीप है। इसे अकबर ने शिकार के लिये विश्राम स्थान बनवाया था। यह स्थान काश्मीर मार्ग में है।

कुछ इतिहास कारों का विचार है कि मोंग स्थान निकोई स्थान पर ही बसा है। निकोई को सिकंदर ने विजय स्मारक रूप में बसाया था जब उसने झेलम पार किया था। मोंग या मूंग को शाक्य राजा शंकर ने बसाया था और उसके भाई राम ने रामपुर की बस्ती बसाई थी जो अब रसूल के नाम से प्रसिद्ध है। मोंग में प्राचीन कालीन घेरे, कुओं आदि के भग्नावशेष हैं। यहां के उजाड़ टीला प्राचीन नगर के ध्वंस हो जाने का साक्षी है। टीला के ऊपर आबादी बस गई है पर खोदाई में प्राचीन कालीन वस्तुएं निकलती हैं।

गुजरात में गूजर तथा जाट लोगों की बस्ती है। वे ही यहां के भूमि पति भी हैं। गुजरात के मिरासी लोगों की कविताओं से पता चलता है कि गुजरात नगर लगभग २००. वर्ष प्राचीन है। बहलोल लोदी के समय में इसका वर्णन मिलता है जब कि सियालकोट से कुछ प्रदेश अलग करके बहलोलपुर का जिला बनाया गया था। उसके पश्चात् अकबर काल में इसका वर्णन मिलता है। अकबर ने इस प्रदेश (चक्ल गुजरात) पर अधिकार करके इसके दो भाग कर दिये थे। जिस भाग में गूजर अधिक थे वह गुजरात तथा जहां जाट अधिक थे वह हेरात कहलाता था। उसके पश्चात् एक तीसरा परगना शाहजहांपुर (खिंग) बनाया गया था। परगनों का विभाजन टप्पों में और टप्पों का विभाजन सरकारी रूप से टोपों में किया गया था। क़ानूनगोओं तथा पटवारियों के यहां अब भी प्राचीन कालीन लेख वर्तमान हैं। इन कागजात से पता चलता है कि चक्ल गुजरात में २,५९२ गांव थे जिनका क्षेत्रफल लगभग साढ़े सोलह हजार एकड़ था और लगभग १७ लाख रुपये की आय थी।

मुगल काल में प्रत्येक टोप या गांवों के समूह का अधिकारी चौधरी बनाया जाता था। वह मालगुजारी वसूल करता था।

१७३८ ई० में नादिर शाह का आक्रमण इस जिले पर हुआ था उसके पश्चात् रावलपिंडी के

गक्खर जाति के लोगों ने लूट मार की। १७५१ ई० में सुल्तान मुबारक खां जिले में शान्ति स्थापना के लिये गया। १७४८ ई० तक वह वहां रहा उसके समय में अहमद शाह ने जिले पर कितने ही बार लूट मार की थी। १७६५ ई० में गूजर सिंह भंगी सिक्ख सरदार ने लाहोर से एक बड़ी सेना लेकर मुबारक खां पर आक्रमण किया और विजय प्राप्त करने के पश्चात् जिले पर अधिकार कर लिया। जब १७६७ ई० में अहमद शाह अपनी सेना लेकर अंतिम बार पंजाब पर चढ़ा तो गूजरसिंह चुपके से गुजरात से चला गया और दूसरे ही वर्ष रणजीत सिंह का पितामह छत्रसिंह के साथ फिर आया और अपर पञ्जाब को दो खंडो में विभाजित कर दिया। गुजरात नगर, किला तथा जिले का अधिकांश भाग गूजर सिंह को मिला। उसने अपने प्रदेश को अपने दो पुत्र सुखसिंह तथा साहब सिंह के मध्य बाँट दिया। साहब सिंह गुजरात का मालिक बना।

कुछ दिनों बाद सुखसिंह और साहब सिंह में झगड़ा हो गया सुखसिंह मारा गया तो साहबसिंह ने उसकी जायदाद पर अधिकार जमा लिया जिससे गूजर सिंह को बड़ा दुख पहुँचा उसके पश्चात् गूजर सिंह ने साहब सिंह से कहा कि वह सुकरचाकिया प्रदेश महां सिंह को देदे पर उसने न माना। इससे गूजर सिंह के दिल को गहरी चोट लगी। १७८८ ई० में उसकी मृत्यु हो गई उसकी जायदाद उसके सब से छोटे पुत्र फतेह सिंह को मिली।

साहब सिंह को संतोष न हुआ उसने फतेह सिंह को मार भगाया और उसकी जायदाद पर अधिकार कर लिया। फतेह सिंह भाग कर महां सिंह के पास गया। महां सिंह की सहायता से साहबसिंह के बिरुद्ध युद्ध किया गया पर कर्मसिंह और दूलू की सहायता से साहब सिंह को विजय प्राप्त हो गई। उसके बाद महां सिंह की मृत्यु हो गई। उसके पुत्र रणजीत सिंह ने युद्ध जारी रक्खा यही बाद में प्रसिद्ध महाराजा रणजीत सिंह हुये। १७९७ ई० में शाहजमन ने आक्रमण किया तो साहब सिंह भाग गया उसके दूसरे वर्ष वह फिर लौटा और अपारी तथा वजीराबाद के सरदारों की सहायता से उसने शाहजमन के सेना नायक को हरा दिया और प्रदेश पर अपना अधिकार जमा लिया।

इसी बीच रणजीत सिंह अपनी शक्ति संचित करने में लगा रहा। फतेह सिंह का मामला लेकर वह साहब सिंह के ऊपर गुजरात पर आक्रमण कर बैठा। कई महीनों तक युद्ध चलता रहा अखिरकार दोनों भाइयों में मेल करा दिया गया। अब साहबसिंह शान्त हो गया। १८०६ ई० में वह रणजीत सिंह के साथ पटियाला की चढ़ाई में गया। उसके चार वर्ष के पश्चात् जब सिक्ख लोगों ने उसे निकालना चाहा तो लड़ाई करने के पूर्व ही वह पहाड़ियों पर चला गया। उसके पश्चात् रणजीत सिंह ने अपनी माता लक्ष्मी बाई के कहने पर उसे बजवात की जागीर दे दी। १८१२ ई० में उसकी मृत्यु हो गई।

महाराणा रणजीत सिंह ने १८१० ई० में गुजरात जिले पर पूर्ण रूप से अधिकार कर के जिले को तालुको में बाँट दिया। कादिराबाद, फालियां, हिंग, कुंजाह, वजीराबाद कथल, कारीकारियाली और गुजरात तालुके बनाए गये। गुजरात तालुका सबसे बड़ा ४८१ गाँव का था। गुजरात कारी कारियाली और खेराबाद खालसा के अंतर्गत शासन में थे। शेष या तो जागीर के रूप में दे दिये गये या ठीकेदारी के रूप में लोगों को बाँट दिये गये। तालुकों का बिभाजन जैलों में किया गया था।

रणजीत सिंह ने खलीफा नूर उद्दीन और फकीर अजीज उद्दीन को गवरनर बनाया। गवरनर शक्ति शाली लोगों को इनाम देकर मिलाये रहते थे। उन्हें लाहौर के दरबार में जाना पड़ता था। जैल की मालगुजारी वसूल करने का काम चौधरियों के हाथ में था जो जैलदार कहलाते थे।

१८४९ ई० में प्रथम सिक्ख युद्ध में गुजरानवाला और गुजरात की प्रसिद्ध लड़ाइयां हुई जिनमें सिक्खों की पराजय हुई जिसके फलस्वरूप यह जिला अंग्रेजी शासन में मिला लिया गया।

१८५७ ई० में भारत का प्रथम स्वतंत्रता संग्राम छिड़ा तो अंग्रेजों को भय हुआ कि वहां की पैंतीसवीं सेना बिगड़ न जाय इसलिये उस सेना को उन्होंने छिन्न भिन्न कर देना चाहा। पैंतीसवीं सेना के

जगो कलां, कादिराबाद, फरखपुर कोहना, रसूल, किला जवाहर सिंह रखरसूल, मोंग, मौक्री, फिफरा मुरद्वाल बहरी, रखछन्नी मुगलां, नूरपुर पीरां, वारा वालियां, रख डफ्फार, रखमोन चोहके आदि वन प्रदेश हैं।

इन वन प्रदेशों को सरकार चराई आदि के लिये नीलाम कर देती है। जो भूमि नहरों के निकल जाने से खेती के योग्य हो गई है वह खेती के लिये पट्टे पर उठा दी गई है।

फालिया बार के वन में वान, जंड, करिल मल आदि के वृक्ष सघनता के साथ पाए जाते हैं। छीछड़ सकर, लहुरा साधारण रूप से सब कहीं मिलते हैं। बेर, बबूल, तूत ड्रेक, शीशम, गाँगेर और फरश आदि के वृक्ष भी बहुत मिलते हैं।

वन प्रदेश में घने वृक्षों के कुंज थोड़ी थोड़ी दूर पर वर्तमान हैं शेष भूमि में भांति-भांति की झाड़ियां तथा घासें पाई जाती हैं। जड़ वृक्ष की लकड़ी जलाने के काम आती है। करील का वृक्ष लगभग २० फुट का होता है। इसमें पत्तियां नहीं होतीं। यह सूखे स्थानों पर होता है। छीछर का वृक्ष छोटे कद का होता है। इसमें लाल रंग की गोंद निकलती है। यह पानी वाले स्थानों पर अधिक होता है। सकर वृक्ष में कांटे होते हैं। यह पौधा जल्दी बढ़ता है। इसकी लकड़ी खेती के काम में आती है। ड्रेक का वृक्ष गांवों के छाया के लिये उगाया जाता है। इसकी पत्तियां और फल दवा के काम आते हैं। शीशम के वृक्ष की लकड़ी बड़ी मजबूत होती है इससे मेज, कुर्सी तथा दूसरी उपयोगी वस्तुएं बनाई जाती हैं।

गांगेर, फरश आदि मूल्यवान झाड़ियाँ हैं। धमनवां, धन, छिमर, खबल, मदून, खोई, सर्वक, मेल, दब वारू, सरूत, बनानूल, नूरकन आदि घासें वनों में पाई जाती हैं।

कला-कौशल

गुजरात जिले में कारखाने नहीं हैं वरन् घरेलू रोजगार होता है। कपड़ा तथा लकड़ी के काम में लगभग ५० हजार लोग लगे हैं। गुजरात में शाल, दुशाले और कोफ्तगरी का काम होता है। अधिकांश गांवों में स्थानीय रुई से सूत काता तथा बुना जाता है। अधिकतर सफेद कपड़ा तयार होता है। लाल, काला और नीला रंग देकर चारखाना भी बनाया जाता है। गुजरात में कुर्सी तथा मेजें बहुत अच्छी तयार होती हैं जो समस्त पञ्जाब में भेजी जाती है। कुर्सियाँ अधिक मूल्य की और प्रत्येक भांति की तयार की जाती हैं। शीशम की लकड़ी से बैलगाड़ी, पहिया, चक्के, खीमों के पाए चारपाई के पाए आदि सामान बना कर बाहर भेजे जाते हैं।

लकड़ी पर नक्काश कारी का काम गुजरात नगर तथा गांवों में बड़ा सुंदर होता है। दर्वाजे नक्काशदार अच्छे बनते हैं नक्काशी का काम करने वाले लोग एक एक दर्वाजे तयार करन में ६ महीने तक लगा देते हैं। हाजी इमाम उद्दीन ऐंडसन्स तथा मोहम्मद हयात ऐंड ब्रादर्स के कारखानों में विभिन्न भांति के लकड़ी के बनाने का रोजगार होता है। शम्सउद्दीन ऐंड सन्स तथा 'अब्दुल्ला ऐंड के कारखानों में कलम की निबें तयार की जाती हैं।

आने-जाने के साधन

इसजिले से होकर नार्थ वेस्टर्न रेलवे जाती है। लाल मूसा से पश्चिमी पञ्जाब को एक शाखा लाइन जाती है। ग्रांड ट्रंक सड़क भी जिले में होकर जाती है। इनके अतिरिक्त और दूसरी कई सड़कें जिले में हैं जिनसे आवा-गमन में बड़ी सुविधा है। पिंडी बहाउद्दीन से एक शाखा लाइन रसूल को जाती है। गुजरात से खारियाँ, डिंग, सोहाब और फालिया को कच्ची सड़कें जाती हैं। जलालपुर से गुजरात होती हुई एक पक्की सड़क जाती है। नहरों के चारों ओर भी सड़कें बना दी गई हैं जो आने जाने की साधन बन गई हैं। चनाब और झेलम नदियों में नावें चला करती हैं जिन से सामान भी आता जाता है।

व्यापार

जिले में जो कुछ कपड़ा तयार होता है वह स्थानीय प्रयोग में आता है केवल गुजरात की शाल बाहर जाती हैं। लकड़ी का सामान मेज कुर्सी आदि भी पञ्जाब के अन्य जिलों को जाता है।

जिले का मुख्य व्यापार गल्ले का है। चूंकि

जिले का मुख्य उद्यम खेती है।इस कारण खेती का गल्ला ही बाहर भेजा जाता है। गुजरात, कथल लाल मूसा, चिलियान वाला, डिंघ, जौस, बहाउद्दीन मलकवल, खारयां, कारियाल स्टेशनों से जिले का नाज प्रति वर्ष लगभग १५ लाख मन बाहर भेजा जाता है।

बाहर भेजे जाने वाले सामान में ९५ प्रतिशत गेहूँ है जो कराची भेजा जाता है और फिर वहां से विदेशों को भेज दिया जाता है। गेहूँ के पश्चात् कपास का नम्बर आता है। कपास का एक खासा भाग जिले के गावों में ही खपत हो जाता है जो कुछ शेष बचता है वह बाहर भेज दिया जाता है।

शिक्षा

जिले में लगभग ५ प्रतिशत लोग शिक्षित हैं। ९५ प्रतिशत लोग अशिक्षित हैं। जिले में २० सेकेन्ड्री स्कूल २०० प्राइमरी स्कूल हैं जिनमें लगभग २५ हजार लड़के शिक्षा प्राप्त करते हैं। लड़कियों के लिये २ सेकंडी तथा ४४ प्राइमरी स्कूल हैं जिन में लगभग ३ हजार लड़कियाँ शिक्षा प्राप्त करती हैं।

सरकार की ओर से अधिकांश स्कूल चल रहे हैं। स्काट लैंड चर्च मिशन की ओर से एक हाई स्कूल, एक मिडिल स्कूल और एक प्राइमरी स्कूल चल रहा है। खालसा की ओर से १ हाई स्कूल, १ मिडिल स्कूल और १४ प्राइमरी स्कूल हैं। इसलामिया मिशन की ओर से एक हाई स्कूल २ मिडिल स्कूल और एक प्राइमरी स्कूल है। इनके अतिरिक्त मसजिदों और धरमशालाओं में लगभग १३० स्कूल धार्मिक रूप से चल रहे हैं। गुजरात तहसील में ७ हाई स्कूल २ ऐंग्लो वर्नाक्यूलर मिडिल स्कूल, २ अपर वर्नाक्यूलर मिडिल स्कूल और १० लोअर वर्नाक्यूलर मिडिल स्कूल हैं। कारयाँ में एक हाई स्कूल और एक ऐंग्लो वर्नाक्यूलर मिडिल स्कूल हैं।

फालिया तहसील शिक्षा के ध्यान से बहुत पीछे है वहाँ अँग्रेजी शिक्षा का एक भी स्कूल नहीं है। २ अपर वर्नाक्यूलर मिडिल स्कूल हैं।

रसूल स्थान पर सरकार की ओर से एक इंजीनियरिंग स्कूल है जहां १०० विद्यार्थियों को शिक्षा प्रदान करने का प्रबन्ध है। स्कूल में ३ वर्ष का ड्राफ्टमैन का और २ वर्ष का सब ओअरसियर का कोर्स है।

शासन

गुजरात का जिला रावलपिंडी के कमिश्नर के अधिकार में है। जिले का शासन डिप्टी कमिश्नर के हाथ में है जो जिले का मजिस्ट्रेट तथा कलक्टर है। कलक्टर के नीचे तीन सहायक कमिश्नर हैं। जिनमें से एक खजाने का मालिक, एक मालगुजारी का सहायक रहता है। सिविल कार्य के लिये दो सब जज हैं। जिले में एक भी परगना हाकिम नहीं है।

जिले में तीन तहसीलें गुजरात, खारियां और फालिया हैं। प्रत्येक तहसील का शासन तहसीलदार के हाथ में है।जो सहायक कलक्टर होता है और उसे द्वितीय श्रेणी का मजिस्ट्रेट समझा जाता है। तहसीलदार की सहायता के लिये एक नायब तहसीलदार रहता है। अधिक काम होने पर नायब तहसीलदारों की संख्या बढ़ा दी जाती है। खारयां तथा फालिया तहसीलों में तहसीलदार तथा नायब तहसीलदार सहायक खजाने के मालिक होते हैं।

मालगुजारी का काम करने के लिये तथा भूमि का प्रबन्ध ठीक रखने के लिये कानूनगो तथा पटवारी रहते हैं। कानूनगो और पटवारी समस्त भूमि के कागजातों का हिसाब अपने पास रखते हैं।

जिले में चार मुनसिफ हैं जिनमें से ३ गुजरात में और एक डिंग में रहता है। गुजरानवाला जिले के न्यायाधीश के अंतर्गत इस जिले का अडीशनल डिस्ट्रिक्ट तथा शेशन जज होता है। इनके अतिरिक्त दूसरे आनरेरी मजिस्ट्रेट भी रहते हैं जो न्याय सम्बन्धी सहायक रहते हैं। गावों में जैलदार तथा सफेद पोश रहते हैं जो मालगुजारी की वसूली में तहसीलदार की सहायता करते हैं उन्हें सरकार की ओर से सहायता मिलती है। मालगुजारी का कुछ भाग अलग रख लिया जाता है जिसे मालवा कहते हैं। यह धन गांव के ऊपर खर्च होता है। अतिथि सत्कार तथा सरकारी अफसरों के सत्कार में भी इसी का प्रयोग होता है।

भूमिकर

भूमिकर के ध्यान से भूमि तीन प्रकार के

भूमि पंक्तियों में बांटी गई है। यह भाई चारा पट्टी दारी और जमींदारी है। इस हिसाब से गुजरात तहसील में भाईचारा में ४७९ पट्टीदारी में ६० और जमींदारी में ७ गांव हैं। खारयां तहसील में भाई चारा में तीन सौ नवासी पट्टीदारी में एक सौ बावन और जमींदारी में तीन गांव है। फालिया तहसील में भाई चारा में तीन सौ सैंतालीस पट्टी दारी में १६ और जमींदारी में ४६ गांव हैं।

भाई चारा वाली भूमि वह है जहां लोगों ने जितनी भूमि पर अधिकार कर लिया वही उस भूमि के किसान मान लिये गये हैं और उनसे उतनी ही भूमि का भूमिकर सरकार ले लेती है। इस प्रकार सरकार समस्त गांव पर भूमि कर निर्धारित कर देती है और फिर वह कर समस्त भूमि पर भूमिकर पट्टी के अनुसार पट्टीदारों के मध्य बांट दिया जाता है। जमींदारी वाली भूमि का कर एक ही जमींदार परिवार पर पड़ता है।

जिले में साधारणतः दो प्रकार के किसान हैं। एक तो वे जिनकी निजी भूमि है दूसरे वे जो दूसरे से भूमि लेकर खेती करते हैं। फसल तयार हो जाने पर सिंचाई वाली भूमि के मालिकों को नहर का पानी लेने के लिये अलग से कर देना पड़ता है। भूमि कर लगभग प्रत्येक सेटेलमेंट में कुछ न कुछ बदलता रहता है।

सेना

जिले में कोई भी कंटोनमेंट नहीं है। १९१४ की लड़ाई के पूर्व जिले के लगभग ७ हजार लोग सेना में काम करते थे। १९१४ की लड़ाई के कारण सैनिकों की भरती हुई जिससे जिले के सैनिकों की संख्या बढ़ कर लगभग २२ हजार हो गई।

राजपूत (चिब), अवां, सिक्ख लबान, खोक्खर गूजर, जाट (वारैच, गोंदल, तरार, राजा) आदि जातियों के लोग सेना में भरती होते हैं।

१९१४ ई० की लड़ाई में गुजरात जिले के ६६ सैनिकों को भिन्न भिन्न प्रकार के बैज कुशल कार्य करने के कारण मिले थे। दूसरे महासमर के समय में भी गुजरात जिले ने अच्छे सैनिक प्रदान किये और जिले से कई हजार नए लोग फौज में भर्ती हुए। जिले के प्रत्येक १५ व्यक्ति पीछे एक फौज में है।

पुलीस तथा जेल

जिले का पुलिस विभाग रावलपिंडी के डिप्टी इन्सपेक्टर जनरल पुलीस के अधिकार में है। जिले की पुलीस का प्रधान अफसर सुपरिन्टेन्डेन्ट होता है। जिसकी सहायता के लिये डिप्टी सुपरिन्टेन्डेन्ट रहता है। जिले में तीन इन्सपेक्टर, २० सब इन्सपेक्टर ६२ प्रधान कांस्टेबुल और ३५४ सिपाही हैं। पुलीस की सहायता के लिये प्रत्येक गांव में चौकीदार रक्खे गये हैं जिनकी संख्या एक हज़ार से ऊपर है। गुजरात सदर, गुजरात शहर, कुजाह, जलालपुर, कारयांवाला, खारयां, सराय आलमगीर, लालमूसा, डिंग, बहाउद्दीन, पहरियांवाली, कोथियाला, शेखान, कादिराबाद, मियाना, गोंदल आदि थाने हैं। गुजरात में एक जेल है। जहां लगभग २ सौ आदमियों के रखने का स्थान है।

मानचित्र गुजरात

चौहद्दी—जम्मू, काश्मीर, सियालकोट, गुजरानवाला, शाहपुर, झेलम खारयां बाम्बली, बेसा, जग्गू, राजर, खोहर पब्बी पहाड़ियां पौरान वाला, नार्थ-वेस्टर्न रेलवे, बैखानवैला, डिंग करारीवाला पाटियाला, चकोरी. लालमूसा गुलियाना, कोटला, झेलमनदी अजनाला, कारियानवाला. टोंडा, बहलोलपुर, जलालपुर जाटन गुजरात वेस, गुजरात, कोठला, सम्मनपिंडी, कुंजाह, दौलतनगर, शादीवाल मफोवल, लाहोर को पेशावर से।

रसूल, मोंग, नहर रेलवे लाइन, चिलियानवाला पिंडी बहाउद्दीन, अलां सोहावा, बादशाहपुर, बासू, चारंद हसलानवाला, हेलान पहरियांवाली, चकमिथ, सादुल्लापुर, चनाब नदी, सहनपाल फालिया, कदराबाद, भीको, कधार, कुथलशेखा, बछार छीमू, मलकवाल जंकशन, चकरैव, पलोवल मोनारिमाउंट डिपो, मोना रेलवे स्टेशन, फकरियां, मीना गोंदल, सकान बुसाल, ममदना, भीको।

म्युनिसपैलिटियां

गुजरात जिले में चार म्यूनिसपैलिटियां हैं

जलालपुर चट्टान, कुंजाह और डिंग में हैं। इनके अतिरिक्त तीन नोटी फाइट एरिया वाले कस्बे शादवाल, लालमूसा और मंडीउद्दीन हैं।

सबसे बड़ी म्यूनिसपैलिटी गुजरात की है। म्यूनिसिपल कमेटी में तीन नामज़द तथा ११ निर्वाचित सदस्य रहते हैं। प्रत्येक सदस्य एक वार्ड का प्रतिनिधि होता है। म्यूनिसिपैलिटी की मुख्य आय चुंगी है। किराया से म्यूनिसपैलिटी को १० हज़ार रुपये की आय होती है।

नगर में एक अस्पताल, स्कूल, महाजनी स्कूल एक लड़कियों का स्कूल, तार-डाकघर, पुलिस के प्रधान दफ्तर कचेहरियां आदि हैं।

होशियारपुर ज़िला

होशियारपुर का जिला जालंधर कमिश्नरी में है। यह जिला सतलज और व्यास नदियों के मध्य शिवालिक श्रेणी में है। पहाड़ी के नीचे एक चौड़ी भूमि की पट्टी है। सोहन की घाटी का अधिकांश भाग इस पट्टी तथा हिमालय के बाहरी भाग के मध्य स्थित है। इसके उत्तर-पश्चिम में गुरदासपुर, उत्तर-पूर्व कांगरा जिला, पूर्व में शिमला दक्षिण में अम्बाला जिला और पश्चिम में जालंधर जिला है। जिले की सबसे अधिक लम्बाई उत्तर-पश्चिम से दक्षिण-पूर्व तक ६४ मील और इसकी चौड़ाई २० से २२ मील तक है। भुंग तालुका को छोड़ कर जिले का क्षेत्रफल ३,२३२ वर्गमील है। भुङ्ग तालुका कपूरथला राज्य का है। यह जिला ३२°५ उत्तरी तथा ३०°४८ उत्तर और ७६°४१ तथा ७५°३१ पूर्वी देशान्तरों के मध्य स्थित है।

यह जिला होशियारपुर गढ़ शंकर, दसूपा और उन चार तहसीलों में विभाजित है। होशियारपुर जिले के मध्य में राजधानी स्थित है और शिवालिक पहाड़ियों से ५ मील की दूरी पर है जो जालंधर कंटोनमेंट रेलवे स्टेशन से २५ मील की दूरी पर है।

सोहान की घाटी ऊना तहसील बनाती है। सूपा तहसील, होशियारपुर और गढ़शङ्कर उपजाऊ मैदान और जलविभाजक तक शिवालिक के ढालों से बनी हैं। कछारी मैदान शिवालिक पार करके सोहान को चला गया है।

जिले के मध्यवर्ती भाग के नीचे नाहन और गंगा के मैदान को शिवालिक पहाड़ियां गई हैं यह भौगोलिक दृष्टि से हिमालय की शाखाएं हैं। लोग इसे कालार-धार के नाम से जानते हैं। पर मामूली तौर पर यह शिवालिक की शिवालिक पहाड़ियां कहलाती हैं। शिवालिक पर्वतीय श्रेणी का मार्ग सीधा है और इसकी चौड़ाई लगभग सब कहीं बराबर है केवल पश्चिम की ओर मांसवाल और जैजौन के कारण कुछ अन्तर पड़ गया है। उसके बाद फिर यह सीधी व्यास नदी तक जाती है पर नदी के समीप पहुँच कर यह फिर पश्चिम की ओर घूम जाती है और कई एक टोली पहाड़ियों के झुंड में दातापुर के समीप बंट जाती है। जिसपर विन्द्रावन तथा कर्णपुर के सरकारी बांस के वन हैं। सतलज नदी के छोड़ने के पश्चात् श्रेणी ऊँचे तथा बलुहे पत्थरों की है जिनके मध्य तथा चोटियों के ऊपर वाले के उजाड़ प्रदेश हैं जिनमें कहीं कहीं पर खेती होती है जैसे जैसे श्रेणी उत्तर की ओर जाती है साफ होती जाती है पर भीतरी पहाड़ियों के सिरे चप्टे अथवा गोलाकार हैं। मनमवाल के समीप ये श्रेणियां टेबुललैंड में बदल जाती हैं जिनके दोनों ओर सीधे टाल हैं पूर्व की ओर ऊँचे पर्वतीय करारे हैं।

मांसवाल के आगे चलकर टेबुललैंड (ऊँचा प्रदेश) का अंत हो जाता है और श्रेणियों का भीतरी भाग टूट कर कई एक नुकीली चट्टानों में विभाजित हो जाता है किन्तु इनके दोनों ओर सीधे करारे हैं। इनका अधिकांश भाग उजाड़ है कहीं कहीं पर चिल वनों की टुकड़ियां हैं और कहीं कहीं खेती भी होती है। यह दशा होशियारपुर से धरमशाला जाने वाली सड़क तक है। उसके आगे पहाड़ियां पुनः आरम्भ हो जाती हैं। छोटे ऊँचे करारों के

स्थान पर चौड़े भाग दिखाई देने लगते हैं जो धीरे धीरे घाटियों से ऊँचे होते गये हैं। उजाड़ बलुहे प्रदेशों के स्थान पर पथरीली मिट्टी वाली भूमि आ जाती है जहां खेती करना सरल है।

शिवालिक की चौड़ाई लगभग १० मील है। महद्यानी स्थान पर गढ़ शङ्कर के ऊपर पहाड़ी की ऊँचाई २०१८ फुट है। पूर्व की ओर एक चौड़ी घाटी है। जसवान या अनादून तथा हिमालय उनके मध्य आ जाते हैं। यहां का दृश्य ठीक गंगा द्वाब के देहरादून की भांति है।

दून की चौड़ाई चार से आठ मील तक है। ऊना नगर दून के लगभग मध्य में समुद्र से १४०४ फुट की ऊँचाई पर स्थित है।

चिंता सोला सिंही या जस्वान धुर श्रेणी जो पूर्व की ओर इनमें बन्द हो गई है ब्यास पर तलवारा के समीप आरम्भ होती है जहां पर नदी सर्व प्रथम ज़िले को छूती है। इसके प्रथम आठ मील कांगड़ा ज़िले की सीवा प्रदेश में हैं और इसकी अंतिम पहाड़ी इस ज़िले तथा कांगड़ा के मध्य सीमा बनाती है। दक्षिण की ओर चल कर यह धीरे धीरे चौड़ी तथा ऊँची होती जाती है। भारवाईन स्थान पर इसकी सर्वोच्च चोटी है जो ज़िले का पहाड़ी स्टेशन है और धरमशाला सड़क पर होशियारपुर से २८ मील की दूरी पर स्थित है। यहां पर इसकी चौड़ाई लगभग २० मील और ऊँचाई ३,८५६ फुट है। यहां पर एक ढलवां पहाड़ी है जिसके एक ओर व्यासघाटी तथा दूसरी ओर सोहान की घाटी है फिर भी श्रेणी सतलज की ओर जाती है जिसका उत्तरी भाग व्यासघाटी में धीरे धीरे समाप्त होती जाती है। दक्षिण की ओर इसका ढाल २०० से ३०० फुट तक है। प्रधान श्रेणी तथा जस्वान इनके मध्य एक चौड़ा टेबुल लैण्ड है जो कंकेला तथा समतल है परन्तु विभिन्न कंदराओं में प्राकृतिक चट्टानों द्वारा विभाजित है। यह क्षेत्र लगभग १५ मील लम्बा और आठ मील चौड़ा और सघन वनों से परिपूर्ण है जहां सुरक्षित वन हैं।

आम्ब के दक्षिण थोड़ी दूर पर सोलासिंही श्रेणी पूर्व की ओर सुकड़ जाती है और ज़िले की सीमा बनाना समाप्त कर देती है। इस स्थान पर पहाड़ियों में एक प्रकार की खाड़ी बन जाती है जिसके उत्तर-पूर्व में सोलासिंही और दक्षिण की ओर एक दूसरी पर्वतीय श्रेणी है। यह ऊना से कुछ मील उत्तर से आरम्भ होती है और दक्षिण की ओर कई भागों में बँट कर चलती है जिसका मुख जस्वान दून की ओर है। सतलज नदी पार करने के पश्चात् श्रेणी कई समानान्तर पहाड़ियों में बँट जाती है जिनकी ऊँचाई बहुत कम है। इनके टीलों पर घास तथा झाड़ियाँ हैं। यह कहलूर तथा गांधारी ताल्लुका के मध्य सीमा बनाती है। यह श्रेणी सतलज द्वारा सोलासिंही से अलग होती है जो लगभग ३० मील तक उनके मध्य उत्तर की ओर जाती है। जहां से सोलासिंही पश्चिम की ओर जस्वान दून की ओर मुड़ जाती है। नैनादेवी की पहाड़ी जिसके ऊपर नैना देवी की पवित्र-प्रसिद्ध स्मृति है। इस स्थान पर पहाड़ी की ऊँचाई सर्वोच्च है और कई मील दूर से दिखाई पड़ती है।

गांधारी ताल्लुका लम्बा-संकरा प्रदेश है जो सतलज के बाएँ तट पर उत्तर से दक्षिण को चला गया है वह उत्तर और पश्चिम की ओर नदी से और पूर्व की ओर कहलूर पहाड़ियों से घिरा हुआ है। उत्तर से दक्षिण तक यह ३० मील लम्बा है और उत्तर में ९ मील चौड़ा तथा दक्षिण में ६ मील चौड़ा हो गया है। उत्तरी भाग समतल टेबुल लैण्ड है जिसके किनारों पर नदी तट के समीप कछारी संकरी पट्टियां हैं।

नीचे की भूमि में ऊँची नीची पहाड़ियां हैं उसके पश्चात् ढालू भाग दक्षिण की ओर आ जाता है और फिर कछारी भूमि आ जाती है जो नदी और पहाड़ी के मध्य स्थित है। यहीं पर एक विभाजन करने वाली रेखा गांधारी को अम्बाला से अलग करती है कछारी भूमि अच्छी है यद्यपि उतनी अच्छी नहीं है जितनी कि नदी के दाहिने तट की है। ऊँचले प्रदेश सूखे पथरीले और बहुत कम उपजाऊ हैं।

होशियारपुर का मैदान शिवालिक पहाड़ियों के नीचे से दक्षिण की ओर कुछ ढालू हो गया है।

जालंधर जिले में अदमपुर स्थान में पहाड़ियों से २० मील की दूरी पर कांकर ऊपरी धरातल के समीप पाया जाता है जहां कि होशियारपुर में कांकर धरातल से १५ या २० फुट नीचे पाया जाता है।

शिवालिक के पश्चिमी ढालों पर कांडी प्रदेश सूखा और कम उपजाऊ है जब सिरवाल (जो कि तीन से ५ मील तक चौड़ी एक लम्बी पट्टी है) जो जालंधर की सीमा बनाती है बहुत उपजाऊ है। यहां पर ऊँचे प्रदेशों से अच्छी मिट्टी बहकर आती है। और पानी भी धरातल से १२ फुट से १५ फुट के भीतर पाया जाता है। दसूया तहसील में शिवालिक के कोण पर मंत्री पहाड़ी रीड़ मैदान को पार करती हुई आगे चलती है। कहते हैं कि प्राचीनकाल में इसी के समीप होकर व्यास नदी बहती थी।

चोसया चोस क्षेत्र में लगभग प्रति मील में पहाड़ी नदियां पहाड़ियों से नीचे उतरती हैं। गढ़शंकर के चोस जिले के अन्य चोसों की भांति ही हैं। जो पहाड़ियों से निकलता है और संकरे मार्ग होकर पहाड़ी के बाहर जाता है और आखिर वह कई भागों में विभाजित हो जाता है।

चोस के प्रभाव के कारण भूमि तीन भागों में विभाजित की जा सकती है। प्रथम बलुही भूमि की पट्टी है जो समस्त पहाड़ी की लम्बाई में २ से ५ मील तक चौड़ी फैली है जिनमें चोवों की साफ धाराएँ नहीं हैं। उससे नीचे का प्रदेश दूसरा भाग है जहां पर चो साफ साफ पता चलने वाले तटों पर होकर बहते हैं यहां पर बालू के बहने से हानि होती है तीसरा प्रदेश वह है जहाँ पर चो अपनी धाराओं से होकर आगे चले जाते हैं। यहां पर बड़ी हानि होती है। पानी तमाम छोटी छोटी धाराओं में बँट कर फैल जाता है और अपने साथ बालू बहाता जाता है। वायु के वेग से वह बालू सुन्दर उपजाऊ भूमि में भी फैल जाती है। जैसे जैसे चोवों की लम्बाई बढ़ती जाती है यह कार्य पहाड़ियों से दूरतम होता जाता है। पहले बहुत वर्षों तक (बालू गांव पहुँचने के पूर्व) भूमि की मिट्टी बड़ी उपजाऊ थी यह मिट्टी पहाड़ियों से आई हुई कांप की बनी थी। इस प्रकार कई वर्षों तक कितने ही गांवों को चोवों से लाभ होता रहा पर अब हानि के अतिरिक्त कुछ भी लाभ नहीं है। लोगों की कहावत है चोव के आगे सोना और पीछे पीतल है।

व्यास और सतलज नदियां लगभग जिले की उत्तरी तथा दक्षिणी सीमा बनाती हैं। तालवार स्थान पर व्यास नदी इस जिले में प्रवेश करती है और उत्तर की ओर शिवालिक पहाड़ियों से मिलती है। एक स्थान पर इसके दक्षिणी तट पर कुछ गांव हैं। माल्दा स्थान पर नदी दक्षिण पश्चिम को घूमती है और तब होशियारपुर और गुरदासपुर के मध्य सीमा बनाती है। कहा जाता है कि कभी मैनी के नीचे व्यास नदी शिवालिक के बहुत समीप होकर बहती थी जिससे सम्भव है कि इसके पुराने मार्ग ने छम्बों की रेखा बना ली हो। तालवार से कुछ मील नीचे से बरनाई (नदी का अब से पूर्व वाला मार्ग) अब बन्द हो गया है। बरनाई अपनी प्रधान धारा से जहां नदी दक्षिण-पश्चिम मुड़ती है वहां मिलती है।

जस्वान दून में बाभौर के समीप सतलज नदी इस जिले में प्रवेश करती है और किरातपुर के समीप तक दक्षिण की ओर बहती है। उसके पश्चात् वह पश्चिम की ओर घूम जाती है और रूपर के सामने शिवालिक को आर पार करती है। इसके पश्चात् सतलज नदी का मार्ग उत्तर-पश्चिम की ओर है लुधियाना तथा जालंधर जिलों को पार करती है। जस्वान दून पहाड़ियों से दो धाराओं या सोहानों में नीचे आती है। यह दोनों धाराएँ चौड़ी हैं परन्तु बड़ी सोहान में कम पानी रहता है।

व्यास तथा सतलज नदियों के तटों पर कछारी भूमि की पट्टियां हैं जिनमें बाढ़ के समय पानी फैल जाता है। वहाँ की मिट्टी में बालू तथा लोम मिट्टी मिली हुई है इसका अधिकांश भाग बड़ा उपजाऊ है। इस जिले से दो बीनें निकलती हैं। पूर्वी (श्वेत) बीन गढ़शंकर के समीप से निकलती है। चक्करदार मार्ग बनाती हुई फिर धुर उत्तर को बहती है और जिले की सीमा की समानान्तर

जाती है तथा कभी होशियारपुर में और कभी जालन्धर में होकर बहती है पश्चिमी (या काली) बीन तर्कियाना चम्ब से निकलती है, और कपूर्थला को चली जाती है। यह दोनों धाराएँ केवल कुछ ही फ़ुट चौड़ी हैं पर तेज धारा तथा गहराई के कारण इनको पार करना कठिन है।

महांवाली खड़ धारा दसूया तहसील में शिवालिक के उत्तरी भाग से निकलती है और उत्तर की ओर बहती हुई व्यास में जाकर प्रवेश कर जाती है।

जिले के उत्तरी भाग में व्यास नदी से कुछ छोटी धाराएँ अलग होती हैं। इनमें सबसे अधिक प्रसिद्ध शाह नहर है कहते हैं कि भंगाल के रायमुराद ने खोदाया था इसका सिरा चगरवाल के सामने है। उसके बाद यह व्यास नदी के मार्ग होकर ७ मील ले जाई गई है और सारियाना के ऊँचे प्रदेश में प्रवेश करती है। इन कुछ मीलों में बड़ी सुरक्षा रखनी पड़ती है क्योंकि बाढ़ से बांध नष्ट हो जाया करते हैं। इसके पश्चात नहर दक्षिण-पश्चिम की ओर बढ़ती है और जिले के ६ हजार एकड़ भूमि को सींचती है। १८८९ ई० से सरकार ने इसका प्रबन्ध अपने हाथ में ले लिया है। १९०२ ई० में सिर्वीवाल नहर के बनाने की बात निश्चय की गई थी।

छम्ब—मुकेरियन के पश्चिम कालधारा छम्ब है जिसका निकास बगरोई की ओर है। इसके पानी के निकालने की बड़ी आवश्यकता है।

दसूया और टांडा नगरों तथा व्यास नदी के मध्य कई एक छम्ब हैं यहां की भूमि बहुत नम है और पानी निकला करता है। इस प्रदेश की चौड़ाई लगभग दो मील है। इसका आरम्भ हिम्मत पुर से होता है और नदी के समानान्तर चल कर कपूरथला में नदी में मिल जाता है। शायद व्यास का प्राचीन मार्ग यही है और शिवालिक से कई एक धाराएँ यहाँ आती हैं। इनमें से दो धाराओं ने छम्ब के कुछ भाग को कांप से भर दिया है जिससे उसके तीन भाग हो गये हैं। इन तीनों में से उत्तरी तेर्कियाना, मध्यवर्ती चनाल्टा या सूनकवाला और दक्षिणी जहूरा कहलाता है।

शाह नहर की पूँछ उत्तरी भाग में ऊँच बस्ती में बहती है। नीची सील भूमि में जून या जुलाई में बाढ़ आ जाती है और सितम्बर तक पानी भरा रहता है। शीतकाल आ जाने पर भूमि के भीतर से पानी बुलबुलाहट के साथ निकलता है और भूमि को सीली बना देता है। अप्रैल मई मास में यहां की मिट्टी कड़ी धूप से सूख कर लोहे की भांति सख्त हो जाती है। चाम्बों के कुछ भागों में खेती प्रायः बिल्कुल नहीं हो सकती है।

सभी चम्ब पश्चिमी बीन में गिरते हैं जो नरसिंहगढ़ चम्ब से आरम्भ होता है। चनाल्टा चम्ब का उत्तरी सिरा एक चोव की कांप से भर गया है इस चम्ब का मध्यवर्ती भाग दो मूहा नाला द्वारा खाली होता है।

बाहरी शिवालिक पहाड़ियों की बनावट, बालू लोम, तथा मिट्टी की है। इनके पत्थर के टुकड़े न तो बहुत छोटे हैं और न बहुत बड़े ही हैं। नदियों की तली की रेत में पत्थर के छोटे छोटे टुकड़े भी पाये जाते हैं। बलुहा पत्थर मरी तथा धरमशाला की भांति पाया जाता है। सख्त पत्थर के नीचे प्राचीन शिलाओं के टुकड़े मिलते हैं उनसे चूना, बालू आदि की मिलावट का पता चलता है। यहां प्राचीनकाल के फासिलों की हड्डियां मिलती हैं।

इस जिले में कीकर, फ़ुलाह, शीशम, सिरस, बकाइन, बेर और शहतूत के वृक्ष सब कहीं पाए जाते हैं। धामन, धव, गौंही, पिलखान, फगूरी, हरार, हिरेक, जयलोटा, जामुन, कम्कर, कंमाल, कांगू, कमाल, खैर, खिरनी, फिन्नू, लसांढ़ा, मौलसती, मोवा, नागदवन, नीम, पलास, ढाक, पताजन, रजैन, साल, सिम्बाली, सेमर, सोहांजना, फराश आदि के वृक्ष वनों तथा पहाड़ियों पर मिलते हैं। तून पहाड़ियों पर और झाऊ नदी के कछारों में अधिकांश संख्या में पाये जाते हैं।

गरना मंदार, बसूती और आक के पौधे लगभग सब कहीं बहुतायत से उगा करते हैं।

इस जिले में आम का वृक्ष खूब उगता है। गढ़दीवाला से मानिकपुर तक लगभग १० मील लम्बी तथा ८ मील चौड़ी वाली भूमि पट्टी में खास

उत्तर की ओर है जहां खोदाई होने पर थाना की नीव के नीचे प्राचीन हिंदू तथा जैन शिल्पकला वाली वस्तुएं प्राप्त हुई हैं। इन में से बहुतों का संग्रह किया गया और धोलबाहा मन्दिर में रक्खा गया पर बहुत सी वस्तुएं उन्हीं स्थानों पर छोड़ दी गई जहां पाई गई हैं।

हाजीपुर के लगभग आठ मील उत्तर की ओर कई एक स्थान ऐसे हैं जिनका सम्बन्ध पांडवों तथा श्री पांडेन से है जिनमें एक सुन्दर कुआं तथा शिवाला हैं। इन में गोसाईं लोग सेवक रहते हैं। महाभारत में दसूया का वर्णन आता है कि वह विराट राजा के निवास स्थान था जहां पांडव लोग अपने १३ वर्ष वनवास का समय व्यतीत किया था। इसमें एक प्राचीन किला है जिसका वर्णन आईन अकबरी में मिलता है उसे विराट नगरी अब भी कहते थे। पंजगात्र सतलज के तट पर बाभौर में है। कहते हैं कि इस स्थान का नाम उन पांच पत्थरों पर पड़ा है जिन्हें पांडव लोग पंच सतार खेल में उस समय प्रयोग किया था जब कि उनके पिता तपस्या कर रहे थे। माहिल पुर से सात मील पश्चिम की ओर भीम स्थान है यहीं पर वनवास काल में पांडवों ने निवास किया था यह एक शिवाला की ईंट में लेख से सिद्ध होता है। जैजोन से ११ मील उत्तर लमाढ़ा है वहां एक पत्थर का बना मन्दिर है जो पांडव काल का है।

अति प्राचीन काल में जालंधर द्वाब पर चन्द्रवंशी राजपुत्रों का अधिकार था। कांगड़ा और समीपवर्ती पहाड़ियों पर (छोटे राजा) चन्द्रवंशी वंश के राजपुत्र अब भी पाये जाते हैं। यह राजा अपने को सुसरम राजा का वंशज कहते हैं और कहते हैं कि उनके पूर्वजों का अधिकार मुल्तान तक था और महाभारत में भाग लिया था। युद्ध के पश्चात् उनका राज्य छिन गया और वह सुसरा चंद्र राजा के आधीन जालंधर द्वाब में चले आये। यहां आकर उन्होंने एक राज्य स्थापित किया। इस राज्य की वंशावली, राजतरंगनी, शिलालेखों तथा चीनी यात्री ह्वानसांग के लेख से सिद्ध होता है कि मुसलमानों के आने के पूर्व जालन्धर द्वाब में उनका एक स्वतंत्र राज्य था। इस राज्य की राजधानी जालन्धर थी और कांगड़ा भी एक शक्ति शाली गढ़ था। सातवीं सदी में ह्वानसांग ने राज्य का वर्णन करते हुये लिखा है कि राज्य पूर्व से पश्चिम तक १६७ मील और उत्तर से दक्षिण १४४ मील है। जनरल कनिंघम के कथनानुसार इस राज्य में वर्तमान द्वाब के अतिरिक्त कांगड़ा पहाड़ी राज्य भी सम्मिलित थे। इनमें चम्ब, मंडी, सकेत और सरहिंद राज्य सम्मिलित थे। इस देश का नाम कटोच भी था जिसके अर्थ का पता नहीं चलता है। पुराणों तथा राजतरंगनी में इसका नाम त्रयगर्थ आता है।

त्रयगर्थ कटोच राजवंश का अधिक वर्णन जालन्धर तथा कांगड़ा जिलों की पुस्तक में मिलेगा।

इस जिले पर मुसलमानों का अधिकार कब हुआ इसकी निश्चित तिथि का पता नहीं है। इब्राहीम गौरी के लालमन कवि के अनुसार इब्राहीम जालन्धर तक घुस आया था पर जब ठीक रूप से विजय होगई तो उसका वर्णन नहीं मिलता है। इब्राहीम ने १०५९ से ७९ ई० तक राज्य किया था।

दिल्ली पतन होने और शिवालिक पहाड़ियों के राजा रतनसेन को हराने के पश्चात् जनवरी १३९९ ई० में तैमूर जस्वान दून की ओर बढ़ा था जब उसने शिवालिक के दूसरी ओर घाटी में प्रवेश किया तो उसे पता चलता कि नगर कोट तीस कोस की दूरी पर है जहां जाने का मार्ग वन तथा पहाड़ियों पर होकर जाता है। लगभग सभी राज और राजा ने तैमूर का सामान किया था पर तैमूर ने सभी को हराया कत्ल किया और पशुओं के समूहों पर अधिकार जमाया था। लगभग बत्तीस दिन में तैमूर कोबीस लड़ाइयां लड़नी तथा विजय प्राप्त करनी पड़ी थीं। उसने सात या आठ गढ़ों पर अधिकार जमाया था जो दो या तीन कोस की दूरी पर स्थित थे। इनमें से एक गढ़ शेखों का था। इस स्थान पर २ हजार आदमियों को तैमूर ने कत्ल किया था। तैमूर का कहना है कि इन गढ़ों के निवासी हिन्दुस्तान के बादशाह को जजिया कर देते थे और इतने शक्ति शाली हो गये थे कि बादशाह का विरोध करते थे।

उस समय यहां के खोक्खर लोग शक्तिशाली थे परन्तु उनके बहुत से विरोधी थे और देश में गड़बड़ी फैली थी। १४११ ई० में सारंग खाँ बेज वाड़ा आया और वहां उसके बहुत से साथी बन गये। उसने सतलज की ओर कदम बढ़ाया और रूपर के लोग उसके साथ बन गये पर सरहिन्द के मालिक सुल्तान शाह ने उसे हरा दिया उसके बाद वह पहाड़ियों की ओर भागा जालन्धर में पकड़ कर मार डाला गया। १४०१ ई० में जसरथ नामक खोक्खर ने बलवा किया और दिल्ली के साम्राज्य पर अधिकार करने के लिये बड़ा जोर मारा पर व्यास तट पर कांगड़ा के समीप १४२८ ई० में उसे पराजय खानी पड़ी। इसी समय बहलोल लोदी काल में इब्राहीम खाँ सूर अपने पुत्र हसन खाँ (शेर शाह के पिता) के साथ अफगानिस्तान से आये थे और महाबत खां सूर की नौकरी की थी। दाऊद साहू खेल जिसको सुल्तान बहलोल ने हरियल और बारला के परगने जागीर रूप में दिये थे। वह बेज वाड़ा में आकर टिक गये। तातार खाँ ने भी मलोत की नींव डाली जिस गढ़ से शेरशाह के अफसर हमीद खाँ कुकर ने नगरकोट, ज्वाला, ददवाल और जम्मू पहाड़ियों पर मजबूती के साथ शासन किया था। सचमुच ही उस समय समस्त पहाड़ी प्रदेश में कोई भी व्यक्ति शेरशाह के विरुद्ध सांस नहीं ले सकता था।

बाबर के हमले के समय मलोत ने भी बड़ा काम किया था। उस समय मलोत पर दौलत खां का अधिकार था जो पंजाब का बलवाई गवरनर था। जो कुछ घटनाएं हुई उसका स्वयं बाबर ने अपने वर्णन में लिखा है।

कलानपुर से चलकर बाबर ने कई एक बेगों को गाजी खाँ पर अधिकार जमाने के लिये भेजा और मलोत गढ़ को भी बचाने के लिये कहा। कहलुवां के समीप बाबर ने व्यास नदी पार किया और तीन दिन के पश्चात् मलोत पहुँचा जहाँ गाजी खाँ था। दौलत खाँ ने शीघ्र ही संधि वार्ता की बात चलाई। बाबर ने उसकी बात मान ली और उसके गांव तथा उसकी जाति को उसके अधिकार में रहने दिया शेष भाग छीन लिया। उसके बाद आक्रमण कारियों ने गढ़ पर अधिकार किया और वहाँ उन्हें गाजी खाँ ने अपने वंश के लोगों को बाबर के हाथों में छोड़ दिया और आप पहाड़ियों पर भाग गया। किला मुहम्मद अली जंग की देख रेख में छोड़ दिया गया और अबकन्द, मलोत होता हुआ बाबर दून पहुँचा वहां अलीम खां ने अधिकार कर लिया था उसने उसे बाबर को दे दिया। बाबर दून से रूपर की ओर बढ़ा और बाद में उसने पानी पत की लड़ाई में इब्राहीम लोदी को परास्त किया।

शिवालिक तथा समीपवर्ती प्रदेश में बाबर को पठान शक्ति को दबाने में सफलता प्राप्त नहीं हुई। १५५६ ई० में हार जाने के बाद सुल्तान सिकन्दर अफगान शिवालिक पहाड़ियों पर भाग गया मुगल अफसरों ने उसका पीछा ठीक से नहीं किया इस लिये उसने दिल्ली साम्राज्य पर पुनः अधिकार करने के लिये शक्ति का संगठन किया। इसलिये अकबर के समय में बैरम खां की देख रेख में उसे दबाने के लिये एक सेना भेजी गई और उसने शिवालिक पहाड़ियों के समीप सिकन्दर को परास्त किया पर सिकन्दर की खोज में छः माह तक परेशानी उठानी पड़ी जो पहाड़ियों में जा कर छिप गया था। १५५४ ई० में बैरम खाँ ने अकबर के विरुद्ध बलवा किया और तालवाड़ा चला गया। राहोन के समीप गुकौनर में हार हुई और अकबर के सामने उसने सिर झुका दिया।

१५९६ ई० में जसूवाला के जमींदारों ने झगड़ा किया परन्तु जब उन्हें पता चला कि फरीद मुर्तजा खाँ की देख रेख में शाही सेना ने जम्मू तथा कांगड़ा पहाड़ियों पर अधिकार जमा लिया है तो वह भी अकबर के आधीन हो गये।

इस जिले में कई एक स्थानों पर मुसलमान स्मृतियां पाई जाती हैं। होशियार पुर से ८ मील पूर्व शाहनूर जमाल है यह १२५० ई० का है। हारियान में दो मसजिदें हैं एक १५९७ ई० की और दूसरी बाद की है। गढ़शङ्कर में एक मसजिद तथा एक मकबरा है जो ११९५ ई० के हैं। औलिया पुर में सखी सरवर की समाधि है। झङ्गी माही में माहीशाह का मकबरा है जहां सालाना मेला लगता है। मांसवाल में बुल्ला शाह का मकबरा है और

टांडा के समीप जाजा में दो मकबरे हैं। मुहर्रम के समय मेला लगता है।

मुसलमानी समय की यादगारें कम हैं। इनमें सब से प्रसिद्ध मलोत का गढ़ है। टांडा के समीप पश्चिमी बीन को पार करने के लिये एक प्रसिद्ध सम्राट का पुल था। उसकी मरम्मत मेजर अबट ने कराई थी पर १८९४ ई० में वह बह गया।

द्वाब के अंतिम गवरनर अदीना वेग का मकबरा नालोयान में है। वह बड़ा ही चतुर था उसने अहमद शाह दुर्रानी के विरुद्ध सिक्खों की सहायता की थी। यदि उसकी मृत्यु न हो जाती तो इतिहास का रूप बदल गया होता।

समस्त मुसलमानी काल में पहाड़ी राजाओं के मध्य में पहाड़ियाँ बटी रहीं जिनमें से जस्वान और दतारपुर इस जिले से सम्बन्ध रखती हैं। जस्वान या जस्वाल घराने में कटोच वंश से अलग होकर अपना अलग राज्य स्थापित किया था। दतारपुर ददवाल घराना गूलर वंश की शाखा है। गाथा के अनुसार यह कटोच वंशज का सब से बड़ा घराना है।

जसवाल राजों ने लसाढ़ा में अपना गढ़ बनाया जो जैजोन के समीप है। जयपुरा अम्ब के समीप है। अम्ब में भी एक सुन्दर बाग उनकी है जहां पर बहुत प्राचीन समय के वृक्ष हैं।

सतलज पार जांधारी तालुका पर कहलूर के राजा का अधिकार था जिसके अधिकार में अब भी समीपवर्ती पहाड़ियां हैं। तालहाटी का तालुका कुटलहेर राजा के अधिकार में था जो कांगड़ा का छोटे राजाओं में से माना जाता है।

इस जिले का सिख कालीन इतिहास जालन्धर जिले के इतिहास से सम्बन्धित है। यहां के मैदान में सिखों ने आरंभ काल में ही आक्रमण किया था।

रामगढ़हिया मिस्ल के नींव डालने वाले जस्सा सिंह ने १७५२ ई० में अदाना पेग के यहां नौकरी कर ली थी। अदीना वेग की मृत्यु हो जाने पर उसने जालंधर द्वाब के उत्तरी-पश्चिमी भाग के कुछ हिस्से पर अधिकार कर लिया और दलवाला मिस्ल के सरदार मांसा सिंह गढ़हियावाला से उस की मुठभेड़ हुई। पर १७२६ ई० में वह कन्हैया तथा दूसरे मिस्ल वालों द्वारा सतलज पार मार भगाया गया। १७८३ ई० में कन्हैय्या की बढ़ती शक्ति देख कर सुकरचाकिया को रंज हुआ और उन्होंने कांगड़ा के संसार चन्द से मेल कर लिया। संसार चन्द ने जस्सा सिंह को बुला कर कहा कि तुम अब अपनी जायदाद पर अधिकार करो। १८०३ ई० में उसका पुत्र जोधसिंह उसकी जायदाद का मालिक हुआ और १८०५ ई० में होलकर के पीछा करने में उसने लार्ड लेक की सहायता की थी पर १८१६ ई० में उसके खानदानियों में झगड़ा होने पर महाराणा रणजीत सिंह को दखल देने का अवसर आया जिससे उन्होंने समस्त जायदाद पर कब्जा कर लिया। इसका अधिकांश भाग दसूया तहसील का था।

फैज्जुल्ला पुरिया या सिंहपुरिया मिस्ल के अधिकार में होशियारपुर तहसील का पट्टी स्थान था पर १८११ ई० में रणजीत सिंह के सेना नायक मोहकाम चन्द ने उससे छीन लिया। इसमें होशियारपुर तहसील का दक्षिणी-पश्चिमी भाग तथा दसूया का कुछ भाग था।

करोरासिंह (करोरा सिंह या मिस्ल) ने हारियाना और शाम चौरासी पर अधिकार कर लिया और उसकी मृत्यु के पश्चात् कल्सिया का जोधसिंह उस जायदाद का मालिक बना।

सियाल्बा वंश की नींव हरी सिंह ने डाली थी उसने तारा सिंह गायबा से गठबंधन कर लिया था और गढ़शंकर के समीपवर्ती प्रदेश पर अधिकर लिया था। उसके ऊपर कांगड़ा के चुमन्द चन्द कटोच ने आक्रमण किया पर कुशालसिंह फैजुल्लापुरिया की सहायता से तारा सिंह ने उसे हरा दिया पर शीघ्र ही उससे और कुशल सिंह से झगड़ा हो गया। कुशल सिंह की सहायता जस्वाल राजा ने की जिस चुमन्द चन्द को भाग कर झगवाड़ा में शरण लेनी पड़ी।

मासासिंह (गढ़हिया वाला) मालगुजारी न दे सकने पर लाहौर में क़ैद करके रख लिया गया जहां से बच कर वह भागा और दलवाला मिस्ल से मिलकर स्वतंत्र हो गया। जस्सा सिंह रामगढ़-

हिया ने उससे उसकी जायदाद छीन ली पर कन्हैयों की सहायता से फिर ले लिया पर उसके पुत्र महताब सिंह से रामगढ़हिया वालों ने पुनः ले लिया और जब कांगड़ा के संसार चन्द ने द्वाब को फिर विजय किया तो महताब सिंह फतेह सिंह (अहलू वाला) के साथ गया और दरुली के घेरे में मार डाला गया।

पहाड़ियों पर जस्वान के राजा और दतारपुर १७५६ ई० तक अपनी ठीक स्थित पर बने रहे। जब सिखों ने मैदानी भाग में अपना प्रभुत्व जमाना आरम्भ किया तो सरदार गुरदित्त सिंह ने समस्त बहादुर तालुका तथा ऊना के कुछ भाग पर अधिकार जमा लिया। सरदार हरी सिंह (सियालबा) ने अम्बाला जिले के नूरपुर पर अधिकार कर लिया। जस्वान के राजा ने मांसवाल की आधी मालगुजारी देने पर संधि किया था। गढ़शङ्कर के सरदार बुद्धसिंह ने तख्त गढ़ के तालुके पर अधिकार जमाया। इन सभी सरदारों ने रणजीत सिंह के सामने सिर झुका लिया और १८१८ ई० तक समस्त जिला रणजीत सिंह के अधिकार में हो गया। १८०४ ई० में कांगड़ा के राजा संसार चन्द ने होशियार पुर पर अधिकार कर लिया रणजीत सिंह ने उसे भी निकाल बाहर किया। उसके बाद जस्वान के राजे तथा दतारपुर भी रणजीत सिंह के आधीन हो गये। १८१६ ई० में सियाल कोट में रणजीत सिंह ने अपने समस्त सेना को एकत्रित किया। पहाड़ियों के राजा इसमें अपनी सेना के साथ सम्मलित होने को थे। जस्वान और नूरपुर के राजे उसमें सम्मिलित नहीं हो सके इस पर रणजीतसिंह ने उनपर इतना अधिक जुर्माना लगाया जिसे वह नहीं दे सकते थे। जस्वान के राजा उमेदसिंह अपने राज्य से स्तीफा दे दिया और उसे १२०० रुपये सालाना की जायदाद मिली। उसके पश्चात् दतारपुर भी रणजीत सिंह के अधिकार में हो गया। १८१८ ई० में राजा गोबिन्द सिंह मर गये उसके बाद उनके पुत्र राजा रहे पर बाद में जागीर लेकर वह भी राज्य से अलग हो गये।

जालंधर के अंतर्गत रहा और वहां का शासन गवरनरों के डिप्टी करते थे। पहाड़ियों पर और जस्वान में लगभग समस्त भूमि जागीरों में बंटी थी जिनमें जस्वान के राजा, दातारपुर, आनन्दपुर के सोधी और वेदी विक्रम सिंह थे। शिवालिक के नीचे हाजीपुर और मुखेरियन एक बड़े प्रदेश के साथ शेरसिंह के आधीन थे और उसका प्रतिनिधि सरदार लहना सिंह मजीथिया शासन करता था। दसूया के चारों ओर का प्रदेश शाहजादा तारासिंह को दिया गया जो रणजीत सिंह का कथित पुत्र था। इनके अतिरिक्त बहुत से गांव सिख आक्रमणकारी सरदारों के अधिकार में थे जिन्हों ने पहले ही देश का विभाजन कर लिया था। धीरे धीरे इन लोगों की जायदादों पर भी रणजीत सिंह ने अधिकार कर लिया।

ऊना तहसील में सिख धर्म की स्मृतियां पाई जाती हैं कुछ प्रसिद्ध हैं।

किरतारपुर में बाबा गुरदित्त सिंह की समाधि है यह लगभग २०० की प्राचीन समाधि आनन्द पुर से ६ मील दक्षिण-पूर्व में स्थित है जिसका प्रबन्ध-आनन्दपुर के सोधी लोग करते हैं।

आनन्दपुर की समाधि तेगबहादुर की है। तेगबहादुर गुरुगोबिन्द सिंह जी के पिता थे और वह १६७५ ई० में दिल्ली में फांसी पर लटकाए गये थे। इस समाध को गुरुगोविन्द सिंह ने बनवाया था। यह नांगा लोगों के अधिकार में है।

मैरी—मुबारकपुर से ९ मील उत्तर-पूर्व की ओर है। यहाँ बरबाध सिंह की समाधि है। यहां होली के समय मेला होता है।

सिखों के समय में ऊना स्थान पर वेदिस लोगों ने कई एक गढ़ बनाये थे। जंदोली में एक धरम शाला है जहां सालाना मेला लगता है। यह माहिल पुर से ४ मील उत्तर की ओर है।

कर दिया गया और १८४८ ई० में जब कि पंजाब का शेष भाग भी ब्रिटिश राज्य में शामिल कर लिया गया।

पहाड़ी राजा लोग अँग्रेजों की करतूत देख कर असंतुष्ट हो गये क्योंकि उन्हें आशा थी कि वह सब अपने खोये हुये राज्य पुनः प्राप्त कर लेंगे। जस्वान, दातारपुर और कांगड़ा के राजाओं ने बलवा कर दिया। इस समाचार को सुन कर लार्ड लेक पठान कोट से ५०० सेना लेकर दून पहुँचा और दतारपुर तथा जस्वान के राजाओं को अधिकार में कर लिया उनकी जागीरें छीन लीं। राजाओं को देश से निकाल दिया गया उनके महल गिरा दिये गये और सामान पर अधिकार कर लिया गया। वेदी क्रिमसिंह (अनाके) ने भी राजों का साथ दिया और होशियार पुर की ओर बढ़ा। मैली स्थान पर उन्होंने जस्वान राजा की हार का समाचार सुना और शेरसिंह के कैंप में भाग गया। उसकी जायदाद भी छीन ली गई पर युद्ध के समाप्त होने पर उसने अपने को अँग्रेजों के हवाले कर दिया इस लिये उसे अमृतसर में रहने की आज्ञा दे दी गई।

गदर का प्रभाव इस जिले पर बहुत थोड़ा पड़ा। २३ मई १८५७ ई० के कैदी लोग हटा कर बाजवाड़ा क़िले में कर दिये गये। कैदियों के मध्य अंग्रेजों को कुछ गड़बड़ी मालूम हुई इस कारण पांच प्रमुख क़ैदियों को फांसियों पर लटका दिया गया। ज़िले में जो भी उपद्रव उत्पन्न हुये वह शिमला के नौकरों के कारण हुये जो चारों ओर समाचार फैला रहे थे या जालन्धर से आये हुये लोगों के कारण सनसनी फैली और गड़बड़ी मची।

अँग्रेजों के समय में जिले का जब सर्व प्रथम निर्माण हुआ तो पांच तहसीलें बनाई गईं। मुकेरियां जिले के उत्तरी सिरे पर थी जिसमें शिवालिक पहाड़ियों का उत्तरी कोण सम्मिलित था। हरियाना और होशियारपुर चिंतपुरी श्रेणी से जालन्धर सीमा तक बनाई गईं। ऊना और गढ़शंकर तहसीलें जिले के दक्षिणी भाग में बनाई गईं शिवालिक का जल विभाजक इनके मध्य सीमा बनाता था। जब से यह ज़िला अंग्रेजी अधिकार में आया इसकी सीमा में किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं किया गया है। १८५० ई० में जांधारी का तालुका अम्बाला से निकालकर इस ज़िले में मिला दिया गया। १८६१ ई० में हारियाना की तहसील तोड़ दी गई और इसका पश्चिमी भाग जिसमें टांडा पुलीस थाने का भाग था मुकेरियन तहसील में मिला दिया गया और इसकी राजधानी दसूया बना दी गई। हारियाना और होशियारपुर तहसीलों के शिवालिक पहाड़ियों के पूर्व वाले भाग ऊना में मिला दिये गये। शेष हारियाना तहसील का भाग होशियारपुर में मिला दिया गया। और उसका कुंगा माहिलपुर थाना गढ़शंकर में मिला दिया गया। तालुके के २० गांव जो राजा कपूरथला के अधिकार में थे वह राजा के भाई कुंवर सुचेत सिंह को जागीर रूप में दिये गये। बाद में सुचेत सिंह नक़द दाम लेने पर राजी हो गये इस कारण वे फिर महाराज कपूरथला को दे दिये गये। इस जिले की जागीरें दूसरे जिलों की अपेक्षा छोटी हैं। १८७७ ई० में अंग्रेजों ने रुघनाथ सिंह तथा जासवाल राजा को २१ गांव की जागीर दे दी जो पहले उनके पिता उमेदसिंह (अना दून) के अधीन में थे।

जन संख्या

शिवालिक तथा होशियारपुर के वे भाग जहां खेती नहीं होती है उन्हें छोड़ कर खेती वाले प्रदेशों की जन संख्या सघन है और औसत से प्रति वर्ग मील में लगभग ८७० मनुष्य निवास करते हैं। पर पहाड़ी के ऊपर से आने वाली नदियां धीरे धीरे खेती वाली भूमि को नष्ट करती जाती हैं जिससे कठिनाई दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। होशियारपुर की जन संख्या लगभग ३ लाख ८० हज़ार है और प्रति वर्गमील में औसत से ५२० व्यक्ति निवास करते हैं। गढ़शंकर तहसील की जन संख्या लगभग २ लाख ६२ हज़ार और औसत आबादी प्रति वर्ग मील में ५१४ के लगभग है। तहसील की जनसंख्या २ लाख २० हज़ार है और प्रति वर्ग मील में लगभग ३५५ व्यक्ति रहते हैं। जिले की कुल जन संख्या १० लाख से कुछ अधिक है।

इस जिले में ११ नगर तथा २,११७ गांव हैं। होशियारपुर की जन संख्या लगभग २५ हज़ार, टांडा-उरमूर की १५ हज़ार, दसूया ६ कैथाना की ८ हज़ार मिआनी की ७ हज़ार, हरियाना की लगभग ७ हज़ार गढ़शंकर की ६ हज़ार, आनन्दपुर की ५ हज़ार, अना की ५ हज़ार गढ़ीवाला की ४ हज़ार मुकेरियां की ४ हज़ार और खानपुर की चार हज़ार के लगभग है। पर अब जन संख्या में बहुत वृद्धि हो गई होगी। समस्त जन संख्या का लगभग ७ प्रतिशत भाग नगरों में निवास करता है। औसत से प्रत्येक गांव की आबादी लगभग ४३२ है।

जिले के गांवों के घर मिट्टी के बनाये जाते हैं। छतें भी (मुण्डे कोठे वाली) मिट्टी की सपाट बनाई जाती हैं। गांवों में प्रवेश करने वाली गलियां संकरी हैं। घर गांवों में एक दूसरे से मिले हुये बनाए जाते हैं।

पहाड़ों पर किसान अपने घर अपने खेतों में बनाते हैं। घरों की छतें ईंट की बनती हैं। और घर दो तल्ले बनाये जाते हैं। नीचे वाले भाग में घर के प्राणी रहते हैं और ऊपरी भाग में सामान रक्खा जाता है। घरों के चारों ओर बाड़ा बना रहता है। घर साफ़ और स्वच्छ रक्खे जाते हैं। उच्च श्रेणी वाले ऊंचे स्थानों पर तथा नीचे श्रेणी के लोग नीचे स्थानों में घर बनाते हैं।

रीति-रिवाज

इस जिले में हिन्दू लोग बालपन में ही नौ से बारह वर्ष की अवस्था में बालकों का ब्याह करते हैं। लड़कियों की अवस्था तो ५ से ७ वर्ष तक ही होती है। राजपूतों के मध्य दूसरों की अपेक्षा कुछ देरी में ब्याह किया जाता है। साधारणतया राजपूत लड़की का ब्याह १६ वर्ष के पूर्व और लड़के का २५ वर्ष के पूर्व नहीं किया जाता है। अधिक अवस्था हो जाने पर ब्याह होना ही कठिन हो जाता है और ब्याह करने के लिये बहुत रुपया खर्चा करना पड़ता है।

जिले में तीन प्रकार की शादियां होती हैं। बिना दाम वाली शादियों को पुण्य कहते हैं। स्त्री का मूल्य दिये जाने वाली शादी को तका और अदला बदला वाली को वट्टा कहते हैं। एक चादर नामक चौथे प्रकार की भी शादी होती है। ब्याह हो जाने पर स्त्री अपने पति के गोत्र की माने जाने लगती है।

उच्च राजपूतों के मध्य पुण्य ब्याह प्रचलित है। एक गोत्र में शादियां नहीं की जाती हैं। रिश्तेदारी में भी शादी नहीं की जाती है।

विधवा स्त्रियों का ब्याह जाट, सैनी, चाहंग, कनेट, महतम आदि लोगों के यहां प्रचलित है। विधवा विवाह दो प्रकार के होते हैं। एक में विधवा की सम्पति लेनी पड़ती है जिसे करेवा कहते हैं और दूसरे में यह रीति प्रचलित है कि पति के मर जाने पर स्त्री दूसरे भाई की स्त्री बन जाती है। धनी लोग एक से अधिक ब्याह भी करते हैं पर साधारण रूप से एक से अधिक स्त्रियां लोग नहीं रखते हैं।

उन्नीसवीं सदी के अंत तक इस जिले के लोग कई एक लड़कियों के लगातार पैदा होने पर अब से बाद वाली लड़की को जिन्दा गढ्ढे में गाड़ देते थे। ऐसा करने से लोगों का विश्वास था कि उनके लड़का उत्पन्न होगा। बच्चे को गाड़ने के पूर्व उसके मुख तथा छाती पर सफेद कपड़ा रख देते थे। इस प्रकार प्रति वर्ष हज़ारों बच्चे मारे जाते थे। सरकार को इसके ऊपर रोक लगाने में बड़ी कठिनाई हुई। रोक लगाने पर भी सफलता नहीं हुई क्योंकि जब माता-पिता ही बच्चे को मारने पर तयार होते थे तो फिर उसे कौन बचा सकता था। बीमारी की खबर के बाद मौत का समाचार ही माता-पिता देते थे। अब यह बात नहीं है।

भाषा

इस जिले की प्रधान भाषा पंजाबी है। नगरों में यह उर्दू से और पहाड़ियों पर पहाड़ी भाषा से मिल जुल जाती है। पहाड़ों का रहने वाला मनुष्य अपनी बोली से शीघ्र पहचान लिया जाता है। इसके अतिरिक्त पटोई भाषाएँ भी बोली जाती हैं। यह लभानी या लबांकी तथा गूजारी भाषाएँ हैं। गुजारी भाषा मारवाड़ी से मिलती जुलती है और लभानी एक अलग भाषा है पर वह स्थानीय भाषा

से मिली जुली है। पर ये भाषाएं हिन्दी से मिलती जुलती हैं। जैसे एक नाम को पहाड़ी तथा गूजरी दोनों में नांव कहते हैं। मैं के लिये मैं ही प्रयोग होता है।

पहाड़ी भाषा के उदाहरण रूप में नीचे लिखा बयान देखिये :—"गुनाही दा गलाय औदां नांव लछमन बावेदा नाँव सिद्ध, जाति दा राजपूत रहने वाला वासिया गर्लिया परागपूरे दा, बरेस त्रियां बरयां दी कित्ता जिमींदारी"।

हिन्दी में अनुवाद :—दोषी का बयान मेरा नाम लछमण पिता का नाम सिद्ध, राजपूत जाति गार्लिया परागपुर का रहने वाला हूँ अवस्था तीस वर्ष व्यवसाय खेती है।

गूजरी भाषा का उदाहरण "मेरो नांव मोथू मेरा बाप को नाँव लखा जात को गूजर उमर पजाह बरीआं दी, मेरे घर खुद काम हल बहना"।

अर्थात् मेरा नाम मोथू, पिता का नाम लखा, जाति गूजर, अवस्था पचास वर्ष, घर खुर्द और पेशा हल जोतना है।

लवानी भाषा का उदाहरण "चोखी चीज मचा बो नहरा लाल" मेरे प्रेमी के लिये अच्छी वस्तु मंगाओ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि पहाड़ी, गूजरी तथा लवानी भाषाएं जो जिले में प्रचलित हैं उनका रूप हिन्दी से बहुत कुछ मिलता जुलता है और साथ ही साथ उनकी लिपि भी हिन्दी के ही वर्ण माला में है।

जाति उपजातियाँ तथा प्रधान वंश

तहसील ऊना—जांधारी तालुका में मुख्यत: ब्राह्मण और कनेट निवासी हैं। तख्तगढ़ और नूरपुर में गूजर तथा राजपूत लोग पहाड़ियों पर तथा नदियों के तट पर बसे हुये हैं। नदियों तथा पहाड़ियों के मध्य उपजाऊ मैदान में जाट, सैनी तथा बाहटी लोग बसे हैं। बभौर तालुका में भी राजपूत लोग बड़े जमींदार हैं पर अधिकांश किसान लोग विभिन्न जातियों के और ब्राह्मण हैं। इससे ऊपर की ओर ब्राह्मण तथा राजपूत जमींदार हैं। जाट, सैनी, भट्टी और गूजर जातियाँ किसान हैं।

दसूया तहसील—पहाड़ियों पर अधिकांश संख्या में बिहाल राजपूत, चंग और गूजर रहते हैं। कांगड़ा जिले के सीमावर्ती मैदानों में जारियाल राजपूत और सैनी लोग रहते हैं। मुकेरियां के चारों ओर वाले ऊँचे समतल मैदान में अवाँ जाति के लोग रहते हैं जिनमें १२ मुसल्लम गांव हैं। कछारी भूमि में गूजर, मुसलमान जाट तथा पठान रहते हैं। शिवालिक और दसूया के मध्य मैदान में डोगर जातियों के कुछ गांव हैं। दसूया के चारों ओर अरैन, मुसलमान जाट चम्ब के समीप और पूर्व की ओर हिन्दू जाट रहते हैं। टांडा पुलिस सब विभाग में सैनी, जाट, नारू राजपूत तथा कुछ पठानों के गाँव स्थित हैं।

होशियारपुर तहसील

कांडी गांवों में गूजर, ददवाल राजपूत रहते हैं कुछ ब्राह्मण भी हैं। हारियाना से गढ़शंकर तक मैदानी पट्टी में पठानों के छोटे छोटे गाँव बसे हैं। शेष मैदानों में हिन्दू जाट और मुसलमान नारू राजपूत दक्षिण की कुछ सुन्दर छोटे राज्यों में रहते हैं। कहीं कहीं पर सैनी और अरैन जातियों के गांव हैं।

गढ़ शङ्कर तहसील—जिस प्रकार के लोग होशियारपुर में हैं वैसे ही लोग कांडी गांवों में बसा हैं। अर्थात् हिन्दू राजपूत, ब्राह्मण और गूजरों की बस्ती है। मैदान के उत्तरी गांवों में हिन्दू या सिख जाट हैं। कपूरथला सीमा के गांवों में महतों लोगों की बस्ती है। गढ़शङ्कर के उत्तर में बनोट वंश के हिन्दू राजपूतों का एक बराह है। गढ़शङ्कर और उसके दक्षिण बालाचौर तक के गाँव गोड़बाहा राजपूतों के हैं। गढ़शङ्कर के समीप वाले मुसलमान और बालाचौर के समीप वाले हिन्दू हैं जिनका मुख्य गांव गौड़ेबाहा बावनी (५२ गांव का गांव) है। सतलज नदी की कछारी भूमि में मुसलमान जाट बसे हुये हैं।

इस प्रकार जिले में जाट, दरबारी या अकबरी जाट, राजपूत, जासवाल, ददवाल, लद्दू, दोद गोड़बाहा, मनहा, भनोट, घोड्वा, जंगुवा, बिहाल ददलियाल, नारू, मांज, भट्टी, खोक्खर, ब्राह्मण खत्री,

भाभा, गूजर, पठान, महतों, कनेट, औरस, सैनी, डोगर, बाहटी, चंग, लोहाना, कलाल, तेली, हानि आदि जातियों के लोग बसे हैं।

धर्म

जिले के अधिकांश निवासी हिन्दू हैं। हिन्दू वैष्णव तथा शैव दोनों वर्ग के हैं। राजपूत और बनिया लोग शिव की पूजा अधिक करते हैं परन्तु लगभग समस्त हिन्दू जाति के लोग विष्णु का पूजन करते हैं। हिन्दुओं का एक बड़ा भाग देवी की उपासना करते हैं। पहाड़ी प्रदेश के लोग तथा स्त्रियां खास कर देवी की उपासना करती हैं। देवी ही दुर्गा की रूप है जो शक्ति का रूप मानी गई हैं और ईश्वर का रूप मान कर ही उनकी उपासना की जाती है। उनके उपासक सक्तक कहलाते हैं। साधु संतों की उपासना भी प्रचलित है। साधु सन्तों के उपासक अपने माननीय सन्तों की समाधि का दर्शन करने जाते हैं और वहाँ प्रसाद आदि चढ़ाते हैं। हिन्दू लोग ब्राह्मण, पुरोहित और पंडों तथा धार्मिक स्थानों के पुजारियों का भी बहुतआदर करते हैं।

जिले में देवी जी के कई एक स्थान हैं। अम्बोटा स्थान पर राठौर देवी का मन्दिर है वहां का पुजारी एक ब्राह्मण है जो देवी जी की मूर्ति की सफाई, मन्दिर की सफाई, सजावट आदि का प्रवन्ध करता और प्रति दिन कथा कहता है। चिंतपुरनी में देवी जी का एक दूसरा मन्दिर है जहां के पुजारी सारस्वत ब्राह्मण हैं। यहां बहुत दूर दूर से यात्री आते हैं। श्राव, चैत और क्वार मास में मेला लगता है।

सरवर सुल्तान या सखी सरवर के पुजारी लोगों का अलग ही वर्ग है। इस मत के मानने वाले नीच जाति के हिन्दू तथा मुसलमान हैं। सखी सरवार निगाह का लुमद या राना था। उसका नाम सुल्तान था। वह बगदा का निवासी और ७०० वर्ष पूर्व शहकोट में रहता था। जो मुल्तान के समीप है। डेरा गाजी खां में सखी सरवर स्थान पर उसका प्रधान स्मारक है।

गुग्गा एक राजपूत सूरमा था। वह चौहान था और वृन्दावन के समीप गढ़ डंडेरा में चौहान राम पिथौरा के समय में रहता था। कहते हैं कि वह बड़ा वीर था और अपने अस्त्र-शस्त्रों के साथ वह भूमि में समा गया था। गुग्गा सांप को पवित्र मानता था। इसी कारण उसकी समाधि पर सांप की मूर्तियां अधिक होती हैं। कांगड़ा जिले में शिब्बो का थान पर गुग्गा की पवित्र समाधि है। यहां के पुजारी सांप से डसे हुए लोगों की चिकित्सा करते हैं। गूजर तथा दूसरे निम्न श्रेणी वाले गुग्गा का पूजन करते हैं।

होशियार पुर और कांगड़ा जिले के बहुत से लोग सिद्ध पुरुषों की उपासना करते हैं। इस जिले में देवता सिद्ध या बोलक नाथ हैं। यह कांगड़ा के रहने वाले थे और अपनी सिद्धि के कारण विना वियाई गाय का दूध निकाल कर पीते थे। बच्चों या पशुओं की बीमारी के समय इनके समाधि पर लोग आया करते हैं। समाधि का मुख्य स्थान ततवाल में है। इस के अतिरिक्त १० या १२ दूसरे सिद्ध लोगों के स्थान हैं।

सिद्ध के अतिरिक्त दूसरे पवित्र जन हैं जिन्हें प्रायः पहाड़ी के निवासी लोग बहुत मानते हैं उनमें कालवीर, नाहर सिंह, परियां, मियां-बीवी, शाहमदार सह बोलनशाह आदि हैं।

इस जिले में वैरागी लोग अधिक हैं। जिले में वैरागियों के आठ अखाड़े हैं जिनमें महन्त रहते हैं। महन्त लोग पढ़े लिखे हैं और संसारिक जीवन व्यतीत करते हैं।

दादू पंथी—इस पन्थ के लोगों के ६ गाँव इस जिले में हैं। इस पन्थ के मानने वाले दादू की उपासना करते हैं। दादू जयपुर के निराना स्थान का निवासी था। सुन्दरदास तथा रज्जब जी उसके मुख्य चेले थे। सुन्दर दास ने 'सकय' नामक ग्रंथ लिखा है। दादू साहब एक ईश्वर में पूर्ण विश्वास करते थे। इस पन्थ के लोग अब भी 'सत्य राम' वाक्य का प्रयोग करते हैं। उसने मूर्ति पूजा की मनाही की थी और मन्दिर बनाने के विरुद्ध था पर अब उसके मानने वाले मन्दिर बनाते हैं और मूर्तियों की उपासना करते हैं।

सिक्ख धर्म के मनाने वाले तहसील गढ़ शंकर

तथा दूसरी तहसीलों में हैं। सिक्खों में उदासी लोग अधिक प्रसिद्ध हैं। नानक बाबा के पुत्र श्री सिंह इस पन्थ के जन्मदाता हैं। चरण कौल आनन्दपुर के समीप, बहादुरपुर और चिनी घाटी में उदासी लोगों की प्रसिद्ध समाधियां हैं।

दूसरा पन्थ निर्मल लोगों का है। निर्मली लोगों का प्रधान स्थान पटियाला राज्य में है। इस जिले में मूनक, अदमवाल और अलमपुर कोटला में अखाड़े बने हैं। निमली लोगों का प्रधान मन्दिर अविचल नगर में है। नांगा लोगों का भी एक अलग पंथ है।

भाबा लोग जैन धर्म को मानते हैं। इस धर्म के मन्दिर जैजोन और मियानी में हैं। इनके अतिरिक्त मुसलमान तथा हिन्दू धर्म के मानने वाले अलग हैं।

मेले तथा त्योहार

इस जिले में आनन्दपुर माखोवाल में होली के अवसर पर सब से बड़ा मेला होता है। यहां पर बहुत से धार्मिक स्थान हैं जिनमें से मुख्य ये हैं—

१—गुरुद्वारा केसगढ़—यहीं पर गुरु गोविन्द सिंह ने अपने प्रथम पांच चेलों को पहुल दिया था और उन्हें सिंह बनाकर खालसा होने की घोषणा की थी।

२—गुरु द्वारा आनन्दपुर साहब—कहा जाता है कि यहीं पर गुरु गोविन्द सिंह जी का अपना घर था। यह समाध नांगा लोगों की है और नगर के बाहर एक पहाड़ी पर है जहां एक बावली है। यह गोविन्द सिंह का गढ़ तथा दीवान खाना था। यहाँ के पुजारी विभिन्न जातियों के हैं।

३—गुरुद्वारा तेगबहादुर—यहीं पर गुरुओं के सरदार (जो दिल्ली में मारे गये थे) अपने पुत्र गुरु गोविन्द सिंह द्वारा अग्नि में जलाये गये थे। यहां पर अकाल बुंग और तेग बहादुर की समाध है सोधी यहां के मालिक हैं।

४—मांजी साहब केसगढ़—कहते हैं कि गुरु गोविन्द सिंह जी के पुत्र अजीत सिंह तथा जुझार सिंह यहीं खेला करते थे यह गुरुद्वारा केसगढ़ के समीप है। यहां के पुजारी विभिन्न जातियों के हैं।

५—दमदम साहब—कहते हैं इसी स्थान पर गुरु गोविन्द सिंह की गद्दी हुई थी और यहीं पर होला में गुरु गोविन्द सिंह बैठ कर लोगों से भेंट लेते थे। यहाँ एक गुरुद्वारा है पर ग्रन्थ साहब नहीं हैं।

६—मांजी साहब तिका—यहीं पर सोधी लोगों को अधिकांश भेंट मिलती है। कहते हैं कि यहीं पर गुरु गोविन्द सिंह के दूसरे भतीजे गुलाबराय जो कि सोधियों के पूर्वज के भाई थे यहीं बैठा करते थे। यहीं पर सोधियों के वर्तमान सरदार भी बैठते हैं। उनकी पूजा की जाती है और भेंट चढ़ाई जाती है। यह महल साहब के नाम से भी प्रसिद्ध हैं।

७—होलगढ़ और गुरुद्वारा माईजीता—यह दोनों मन्दिर आगमपुर में हैं जो आनन्दपुर से मिला हुआ है। होलगढ़ स्थान पर गुरु होला खेला करते थे। माई जीता स्थान गुरु की पत्नी माई जीता के नाम से पवित्र माना जाता है।

८—लोहगढ़ साहब—यह सतलज शाखा हिमैयाती के तट पर है। यह नदी नगर में होकर दक्षिण की ओर बहती है।

आनन्दपुर का होली का मेला दो दिन तक रहता है। दूसरे दिन अन्त समय में प्रत्येक मन्दिर के पुजारी अपने दल के साथ समीपवर्ती चोह पर आते हैं। जब सभी दल अपने बाजे-गाजे और सजावट के साथ एकत्रित हो जाते हैं। तो दृश्य बड़ा ही सुहावना हो जाता है। पुजारी लोग अपने चेलों से भेंट लेते जाते हैं और उन्हें आशीर्वाद देते जाते हैं। नांगा तथा सोधी लोगों के अखाड़ों का जुलूस देखने योग्य होता है। ये सभी भांति भांति के सुन्दर घोड़ों तथा हाथियों की सवारी पर निकलते हैं। इस अवसर पर लगभग ५० हजार की भीड़ होती है।

संध्या के समीप अखाड़े नगर की ओर लौटते हैं और विजयी की भांति अपने अपने डेरों को लौट जाते हैं मेले के दर्शक भी अपने अपने घरों को लौट जाते हैं। नांगों के कारण यह मेला सदैव

राजनैतिक माना गया है। होली के अवसर के कारण अच्छी घोड़-दौड़ होती है और लोग कबीर आदि गाते हैं जिससे झगड़े का भय उत्पन्न हो जाता है इसी कारण सरकार की ओर से कड़ा पहरा रहता है।

इस मेले के पश्चात् यात्री लोग किरातपुर की समाधियों का दर्शन करने जाते हैं। किरातपुर आनन्दपुर से ६ मील की दूरी पर स्थित है वहाँ भी कई एक समाधियाँ हैं।

१—बाबा गुरु दित्य साहब की समाधि एक चोटी पर स्थित है। मन्दिर तक जाने के लिये सीढ़ियां बनी हैं। गुरु दित्य हरराय छठें तथा सातवें गुरु के पिता तथा हरगोविन्द के पुत्र थे। यहां के मन्दिर सरोवर, चबूतरा रूपड़ के सरदार भूपसिंह ने बनवाया था। सीढ़ियों को महाराज पटियाला ने बनवाया था। मन्दिर से मैदान का दृश्य बड़ा ही सुन्दर प्रतीत होता है। कहते हैं यहीं से गुरु दित्य महात्मा धनुष विद्या का अभ्यास किया करते थे।

२—तख्त गुरु हरराय—यह स्थान सातवें गुरु हरराय के नाम से पवित्र माना जाता है जो किरातपुर में ही उत्पन्न हुये और वहीं पर उनका स्वर्गवास हुआ उनके पुत्र हर किशन जी का जन्म भी वहीं हुआ था।

३—मांजी साहब—यह उस स्थान का नाम है जहां पर गुरु गुरुदित्य का बाण गिरा था। उस स्थान को पातालपुरी भी कहते हैं। यह स्थान बहुत समय तक सोधी लोगों के मृतक शरीर जलाने का स्थान था।

४—बघन शाह की खानगाह—बघनशाह मुसलमान बाबा गुरु दित्य के एक बड़े मित्र थे। कहते हैं कि जब गुरु दित्य बाबा के चेले उनके पास आते थे तो वे कहते थे पहले मेरे मित्र का दर्शन कर आओ तब मेरे पास आओ।

किरातपुर का मेला आनन्दपुर से कहीं अच्छे ढंग से लगता है। बाबा गुरु दित्य की समाध पर काफी रुपया तथा मिठाई भेंट रूप में चढ़ते हैं।

चिंतपुरनी (ऊना तहसील) में तीन मेले लगते हैं। पहला मेला चैत में होता है जिसमें लगभग १० हजार लोग एकत्रित होते हैं। दूसरा मेला सावन मास में होता है जिसमें ४० हजार की भीड़ होती है और तीसरा मेला कुवार में होता है जिसमें भी लगभग ४० हजार लोग एकत्रित होते हैं। यहाँ की देवी बहुत प्रसिद्ध हैं।

पीर निगाना—ऊना से ४ मील की दूरी पर घसोली स्थान पर यह मन्दिर है। यहाँ पर मेला लगा करता है।

पंजगात्र का मेला चभौर में होता है। वैसाखी प्रतिपदा को मेला लगता है। लगभग १० हजार यात्री एकत्रित होते हैं और सतलज नदी में स्नान करते हैं। सतलज नदी का यह भाग ब्रह्मवती कहलाता है और बहुत पवित्र माना जाता है। कहा जाता था कि सम्वत् १८४७ में जब हरद्वार को छोड़ कर गंगा जी की पवित्रता सब स्थानों से हट जायगी तो इस स्थान पर और अधिक भीड़ होगी।

अम्ब के समीप मैरी है—यह गुरु बड़भाग सिंह का डेरा है। यहां होली और वैसाखी के अवसरों पर मेले लगा करते हैं।

इनके अतिरिक्त धरमशाला में वैसाख कुआर और होली पर सिद्ध बध माना प्रत्येक रविवार को, अम्बोता में वैसाख मास में, जतोली हरोली में भादों मास में भद्रकाली का मेला चैत और कुआर में लगा करता है।

होशियारपुर तहसील में रानी देवी, शाहनूर जमाल, साहरी बहादुरपुर डेरा, गड़हियावाला, रामतलवाली और बोहन के मेले होते हैं।

गढ़शङ्कर तहसील में गढ़शङ्कर, पंचनंगाल, अचलपुर में मेले लगते हैं। दसूया तहसील में धरमपुर देवी, कामथी देवी, झांगी माहीशाह जाज अयापुर, नौशेरा, भेटान, मुखेरियाँ, सारियाना, बोदल आदि स्थानों पर मेले लगते हैं।

कृषि

इस जिले की मुख्य जलविभाजक शिवालिक पहाड़ियाँ हैं। इनका अधिकांश भाग मुलायम बलुहे पत्थर का बना है जिससे कांडी प्रदेश बना है। इस प्रदेश में बहुधा कम वर्षा की आवश्यकता होती है। इस प्रदेश में हलकी मिट्टी की एक पट्टी

है जिसमें सरकाना घास है। यह पट्टी होशियारपुर के दक्षिण-पूर्व एक स्थान से आरम्भ होती है शिवालिक के नीचे और समानान्तर चलती है और दसूया तक जाती है। बालू के बहने के कारण इस पट्टी में एक समतल मैदान बन गया है। यह मैदान हवा से उड़ी बालू से बना है। इसे लोग रक्कड़ प्रदेश कहते हैं।

शिवालिक के समानान्तर पर बाहर साफ शाखाओं वाली एक दूसरी संकरी पट्टी है जिसमें अधिक लवण तथा कम बालू है और जिसमें वायु से बहकर आई हुई बालू कम है। यह साधारणतः रक्कड़ की भांति ही है। पहाड़ियों से और अधिक दूर सिरवाल की उपजाऊ पट्टी है। यहाँ पानी धरातल के समीप ही पाया जाता है। इस भूमि में लवण रक्कड़ की अपेक्षा अधिक है।

गढ़शङ्कर से दक्षिण-पूर्व एक क्षेत्र लवण वाली मिट्टी का है। यह प्राचीन है और बीन से सम्बंधित है।

जिले की भूमि में जो भी बालू वर्तमान है वह पहाड़ियों से ही बहकर आया है। हल्की बालू नदियों द्वारा बहकर आगे चली गई है पर भारी बालू पहाड़ियों के समीप ही पाई जाती है। दसूया के उत्तर और शिवालिक पहाड़ियों से दूर एक कछारी भूमि का क्षेत्र है। यह समस्त जिले के उत्तमोत्तम उपजाऊ क्षेत्रों में से है।

ऊना तहसील का ऊपरी भाग जलविभाजक और सोहा घाटी का बना है। निचला भाग एक मैदान है जिसके दोनों ओर पहाड़ियाँ हैं। ऊना घाटी की अधिकांश भूमि कछारी है जो सतलज के तटीय भाग में बड़ी उपजाऊ है। ऊना घाटी के पूर्वी भाग के ऊपरी भाग की भूमि के कंकड़-पत्थर के टुकड़े पाए जाते हैं पर मिट्टी अच्छी है। घाटी के पश्चिमी भाग वाले ऊँचे स्थानों की मिट्टी में बालू का भाग अधिक है।

वर्षा, जलवायु तथा किसानों की सहूलियत के ध्यान से इस जिले की मेरा खालिस भूमि वाला भाग सबसे अधिक उपजाऊ तथा अच्छा है। यहां खेती सरलता से जोती तथा बोई जाती है और कम व्यय तथा परिश्रम पर अच्छी उपज होती है। इस मैदान में राड़ा तथा शाही कड़ी मिट्टी वाली भूमि नहीं पाई जाती है। पर जहां कहीं भी मिट्टी सख्त पाई जाती है वहां सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। बिना पानी के जोतना तथा बोना सम्भव नहीं हो पाता है।

हल्की मिट्टी खरीफ की रबी फसल के लिये अधिक उपयोगी होती है। जहां कहीं मिट्टी में बालू की अधिकता है वहाँ की भूमि जल्द सूख जाती है। यह भूमि उस समय सूख जाती है जब खरीफ की फसल तयार होती रहती है। इसे पकने के लिये कुवार मास की वर्षा आवश्यक है और यदि वर्षा हो गई तो फिर रबी की खेती के लिये काफी नमी जमीन में रहती है। खरीफ के पौधों की जड़ें रबी पौधों की अपेक्षा भूमि में अधिक नीचे चले जाते हैं इसलिये जब तक हल्की मिट्टी की जुताई खूब नहीं होती है तब तक उसमें पौधे की खूराक के लिये शक्ति नहीं आती है।

ऊना तहसील का पथरीला ढालू डांडा प्रदेश रबी फसल के लिये उपयुक्त नहीं हैं। ऐसे भाग में उसी समय खेती होनी सम्भव है जब कि वर्षा खूब होवे।

इस जिले में गेहूँ, जौ, चना, बेर्रा (चना और जौ) सरसों, तम्बाकू, प्याज, लहसुन, मसूर, अल्सी आलू, साग, मक्का, धान, उड़द, मूंग, ईख, सांवां, चीनी, कोदो, सन, तिल, अरहर, कंगनी, बाजरा और जुवार आदि की उपज होती है।

यद्यपि वैज्ञानिक रूप से खेती नहीं होती है तो भी किसानों ने सदियों खेती करने के पश्चात् कुछ अभ्यास तथा अनुमान प्राप्त कर लिया है इसलिये वह बारी बारी से खेतों में ऐसी फसलें उगाते हैं जिससे फसलें ठीक रूप से उगती हैं और खेतों की उपज शक्ति भी बराबर होती रहती है। ईख के बाद सेञ्जी या सन बोते हैं और फिर गेहूँ या ईख बोते हैं। नील बोने के बाद उसमें ईख, तरबूज़ या गेहूँ बोया जाता है। बहुत सी भूमि में दो फसली खेती उगाई जाती है। होशियारपुर नगर की समीपवर्ती भूमि में साल में तीन फसलें तयार की जाती हैं। तम्बाकू तयार करके बाजरा, आलू या गेहूँ तयार करते हैं। इसी प्रकार साग तरकारी

तथा मसाला आदि की खेती होती है।

जिस भूमि में पांस नहीं डाली जाती और सिंचाई नहीं होती है उसको अधिक जोतना पड़ता है। पांसी हुई भूमि में यदि गेहूँ बोना होता है तो उसे ६ बार जोतना पड़ता है पर यदि पाँसी हुई नहीं है तो १२ बार जोताई करनी पड़ती है। दो फसली तयार करने वाली भमि को पांसा तथा सिंचाई करना आवश्यक होता है नहीं तो उपज अच्छी नहीं होती है। सिंचाई का काम जिले में कुओं से होता है जहां शाह नहर है वहां उससे सिंचाई होती है। नदियों से भी सिंचाई की जाती है।

वन

शिवालिक पहाड़ियों तथा सोला सिन्ही श्रेणी में प्राकृतिक वन पाए जाते हैं। शिवालिक पहाड़ियों के भीतरी ढालों पर पाइन के वन हैं। सोलासिन्ही श्रेणी के ढाल पाइन के बड़े बड़े वन हैं। इस श्रेणी के ऊना तहसील के बनों पर सरकारी वन विभाग का अधिकार है।

ऊना तहसील के सरकारी वन भई, लोहाड़ा और पञ्जास टप्पों में स्थित हैं। पञ्जाल में चीड़ के वन हैं। इनके अतिरिक्त और वनों में भांति भांति के वृक्ष तथा झाड़ियां पाई जाती हैं। लोहाड़ा अ वन का क्षेत्रफल २४८० एकड़, लोहाड़ा ब का क्षेत्रफल १८१२ एकड़, पञ्जाल का ३,६१० एकड़, धूही अ का ६३५ एकड़, धूही ब का ५६०, धूही स का १९६, धूही ड का ६३५ एकड़ धूही ई का ८ एकड़, धूही फ का २८४ एकड़ और धूही ज का क्षेत्रफल २०४ एकड़ है। वृन्दावन और करनपुर में बाँस के बन है जो सरकार की ओर से सुरक्षित हैं।

खनिज सम्पत्ति

सोहान तथा दूसरी नदियों की तलहटी में सोना बहुत कम पाया जाता है। सोना की सफाई करने वाले घोला कहलाते हैं पर उन्हें बहुत कम आय होती है। कुछ भागों में चूने का पत्थर मिलता है। बीरमपुर और कोनैल में चूने के पत्थर की खानें हैं। इन खानों का पत्थर किंगरी कहलाता है। जलाया जाता है। यह पत्थर सङ्गमरमर से मिलता जुलता है इस कारण जलाने वाले सवेरे उन पत्थरों को चुन लेते हैं जिन पर ओस नहीं पड़ती और सूखे रहते हैं। इस जिले में लगभग ३ हजार रुपये का चूना निकाला जाता है।

शिवालिक पहाड़ियों का बलुहा पत्थर मकान बनाने के लिये प्रयोग में लाया जाता है। पहाड़ियों की निचली श्रेणियों में कंकड़ पाया जाता है।

कलाकौशल

इस जिले में सूती कपड़ा तयार (देशी ढङ्ग से) करने का मुख्य रोजगार होता है इस कार्य का प्रधान केन्द्र-खानपुर है जो होशियारपुर से मिला हुआ स्थित है। यहां लुंगिया तथा सूती कपड़ा खूब तयार किया जाता है जो बाहर भेजा जाता है। केवल खानपुर से प्रतिवर्ष तीन या चार लाख का कपड़ा बाहर भेजा जाता है। हरियाना नगर तथा उसके समीपवर्ती स्थानों में साधारण कम्बल तयार किये जाते हैं। मूञ्ज और बागर घास से रस्सी बड़ी मात्रा में तयार की जाती है। सन से कनवस तयार किया जाता है और बांस से टोकरियां, चलनियाँ, थालियां आदि वस्तुएं तयार होती हैं। बहादुरपुर में ताँबे और पीतल के बर्तन तयार किये जाते हैं। रंगाई का काम भी जिले में खूब होता है। बेर से लाख प्राप्त होती है उससे ऊनी कपड़ा की रंगाई का काम होता है।

लकड़ी में हाथी दांत का काम भी जिले में किया जाता है। होशियारपुर और उसके समीपवर्ती स्थानों के कारीगर इस काम में बड़े कुशल हैं। होशियारपुर और उसके समीपवर्ती स्थानों में जूते बनाकर दिल्ली तथा कलकत्ता भेजे जाते हैं। टांडा में एक प्रकार की बहुत अच्छी मिट्टी प्राप्त है जिस से मिट्टी के सुन्दर बर्तन बनाये जाते हैं। मिट्टी के बर्तनों के रंगने के लिये एक विशेष प्रकार की मिट्टी गढ़दिवाला के समीपवर्ती गांव से आती है। मिट्टी के बर्तन बनाने का काम काश्मीरी लोग करते हैं।

किया जाता है। फूलकारी का काम होशियारपुर में गरीब स्त्रियों से कराया जाता है। इस काम को प्रोत्साहन देने का प्रयत्न किया जा रहा है।

चमड़ा कमाने तथा जूता चप्पल, मशक चरसा और कुप्पा आदि बनाने का काम जिले के चमार तथा मुसलमान मोची करते हैं। चमड़े के दस्ताने सन्दूक, बिस्तरबन्द, जीन (घोड़े की) तंग आदि बनाने का काम गढ़शङ्कर तहसील में होता है। जूते के काम करने वाले मुसलमान मोची सिराज कहलाते हैं। कमाया तथा रंगा हुआ चमड़ा गांवों के चमारों से प्राप्त किया जाता है। सिराज उससे जूते तथा चप्पल तैयार करते हैं और फिर उस पर फूलकारी तथा दस्तकारी स्त्रियाँ करती हैं। शेख तथा खोजा लोगों के हाथ में चमड़े के सामान का व्यापार है और वह उससे बड़ा लाभ उठाते हैं। यह सामान हैदराबाद (दकन) और संयुक्त प्रान्त आगरा व अवध में भेजे जाते हैं।

होशियारपुर आनन्दपुर दसूया और टांडा में मिट्टी के बर्तन तथा सुन्दर खिलौने तयार किये जाते हैं। कांच से चूड़ी आदि सामान और कुछ सीसे का सामान भी तयार होता है। ऊनी, लोहा, कालीन आदि बनाने का काम भी इस जिले में अच्छा होता है पर बहुत कम होता है।

कंकड़ को जला कर मकान बनाने का चूना तयार करने का काम जिले में खूब होता है। ईंट भी खूब बनाई जाती हैं। जिले में ईख से गुड़ तथा शक्कर बनाने का काम भी होता है। पर अच्छी शक्कर तयार करने के कारखाने नहीं हैं। जिले में किसी भी कार्य के लिये कोई बड़े कारखाने नहीं हैं।

जिले का अधिकांश व्यापार खत्री, ब्राह्मण और पठान लोगों के हाथ में है। शूद्र भात्रा और शेख लोग भी व्यापारी हैं। सेठ तथा साहूकार लोग ऋण देने का व्यवसाय करते हैं।

आने जाने के साधन

वर्षा काल में सतलज नदी में नावें चल सकती हैं। इसी तरह व्यास नदी में भी वर्षा ऋतु में नावें चलती हैं। इन दोनों नदियों में कोई पुल नहीं है। सतलज नदी में नदी पार करने के लिये किरातपुर। आनन्दपुर जांधारी बहरामपुर नंगाल थल्कानी घाट हैं और व्यास में परखोवाल नौशारा मौली, मुल्ल-वाला बाघरियां भेट तथा श्रीगोबिन्दपुर के घाट हैं।

जिले में रेलवे लाइन नहीं है। उत्तरी-पश्चिमी रेलवे लाइन का फागवाड़ा स्टेशन महलपुर से २८ मील है जालंधर स्टेशन होशियारपुर से २५ मील और कर्तारपुर टांडा से १६ मील दूरी पर है।

जालंधर से धरमशाला जाने वाली सड़क पब्लिक वर्कस डिपार्टमेंट के अधिकार में है। जिले की सड़कों का प्रबन्ध डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के हाथ में है। ऊना तहसील की सड़कें ठीके पर हैं। जालंधर-धरमशाला वाली पक्की सड़क होशियारपुर तक जाती है। जालंधर-नौशारा सड़क टांडा, दसूया और मुकेरियां को जाती है।

कच्ची सड़कें बहुत हैं और अच्छी दशा में है पर उन्हें पहाड़ी नदियां काट दिया करती हैं जिस से बैलगाड़ी और पहिये वाली गाड़ियों के चलने में बड़ी कठिनाई हो जाती है। पर कच्ची सड़कों द्वारा जिले के लगभग सभी बड़े गांव, कस्बे तथा नगर एक दूसरे से मिले हुये हैं जिससे जिले भर में यात्रा करना कठिन कार्य नहीं है।

गढ़शंकर, टांडा और होशियारपुर में डाक तथा तार घर हैं।

शासन

इस जिले का शासन सूत्र एक डिप्टी कमिश्नर के हाथ में है जो जालंधर डवीजन के कमिश्नर के अधिकार में है। जिले में चार तहसीलें हैं जिन की राजधानियाँ होशियारपुर, ऊना दसूया और गढ़शङ्कर में है। गांव में मुखिया होते हैं जो माल-गुजारी वसूल करते हैं और सरकारी अफरों की सहायता करते हैं। जैलदार लोगों को मालगुजारी से एक प्रतिशत भाग दिया जाता है। वह मालगु-जारी निर्धारित करने तथा वसूल करने में सहायक होते हैं।

तहसील होशियारपुर में १८ जैल, अरगौवल, जानैरी, गोबिन्दपुर, माछियां, हरियाना, आनियाला बुलहोवल नन्दचौर, पठारलियां, खानपुर, गोबिन्द खुनखुन, शेर गोविन्द, बरोती, जानखेला, अहराल,

वादला, खनौरा और सैदी पट्टी आदि हैं। इस तहसील से ३,७१२३७ रु० मालगुजारी मिलती है। दसूया तहसील में इसी प्रकार १९ जैल हैं और २,९८,७३० रु० मालगुजारी आती है। गढ़शङ्कर तहसील में १८ जैल हैं और ३,८१,२८३ रु० मालगुजारी मिलती हैं। ऊना तहसील में १९ जैल हैं और २,७६,५४५ रुपया मालगुजारी मिलती हैं।

होशियारपुर सिविल डिविजन का सेशन जज इस जिले का प्रधान न्यायाधीश है। डिप्टी कलक्टर, तहसीलदार तथा आनरेरी मजिस्ट्रेट उसकी सहायता न्यायलियों द्वारा करते हैं।

इस जिले में १२ प्रथम श्रेणी के थाने हैं जिनमें एक डिप्टी इन्सपेक्टर, २ सर्जिन्ट और ६ कांस्टेबुल रहते हैं। नगरों की पुलीस अलग है। समस्त जिले का प्रधान पुलिस अफसर पुलिस सुपरिंटेंडेन्ट है।

शिक्षा

होशियारपुर जिला शिक्षा के ध्यान से पञ्जाब के अन्य जिले की अपेक्षा बहुत आगे है। गांवों के निवासी अपने बच्चों को प्रारम्भिक शिक्षा देते हैं। धनी, सरकारी कर्मचारी साहूकार और ब्राह्मण लोग उच्च शिक्षा अपने बच्चों को प्रदान करते हैं।

होशियारपुर में कई एक हाई स्कूल तथा एंग्लो वर्नाक्यूलर स्कूल हैं। आर्य समाज की ओर से एक एंग्लो संस्कृत स्कूल तथा एक सनातनधर्म सभा हाई स्कूल है। बाजवाड़ा में भी हाई स्कूल है। टांडा, हारियाना, दसूया, मुकेरिया ऊना, गढ़ शङ्कर तथा माहिलपुर में हाई स्कूल तथा मिडिल स्कूल है।

इनके अतिरिक्त बहुत से सहायता पाने वाले स्कूल तथा सहायता न प्राप्त करने वाले स्कूल हैं। जिले में लगभग १०० प्राइवेट स्कूल हैं जिनमें १३ लड़कियों के हैं। अरबी, फारसी तथा संस्कृत शिक्षा के लिये अलग अलग संस्थाएं हैं। होशियारपुर में दरी तथा कालीन बुनना सिखाने के लिये एक इंडस्ट्रियल स्कूल है।

जिले में ७ लड़कियों के स्कूल हैं जिनमें उर्दू नागरी की शिक्षा दी जाती है। हारियाना गर्ल्स स्कूल में उर्दू पढ़ाई जाती है। जिले में लगभग १५७ स्कूल डिस्ट्रिक्ट बोर्ड की ओर से हैं जिनमें बच्चों को शिक्षा दी जाती है।

दर्शनीय स्थान

अम्ब—ऊना तहसील में है। यहाँ पहाड़ी पर जासवाल राजाओं का महल था। यहां एक प्राचीन वाटिका है। यह जासवाल राजाओं के वंशजों को लौटा दी गई है। यहां ऊना के नायब तहसीलदार रहते हैं।

आनन्दपुर

आनन्दपुर—मखोवल को आनन्दपुर कहते हैं। यह सतलज नदी पर जाधारी तालुका में स्थित है। यहां एक पुलिस थाना है। यह जिले में एक दर्शनीय नगर है। यह नगर पहाड़ी के नीचे एक सुन्दर स्थान पर स्थित है। यहाँ से आठ मील की दूरी पर पहाड़ी के ऊपर नैनादेवी का मन्दिर है। नगर में बहुत सी सिक्ख समाधियाँ हैं और बहुत से सोधी वंश निवास करते हैं। यहाँ नांगा-अखाड़ा का केन्द्र है। १६६५ ई० में सद गुरुबक्श सिंह ने इस सम्प्रदाय की नीव डाली थी। इस नगर की नींव गुरु तेग बहादुर ने डाली थी जिनके भतीजे चन्द के वंशज सोधी लोग हैं। गुरु तेगबहादुर बटाला से यहाँ आए और बिलासपुर के राजा से भूमि खरीद ली थी। कहते हैं जिस गांव में गुरु तेग बहादुर रहते थे उसका नाम माहखोवाल था। तेग बहादुर के सुपुत्र गुरुगोविन्द सिंह के निवास स्थान के चारों ओर जो बस्ती बस गई उसी का नाम आनन्दपुर पड़ गया।

सोधी लोगों का कथन है कि आनन्दपुर स्थान पर माखो नामक एक राक्षस रहा करता था जो उस स्थान पर तेग बहादुर साहब से ७०० वर्ष पूर्व से रहा करता था। गुरु तेगबहादुर ने प्रतिज्ञा की कि वह राक्षस को निकाल बाहर करेंगे। इस पर राक्षस ने प्रतिज्ञा की कि वह स्वयं चला जायगा केवल वह यह चाहता है कि जिस स्थान पर वह इतने काल से रहा है उसका नाम उस स्थान के साथ जुड़ा रहे। गुरु ने उत्तर दिया सोधी लोग इसे आनन्दपुर कहेंगे पर पहाड़ी तथा दूसरे लोग माखोवाल कहेंगे। मुगलों से युद्ध काल के समय में गुरु गोविन्द सिंह आनन्दपुर में ही रहा करते थे।

जब गुरु ने नाला गढ़ के हरी चन्द नामक राजा को युद्ध में मार डाला तो वह आनन्दपुर आए और अपनी शक्ति का सञ्चय किया और बिलासपुर के भीम चन्द से सन्धि की। इस पर औरंगजेब ने लोहौर और सरहिन्द के गवरनरों को आज्ञा दी कि वे गुरु के विरुद्ध चढ़ाई करें। ऐसा ही हुआ और आनन्दपुर में गुरु गोबिन्द सिंह घिर गये। ऐसी दशा में गुरु के साथियों ने उनका साथ छोड़ दिया और गुरु के साथ केवल ४० व्यक्ति रह गये। उसके पश्चात् वे चमकौर चले गये जहाँ उनके ऊपर फिर आक्रमण हुआ जिसके फलस्वरूप उनके दो बड़े पुत्र तथा साथी छूट गये और उन्हें फिर भागना पड़ा।

आनन्दपुर में बहुत से सुन्दर घर हैं जिनमें सोधी बंश के लोग निवास करते हैं। नगर में पुलिस थाना अस्पताल, स्कूल और सिविल दफ्तर आदि हैं।

आनन्दपुर जांधारी तालुके के व्यापार का केन्द्र है और यहां कपड़ा तथा खांडसारी-चीनी की मंडियाँ हैं। नगर में गुरु (तेग बहादुर) का महल, गुरुद्वारा तेगबहादुर, गुरुद्वारा केशगढ़, गुरु द्वारा आनन्दगढ़, मांजी साहब केस गढ़, दमदम साहब, मांजी साहब टीका, होलगढ़ तथा भाई फी तो का गुरु द्वारा लालगढ़, हरमन्दर साहब, सीस महल तख्त साहब मांजी साहब, पतालपुरी, बुधन शाह की खानगाह आदि स्थान देखने योग्य हैं। वहाँ पर म्यूनिसपैलिटी है।

बाजवाड़ा

होशियारपुर से दो मील दक्षिण-पूर्व की ओर बाजवाड़ा नगर है। प्राचीन काल में यह एक प्रसिद्ध नगर था और अपने जुलाहों तथा मल्लाहों के लिये प्रसिद्ध था। कहते हैं कि गजनी से आने वाले तीन व्यक्तियों ने इस नगर की नींव प्राचीन समय में डाली थी। उनमें से एक बैजू-बावरा प्रसिद्ध गवैया है जिसके नाम पर ही नगर का नाम बैजवाड़ा पड़ा है। कहते हैं पहले यह नगर १२ कोस में फैला था। टोडरमल ने नागरिकों पर अप्रसन्न होकर नगर को कई भागों में खंड कर दिया था। इसके पश्चात् नगर पर फैजुल्ला पुरिया सरदार भूप सिंह का अधिकार था। १८०१ ई० में राजा संसारचन्द ने उसे निकाल बाहर किया। राजा संसार चन्द ने यहाँ एक किला बनवाया था जिस पर १८२५ ई० में रणजीत सिंह ने अधिकार किया था। नगर में स्कूल आदि हैं।

बाला चौर

बालाचौर पुलिस थाने का केन्द्र है। जनसंख्या लगभग ४ हजार है।

भंगला

यह नगर पक्के घरों का बना है। यह शाह नहर प्रदेश का व्यापारिक केन्द्र है। यहाँ से चावल बाहर जाता है।

दसूया

दसूया नगर होशियार पुर के उत्तर-पश्चिम की ओर होशियारपुर नौशारा सड़क पर २५ मील की दूरी पर स्थित है। मीर थाल व्यास नदी पर तहसील का केन्द्र तथा थाना है। यह नगर एक भेटे पर स्थित है। चारों ओर पानी वाली दलदली भूमि होने के कारण नगर की जल-वायु अस्वास्थप्रद है। यहां के जमींदार मुसलमान राजपूत, रैन तथा पठान हैं। कुछ हिन्दू साहूकार भी हैं।

कहा जाता है कि दसूया नगर बहुत प्राचीन है और महाभारत काल में यह महाराज विराट की राजधानी था। हिन्दू लोग अब भी इसे विराट की नगरी कहते हैं। प्रातःकाल लोग इस नगरी का नाम नहीं लेते हैं और दसूया के स्थान पर विराट की नगरी ही कहते हैं। विराट राजा के ही यहाँ पांचों पांडवों ने अपने तेरह वर्ष व्यतीत किये थे। नग से उत्तर की ओर एक प्राचीन क़िला है। इस किले का वर्णन आईन अकबरी में मिलता है। १८१७ ई० में रणजीत सिंह ने इस पर अधिकार प्राप्त किया और १४ वर्ष तक रखने के पश्चात् शाहजादा तारासिंह को दे दिया। नगर में स्कूल मुन्सिफी कचेहरी, अस्पताल, सराय, पुलीस थाना है। तहसील भवन के सामने सांचवाला सरोवर है। नगर में म्युनिसिपैल्टी है।

गढ़हियावाला

यह नगर होशियारपुर तहसील में होशियारपुर दसूया सड़क पर होशियारपुर से १८ मील की दूरी पर स्थित है। यहाँ पुलिस का एक नाका है। यहाँ आम के सुंदर बाग हैं। नगर का अधिकांश भाग पक्का बना है। सड़कों के दोनों ओर पक्की नालियां बनी हुई है। धनी हिन्दू व्यापारियों के घर सुन्दर बने हैं। जाट तथा सहोरा लोग यहाँ के भूमिपति हैं। कुछ हिन्दू साहूकार नगर में निवास करते हैं।

कहते हैं कि १४४३ ई० में गढ़हिया नामक जाट ने नगर को बसाया था। दीवाला शब्द बाद में जोड़ा गया जब कि देवी जी ने नगर में दर्शन दिया। दीवाला देवी कला अपभ्रंश हैं। दीवाला का अर्थ मन्दिर का भी होता है। यहां जब देवी ने दर्शन दिया तो सरदार जोधसिंह राम गढ़रिया के देवी का मन्दिर बनवा दिया था। १८२९ ई० में सरदार जोध सिंह ने नगर पर अधिकार किया और एक किला बनवाया। नगर में थाना, डिसपेंसरी तथा डाकखाना हैं। नगर में चीनी तथा गुड़ का मुख्य व्यापार होता है। नगर में द्वितीय श्रेणी की म्युनिसपैलिटी है।

होशियारपुर

होशियारपुर अपने जिले की राजधानी है। यह नगर ३१'३२ उत्तरी अक्षांश तथा ७५'५२ पूर्वी देशान्तर पर स्थित है। यह शिवालिक पहाड़ी की तलहटी से ५ मील की दूरी पर स्थित हैं। नगर की म्यूनिसपैलिटी में सिविल लाइन, बहादुरपुर तथा बस्सी ख्वाजा भी सम्मिलित हैं। उत्तर की ओर चो की रेत है। चोवों में बाढ़ आने से नगर को कई बार खतरा उत्पन्न हो चुका है। इसीलिये बांध बना दिया गया है। बाढ़ बचाने के लिये खर काना तथा नारा के वृक्ष लगाए गये हैं।

नगर पक्के भवनों से पूर्ण है। सड़कें सुन्दर पक्की नालियों से सुसज्जित हैं। प्रधान सड़क ३० फुट चौड़ी है दूसरी सड़कें ६ से १५ फुट तक चौड़ी हैं। नगर को पानी कुओं से प्राप्त होता है। नगर से लगभग एक मील की दूरी पर सिविल लाइन है नगर में जिले को कचेहरियाँ, जेल, अस्पताल, थाना, कोतवाली, जेलघर, स्कूल-कालेज आदि हैं। नगर में अरैन, गूजर राजपूत तथा व्यापारी लोगों की मुख्य बस्ती है।

इस नगर को बसाने के सम्बन्ध में दो मत पाए जाते हैं। एक के अनुसार मोहम्मद तुगलक के हर गोबिन्द तथा रामचन्द्र नामक दीवानों ने बसाया था। दूसरे मत के अनुसार बेजवाड़ा के होशियार खाँ ने इस नगर को बसाया जिसके नाम पर नगर का नाम होशियारपुर पड़ा।

यह अपने जिले में प्रथम श्रेणी का नगर है। यहां पर प्रथम श्रेणी की म्युनिसपैलिटी भी है। नगर का प्रबन्ध म्युनिसपैलिटी के हाथ में है। प्रजा कार्य का प्रधान कार्यालय नगर में ही स्थित है।

जैजोन

गढ़शङ्कर से १० मील उत्तर की ओर जैजोन नगर स्थित है। नगर की जनसंख्या लगभग ४ हज़ार है। यह पहले जायसवाल राजाओं की राजधानी था। सर्व प्रथम राजा रामसिंह ने यहां निवास किया। यहां का गढ़ पहाड़ी दर्रे पर स्थित है। १८१५ ई० में रणजीत सिंह महाराज ने नगर पर अधिकार किया। जायसवाल राजाओ के महलों के भग्नावशेष शेप रह गये हैं। यह नगर व्यापारिक केन्द्र है। गांवों का बना कपड़ा यहां आता है और बाहर जाता है। प्रातःकाल लोग इसे फलेवाली या पथरान वाली नाम से पुकारते हैं।

जांधारी

यह तालुका सतलज के पूर्व स्थित है। कहते हैं बाबा गुरु दित्य ने अपने सोंटे से एक मरी गाय को जीवित किया था इसी पर इसका नाम जांधारी पड़ा। ऐतिहासिक दृष्टि से इस तालुके का सम्बन्ध कहलूर से है। बीर चन्द्र नामक चन्देरी राजपूत ने अपना राज्य स्थापित किया था और यहां अपनी ओर जो एक ब्राह्मणी को लाकर टिकाया था उसी के हाथ राज्य का प्रबंध सौंप दिया था।

खानपुर

होशियारपुर से डेढ़ मील उत्तर-पश्चिम की ओर खानपुर स्थित है। नगर की जनसंख्या लग-

भग ५ हजार है। यह एक नोटीफाइड एरिया वाला नगर है। यह नगर लगभग चारों ओर चौस से घिरा है जिससे बाढ़ के समय नगर को खतरा उत्पन्न हो जाता है। यहां गांव के बने कपड़े का व्यापार होता है नगर में स्कूल तथा म्यूनिसपल भवन हैं।

मियानी

मियानी नगर की जनसंख्या लगभग ८ हजार है। यह होशियारपुर से २५ मील तथा टांडा से ४ मील की दूरी पर स्थित है। भूमिपति पठान हैं खेतों के मालिक अरैन तथा जाट किसान हैं। यह नगर सीली भूमि के कारण अस्वास्थ जनक है। यहां पशुओं का व्यापार होता है। नगर में म्यूनिसपैलिटी है। स्कूल आदि हैं।

माहिलपुर

गढ़शङ्कर तहसील में पुलिस थाने का केन्द्र है। जनसंख्या लगभग ६ हजार है। यह बैन जाटों का प्रधान स्थान है और उन्नतशील स्थान है।

मुकेरियां

यह १८७४ ई० में म्यूनिसपैलिटी बनाया गया। यह दसूया से १० मील उत्तर और होशियारपुर से ३४ मील की दूरी पर स्थित है। नौशेरा तथा मीर थाल को यहां से सड़कें जाती हैं। यह नगर ऊँचे मैदान के मध्य में स्थित है और पुलिस सब विभाग का केन्द्र है।

१७५४ ई० में चौधरी दारा खां (अवां) ने इसकी नींव डाली थी उसके बाद सरदार जयसिंह कानिया ने इसे उन्नति दी। सरदार जयसिंह की बहू माई सद कौर का नाम इतिहास में प्रसिद्ध है। माई कौर के पति तथा जयसिंह के पुत्र गुरुबक्श सिंह को युद्ध में महाराज रणजीतसिंह ने मार डाला था। और माई कौर की पुत्री महताब कौर से ब्याह किया था। इस कानिया मिस्ल रणजीतसिंह का साथी बन गया था। १८२९ ई० में रणजीत सिंह का माई सद कौर से झगड़ा हो गया जिससे वह जेल में डाल दी गई थी। उसके बाद उसे एक छोटा सा राज्य दे दिया गया था। १८१९ ई० में रणजीत सिंह ने अटलगढ़ पर अधिकार प्राप्त किया। महताब कौर से मुकेरियाँ में शेरसिंह उत्पन्न हुआ जो बहुत प्रसिद्ध है जो बाद में राजा हुये।

सरदार बूरसिंह ने नगर में एक सरोवर तथा एक बड़ी सराय बनवाई थी। एक दूसरी सराय तावाशाह ने बनवाई थी। सरदार बूरसिंह का घर बहुत सुन्दर बना है। नगर में सुन्दर वाटिकाएं हैं।

नगर में थाना, डाकखाना, स्कूल, अस्पताल, विश्राम घर हैं। यहां द्वतीय श्रेणी की म्यूनिसपैलिटी है।

शामचौरासी

यह एक बड़ा नगर है। यहां व्यापारिक केन्द्र है। यहां गांवों से नाज आता है और दूसरा सामान गांवों को जाता है।

संतोषगढ़

संतोषगढ़ में एक छोटा बाजार है यहां नगर के एक प्राचीन सरदार के घर के भग्नावशेष हैं। नगर की जनसंख्या लगभग ४ हजार है। यह नगर घी का केन्द्र बन रहा है।

ऊना

ऊना जसवान दून में होशियारपुर से २१ मील की दूरी पर स्थित है। यहां तहसील की राजधानी तथा थाना है। यहाँ बेदी वंश का निवास स्थान है। इसकी नींव बाबा कालाधारी ने डाली थी जो वर्तमान बेदी लोगों के पूर्वज हैं। बेदी सुजानसिंह, बेदी साहब सिंह के भवन देखने योग्य हैं। नगर में सराय, विश्रामघर, दफ्तर अस्पताल, स्कूल आदि हैं। सोहान के समीप पहाड़ी पर नगर बसा है। नगर में एक बाजार है। नगर के पूर्व की ओर नदी में सुन्दर बाग बने हैं। नगर व्यापारिक केन्द्र है। यहां द्वतीय श्रेणी की म्यूनिसपैलिटी है।

उरमार-टांडा

उरमार और टांडा नगर दसूया तहसील में स्थित हैं और एक दूसरे से एक मील की दूरी पर स्थित है। अयाहेपुर और दाला मिलाकर एक म्यूनिसपैलिटी है। यह सीली भूमि में स्थित है जिससे नागरिकों का स्वास्थ खराब रहता है। अयाहपुर की गलियां गंदी हैं और जलवायु बहुत खराब है। चोकी बाढ़ आ जाती है।

नगर में थाना, सराय, अस्पताल स्कूल तथा विश्राम घर हैं। सिविल मुकदमों का निपटारा करने के लिये यहां मुन्सिफ आजाया करते हैं। अयाहपुर में शेख सरवी सरवर की समाधि है। जहां प्रतिवर्ष मेला लगता है। डरमार-टांडा और अयाहपुर के मुख्य निवासी खत्री हैं। गल्ले तथा सूती कपड़े का व्यापार होता है। मिट्टी के अच्छे वर्तन बनाये जाते हैं। टांडा जुवा, मोथ तथा मक्का प्रसिद्ध हैं।

उमार-टांडा में द्वितीय श्रेणी की म्युनिसपैलिटी है।

मुद्रा

होशियारपुर जिले में प्राचीन काल की मुद्राएं मिलती हैं। सब से प्राचीन चांदी के मुद्रा पौराणिक काल के हैं। ये मुद्रा बुद्ध भगवान के समय तक चला करते थे।

वैक्ट्रिया के यूनानी राजाओं के मुद्रा होशियार पुर जिले में मिले हैं। इन्हें व्यापारी लोग इस जिले में लाये थे। इन्डोसिथियन वंश के मुद्रा काफी मात्रा में हैं। महाराज कनिष्क, हविष्क और वासुदेव राजाओं के मुद्र ८७ वर्ष ईसा के पूर्व तक के प्राप्त हैं। इनके अतिरिक्त शाका-इंडे सिथियन राजा गोंडोफरेस के तांत्र मुद्रा २१ से ५० वर्ष ईसा के पूर्व तक के काफी संख्या में प्राप्त हैं।

यूनानी, सिथियन तथा हूण जातियों के पश्चात् पञ्जाब तथा उत्तरी भारत में प्राचीन काल में जिन हिंदू वंशों ने राज किया उनके मुद्रा होशियारपुर जिले में पाये जाते हैं। ये मुद्राएं प्राय. गढ़शङ्कर तथा ऊना के समीप मिले हैं। ये मुद्रा राजा अजमित्र, आनुमित्र के हैं। यह राजा औधुम्बार प्रदेश के थे। औधुम्बार शब्द उदुम्बार (अंजीर) से बना है। यह प्रदेश कांगड़ा तथा कनेट क्षेत्र में स्थित था। रावी तथा व्यास नदियों के मध्य उपजाऊ क्षेत्र में इस नाम का अब भी प्रयोग होता है जहाँ पर कि पठान कोट और नूरपुर के किले हैं। इन मुद्रों का काल लगभग १०० वर्ष ईसा के पूर्व का है।

आरम्भ काल से ही सतलज नदी के दोनों ओर के क्षेत्र में कुनिन्द या कुलिन्द रहते थे। कनिंघम का कहना है कि प्राचीन कुलिंद ही अब कुनेट हो गये हैं। इनकी संख्या लगभग ४ लाख है। यह लोग कूलू तथा शिमला के चारों ओर पहाड़ी जिले में बसे हैं।

यौधेया जाति प्राचीन भारत की प्रसिद्ध जातियों में से है। यौधेया का शुद्ध रूप योद्धा है। जो युद्ध से बना है। यह लोग बड़े वीर, सूरमा तथा लड़ाकू होते थे। अब यह लोग सतलज के दोनों तटों तथा लोअर द्वाब में बसे हैं। उन्हीं के नाम पर निचले द्वाब का नाम जोहिया बार पड़ा है।

प्रसिद्ध मथुरा नगर यमुना तट पर स्थित है। यहां प्राचीन मुद्राएं बहुत बड़ी संख्या में प्राप्त हैं। प्राचीनकाल में मथुरा नगरी का स्रोरिया राज में सम्मिलित था। इस राज में समस्त तिचला पञ्जाब शामिल था। मथुरा के राजों की मुद्राएं समस्त होशियारपुर जिले में मिलते हैं। यात्री उन्हें चिंतपुरनी, ज्वाला तथा मुरवी लाते हैं। मथुरा के राजा क्षत्रप राजू चूला राजा कोत्रि, पुरुषदत्त, राजा जानपद आदि के सिक्के पाए जाते हैं।

एपथालिटो या श्वेत हूण राजा श्री तरमान और शाही मिहिरकुल के सिक्के प्राप्त हैं। यह राजा हूण जाति के थे और सिंधु नदी के तट पर आ बसे थे। तूरमान को जवूला भी कहते हैं। वह जवूल या प्रथम शाही घराने का था जिस ने मुल्तान में ५०५ ई० में सूर्य-मन्दिर बनवाया था। ५१० ई० के लगभग तूरमान का राज्य मालवा तक फैल गया था। मिहिरकुल हूण था। उसने भारत पर आक्रमण किया था पर परास्त होकर उसे वापस होना पड़ा। उसने बौद्धों को दबाया और ब्राह्मणों को तथा उनके मत को प्रोत्साहन दिया। उसने ५०४ ई० तक राज्य किया। हूण साम्राज्य का अंत महाराज विक्रमादित्य ने किया था।

होशियारपुर में काश्मीर के हिन्दू सिक्के मिलते हैं। प्राचीन काल में पञ्जाब तक काश्मीर के हिंदू राजाओं का राज्य फैला था। सातवीं सदी में जब ह्वानसांग ने काश्मीर घाटी का भ्रमण किया तो झेलम तथा सिंध नदी के मध्य का भाग काश्मीर राज्य में सम्मिलित था। अशोक के समय में काश्मीर उसके राज्य में शामिल था। उसके पश्चात्

कुशान तथा सिथियन राज्य में शामिल था जब कनिष्क तथा हविष्क राजा थे।

गांधार तथा पञ्जाब के राजा जो काबुल के राजा थे और ब्राह्मण तथा राजपूत जाति के थे। उनमें स्पालपति देव (८७५ ई०) समन्त देव (९०० ई०) भीमदेव (९४५ ई०) आदि प्रसिद्ध हैं।

समस्त पञ्जाब में बड़ी संख्या में काबुल के ब्राह्मण तथा राजपूत राजों के सिक्के मिलते हैं वे होशियारपुर में भी प्राप्त हैं। कहते हैं कि सिथियन राजा का मन्त्री एक ब्राह्मण था जब वह राजा भारत से निकाला गया तो मंत्री ने भी उसे निकाल कर स्वयं अपना अधिकार राज्य पर जमाया तभी से ब्राह्मण वंश का राज्य काबुल में चल पड़ा। इन सिक्कों में एक ओर घोड़सवार की मूर्ति और दूसरी ओर सांड़ की मूर्ति बनी है।

कांगड़ा के हिंदू राजों के छोटे तांम्र-सिक्के होशियारपुर के पहाड़ी भागों में पाये जाते हैं। कोट कांगड़ा उनका प्रधान गढ़ तथा जालंधर राजधानी थी। प्रान्त का नाम जालंधर पीठ था। रावी तथा सतलज के मध्य प्रान्त का दूसरा नाम त्रिगत्र था। त्रिगत्र वंश सुरमा चन्द्र का है जिसने महाभारत में पांडवों के विरुद्ध युद्ध किया था। युद्ध के पश्चात् वह पहाड़ियोंपर चले आये और कांगड़ा का किला बनाया। चन्द्रवंशी होने के कारण राजाओं के नाम के साथ लगा रहता है। होशियारपुर में पञ्चमार्क, गोंडोफार वासुदेव, राजा भानुमित्र, श्री तूरमान, श्री मिहिर कुल काश्मीर के राजों के सिक्के, काबुल के ब्राह्मण राजाओं के सिक्के पाये जाते हैं। आकाशदित्य के समय की मुद्रा प्राप्त हुये हैं।

मुज़फ्फर गढ़

जहाँ अब मुजफ्फरगढ़ कस्बा बसा है वहाँ पहले केवल एक दुकान थी। १७९४ ई० में मुल्तान के नवाब मुजफ्फर ने यहां एक गढ़ (किला) बनवाया। इसी किले की दीवारों के भीतर जो नगर बस गया वह मुजफ्फर गढ़ कहलाने लगा। इसीसे आगे चलकर जिले का भी यही नाम पड़ गया। यह कस्बा मुल्तान से डेरागाजी खाँ को जाने वाली सड़क पर पड़ता है। मुजफ्फर गढ़ जिला २९ डि० १ फी० और ३० डि० ४६ फी० अक्षांशों ७० ३३ और ७१४६ पूर्वी देशान्तरों के बीच में स्थित हैं। चनाब और सिन्ध नदियों के बीच का कोना इसी जिले में सम्मिलित है। इस जिले का क्षेत्रफल३१२६ वर्ग मील है। सिन्ध और चनाब का संगम इस जिले का पश्चिमी सिरा है। इस जिले के उत्तर में मियावली और झंग के जिले हैं। इस के पूर्व में मुल्तान का जिला और बहावलपुर का राज्य है। इस के पश्चिम में डेरागाजी खां का जिला है। सिन्ध नदी जिले की पश्चिमी सीमा और चनाब नदी पूर्वी सीमा बनाती है। मुजफ्फर गढ़ जिले में ३ तहसीलें हैं। मिनावान तहसील में जिले का उत्तरी भाग शामिल है। दक्षिणी भाग अलीपुर तहसील में शामिल है। इन दोनों के बीच में मुजफ्फर गढ़ शहर जिले की राजधानी है यह शहर चनाब नदी के दाहिने किनारे से ६ मील की दूरी पर मुल्तान से डेरागाजी खां को जाने वाली सड़क पर स्थित है।

मुजफ्फरगढ़ जिले का आकार एक लम्बे त्रिभुज के समान है। यह सिन्ध सागर द्वाब के निचले भाग में स्थित है। इस त्रिभुजाकार जिले के पूर्वी भाग में चनाब और पश्चिमी भाग में सिन्ध नदी बहती है। सङ्गम के पास इसका सिरा है। उत्तर की ओर ५५ मील चौड़ा आधार है। इस जिले की लम्बाई १२० मील है। जिले के उत्तरी भाग में पश्चिम की ओर सिन्ध की घाटी है। पूर्व की ओर चनाब की घाटी है। सिन्ध नदी की प्रधान धारा पश्चिम की ओर हटती जा रही है। थाल और सिन्ध के बीच में १५ मील चौड़ी अच्छी मिट्टी की पेटी है। नदी तट के पास इसमें नदी की वार्षिक बाढ़ से सिंचाई हो जाती है। भीतरी भाग में नहरों से सिंचाई होती है। चनाब की घाटी अधिक गहरी और कम चौड़ी है। इस में इतना अधिक परिवर्तन नहीं होता है जितना सिन्ध नदी में होता है।

रेतीला थाल प्रदेश सिन्ध नदी की घाटी को चनाब की घाटी से अलग करता है। सिन्ध सागर द्वाब के बहुत बड़े भाग में यही थाल रेगिस्तान फैला हुआ है। थाल रेगिस्तान भी त्रिभुजाकार है इस का आधार २४ मील और भुजायें ५० मील लम्बी हैं। इसका क्षेत्रफल १००० वर्ग मील है। थाल के पश्चिमी भाग में रेतीली भूमि है। कहीं कहीं रेतीले टीले हैं। पूर्व की ओर रेतीले टीले अधिक ऊँचे हैं। वे उत्तर से दक्षिण को चले गये हैं। चनाब घाटी के किनारे वे समाप्त हो जाते हैं। बालू के टीलों के बीच बीच में चिकनी मिट्टी की की नीची तली है। थाल प्रदेश में असंख्य ऊंट और भेड़ बकररियाँ चरा करती हैं वर्षा होने पर अच्छी घास उग आती है। उस समय गाय बैल भी चरने आ जाते हैं। पानी सब कहीं खारा है। जो यहां मीठे कुएं कहे जाते हैं उनका पानी भी कुछ खारा ही है। पर थाल के लोग इसी खारे पानी को पसन्द करते हैं। खाद के लिये कुछ किसान अपने खेतों में भेड़ बकरियों के झुण्ड को रात्रि में बिठा लेते हैं। इसके लिये उन्हें कुछ अन्न देना पड़ता है। पर सब कुछ वर्षा पर ही निर्भर है। वर्षा होने पर ही कुओं में पर्याप्त पानी रहता है। तभी घास अच्छी होती है। इसे चरने के लिये जो झुंड बकरियों की आती हैं उन्हीं से खेतों को खाद मिलती है। अधिक वर्षा होने पर यहां गेहूँ अच्छा होता है। पश्चिम और दक्षिण की ओर खेत अधिक बड़े हैं और रेतीले टीले छोटे हैं। कहीं कहीं बाढ़ की नहरों से सिंचाई होती है। सिंध नदी से चनाब की ओर भूमि ढालू होती गई है। थाल में बसे हुये लोगों का कहना है कि पुराने समय में सिंध नदी इस थाल प्रदेश के ठीक बीच में होकर बहती थी। फिर नदी पश्चिम की ओर मुड़ गई और अपने पुराने मार्ग में बालू छोड़ गई हवा ने बालू को उड़ाकर रेतीले टीले बना दिये। शाहगढ़ के पास थाल का जहाँ दक्षिणी सिरा है वहां पहले सिन्ध नदी की तली थी। इस समय वहां एक लम्बी झील है।

थाल प्रदेश दो भागों में बंटा है। इन्हें जाल थाल और रोढ़ा थाल कहते हैं। जाल थाल इस प्रदेश का दक्षिणी-पश्चिमी अंग है। इसमें मुजफ्फर गढ़ जिले का समस्त थाल परगना नहरी थाल, चाही थाल का थोड़ा भाग और सिनावन के पक्का परगने का आधा भाग शामिल है। नहरी थाल का पूर्वी आधा भाग और पक्का परगने के कुछ गांव बाढ़ की नहर से बहुत दूर हैं। सिनावान तहसील के इस पक्का परगने में प्रायः सब खेत नहर से सींचे जाते हैं। सिनावान तहसील में नहरी थाल के पश्चिमी आधे भाग और मुजफ्फर गढ़ थाल के बहुत बड़े भाग में नहर से सिंचाई होती है।

नहर के सींचे हुये प्रदेश में जो ऊसर है वह सरकना बहुत है। इस भाग में जाला बहुत है इसी लिये यव जाल थाल कहलाता है।

रोढ़ाथाल—इस थाल में वृक्षों का अभाव है। केवल कुओं के पास कंडा और उकहन के पेड़ पाये जाते हैं। वीरान होने से ही इसका यह नाम पड़ा। रोढ़ा थाल के २ उपभेद हैं। लानाथाल, बुई थाल और ढांचा थाल में चनाब कच्छ के किनारे किनारे बहुत ऊँचे रेतीले टीले हैं। यह रेतीले टीले उत्तरी-पूर्वी सिरे से बगाशेर के मकबरे (खानपुर गांव) के पास होते हुये मुजफ्फर गढ़ कस्बे के

पास तक चले गये हैं। यह प्रदेश आध मील से लेकर ४ मील तक चौड़ा है। यहां भी कहीं कहीं छोटे छोटे (लाक) खेत हैं।

मुंडा गांव के उत्तर में और कुछ अन्य गांवों में लाना झाड़ी बहुत होती है। इसी से इस भाग को लाना थाल कहते हैं।

रोड़ा थाल का शेष भाग बुई थाल कहलाता है। यहाँ बुई और फोग झाड़ियां उगती हैं।

कौड़ा थाल के जिस भाग के कुओं में खारा पानी है उसे कौड़ा थाल कहते हैं। जिसमें कुछ कम खारा है उसे मीठा थाल कहते हैं। वैसे तो थाल के सब भागों के कुओं में कुछ न कुछ खारा पानी है। पर कौड़ा थाल में इतना खारा जल है कि खरीफ की फसल नहीं हो सकती। यहां का जल मनुष्यों के पीने योग्य नहीं है।

थाल प्रदेश के बाहर जिले का शेष भाग एकदम चपटा है। यहां कछारी मिट्टी की पेटियां नदी तट के समानान्तर चली गई हैं। यहां वार्षिक बाढ़ से सिंचाई हो जाती है। कुछ भागों में कुओं और नहरों से सिंचाई होती है। कछारी भाग में नदी की कई धारायें हैं इन्हें ढांढ या फाट कहते हैं। नदियों के संगम के ऊपर कछारी पेटियां एक दूसरे से मिल जाती हैं। यहां नदियों में गरमी की ऋतु में बाढ़ आती है। उस समय निचला भाग पानी से डूब जाता है। आना जाना केवल नावों से हो सकता है। हर एक घर का एक अलग मचान या मन्हान होता है। प्रबल बाढ़ में घरों के बह जाने पर लोग इन्हीं पर रहते हैं। जून के आरम्भ से सितम्बर के अन्त तक लोगों को बड़ा कठिन जीवन बिताना पड़ता है। दिन के समय उन्हें कड़ी धूप में रहना पड़ता है। रात्रि के समय उन्हें मच्छड़ काटते हैं। कभी कभी लोग कई दिन या सप्ताहों तक मचानों को नहीं छोड़ सकते हैं। बाढ़ के घटने पर प्रायः सब को ज्वर आने लगता है। यहां की प्रसिद्ध कहावत है :—

बसन्दर चेत न तन कपड़े, न रोटी पेट।

मध्यवर्ती भाग—जिले का मध्यवर्ती भाग उत्तर की ओर थाल प्रदेश से घिरा है। इसके शेष तीन ओर कछारी मैदान है। यहां नहर और बाढ़ से सिंचाई होती है। यहां कई हरे भरे गांव और नगर हैं। यहाँ गन्ना, धान और गेहूँ की अच्छी फसलें होती हैं। बाढ़ की नहरें यहां अप्रैल से सितम्बर तक बहती रहती हैं। इस भाग को प्रबल बाढ़ से बचाने के लिये बांध बने हैं। पर कभी कभी (जैसे १८७३, १८९३ और १९०३ ई० में) चनाव और सिन्ध नदियों ने उमड़ कर इस भाग को जल मग्न कर दिया। यहाँ सिन्ध नदी के कई पुराने निचले मार्ग बने हैं। इन्हीं में सिन्ध नदी का पेटा रहा। शाहगढ़, सिन्द्री, सैथल, नालगई गरंग, मन्नू वाह ढांड ऐसे ही मार्ग हैं। यहीं पूरनवाह नहर बहती है। पुराने मार्ग गरक या गरंग कहलाते हैं। इस जिले में तीन प्राकृतिक विभाग हैं। (१) थाल (२) कछारी प्रदेश (३) नहर का प्रदेश सिन्ध नदी अपने समस्त ११८ मील लम्बे मार्ग में जिले की पश्चिमी सीमा बनाती है। तट के ढाल सरल तथा बेकाम हैं। नदी का पानी पश्चिमी तट से होकर बहता है। यह तट डेरा गाजी खां के सागर तहसील में स्थित है। यह तट सीधा ऊँचा है। शीतकाल में इसकी चौड़ाई दो मील रहती है। ग्रीष्मकाल में नदी में बाढ़ आ जाती है और तटों के ऊपर होकर पानी बहने लगता है। उस समय नदी की चौड़ाई बहुत अधिक हो जाती है। शीतकाल में नदी की गहराई १२ फुट और ग्रीष्मकाल में २४ फुट रहती है। धारा तेज तथा शक्तिशाली रहती है। नदी में रेत बहुधा पड़ती रहती है तथा द्वीप बनते रहते हैं जिससे नावों का चलना खतरनाक रहता है। सिन्ध नदी पश्चिम की ओर हटती जाती है कहते हैं कि यह कभी थाल में बहा करती थी। इस जिले के केन्द्रीय भाग में बहुत से गांव ऐसे हैं जिनके नाम से पता चलता है कि उनका नदी से गहरा सम्बन्ध रहा है पर अब वे नदी से बहुत दूरी पर स्थित हैं। उदाहरण के रूप में बेट, बेला और कच्छा आदि हैं जो नदी से बहुत दूर मध्यवर्ती भाग में स्थित हैं। जिले के वे भाग जो कभी सिंध नदी की तली में थे आज वहां सैकड़ों नदी नाले बहते हैं। पश्चिम की ओर हटते हुये नदी ने बहुत से सोते तथा नालियाँ बना दी हैं जो

सिचाई के हेतु बहुत उपयोगी हैं। इन्हीं सोतों तथा नालियों से बाढ़ वाली बहुत सी नहरें बन गई हैं जो किसी भांति भी हानिकारक नहीं हैं। आईन-अकबरी से पता चलता है कि उच के प्रतिकूल सिंध नदी चनाब नदी से मिलती थी यह स्थान वर्तमान संगम से ६० मील ऊपर की ओर स्थित है। वर्तमान संगम स्थान मिथान कोट के समीप वेट बाघवार में हैं। वर्तमान अलीपुर तह-सील का समस्त भाग पहले सिन्ध नदी के पश्चिम की ओर स्थित था। १७९६ ई० तक नदी के प्रवाह में किसी भांति का भी अन्तर नहीं था। परन्तु उसके पश्चात् और आधुनिक सदी के आरम्भ काल में सिन्ध नदी ने धीरे धीरे अपना मार्ग बदला है और अपने पुराने मार्ग में एक चनल छोड़ आई है जो इससे इस समय २० मील की दूरी पर स्थित है। मिठान कोट स्थान पर यह पुनह अपने पुराने चैनल से आकर मिल जाती है। लोगों की गाथा के अनुसार १७८७ ई० तक नदी ने अपना मार्ग नहीं बदला था। सितपुर के किसी शासक ने वर्त-मान नदी के मार्ग पर एक नहर खोदवाई थी अचा-नक नदी ने अपना मार्ग बदल दिया और वह नहर के मार्ग हो कर बहने लगी जहां अब भी वह प्रवाह कर रही है। नदी के इस परिवर्तन का साक्षी इतिहास भी है जिस में लिखा गया है कि नदी के मार्ग बदलने से उसके पश्चिमी तट का प्रदेश भावलपुर के शासक के आक्रमण के लिये खुल गया जिससे १७९५ ई० में भावलपुर के नवाब ने समस्त प्रदेश पर अधिकार जमा लिया था और १७९१ ई० से १८१८ ई० तक उसने इस प्रदेश पर राज्य किया था। सिन्ध नदी का पुराना मार्ग अब जन्नून नाला के नाम से प्रसिद्ध है। इस नाले की लम्बाई २४ मील है। नाला के एक सिरे पर मेला-चाछ और दूसरे सिरे पर मक्खन बेला गांव है जहाँ पर चनाव नदी सिन्ध से मिलती है। आईन अकबरी में जिस संगम का वर्णन है उससे १३ मील की दूरी पर शाहसुल्तान स्थान पर संगम होने का भी काफी प्रमाण है। असामयिक परिवर्तन के कारण ही नदी को कंजड़ी (रंडी) की पदवी मिली है। नदी का नाम सिंध है जिसके तीन स्पष्ट अर्थ हैं एक तो इसका अर्थ सिन्ध नदी है दूसरा मतलब इसका यह है कि नदी के दोनों तटों की भूमि का वह भाग जो सिन्ध से प्रभावित है। तीसरा अर्थ सिन्ध प्रान्त से है।

चनाव नदी मुजफ्फरगढ़ जिले की पूर्वी सीमा बनाती है। इसकी समस्त लम्बाई १२७ मील है। इस जिले में इस नदी का नाम चनाव है पर इस जिले में पहुँचने के पूर्व इस नदी का नाम त्रिनाव है क्योंकि झेलम, रावी नदियों का पानी इसमें मिलता है। त्रिनाव का अर्थ तीन नदियों का पानी है। जिले में अपनी लम्बाई का ३।५ भाग प्रवाह करने के पश्चात् यह नदी सतलज और रावी नदियों का पानी ग्रहण करती हैं और इसी कारण पञ्चनद हो जाती है। पञ्जनाद का शुद्ध रूप पञ्चनद (पञ्च-नद) है। यद्यपि पंचनद न कहलाकर यह चनाव कहलाती है। वेट बाघवार पर यह सिन्ध नदी को पाकर सतनद (सप्त-नद) हो जाती है जिसमें पांच पञ्जाब की नदियां (झेलम, रावी, चनाव, सत-लज व्यास और काबुल तथा सिन्ध है। चनाव नदी के तट का कुछ भाग सीधा ऊँचा है और कुछ सरल ढालू कटा छटा है। दी की गहराई शीतकाल में १५ फुट और ग्रीष्म काल में २० फुट रहती है। सिन्ध की अपेक्षा चनाव नदी संकरी तथा कम तेज बहने वाली है। गहरी नदी अपना मार्ग बहुत बदलती है। नावों का चलना इसमें बहुत कठिन है पर उतना खतरनाक नहीं है जितना कि सिन्ध नदी में है।

समुद्र की ओर पीठ कर के यदि हम सतनद पर निगाह डालें तो हम देखेंगे कि इस जिले के दक्षिणी कोण पर मिठान कोट के ऊपर सिन्ध और चनाव नदियां एक दूसरे से अलग होती है यहां पर बाढ़ का धरातल समुद्र धरातल से २०८ फुट ऊँचा रहता है। यहाँ से सिन्ध नदी का ढाल १३३ प्रति मील के हिसाब से और चनाव का ढाल ०.९९ प्रतिमील के हिसाब से ऊँचा होना आरम्भ होता है। इस प्रकार सिन्ध नदी ०.३४ प्रति फुट भी चनाव की अपेक्षा अधिक ऊँची होती जाती है। जिले के उत्तरी-पूर्वी कोण पर जो मिठान कोट से ११८ मील की दूरी पर है सिन्ध नदी अपने प्रति-

कुल उत्तरी-पूर्वी सिरे पर चनाब नदी से ३७ फुट ऊँची हो जाती है। इन दोनों नदियों के मध्य कई पहाड़ी नदी हैं केवल जिले के उत्तरी अर्ध भाग में थाल का केन्द्रीय भाग है। बनावटी बांधों के कारण सिन्ध नदी का पानी जिले की भूमि में नहीं प्रवेश कर पाता है। ये नदियां जिले के दोषियों के छिपाने के लिये बड़ी उपयोगी हैं जो अपने घरों में पुलीस या सेना के भय से नहीं रह सकते हैं। ऐसे अपराधी पुलिस की निगाह से बचने के लिये सिन्ध नदी के नीचे की ओर या ऊपर की ओर (कालाबाग से लायलपुर तक) यात्रा के लिये चले जाते हैं। संकटकाल हट जाने पर वे फिर लौट आते हैं।

सिन्ध तथा चनाब दोनों नदियाँ अपनी अपनी राशि लाती हैं। बाढ़ के दिनों में वह यह राशि समीपवर्ती तटीय स्थानों पर छोड़ देती हैं। यह कछारी मिट्टी आट, माट, उबा, नवां और लटार आदि आदि विभिन्न नामों से पुकारी जाती है। कहते हैं कि कछारी मिट्टी में उपज की शक्ति ५ वर्ष तक रहती है चूंकि प्रतिवर्ष कुछ न कुछ मिट्टी पड़ती जाती है। इस कारण किसानों को भूमि में खाद डालने की आवश्यकता ही नही पड़ती है। चनाब नदी की कछारी भूमि सिन्ध की अपेक्षा अधिक अच्छी होती है क्योंकि उसकी राशि या लाई हुइ मिट्टी में रेत कम रहती है। इन दोनों नदियों के सम्बन्ध में जिले के निवासियों के मध्य मसल प्रसिद्ध है। सिन्ध नदी सोना लेती है और टीन देती है, चनाब टीन ले जाती है और सोना देती है।

असाधारण बाढ़ के अतिरिक्त नदियों की बाढ़ से प्रायः सदैव लाभ ही होता है केवल उसी समय हानि होती है जब नदी अपनी राशि इतनी छोड़ देती है कि उसके ऊपर बहने लगता है और फिर बाढ़ का पानी नमक के मैदान होकर बहता है। ऐसी दशा में नमकीन पानी पौधों को जला देता है

इस जिले में ९ लाख एकड़ भूमि में खेती होती है जिसमें से चार लाख पचहत्तर हज़ार एकड़ भूमि कछारी या नदी की सिंचाई वाली है। इस तरह जिले के किसान तथा सरकार दोनों नदी की कृपा पर ही निर्भर है अतः यह आवश्यक हो जाता है कि नदी में बाढ़ भी ऐसे समय आवे जब उसकी आवश्यकता हो और कृषि को किसी प्रकार की हानि न होवे। जब पानी की कमी हो जाती है तो सिंचाई के लिये पानी लेने के हेतु संहर्ष आरम्भ हो जाता है और गहरे मित्र किसान भी एक दूसरे से लड़ जाते हैं। यदि ठीक समय पर नहर का पानी नहीं पहुँचता है तो फिर खेती होनी सम्भव नहीं होती है। यदि नदी में बाढ़ नहीं होता है तो लोग आनन्द के साथ काम करते हैं और उन्हें प्रायः चार महीने छुट्टी मिल जाती है पर यदि बाढ़ आई तो नदी का बांध तोड़ देती है और न केवल किसानों को बरन् सरकार को भी हानि पहुँचाती है। नहरों को मिट्टी से भर देती है सरकारी भवनों को बहा ले जाती है और पशु आदि बह जाते हैं।

नदी के सोतों, नालियों और सरोवरों को जिले के लोग धन्द कहते हैं। सोते फाट भी कहलाते हैं। धन्द दो प्रकार के होते हैं। एक तो वे हैं जिनको बाढ़ के समय में नदी से पानी मिलता है और फिर वे सूख जाते हैं। दूसरे वे हैं जो साल भर नदी से मिले रहते हैं और उनका सम्बन्ध किसी झील या सरोवर से रहता है ऐसे धन्दों में प्रायः साल भर पानी रहता है। इनसे परशियन झील द्वारा सिंचाई होती है। धन्दों में मछलियाँ बहुत रहती हैं जिनका शिकार किया जाता है। इसका मुख्य कारण यह है कि इनमें सिवार घास शीघ्र ही उग आती है जो मछलियों के छिपने तथा भोजन का काम देती है। धन्दों में पशु-पक्षी भी बहुत रहते हैं।

इस जिले में आठ खास खास धन्द हैं। गजनफरगढ़ धन्द गजनफरगढ़ नाम गांव में मुजफ्फर गढ़ से १५ मीलदक्षिण की ओर है। यह पचास एकड़ की एक स्थाई झील है। यहां जंगली पक्षियां बहुत हैं। यहां मछली का शिकार बहुत होता है। पानी वाली कोका बेली फूल बहुत होता है।

सिन्धरी धन्द जालवाल, मुहम्मदपुर, ईसन वाली, संडीला गांवों में है। मुजफ्फरगढ़ से सत्रहवीं या अठारवीं मील पर यह अलीपुर सड़क को काटती है। यहां पक्षियां बहुत हैं।

सैथाल धन्द बस्ती जलाल में है। यह अलीपुर सड़क को बीसवीं और इक्कीसवीं मील के मध्य काटती है। यहां जंगली चिड़ियां बहुत हैं।

पञ्जीहार धन्द मुजफ़रगढ़ से २३ मील दक्षिण रोहिल्लान वाली में है। यहां की भूमि इतनी नीची है कि सिन्ध तथा चुनाब नदी के पानी ने धन्दों का एक जाल सा बना दिया है। द्वाबा के केन्द्र तक नदियों का पानी चला जाता है। यह धन्द अपना पानी पञ्जीहार धन्द में गिराते हैं। यह भी अलीपुर सड़क को पार करता है। यह पञ्जीहार इस कारण कहलाता है कि इसमें नीचे वाली पांच कहों का सरदारवाह पानी आता है।

सरदारवाह, नागवाह, अदिलवाह (सिंध से) और हाजीवाह और गजनफ़रवाह (चुनाब से) पञ्जीहार अपने चुनाव वाले मार्ग में एक शाखा छोड़ता है जिसे नाग (सांप) धन्द कहते हैं। इसका मार्ग टेढ़ा-मेढ़ा है। पञ्जीहार और नागनां दोनों में पक्षियाँ तथा मछलियों बहुतायत से हैं।

१८८० ई० में गजनफरगढ़, सिन्धरी, सैथाल और पञ्जीहार धन्द मिल गये थे और उन्हों ने रोहिल्लान वाला सोता बना दिया था। १८८२ ई० की बड़ी बाढ़ के पश्चात् एक नई शाखा बन गई जिसे तालसिन्ध कहते हैं। यह सिन्ध नहरों का बचा हुआ पानी खपत करती है।

जन्नूवाह धन्द लगभग २४ मील लम्बा है इसका उत्तरी सिरा भांबू संदिला गांव में है। यह दक्षिण-पूर्व की ओर बहता हुआ मक्खन बेला के समीप चनाब नदी से मिल जाता है। इसमें पक्षी-गण, मछलियां तथा टिटिहरी चिड़ियां बहुत हैं।

कड़ाकुल, कून्द्र और पब्बीन जल के समीप रहने वाले पक्षी भी बहुत हैं।

अलीपुर तहसील के दक्षिण की ओर गारंग धन्द स्थित है। इसका उत्तरी सिरा भामरी गांव में और दक्षिणी सिरा कोटली लाल में है। इसकी शीतकालीन लम्बाई सात मील है। इसकी अधिक से अधिक चौड़ाई ६० गज और गहराई १२फीट है। शिकारियों के लिये यह स्वर्ग का स्थान है। इसके पानी में पक्षियां तथा तट पर काली फाख्ता चिड़ियाँ बहुत हैं। मछलियाँ भी बहुत हैं। घड़ियाल और बड़े बड़े कछुये खूब पाये जाते हैं।

मग्गी और मग्गास्सन दो सोते खारगरीब और ईसनवाला में स्थित हैं। यहाँ थट्टो गुरमानी के मियाँ बतख पालते हैं। सरकारी अफसर लोग उनका शिकार करते हैं।

यह सभी धन्द या सोते स्थाई हैं और अंतःप्रदेश में स्थित हैं। इनके अतिरिक्त और भी स्थाई धन्द हैं जिनमें मछली मारने और पब्बीन एकत्रित करने का ठीका सरकार की ओर से होता है। कुछ धन्दों को अलग अलग और कुछ का समूह में ठीका होता है। नदी के तटों के समीप इन धन्दों या सोतों की संख्या बहुत अधिक है वे रूप-रेखा और स्थित में भिन्न भिन्न हैं। नये सोते बनते रहते हैं और पुराने पटते रहते हैं।

वनस्पति

टहनी या शीशम का वृक्ष जितनी अधिकता के साथ इस जिले में उपजता है उतना और किसी दूसरे जिले में नहीं उगता है। जिले में दो कड़े लम्बे बाग हैं। एक ५ मील लम्बा है और मुजफ्फर गढ़ से पुराने शेरशाह घाट की ओर चला गया है। दूसरा १५ मील लम्बा है और मुजफ्फरगढ़ से गजनफरगढ़ तक फैला है। इन बागों के वृक्षों में से किसी किसी की मोटाई १५ फुट है। गजनफरगढ़ से अलीपुर तक सड़क पर दोनों ओर शीशम के वृक्ष लगे हैं। इसके अतिरिक्त जिले और दूसरी सड़कों पर भी दोनों ओर शीशम के वृक्ष लगाये गये हैं।

बबूल या कीकर का वृक्ष जिले में कम पनपता है इसका मुख्य कारण यह है कि बबूल को पाले से बहुत हानि पहुँचती है और वह सूख जाता है पर जहां कहीं भी पाले से इसकी बचत हो जाती है यह खूब बढ़ता है। इसकी लकड़ी खेती के कामों में आती है। कीकर, बैर और फ्रांड की नवीन नवीन टहनियां काट कर पशुओं को खिलाते हैं इसे यहां के निवासी लांगो या लुंग कहते हैं। सिरिस का वृक्ष जिले में बहुत उगता है पर इसकी लकड़ी को कीड़े नष्ट कर डालते हैं। जांड और

कौंडा का वृक्ष समस्त जिले में बहुतायत से उगता है। राक का वृक्ष भी खूब होता है। थाल में तो कुओं के समीप यह खूब बढ़ता है। इसमें जो फल लगते हैं उसे शांगर, संगर या संगरी कहते हैं और घी के साथ पका कर भोजन के लिये प्रयोग किया जाता है। मट्ठा के साथ मिलाकर इसका रायता बनाते हैं नदियों के किनारे तथा कछारों में पिलाची तथा झाऊ खूब सघन उगता है। लाई का पौधा बाड़ा बनाने के लिये उगाया जाता है। थाल में जाल पौधा बहुतायत से उगता है। इसकी लकड़ी किसी काम की नहीं होती है। इसका फल पिलहोन है जो लोग खाते हैं। इसके सूखे फल को लोग कोकर कहते हैं। इसकी पत्तियां तथा कोंपले पशुओं के चारा का काम देती हैं। जाल की ही जाति का दूसरा पौधा झोंट होता है इसकी दातौन अच्छी होती है। बंजर भूमि तथा परती में कारनिह या कारिता पौधा उगता है। इसकी लकड़ी जलाने के काम आती है और फल तथा फूल खाने के काम देते हैं। सिन्ध, झेलम और चनाब नदियों के किनारे उमान या बहान पौधा खूब उगता है। इसकी नरम टहनियाँ बकरियों के चारा का काम देती हैं। लकड़ी का प्रयोग घरेलू सामान तयार करने के लिये होता है। बेर की लकड़ी से घरेलू सामान तयार किया जाता है। पत्तियां बकरी तथा भैंसे आदि के चारा का काम देती हैं। फोग का पौधा थाल में बहुत उगता है। यह एक बिना पत्ती वाली झाड़ी है। इसकी लड़की जला कर चारकोल तयार किया जाता है। इसका फल फोगली कहलाता है जो मई मास में तयार होता है। इसकी रोटी और तरकारी दोनों बनाई जाती हैं। इसकी पत्तियों को भेड़ तथा बकरियां खाती हैं। पौधा लगभग १० फुट लम्बा और १ फुट मोटा होता है इनके अतिरिक्त पीपल, बोहीर, अमिलतास, लसोढ़ा, रोहीड़ा, गोंडी, जामुन, छेछड़ा, फुलाई काबुली बबूल, सहिंजन आदि के वृक्ष भी उगते हैं।

वाटिकाओं में आम, सेब, संतरा, नींबू, अंजीर, अमरूद आदि के वृक्ष लगाये जाते हैं। इनमें आम का वृक्ष सबसे अच्छा समझा जाता है और खूब लगाया जाता है। समस्त जिले में आम के बाग पर मुजफ्फरगढ़, खानगढ़ और सितपुर के समीप बहुत आम के बगीचे हैं जहाँ बहुत अच्छे और अधिक मात्रा में फल होते हैं। जिले में भूतपुर में एक आम का वृक्ष है जो अपने फल के सब से अधिक प्रसिद्ध है। फसल के समय यह वृक्ष अकेला सस्ती में ५०० रु० को और अब दो हजार रुपये को बिकता है।

नारियल और ताड़ के वृक्ष भी जिले में बहुत हैं। नारियल का वृक्ष लम्बे तने वाला होता है। तने को यहां के लोग मुंध कहते हैं। नारियल के वृक्ष का लगभग प्रत्येक भाग काम का होता है। तने की धन्नी या शहतीर बनाई जाती है। उसे पोला बना कर नाली में पानी बहाने के लिये प्रयोग करते हैं। पत्तियों के पंखे बनाये जाते हैं और उसके डंठल को कूट कर रस्सी तयार की जाती है। नारियल का पानी पिया जाता। फल की गरी भोजन का काम देती। खोपड़े के ऊपर के रेशों से रस्सी बनती है। खोपड़ा भी हुक्का बनाने के प्रयोग में आता है।

धन्द प्रदेश में कोकाबेली (पब्बियन), सिंघाड़ा कुंद्र आदि पौधे पानी में उगते हैं। इन पौधों के फल, फूल और पत्तियाँ आदि सभी उपयोगी हैं। तल्ला दूब, मधान, मखनाल, लेहू, बिसाह-सिंझी जौदाल, दोधक, बूटा, कान्ह, खाबी, दिला, मुरक जुसाग, लाना, खारपाल, मंझार, साबरी, मैना, बथुवा, पित्तपापड़ा, सिन, पलवाहां और पतराली आदि बनस्पतियां तथा घासें उगती हैं जो पशुओं के भोजन सामग्री या औषधि का काम देती हैं। सरहरी और सरपत के पौधे बड़े काम के होते हैं। यह छत बनाने, छप्पर डालने, रस्सी तथा चटाई बनाने के काम आते हैं।

थाल प्रदेश में खीप नामक पौधा होता है। यह छत बनाने में धन्नियों में ऊपर रखने के लिये प्रयोग होता है यदि इसके दो टुकड़ों को रगड़ दिया जाय तो शीघ्र अग्नि उत्पन्न हो जाती है। बलुही मिट्टी में गुखुरू खूब उगता है। यह दवा का काम देता है। थाल प्रदेश में ग्रीष्मकाल में चमन का पौधा उगता है। ऊँट इसे खूब खाते हैं और इससे खून साफ करने की औषधि तयार की जाती है।

कार्वीजूल पौधे के फल तथा पत्तियां औषधि का काम देती हैं। रतवान पौधा नहरों के किनारे गरमी में उगता है यह घोड़ों की औषधि है। कंडेरी पौधे के तने में कांटे होते हैं। इसके फल आलू जैसे होते हैं। पेसकलानी पौधे को ऊँट खाते हैं। यह स्त्री रोग की औषधि है। हुरमाल इसके बीज को और औषधियों के साथ मिला कर भूत आदि छुड़ाने के लिये प्रयोग किया जाता है। भुई-फोर नामक पौधा पृथ्वी को फोड़ कर मार्च मास में एक या डेढ़ इंच मोटा बाहर निकल आता है और ६ इंच से १ फुट ऊंचा होता है यह बकरियों को दूध बढ़ाने के लिये और बच्चों को खून साफ करने के लिये खिलाया जाता है। जाल, जंड, करीता और फोग के वृक्षों की जड़ से ग्रीष्मऋतु की वर्षा के पश्चात् सीतून नामक पौधा निकलता है। यह नमक के साथ खाया जाता है और इसकी तरकारी बनती है। यह बड़ा मजेदार होता है। खरीफ फसल के पौधों के मध्य चिभोर पौधा उगता है। इसका फल कच्चा खाया जाता है और मांस में मिलाकर पकाया जाता है जिससे मांस का स्वाद अच्छा हो जाता है। बाढ़ वाली भूमि में जाति मुशाक पौधा उगता है।

भागड़ा पौधा दो प्रकार का होता है। एक में नीले फूल होते हैं। स्त्रियां इससे आंख के लिये अंजन बनाती हैं। दूसरा पौधा तटों पर उगता है उसे जला कर बैलों के कंधे पर लगाते हैं। थाल प्रदेश में उथपेड़ा नाम का पौधा चौड़ी पत्तियों वाला उगता है इसकी पत्तियां गिनोरिया रोग को निवारण करती है। गरमी के दिनों में फातोकर पौधा उगता है। इसकी पत्तियां फोड़े फुंसियों को अच्छा करती हैं और सिर के बाल उगने में सहायक होती हैं। मूकल पौधा लहसुन की भांति होता है। रबी के पौधों के साथ यह उगता है। इसकी जड़ में काले रंग की पोटी लहसुन के ही भांति होती है। जब भोजन की कमी हो जाती है तो इसे पीस कर रोटी बना कर गरीब लोग खाते हैं।

इनके अतिरिक्त कुम्भी, पद बहेड़ा, गोरखपान, हंदेली, तंदूला, मरारी, रेशान, बानबेरी सिन्द, चमादा, सलाड़ा, कौड़ी, मालह, पिमली कालैच बूटी, नील बूटी, गिदारवाड़, अंगईर कौंजुन और बोफली पौधे होते हैं।

पशु पक्षी

सिन्ध नदी के तटीय घनों वनों में चीते कभी कभी देखने में आते हैं। भेड़िया जिन्हें नहार कहते हैं समस्त जिले में पाये जाते हैं। जंगली सुअर बहुत हैं और खासकर नदियों के तट पर बहुतायत से हैं। जंगली रीछ भी वनों में मिलते हैं। चिकारा हिरन वनों तथा घासों के मैदानों में मिलता है। सियार और लोमड़ियां साधारणतः सब कहीं मिलते हैं। साही जिले के दक्षिणी भाग में बहुत हैं। इनके अतिरिक्त और दूसरे छोटे जंगली पशु मिलते हैं।

गेरा, तुत्तिन, चिर्री (गौरय्या), हुदहुद, कठ-फोड़वा, तीतर, कांवनी, कराही, तातुहा, पैन सिड़ी, पान, चन्दूर चील, गिद्ध, सुन्दा, चान, नीलकंठ, मालाह, हेरहा, तोता, मलाला, काल कराछी, अबा-बील, तोबा, बाग्ली, अरी, कुलांग, हारियावल, लाली, डोईबाग, सन्ह, दोदरकान, घूघ, उल्लू, कुल, बाज, बशीन, चियाक, लवार, तुमतरी, चुहीमार, शीहों, चरग, बहरी, काखानक, नीलवुलाई, धिंग, बाधिंग, बुलबुल, फिद्दी, धूरी, छपाकी, तिलमार और आक्ला आदि पक्षी पाये जाते हैं।

मछली

जिले में मछली का भंडार बहुत है। नदियो नालियों, सोतों, धंदों, सरोवरों आदि में मछलियां बहुत होती हैं जिससे जिले की म्हावेल, किहाल और मोर जातियां अपना जीवन ही मछलियों के ऊपर बिता रहे हैं। इनके अतिरिक्त और दूसरे लोग भी मछली का शिकार करते करते हैं। जिले में मछली मरने का खास एक पेशा है जिस पर बहुत से लोगों की जीविका चलती है। शिकार करने का काम विभिन्न भांति के जालों द्वारा होता है। कंटियां द्वारा भी शिकार किया जाता है। शिकारगाह वाले स्थान मल्लाहों को सरकार ठीके पर दे दिया करती है। धन्द और नदियों में घाड़-याल सुईस, बांच कछुए आदि दूसरे पशु भी रहते हैं जो मछलियां खाते हैं।

कांवी, चित्रा, साउल, गुद्दू, गोज, गुजीरा सिंघड़ा, मालहिर, खागर, खग्गा, ग्राही, धोंगना, डिम्मां, घोंगू, मल्ली या घोआली, सिंगी, दंभा, रोहू, थैला, मोरी, डाही, सरीहां, थैला, मोरी, सोहनिन, पोपड़ी, पराही, छूची, 'पारी, शाहिंगार, (सिंह की भांति), छाल्ली, लाखी गोगूल, तुकार-माछी, गूला. पटोल, खीता, मखनी, गंगन, भिंगा आदि आदि मछलियां मिलती हैं।

वनों और पानी के समीपवर्ती चरागाहों तथा घासों में भांति भांति के सांप तथा कीड़े-मकोड़े और मच्छर होते हैं।

जलवायु तथा वर्षा

थाल या रेतीला मरुस्थल समस्त वर्ष बिल्कुल सूखा रहता है और उस भाग का स्वास्थ विशेष रूप से अच्छा है। जिले के दूसरे भाग चाहे वे नदियों की बढ़ियाल वाले हों या बाढ़ के पानी वाली नहरों के सिंचाई वाले हों मरुप्रदेश का आधा भी सूखे नहीं हैं। सितम्बर मास तक भूमि की सील इतनी बढ़ जाती है कि मलेरिया बुखार पैदा हो जाता है जो भाग जितना अधिक सील भूमि वाला होता है। वहां उतना ही अधिक मलेरिया होता है। मई से सितम्बर मास तक गर्मी बहुत रहती है पर अगस्त मास से मध्य काल से १२ बजे रात से शीतल वायु के झोंके चलने लगते हैं जिससे रात को काफी ठंडक रहा करती है। ग्रीष्म काल में लगभग एक दर्जन ऐसी रातें होती हैं जब कि शीतल वायु की इतनी कमी रहती है और गरमी तथा उमस इतनी अधिक रहती है कि सांस लेना असम्भव हो जाता है। नवम्बर से फरवरी मास तक काफी सरदी पड़ती है। किसी किसी साल इतना अधिक पाला पड़ता है कि रुई, आम और ईख आदि को भीषण हानि होती है। जिले का उत्तरी अर्ध भाग काफी स्वस्थप्रद रहता है। यहाँ के निवासी मलेरिया से बहुत पीड़ित रहते हैं और प्रत्येक व्यक्ति साल में एक या दो बार मलेरिया से बीमार पड़ता है। चर्म तथा चक्षु रोग भी बहुत होते हैं इसका मुख्य कारण गन्दे जल में स्नान करना तथा गन्दी आदि लगे। पुरुषों को (लिंग) सम्बन्धी बीमारियां बहुत अधिक होती हैं और इसकी अधिकता इतनी हो गई है कि साधारण आदरणीय व्यक्ति भी बतलाने में लज्जा नहीं खाता है कि उसको गरमी-सूजाक या नामर्दी की बीमारी है।

गरमी के दिनों में बन्द कमरे का ताप १०० अंश बरामदे का ११५ और घर के बाहर छाया में १२० अंश रहता है।

यह जिले मानसूनी प्रदेश से लगभग अलग है यहां तक मानसून पहुँच ही नहीं पाता है केवल छुट-फुट मानसून पहुँचता है जिससे वर्षा होती है। यह वर्षा भी ठीक समय पर और सब कहीं बराबर नहीं होती है। सनावाँ में औसत से सात इंच, मुजफ्फर गढ़ में लगभग ६ इंच और अलीपुर में लगभग साढ़े छा इंच वर्षा होती है। साधारण तौर पर जिले में ६ इंच वर्षा होती है। पर कभी कभी तो ऐसा हो जाता है कि किसी किसी तहसील में २ इंच ही वर्षा होती है। जुलाई और अगस्त वर्षा के मुख्य महीने हैं।

बैसाख मास की वर्षा से केवल थाल के लिये लाभदायी होती है जिससे घास उग आती है पर बैसाख की वर्षा से उगी हुई घास हानिकर होती है। गेहूँ की फसल को भी इससे हानि पहुँचती है। जेष्ठ तथा असाढ़ मास की वर्षा खरीफ फसल के लिये बहुत आवश्यकीय है। जुलाई और अगस्त मास की वर्षा उसे बढ़ाने के लिये जरूरी है। इसी वर्षा से रबी के लिये खेत जोतने आरम्भ होते हैं। सितम्बर, अक्तूबर और नवम्बर मास की वर्षा जिले के लिये हानिकर सिद्ध होती है। इससे बाजरा की फसल खराब हो जाती है और गेहूँ के बने हुये खेत नष्ट हो जाते हैं। थाल प्रदेश में यह गेहूँ की खेती के लिये लाभ दायक सिद्ध होती है। दिसम्बर मास की वर्षा से गेहूँ के नये पौधों को विशेष हानि हो जाती है। आखिर दिसम्बर, जनवरी और फरवरी मास की वर्षा से गेहूँ को लाभ पहुँचता है। मार्च में वर्षा से गेहूँ को लाभ पहुँचता है पर अप्रैल में जब गेहूँ पकने लगता है तो वर्षा की जरूरत नहीं है और यदि वर्षा होती है तो उस से हानि अधिक हो जाती है।

मई और जून मास में आंधियां तथा तूफान बहुत आते हैं। जिले भर में बांध बनाए गये हैं जिससे नदियों में बाढ़ आने से हानि न पहुँचे।

सिन्ध नदी का धरातल चनाब नदी से कहीं ऊँचा है और भूमि पश्चिम से पूर्व की ओर ढालू है इसलिये सिन्ध नदी की सदैव दशा यही रहती है कि वह जिले में फैल जावे। इसी कारण १८७४ ई० में सनावां का बांध बनवाया गया था। मुजफ्फर गढ़ नगर की रक्षा थाल की पहाड़ियों से हो जाती है फिर भी चनाब नदी की बाढ़ से इसे हानि होती रही है। बाढ़ के समय में लोगों को हट कर ऊपर में शरण लेनी पड़ती है क्योंकि नगर ऊँचे स्थान पर बसा है। १८९३ ई० की चनाब की भीषण बाढ़ प्रसिद्ध है उससे बहुत हानि पहुँची थी।

इतिहास

प्राचीन काल से ही यह जिला सिन्ध राज्य में सम्मिलित था। ब्राह्मण तथा राय हिन्दू शासक जाट जाति के शासक थे। जाट राजपूत हैं पर कुछ कारणों से वे उनसे अलग माने जाते हैं। जिले के दो तिहाई लोग जाट हैं जो राजपूतों की औलाद हैं शेष लोग बाद के आए हुये हैं।

७११ ई० में अरब लोग सिन्ध में आए और सिन्ध तथा मुलतान पर उन्होंने अपना शासन जमाया। वे ७२० ई० तक राज्य करते रहे। सुमर राजपूतों ने अरबों को मार भगाया था। सुमर वंश के लोग अब भी जिले के निवासी हैं। सुमरवंश का राज्य १३५१ ई० तक चलता रहा। १३५१ ई० में सुम्मा राजपूतों ने सुमार वंश पर विजय प्राप्त की थी। इस वंश के लोग अलीपुर तहसील के उन्नार लोग हैं। सुम्मा राजपूत जाम की उपाधि धारण करते थे। सिन्ध उत्पत्ति वाले मुसलमान अब भी जाम की उपाधि धारण करते हैं। जब सिन्ध और मुलतान पर राजपूतों का शासन था तभी भारत से और दूसरे राजपूत इस ओर आए उसी का परिणाम है कि आज इस जिले में सिआल, गुराह, भट्टी और छात्रा जातियां हैं।

१४४५ ई० से १५२६ ई० तक लंघा वंश ने मुलतान पर शासन किया लंघा शासन के समय में ही अलीपुर तहसील में सितपुर का स्वतंत्र राज्य नाहर राजपूतों ने स्थापित किया था। इसी काल में सर्व प्रथम बलोची सुलेमान से आए और सिन्ध नदी के बायें तट पर बसे।

सितपुर के स्वतंत्र राज्य के स्थापना काल से ही इस जिले का इतिहास आरम्भ होता है। उसके पश्चात् जिले में चार राज्य थे। दक्षिण की ओर सीतपुर था जहां पहर नहर उसके पश्चात् सितपुर का मखदूम और फिर भावलपुर के नवाब शासक रहे। डेरागाजी खाँ के सामने जिले का पश्चिमी केन्द्रीय भाग डेरा गाजी खाँ के शासकों के आधीन था। यहाँ मिरानी बलोच, गूजर, कलहोर, काबुल दुर्रानी शाह के गवर्नर और भावलपुर के नवाब शासक रहे। मुलतान के सामने चनाब के दाहिने तट पर जिले का पूर्वी-मध्यवर्ती तथा उत्तरी भाग का शासन मुलतान के गवरनरों के हाथ था। जिले का उत्तरी भाग जिसमें थाल भी सम्मिलित है कुछ समय तो अराजकता के शासन में रहा उसके पश्चात् मंकेरा के गवर्नरों के अधिकार में हो गया जो थाल के नवाबों के नाम से प्रसिद्ध हैं।

१४५१ ई० में जब मुलतान का गवर्नर बहलोल खाँ लोदी दिल्ली का राजा बना तो उसने सिन्ध और सुलेमान के मध्य का भाग अपने नातेदार इसलाम खां लोदी को देदिया इसमें अलीपुर तहसील का दक्षिणी भाग, डेरागाजीखां का दक्षिणी भाग और सिन्ध का उत्तरी भाग सम्मिलित था। इसलाम खां और उसके वंशजों ने नाहर की उपाधि धारण की थी। इसलाम खां के पश्चात् उसके पौत्र कासिम खां, इसलाम खां और ताहिर खाँ ने आपस में झगड़ा कर के राज्य का बंटवारा कर लिया था। अंतम नाहर बखश खां था जो अँग्रेजों के समय में अलीपुर तहसील में चपरासियों का जमादार था और अपने वंशजों के टाम्बों की देख-रेख के लिये उसे कुछ अलाउंस अँग्रेजों की ओर से मिलता था। अलीखां ने अलीपुर की नींव डाली थी। इनके नाहरों की और कोई निशानी शेष नहीं रह गई है।

पन्द्रहवीं सदी के अंत में बलोची लोग पहाड़ियों से बाहर निकलने ... थे और सिन्ध नदी

के तट पर सितपुर से लेह तक उन्होंने अपना अधिकार जमा लिया था। १४८४ ई० में हाजीखां नामक मिर्रानी बलोच ने डेरागाजी खाँ की नींव डाली थी जिसके वंशज हाजी खां तथा गाज़ी खां कहलाए। इन सरदारों ने डेरागाजी खाँ के दक्षिणी प्रदेश से नाहर लोगों को मार भगाया और सितपुर के नाहरों को बहुत सताया। नाहर लोगों के साथ धोका तथा दगाबाजी से काम लिया गया। सितपुर का शेख राजू मखदूम जो नाहर का मंत्री था उसने अपने लिये राज्य पर अधिकार करना आरम्भ कर दिया था। पहले उसने नाहरों से शासन छीना उसके पश्चात् भावलपुर के नवाब ने उससे छीन लिया। नाहर शासकों के समय के कोई भी चिन्ह वर्तमान नहीं हैं। नाहर की पदवी उन्हें अपनी वीरता तथा उदारता के कारण मिली थी। कहते हैं कि एक रात को सितपुर के चारों ओर सियार चिल्ला रहे थे नाहर शासक ने पूछा कि क्यों चिल्ला रहे हैं। वज़ीर ने कहा सरदी के कारण सभी चिल्ला रहे हैं। शासक ने सियारों को वस्त्र बनवाने की आज्ञा दे दी। दूसरी रात ज़ब वे फिर चिल्लाये तो फिर नाहर शासक ने वजीर से कारण पूछा तो वजीर ने कहा आप की उदारता से संतुष्ट होकर वह ईश्वर से आपके लिये प्रार्थना कर रहे हैं। सितपुर के मखदूम शासकों ने नहरें खुदवाई थीं और खेती को उन्नति प्रदान की थी।

अठारहवीं सदी में भावलपुर के नवाब ने देखा कि सितपुर के [illegible] की व्यवस्था ठीक नहीं है इसलिये उन्हों[illegible] पर अधिकार करना आरम्भ कर दिया और लगभग १०० वर्ष तक राज्य किया।

भावलपुर राज्य की नींव सिन्ध के शिकारपुर नामक स्थान के निवासी मुल्लन मुबारक खां के पुत्र सादिक मुहम्मद खां ने डाली थी। कुछ कारणों से नूर मुहम्मद कलहोर (सिन्ध गवर्नर) की शत्रुता के कारण उसे भागना पड़ा। वह १७२७ ई० में शिकारपुर छोड़ कर भागा और इस ज़िले से होकर गुज़रा। सिन्धी सेना उसका पीछा करती रही। एक छोटी लड़ाई हुई जिसमें सिंधी सेना की पराजय हुई तब सादिक मुहम्मद खां ने उच के मखदूम के यहां शरण लेली। मखदूम ने उसे मुलतान के शासक हयात उल्ला खाँ के यहाँ भेज दिया। उसने जाजिर में सतलज के दक्षिण चौधरी का जिला उसे दे दिया। सादिक ने खेती को प्रोत्साहन दिया और डकैतों को दबाया। उस के पश्चात् उसे फरीद नगर तथा ज़िला मिल गया क्योंकि उसने वहां के फरीद नामक डाकू को हराया और मार डाला था। १७३९ ई० में सादिक मोहम्मद खां को नादिर शाह ने नवाब की उपाधि प्रदान की। धीरे धीरे उसने अपना राज्य बढ़ा लिया। उसके राज्य के उत्तर की ओर सतलज, पूर्व में बीकानेर दक्षिण में सिन्ध और पश्चिम में सिन्ध नदी थी। सादिक की मृत्यु के पश्चात् उसका पुत्र भावल खां शासक हुआ। उसने भावलपुर नगर की स्थापना की और भावल दीर्घ के नाम से प्रसिद्ध है। उसके पश्चात् मुबारक खां नवाब हुआ। १७५१ ई० में मुबारक ने इस जिले के मदवाला के समीपवर्ती प्रदेश पर अधिकार जमा लिया और उसी साल बेट डोमा पर भी अधिकार कर लिया। मदवाला को उसने नाहरों से और बेट डोमा को मखदूमों से छीना था। उसके पश्चात् भावल खां द्वितीय नवाब हुआ था। १७८१ ई० में सितपुर के मखदूम के जतोई परगने पर उसने हाथ फेर दिया। १८९० ई० में सिन्ध नदी ने अपना मार्ग बदला। पहले सिन्ध नदी उच के समीप चनाव से मिलती थी। सिन्ध नदी वर्तमान पथ पर उसी साल आई थी। इस प्रकार जिले का दक्षिणी भाग भावलपुर के नवाब के लिये खाली हो गया और मार्ग में बाधा न रह गई। नवाब ने शीघ्र ही मौका को हाथ में लिया और शीघ्र ही अलीपुर शाह, सुल्तान, सितपुर और खैरपुर इलाकों पर अधिकार जमा लिया। वह मुज़फ़र गढ़ तहसील के दक्षिणी तथा पश्चिमी समस्त प्रदेश पर अधिकार करने के लिये बढ़ा जिसका वर्णन आगे आयेगा।

यह पहले ही बताया जा चुका है कि पन्द्रहवीं सदी में बलोच लोगों ने सिन्ध के बाएं तट पर अधिकार कर लिया था। १४८४ ई० में हाजी खां ने डेरा गाजी खाँ की स्थापना की थी। १७६३ ई० तक उसके लड़के हाजी खाँ और गाजी खाँ शासक

रहे। यह अच्छे शासक थे। उन्होंने कृषि को उन्नति दी थी और नहरें बनवाई थीं। यूसुफ का लड़का महमूद गूजर था वह अंतिम गाजी खां का वजीर बना। उसने सरकार की रक्षा के लिये सिन्ध शासक गुलाम शाह कलहोरा को बुलाया जिसने डेरा गाजी खाँ पर अधिकार कर लिये और गाजी खां को गिरफ्तार कर के सिन्ध ले गया जहां जाकर वह मर गया। गुलाम शाह ने महमूद गूजर को डेरा गाजी खां का गवर्नर बना कर छोड़ दिया। खुरासान के बादशाह ने उसे मान लिया और नवाब का ओहदा दिया तथा जान नासार खाँ की पदवी दी। उसने तीस वर्ष तक शासन किया और उसके पश्चात् उसका भतीजा बरखुरदार शासक बना। महमूद गूजर बहुत प्रसिद्ध था उसने बहुत सी भूमि खरीदी थी जो आज भी इस जिले में सम्मिलित है। उसने महमूद कोट का किला बनवाया था। इस काल के शियाह लोग इसी काल से यहां के निवासी बने। गूजरों के पश्चात् खुरासान से बहुत से गवर्नर यहाँ भेजे गये। समस्त प्रदेश में अराजकता फैल गई जिससे १७९१ ई० में बहलोल खाँ द्वितीय के आक्रमण के लिये मार्ग खुल गया। यहीं पर डेरा गाजी खां को हम छोड़ कर जिले के दूसरे भाग का इतिहास बतलाते हैं।

१५२६ ई० में लंगोह शासक खदेड़ कर बाहर कर दिये गये थे। इन्हें अफगानों ने निकाला था जो बाबर के नाम से शासन करते थे। अकबर काल में मुल्तान का सूबा दिल्ली साम्राज्य में मिला लिया गया था। आईन अकबरी में लिखा है कि रंगपुर और सीतपुर दो सब डवीजन मुल्तान में सम्मिलित थे। यद्यपि यह जिला कुछ समय तक दिल्ली में और कुछ समय तक खुरासान में शामिल था फिर भी इन दोनों राजधानियों से और इससे कोई गहरा सम्बन्ध नहीं था। यहाँ के स्थानीय शासक ही अपना काम करते रहे। वे अपने राज्य की उन्नति करते रहे केवल कुछ ही शासकों ने उन्नति करने के लिये राजधानियों से सहायता

शुजा शाह आदि काबुल के शासक थे। इस वंश का हुसेन खां नामक व्यक्ति सर्व प्रथम भारत में आया। औरंगजेब के समय में उसे रंगपुर की जागीर मिली थी। जाहिदखां प्रथम व्यक्ति है जो मुल्तान का नवाब बना था। यह बात १७३८ ई० की है। जाहिद खां और शुजा खाँ के मध्य कालीन समय में वहां अराजकता फैली रही। १७३७ ई० में शुजा खां मुल्तान का शासक बन गया। उसने खानगढ़ के सामने मुल्तान जिले में शुजाआबाद नगर की स्थापना की थी। उसके समय में भंगी सिक्खों ने उस प्रदेश पर आक्रमण कर के मुल्तान पर अधिकार जमा लिया था और राजा को शुजाआ-बाद खदेड़ दिया था। शुजा खां के पश्चात् उसका लड़का मुजफ्फर खां नवाब बना। १७७९ ई० में उसने मुल्तान पर अधिकार प्राप्त किया और वह काबुल के बादशाह तैमूरशाह द्वारा नवाब बनाया गया। १८१८ ई० में सिक्खों ने फिर आक्रमण किया और मुजफ्फर तथा उसके लड़कों को मार डाला। रंगपुर मुरादाबाद, मुजफ्फर गढ़, खानगढ़ और गजनफर गढ़ के तालुके मुजफ्फर खाँ के राज्य में सम्मिलित थे। मुजफ्फर खां ने नहरें खुदवाई और कृषि को उन्नति दी थी। १७९४ ई० में उसने मुजफ्फर गढ़ के किले और नगर की स्थापना की थी। उसकी बहिन खान बीबी ने खानगढ़ का नगर और किला बनवाया था। उसके भाई गजन फर खां ने गजनफर गढ़ के किले और नगर की स्थापना की थी।

वंश

प्रथम सिरानी बलोचियों ने इसलमानानवां तहसील के अधिकांश भाग पर अधिकार जमाया था। गाजी खां के लड़के अहमद खां ने कोट अद्दू की स्थापना की थी। गाजी खां के पश्चात् जैसा कि पहले वर्णन आ चुका है महमूद गूजर शासक बना और अपना शासन जमाने के लिये उसने महमूद कोट बनवाया। उसके पश्चात् जसकानी बलोच के जिले के उत्तरी भाग पर शासन किया उसकेपश्चात सिन्ध के कलहोर शासक रहे। उनका सरदार

का नवाब मुजफ्फर खां भेजा गया था। जब वह चला गया था तो उसके स्थान पर मोहम्मद खां बहादुर खां मुल्तान में था। उसके लौटने पर मुहम्मद मंकेरा और थाल का नवाब बना दिया गया। उसे अपनी शक्ति जमाने के लिये लेह स्थान पर मुहम्मद नबी से युद्ध करना पड़ा था। मुहम्मद ने नहर बनवाई थी। वह १८१५ ई० में मरा था। उसकी पुत्री की शादी हफीज अहमद खां से हुई थी। उसका लड़का शेर मुहम्मद उसके पश्चात् नवाब बना। १८२० ई० में रणजीत सिंह ने मंकेरा पर अधिकार कर लिया और नवाब को डेरा इसमाइल खाँ खदेड़ दिया जहाँ अब भी उसके वंशज नवाब कहे जाते हैं। थाल नवाबों के समय में इस प्रदेश का नाम कच्छीशुमाली था। इस प्रदेश के सामने कच्छी जुनूबी प्रदेश था जहां पर बहलोल खां शासक था। कच्छी शब्द का अर्थ कछारी से है जिससे थाल का मतलब समझा जाता है। किसी समय में सिन्ध भी थाल प्रदेश में बहा करती थी।

इस प्रकार इस जिले की चारों सरकारों का वर्णन हम उस समय तक कर चुके जब कि वे अवनति कर रही थीं और मिलकर एक के आधीन होने की ओर अग्रसर थीं। एक केन्द्र के अधिकार में आने में इन्हें ३० वर्ष का समय लगा था।

पीछे वर्णन हो चुका है कि सिन्ध नदी के मार्ग बदलने के कारण बहावल खां द्वितीय के लिये इस जिले की ओर बढ़ने का मार्ग खुल गया था। इसलिये उसने अलीपुर तहसील के ताल्लुकों पर अधिकार जमा लिया था। डेरा गाजी खां में अराजकता होने के पश्चात् महमूद गूजर का शासन स्थापित हुआ था। १७९० से १८०० ई० तक में बहावल खां द्वितीय ने अरैन, किम्भार, खोर, महरा सेरी और तुरंद के हलकों पर उसने अधिकार जमा लिया था। अब ये ताल्लुके मुजफ्फर गढ़ तहसील का दक्षिणी-पश्चिमी भाग बनाते हैं। यह प्रदेश अलीपुर को मिला कर उस समय कच्छी जनूबी के नाम से प्रसिद्ध था। कच्छी शुमाली में थाल की नवाबी थी। उसने और उसके पश्चात् सादिक खां द्वितीय तथा बहावल खाँ तृतीय ने प्रदेश में सुरक्षित सरकारों की स्थापना की, कृषि की उन्नति की और नहरें खुदाईं। १८५२ ई० में बहावल तृतीय की मृत्यु हुई। १८१८ ई० में मुल्तान पर सिक्खों का अधिकार हुआ। तो वे ताल्लुके जिन पर मुजफ्फर खां का शासन था अर्थात् रंगपुर, मुरादाबाद, मुजफ्फर गढ़, खांगढ़ और गजनफरगढ़ सिक्ख गवर्नर के शासन में चले गये। १८१९ ई० में सिक्खों ने डेरा गाजी खाँ पर अधिकार जमा लिया पर बहावल खां अपने प्रदेश का शासक बना रहा।

१८२० ई० में सिक्खों ने मंकेरा पर अधिकार जमा लिया जिससे वह इस जिले के उत्तरी भाग के भी शासक बन गये। बहावल खां ने सिक्खों की सत्ता स्वीकार कर ली इसलिये रणजीत सिंह के शासन में समस्त जिले संयुक्त हो गये। जिले के उत्तरी भाग का शासन मंकेरा से और मुजफ्फरखां के ताल्लुकों का शासन मुल्तान से चलता रहा। सिक्खों के भय से मुल्तानी पठान भाग गये और अँग्रेजों के (१८४७ ई०) आने के पूर्व नहीं लौटे। १८२२ ई० में सावन मल अपने मालिक मुल्तान के गवर्नर भया बदन हजारी से लड़ गया इसलिये रणजीत सिंह ने उसे मुजफ्फरगढ़, मुरादाबाद और गजनफर गढ़ के इलाके खेती करने के लिये दे दिये। महावल खां भी कर न दे सका जिससे उसके गाँव उसे दे दिये गये। उस समय जनरल मनतूरा बहावल पुरियों को जिला से निकाल बाहर करने के लिये भेजा गया था। उसने उन्हें चनाव के पार मार भगाया तभी से चनाव इस जिले तथा बहावलपुर राज्य के मध्य सीमा बन गई। किस प्रकार जिले का उत्तरी प्रदेश मुल्तान में मिल गया यह बात इतिहास में साफ साफ नहीं मिलती है। पर १८२९ ई० में मुल्तान के शासक सावन मल के अधिकार में यह समस्त जिला आगया था।

सावन मल की सरकार इस जिले की सरकारों में सब से उत्तम थी। उसके समय में जिला अरैन, साम्ती, मुरादाबाद, रंगपुर, खानगढ़, किम्भार, सेरी तुरन्द, महरा खोरान, मुजफ्फर गढ़, अलीपुर, शहर मुल्तान, जतोई, धलवां सितपुर, थाक, अहमदकोट, नवाबाद, सनांवां, कोट अद्दू डेरादीन पनाह, मुक्खी और मुंडा ताहुकों में बंटा था।

प्रत्येक ताल्लुका का शासन एक कारदार के हाथ में था जिसकी सहायता के लिये एक मुंशी और कुछ सैनिक रहते थे। कारदार को आज्ञा थी कि :

१—प्रजा के साथ अच्छा व्यवहार करो। कृषि का बढ़ाने का प्रयत्न करो। प्रत्येक वर्ष कृषि तथा कर में वृद्धि करो।

२—तालुका की रक्षा मजबूती से करो। बदमाशी और चोरी मत होने दो। यदि चोरी होती है तो सब से पहले जिसके यहां चोरी हुई है उसको चुकता किया जाय। चोर का पता लगाओ। पकड़ कर उसे कैद करो और दो मास के पश्चात् चोरों की सूची मेरे पास भेजो ताकि उसे सजा या जुर्माने की आज्ञा दी जाय।

मालगुजारी ठीक समय पर भेजो। खरीफ फसल में पहली किस्त अगहन की अमावस्या तक भेज दो। रबी में पहली किस्त जेष्ठ की, दूसरी असाढ़ की और तीसरी सावन की अमावस्या तक पहुँच जानी चाहिये।

असाढ़ की परीवा को चालू भाव की सूची पंचों तथा जमींदारों के हस्ताक्षर सहित आ जानी चाहिये।

प्रत्येक वर्ष भादों मास में हिसाब साफ करने के लिये दफ्तर में आओ। नहरों को साफ करो और समय पर खुदवा दो जिससे सींचने वालों को परखना न पड़े और विलम्ब न हो। जब तुम फसल बांटने जाओ या लगान निश्चित करने जाओ तो मुहर्रिर, दुम्बीर और पध्व के कागजातों का मीजान ठीक कर लो। किसी प्रकार की गल्ती न होनी चाहिये।

इन आईनों (कानूनों) के अनुसार। इस में किसी प्रकार का अन्तर न होना चाहिये। अपने वेतन पर अपना निर्वाह करो किसी दूसरे पर निभर मत करो। किसी से सहायता मत मांगो। अपने मुहर्रिर को भी ऐसा ही करने के लिये कहो। यदि तुम किसी से कुछ सहायता लेते हो, रिशवत लेते हो तो फिर इसके लिये तुम खुद जिम्मेदार हो।

सैनिकों को अपने हाथ से वेतन निर्धारित वेतन के हिसाब से चुकता करो और जो कुछ उनसे मिलना है वह उनके वेतन से काट लो।

कारदारों को १५ से ६० रुपये तक वेतन मिलता था। मुहर्रिर को आठ रुपये से २० रुपये तक दिया जाता था। सवार सैनिक जो युद्ध क्षेत्र के लिये होते थे उन्हें १५ रुपये से २० रुपये तक और मालगुजारी वाले सैनिकों को १२ रुपये प्रति मास मिलता था। लड़ाई वाले पैदल सैनिक ६ या सात रुपये और मालगुजारी वाले सैनिक तीन से पांच रुपये प्रति मास पाते थे।

इसके अतिरिक्त कारदारों को नजराना लेने की आज्ञा थी। जब वह सरकारी काम से जाते थे तो तीन सेर आटा, १ पाव घी, १ पाव दाल, तीन सेर चना घोड़े के लिये और एक आना मसाला इत्यादि के लिये मिलता था। नजराना की रकम सरकार में दाखिल होती थी।

२९ सितम्बर १८४४ ई० को सावंतमल की मृत्यु हो गई उसके पश्चात् उसका पुत्र मूलराज दीवान बना। मूलराज के समय में ही अँग्रेजों ने जिले पर अपना अधिकार जमा लिया था। १८४९ ई० से यह जिला अँग्रेजी अधिकार में आया था।

जब १८५७ ई० में भारत में स्वतंत्रता का प्रथम संग्राम आरम्भ हुआ तो अँग्रेजों ने अपनी सुरक्षा के लिये काफी प्रबन्ध कर लिया जिससे झेलम की ओर से स्वतंत्रता प्रेमी सेना जिले में प्रवेश न कर सके। हेंडर्सन उस समय इस जिले का डिप्टी कमिश्नर था। नदियों के घाटों पर भी रखवाली का प्रबन्ध किया गया था। जिससे नदी पार कर के कोई आ न सके। उस समय जिले में कोई विशेष घटना नहीं घटी।

१८५९ ई० कुछ परिवर्तन न हुये। उसके पश्चात् १८६१ ई० में यह जिला अपनी वर्तमान दशा में आया। उस समय रंगपुर तहसील तोड़ दी गई। किझार तहसील भी तोड़ दी गई। २९ मई १९०३ ई० को अंतिम रूप से जिले की सीमा निर्धारित की गई।

खैरपुर चार नगर हैं जहाँ म्युनिसपैलटियां हैं। मुजफ्फर गढ़ की जनसंख्या सब से अधिक है। मुजफ्फरगढ़ तहसील की जनसंख्या लगभग दो लाख, अलीपुर की डेढ़ लाख और सिनांवां की लगभग सवा लाख है। मुजफ्फर गढ़ तहसील में १९९, अलीपुर में १५० और सिनांवां तहसील में ८० व्यक्ति प्रति वर्ग मील में रहते हैं।

औसत से जिले की प्रति वर्ग मील की जन संख्या १२५ और देहात की १२० है। कृषक प्रदेश में प्रतिवर्ग मील में लगभग ५६० व्यक्ति रहते हैं। प्रत्येक १०० वर्ग मील में लगभग २० गाँव हैं और गाँवों के मध्य लगभग दो मील का अन्तर है।

मुजफ्फरगढ़ तहसील सब में घनी और थाल प्रदेश सब से कम बसा क्षेत्र है। मध्यवर्ती नहरी प्रदेश की आबादी बहुत घनी है। जिले में कोई भी नगर १५ या बीस हजार की आबादी का नहीं है। जिले में लगभग तीस नगर ऐसे हैं जिनकी संख्या दो और पांच हजार के मध्य है। नगरों में आधी से अधिक संख्या हिन्दू निवासियों की थी। हिन्दू निवासी प्रायः व्यापारी हैं और मुसलमान नागरिक कारीगर हैं।

इस जिले में ८६ प्रतिशत मुसलमान और १४ प्रति शत हिन्दू थे। जाति के हिसाब से सब से तगड़ी जाति जाटों की है। जिले में ४१ प्रतिशत जाट १९ प्रतिशत बलोच, २ प्रतिशत पठान, एक प्रतिशत सैयद, एक प्रतिशत कुरैशी और १४ प्रतिशत हिन्दू थे। सब से मजबूत जाट जाति है उसके पश्चात् बलोचियों का नम्बर है। समस्त क्षेत्रफल के साढ़े अड़तीस प्रतिशत भाग में जाट, १७·४ में बलोच १·३ में पठान, ५·७ में सयद १५ प्रतिशत में हिन्दू, ४·९ में दूसरे लोग और १०·७ प्रतिशत भाग में सरकारी लोग हैं। हिन्दुओं में अरोड़ा, खत्री, ब्राह्मण और लबान लोग हैं।

जाट लोग जो सब से अधिक भूमि पति हैं समस्त जिले में बिखरे हुये हैं। राजपूत लोग मुजफ्फर गढ़ तहसील की सब तहसील रगपुर में इकट्ठे कुछ बस्तियों में बसे हुये हैं। अलीपुर तहसील में बलोच लोग १५७ गाँवों में से २१ गांवों गाँवों में बसे हैं जिनके वे मालिक हैं इसके अतिरिक्त और दूसरी तहसीलों में बसे हैं। इन में भी उनके अपने गांव हैं। अलीपुर तहसील में दक्षिण की ओर सैयदों के कुछ गांव हैं। मुजफ्फर गढ़ के चारों ओर पठानों की बस्ती है। सिनांवां और अलीपुर तहसीलों में भी उनके एक एक गाँव हैं। ये सभी मुसलमान कृषक हैं। जाट, राजपूत, बलोच पठान, सैयद, कुरेशी आदि जातियाँ भी कृषक हैं। जिले में कोई भी जाट या राजपूत हिन्दू नहीं है। पनवार, परिहार, छाजा, डाहा, गुराहा, भट्टी, मरमान, भट्ट, साहू, सिअल, जंगल आदि जाट जातियां हिन्दू थीं जो अब मुसलमान हैं। कुछ मुसलमान राय, सहगल और खेरा की पदवियां धारण करते हैं। जाट जाति के लोग प्रायः सभी मुसलमान हैं। इनमें बहुत से वंश अथवा वर्ण-पाये जाते हैं। सनांवां तहसील में ही १६५ जाट वंश हैं

बलोच लोग जाटों से मिलते जुलते हैं। उनके शादी व्याह एक साथ होता है और वह प्राय मिल जुल से गये हैं। विभिन्न बलोच जातियों में बलोच नाम के अतिरिक्त और कोई दूसरा सम्बन्ध नहीं है।

बलोच लोग प्रायः जंगली से हैं। सुरहानी, गाजलानी गोपांग और गोपांग बलोच वर्ण वालों का चाल-चलन बहुत खराब है। उन्हीं के भांति उनके पड़ोसी जाट भी हैं। बलोच भाषा कोई समझ नहीं पाता है। यूं तो समस्त जिले में बलोच बिखरे हुये हैं पर सिन्ध के तटीय तथा जिले के दक्षिणी भाग में उनकी अधिकता है। चांडिया गुरमानी, गोपांग, जाटोई, लगारी, मस्टोई और ड्रिशाक्स प्रधान बलोच जातियां हैं।

बुखारी, गीलानी, हुसैनी, मौदूदी और शम्सी सय्यद जातियाँ हैं। पठान लोग इस जिले में उन्नीसवीं सदी के अंत में आये। अलेजई, बाबर, तारीन, बादोजई, बमोजई और यूसुफजई पठान जातियां हैं। बाबर जाति के पास अधिक भूमि है। तारीन लोग सनानवां तहसील में रहते हैं।

कुरैशी मुसलमान यद्यपि संख्या में बहुत कम हैं फिर भी वह अपनी पवित्रता तथा धनी होने के कारण प्रसिद्ध हैं। करीमदाद कुरैशी और गुजरात के कुरैशी लोगों का कहना है कि उन्हें भूमि

दिल्ली सम्राटों से मिली थी। उनके पूर्वज डेरागाजी खां, बहावलपुर, और सावनमल के यहां सलाह कारों का कार्य करते थे।

झवेल मुसलमान इस जिले में सिंध से आये थे। पता नहीं यह लोग कब आये। पर ये लोग शुद्ध सिन्धी भाषा का प्रयोग करते है। वे जाम की उपाधि भी धारण करते हैं और या बन्धन एकत्रित करते हैं। वे अच्छे मुसलमान माने जाते हैं। किहाल और मोर लोग एक ही जाति के माने जाते हैं। उत्तर की ओर ये मोर कहलाते हैं और कछुये और घड़ियाल खाते हैं। दक्षिण की ओर ये लोग इन्हें नहीं खाते हैं। किहाल और मोर मछली का शिकार करके अपना निर्वाह करते हैं।

कुटाना चुहरा जो मुसलमान हो गये हैं। ये लोग चटाई, घास, मूंज काटते हैं और उन्हीं के सामान तयार करके अपना निर्वाह करते हैं। यह लोग चौकीदारी तथा नौकरी पेशों के दूसरे छोटे कार्य किया करते हैं।

यहाँ हिंदू लोगों में किरार जाति सब से प्रसिद्ध है। उनकी जाति अरोरा है। अरोरा अपने को क्षत्री कहते हैं उनका कहना है कि जब परशुराम भगवान ने क्षत्री वंश पर अपना प्रहार आरम्भ किया था तो अपने बचाव के लिये उनके पूर्वज किरार लोग किरात प्रस्थ भाग गये थे। किरार जाति तीन भागों में विभक्त है। उत्तराद्ध, दक्षिण और दह। उत्तराद्ध और दक्षिण नाम उत्तर और दक्षिण की ओर भागने के कारण हुआ। दह कैसे नाम पड़ा पता नहीं है। इनके भी कई एक उपविभाजन हैं जिनमें माटे और गोरावारे लगभग तीनों में पाए जाते हैं। अलीपुर तहसील में दक्षिण और दह जातियों में मलोत्रा वर्ण वाले पाए जाते हैं। उत्तरार्ध स्वदेव वर्ण के लोग पाए जाते हैं। उपजातियों का एक दूसरे के साथ ब्याह आदि होता है पर मुख्य जातियां एक दूसरे के साथ ब्याह आदि नहीं करती हैं। सभी किरार महाजनी और व्यापार का कार्य करते हैं। प्रत्येक भांति का व्यापार यह लोग करते हैं। ये अब काफी भूमि पति भी हो गये हैं। यह लोग बही खाते में किरानी भाषा का प्रयोग करते हैं। यह लोग बड़े डरपोक होते हैं।

एक मसल है कि चार चोर थे और चौरासी किरार थे। चोरों ने आक्रमण किया। किरार भाग निकले। जान बचाने के पश्चात् वे कहने लगे। चारों की परवाह मत करो जो कुछ हमने किया अच्छा किया।

सिक्खों के समय में लबान जाति के लोग इस जिले में आकर बस गये और सिक्ख धर्म स्वीकार कर लिया। उनका मुख्य कार्य रस्सी बनाना है। अब उनमें से कुछ धनी हो गये हैं और महाजनी तथा व्यापार करने लगे हैं। खेती का काम भी करने लग गये हैं।

सारिस्वत या पुशकरणा ब्राह्मण जिले में है। यह लोग प्राय. अशिक्षित हैं और अपने धर्म की बातें भी नही जानते हैं। ये ठीक से अपना कर्मकांड भी नहीं करवा सकते हैं।

जिला प्राय: मुसलमानी है। मुसलमानों की संख्या ८६ प्रतिशत है। १४ प्रतिशत में हिन्दू और सिक्ख हैं इस पुस्तक के लिखे जाने पर पञ्जाब का खून हो रहा है और हिन्दुओं का कत्लआम हो रहा है। भारतीययूनियन सरकार पञ्जाब केसभी हिन्दुओं को हटाने का प्रयत्न कर रही है पता नहीं कि इस जिले में कोई हिन्दू शेष बचा है या सभी का अंत हो गया है। पाकिस्तान और हिंदुस्तान भारत के दो खँड हो जाने के कारण और मुसलिम लीग की दो राष्ट्रों वाली नीति तथा हिन्दुओं के प्रति विष वमन के कारण यह बात उत्पन्न हुई है। पञ्जाब के मुसलमान तुल गये हैं कि वे किसी भी हिन्दू या सिक्ख को जीवित नहीं छोड़ेंगे उनकी पाकिस्तान सरकार उनकी सहायक है।

धार्मिक स्थान

यूँ तो इस जिले में बहुत सी समाधियां तथा मकबरे हैं पर इस पुस्तक में केवल प्रधान समाधियों का वर्णन है। इस जिले के उत्तरी-पूर्वी सीमापर दीन पनाह नामक स्थान तथा वहीं पर इसी नाम की समाधि है। तीन सौ वर्ष हुये दीन पनाह नामक बुखारी सयद यहाँ आकर टिके थे। वह एक जाट स्त्री मुसम्मात सुहागिन के यहां टिके थे। उसके पति का नाम अक्कू था। माई सुहागिन काबा

को बहुत मानती थी और चाहती थी कि उसके एक लाल (लड़का) हो जाय।

कहते हैं कि माई सुहागिन काबा गई और वहां उसने एक लाल के लिये प्रार्थना की। उसी समय वहां दीन पनाह नामक साधु आये और वह स्त्री को दिये गये। साधु ने कहा जाओ घर पर तुम्हें दीन पनाह मिलेगा। जब वह घर आई तो एक दिन सिन्ध नदी में उसे बहता हुआ बच्चा मिला अपने पति की सलाह से सुहागिन ने उसे अपना दूध पिला कर पालना आरम्भ किया। जब यह लड़का (दीन पनाह) बड़ा हुआ तो उसने सुहागिन की सारी जायदाद दान दे डाली यहां तक कि सुहागिन की पुत्री मुसम्मात रबी की शादी के लिये घर में कुछ शेष न रह गया। शादी के समय दीन पनाह ने अपने को दहेज रूप में दे डाला और यह अपनी बहिन के साथ सांगर में जा कर रहने लगे। बाद में उसे जहर दे कर मार डाला गया। जब उसके दफन करने का समय आया तो सिन्ध के पूर्वी तथा पश्चिमी तट के निवासियों में लाश के लिये झगड़ा हो गया। इस दीनपनाह ने अक्कू के भाइयों को स्वप्न दिखाया कि सिन्ध के दूसरे तट पर मेरा कफन तयार कर दो। वहां भी कफन तयार किया गया और दोनों किनारों के कफनों में एक एक लाश हो गई। तब से दोनों स्थानों में दीन पनाह की समाधि बना दी गई है। वहां असाढ़ और भादों मास में लोग दूर दूर से हिन्दू और मुसलमान सभी दर्शनों के लिये आते है। बच्चों का मुंडन संस्कार वहाँ होता है और जिन, राक्षस आदि से पीड़ित लोग वहां आकर अच्छे होते हैं।

दीन पनाह ने अपने जीवन में ही माई सुहागिन का मकबरा बनवाया था। यह मकबरा जिले के बँगले के समीप है। कहते हैं कि अक्कू को दीनपनाह के ऊपर उस समय संदेह हो गया था जब दीनपनाह ने उसकी समस्त जायदाद लुटा दी थी। इसपर एक दिन दीन पनाह ने एक दरी का एक सिरा उठा कर उसे सोने और चांदी की दो नदियाँ बहती दिखलाई और कहा जितना सोना या चांदी चाहो ले लो। इस पर उसका संदेह जाता रहा। अकबर बादशाह भी सन्यासी का रूप धारण कर के उसके पास दीक्षा लेने और चेला बनने गये थे तो उसने इनकार कर दिया था। एक खास बात यहाँ के मखदूमों (पुजारियों) में है कि तेरा पीढ़ी से प्रत्येक मखदूम के दो लड़के और दो लड़कियां होती है। ज्येष्ठ पुत्र तथा कन्या युवा अवस्था आने पर मर जाते हैं। छोटे पुत्र और कन्या ही रह जाते हैं और उन्हीं की शादी तथा औलादें होती हैं। लड़की का व्याह आपस में हो गया तो हो गया नहीं तो वह आजन्म क्वारी ही रहती है और फिर व्याह नहीं करती है।

मुजफ्फर गढ़ से तीन मील दक्षिण की ओर रायपुर नामक गांव हैं वहां दाऊ जहाँ निआह की समाधि है। इस समाधि को अल्लाह दाद कुरैशी ने स्थापित किया था। वह अरब का रहने वाला था। जब वहां आया तो मखदूम जहांनिया जहां गश्त की मेवा में रामपुर में रुक गया। उसके वंशज मखदूम होते हैं और मेल्टा जाट हैं। नवाब मुजफ्फर खां और दीवान सावाँ मल ने मकबरों में बढ़ती तथा सुधार किया था। अब वहां तक पक्की सड़क बना दी गई है। समाधि में हिन्दू तथा मुसलमान दोनों जाते हैं। प्रत्येक वृहस्पतिवार को और चैत्र तथा सावन मास में विशेष कर मेला लगता है। लोग भेड़ तथा आटा चढ़ाते हैं। स्नान करा कर रोग से छुटकारा किया जाता है। यहाँ काफी भीड़ लगा करती है। कोढ़ से अधिक पीड़ित लोग आरोग्य होने के लिये आया करते हैं।

शहर सुल्तान नगर में आलमपीर की समाधि है। इसकी स्थापना शेख आलम उद्दीन या आलम पीर ने की थी। यह बुखारी सैयद तथा बावलपुर के मखदूमों के वंशज थे। चैत्र मास में यहां मेला लगता है। स्त्रियाँ अधिक आती हैं। मेला विशेष कर बृहस्पतिवार तथा शुक्रवार को लगता हैं। समीपवर्ती स्थानों से लोग बैलगाड़ी, घोड़े तथा ऊँटों पर चढ़ कर आते हैं। कहते हैं कि यहां पर स्त्रियों के ऊपर से जिन उतारा जाता है। जब मेले का समय समीप आ जाता है तो स्त्रियां यहां आने के लिये उतावली हो उठती हैं उनके मर्दों को

मजबूर होकर उन्हें मेले में लाना पड़ता है। शहर सुल्तान की भूमि देखते ही स्त्रियों के ऊपर जिन सवार हो जाता है और वह उन्हें मदहोश कर देता है वे चिल्लाने चीखने तथा हांफने लगती हैं। उन्हें अपने शरीर पर किसी प्रकार का काबू नहीं रह जाता है। वे अभुवाने लगती हैं। खलीफा इन स्त्रियों को चार स्थानों पर बैठाता है और वहीं उनके जिन आते हैं और वे अभुवाने लगती हैं। ऐसे समय उन्हें अपने शरीर की किञ्चित मात्र भी परवाह नहीं रहती है। बदन का वस्त्र इधर उधर हो जाता है बाल बिखर जाते हैं और वह पागल की भांति अभुवाती रहती हैं। खलीफा उन्हें कोड़े लगाता है और मंत्र पढ़कर उन पर पानी डालता है। वे अभुवाते हुये कुछ बड़बड़ाती जाती हैं जो बाजे के कारण साफ साफ किसी दूसरे को सुनाई नहीं पड़ता है पर बाजा जैसे जैसे जोर पड़ता जाता वैसे वैसे ये स्त्रियां भी अपने कर्म में प्रबल होती जाती हैं। जब थक जाती हैं तब काफी मार खाती हैं तो मंत्र और शुद्ध जल के पाने से वे शान्त होती हैं। इस कार्य के लिये खलीफा को फीस देनी पड़ती है।

ईश्वर जाने कैसे उनपर जिन सवार होते हैं और कैसे उतरते हैं पर दर्शक यह तमाशा देख कर चकित हो जाते हैं क्योंकि उच्च श्रेणी की स्त्रियाँ भी बहुधा जिन से पीड़ित हो कर खलीफा के घर आती हैं और ऐसे कर्म वे भी करती हैं। किंतु यह और भी आश्चर्यजनक बात है कि जिन मेले के समय में ही स्त्रियों को अधिक सताता है दूसरे समय में वह शान्त रहता है।

मुजफ्फर गढ़ से ६ मील उत्तर की ओर खान पुर गांव में बग्गा शेर (श्वेत बाघ) की समाधि है। इसके इस नामकरण का कारण यह है कि एक श्वेत शेर ने यहां के साधु की गायों की रक्षा चोरों से की थी।

मुजफर गढ़ से ७ मील दक्षिण की ओर पञ्जगीरैन नामक गाँव में मीरन हयात की स्मृति है। स्मृतिभवन के समीप ऊँट की एक पत्थर की मूर्ति है जिसपर साधु सवार हुआ करते थे। समीप ही ताड़ का एक बगीचा है वहां एक ताड़ का ऐसा वृक्ष है जिसकी पत्तियाँ काले साँप की भांति होती हैं कहते हैं कि यदि इस पेड़ की पत्ती घर में रक्खी जाय तो सांप घर में नहीं आते हैं।

मीरन हयात गयासुल अजीम के भतीजे थे। मेला रमजान मास में लगता है।

हरपालो गाँव में डेढ़ा लाल की स्मृति है। स्मृति का भवन बड़ा सुन्दर है। इस समाधि पर पशुओं की बीमारी के समय पशु लाए जाते हैं और उनको महामारी से मुक्ति मिल जाती है।

जलवाला पीर अमीर में हसन शाह की समाधि है। यहां कुवार मास में मेला लगता है जिसमें १० या १५ हजार की भीड़ होती है।

सनावां तहसील में ताली नूरशाह नामक गांव में शेख पालिया और हाजी इशाक की समाधियां हैं। जुलाई से अगस्त तक यहां मेला लगा करता है। सावन मास में मेला होने के कारण लोगों को दर्शन करते जाते समय सामान अपने पास रखने की आवश्यकता नहीं होती वे नारियल से ही अपना काम चला लेते हैं। यात्रियों को लोग मार्ग में यूहीं नारियल दे दिया करते हैं। मार्गों में सड़कों के किनारे कांटेदार वृक्ष होते हैं जिन पर कपड़े-चिथड़े लगे रहते हैं। यात्री लोग इन्हें टांग देते हैं। पुरुष कपड़े में गांठ लगा देते हैं और अपनी इच्छा की पूर्ति की मनौती कर देते हैं कि इच्छा की पूर्ति पर हम दर्शन करेंगे और दान करेंगे तथा प्रसाद चढ़ाएंगे।

अन्धविश्वास

इस जिले के निवासी बड़े अन्ध विश्वासी हैं। वे जिन, भूत, पिशाच और राक्षस आदि पर बहुत विश्वास करते हैं। नजर पर भी उनका गहरा विश्वास है। उनका कहना है कि सांप का काटा आदमी बच सकता है पर नजर (आंख) जिसको लग गई है वह बच नहीं सकता है।

जिनों को दूर रखने के लिये निवासियों के मध्य विभिन्न प्रकार के उपाय प्रचलित हैं। सैयद कुरैशी, समाधियों के पुजारी आदि जिनों से रक्षा करने के लिये तावीज तथा दूसरे उपाय का प्रयोग करते हैं और अपनी शानदार रोजी चलाते हैं।

रखड़ी, चपड़ी, फूल आदि फूक कर प्रयोग किये जाते हैं।

यहां दूध मथने वाली मथानी को लोग फुंकाते हैं जिसका असर यह होता है कि जिसके पास यह मथानी रहती है उसके दूध मथने वाले बर्तन में दूसरे पड़ोसियों के बर्तनों का मक्खन आजाता है।

एक दूसरा यंत्र विलियान दो फूल होता है जिससे स्त्री को वश में किया जा सकता है। यंत्रों के लिये जो मूल्य चुकता किया जाता है उसे मोख कहते हैं।

कहते हैं कि यदि किसी शत्रु को नव-वधु का चेखून मिल जाय और वह उसे अग्नि में जला दे तो फिर पति और पत्नी में कभी न पटेगी। चेखून दुल्हन के लगाया जाता है जिससे उसकी सुन्दरता बढ़ जाय। शुभ तथा अशुभ साइत का भी विचार बहुत किया जाता है। शकुन और अशकुन का भी विचार बहुत होता है। जिले के लोगों का विचार है कि कोई भी व्यक्ति प्राकृतिक रूप से बदमाश, चोर, डाकू या कातिल नहीं होता है। वह बुरी आत्मा से प्रभावित होकर ही ऐसा करता है और जब उसे उस बुरी आत्मा से छुटकारा मिल जाता है तो वह बुरा कर्म करना छोड़ देता है।

स्वाभाव

इस जिले के निवासी बड़े अतिथ सत्कारी होते हैं। कहावत है कि यदि चूल्हे की आग जलती है तो शत्रु भी द्वार से बिना खाए भूखों वापस नहीं जा सकता है। यहां के निवासी सदैव एक दूसरे की सहायता करने के लिये तत्पर रहा करते हैं। यदि किसी मनुष्य का घर नदी में बहने लग जाता है तो समस्त गाँव के लोग उसका सामान बचाने में लगजाते हैं। यदि किसी का पशु चोरी जाता है तो उसे उसकी तलाश में किसी प्रकार की कठिनाई नही होती है क्योंकि समस्त गाँव के लोग ढूढ़ने में उसकी सहायता के लिये तयार हो जाते हैं।

जिले के लोगों की आत्मा कलुषित है। चोरी करना तो बड़ा सरल समझा जाता है। यदि उसके साथ रहा जाय तो सदैव शंका बनी रहती है कि कहीं धोका न हो जाय। व्यभिचार और दुराचार तो प्राय: प्रचिलित सा है। यहाँ के निवासी हतोत्साही हैं और मिलने पर किसी न किसी कठिनाई का ही सहन करते रहते हैं। उनमें किसी प्रकार की प्रजासम्बन्धी भावना नहीं पाई जाती है। पशु चोरी तो प्राय: प्रचलित विषय है और कहते हैं कि एक रूप से झूठ बोलना भी सत्य है।

जब कभी लोगों को अफसरों के सामने बयान देना होता है तो सभी बयान देने वालों की एक मीटिंग होती है जहाँ तय किया जाता है कि क्या बयान देना चाहिये जो कुछ बयान तय किया जाता है वही बयान दिया जाता है। सभी लोग कसम कुरान की उठा लेते हैं कि उसके अतिरिक्त दूसरा बयान न देंगे और ऐसा ही करते भी हैं।

लम्बा, दुबला, पतले होठवाला, नुकीली नाक वाला गोल चेहरे वाला, काली आंख वाला, लम्बी गर्दन और चमकीली बदन वाला मनुष्य सुंदर माना जाता है।

गाल में छोटे गड्ढे वाली, मंझोली शरीर वाली धनुष के समान भौं वाली सुंदर मानी जाती है। यदि स्त्री की कमर मोटी होती है तो उसे सुन्दर नहीं मानते हैं।

हिंदू नीचे श्रेणी की स्त्रियां गोदना गोदाती हैं। उच्च श्रेणी स्त्रियां और मनुष्य इसे अच्छा नहीं समझते हैं।

दिन-चर्या

अधिकांश जमीदार लोग सुस्ती का जीवन व्यतीत करते हैं। वे सवेरे-संध्या कभी कभी अपने खेतों की सैर कर आते हैं। लगभग सारा दिन बात-चीत करने और गप-शप लगाने में व्यतीत हो जाता है। इससे छुट्टी मिली तो सोने या घरेलू खेल खेलने में व्यतीत होता है। साधारण जमींदार को समस्त दिन कार्य में लगा रहना पड़ता है। उसे खेती के किसी न किसी कार्य में व्यस्त रहना पड़ता है। खेत सींचने के लिये उसे या तो प्रातः काल चार बजे खेत में रुकना पड़ता है। उसे घर से भोजन खेत में ही जाता है वहीं पर वह बहुधा भोजन करता है। किसानों को तो दोपहर को सदैव

खेत में ही भोजन करना पड़ता है। संध्या समय किसान खेत से घास का बोझ लेकर घर आते हैं।

गाँव की स्त्रियाँ पुरुषों की भांति ही समस्त दिन कार्य में व्यस्त रहती हैं। वे सवेरे प्रातःकाल ही उठ जाती हैं। सवेरे गाय दुहने, पानी भरने का काम होता है। घर की सफाई करना, गोबर उठाना आदि आदि। इसके पश्चात् भोजन बनाने का काम होता है। भोजन बन जाने के पश्चात् पति को खेत में भोजन पहुँचाने का काम रहता है। सूत कातना, कपास साफ करने, प्यूनियां बनाना सीना, पिरोना, बच्चों की देख भाल करना, आटा पीसना आदि आदि काम स्त्रियों को करने पड़ते हैं। फसल के समय स्त्रियों को खेत काटने जाना पड़ता है। दूकानदार सवेरे दूकान पर जाता है दिन डूबने के पश्चात् भोजन करने घर आता है या उसे दूकान पर ही भोजन भेज दिया जाता है। दिन रात का विभाजन आठ पहर में है। एक पहर तीन घंटे का माना जाता है।

रोटी, चावल, दाल और लस्सी साधारणभोजन हैं चद्दर, मंझला; तहमत, डुपट्टा, कुर्ता, पायजामा, सूथन चोली आदि साधारण वस्त्र पहिने जाते हैं। शहरी लोग कमीज, कोट, पाइंट और हाफ पाइंट का प्रयोग करते हैं स्त्रियां भी अब दूसरे आधुनिक वस्त्रों का प्रयोग करने लग गई हैं। हिंदू स्त्री सारी और धोती का प्रयोग करते हैं। हिन्दू पुरुष भी धोती पहिनते हैं।

गांवों में तीन प्रकार के घर निवासी बनाते हैं। कोठा—नामक घर मिट्टी तथा ईंटों की दीवार का बनाया जाता है। इसकी छतें चपटी होती हैं सहल—नामकर घर की दीवालें मिट्टी और घास की बनाई जाती हैं और छत घास-फूस के छप्पर की होती है। फरीरा—नामक घर घास-फूस की झोंपड़ा होता है। बाढ़ वाले प्रदेश में फरीरा ही बनाए जाते हैं।

एक या दो तल्ले वाले पक्के घर मारी कहलाते हैं। धनी किसान ही ऐसे घर बनाने के योग्य सिद्ध हो सके हैं। पास से मिला हुआ एक बड़ा आंगन तथा चौपाल होती है जहाँ मेहमान ठहराये जाते हैं या व्यापार करने का काम होता है। किसानों तथा जमींदारों के घरों से मिला हुआ या समीप ही खेती के पशुओं के रहने का स्थान रहता है घरों के समीप ही कुवाँ रहता जिससे पानी भरा जाता है।

आमोद-प्रमोद

कुवें पर चरखी में नाध कर बैलों की दौड़ की जाती है। प्रत्येक जोड़ी आध घन्टे तक दौड़ती है। देखने वाले निश्चय करते हैं कि किसकी जोड़ी ने बाजी मारी है। जीतने वाला व्यक्ति दूसरों को प्रसाद खिलाता है। यह बाजी जाट लोग अधिक लगाते हैं। बैसाख मास में ऐसी दौड़ें होती हैं। इसी कारण बैलों की दौड़ का नाम ही बैसाखी पड़ गया है।

दंगल (कुश्ती बाजों का) को यहां मल्हान कहते हैं। दंगल प्रायः प्रत्येक बड़े समारोह के अवसर पर होते हैं। व्याह के अवसर पर झुम्मीर नाच जाट लोग नाचते हैं और ताली बजाते जाते हैं। तीन प्रकार का झुम्मीर नाच होता है। पहला लम्मोचार या दक्षिणी झुम्मीर दूसरा त्रेतारी झुम्मीर है जिसमें तीन बार हथेली बजाई जाती है और बीच में शान्त होकर फिर तीन बार ताली बजाई जाती है। तीसरा नाच वह है जिसमें जल्दी जल्दी ताली बजाई जाती है। जो जाट झुम्मीर नाच नाचना नहीं जानता है वह नीची दृष्टि से देखा जाता है।

भड़कीले कपड़े पहिन कर किसान लोग छेज खेलते हैं। वे एक वृत्त में खड़े होते हैं। वे छोटे छोटे डंडे लिये रहते हैं और घूमते हुये नगाड़ा बजाते जाते हैं। कभी कभी डंडों में और कभी कभी लोगों के गले में घंटियां बंधी रहती हैं। युवक लोग चपली खेल खेलते हैं। घोड़-दौड़ का भी उत्सव होता है।

नदियों के किनारे मछली मारने का खेल होता है। जंगली सुवर का शिकार पालतू कुत्तों की सहायता से किया जाता है। इस प्रकार शिकार करने का चाव युवकों को बहुत होता है। और उसमें उन्हें बड़ा आनन्द आता है। जालों की सहायता से भी बनैले सुवरों का शिकार किया जाता है। धनुष

और बाण की सहायता से लोग चिड़ियों का शिकार खेलते हैं।

लड़के डीटी-डंडा, गुल्ली-डंडा डोड़ा आदि खेल खेलते हैं।

त्योहार और मेले

मुजफ्फरगढ़ से तीन मील दक्षिण की ओर रामपुर या दीनपुर में प्रत्येक बृहस्पतवार को शेख दाऊद जहानिया की समाधि पर मेला लगता है। साधारण भीड़ लगभग ५ हजार रहती है। रंगपुर सड़क पर खानपुर गाँव में बग्गा शेर को समाधि पर सावन और भादों मास में सोमवार के दिन मेला लगता है। ईद के पश्चात् भी प्रथम सोमवार को यह मेला होता है। यहां मेले में लगभग दो हजार की भीड़ रहती है। मुजफ्फरगढ़ से २० मील दक्षिण हरपालों गाँव में देधा लाल की समाधि है वहां पर ज्येष्ठ तथा असाढ़ मास में प्रत्येक बुधवार को मेला लगता है। यहां शहाबउद्दीन की कब्र है। मेले में लगभग ढाई हजार की भीड़ रहती है। गजनफर गढ़ के समीप जालवाल मीर अमीर में मूसनशाह की दरगाह पर कुवार मास में द्वादशी को मेला लगता है जिसमें लगभग ५ हजार की भीड़ होती है। हाजी सेटला नामक स्थान पर महबूब जहांनिया की समाधि है। यह स्थान कि भीर सड़क पर है। मेले में लगभग तीन हजार लोग भाग लेते हैं। रंगपुर से ५ मील की दूरी पर कीरी अली मर्दन नामक गांव है जहां पीर अली, पीर कमाल, और पीर फतेह दरिया की समाधियों पर जेठ महीने शुक्रवार को मेला लगता है मेले में लगभग ढाई हजार की भीड़ रहती है। रंगपुर के समीप फत्तू फनक्का नामक गाँव में दीनशाह की समाधि पर असाढ़ मास में शुक्रवार को मेला लगा करता है जिसमें लगभग ढाई हजार की भीड़ होती है। डेरा दीनपनाह में असाढ़ से भादों मास तक रविवार और सोमवार को मेला लगा करता है जिसमें बड़ी भीड़ एकत्रित होती है। थाल प्रदेश में तालो नूर शाह स्थान पर पून की चतुर्दशी को मेला होता है जिसमें स्थानीय निवासियों की भीड़ रहती है।

हिन्दू लोगों के दशहरा, दीवाली और होली के प्रधान त्योहारों पर उत्सव मनाये जाते हैं और जगह जगह पर मेले लगते हैं जिसमें बड़ी भीड़ होती है। वैसाखी के मेले में मुजफ्फर गढ़ में घोड़े तथा पशुओं का बड़ा मेला लगता है।

कृषि

खेती के ध्यान से जिले की भूमि का बंटवारा चार भागों में किया गया है। एक तो वह भूमि है जहां नदी के सोते तथा नालियां वर्तमान हैं दूसरे वह भाग जो चाही-सेलाब वाले हैं अर्थात् जहां बाढ़ आ जाती है। तीसरे मध्यवर्ती नहरों की सिंचाई वाली भूमि और चौथे थाल प्रदेश।

मिट्टी के ध्यान से जिले की भूमि मिल्क, गैस, डाढ़, ड्रम्मन, रग और रल्ली नामक पांच भागों में विभाजित है।

मिल्क उस भूमि को कहते हैं जो प्रथम श्रेणी की कछारी भूमि होती है और जिसमें सर्वोत्तम उपज होती है। यह भूमि नहरी प्रदेश में नगरों और बस्तियों के आस पास पाई जाती है। नदियों वाले प्रदेशों में भी यह भूमि पाई जाती है।

गैस वाली वह भूमि है जिसमें मुलायम मिट्टी मिलती है और मिट्टी में कुछ बालू तथा नमक, लोहा, चूना, मिट्टी आदि पाई जाती है। यह भूमि उपजाऊ होती है और दूसरे श्रेणी की मानी जाती है। नदियों के समीप ऐसी भूमि-अधिक है।

डाढ़ भूमि भीगी रहने पर कपास की भांति मुलायम होती है पर सूख जाने पर बहुत कड़ी हो जाती है। सूखने पर इसे जोतना बहुत कठिन होता है। यह कड़ी मिट्टी की बनी होती है और इसमें बालू का अंश नहीं होता है। भीगी रहने पर ही खेती करने योग्य होती है। यह भूमि तीन भागों में विभाजित है। (१) मीठी डाढ़ या डाढ़ खास (२) कड़ी डाढ़ या रप्पाड़ (३) नमकीन डाढ़ या काला रासी या शोर। इस भूमि में नील के अतिरिक्त और सभी वस्तुएं उपजती हैं। ईख बहुत होती है। रप्पाड़ भूमि में चावल, गेहूँ, चना, कपास आदि पैदा होता है। कालारासी भूमि फसल उपजाने के उपयुक्त नहीं है। इसमें सांवां और साधारण धान उगाया जाता है। ड्रम्मन भूमि

पतली मिट्टी बालू के ऊपर होती है।

यहां साल में खरीफ और रबी दो फसलें उगाई जाती हैं। धान, ज्वार, बाजरा, मोथ, सांवां, समूख तिल, चिल्ली, ईख, रुई, नील और गेहूँ, जौ, चना मसूर, मटर, सरसों, अलसी, तम्बाकू, मेथरा आदि मुख्य उपज हैं। भांति भांति की साग भाजी की भी उपज होती है और फल पैदा किये जाते हैं।

चाही भूमि में एक बीघे में तीन से छ मन तक ज्वार, बाजरा, तीन मन मोथ, तीन या साढ़े तीन मन तिल, २० मन चिल्ली साढ़े बारह मन ईख, ३ मन रुई, १२ सेर नील, ६ से ९ मन तक गेहूँ, साढ़े छः से साढ़े नौ मन तक जौ, तीन या चार मन चना, ४ मन मसूर, चार या पांच मन मटर और ६ से १० मन तक तम्बाकू होती है। सिंचाई के हिसाब से चाही, चाही नहरी, नहरी, आबी, सैलाब चाही सैलाब आदि भागों में भूमि विभाजित है। आम, नीमू, चकोतरा, नारंगी, नाशपाती, संतरा, सेब आदि फल होते हैं।

सिंचाई के साधन

सिंध प्रणाली में अपर मगासन, लोअर मगासन, मोहन वाह, चौधरी और सरदार नहरें हैं। मग्गी श्रेणी में मग्गी खुदाबाद, सुक और डिग नहरें हैं। छोटू प्रणाली में छोटू, आदिल, राज, बहिश्ती, सरदार छोटू नहरें हैं। पूरन प्रणाली में पूरन सुराब, कौरे खां, बाखी, कपड़े, खास और लुंदा नहरें हैं। सुलेमान प्रणाली में सुलेमान, सोहारू और खनवां शाखाएँ हैं।

कोट सुल्तान नहर लेह तहसील से सिन्ध नदी से निकलती है। डेरा पिंडदादन खां का समीपवर्ती प्रदेश और जिले के उत्तरी भाग की सिंचाई इस नहर से होती है।

चनाब नहर प्रणाली में, कराम, गणेश, तलीरी और झंगावार नहरें हैं। करम एक छोटी नहर है। यह झांग जिले में नदी से निकलती है। रंगपुर का समीपवर्ती प्रदेश इससे सींचा जाता है। गणेश नहर बल्लीवाह की प्रधान शाखा है। तालीरी नहर की वाह और खानवाह शाखायें हैं। झंगावाड़ में मखनाऊ, अडाऊ, अल्ली और खल्ली शाखायें हैं।

करमवाह नहर पहले दादल नदी थी जो चनाब की शाखा है। दीवान करम नारायण ने इसे ठीक कराया था। वह रंगपुर का शासक था। नदी के प्रवाह के कारण इस नहर के मुंह को बार बार बदलना पड़ा है। बिघारी (साढ़े नौ मील), फत्तू फनका (१ मील) जल्लूवाह (२ मील), मस्सू नाली (१ मील) और अकबर वाह (साढ़े छा मील इसकी शाखायें हैं।

गणेशवाह नहर नवाब मुजफ्फर खां के समय में खोदी गई थी। उस समय इसको गोरुवाह कहते थे। दीवान सावन मल के समय में इसका नाम बदल कर गणेशवाह कर दिया गया। बगरिया, बालीवाह, खंदर लुन्दा, जलालाबाद और जगतपुर इसकी शाखाएँ हैं।

झंगावार नहर को नवाब बहाबल खाँ ने खुदवाया था। नदी के प्रवाह के कारण इसके मुहाने को कई बार बदलना पड़ा है। पीरवाह, मखनाऊ इसकी शाखायें हैं।

तालीरी नहर आदि काल से चल रही है। यह चनाब की एक शाखा सी प्रतीत होती है जो खुदाई स्थान से काची सैदू खां स्थान तक जाती है। नदी के प्रवाह के कारण इस नहर के मुहाने को भी अनेकों बार बदलना पड़ा है। शाख टाकन मल या पुराना तालीरी, रजवाह गर्बी और शर्की, हाजीवाह, खानवाह, गजनफरवाह परिवाह, नग्नीवाह, खोकर और नरवाह इसकी शाखाएं हैं।

दीवान सावल मल के समय में अल्ली नहर खोदी गई थी और खाली नहर नवाब बहाबल खां के समय में खोदी गई थी। बाद में यह दोनों मिला कर एक कर दी गई और अल्ली-खल्ली नाम हो गया।

अल्ली वाह, खल्ली वाह, झंडाऊ धड़कन वाला इसकी शाखाएं हैं।

सिंध प्रणाली — खुराशान शासकों के समय में अब्दुल समद खां ने गार्कू नहर कोखुदवाया था। महाराज रणजीत सिंह के समय में मियां मतका ने इसे और अधिक चौड़ी कराया था। काटे सुल्तान, हिजराई, दीन मोहम्मद, राधा, मोहन वाह नंग्नी, खानचन्द, फाजिल, पंझाथी, मीरवाह या उतानी इसकी शाखाएं हैं।

अफगान शासकों के समय में भगस्सन नहर बनी थी। चौधरी, नग्गी, धोल, सिरमूली, केशो, गन्दा भूबर गंदा परहार, राजू, कार्य चौधरी, नवी वाह, सरदर वाह इसकी शाखाएँ हैं। कार्य मुहम्मद पुर, कार्य गमन खाँ, कार्य खानपुर, कार्य सिनांवां, कार्य तेजभान, मुराद वाह, नग्गी कलां और खुर्द, जान मोहम्मद, पीर वाह, हम्जा, चक्खां, नाला बुवान और चुलावाह इसकी शाखाएं हैं।

मग्गी पहले नदी की एक शाखा थी जिससे समय समय पर नहरें खोदी गईं। खुदादाद, कोट वाह कार्य कुहावाड़, हाजी इशाक, बुलेवाली, सुल्तान खार फजिल कालरू, इसकी शाखाएं हैं।

सूक नहर की भकरी वाह, सनवाह कालूवाह, सरदार खुर्द और अहमद वाह छ शाखायें हैं। डिंग नहर की धंगरवाह, सरदार कलाँ और नंग वाह तीन शाखायें हैं।

इसी प्रकार आदिलवाह की नौ, घुट्ट की सात पुरान की उन्नीस, सोहराब की तीन और सुलेमान नहर की तीन शाखाएं हैं। शाखाओं की बहुत सी उप शाखाएं बनाई गई हैं जिससे प्रत्येक गांव में भली भांति सिंचाई के लिये नहरों का पानी पहुँच सके।

नहरों से सींचने के लिये सरकार को कर चुकाना पड़ता है। यह कर आठ आना से ले कर दो रुपया चार आना प्रति एकड़ तक है। पर सिंचाई का कर प्रति वर्ष लगाया जाता है और इसमें भिन्नता होती रहती है। नहरों के अतिरिक्त कुवों से भी खूब सिंचाई होती है।

वन

जिले में दो लाख छानवे हजार दो सौ पंचानवे एकड़ भूमि में सरकारी वन (रख) हैं। जिसमें से तेईस रख जिनका क्षेत्रफल ४७,७०२ एकड़ है वन-विभाग के अधिकार में हैं जिनका क्षेत्रफल दो लाख अड़तालीस हजार पांच सौ नब्बे एकड़ है। कोई भी वन सुरक्षित नहीं है।

सवानी बेला रख का क्षेत्रफल १५२२ एकड़ है यह चनाव नदी के पश्चिमी तट पर है और रंगपुर से ८ मील दक्षिण स्थित है। यहाँ पशु चरते हैं। यह वृक्षों का वन है। खुदाई रख का क्षेत्रफल १५१२ एकड़ है। यह चनाव के दाहिने तट पर लांगर सराय और रंगपुर के मध्य स्थित है। कालारित का रख भी चनाव के समीप स्थित है। लांगर सराय के दक्षिण अलीपुर का वन है। जिसका क्षेत्रफल लगभग डेढ़ हजार एकड़ है। कुरेशी वन (लगभग १ हजार एकड़) सिन्ध नदी के तट पर मुजफ्फर गढ़ से डेरा गाजी खां जाने वाली प्रधान सड़क पर स्थित है। खांनगढ़ से ५ मील दक्षिण-पश्चिम की ओर जालवाल वन लगभग १ हजार एकड़ का है। इनके अतिरिक्त सखन बैला, बकैनी बेटमीर हजार खां, छिनामलान, धमरवाला जनूबी, अलिवालो, खियार, लाट्टी बेट बेवां साहब, खानवाह पड़ारा, ढाक आदि वन हैं जहां भांति के वृक्ष तथा चरागाहें हैं। यह बात ध्यान में रखने की है कि यहां वन सघन नहीं हैं और न यह जंगली खूंखार पशु ही पाये जाते हैं।

डिप्टी कमिश्नर के अधिकार वाले रखों का विभाजन तीन भागों में है।

(१) थाल प्रदेश वाले रख कांडा, और लाना में स्थित हैं। (२) नदी के समीपवर्ती प्रदेश वाले रख और (३) मध्यवर्ती नहरी प्रदेश के रख। इन रखों की घास चरने के लिये ठीके पर प्रतिवर्ष नीलाम कर दी जाती है।

कलाकौशल

लगभग प्रत्येक बड़े गांव में साधारण कपड़ा बुनने का काम होता है। सफेद कपड़ा, तथा धारीदार स्त्रियों के पायजामे का कपड़ा बनाया जाता है। चारखाना भी बनाया जाता है।

छीनवास में कपड़ा सुन्दर रंगा जाता है। यह रंगा हुआ कपड़ा स्त्रियाँ प्रयोग करती हैं जिसे भोछन कहती हैं। जाजिम, चद्दर और रजाई की भी छपाई यहां अच्छी होती है। भेड़ के ऊन से देहाती कम्बल तयार करने का भी काम गांवों में होता है।

सुंघनी तयार करने का काम लगभग जिले भर में होता है पर अलीपुर में सुंघनी तयार करने के बड़े बड़े कारखाने हैं जहां सुंघनी तयार करके बाहर भेजी जाती है।

नारियल और ताड़ की पत्तियों से चटाई पंखी आदि किरार लोग बनाते हैं। समस्त जिले के गांवों में यह काम होता है। रामपुर में चटाई बनाने का काम बहुत होता है।

धनुष और वाण बनाने का काम अब तक कोटा अद्दू (सिनांवां तहसील) में होता है। वाण या तीर एक दो और तीन फल वाले बनाये जाते हैं। एक तीर का मूल्य चार रुपये से दस रुपये तक होता है।

मुजफ्फर गढ़ में सेठ चिमन दास ऐंड को का रुई धुनने का कारखाना है। अलीपुर, खानगढ़ वास डेवाला, और रोहेलान वाली स्थानों में रुई धुनने के कारखाने हैं। चमड़ा कमाने और उससे साधारण जूते तथा चप्पल बनाने का कारबार लगभग प्रत्येक बड़े गांव में होता है। जिले का ऊन मुलतान द्वारा बाहर भेजा जाता है।

लबाना सिख लोग रस्सी बनाने का काम करते हैं। रस्सी बनाने का काम बहुत होता है।

दरी तथा रेशमी कपड़े आदि के बनाने का काम जिले में बिल्कुल नहीं होता है।

आनेजाने के साधन

नार्थ वेस्टर्न रेलवे लाइन इस जिले में होकर जाती है। शेरशाह स्थान पर चनाब नदी के ऊपर रेल का पुल बना हुआ है। महमूदकोट से गाजी घाट को एक शाखा-लाइन जाती है। चनाव पश्चिमी, तट मुजफ्फर गढ़ बुध, महमूद कोट, गुरमानी, सिनांवां, कोट अद्दू, डेरा दीन पनाह और इशानपुर रेलवे स्टेशन हैं।

जिले में पक्की तथा कच्ची सड़कें हैं। यह सड़कें प्रधान नगरों तथा गांवों को मिलाती हैं। मुजफ्फर गढ़ से खान गढ़ को और मुजफ्फर गढ़ से डेरा गाजी खां को पक्की सड़क गई है। जिले में लगभग २० कच्ची तथा पक्की सड़कें हैं जिनकी लम्बाई लगभग ६०० मील है। मुजफ्फर गढ़ अहसानपुर तथा महमूद कोट गाजी खां नामक सड़कों पर फौज चला करती है। यह सड़कें रेलवे स्टेशनों को देहात से मिलाती हैं।

शासन

जिले का प्रबन्ध डिप्टी कमिश्नर के अधिकार में रहता है। जिले में जिले का जज, खजाने का अफसर मालगुजारी के अफसर हैं, जो प्रथम श्रेणी के माने जाते हैं। इनकी सहायता के लिये जिले में दूसरे कई एक आनरेरी मजिस्ट्रेट भी हैं। मुजफ्फर गढ़ नगर के न्याय के लिये एक बेंच बनी है। जहां ४ नागरिक न्यायाधीश बैठते हैं।

प्रत्येक तहसील का प्रबन्ध एक तहसीलदार के अधिकार में रहता है। तहसीलदार की सहायता के लिये नायब तहसीलदार, कानूनगो और पटवारी रहते हैं। मुजफ्फरगढ़ तहसील में १ दफ्तर का कानून गो ३ खेत वाले कानूनगो और १२१ पटवारी हैं। अलीपुर तहसील में ६ कानून गो और ९५ पटवारी तथा सिनांवां तहसील में ६ कानून गो और ६९ पटवारी हैं।

जिले में चौदह थाने हैं जिनमें ४इन्सपेक्टर और २० थानेदार रहते हैं। पुलिस विभाग का प्रधान अफसर सुपरिन्टेंडेन्ट होता है जो जिले के प्रधान अफसर की देख-रेख में काम करता है।

इस जिले में कोई जेल नहीं है। यहां के कैदी मुल्तान भेजे जाते हैं। स्टेट आफ वार्डस वाले क्षेत्रों का प्रबंध डिप्टी कमिशनर के हाथ में रहता है।

लगान की वसूली जैलदारों द्वारा होती है। प्रथम श्रेणी के जैलदार को दो सौ रुपया, द्वतीय श्रेणी के जैलदार को सौ रुपया सालाना सरकार से वंधा वेतन मिलता है। जमींदार भी लगान वसूल करते हैं और मालगुजारी तहसील में दाखिल करते हैं।

गांवों में लम्वरदार तथा चौकीदार रहते हैं। ये सरकार के कर वसूली तथा शासन में सहायक होते हैं।

न्याय के लिये जिले में जिला-जज, अतिरिक्त सहायक कमिशनर और तीन मुनसिफ कचहरियां हैं। मुजफ्फर गढ़ का मुनसिफ सिनावां तहसील के मुकदमें भी करता है। इनके अतिरिक्त तहसीलदार और आनरेरी न्यायधीशों की कचहरियां हैं।

जिले में कुल ७६९ गाँव हैं जिनमें सिनावां तहसील में १५०, मुजफ्फरगढ़ में ४१२ और अली-पुर में २०० गांव हैं।

शिक्षा

इस जिले में शिक्षा की बहुत कमी है। कुल बस्तीएं का केवल ७ प्रतिशत भाग शिक्षित हैं जिले में एक हाई स्कूल, एक ऐंग्लो वर्नाक्यूलर। मिडिल स्कूल, १ वर्नाक्यूलर मिडिल स्कूल, ४३ टाऊन प्राइमरी स्कूल, ६ गाँव वाले प्राइमरी स्कूल, तीन जमींदारी स्कूल, ८ सहायक इस्लामियां स्कूल, १ कारोबारी स्कूल और एक सहायक लड़कियां का स्कूल हैं। कुल ८५ स्कूल हैं। विद्यार्थियों की कुल संख्या चार हजार है।

दर्शनीय-स्थान

खानगढ़ टाऊन—मुजफ्फरगढ़ से दक्षिण की ओर जाने वाली सड़क पर लगभग ११ मील की दूरी पर खानगढ़ नगर स्थित है नगर की जनसंख्या लगभग ५ हजार है। इस नगर के चारों ओर कृषि प्रदेश हैं। भूमि बड़ी उपजाऊ हैं। पहले यह नगर जिले का केन्द्र था और इसी नाम पर जिले का नाम भी था। पर चनाव नदी की बाढ़ के कारण इस नगर को छोड़ कर मुजफ्फरगढ़ अधिक उपयुक्त समझा गया और मुजफ्फरगढ़ जिले का नाम भी रख दिया गया और मजफ्फरगढ़ केन्द्र बना दिया गया। इस नगर के अधिकांश घर ईंट के बने हैं और नगर के मध्यवर्ती भाग में होकर एक पक्की सड़क बनी है। इसके अतिरिक्त कई एक छोटी छोटी सड़क तथा गलियां हैं। इस नगर को नवाब मुजफ्फर खां की की बहिन खान बीबी ने बसाया था। नवाब शुजा खां ने इस नगर को अपनी पूंजी को देहज में दिया था। खान बीबी की शादी रब नवाज खां सदोजई के साथ हुई थी पहले नगर के चारों ओर पहारदीवारी थी पर अब नगर चहारदीवारी के बाहर फैल गया है।

नगर में १ मंडी, स्कूल, थाना, अस्पताल आदि हैं। नगर के दक्षिण की ओर एक नया स्कूल स्थापित किया गया है। यहां आनरेरी मजिस्ट्रेट तथा अति-रिक्त असिस्टेन्ट कमिशनर रहते हैं। यहां म्युनिस-

पैलटी है। यह नगर समीपवर्ती खेतिहर प्रदेश का केन्द्र है। यहां पर एक रुई का कारखाना है। कारखाने के समीप ही बाज़ार है। नगर की बस्ती में आधे से अधिक हिन्दू थे।

मुजफ्फरगढ़

मुजफ्फरगढ़ नगर ३०° ४ उत्तरी अक्षांश तथा ७१° १४ पूर्वी देशान्तर पर स्थित है। नगर की जनसंख्या लगभग १० हजार है। यह नगर मुल्तान से डेरा गाजी खां जाने वाली सड़क पर स्थित है। यहां से अलीपुर को सड़क जाती है तथा समीप ही ५ मील लम्बा शीशम का बन है। अलीपुर सड़क के पूर्व वाला प्रदेश बहुत उपजाऊ है। इस प्रदेश में कई छोटी छोटी नदियां बहती हैं। यहां वन है तथा नारियल के बाग़ हैं।

वहां से थाल का रेगिस्तान तथा सुलेमा अरोगी दिखाई पड़ते हैं। अलीपुर और डेरा गाजीखां सड़क पर योरुपियन लोगों के घर बने हैं। यहां एक किला है जिसके चारों ओर ३० फुट ऊँची दीवार है। किले के चारों ओर बस्ती बसी है जिससे किला बस्ती के मध्य छिप जाता है। किले के समीप ही बाज़ार है। किले के समीप हिन्दू बस्ती अधिक थी। किले के उत्तर की ओर जिले के अफसर रहते हैं। प्रधान सड़कें पक्की बनी हैं। नागरिक लोग कुएं का पानी पीते हैं।

सर्व प्रथम हुसन हट्टी में हुसन नामक बनिया ने अपनी दूकान खोली थी। १७९४ ई० में नवाब मुजफ्र खां ने किला बनाना आरम्भ किया और उसका नाम मुजफ्रगढ़ रक्खा। १७९६ ई० में उसने इसे अपनी राजधानी बनाया। १८१८ ई० में रणजीत सिंह की सेना ने क़िला घेर लिया। १८४९ ई० में यह ब्रिटिश सरकार के ज़िले का केन्द्र बना। १८७३ और १८९६ ई० में चनाब की बाढ़ से नगर को हानि हुई जिससे नगर के समीपवर्ती भाग को काफी क्षति पहुँची। नगर तथा स्टेशन के मध्य रुई का कारखाना है। मुल्तान डेरा गाजी खां सड़क के उत्तर जिले की कचहरियां स्थित हैं।

मुजफ्रगढ़ में सर्व प्रथम म्युनिसपैलिटी १८७४ ई० में स्थापित की गई। अब यह द्वितीय श्रेणी की म्युनिसपैलटी है। किले के उत्तर-पूर्व जहां अब गल्ले की मंडी है वहीं पर नवाब मुजफ्फर खां का निवास स्थान था। वहीं तलोरी बाह के तट पर तालोरी वाटिका है। वाटिका में काफी आम तथा दूसरे फल पैदा होते हैं। नगर में कोतवाली, सावन मल के महल में है। नगर के पश्चिमी भाग में एक हाईस्कूल तथा उसके बोर्डिंग हाउस हैं। डेरा गाजी खां सड़क पर सराय और डाक तथा तार घर स्थिति हैं। नगर से कुछ उत्तर की ओर गिरजाघर है। नगर के पश्चिम की ओर यात्रियों का बंगला और डिसपेंसरी है। जिला कचहरी, पुलीस सुपरिंटेडेंट का बंगला और फिर इनसे दूर डेरा गाजी खां सड़क पर सेना के कैम्प का मैदान स्थित हैं। कचहरी से लगभग २ फर्लांग की दूरी पर जेल है। वहीं पर नहर के इंजीनियर के निवास तथा दफ्तर हैं। यहीं अलीपुर सड़क पर पुलीस लाइन स्थित है। १८९२ ई० में टाऊन हाल तथा उससे सम्बंधित वाटिका बाढ़ से नष्ट हो गये। यहां पर एक विक्टोरिया मेमोरियल हाल बनाया गया है। नगर दिन प्रतिदिन उन्नत करता जा रहा है।

खैरपुर

अलीपुर से ७ मील दक्षिण-पश्चिम की ओर खैरपुर गांव स्थित है। यह सिन्ध तथा चनाब नदियों के लगभग मध्य में स्थित है। इसकी नींव खैरशाह बटुबारी ने डाली थी। इन्हीं के नाम पर नगर का नाम पड़ा है। नगर के समस्त भवन ईंट के पक्के बने हैं और भवन दो तल्ले और तीन तल्ले बने हैं। बजार की गलियां संकरी तथा पक्की बनी हैं। इन गलियों में मोटर, एक्का आदि जाना संभव नहीं है। बाज़ार की प्रधान गली में धूप से बचने के लिये सड़कों के ऊपर चटाइयों के पर्दे हैं।

नगर का समीपवर्ती प्रदेश उजाड़ घास का मैदान है। बाढ़ से नगर की रक्षा करने के लिये एक बांध बनाया गया है और सुलेमान नहर के बांध से भी बाढ़ से नगर की रक्षा होती रहती है। प्राचीन काल में यह एक व्यापारिक केन्द्र था। यहां पर प्राइमरी स्कूल है। यहां पर दरिया साहब तथा गोपी नाथ का मन्दिर और ठाकुर द्वारा है। नगर की जन संख्या लगभग ४ हज़ार है।

अलीपुर

मुजफ्फरगढ़ से दक्षिण जाने वाली प्रधान सड़क पर रेलवे से ५१ मील की दूरी पर अलीपुर नगर स्थित है यह नगर चारों ओर के मैदानों से घिरा है। मैदानों के मध्य ऊँचे स्थान पर नगर स्थित है। कहा जाता है कि सितपुर के अली खां नामक राजकुमार ने इस नगर की नींव डाली थी। यह तहसील का केन्द्र और यहां मुन्सिफ की कचहरी हैं यह नगर उपजाऊ प्रदेश के मध्य के स्थित होने के कारण नाज की मन्डी का केन्द्र बना हुआ है। यहां सुंघनी तयार करने का काम होता है। नील का व्यापार यहां अच्छा होता है। सुंघनी और नील यहां से दूसरे स्थानों को भेजे जाते हैं। नदियों की बाढ़ के कारण नगर की जलवायु बड़ी खराब है। यहां मिडिल स्कूल, अस्पताल, तहसील, विश्राम घर सराय हैं। नगर के भवन तथा गलियां पक्की बनी हैं। यहां म्युनिसपैलिटी है। जनसंख्या लगभग ५ हजार है।

शहर सुल्तान

मुजफ्फर गढ़ से दक्षिण की ओर जाने वाली सड़क पर मुजफ्फर गढ़ से ३७ मील की दूरी पर शहर सुल्तान क़स्बा स्थित है। इस क़स्बे का नाम सुल्तान अहमद कताल के नाम पर पड़ा है। यह नगर अपनी समाधि तथा मेले के लिये प्रसिद्ध है। यहां अलाउद्दीन या आलम पीर की समाधि है। सुल्तान अहमद आलमपीर के पिता थे।

कस्बे में एक बाजार है जिसकी गलियां ईंट की बनी हैं क़स्बे के घर मिट्टी के बने हैं। यहाँ से एक सड़क जओर्ता को जाती है।

सीतपुर

यह पुराना छोटा क़स्बा अलीपुर से ११ मील और चनाब से ३ मील की दूरी पर स्थित है। यहां बाढ़ अधिक आती है। कस्बे के चारों ओर का प्रदेश बाढ़ वाला है जहाँ लम्बी लम्बी घास पाई जाती है। शीतकाल में यहाँ की भूमि नम रहती है और सरदी बहुत रहती है। नगर ऊंचे स्थान पर बसा है। यह जिले भर में सब से अधिक प्राचीन नगर है। पहले इस नगर का नाम रुक्नुल मल और फिर खूदी भीर रहा उसके बाद सीतपुर हुआ। इतिहास वाले पाठ में इसके इतिहास का वर्णन आ चुका है।

नगर के दो भाग हैं। उत्तरी भाग खानानी और दक्षिणी भाग शेखानी कहा जाता है। उत्तरी भाग में नहार शहजादों के वंशज रहते हैं और शेखानी में मखदूम लोगों की बस्ती है। बहुत से घर पक्के दो तल्ले तीन तल्ले बने हैं। यहां के दो बाजार ईंट के पक्की फर्श वाले बने हैं।

नगर के चारों ओर नारियल के वृक्षों की घनी पंक्तियों तथा वाटिकाओं से घिरा हुआ है जिसका जलवायु पर गहरा प्रभाव पड़ता है। यहां का नजाबात नारियल प्रसिद्ध है। बाजार के पश्चिमी कोण पर ताहिर खां का मक़बरा है। यह मक़बरा सुन्दर बना हुआ है।

जटोई

अलीपुर से ११ मील उत्तर-पश्चिम की ओर और सिन्ध नदी से ४ मील की दूरी पर जटोई क़स्बा बसा है। बड़ा और छोटा जटोई मिल कर इस क़स्बे को बनाते हैं। बीच में बाजार है। बाजार के उत्तरी धुर पर छोटा जटोई गांव है। अलीखां जटोई ने इस नगर को १०० वर्ष में बसाया था। बाजार पक्की ईंटों का बना है। गलियां भी ईंटों की बनी हैं। उस पर चटाई बिछी रहती हैं। यहां थाना विश्राम घर, नहर के भवन, असपताल आदि हैं। सरदार कौड़ी खां यहाँ के प्रसिद्ध नागरिक थे जिन्होंने अपनी जायदाद का तिहाई भाग यहाँ के डिस्ट्रिक्ट बोर्ड को दे दिया था क्योंकि उनके कोई पुत्र नहीं था।

कोट अद्दू

यह एक बड़ा गांव है। इसके घर कच्चे हैं तथा गलियां संकरी हैं। यह सनांवां तहसील का सब से बड़ा नगर है। यह समीपवर्ती खेतिहर प्रदेश का केन्द्र है। यह पहले अपनी तहसील का केन्द्र था और लेह जिले में था पर १८६१ ई० में यह मुजफ्फर गढ़ जिले में मिला दिया गया १८०२ ई० में यहां से हटाकर सनांवां को तहसील का केन्द्र बना दिया गया। यह गांव मुजफ्फर गढ़ से डेरा

इसमाइल खां जाने वाली सड़क पर मुजफ्फर गढ़ से ३३ मील की दूरी पर स्थित है। इसकी नींव गाजी खां के पुत्र अद्दू खां ने डाली थी। यहां रेलवे का स्टेशन, थाना, स्कूल, विश्राम घर आदि है। यहां धनुष-बाण तयार किये जाते हैं।

डेरा दीन पनाह

कोट अद्दू से ७ मील उत्तर की ओर मुजफ्फर-गढ़ डेरा इस्माइल खां सड़क पर डेरा दीन पनाह स्थित है। यह एक प्रसिद्ध गांव है। सिन्ध नदी से यह केवल ५ मील की दूरी पर है। यह एक रेलवे स्टेशन है। दीन पनाह बुखारी सय्यद की समाधि होने के कारण यह स्थान प्रसिद्ध है।

नगर के दक्षिण की ओर अब्दुल समद खां का बनाया हुआ क़िला है। यहां थाना, विश्रामघर, स्कूल और फौज की छावनी है।

मुंडा

थाल प्रदेश में मुंडा सबसे बड़ा गांव है। यहां १०० से अधिक घर नहीं हैं। पुलीस थाना होने के कारण यह स्थान प्रसिद्ध है यहीं एक स्थान थाल प्रदेश में जहां पुलिस का थाना है नवाबों के समय का बना हुआ यहां एक क़िला है जो गिरी दशा में है। यहां बहुत अधिक गरमी पड़ती है। जिन पुलीस मैनों को यहां रखा जाता है यह यहां रहना सबसे बुरी सजा समझते हैं। यहां कहावत प्रसिद्ध है "या ईश्वर जब तूने मुंडा नगर बनाया तो फिर नरक क्यों बनाया।"

रंगपुर

मुजफ्फर गढ़ और झंग जिले की सीमा पर रंगपुर का सब से बड़ा गांव स्थित है। यह रंगपुर खोरियादा कहलाता है। यह मुजफ्फर गढ़ की की उप तहसील है। यहां थाना, पुलिस चौकी, नहर घर, अस्पताल और स्कूल हैं। यह मुजफ्फर गढ़ और सनांवां तहसील के खेतिहर प्रदेश का व्यापारिक केन्द्र है। इसकी भूमि बड़ी उपजाऊ है। यहां बन हैं। यह हीर और राझा की कहानियों के लिये प्रसिद्ध है। हीर झंग सियाल जाटनी थी उसका ब्याह रंगपुर के एक खेड़ा जाट से हुआ था। रांझा, धोड़ो जाट था और तख्त हजारा का निवासी था। वह हीर से प्रेम करता था। हीर के ब्याह हो जाने पर वह फकीर के रूप में उसके पीछे पीछे रंगपुर आया और यहीं पर रहने लगा अंत में यहीं उसकी मृत्यु हो गई।

गुरदासपुर जिला

गुरदासपुर जिले का नाम इसी नाम के नगर के ऊपर रक्खा गया है। कहते हैं कि किसी समय में महन्त गुरियजी ने एक गांव ख़रीदा था और अपने नाम पर उस गांव का नाम भी रख दिया था वही गांव अब गुरदासपुर नगर हो गया है।

गुरदासपुर का जिला लाहोर कमिश्नरी के उत्तर पूर्व की ओर स्थित है। इस जिले के उत्तर में जम्बू तथा चम्बा के इलाके हैं। दक्षिण की ओर अमृतसर का जिला, पूर्व की ओर चक्की नदी, होशियारपुर जिला और कपूरथला राज्य तथा पश्चिम की ओर अमृतसर तथा सियालकोट के जिले हैं। जिले का क्षेत्रफल १,८२६ वर्ग मील है जिसमें ७१ प्रतिशत भाग में खेती होती है।

गुरदासपुर जिले में चार तहसीलें हैं इनमें से दो दक्षिणी बटाला और गुरदासपुर की तहसीलें बारी द्वाब में ब्यास और रावी नदियों के मध्य स्थित है। यह तहसीलें पञ्जाब के पर्वतीय मैदान की साधारण दशा बतलाती हैं। गुरदासपुर के उत्तर पठानकोट तहसील स्थित है। इसके पूर्व में चक्की नदी तथा पश्चिम में रावी नदी स्थित है। चक अधार का प्रदेश इसी तहसील में शामिल है। यह चक रावी और उसकी सहायक उज्ह के मध्य स्थित है। चक अधार और पठान कोट के निचले भाग का शेष भाग तराई है जिसकी जलवायु नम है और वनस्पति खूब उगती है। ऊपरी भाग ठोस पथरीली भूमि का है और हिमालय के नीचे तक चला गया है। इस

प्रदेश में कहीं कहीं उपजाऊ वाटियाँ हैं। यहां ऊँची पहाड़ियों पर पाइन के वन हैं।

इसी तहसील में बलून तथा बकलोह के कन्टोनमेन्ट और डलहौजी का पहाड़ी स्टेशन है। यह चम्बा प्रदेश से अलग किये गये भागों में स्थित है। चौथी तहसील शङ्कर गढ़ की है। यह तहसील उज्ह और रावी नदियों के पश्चिम रेचना द्वाब में स्थित है। इस तहसील की भूमि जिले की भूमि से भिन्न इसका उत्तरी भाग जो जम्मू प्रदेश की निचली पहाड़ियों के नीचे स्थित है ऊँचा है। यह सूखा है और इसमें वृक्ष नहीं है। इस भाग में पहाड़ी कंदराएँ बहुत हैं। इस प्रदेश के नीचे दक्षिण और पूर्व की ओर उपजाऊ भूमि है जहां अच्छी खेती होती है। इस तहसील का दक्षिणी भाग डार्प कहलाता है। यह भाग बहुत अधिक उपजाऊ है। शङ्करगढ़ तहसील में बहुत कम बाग तथा वाटिकाएँ हैं। उज्ह तथा ऊँचे प्रदेश के मध्य पेटला में शीशम का वृक्ष खूब उगता है। जो देखने में बहुत ही सुन्दर प्रतीत होता है।

जिले के दृश्य पन्जाब के और भागों की अपेक्षा सुन्दर हैं। बटाला और गुरदासपुर की तहसीलों में बारी द्वाब नहर बनैली पंक्तियों के अतिरिक्त और दूसरे दृश्य नहीं हैं किन्तु शङ्करगढ़ में ढालू प्रदेश तथा पहाड़ी कंदराएँ और पठान कोट के पहाड़ी प्रदेश तथा निचली पहाड़ियों के बन प्रदेश बड़े ही सुहावने हैं। डलहौजी के नीचे से पीर पंजाल श्रेणी के नीचे तक के भाग के दृश्य बड़े ही मनोहर हैं। लम्बे चौड़े मैदान में कहीं कहीं पर हरी भरी उपजाऊ बस्तियां जो सघन हरियाली से परिपूर्ण हैं बड़े ही सुन्दर हैं फिर सामने हिमालय की बर्फीली चोटियां दृष्ट गोचर होती है।

गुरदासपुर तहसील की पूर्वी सीमा पर व्यास नदी और मध्यवर्ती भाग में रावी नदी बहती हैं। इनकी बहुत सी सहायक नदियां हैं। उत्तर-पश्चिम को प्रवाह करती हुई व्यास नदी मीर थाल स्थान पर जिले में प्रवेश करती है। इसी स्थान पर थावास चो नदी इसमें आकर मिलती है और तीन मील नीचे बीनापुर के समीप चक्की नदी आकर इसमें प्रवेश करती है। मीरथाल से दक्षिण-पश्चिम और फिर दक्षिण ६ मील बहने के पश्चात् व्यास नदी धुर दक्षिण को मुड़ जाती है। इस नदी का पश्चिमी तट ऊँचा तथा पहाड़ी है। परन्तु नदी की वर्तमान तली ऊँचे तट से १ मील से ६ मील की दूरी तक स्थित है। जाड़े के दिनों में नदी की गहराई ६ फुट रहती है और कई स्थानों पर सरलता पूर्वक पार की जा सकती है। वर्षा ऋतु में नदी की गहराई औसत से २० फुट रहती है। नदी के ऊपर भाग की तली में रेत तथा पत्थर हैं पर नीचे की ओर अधिक पत्थर के रोड़े पाये जाते हैं जिनके कारण नदी में बहुत से द्वीप बन गये हैं जिनमें से कुछ तो काफी बड़े हैं। नदी के इस भाग में पुल नहीं है। नावों के द्वारा नदी पार की जाती है। घाटों की देख भाल होशियारपुर के शासन में है। इन घाटों में भेट घाट तथा नौशारा घाट प्रसिद्ध हैं क्यों कि इन घाटों पर बटाला तथा गुरदासपुर से होशियार पुर जाने वाली सड़कें आती हैं।

व्यास नदी में बाढ़ बहुत आती है जिससे नदी और ऊँचे तट के मध्य का भाग बहुत नम तथा स्वास्थ के लिये हानिकारक हो गया है। गुरदासपुर तहसील के कहनवान गोले प्रदेश में यह बात विशेष रूप से वर्तमान है। गुरदासपुर नौशारा सड़क के उत्तर की ओर नदी नम प्रदेश के बहुत समीप पहुँच चुकी है जिससे ख्याल किया जाता है कि शायद नदी पुनः अपने पुराने मार्ग होकर बहने लगे यदि नदी ने इसी रूप से अपना मार्ग बदला तो फिर नम प्रदेश के पूर्वी तट के गांवों को हानि होगी।

चम्बा सीमा पर रावी नदी चौंध स्थान पर तहसील में प्रवेश करती है और दक्षिण-पूर्व बहती हुई काश्मीर तथा पंजाब को तेइस मील तक बहेड़ी बुजुर्ग तक सीमा बनाती है। इसके पश्चात् १० मील दक्षिण तथा १० मील पश्चिम बहने के पश्चात् लासियां स्थान पर पठानकोट तहसील को छोड़ती है। बहेड़ी बुजुर्ग के नीचे इसने मार्ग में इससे तीन शाखाएँ निकल गई हैं जो आगे चलकर फिर इसी में मिल गई हैं। इन तीनों के नाम सिंहाखां, मरटो तथा भटैया है। शायद यह तीनों शाखाएँ बाढ़ वाली नालियां अथवा सोते रहे हों। पर अब ये कई वर्षों

से शाखाओं का काम कर रही हैं और इनमें से काट कर अन्य नालियां बनाई गई हैं। पहले रावी नदी नदी का मार्ग दीना नगर जिले की सीमा बनाता था। नदी के मार्ग वाले बहुत से गांव अलग अलग तालुकेदारियों के रूप में बदल गये हैं क्योंकि इनका ट्रांस रावी भाग पहले सियालकोट में था। माधोपुर के नीचे तीन मील तक रावी नदी पथरीले तटों के मध्य होकर बहती है। वहां इसकी तली पत्थर के रोड़ों की बनी है। पूर्व की ओर १० मील तक तट ऊँचा है उसके आगे नदी की तली मैदान में साधारण नदियों की भांति रेतीली हो गई है। पहाड़ी की आगे नदी के तटों पर खेती की जाती है। वर्षा ऋतु में नदी की गहराई २० फुट से अधिक रहती है पर शीतकाल में पानी बहुत कम हो जाता है और लोग सरलता पूर्वक पार कर जाते हैं क्योंकि नदी का पानी बारी द्वाब नहर में मोड़ दिया जाता है। पहाड़ी प्रदेश में नदी की तली में कंकड़-पत्थर रहते हैं बाद में यह छोटी कंकड़ियों तथा रेत के रूप में बदल जाते हैं। नदी में बहुत से द्वीप बन गये हैं।

१८७० ई० से रावी नदी के मार्ग में किसी प्रकार का विशेष परिवर्तन नहीं हुआ है। डेरा नानक के नीचे बटाला तहसील में नदी ने कई बार संकट उत्पन्न कर चुकी है। १८७० ई० में तहली साहब की समाधि तथा एक शीशम का पवित्र वृक्ष नदी में बह गया जिसके नीचे सिक्खों के गुरु ने विश्राम किया था। इसलिये नदी के तट पर बांध बनवाना पड़ा। १९०६ ई० में बहुत धन लगाकर दूसरा बांध बनवाया गया जिससे नदी ने दूसरी तट की ओर मार्ग बदला जिसके कारण शङ्करगढ़ तहसील के गांवों को बहुत हानि उठानी पड़ी है। अब करतारपुर की समाधि को जहां बाबा नानक की मृत्यु हुई थी नदी से भीषण संकट उत्पन्न हो गया है। जिले में रावी नदी पर कोई पुल नहीं है। घाटों पर नावों के द्वारा लोग नदी पार करते हैं। ये घाट चार या पांच मील की दूरी पर बने हैं।

दक्षिणी ढालों के धौलाधर स्थान से निकलती है और दक्षिण-पश्चिम को ओर बहती है। नदी का पाट आध मील चौड़ा है। इस नदी में अचानक बाढ़ आजाने से सैकड़ों जानें चली जाती हैं। हारियाल स्थान पर नदी के ऊपर कांगड़ा सड़क पर पुल बना है। पहले ढंगू स्थान पर इस नदी के दो भाग हो जाते थे। उनमें से एक का नाम खाल था। यह शाखा दक्षिण-पश्चिम को जाती थी और गुलपुर के आगे में ट्रिमू (गुर) के नीचे रावी से मिल जाती थी। दूसरी शाखा दक्षिण की ओर बहती थी और मीरथाल के पास ग्राम से मिल जाती थी। गुलपुर वाली शाखा हसली तथा बारी द्वाब नहर की प्रधान शाखाओं को काटती थी। कई बार कोशिश की गई कि गुलपुर में समस्त पानी रोक कर मीरथाल शाखा में मिला दिया जाय। आखिर नहर के अफसर ने २०० फुट नीची तथा १०० गज चौड़ी एक नाली ढंगू तट के समस्त भाग में खुदवाया और इसके तथा बांध की सहायता से समस्त पानी को एक नवीन नहर द्वारा मीरथाल पहुँचा दिया। यह कार्य १८९२ ई० में किया गया था तब से अब तक नदी अपने आधुनिक मार्ग में अधिक व्यय लगाकर रोक रक्खी गई है। इस घुमाव से ढंग के नीचे वाले गांवों (पहले तट वाले) को हानि पहुँची है पर नहर के लिये ऐसा करना परम आवश्यक था। ग्रीष्मकाल में चक्की नदी में बहुत कम पानी रहता है। लोग नहरें बना कर कंडी सर्किल के गांवों में इसी के पानी से सिंचाई करते हैं।

जम्मू में जसोती के आगे पहाड़ियों से उज्ह नदी निकलती है। यह नदी जिले में पठान कोट तथा शंकरगढ़ तहसीलों की सीमा बनाती है। उज्ह बचेरा और उज्ह छोटी इसकी शाखाएं हैं जो चक अधार कोट से होकर बहती हैं, और सकोल तथा बम्मियाल स्थानों पर उज्ह से मिल जाती हैं। वर्षा ऋतु में उज्ह नदी से बहुत पानी आता है। नदी के अधिकांश भाग में रेत है। नदी का रेत गहरा

रावी और उज्ह से सम्बंधित जलालिया या बाजह नदी है। यह नदी साल भर बहती रहती है। जम्मू की सीमा से निकलती है। चक अंधार के गांवों में इससे सिंचाई होती है। बम्बियाल के नीचे जैतपुर स्थान पर यह नदी उज्ह से मिल जाती है। साल भर यह नदी पार की जा सकती है। मास्टो, भट्टिया और सिहरवान नदियों का वर्णन पहले ही आ चुका है। मास्टो नदी मैराकलां स्थान पर पठानकोट तहसील में प्रवेश करती है और रावी का पानी लेकर भारियाल हरचन्दन स्थान पर प्रधान शाखा से मिल जाती है। भट्टिया कीरीखुर्द स्थान पर तहसील में प्रवेश करती है और नवीन तथा पुरानी दो शाखाओं में विभाजित हो जाती है और कुछ दूर बहने के पश्चात् फिर मिल जाती हैं और गिद्री स्थान पर पुरानी रावी नदी से मिल जाती हैं। सिहरवान नरोली स्थान पर तहसील में प्रवेश करती है और हम्जा स्थान पर उज्ह में गिरती है।

बेईन एक बड़ी रेतीली नदी है। यह शंकरगढ़ के उत्तर जम्मू से निकलती है और तहसील के मध्यवर्ती भाग में प्रवाह करने के पश्चात् रावी में गिरती है। यह तानाशाह और भवन के पानी से मिलाकर बनती है। यह नदी बहुत तेज बहने वाली है। यह रावी में अपने मिलने वाले स्थान को बदलती रहती है। १८६४ ई० में माधो स्थान पर १८९० में आदा स्थान पर मिलती थी और अब पैरेवाल स्थान पर एक बांध बनाया गया था जिससे उज्ह के बांध को तोड़ न दे। १८६३ ई० में इसने सचमुच ऐसा ही किया और बांध को तोड़कर बड़ी हानि उत्पन्न कर दी थी। उसके पश्चात् बांध को और अधिक मजबूत बना दिया गया अब बांध की देख रेख होती रहती है जिस से यह अपने पुराने मार्ग होकर बहती है। खन्ना स्थान पर होदला नदी तथा सरोच स्थान पर देह नदी इसमें आकर मिल जाती है जिससे नदी की चौड़ाई कहीं कहीं पर एक मील तक हो गई है। शीतकाल में नदी में पानी बहुत कम हो जाता है। अधिक ढालू होने के कारण वर्षा ऋतु में नदी का प्रवाह बहुत तेज हो जाता है और अचानक बाढ़ आ जाती है जिससे धन-जन को हानि पहुँच जाती है। धारा तेज होने के कारण यह नदी अपने किनारे की अच्छी मिट्टी बहा ले जाती है और उसके स्थान पर रेत डाल देती है।

होदला, करीर और बसन्तर (जो ऊपर की ओर भव्वी कही जाती है) इसी प्रकार की पहाड़ी नदियाँ हैं। यह सभी शंकरगढ़ के उत्तर से निकलती हैं और तहसील में दक्षिण तथा पश्चिम की ओर मार्ग बनाती हैं।

इन नदियों के अतिरिक्त रावी और व्यास नदियों के मध्य द्वाबा में और भी कई एक नदियाँ हैं।

द्वाबा वाली नदियों में किरण नदी है जो बहरामपुर के दलदली प्रदेश से निकलती है जहां बहरामपुर और बारी द्वाब नहर के बीच का पानी बहकर एकत्रित होता है। कहते हैं कि इस नदी के मार्ग को राजा किरण ने बनवाया था। कुछ लोग कहते हैं कि एक सांप इस मार्ग से गया था सांप के जाने से जो मार्ग बन गया उसी पर नदी बहने लगी। जिस प्रकार सांप टेढ़ा-मेढ़ा चलता है ठीक उसी भांति इस नदी का मार्ग है। जिले में इस नदी की समस्त लम्बाई ३६ मील है। इस नदी का पानी खारी है। राधान स्थान पर इसकी दोनों आदि शाखाएं आकर मिल जाती हैं। उसके बाद यह नदी रावी की समानान्तर बहती है और अमृतसर जिले में प्रवेश कर जाती है जहाँ इसे सक्की कहते हैं। गुरदासपुर तहसील में इससे काटकर कलनौर नहर रहीमाबाद से बनाई गई है जिससे ३२० एकड़ भूमि तथा दूसरी नहर बटाला स्थान से काट कर बनाई गई है जिससे १,२२० एकड़ भूमि की सिंचाई होती है।

कसूरनाला गुरदासपुर के ६ मील दक्षिण से आरम्भ होता है। यह इस जिले तथा अमृतसर जिले होकर बहता है और बटाला तथा तरन तारन स्थानों को पार करता हुआ लाहौर जिले में प्रवेश प्रवेश करता है और कसूर के समीप व्यास नदी के पुराने मार्ग में मिल जाता है। बटाला में यह पुरानी बस्ती के नाम से प्रसिद्ध है। अधिक वर्षा होने पर इससे तहसील को काफी हानि पहुँच जाती है।

नदी की तली के ये रोड़े कहीं चट्टानों के बने होते हैं जो ऊँचे पर्वतीय प्रदेश से बहकर आते हैं। यह पत्थर फर्श तथा दीवार बनाने का काम देते हैं। खराब चूने के काम के लिये स्थानीय लोगों द्वारा जला दिये जाते हैं।

सिरमूर तथा लोअर सिवालिक पहाड़ियों से मकान बनाने का पत्थर निकाला जाता है। कंकड़ जिले की भूमि में कम पाया जाता है जो कुछ मिलता भी है वह खराब होता है।

शङ्करगढ़ का भरारी प्रदेश हिमालय का ढालू प्रदेश नहीं है। जैसा कि मान चित्र के देखने से अनुमान किया जाता है। इसका अपना प्रवाह क्षेत्र ही अलग है जो उत्तरी सीमा होकर आता है इस क्षेत्र में गोले पत्थर सब कहीं पाए जाते हैं। एक दो स्थानों पर जैसे कि मसरूर में मुलायम बलुआ पत्थर मिलता है। इस भाग की पर्वतीय श्रेणी शायद सिवालिक पहाड़ियों का ही अंग है।

जिले की शेष भूमि साधारण कछारी भूमि का मैदान है।

कीकर, फुलाई, सिरिस, शीशम, जामुन, फगवाड़ा गूलर, बोर, पीपल, आम, तूत, बैर आदि के वृक्ष साधारण रूप से पाये जाते हैं।

खैर, बिल, कचनार, पलाश, अमिलतास, तून, लसोढ़ा, बरन, पालक, बकायन, चर और बहेड़ा के वृक्ष जिले में कम संख्या में हैं। पर पठान कोट में बहुतायत से वर्तमान हैं। पठान कोट में ताड़ के वृक्ष बहुत हैं। महुवा तथा नीम के वृक्ष कहीं कहीं मिलते हैं।

सेमर, चिरुल, चार, कोकोन, पुतागन, मौव, पुना, चमरोर, धामन, रैनो, काहू, गून, आमला, पनसारा, चिरौंजी, हड़ा, अर्जुन, रेठा, इमली, झंड आदि के वृक्ष भी समान रूप से सब कहीं मिलते हैं। प्रत्येक भांति के बांस बहुतायत से जिले में पाये जाते हैं।

आम और तूत के अतिरिक्त संतरा, मीठा और खट्टा नीबू, चकोतरा, अलूच, लोकाटे, आड़ू अमरूद, नाशपाती, अनार और केर वाटिकाओं में उगाया जा सकता है।

माधोपुर तथा शाहपुर के समीपवर्ती प्रदेश की पथरीली भूमि में बेर और आम के वृक्ष खूब उगते हैं। नहरों के प्रदेश में शीशम, तून और जामुन के वृक्ष अधिक होते हैं। तूत के वृक्ष सब कहीं बड़ी संख्या में होते हैं। पर इसकी लकड़ी काम की नहीं है। जामुन और सेमर की लकड़ी चूंकि पानी में अधिक समय तक टिकती है इसलिये उसका प्रयोग होता है। फुलाई और काहो की लकड़ी बड़ी भारी होती है और बड़ी मजबूत मानी जाती है। सिरस की लकड़ी के कोल्हू बनाये जाते हैं। पर इसमें दीमक बहुत जल्द लग जाती है। शीशम और फुलाई की थाली पक्की लकड़ी में दीमक नहीं लगती है।

बुयात, कंडियारी, लेह बनस्पतियां चम्बों के किनरे अधिक पाई जाती हैं। दूब अच्छी तथा असर भूमि में पाई जाती हैं। जार सब कहीं उगती है। कसरेला तथा बेनकू दलदली प्रदेश में उगती है। बेनकू पशुओं के लिये जहरीली घास है। डोघ और महना घासें चारा के लिये बड़ी उपयोगी हैं और शङ्कर गढ़ में खूब उगती हैं। नम खेतों में सेंभी घास खूब उगती है। नहरों के तट पर भांग का पौधा उगता है। आक सब कहीं होता है। पठान कोट में भांग मेंदू, बासाती और गारना घासों का बन सा उग आता है।

व्यास तथा नहर के मध्य गुरदासपुर के उत्तर तथा पठान कोट तहसील के दक्षिण-पश्चिम बनों में नीलगाय पाई जाती है। इन बनों में तथा पठान कोट के पर्वतीय प्रदेश और डलहौजी के निकट तेंदुआ पाए जाते हैं। जम्मू से सीमा पार कर के कभी कभी काले हिरण भी आ जाते हैं। कहनुवां दलदली प्रदेश में बनैले सुअर बहुत होते हैं। बारी द्वाब के उत्तरी भाग में बन्दर बहुत पाए जाते हैं जो फसल को बहुत हानि पहुँचाते हैं। डलहौजी में भूरे बन्दर तथा लंगूर बहुत हैं। शिकार वाली चिड़ियां और खासकर पानी वाली चिड़ियां बहुत पाई जाती हैं। कड़ाकुल, जंगली बतख, सारस आदि पानी वाले स्थानों में पाए जाते हैं। जाड़े के दिनों में खंजन पक्षी आजाते हैं। बनो तथा चम्बों में और नदियों की तराई में भांति भांति के पक्षी पाए जाते हैं। शिकार की जाने वाली चिड़ियों की इस जिले में बहुतायत है।

जलवायु तथा वर्षा

इस जिले की जलवायु केन्द्रीय पञ्जाब की अपेक्षा अधिक विषमय है। यहाँ पर पहाड़ियों के होने के कारण वर्षा अधिक होती है और ऊपरी पहाड़ों से गरमी के दिनों में भी ठंडी हवायें आ जाया करती हैं। शङ्करगढ़ और बाटला के वह भाग जहाँ सिंचाई नहीं होती है स्वास्थ के लिये बड़े अच्छे प्रदेश नहीं हैं। जहाँ सिंचाई होती है वह स्थान स्वास्थ के लिये अच्छे नहीं है। चक अंधार के बहुतायत पानी वाले स्थान, कांडी, और पठान कोट का पहाड़ी प्रदेश स्वास्थ के लिये हानिकारक स्थान हैं। इन स्थानों में भांति भांति की बीमारियां लोगों को हुआ करती हैं। पहाड़ी प्रदेश के आदि निवासी थक्कर राजपूतों का धीरे धीरे अंत होता जा रहा है। किसी किसी वर्ष तो मलेरिया बुखार से जिले में बहुत लोग मर जाते हैं। पठान कोट औरगुरदास पुर तहसीलों में मलेरिया से अधिक लोग पीड़ित होते हैं।

बटाला तहसील में साल में लगभग २७ इंच, गुरदासपुर तहसील में लगभग ३७ इंच, शंकरगढ़ तहसील में लगभग ३५ इंच और पठान कोट में लगभग ४४ इंच वर्षा साल में होती है। वर्षालगभग साल भर होती है पर जुलाई और अगस्त के महीने में अधिक पानी बरसता है। शीतकाल में भी वर्षा खेती के लिये काफी हो जाती है। पहाड़ी प्रदेश में अधिक वर्षा होती है जैसे जैसे पहाड़ी प्रदेश से स्थान दूर होते जाते हैं वैसे वैसे वर्षा भी कम होती जाती है। किसी किसी वर्ष वर्षा की कमी से खेती को अधिक हानि भी हो जाती है।

नहरों की सिंचाई के कारण अब इस जिले में खरीफ की फसल वर्षा पर बहुत कम निर्भर करती होती है और शंकरगढ़ तहसील की बरानी भूमि वाले प्रदेश वर्षा न होने पर सूखे रह जाते हैं और वहां साल में एक भी फसल तयार नहीं हो पाती।

१६०५ ई० में जिले में भूचाल आया था जिससे नगरों में कुछ हानि हुई थी। जिले में १८७१ तथा १८७६ ई० में भीषण बाढ़ आई थी जब कि जिले में विशेष कर गुरदासपुर तहसील के बहुत से गाँवों में पानी भर गया था और गाँव बह गये थे। कभी कभी वर्षा में पहाड़ी नदियों के तटीय गांवों को बाढ़ से अब भी पीड़ा पहुँच जाया करती है।

इतिहास

जिले के प्राचीन इतिहास का अधिकांश भाग अज्ञात है। १३५३ ई० में दिल्ली का राजा फीरोज तुगलक कालानौर आया था। फीरोज नहर बनवाने का बड़ा शौकीन था। दिल्ली राजाओं के समय में कालानौर बड़ा प्रसिद्ध था। कालानौर नगर के बाहर पक्का चबूतरा बना हुआ है, जहाँ पर १५५६ ई० में अकबर गद्दी पर बैठा था। इस चबूतरे के चारों ओर एक सुंदर वाटिका बनाई गई है। बाग में एक हमाम तथा भूल,भुलैया बने थे जो अब नष्ट हो गये हैं। यहाँ अकबर की कचेहरी और महल के भग्नावशेषों में केवल चार बड़े कुयें, बहुत से छोटे कुएं तथा एक सुन्दर आम का वृक्ष शेष रह गये है।

कहनुवाँ के तालों में पक्षियों के सुन्दर शिकार के हेतु जहांगीर दिल्ली सम्राट बहुधा कहनुवाँ आया करता था। यहां पर भगवान जी नामक एक वैरागी प्रसिद्ध साधु रहा करते थे। एक बार जब सम्राट जहांगीर यहाँ आये तो उन्होंने साधु से मिलने की इच्छा प्रकट की। जब साधु को पता चला, तो वह चूंकि सम्राट से नहीं मिलना चाहता था इसलिये पृथ्वी के भीतर भीतर १० मील दूर पिंडेरी चला गया और वहां निकला। जहांगीर ने भी उसका पीछा किया। तब साधु उसी भांति चक्की नदी पार करता हुआ कांगड़ा जिले के धाम-ताल स्थान पर चला गया। इस कहानी के प्रमाण में कहनुवां तथा पिंडोरी की गुफाएं अब भी लोग दिखाते हैं और कहानी सुनाते हैं। उसके पश्चात् जहांगीर दूसरी बार पिंडोरी में भगवान जी के चेले नारायण से मिले और कुछ प्रश्न किये पर सम्राट को प्रश्नों का उत्तर नहीं मिला क्योंकि भगवान जी उस समय समाधि लगाए हुये थे। जिसके कारण नारायण को बोलने की आज्ञा नहीं थी। इस पर सम्राट को क्रोध आया और वह नारायण को लाहोर ले गया और वहां उसे सात

प्याले विष पिलवाया। यह विष इतना गहरा प्राण घातक था कि एक बूंद से एक बड़ा हाथी जगह पर खड़ा खड़ा मारा जा सकता था पर नारायण को कुछ भी हानि न हुई। भगवान जी के आने पर सारा मामला सम्राट को समझाया गया। सम्राट को सारा हाल जान कर इतना आश्चर्य हुआ कि उसने पिंडौरी में एक मन्दिर बनवा दिया। इस मन्दिर का आकार मुसलमानी टाम्ब की भांति है। इस मन्दिर में सम्राट ने २० हजार की जागीर लगा दी। यह मंदिर अब भी वर्तमान है।

१६३९ ई० में प्रसिद्ध इंजीनियर अली मर्दन खां ने शाहजहां के काल में शाह नहर निर्माण आरम्भ किया इस नहर द्वारा वह रावी नदी का पानी शालीमार वाटिकाओं को लाहोर के समीप ले जाना चाहते थे। उसके बाद फजल खां ने इस नहर की पूर्ति की सिक्खों ने हांसली नहर बनवाई और फिर वर्तमान काल में बारी द्वाब नहर बनाई गई है।

मुगल साम्राज्य के अवनति तथा सिक्खों के उत्थानकाल में इस जिले ने बहुत से उलट फेर देखे। १४६९ ई० में गुरु नानक का जन्म लाहोर जिले में हुआ। उनका व्याह १४८९ ई० में सुलखानी के साथ हुआ। वह बटाला तहसील के पुखीकी गांव के मूला खत्री की पुत्री थी। इस व्याह से उनके श्री चन्द्र और लखमीदास दो पुत्र हुये थे जिन्होंने उदासी तथा वेदीस समुदाय को जन्म दिया था। गुरदासपुर तहसील में गाल्री नामक गांवों में जो कि ट्रिम्मू घाट जाने वाली सड़क पर स्थित है एक शीशम का बाग है। कहा जाता है कि इसमें एक वृक्ष है जो श्रीचन्द्र की तातुवन से उगा था जिसको उन्होंने वहाँ गाड़ दिया था। यहां वैसाखी पूर्णिमा को प्रतिवर्ष मेला लगा करता है। कहते हैं कि नानक गुरु अपनी ससुराल पखोकी गाँव में बहुधा रहा करते थे। १५३८ ई० में कर्तारपुर नामक गांव में उनकी मृत्यु हुई जो रावी नदी के दूसरे तट पर पखोकी से चार मील की दूरी पर स्थित है। जहाँ पर नानक बाबा की मृत्यु हुई थी वहां पर एक छोटी सी समाधि बनी हुई हैं। इसी स्थान पर गुरु नानक के मरने पर हिन्दू तथा मुसलमानों के मध्य उनके शव के बारे में झगड़ा उत्पन्न हुआ था। झगड़ा खड़ा होने पर लाश लुप्त हो गई थी। जिस शीशम के वृक्ष के नीचे नानक साहब बैठा करते थे उसे उनकी समाधि के साथ साथ लगभग ७७ वर्ष हुये रावी नदी बहा ले गई है। अब उसकी याद में तहली साहब की समाधि पखोकी के समीप बनाई गई है पर धार्मिक दृष्टि से उसका कोई अधिक महत्व नहीं है। पखोकी को अब लोग डेरा नानक के नाम से पुकारते हैं। डेरा नानक वेदीस मत की राजधानी है। यहां एक धार्मिक उदासी समुदाय की समाधि या दर्बार है।

सिक्खों के तीसरे गुरु अमर दास श्री गोविन्द पुर में रहा करते थे। उनके वंशज भल्ला बावस अब भी वहां रहते हैं। छठें गुरु हरगोविन्द ने हरगोविन्दपुर को पुनः बसाया था। यह प्रथम सिक्ख गुरू थे जिन्होंने अस्त्र धारण किया था। इस हरगोविन्दपुर का पहले नाम रहीला था। इस शब्द का उच्चारण प्रातःकाल करना बड़ा अशुभ माना जाता था कहते हैं कि गुरुओं का श्राप था कि "जो कहे राहीला, उस दा न तब्बर न कबीला" अर्थात् जो रहीला शब्द कहेगा उसके स्त्री या बच्चे न रहेंगे। इन गुरु के धनुर्विद्या तथा शूरवीरता की प्रसंशा अब भी लोगों के मुँह से सुनी जाती है। कहते हैं कि जब वह अपने धनुष पर बाण चढ़ा कर श्री गोविन्दपुर से मारते थे तो वह डमडम की समाधि तक जाता था जो आध मील से अधिक दूरी पर अमृतसर वाली सड़क पर स्थित है।

सातवें गुरु हर राय का भी सम्बन्ध इस जिले से है। कहते हैं शंकर गढ़ तहसील के पश्चिम एक तहली साहब (शीशम का वृक्ष) अब भी वर्तमान है जिसे उन्होंने एक डेरे की खूंटी बना कर गाड़ दिया था। यह वृक्ष अब गिर गया है इसके तने की मोटाई से पता चलता है कि सचमुच यह वृक्ष बहुत पुराना है। सातवें गुरू की मृत्यु १६६१ ई० में हुई थी। १७०६ में गुरू गोविन्द सिंह के पश्चात् कट्टर बन्दा साहब हुये। उन्हों ने इस जिले को आक्रमण करने के लिये अपना केन्द्र बनाया था। १७११ ई० में बहादुरशाह ने बन्दा के विरुद्ध स्वयं

एक सेना लेकर चढ़ाई की थी पर उसका कोई बड़ा प्रभाव नहीं पड़ा। १७१६ ई० में अब्दुल समद खां या दिलेर जङ्ग ने बन्दा को परास्त कर के लोहगढ़ के दुर्ग में बन्द कर दिया था। उस समय बन्दा के सैनिक जिन्हों ने मुसलमान होने से इनकार किया था, कत्ल कर दिये गये थे पर बन्दा और उसके कुछ गिने चुने साथी छोड़ रक्खे गये थे जिससे उन्हें दिल्ली में ला कर और अधिक वेदना देकर मारा जाय। कुछ लोग कहते हैं कि बन्दा का लोहगढ़ वर्तमान गुरदासपुर नगर में ही था, कुछ का कथन है कि नहीं वह लोहगढ़ नामक गांव में था जो दीनानगर के समीप स्थित है। पर भाई राम कृष्ण सिंह खत्री के कथनानुसार गुरदासपुर से एक मील उत्तर की ओर बाथवाला गांव में जो एक भीटा है वहीं पर बन्दा का लोहगढ़ था क्योंकि अब भी जब कभी वर्षा होती है और भीटें की मिट्टी बहती है तो मुद्राएं, लोहे की कीलें तथा छोटे चाकू मिलते हैं।

१७३८ ई० में नादिरशाह ने भारत पर आक्रमण किया जिससे दिल्ली की सरकार के शासन में गड़बड़ी उत्पन्न हो गई और सिक्खों का कोप बढ़ गया। इसी समय अदीना बेग की भी उन्नति होने लगी। अदीना बेग चन्नू का लड़का था चन्नू (आर्य) गुजरान वाला जिले के चरकपुर का निवासी था। कुछ समय तक अदीना बेग होशियार पुर में रहा उसके पश्चात् वह इलाहाबाद एक सिपाही बन कर चला गया। वहां से लुधियाना मालगुजारी का अफसर बनाकर भेजा गया। उसके पश्चात् वह जकरिया खां द्वारा बहरामपुर का गवर्नर बनाया गया। और जालंधर द्वाब उसके अधिकार में कर दिया गया। उसने दोस्ती नदी के तट पर दीना नगर बसाया था। यह नगर उसने १७३० ई० में बसाया था। वह वहीं रहने लगा था और वहीं से अपना शासन किया करता था। जकरिया खां के बाद यहिया खां तथा शाहनवाज खां जकरिया के लड़के लाहौर के शासक मोहम्मद शाह अहमदशाह और आलमगीर द्वितीय के समय में रहे। इस काल में अदीना जालंधर का गवनर बना रहा। जब १७४७ ई० में शाहनवाज खां के निमंत्रण पर अहमद शाह अब्दाली ने भारत पर आक्रमण किया तो भी वह गवर्नर था। यद्यपि अहमद शाह की पराजय हुई और वह मार भगाया गया तो भी दिल्ली के शासन में और अधिक त्रुटि उत्पन्न हो गई। अदीना बेग के इशारे से सिक्ख लोगों ने लगभग समस्त गुरुदासपुर की भूमि पर अधिकार जमा लिया था। केवल नगर ही दिल्ली सम्राट के गवर्नर के हाथ में शेष रह गये थे। जब अदीना ने देखा कि उनकी शक्ति अधिक बढ़ गई है। तो लाहौर के शासक के कहने के अनुसार १७५२ ई० में उसने सिक्खों को सतलज के तट पर मखोवाल स्थान परभीषण लड़ाई में परास्त कर दिया।

चूँकि अदीना की चाल सदैव दो रंगी रहा करती थी इसलिये थोड़े समय के पश्चात् ही उसने रामगढ़िया मिसिल के नीव डालने वाले सरदार जस्सा सिंह को बुलाकर अपने यहां नौकर रख लिया। आलमगीर द्वितीय के समय में जब वज़ीर गाज़ी उद्दीन ने लाहौर पर अधिकार प्राप्त कर लिया तो अदीना लाहौर का गवर्नर बनाया गया। लेकिन अब्दाली के लौटने पर १७५६ ई० में वह पुनः भगा दिया गया और जब तक शाह (१७५७) वापस नहीं गया पहाड़ियों पर छिपा रहा। उसके पश्चात् सिक्खों की सहायता लिये फिर जालंधर द्वाब का गवर्नर बन गया। जब उसे हटाने के सेना भेजी गई तो उसे उसने परास्त कर दिया पर वज़ीर जहां खां के आने पर हट गया। सिक्ख लोग जस्सा सिंह की सर्दारी में अब इतने शक्तिशाली हो गये थे कि पठानों को लाहौर से भगा सकते थे इसलिये उन्होंने अदीना बेग से छुटकारा लेने की सोची। सिक्खों ने मरहठों से रुपया देकर सहायता मांगी उन्होंने सहायता देना स्वीकार कर लिया इसलिये अदीना बेग की सहायता से तिमूरशाह को उन्होंने लाहौर से मार भगाया और अपने साथी को पञ्जाब का गवर्नर बना दिया जिसकी राजधानी बटाला में बनाई गई। शीघ्र ही सिक्खों का सिक्का मुलतान और कांगड़ा तक जम गया। इस पर मंझा सिक्ख अदीना बेग के विरुद्ध हो गये परन्तु वे परास्त कर दिये गये। १७५८ ई० में उसकी मृत्यु

हो गई। अदीना बेग के मर जाने पर सिक्खों के सामने का रोड़ा हट गया और शीघ्र ही वह समस्त पञ्जाब में फैल गये।

१७५८ ई० के पश्चात् रामगढ़िया तथा कन्हैया मिसल में झगड़ा हो गया १८०८ ई० में कन्हैया को शक्ति को महाराजा रणजीत सिंह ने तोड़ दिया और इस प्रकार इस जिले की समस्त भूमि का मालिक हो गया। मई और जून महीनों से महाराजा रणजीत सिंह दीना नगर में रहा करते थे। १८३८ ई० में मैकनाटेन मिशन ने महाराज से दीनानगर में भेंट की और शाहजहां को काबुल की गद्दी पर बैठाने का निश्चय किया गया। महाराणा की शादी बटाला निवासी गुरबक्स सिंह कन्हैया की पुत्री महताब कौर से हुई थी और उनके पुत्र खड़गसिंह की शादी फतेहगढ़ निवासी जयमलसिंह कन्हैया की पुत्री चन्द्र कौर से हुई थी। महाराणा ने भावरा निवासी एक जाट की पुत्री महताब कौर से भी शादी की थी जो अपनी सुन्दरता के लिये बहुत प्रसिद्ध थी। कांगड़ा की विजय के पश्चात् महाराणा ने डुनेरा के निवासी पाठानिया राजपूत मीरयादमा की पुत्री राज देवी से शादी की थी। इनके अतिरिक्त शकरगढ़ तहसील में महाराणा ने अपनी तीन और शादियां की थीं जैसा कि पंडित ने उसे सलाह दी थी कि इन शादियों से उसकी और अधिक उन्नति होगी। इन रानियों में से अंतो वाली की रानी देवकी खुर्द थी जिसने अंतो वाली एक ठाकुर द्वारा बनवाया था। दूसरी रानी मुसम्मात सैदानो थी और तीसरी चांदवाल की हरदेवी नामक स्त्री थी जो महाराजा के साथ सती हो गई थी। महाराजा की यह शादियां व्यापारिक थी और रानियों के मूल्य के रूप में थोड़ी सहायता के अतिरिक्त उनके माता पिता को और कुछ प्राप्त नहीं हुआ था।

१८४८ ई० में यह जिला अंग्रेजों ने ब्रिटिश भारत में मिला लिया था १८५२ ई० में शाहपुर कांडी, और १८६९ ई० में नूरपुर इस जिले में मिलाया गया। सन् १८४८ तथा १८४५ ई० में नूरपुर के राजा बीरसिंह के लड़के राजाराम सिंह ने नूरपुर लेने का प्रयत्न किया था। १८४४ ई० में वह जम्मू की पहाड़ियों से तेजी के साथ बढ़ा और शाहपुर किले पर अधिकार प्राप्त कर लिया। पर वहां से वह शीघ्र भगा दिया गया और भाग कर उसने बसोहली के सिक्ख कैम्प में शरण ली थी। जनवरी १८४९ ई० में राजा शेर सिंह से उसे दो सिक्ख बैटेलियन मिलीं जिससे डल्लाधर पहाड़ी श्रेणी में डल्ला के टिक्का में आकर वह डट गया। जानलारेन्स ने एक बड़ी सेना के साथ उसका सामना किया और उसे परास्त कर के कैद कर लिया था।

जब १८५७ ई० में भारत का प्रथम स्वतंत्रता संग्राम छिड़ा तो यहां के डिप्टी कमिश्नर मि० नेसमिथ ने ७ लाख रु० की रकम जो गोविन्द गढ़ के किले में थी भेजना चाहा। उसके पश्चात् यहां की ५९ सड़कें देशी पैदल सेना को अंग्रेजों ने अमृतसर भेज करके भंग कर देना चाहा। इसलिये इस सेना के स्थान पर योरुपीय लोगों को रखकर सेना को को हटा दिया बारी द्वाब नहर में बहुत से हिन्दुस्तानी लोग काम कर रहे थे, जिसका प्रधान केन्द्र माधोपुर में था। ठीकेदारों के अधिकांश काम करने वाले हिन्दुस्तानी थे। इन सभी स्थानों पर कड़ी निगाह रक्खी गई जिससे किसी प्रकार की गड़बड़ी उत्पन्न न हो। नदियों की रखवाली करनी कठिन थी क्योंकि नदी में बहुधा बाढ़ अचानक आजाती थी। फिर भी रक्षा के ध्यान से सभी नावें डुबा दी गईं तथा तख्ते बर्बाद कर दिये गये। ७ जुलाई को झेलम में गड़बड़ी फैल गई इस समाचार को पाकर यहां के अंग्रेज बहुत घबड़ा उठे थे। ९ जुलाई को यहां के अधिकारियों को समाचार मिला कि ४६ तीसवीं देशी पैदल सेना तथा ९ वीं लाइट कैवेलरी सेना ने सियालकोट से विद्रोह कर दिया है और वह गुरदासपुर की ओर बढ़ रही है। यह समाचार ब्रिगेडियर जनरल निकोल्सन को भी दे दिया गया था, जो अमृतसर में अपनी चलती फिरती सेना लिये पड़ा था। उसे प्रातः काल समाचार मिला तो वह जो कुछ सेना थी उसे लेकर गुरदासपुर की ओर चल पड़ा। उस दिन अमृतसर और लाहौर के सभी एक्के तथा गाड़ियां पकड़ ली गई और निकोल्सन

के पास भेज दिये गये। ११ जुलाई को इन सवारियों पर अंग्रेजी सेना के सैनिक गुरदास पुर पहुँचाये गये। बटाला में मिस्टर राबर्टस कमिश्नर तथा कैप्टन पर्किन्स असिस्टेन्ट कमिश्नर अमृतसर इस सेना से मिल गये थे। दूसरे दिन निकोल्सन को समाचार मिला कि भारतीय स्वतंत्रता के सैनिकों ने रावी नदी को ट्रिम्मू स्थान पर पार कर लिया है। इसलिये वह अपनी सेना लेकर आगे बढ़ा और रावी नदी के तट पर उससे मुठभेड़ कर दी। अंग्रेजों ने नवीं, ४६ सवीं और ५२ वीं सेना की सहायता से घोर संग्राम करने के पश्चात् हिन्दुस्तानियों को पीछे हटा दिया। वे लोग एक द्वीप में जाकर रुके और अपने बाल बच्चों को एकत्रित किया जिससे उनकी रक्षा की जा सके पर अंग्रेजों ने उन्हें वहां भी न छोड़ा और १६ जुलाई को उनपर आक्रमण कर दिया जिससे द्वीप में ठहरे हुए शरणार्थियों में बड़ी गड़बड़ी फैल गई। अधिकतर लोग तो वहीं गोली तथा तोप के शिकार हो गये। स्त्रियां तथा बच्चे सभी मार डाले गये। कुछ लोगों ने नदी पार करके जान बचानी चाही पर वह या तो नदी में डूब गये या गोली के शिकार बनाये गये जो लोग शेष बचे वह गिरफ्तार कर लिये गये और बाद में बन्दूकों के शिकार फौजी नियम के अनुसार बना दिये गये। इस प्रकार भारतीयों के खून से रंगी हुई नशे में चूर अंग्रेजी सेना १८ ता० को गुरदासपुर लौटी।

यह लड़ाई ठाकुरपुर और बजीर पुर की सीमा पर हुई थी। वहां पर एक गहरा नाला है जिसे काला पानी कहते हैं अब भी जब किसान खेत जोतते हैं तो कभी कभी उन्हें घोड़ा आदि की हड्डियां मिल जाती हैं यह हड्डियां उन्हीं बहादुर भारतीय सैनिकों के घोड़ों की होती है जो वहां लड़ाई में मारे गये थे। जो योरुपीय लोग इस लड़ाई में मारे गये थे। वह गुरदासपुर में लाकर गाड़े गये हैं। गांवों में जो भारतीय सैनिक पकड़े गये वह गुरदासपुर लाये गये जहां कैप्टन ऐडम्स तथा नीसमिथ ने उन्हें फांसी पर लटकवा दिया। जो भारतीय सैनिक भाग कर जम्मू गये वह पकड़ कर अंग्रेजों के हवाले कर दिये गये और लैफ्टिनेन्ट मैकमाहों तथा कैप्टन ऐडम्स ने भीखो चक में उनका मुक़दमा किया और फांसी की सज़ा दी। इनमें से कुछ लोग भाग निकले पर बाद में मिस्टर नाक्स ने उन्हें पकड़वा कर फांसी पर लटकवा दिया। अगस्त के प्रथम सप्ताह में छब्बीसवीं सेना के २५ बचे सैनिक लाहोर से जान बचाते हुये गुरदास पुर जिले के दलदली प्रदेश में प्रवेश कर आये। जब अंग्रेजों को इसका समाचार प्राप्त हुआ तो एक बड़ी सेना इनकी खोज में भेजी गई कारबेट, हन्ना और जैक्सन आदि हत्यारों ने उन्हें भी जाकर वहीं मार डाला इस प्रकार समस्त भारतीय सैनिक जिनमें कुछ भी स्वतंत्रता की गंध थी सभी मार डाले गये। जब शांति स्थापित हो गई तो अंग्रेजों ने देखा कि मरे हुये भारतीय सैनिकों का बुरा प्रभाव जिले के निवासियों पर पड़ रहा है इस लिये आवश्यक है कि जिले के लड़ाकू लोगों को किसी भांति मिला लिया जाय। साथ ही साथ बिना भारतीय सैनिकों के कार्य भार चलाना भी असम्भव था। इन सभी बातों का ध्यान रखकर हत्यारे एडम्स तथा नीसमिथ ने जिले के चापलूस मानिन्द आदमियों को बुलाया और सम्मेलन में निश्चय किया कि फिर से सेना में भरती की जावे। उसके पश्चात् सेना में फिर भारतीय लोगों की भरती की गई।

सोब्रांव के युद्ध के पश्चात् ८ मार्च सन् १८४६ ई० को लाहोर की सन्धि हुई जिसके अनुसार लाहोर के दरबार ने जालंधर द्वाब और कांगड़ा जिले को अंग्रेजों को सौंप दिया। कांगड़ा जिले की सीमा उसी समय बनाई गई। अप्रैल १८४९ ई० में समस्त पञ्जाब प्रान्त को अंग्रेजों ने ब्रिटिश भारत मिला लिया गया। तो मि० सी० बी० सौन्डर्स्ट को आज्ञा मिली कि वह अदीना नगर का नया जिला बनावें जिसमें बारी द्वाब का दो तिहाई भाग और अमृतसर का उत्तरी भाग सम्मिलित हो। अदीना नगर ही राजधानी बनाई गई। उस समय अदीना नगर जिले में समस्त गुरदासपुर का जिला, बटाला तहसील का अधिकांश भाग और पठान कोट के ८८१ गांव सम्मिलित थे। जुलाई १८५१ ई० में अदीना नगर से सिविल अफसर तथा सैनिक लोग बटाला भेज दिये गये वहाँ वे महाराजा शेरसिंह के

घर अनार कली में ठहराये गये। इस का मुख्य कारण अदीना नगर की जलवायु की खराबी थी। उसके पश्चात् देखा गया कि बटाला में बाढ़ का प्रकोप अधिक है इसलिये गुरदासपुर को दफ्तर हटाया गया और अंत में पहली मई सन् १८५२ ई० को जिले के सभी दफ्तर अदीना नगर से गुरदास पुर पहुँचा दिये गये।

उसी समय बरी द्वाब नहर में काम लगा दिया गया और १८५० ई० में यह सोचा गया कि नहर का समस्त प्रवाह एक ही ज़िले में रक्खा जाय। इसलिये मार्च १८५२ ई० में शाहपुर (रावी पर) से पठान कोट (चक्की पर) के ऊपर तक वाले ८३ गाँव गुरदासपुर में मिला दिये गये। १८५३ ई० में तहसीलों की सीमाओं को फिर से दुहराया गया और शंकरगढ़ तहसील सियाल कोट से हटा कर इस जिले में मिलाई गई। गुरदासपुर और बटाला तहसीलों की सीमाएं निर्धारित की गई और अमृतसर से १०७ गाँव निकाल कर बटाला तहसील में कर दिये गये और रावी तथा उज्ह नदी के डेल्टा को जिसमें ६९ गाँव थे शंकरगढ़ तहसील से निकाले गये। १८१ गाँव गुरदासपुर तहसील से लिये गये और कांगड़ा के गाँवों को लेकर एक अलग तहसील बनाई गई जिसकी राजधानी पठान कोट की गई। इस प्रकार ज़िले में चार तहसीलें, पठान कोट तहसील उत्तर-पूर्वी. में शकरगढ़ तहसील ट्रांस-रावी चक अंधार को छोड कर, गुरदासपुर बारी द्वाब का मध्यवर्ती भाग, और बटाला बारीद्वाब का दक्षिणी भाग बनी।

१८५३ ई० में चम्ब राज्य से डलहौजी सैनीटोरियम मिला। १८६२ ई० में वह कांगड़ा से निकाल कर गुरदासपुर में मिला दिया गया। अप्रैल १८६७ ई० में बटाला तहसील अमृतसर में मिला दी गई पर अप्रैल १८६६ ई० में वह अमृतसर से अलग करके फिर गुरदासपुर में कर दी गई।

दर्शनीय स्थान

मुकेश्वर स्थान रावी नदी के ऊपर शाहपुर से १ मील की दूरी पर स्थित हैं। यहां पर कुछ पहाड़ी गुफाएँ तथा मन्दिर हैं। कहा जाता है कि ये गुफाएँ द्वापर युग (पाँडव काल) की हैं। कहते हैं कि इन गुफाओं का भ्रमण अर्जुन और पारवती ने ही किया था पहाड़ी गुफा से कुछ ऊपर की ओर अर्जुन का चूल्हा बना है। गुफाओं और मन्दिर की बनावट से पता चलता है कि ये बहुत प्राचीन काल की स्मृतियां हैं। प्रधान गुफा के द्वार पर जो सिलालेख है उसे कहा जाता है कि किसी दक्षिणी भाषा में लिखा गया है पर आज तक उसका अनुवाद नहीं हुआ है। वर्तमान समय में कर्नाल के पहाड़ी मन्दिर का हरदेवसरन नामक साधु नदी की बाढ़ में बहकर आया और इस गुफा में आलगा नदी में ९ दिन की बाढ़ रही जिसके कारण साधु गुफा में कैदी की भांति बिना अहार के पड़ा रहा। अचानक वहां गद्दी के चमड़े के बोरे में भरा हुआ आटा बहकर साधु के पास आ लगा। साधु ने उसे देखा और उसी का सेवन कर के अपने प्राणों की रक्षा की थी।

सिकन्दर बादशाह ने भारत छोड़ने के पूर्व अपना अंतिम डेरा इसी जिले में व्यास नदी के तट पर डाला था। कालानौर का पक्का चबूतरा जिस पर अकबार की राजगद्दी १५५६ ई० में हुई थी उसका वर्णन किया जा चुका है। इसकी रक्षा अब पब्लिक वर्क्स डिपार्टमेन्ट की ओर से होती है। इसी के समीप अकबर के जनरल जमाल बेग की मज़ार।

कहते हैं कि अकबर काल में सिर मौर के राजा बसु, नगरकोट के राजा बुधसिंह और जम्मू के राजा परशुराम ने मिलकर अकबर के विरुद्ध विद्रोह किया था। लाहौर से इसके विरुद्ध जैन खां कोका की संरक्षता में एक सेना भेजी गई थी पर सफलता नहीं प्राप्त हुई तो ताज खां का पुत्र जमील बेग एक दूसरी सेना लेकर भेजा गया। वह लड़ाई में खेत रहा। उसकी शव कालानौर लाई गई और वहां उसकी समाधि बनाई गई। उसके पिता ताज खां ने फारसी में दुखद कविता लिखी और शिला लेख करा दिया। मुगल काल में कालानौर स्थान बहुत प्रसिद्ध था। कहा जाता है कि इस स्थान की नीव किसी हिन्दू राजा ने डाली थी। इसके समीपवर्ती भग्नावशेषों से इस बात का काफी सबूत भी

मिलता है। कालानार के समीप ही किरण नदी के तट पर एक शिव मन्दिर है जहां शिवरात्रि पर बड़ा भारी मेला लगता है।

कहनुवां में कुछ पुरानी इमारतें हैं। इनमें प्रधान शाहबुरहान की मजार, गुफा आदि हैं। शाहबुरहान एक मुसलमान साधु थे यह जहांगीर बादशाह के समय में थे। भगवान जी साधु की गुफाएँ, सन्यासियों के मठ और योगिनी मन्दिर आदि प्राचीन तथा प्रसिद्ध हैं। नदी तट के समीप एक बावली है जो अभी अच्छी दशा में है। कहते हैं कि एक राजपूत सरदार के दो स्त्रियां थीं जो सदैव आपस में लड़ा करती थीं। वह उनके गृह युद्ध से परेशान हो गया। उसने यह बावली बनवाई और बावली के नीचे आने वाली सीढ़ियों के स्तम्भों के नीचे दोनों को गड़वा दिया जिससे वे शान्ति के साथ एक समीप सदैव रहें।

पिंडोरी का पुराना मन्दिर जिसे जहांगीर ने बनवाया है। यहां कांगड़ा तथा काश्मीर के शासक बहुधा आया करते थे। यहां पर १२ समाधियां हैं जो तेरह गद्दियों (गुरुओं) की हैं। इनमें से सब से अच्छी भगवान जी की, उनके दो चेलों नारायण जी, बाबा महेश दास जी और बाबा हरी राम जी की हैं। हरी राम जी धामताल को चले गये थे और वहां गद्दी स्थापित की थी। बाबा महेशदास जी की समाधि के बगल में उनके कुत्ते की समाधि है जिसे बाबा जी ने सवा मन अफीम चमत्कार दिखाने के लिये खिला दिया था। एक तांबे के पत्र पर जहांगीर द्वारा दी गई जागीर की शर्तें अंकित हैं वह तांम्र पत्र समाधि में सुरक्षित रक्खा है।

वहां शीशे का एक वर्गाकार टुकड़ा भी है जिस पर लेख अंकित है कहते हैं कि यह शीशा जादू का है और चौथे गुरु हरीराम जी के समय का है। कहते हैं कि इस समाधि की ५० या ६० शाखायें हैं जो समस्त भारत में फैली हुई हैं।

बटाला नगर की नींव राय रामदेव भट्टी नामक राजपूत ने १४३२ ई० में डाली थी। वह कपूरथला का निवासी था। वह तातार खां द्वारा सतलज और चनाब नदी के मध्यवर्ती प्रदेश का वाइसराय बनाया गया था और तातार खां को ६ लाख टैंक मालगुजारी देता था। रामदेव लाहोर के मुहम्मद कादिरी का चेला हो गया था। बाद में वह मुसलमान हो गया था। जिस जगह पर पहले नगर बनवाने का विचार राजा ने किया था वह ज्योतिषियों की राय से बदल दिया गया था। तभी से बटाला नाम नगर का पड़ा है। यहां पर रामदेव की समाधि है जो नगर के दक्षिण-पूर्व में स्थित है। अकबर काल में नगर के उत्तर-पूर्व में शमशेर खां ने एक सुन्दर सरोवर बनवाया और अनार कली नामक वाटिका लगवाई। सरोवर के समीप शमशेर खां की समाधि है। औरंगजेब के काल में मिर्जा मुहम्मद खां ने नगर में बाजार तथा दुकानें बनवाईं। काजी अब्दुल हक़ ने जामा मस्जिद बनवाई थी।

उस समय बटाला पवित्र नगर माना जाता था और शिक्षा का केन्द्र था। शहाबउद्दीन, बुखारी, शाह स्माईल, शाह न्यामत उल्लाह दाद आदि फकीर यहीं रहा करते थे। शहाब उद्दीन बुखारी की समाधि जिस भाग में स्थित है वहां अब भी बुखारी सय्यद रहते हैं। खान फतेहगाँव में मौज दरिया नामक फ़कीर की समाधि है।

फरुखसियर के समय में मुहम्मद फजल गिलानी सय्यद ने यहाँ एक कालेज स्थापित किया था जहाँ दूर दूर से विद्यार्थी आया करते थे। इस कालेज को बन्दा साहब ने नष्ट कर दिया था। यह नगर जो किसी समय बटाला शरीफ के नाम से प्रसिद्ध था आज बटाला शरीर के नाम से पुकारा जाता है क्योंकि अब यहाँ के कुछ निवासी बड़े बदमाश हो गये हैं जो हमेशा लूट मार में ही व्यस्त रहते हैं।

बटाला स्थान कन्हैय्या तथा रामगढ़ी सिक्ख मिसलों के मध्य झगड़े का कारण बहुत समय तक बना रहा। १७९८ से १८११ ई० तक कन्हैय्या मिसल की शासक गुरु गुरुबक्श सिंह की पत्नी सदकौर बटाला की शासक रहीं। आज भी बटाला निवासी महारानी सदकौर की याद करते हैं। महारानी द्वारा बनाये हुये महलों तथा स्थानों के भग्नावशेष अब भी बटाला में पाये जाते हैं। १८२० में महाराणा रणजीत सिंह ने सदकौर को बुलाया कि वह अपने राज्य का आधा भाग शे

सिंह तथा तारा सिंह को दे दे। पर रानी ने ऐसा करने से इन्कार कर दिया इस पर महाराजा रणजीत सिंह ने धोका देकर रानी पर विजय प्राप्त कर ली और उसे क़ैद कर दिया। बटाला तथा कौंटारपुर इलाक़े महाराजा ने शेरसिंह को दे दिये। १८३२ ई० में रानी की मृत्यु क़ैदखाने में हो गई। शेरसिंह जनवरी १८४१ ई० तक बटाला में रहा। बटाला और क़हनुवां के निवासी शेरसिंह की बहादुरी तथा धनुष विद्या का गान अब भी गाते हैं। बटाला के समीप अनारकली में शेरसिंह का महल भारतीय कला का बना हुआ है। शेरसिंह ने शमशेर खां की मसजिद को बदल कर अपना डेरा बना लिया था। जो अब भी वर्तमान है।

१७४४ से १७५४ ई० के मध्य बाबा नानक के वंशज बेदिस लोगों ने भूमि खरीद करके डेरा नानक नामक नगर की नींव डाली थी। जहां पर नानक बैठ कर ईश्वर का स्मरण किया करते थे उस स्थान पर उन्होंने एक कच्चा मन्दिर बनवाया। हैदराबाद दकन के वजीर दीवान नानक बख्श ने ४० हजार रुपया दान देकर कहा कि यह मन्दिर पक्का बनवा दिया जाय। उसके पश्चात् राजा चन्दो लाल ने मन्दिर के लिये काफी रुपया दिया। बेदिस लोगों ने १७६५ ई० में मन्दिर का बनवाना आरम्भ किया। १८२५ ई० में महाराजा रणजीत सिंह ने भी मन्दिर की पूर्ति के लिये बहुत धन दिया जिससे १८२७ ई० में मन्दिर बन कर तयार हो गया। रानी चान्द कौर जब गद्दी पर बैठी तो उसने मन्दिर के एक भाग को स्वर्ण पत्र से मढ़वाने की बात सोची और स्वर्ण पत्र से उसे नक्काशी कर मढ़वा दिया। इस प्रकार यह स्वर्ण मन्दिर बाबा नानक का बन गया। इसे दर्बार साहब भी कहते हैं।

इसके अतिरिक्त एक दूसरा मन्दिर भी है जिसे लोग तहली साहब कहते हैं। इस मन्दिर का नाम तहली साहब का नाम टाली (शीशम) शब्द से बना है। मन्दिर के समीप एक बड़ा टाली वृक्ष खड़ा था। गुरु नानक के पुत्र श्रीचन्द्र ने इस मन्दिर का निर्माण किया था। १८६९ ई० में जब रावी नदी में बाढ़ आई तो यह मन्दिर नदी में बह गया। उसके पश्चात् मुलोवाली गाँव में दूसरा मन्दिर उसी नाम से बनाया गया पर फिर वर्तमान स्थान में वह हटा कर कर दिया गया जो नगर के बाहर उत्तर की ओर अब स्थित है। नगर में बाबा नानक का प्रसिद्ध बहुमूल्य कोट भी रक्खा है। कहते हैं कि जब बाबा नानक मक्का गये थे तो उन्हें यह कोट पुरस्कार रूप में भेंट किया गया था। इस चोले (कोट) में हजारों अरबी शब्द तथा गिन्तियाँ और चिन्ह अंकित हैं। यह चोला गुरू को गुरू के चेलों द्वारा प्रदान किये गये सैकड़ों पुरस्कारों में लपेटा हुआ रक्खा है। इस पवित्र चोले का दर्शन करने के लिये इन लपेटे हुये बस्त्रों को खोलने में कई घंटे लग जाते हैं तब जाकर पवित्र कोट के दर्शन हो पाते हैं।

बहरामपुर का नगर दीना नगर के समीप स्थित है। सत्रहवीं शताब्दी के मध्य में यह नगर बहुत प्रसिद्ध हो गया था। जब हाजी बहराम खां जम्मू तथा कांगड़ा का चकलादार या गवर्नर था तब उसने इस नगर की नींव डाली थी। उस समय इस प्रदेश का नाम बहरामपुर जिला था। इस नगर के भग्नावशेष अब शेष रह गये हैं। यहां एक ईदगाह तथा एक सुन्दर मसजिद थी जो अब खंडहर हैं। इसी स्थान पर मुराद राजकुमार (शाहजहां के समय में) ने अपनी सेना नूरपुर के राजा जगत चन्द्र के विरुद्ध चढ़ाई करने के ध्यान से एकत्रित की थी। यहीं से अदीना बेग की उन्नति आरम्भ हुई थी और वह जकरिया खां द्वारा गवर्नर बनाया गया था।

दीना नगर में महाराजा रणजीत सिंह के भवनों का मान कम हो गया है। महाराजा की रानी के भवन में म्यूनिसिपल दफ़्तर तथा महाराजा का भवन विश्राम स्थान बना दिये गये हैं।

बटाला से डेरा बाबा नानक को जाने वाली सड़क के बाईं ओर ध्यानपुर है। यहां रामानन्दी बैरागियों की एक प्रसिद्ध समाधि है। इस समाधि के नींव डालने वाले बाबा लाल जी हैं जो शाहजहां के समय में रहा करते थे। शाहजहां के पुत्र दाराशिकोह बहुधा लाल जी साधु से धार्मिकवादा-विवाद करने के लिये जाया करते थे। धीरे धीरे दारा के

विचारों में परिवर्तन हो गया और इसी परिवर्तन के कारण मुसलमान लोग उसे नास्तिक कहने लगे थे। मन्दिर की दीवारों में दारा तथा साधु की मूर्तियां वादा—विवाद करती हुई अंकित की गई हैं।

धारीवाल के समीप लेहल पिंडोरी गद्दी की एक शाखा है। यहां पर एक साधु रहा करते थे जिनके पास बांझ स्त्रियां मंत्र लेने के लिये जाती थीं जिससे उनके पुत्रोत्पत्ति होवे। गुरदासपुर की हिलती हुई महन्त की दीवार बहुत प्रसिद्ध है। यह एक अद्भुत दीवार है।

डेरानानक के समीप स्तर-चत्तर और बटाला के समीप मस्तानियां सय्यद पीरों के स्थान हैं।

बटाला से कुछ मील की दूरी पर अचल स्थान है जहां शिव भगवान या अचलेश्वर भगवान का एक प्रसिद्ध मन्दिर है। यह मन्दिर एक सरोवर के मध्य स्थित है। कहते हैं कि यह मन्दिर पौराणिक (पांडवों) के समय का है।

गोमन पिंडोरी बटाला तहसील में है। वहां बाबा नाम देव का मन्दिर है।

पठान कोट तहसील में नरोत मेहरा के समीप जखोवर स्थान है जहां योगियो के मन्दिर है सम्राट अकबर ने इस गद्दी को ताम्र पत्र पर पट्टा लिखकर जागीर दी थी। यह ताम्र पत्र अब भी हैं।

जनसंख्या

गुरदासपुर जिले की गुरदासपुर तहसील में प्रति वर्ग मील में ४६० व्यक्ति और खेतिहर प्रदेश के प्रत्येक वर्ग मील में ६२० मनुष्य रहते हैं। बटाला तहसील में ४७० मनुष्य औसत से और खेतिहर प्रदेश में प्रति वर्ग मील में ७२५ मनुष्य, शकरगढ़ तहसील में औसत से ४३५ प्रति वर्ग मील में और खेतिहर प्रदेश में प्रति वर्ग मील में ६१० मनुष्य तथा पठान कोट तहसील में औसत से प्रति वर्ग मील में ३६० तथा और खेतिहर प्रदेश में प्रति वर्ग मील में ६६४ मनुष्य रहते हैं।

पञ्जाब प्रान्त में सियालकोट तहसील के अतिरिक्त सबसे अधिक घनी आबादी उक्त स्थान में है। समस्त जिले की जनसंख्या ९ लाख से ऊपर है। गुरदासपुर तहसील की लगभग ढाई लाख बटाला तहसील की लगभग पौने तीन लाख, शंकरगढ़ की सवा दो लाख और पठान कोट तहसील की लगभग एक लाख ६० हजार है।

गांवों में घर सघन बने हुये हैं। गाँव साधारण रूप से ऊँचे स्थान या भीटे पर बसे हुये हैं। गाँवों के लगभग बीच में बाजार होते हैं सड़क भी गाँव के लगभग मध्य होकर ही बनी होती हैं। बाजार में दुकाने बनी होती हैं जिनमें दुकानदार दुकाने रखते हैं। गाँवों में बाजार सप्ताह में दो दिन लगा करता है जहां समीप वर्ती छोटी बस्तियों के लोग सामान लेने तथा बेचने आते हैं। घर प्रायः पंक्तियों में बने होते हैं। दो पंक्तियों के मध्य गली होती है। गली के सामने द्वार, चौपाल आदि होते हैं। चौपाल बैठक का काम देती है। गलियों का सम्बन्ध प्रधान सड़क से रहता है। सम्बन्धियों के मकान समीप समीप होते है पर जैसे जैसे जनसंख्या बढ़ती जाती है एक एक घर में बटवारा कर के चार चार, पांच पांच घर हो जाते हैं जिससे जगह की बहुत कमी हो जाती है। गाँव के बाहर जाकर बसना लोग बहुत अच्छा नहीं समझते हैं।

प्रायः सभी गाँवों में सरोवर होते हैं। सरोवरों के समीप भी घर होते हैं पर यह सरोवर लगभग गाँव के बाहर की ओर ही होते हैं। गाँव की चौपाल धरमशाला, मसजिद और मन्दिर आदि गाँव के एक ओर किसी ऐसे स्थान पर बने होते हैं जहां सभी लोग सरलता पूर्वक पहुँच सकें। नीचे वर्ण के लोगों के घर प्रायः गाँव के बाहर की ओर बने होते हैं। भंगी लोग गाँव के बाहर अपने घर बनाते हैं। गाँव के महाजन, जमीदार के घर पक्के दो मन्जिले बने होते हैं जिस गाँव में जितने अधिक पक्के घर बने होते हैं वह गाँव उतना ही अधिक धनी समझा जाता है।

पहाड़ी स्थानों में खेतों के समीप किसानों के घर होते हैं। जहां कहीं भी उपजाऊ भूमि होती है वहीं किसान अपना घर बना लेते हैं। मैदानों वाले गाँवों के बाहर पशुओं के लिये चरागाह की भूमि रहती है जहां गाँव भर के पशु चरा करते हैं।

गाँवों में चौकीदार रहता है जो सरकार का नौकर होता है वह गाँव के मरने तथा पैदा होने वालों का उल्लेख अपनी किताब में रखता है। टीका लगाने का प्रवन्ध भी सरकार की ओर से होता है। जब कभी भी गाँव में किसी प्रकार की हैजा आदि की बीमारी फैलती है तो चौकीदार थाने में समाचार देता है और वहां से सरकारी प्रवन्ध डाक्टर या टीका लगाने वाले का किया जाता है।

रीत-रिवाज

हिन्दू घरों में जब स्त्री के प्रथम बच्चा होने वाला होता है तो माता पिता भोजन सामग्री, कपड़ा मेवा, मीठा और एक रुपया किसी के द्वारा भेजते हैं। यह सामान ब्रादरी में तयार कर के बांटा जाता है। इसे यहाँ के निवासी वदि कहते हैं। बच्चे के कुछ पहले कुछ सामान दाई के यहां भेजा जाता है। बच्चा पैदा होते ही रुपया, पैसा या सोना स्त्री के मुख में रख दिया जाता है वह उसे निकाल कर दाई को दे देती है। तब दाई नारा काटती है। नारा सूख जाने पर पीपल या बैर के वृक्ष पर फेंक दिया जाता है। लड़के की उत्पत्ति पर सीरन वृक्ष की पत्ती द्वार पर बांधी जाती हैं।

उत्पत्ति के पश्चात् बच्चे को मीठा चटाया जाता है जब रात होती है और तारा गण का उदय हो जाता है तो अविवाहित कन्या दूब से स्त्री के स्तनों को पानी डाल कर खूब साफ करती है उसके पश्चात् बच्चे को मां दूध पिलाती है। जब तक स्त्री सोवर में रहती है उसके समीप अग्नि, जल तथा लोह वस्तु रहती है जिससे बालक पर किसी प्रकार की आपत्ति न आवे।

तेरह दिन के पश्चात् सूत्र संस्कार होता है जब कि बच्चे की गर्दन में सूत बांधा जाता है और ब्रादरी को भोजन कराया जाता है। सूत्र संस्कार के साथ ही साथ नामकरण संस्कार भी होता है। पंडित उत्पत्ति समय के अनुसार कुछ नाम बतलाता है और जो पसंद किया जाता है वही नाम रख दिया जाता है।

सिक्ख लोग ग्रन्थ साहब को खोलकर नाम कारण करते हैं। मुसलमानों के यहां उत्पत्ति होने पर बच्चे के दाहिने कान में अजान और बाएँ कान में तकबीर मुल्ला साहब फूँकते हैं। ७ दिन बाद आकी का संस्कार होता है जब कि लड़के के लिये दो और लड़की के लिये एक बकरी का बलिदान किया जाता है।

शादी होने के पूर्व हिन्दुओं, सिक्खों और मुसलमानों के यहां कई एक ऐसे रिवाज प्रचलित हैं जिनका पालन करना आवश्कीय होता है। जब ये सभी समाप्त हो जाते हैं तो विवाह होते हैं विवाह होने पर बधू अपने नये घर में जाती है। विवाह लगभग युवा अवस्था में ही होता है। मुसलमानों के यहां शादी पिता द्वारा तय की जाती है। लड़की का पिता वर के घर जाता है और एक रुपया वर के हाथ में रखता है वैसे ही वर का पिता कन्या के घर जाकर कन्या के हाथ में रखता है। इस समय कन्या के पिता वर के पिता तथा सम्बन्धियों को कुछ कपड़े आदि देता है। पिता के साथ और दूसरे लोग तथा स्त्रियां भी जाती हैं। शादी तय होते समय वर का पिता बताशे बांटता है। शादी तय होने के पश्चात् वर का पिता कन्या के हेतु कुछ कपड़े तथा आभूषण भेजता है जिसे वरन कहते हैं। शादी की तिथि वर का पिता निश्चित करता है। तिथि निश्चित हो जाने पर समाचार कन्या के घर लागी द्वारा पहुँचा दिया जाता है। समाचार पाकर कन्या का पिता कुछ रुपये तथा छुहारे एक पगड़ी के साथ वर के यहां भेजता है। लागी जो यह वस्तुएं लेकर आता है वह वर के पिता, सम्बन्धियों के मध्य लड़के को पगड़ी बांधने को देता है उसके पश्चात् रुपये और छुहारे उसके हाथ में रख देता है। लागी को वर के पिता द्वारा कुछ पुरस्कार दिया जाता है और इसी के द्वारा कुछ कपड़े तथा आभूषण कन्या के लिये भेज दिये जाते हैं। यह कपड़े पहिन कर कन्या भोजन बनाती है और अपने पिता के सम्बन्धियों को खिलाती है।

विवाह के पांच या सात दिन पूर्व हिन्दुओं की भांति ही मुसलमानों के यहां भी तेल संस्कार होता है। विवाह के एक दिन पूर्व मेंहदी संस्कार

होता है जब कि वर के हाथ में मेंहदी लगाई जाती है। बारात के दिन सहरा संस्कार होकर सभी लोग पान खाते हैं और बारात विदा होती है। कन्या के गांव पहुँच कर बारात कुछ दूर पर रुक जाती है और रात होने पर कन्या के घर जाती है और वहां द्वाराचार की भांति मिलनी संस्कार होता है। मिलनी के पश्चात् लोग भोजन करते हैं और फिर निकाह पढ़ाया जाता है।

निकाह संस्कार के समय वर, उसका पिता और बराती लोग कन्या के घर के समीप एकत्रित होते हैं। मौलवी साहब आते हैं और कन्या के तीन रिश्तेदार कन्या के पास जाते हैं एक कन्या के दूत का काम करता है और दो गवाह का काम करते हैं। वे कन्या से कलमा सुनते हैं और पूँछते हैं कि वह अमुक व्यक्ति के साथ शादी करने को राजी है। कन्या या तो हां में उत्तर देती है या उसकी चुपकी पर हां का उत्तर समझ कर समाचार मौलवी साहब को दिया जाता है। उसके पश्चात् महर की रकम कुछ कहासुनी तथा वाद-विवाद के पश्चात् वर तथा कन्या के पिता द्वारा निर्धारित होती है। जमींदार लोग इस जिले में चलन के अनुसार ३२ रुपये महर के लिये तय करते हैं। उसके पश्चात् मौलवी साहब वर से पूछते हैं कि इतना महर देने पर तुम अमुक कन्या से शादी करना चाहते हो। हां का उत्तर मिलने पर वर को कलमा सुनाना पड़ता है। तब निकाह का खुतबा मौलवी साहब पढ़ते हैं और फिर उपस्थित समुदाय वर तथा कन्या के पिताओं को बधाई देते हैं।

दूसरे दिन सवेरे खत या दहेज की रकम बिरादरी के सामने दिखाई जाती है और वर के पिता के हाथों में रख दी जाती है। उसके पश्चात् कन्या को विदा कराकर बारात वर के घर वापस आती है। वर के यहां कन्या एक या दो दिन ठहर कर अपने पिता के यहां लौट जाती है।

स्त्रियों की दशा

जिले की स्त्रियों के साथ प्राय: पुरुष वर्ग के लोग अच्छा वर्ताव करते हैं। पुरुष अपना पूरा कर्तव्य करते हैं। स्त्रियों को पुरुषों की अपेक्षा अधिक सुन्दर तथा मूल्यवान वस्त्र पहनाए जाते हैं उन्हें सामर्थ्य के अनुसार आभूषण भी दिये जाते हैं। स्त्री जाति अपनी अवस्था से पूर्ण रूप से संतुष्ट है।

जिले में लड़कियों के लिये कुछ स्कूल हैं जिनका प्रबन्ध निजी रूप से तथा म्युनिसपैलिटियों के द्वारा होता है। स्कूलों में गणित, संस्कृत और गुरुमुखी की साधारण शिक्षा प्रदान की जाती है। वेदों का अध्ययन स्त्रियां नहीं कर सकती हैं।

जब लड़कियां तेरह वर्ष की हो जाती हैं तो वह परिवार के लिये भार स्वरूप हो जाती हैं और युवा होने की पूर्व ही उनकी शादी कर दी जाती है। बचपन में शादी करने का एक कारण यह भी है कि हिन्दू धर्म के अनुसार मृतक संस्कार तथा श्राद्ध करने के लिये पुत्र का होना आवश्यकीय बात होती है इसलिये लोग शादी भी जल्दी कर लेते हैं जिससे इस कर्म में बाधा न उत्पन्न होवे।

स्त्रियां हीरे, जवाहिरात तथा आभूषणों की बड़ी शौकीन होती हैं। वह चौंक, फूल, दौनी, टीका, ताविन्नी सिर पर बुगतीस, मोहर, हवेल, कंठा, माला, हार, जंजीर आदि गले में, चूड़ियां, बन्द, गुखरू, पहुँची, छनकंगन आदि बांह में, डांडियां, वालियां, बुंदे, झुमके, आयरन, करनफूल आदि कान में, टोर, पायंजेब, बांकन, कारियां, लच्छे, छल्ला विछिया, महन्दी, पटरी आदि पैर में आभूषण धारण करती हैं। इसके अतिरिक्त सैकड़ों भांति के दूसरे आभूषण भी स्त्रियां ग्रहण करती हैं जिनके लिखने के लिये एक अलग पुस्तक की आवश्यकता होगी। शादी के समय जब स्त्रियां एकत्रित होती हैं तो आभूषण का ही प्रश्न करती हैं कि कन्या के ससुर ने क्या क्या गहने दिये हैं।

मध्यम श्रेणी की स्त्रियां भोजन बनाती हैं। घर की सफाई करती हैं और घर के दूसरे कार्य करती हैं। वह परदा में रहती हैं पर नीचे श्रेणी की स्त्रियां बाहर निकलती हैं और काम करती हैं।

शादी से पूर्व दूल्हा को अपनी स्त्री का मुंह देखना प्राय: कठिन सा ही होता है। मंगनी होने के

पश्चात् से शादी के समय तक कन्या को सख्ती के साथ अकेले पन में रहना पड़ता है। वह उस समय गाँव वालों के सामने भी नहीं आ सकती है।

प्रायः स्त्रियां अंध विश्वासनीय होती हैं वे अपने पति की आज्ञा का सदैव पालन करती हैं। वे अपने बच्चों तथा जन्मभूमि के लिये सब कुछ निछावर करने को तयार रहती हैं। धार्मिक शिक्षा की कमी के कारण बहुओंको शत्रुता भाव से देखती हैं गृहस्थी के कार्य के अतिरिक्त उनके मन बहलाने के लिये और दूसरे उपाय नहीं होते हैं। लगभग प्रत्येक घर में चरखा होता है छुट्टी पाने पर स्त्रियां सूत कातती हैं। रुई की प्यूनिया बनाकर टोकरी में रख ली जाती हैं। मुहल्ले की सभी स्त्रियां छुट्टी पाने पर एकत्रित होकर चरखे कातोतीं हैं और गप-शप करती जाती हैं। ऐसी पार्टी को टिनजान कहते हैं चरखा कातते समय बहुधा सभी स्त्रियां मिलकर संगीत भी गया करती हैं।

विधवा विवाह बुरा समझा जाता है इसलिये हिन्दू घराने में इसकी प्रथा प्रचलित नहीं हैं। ऐसे विवाह को करेवा कहते हैं। नीचे श्रेणी की स्त्रियों को मजबूर होकर दूसरा पति करना पड़ता है जो प्रायः ऐसा ही व्यक्ति होता है जिसकी स्त्री का देहान्त हो चुका होता है।

स्त्रियाँ गोदना गोदाती हैं और दांतों में मिस्सी का प्रयोग करती हैं।

मुसलमानों के यहाँ धार्मिक रूप से पुरुष जाति ४ शादियां कर सकता है। निर्धन मुसलमान एक ही शादी करते हैं। अमीर लोग एक से अधिक स्त्रियाँ रखते हैं। हिन्दुओं के यहां ब्राह्मण, खत्री, वेदिस, सोधी, राजपूत (उच्च) आदि को छोड़ कर दूसरे नीचे श्रेणी के लोगों के यहां स्त्री के मर जाने पर भाई की विधवा स्त्री के साथ ब्याह की चलन है। इसे चादर-अंदाजी कहते हैं।

हिन्दू लोग धर्मानुसार अपनी विवाहिता स्त्री को छोड़ नहीं सकते हैं पर मुसलमान धर्मानुसार अपनी स्त्री को तलाक (छोड़ देना) दे देते हैं।

भाषा और जातियाँ

जिले की भाषा साधारण पञ्जाबी है। लोग गुरमुखी तथा उर्दू का भी प्रयोग करते हैं। नगरों में अंग्रेजी का भी प्रयोग होता है।

जिले के पहाड़ी भागों में ठकर (ठाकुर) जाति के राजपूत लोग निवास करते हैं। पहाड़ों के नीचे वाले प्रदेश में राजपूत रहते हैं। मैदानी भाग में जाट अधिक हैं। राजपूतों में बहुत से वर्ण विभाग हैं पर वे सब अपने को सूर्य या चन्द्र वंशी राजपूत कहते हैं। चन्द्रवंशी राजपूतों का विभाग २२ वर्णों में और सूर्य वंशियों का २६ वर्णों में है। उच्च घराने के राजपूत, राजपूत सभा के सदस्य होते हैं। उनका सालाना जलसा जम्बू में होता है जहाँ वे अपनी जाति में सुधार करने में वादा-विवाद करते हैं और फिर उसी के अनुसार सुधारकरते हैं।

जाट लोग हिन्दू मुसलमान तथा सिक्ख तीनों जातियों में विभाजित हैं। जाट सिक्ख बटाला, गुरदासपुर के दक्षिण तथा शंकरगढ़ में हैं। सिक्ख जाट लोग, धनी, शक्तिशाली तथा फुर्तीले होते हैं। गुरदासपुर में कहलोन, सिद्धू, गुम्मन, गोरय, गिल रधवा धारी वाल, बटाला में रंधवा, सिद्धू, कहलोन, रियार, गिल, सरई और गोरया, शंकरगढ़ में कोहलोन, मल्ली, गोरय और बैन जाति के जाट रहते हैं।

जिलें में मुसलमान गूजर, व्यास बेट, अरैन पठान, रावी, बेट, सैनिस, ब्राह्मण आदि जाति के अल्प संख्यक लोग निवास करते हैं।

ककेजई जाति के लोगों का केन्द्र स्थान धरमकोट में है। गुरदासपुर के समीप भी उनके गांव हैं। यह अधिकतर व्यापारी हैं और महाजनी का काम करते हैं।

जिले में अरैन, डोगर, गूजर, जाट, मुग़ल, पठान, राजपूत, सैनी, सय्यद, लबान, चंग, ब्राह्मण, दत्त आदि जाति के लोग कहते हैं। पठांती में तारचैन ब्राह्मणों के १४ गाँव इकठ्ठे हैं। शंकरगढ़ के उत्तर-पश्चिम कोण पर ६ गाँव, शंकरगढ़ की पश्चिमी सीमा पर १७ गाँव दत्त ब्राह्मणों के हैं।

लगभग जिले के सभी मुसलमान सुन्नी हैं और हनाफी वर्ग के हैं। बटाला में शिया जाति के मुसलमान काफी संख्या में हैं। अहले हदीस

और अहले कुरान वर्ग के मुसलमान भी हैं। शिया लोग अली को हज़रत मुहम्मद का उत्तराधिकारी मानते हैं। अहमदिया वर्ग की नींव क़ादियां के मिर्ज़ा गुलाम अहमद ने डाली थी। मिर्ज़ा गुलाम ने जिहाद का घोर विरोध अपनी पवित्र प्रसिद्ध पुस्तक बुरहान-अहमदिया में किया है। आपने अपने को मेंहदी, मसीह तथा औतार कहा है। आप धार्मिक युद्ध के कट्टर विरोधी थे पर ईसाई तथा हिन्दू धर्म के विरोधी थे।

जिले के हिन्दू सनातन धर्मी और आर्यसमाजी दो प्रकार के हैं। समाजी कम हैं। जिले के अधिकांश सिक्ख गुरुगोविन्द सिंह के अनुयायी हैं। सहजधारी सिक्ख ग्रंथ साहब में विश्वास करते हैं पर केस नहीं रखते हैं। इन लोगों के यहां हिन्दू पुरोहित शादी व्याह कराते हैं। यह लोग मूर्तिपूजक नहीं हैं।

मुसलमानों के यहां पीर, हिन्दुओं के यहां पुरोहित तथा साधु और सिक्खों सिक्खों के गुरु होते हैं।

अंध विश्वास तथा दन्त कथाएँ

जिले के निवासियों के मध्य अंध विश्वास प्रचलित हैं। हिन्दू लोग ज्योतिष शास्त्र में अधिक विश्वास करते हैं। सप्ताह के कुछ दिन अधिक पवित्र तथा शुभ माने जाते हैं। शुभ मूहूर्त से ही काम आरम्भ करना लोग अच्छा समझते हैं। जमीदार लोग खेती का काम मङ्गलवार, वृहस्पतिवार या शनिवार को नहीं आरम्भ करते हैं।

यात्रा के समय मेहतर, कुत्ता, बच्चे के साथ स्त्री गाय, घोड़सवार, पानी भरा घड़ा या या दूध भरा मटका, दही, घी साग भाजी, पुष्प, मिठाई और चीनी आदि का मिलना शुभ शकुन माना जाता है। इसके विपरीत ब्राह्मण, सय्यद, मुल्ला, बिल्ली, बकरी, गदहा, सांप, विधवा स्त्री, रोने वाला व्यक्ति मुन्डेसिर वाला मनुष्य, खाली पानी का घड़ा, धुआं वाली अग्नि, आदि का मिला प्रस्थान के समय बहुत बुरा माना जाता है। किसी काम के आरम्भ में छींक का होना भी बहुत अपशकुन समझा जाता है।

भूत-पिशाच में जिले के लोग बहुत विश्वास करते हैं। उनसे बचने के लिये भांति भांति के उपाय किये जाते हैं। खलिहान में नाज की रास तयार होते समय रास में लोहा डाला जाता है और अग्नि समीप रख ली जाती है। मुसलमान किसी मुल्ला से तावीज लिखा कर ढेर में गाढ़ देते हैं। नंगे सिर या पांव में जूता पहिने हुये कोई नाज के ढेर के समीप नहीं जाने पाता है। स्त्रियां भी समीप नहीं जा सकती है।

भूतों के भय के कारण बच्चे घर में तथा घर के बाहर अकेले नहीं छोड़े जाते हैं। आंधी बवन्डर के समय भी वह अकेले नहीं जा सकते हैं रात के समय लोग स्मशान घाट या मुर्दा गाड़ने वाले स्थान पर नहीं जाते हैं। मसजिद, मन्दिर, समाधि आदि स्थानों पर यदि लोगों को सोना पड़ा तो लोग भूमि शय्याही ग्रहण करते हैं। जब बच्चा उत्पन्न होता है तो माता के पास लोहे का कोई अस्त्र रख दिया जाता है। शादी के कुछ दिनों पहिले और कुछ दिनों बाद तक वर तथा कन्या को लोहे की वस्तु पास में रखनी पड़ती है।

जब कोई पक्का मकान बनने लगता है तो मिट्टी के घड़े को काला करके उसके सामने टांग दिया जाता है। असौज मास के प्रथम पन्द्रह दिनों में नाज नहीं बोया जाता है। कुदृष्टि या नज़र का लोग बहुत ध्यान देते हैं। नजर लगाने वाले के सामने लोग अच्छे वस्त्र नहीं धारण करते हैं या भोजन नहीं करते हैं। बच्चों की कुदृष्टि से रक्षा करने के लिये शेर का पञ्जा लड़कों के गले में बांध दिया जाता है।

स्त्रियां अपने पति या पति से अधिक अवस्था वाले घर के पुरुष प्राणी का नाम नहीं लेती हैं। यदि कोई हिन्दू अचानक धोके से बिल्ली या गाय की हत्या कर डालता है तो उसे शुद्धि के लिये गंगा का स्नान करना तथा प्रायश्चित करना पड़ता है।

श्रावण मास में खच्चर या गदही भादों मास में गाय, माघ में भैंस का बच्चा देना बहुत अशुभ माना जाता है और यदि ऐसा होता है तो वह पशु किसी मुल्ला या पुरोहित को दान रूप

में दे दिया जाता है। नये घर में ब्राह्मणों को भोजन कराये बिना हिन्दू लोग निवास नहीं करते हैं।

हिन्दू लोग दोपहर, कार्तिक मास या अमावस्या को लड़के का जन्म होना अशुभ मानते हैं। अमावस्या को लड़के की उत्पत्ति से पिता को और चतुर्दशी के दिन की उत्पत्ति से माता को दोष होता है। एक लिंग के दो बच्चों की उत्पत्ति के पश्चात् दूसरे लिंग के बच्चे का जन्म अशुभ माना जाता है। इसे त्रिकाल कहते हैं। यदि इस प्रकार लड़की का जन्म हुआ तो पिता को और यदि लड़के का जन्म हुआ तो माता को दोष होता है।

हिन्दू लोग चैत, कार्तिक और पूस मास में मुसलमान रमज़ान और मोहर्रम के समय में व्याह नहीं करते हैं।

सांप के काटने पर बिच्छू आदि के डंक मारने पर लोग मंत्र तथा यंत्रों का प्रयोग करते हैं। साधु तथा फकीरों की फूंक डलवाते हैं। बीमारियों का भी इलाज साधु फकीर लोग तावीज़, मंत्र तथा यंत्र से करते हैं।

ज़िले में कुछ परिवार ऐसे हैं जो फूंक कर फोड़े को अच्छा कर देते हैं। फोड़े से पीड़ित व्यक्ति इस कार्य के लिये केवल रंगा सूत या नमक देता है। गुरदासपुर तहसील में साधु-चक के समीप एक खानकाल है जहां स्नान कराकर फोड़े को अच्छा किया जाता है। बुखार या ज्वर आने पर लोग अधिकतर भभूत मंत्र तथा यंत्रों का प्रयोग करते हैं। साधु या फकीर लोग ज्वर के लिये तावीज़ तथा यंत्र बनाते हैं। पशुओं की बीमारी होने पर भी तावीज़ों और यन्त्रों का ही प्रयोग होता है।

पहाड़ी लोगों का विश्वास है कि यदि बिल्ली एक स्थान पर जाड़े के दिनों में जितने बच्चे देगी उतने ही महीनों तक अगले वर्ष पानी बरसेगा। यदि बिल्ली ने एक ही बच्चा दिया तो उसका मतलब यह है कि वर्षा बहुत कम होगी।

कारोबार

ज़िले का मुख्य उद्यम खेती है। खेती के अतिरिक्त लोग व्यापार और नौकरी भी करते हैं। ज़िले के ४२ प्रतिशत लोग खेती में २५ प्रतिशत रोज़गार में, ९ प्रतिशत व्यापार में और ३ प्रतिशत दूसरे पेशों में व्यस्त हैं। गांव के सूत कातने वाले देशी सूत से कपड़ा तयार करते हैं। जुलाहे, काश्मीरी और मेघा लोग सूत कातने तथा कपड़ा तयार करने का काम अधिक करते हैं। मोची, धोबी, दरज़ी, छिम्ब और नाई लोग अपना अपना काम करते हैं। रेलवे नौकर, मल्लाह और कुम्हार लोग आवा-गमन के साधन में लगे हुये हैं। झिनवार और मश्की लोग पानी भरने के काम करते हैं। बढ़ई और लोहार लकड़ी तथा लोहे के समीप जहां लकड़ी अधिक प्राप्त हो सकती है वहां बढ़ईगीरी का काम अधिक होता है। टोकरियां तश्तरी, प्याले आदि बनाने का काम होता है। लवाना, तुर्क और बहुरूपिया लोग सन मूंज और कण घास से रस्सी बनाने का काम करते हैं। काश्मीरी लोग रेशम के कीड़े पालते हैं। मिरासी लोग गांवों में कविता तथा गाने का काम करते हैं।

भोजन

साधारण किसान सवेरे अपने खेत में जाता है। लगभग ९ बजे उसके घर की स्त्री उसे खेत में भोजन लेकर जाती है। भोजन में प्रायः रोटी और मट्ठा रहता है। दोपहर को वह घर लौटकर भोजन करता है। यदि कुएँ पर, पुर के काम में रहता है तो दोपहर को भी उसके लिये वहीं भोजन जाता है। दोपहर के भोजन में गुड़ और घी का मिश्रण रहता है। रात के भोजन में दाल तथा तरकारी आदि सम्मिलित रहते हैं। मैदान के निवासी गेहूँ की और पर्वतीय प्रदेश के मक्का की रोटी खाते हैं। अंधार तथा पठांतो क्षेत्र में जहां चावल पैदा होता है। वहां चावल का प्रयोग भी रात को भोजन में होता है। जहां कहीं मांस उपलब्ध होता है उसका भी प्रयोग किया जाता है। वर्षा ऋतु में में पुराल का भोजन अधिक होता है। शीत काल में ईख या गन्ने के रस से पकाई हुई चावल की खीर तथा सरसों का साग खाना अधिक अच्छा समझा जाता है।

वस्त्र तथा घर

जिले के किसान तहबन्द (तहमत) कुर्ता, पगड़ी और चादर का साधारणतः प्रयोग करते हैं। कपड़े के दो टुकड़ों को सीकर तयार की जाती है। इसी प्रकार चादर भी तयार की जाती है और बदन के चारों ओर लपेटी जाती है। जाड़े के दिनों में चादर के स्थान पर दोह, कम्बल तथा लोई का प्रयोग किया जाता है। उच्च श्रेणी के लोग तहबन्द के नीचे लंगोट अथवा सुत्तन का प्रयोग करते हैं। तहबन्द के स्थान पर बहुत से लोग लुंगी का प्रयोग करते हैं। पठान कोट के राजपूत पायजामा और धोती का प्रयोग करते हैं। साधारण कोटि के जमींदार त्योहार, मेला और शादी के समय कपड़े बदला करते हैं। हिन्दू लोग आभूषणों का भी प्रयोग करते हैं।

मकान प्रायः मिट्टी के बनाए जाते हैं। घर में आंगन, द्वार, चौपाल, बरामदा रसोई घर तथा और दूसरे कमरे होते हैं। आंगन मकान के आगे वाले भाग की दीवारों के घिरा होता है जिसमें जाने के लिये एक साधारण द्वार होता है। बड़े जमींदारों के आंगन तथा द्वार और बैठक अच्छे बने होते हैं। मकान की छतें नीची होती हैं और हवा आने जाने का प्रबन्ध नहीं होता है। कुछ लोग पशुवों के रहने के घर अलग रखते हैं शेष लोग घरों से लगा हुआ ही पशुवों का भी स्थान बनाते हैं।

मेले

जिले में पंडोरी स्थान के वैरागी मन्दिर पर वैसाखी पूर्णिमा को मेला लगता है जिसमें प्रायः १० हजार लोग एकत्रित होते हैं। दीना नगर में दशहरे के समय दशहरे का मेला होता है जिसमें पशुवों का भी मेला लगता है। फकिर्दा में अक्तूबर के महीने में गोरार जाटों का मेला लगता है। गुमान में जनवरी मास में बाबा मान देव का मेला लगता है। अचल स्थान पर वैसाखी के अवसर पर अचलेश्वर महादेव का बड़ा मेला लगता है। यहां एक दूसरा मेला नवम्बर मास में नवमी तथा दसमी के दिन होता है जहां दूर दूर से बहुत बड़ी संख्या में साधु एकत्रित होते हैं।

कारटीवाल स्थान पर उर्स तथा बाबा फरीद का मेला मई मास में लगता है जहाँ लगभग २५ हजार लोग एकत्रित होते हैं। मसानियां स्थान पर रबी-उल-अव्वल के समय बारहवीं और तेरहवीं को मुसलमानों का मेला लगता है।

हर या दारा स्थान पर होली के अवसर पर हिन्दुओं का मेला लगता है। भारथ स्थान पर वैसाखी के अवसर पर बाबा नानक के पुत्र श्रीचन्द्र की स्मृति में एक बड़ा मेला होता है। सुल्तानपुर में जून मास में उस समय मेला लगता है जब कि सुल्तानिया के तीर्थ यात्री लोग धौंकल का पयान करते हैं। गोराल (शंकरगढ़) स्थान पर परेवा का मेला अक्तूबर में लगता है। यह मुख्यतः लल्ली जाटों का मेला है। मेले में अखाड़ा भी लगता है जब कि पहलवानों को पुरस्कार दिया जाता है। यह एक धार्मिक मेला है और यहां लगभग २५ हजार लोग एकत्रित होते हैं।

वैसाखी के अवसर पर लगभग प्रत्येक गाँव में और मुख्यतः डोड़, कोट नैना, बहमनी, गालटी, कालानौर और ध्यानपुर में लगता है। इस अवसर पर जाट लोग नाच-गान करते हैं। गोराला और पाकीवान स्थानों की भांति ही और स्थानों पर भी जाटों का मेला मिहन की याद में लगता है। कहते हैं कि गौरय जाट जाति के मिहन नामक व्यक्ति ने लल्ली नामक स्त्री से व्याह किया था और राजा द्वारा वह १२ वर्ष तक कारागार में रक्खा गया था। और मीरासियों के जोर देने पर मुक्त किया गया था। मेले के अवसर पर कुश्ती आदि होने के अखाड़े लगते हैं जिसमें पहलवानों को पुरस्कार दिये जाते हैं।

दशहरा के अवसर पर बहुत से स्थानों पर मेला लगता है। डेरा नानक स्थान पर २३ मार्च को मेला लगता है जिसमें चोला साहब का (नानक साहब का वह कोट जो उन्हें मक्का में पुरस्कार रूप मिला था) दर्शन कराया जाता है। कहते हैं कि जब नानक साहब मक्का गये थे तो यह कोट उन्हें मुसलमान पुजारियों द्वारा पहिनाया गया था जिससे वह मुसलमान धर्म का अवलम्बन करलें पर इसका उन पर प्रभाव नपड़ा। कोट उनके बदन में चिपक गया।

कालानौर स्थान पर शिव जी के मन्दिर पर शिव रात्रि के अवसर पर मेला लगता है। कहते हैं कि महाराज खड़गसिंह ने शिव लिंग पर अपने लिये एक बारादरी बनवाने का प्रयत्न किया था। जब शिव लिंग पर चोट की गई तो उसमें से लहू की धार बहने लगी और राजा को अकाशवाणी हुई कि यह शिवलिंग काशी तक है इसका निकालना संम्भव नहीं है। इसलिये खड़ग सिंह ने बारादरी के स्थान पर वहीं शिव-मन्दिर बनवा दिया।

त्योहार

श्रावण मास में श्रावणी का त्योहार होता है। इस अवसर पर पिता अपनी विवाहित लड़कियों को वस्त्र तथा आभूषण भेजते हैं। रविवार को लड़कियाँ एकत्रित होकर किसी सरोवर पर जाती हैं और अपने साथ मीठी रोटी ले जाती हैं। वहां वे नाच-गान करती हैं और साथ मिलकर भोजन करती हैं।

दीवाली के अवसर पर लोग दीप जलाते हैं खेत में रोशनी करते हैं तथा जुवा खेलते हैं।

लोहड़ी के अवसर पर माता-पिता अपनी विवाहित पुत्रियों को कपड़े तथा मिठाई रुपया भेजते हैं और जिनके लड़के उत्पन्न हुए होते हैं उन्हें रुपये भेजते हैं। गांव के लड़कों को बांटने के लिए भुनी मक्का तथा गुड़ भेजा जाता है। होलिका दहन इस अवसर पर होता है।

होली का त्योहार धूम धाम के साथ मनाया जाता है और रंग, लाल-गुलाल एक दूसरे के ऊपर फेंका जाता है।

रखड़ो (रक्षा बंधन) ब्राह्मण लोग अपने यजमानों के रक्षा बांधते हैं और उन्हें पुरस्कार मिलता है। लड़कियां अपने भाइयों के रक्षा बांधती हैं उन्हें रुपये के रूप में सहायता मिलती है।

मुसलमान लोग छोटी ईद, बड़ी ईद, शबरात ताजिया आदि के त्योहार मनाते हैं।

खेल-कूद

जिले में लड़के कबड्डी, गुल्ली डंडा, ठिकरी छिपाना, खिद्दू खुंडी, समुद्र टापू या कोरी काड़ा बन्दर क़िला लुका मिच्छी, कोरा चुपाकी, गुट्टी आदि खेल खेलते हैं।

खिद्दू खुंडी का खेल लगभग हाकी की भांति ही खेला जाता है। समुद्र टापू का खेल प्रायः दो लड़कों के मध्य खेला जाता है। भूमि पर पहल, दूज, तीज, बिल्ला बिल्ली, चली, नीची चादर, बड़ी चादर, टापू टापू और समुद्र नामक दस भागों में बांट दिया जाता है। एक ठिकरी द्वारा खेल खेला जाता है। प्रत्येक भाग एक आयत बनाता है। तीज, बिल्ला, बिल्ली और चन्नी एक बड़े आयत में स्थित होते हैं। दोनों ओर इसी प्रकार के आयताकार भाग रहते हैं। लड़के ठिकरी को पांव से पहल की ओर फेंकता है और फिर आयत के कोण से पैर से मार कर उसे आयत के बाहर करता है। ठिकरी कोण वाले भाग से ही जानी चाहिये। खेलने वाले एक पैर से चलते हैं वह बिल्ला और बिल्ली स्थान पर लड़के आराम करने के लिये खड़े हो सकते हैं। खेल उस समय तक चलता रहता है जब तक कि दूसरा लड़का लंगड़े चल कर खेल को समाप्त नहीं कर पाता है।

बन्दर क़िला खेल में जमीन पर एक वृत्त खींचा जाता है। एक व्यक्ति रस्सी का एक सिरा पकड़ कर केन्द्र में बैठ जाता है। दूसरा लड़का दूसरा सिरा पकड़ कर वृत के चारों ओर दौड़ता है। शेष सब लड़के वृत के बाहर खड़े रहते हैं और एक एक करके वृत में प्रवेश करने का प्रयत्न करते हैं और केन्द्र में बैठे हुये लड़के को हाथ से छूते या मारते हैं। साथ ही साथ वृत के बाहर दौड़ने का लड़का छूने या मारने वाले लड़के को दौड़ता हुआ पकड़ने का प्रयत्न करता है। यदि वह किसी लड़के को पकड़ने में सफल होता है तो पकड़ा जाने वाला लड़का केन्द्र में बैठ जाता है और केन्द्र वाला लड़का दौड़ने वाले के स्थान पर चला जाता है और पहला वृत के बाहर दौड़ने वाला लड़का दूसरे लड़कों के साथ मिल जाता है।

कृषि

पठानकोट तहसील की भूमि में पहाड़ियां अधिक हैं। इनमें दह्ला घर की सब से अधिक

ऊँचाई समुद्र धरातल से २७७२ फुट है। प्रथम दो श्रेणियों के मध्य ५ मील चौड़ी एक उपजाऊ घाटी है जो रावी नदी पर बाहर की ओर मैदान रूप में बदल गई है और सरती-फंगोताह मैदान में सुन्दर सुन्दर दृश्य में वर्तमान हैं। शेष पहाड़ी प्रदेश का क्षेत्र टूटा फूटा है और वहाँ वनैले भाग पाये जाते हैं। यह समस्त प्रदेश उपजाऊ नहीं है। इस भाग में धरती के ऊपरी धरातल के नीचे चट्टानें पाई जाती हैं जिससे खेती को वर्षा की समय समय पर आवश्यकता रहती है नहीं तो पौधे सूख जाते हैं।

नीची पहाड़ियों के नीचे कांगी प्रदेश स्थित है। इस प्रदेश का अधिकांश भाग पानी से घिरे हुए पत्थर के रोड़ों का बना है फिर भी यह भाग गेहूँ की उपज के लिये प्रसिद्ध है। कहा जाता है कि महाराज रणजीत सिंह कांडी-गेहूँ के आटे को बहुत पसन्द करते थे। कांडी प्रदेश का दक्षिणी भाग लोअर चक्की कुह्ल तथा अपर चक्की कुह्ल से सींचा जाता है। पठान-कोट के चारों ओर गन्ना तथा धान की अच्छी खेती होती है ढंगू कुह्ल प्रदेश में पानी कम होने से धान के स्थान पर कपास की खेती गांवों में अच्छी होती है। इनके पश्चिम में शाह नहरी का प्रदेश स्थित है जहां बारी द्वाब नहर की पट्टियां दोनों ओर स्थित हैं। यहां की भूमि कम उपजाऊ तथा कमजोर है। और अधिक पश्चिम की ओर बेट रावी का प्रदेश स्थित है जहां की भूमि उपजाऊ है।

उज्ह और रावी के द्वाबा में चक अंधार का प्रदेश स्थित है। अंधार के पूर्व पठांती प्रदेश है, जिसकी सिंचाई बादशाही नहर से होती है।

शंकरगढ़ का ट्रान्सरावी (रावापार) प्रदेश एक समतल मैदान है। यहां सिंचाई के अच्छे साधन हैं और वर्षा भी अच्छी होती है। इस भाग में डार्प और चैन्टला के खेतिहर क्षेत्र हैं। इसके पश्चिम की ओर भरीरी प्रदेश है जहां सिंचाई के साधन कम हैं और वर्षा पर ही निर्भर करना पड़ता है। इस भाग में शिवालिक पहाड़ियां स्थित हैं तथा सैकड़ों नदी नाले वर्तमान हैं होडला और देह आदि घाटियों में तथा नदियों की कछारी भूमि में अच्छी उपज होती है।

गुरदासपुर तथा बटाला तहसीलों की भूमि लगभग एक सी है। गुरदासपुर में कहनुवां चम्ब स्थित है। शेष दो तहसीलों के एक ओर रावी और और दूसरी ओर व्यास नदी स्थित है। जिनमें कछारी उपजाऊ पट्टियां स्थित हैं। व्यास नदी की उपजाऊ पट्टी के ऊपर बारी द्वाब का बांगर प्रदेश है। इस प्रदेश की पूर्वी सीमा पर टैय्या व्यास नदी का पश्चिमी ऊँचा तट है टैय्या बलुहा ऊंचा तट उत्तर से दक्षिण की ओर पठान कोट तहसील के घरोटा गाँव से बटाला के खोकुवाल गाँव तक फैला हुआ है। इसकी औसत ऊंचाई ५० फुट है। उत्तर की ओर की भूमि कड़ी लाल रंग की है। और अधिक दक्षिणी भाग की भूमि नरम है। बटाला तहसील में व्यास नदी तथा ऊंचे तट के मध्य वाले प्रदेश में बहुत से नदी नाले हैं जिससे सैकड़ों सोते वाले प्रदेश बन गये हैं। बटाला में यह सोते वाले प्रदेश संकरे हैं। ऊंचे तट से दक्षिण-पश्चिम की ओर मैदान धीरे धीरे ढालू होता गया है।

गुरदासपुर के उत्तर में बांगर प्रदेश की सिंचाई होती है और वह नहरी क्षेत्र का भाग बन गया है। दक्षिण की ओर बांगर भूमि का क्षेत्र दोनों तहसीलों में अपनी उपज के लिये प्रसिद्ध है। इस भूमि में पानी बहुत कम सूखता है और मिट्टी काफी समय तक नम रहती है। अच्छी वर्षा होने पर इस भूमि में बहुत अच्छी उपज होती है। इससे पश्चिम की ओर नहरी क्षेत्र है जहां की भूमि बांगर से मिलती जुलती है। यहां नहरों तथा कुओं से सिंचाई होती है। इस प्रदेश के मध्यवर्ती भाग होकर बारी द्वाब नहर जाती है। पानी धरातल के समीप पाया जाता है इस लिये कुएँ बहुत हैं।

नहरी क्षेत्र तथा बेट रावी प्रदेश के मध्य मैरा किरण प्रदेश नदी से प्रभावित है। जिसके तट पर नमकीन भूमि की पट्टियाँ वर्तमान हैं। जैसे जैसे पट्टी नदी से दूर होती जाती है वैसे वैसे कुओं की संख्या बढ़ती जाती है। यह समस्त प्रदेश बड़ा उपजाऊ है।

सिंचाई वाली भूमि गन्ना, ईख, धान और गेहूँ की खेती के लिये सुरक्षित रक्खी जाती है। अच्छी नहरी चाही और कछारी भूमि में गन्ना की खेती

एक साल करने के पश्चात् उसमें दो फसलें नाज की उगाई जाती हैं और फिर गन्ना बोया जाता है। और दूसरी भूमि में ईख के बाद गेहूँ, गेहूँ के बाद ईख की खेती बारी बारी से होती रहती है। कड़ी भूमि में धान की खेती होती है। पठान कोट और गुरदासपुर में धान की खेती अधिक होती है। पठान कोट तहसील में धान की खेती के बाद उसी भूमि में गेहूं बोया जाता है जिससे गेहूँ की उपज कम होती है। खेतों को खाली चौमास नहीं रक्खा जाता है। पर गुरदासपुर तहसील में धान की उपज बहुत अच्छी होती है। गेहूँ को नहरों तथा कुओं द्वारा पानी खूब मिलता रहता है इस कारण वह खूब उपजता है बलुही भूमि नहर की सिंचाई होते होते कुछ समय पश्चात् बदल जाती है और उसमें बालू का अंश नष्ट हो जाता है क्योंकि नहर के पानी में मिट्टी का अंश सदैव मिला रहता है पर कुवें की सिंचाई में ऐसा नहीं होता है।

जिस भूमि में सिंचाई नहीं होती है वहां साल में एक बार खेती उगाई जाती है। जिसे एक फसली कहते हैं। खरीफ की फसल तयार करने पर उसी में रबी की फसल बो दी जाती है, उसके पश्चात् खेत सालभर खाली रक्खे जाते हैं। जहां कहीं भी मिट्टी शक्तिहीन हो जाती है वहां साल भर से अधिक समय तक भूमि खाली रक्खी जाती है। ऐसी भूमि में भी गहरी जुताई होने से दशा बदल जाती है क्योंकि नीचे की अच्छी मिट्टी ऊपर आ जाने से खेतों की मिट्टी की न्यूनता जाती रहती है।

अच्छी कछारी उपजाऊ भूमि में जहां सिंचाई के साधन भी अच्छे हैं खेतों में तीन वर्ष में एक बार खाद डाली जाती है। मध्यम श्रेणी की मिट्टी में दो वर्ष में और न्यून मिट्टी वाली भूमि में प्रति वर्ष खाद डालने की जरूरत होती है।

धान की बेहन अप्रैल मास में बो दी जाती है और जुलाई मास में जब खूब वर्षा होती है तो बेहन उखाड़ कर पानी से भरे खेतों में लगाई जाती है। अक्तूबर मास में धान की खेती तयार हो जाती है। मक्का जुलाई मास में बोई जाती है और सितम्बर से अक्तूबर मास तक में कट जाती है।

गन्ना और ईख की फसल मार्च-अप्रैल में बोई जाती है और फिर दिसम्बर से फरवरी मास तक में उसे पेरा जाता है। कपास की खेती भी मार्च-अप्रैल में बोई जाती है और अक्तूबर-नवम्बर में तयार होती है। माश और मोथ जुलाई में बोई जाती हैं तथा अक्तूबर नवम्बर में तयार होती है। तोरिया अगस्त-सितम्बर में बोई जाती है और जनवरी में तयार होती है। गेहूँ जो अक्तूबर-नवम्बर में बोया जाता है और अप्रैल या मई मास में काटा जाता है। चना अक्तूबर में बोते हैं और अप्रैल के आरम्भ में ही तयार हो जाता है।

जिले की लगभग साढ़े आठ लाख एकड़ भूमि में खेती होती है। गुरदासपुर और बटाला तहसीलों में अब ऐसी भूमि खाली नहीं है जहां खेती हो सके शक्करगढ़ और पठान कोट तहसीलों में और अधिक भूमि में खेती हो सकती है यदि भूमि सुधार की योजना बनाई जावे।

सरकार ने भूमि सुधार करने के लिये योजनाएँ बनाई हैं और खेती के लिये प्रयोग शालाएँ खोली गई हैं। किसानों के लिये बैंक आदि की सुविधा की जा रही है तथा नये ढंग के खेती के औजारों का प्रबन्ध हो रहा है।

जिले में बहुत सी चराई वाली भूमि है। बटाला तहसील में देह चम्बल, रावी, ब्यास और किरण नदी तट में चरागाहें हैं। गुरदासपुर तहसील में कहनुवां चम्भ, मगर मूदियां वाल और रावी, व्यास तथा किरण नदी के तटीय प्रदेश में चराई की भूमि हैं। पठान कोट तहसील में पहाड़ी बन अंगार प्रदेश के बंजर मैदान, गुलपुर रख और नहर की चौर में चरागाह हैं। शक्करगढ़ तहसील में भरोंगी प्रदेश के बंजर और रावी तट में चरागाह हैं जिनमें लाखों की संख्या में भेड़, बकरियां तथा अन्य पशु चराये जाते हैं। जिले में गाय, बकरी, भैंस बैल, टट्टू आदि पशु पाले जाते हैं।

सिंचाई

इस जिले के किसान बारी द्वाब नहर, कुएँ,

निजी नहरों, नालियों (जो नदी काट कर बनाई जाती हैं) नदियों और सरोवरों से सिंचाई करते हैं। जिले में बारी द्वाब नहर से लगभग ६३ हजार एकड़भूमि की सिंचाई होती है सिंचाई वाली भूमि का सरकारी कागजात में नहरी भूमि करके लिखा जाता है। अपर बारी द्वाब नहर में जिले की सिंचाई के लिये ४४ उप-शाखाएँ बनाई गई हैं। नहर की सिंचाई में लिये किसानों को ईख के लिये सात रुपये, धान और बाग के लिये छै रुपये, चरागाह, वाटिका, तम्बाकू साग-तरकारी और तरबूज के लिये साढ़ चार रुपये, रबी फसल के लिये पौने चार रुपये, एक बार सींचने के लिये पौने तीन, रुपये, खाली खेत जोतने के लिये एक रुपया दो पैसा प्रति एकड़ देना पड़ता है। बटाला तहसील, गुरदासपुर तहसील के दक्षिणी अर्ध भाग और शक्करगढ़ के डार्प प्रदेश में कुएँ की सिंचाई होती है। गुरदासपुर में सिंचाई के लिये लगभग ढाई हजार बटाला में साढ़े चार हजार शक्करगढ़ में ढाई हजार और पठान कोट में लगभग ९०० कुएं हैं।

जिले में सिंचाई के लिये बादशाही नहर, चक्क अंधार के कुह, अपर और लोअर चक्की कुह, किरण नदी की कालानौर की नहर, किरन नहर और रहीमाबाद का कटान आदि निजी नहरें हैं, जिनसे सिंचाई होती है जिसके लिये उन्हें प्रत्येक एकड़ भूमि पर आठ आना डिस्ट्रिक्ट बोर्ड को देना पड़ता है। इस चार्ज को आबियाना कहते हैं।

जिले में डलहौजी के समीपवर्ती प्रदेश के वन सरकार की ओर से सुरक्षित घोषित हैं। इस वन का क्षेत्रफल १, ३५५ एकड़ है। पठान कोट तहसील में अपर बारी द्वाब नहर के समीप दो छोटे वनों के क्षेत्र हैं जो २१६ एकड़ हैं और सरकार के अधिकार में हैं।

पठान कोट तहसील में शाहपुर-कांडी वन हैं जिनका क्षेत्र लगभग ७ हजार एकड़ हैं। यह वन १७ गांवों की मिश्रित जायदाद है पर इनकी देख भाल जिले के डिप्टी कमिश्नर के हाथ में हैं। इन वनों की सुरक्षा इस कारण से होती है कि कहीं यहां की पहाड़ी भूमि सूख कर मरुस्थल न हो जाय। इनके अतिरिक्त जमीदारों के पास जलाने तथा दूसरे कामों के लिये गांवों के समीप छोटे छोटे वन हैं जिन्हें अंधार बाड़ा कहते हैं।

खानें

इस जिले में डलहौजी में दो पत्थर की और एक स्लेट की खान है। इनके अतिरिक्त जिले में नौ नमक की पहाड़ी खानें भिन्न भिन्न भागों में स्थित हैं। स्लेट की खान कथलाग स्थान में स्थित है जिस पर म्युनिसपैलिटी का अधिकार है। जो स्लेट यहाँ से निकाला जाता है उससे छत तथा फर्श बनाया जाता है। खानों से जो पत्थर निकलता है वह घरों में प्रयोग होता है। पब्लिक वर्क्स और सेना विभाग द्वारा चूने का पत्थर निकाला तथा जलाया जाता है। चक्की आदि विभिन्न नदियों की नाली में जो पत्थर पाए जाते हैं वे भी मकान बनाने के काम आते हैं।

नमक पहाड़ों से निकालने के लिये सरकार से लाइसेन्स लेना पड़ता है। लाइसेन्स के प्राप्त करने के लियेप्रतिवर्ष दो रुपये फीस देनी पड़ती है।

कला कौशल

जिले के जुलाहे हाथ से कते हुये सूत से भांति भांति के कपड़े बुनते हैं जिसमें सब से प्रधान खद्दर है। बटाला में खद्दर तयार करने का एक कारखाना है जिसमें लगभग ९० आदमी काम करते हैं। बटाला में ही सूसी तयार की जाती है जो स्त्रियों के पायजामा बनाने के काम आती है। है। सुजानपुर, दीना नगर और पठान कोट में गरबी लोई और जोड़ा तयार करते हैं।

कंजरूर में गरबी चद्दर तथा पाशाम चद्दरें बनती है। गरबी चद्दर का मूल्य पंद्रह रु० और पाशाम चद्दरों का लगभग ९५ रु० होता है आज तो मूल्य और अधिक होगा डेरा नानक में लगभग १०० घराने काश्मीरियों के हैं जो कपड़े पर फूल-पत्ती बनाने और झालर, जाली आदि बनाने का सुन्दर काम कते हुते सूत से करते हैं।

रंगीन कम्मल भी तयार होते हैं और ऊनी चद्दरों तथा लोइयों पर नकासी तथा फूल पत्तियों के

काढ़ने का काम होता है। गुरदासपुर में कपड़े की एक मिल है जहां पर सूत कातने तथा कपड़ा बुनने का काम होता है। सुजानपुर में दरी तथा कालीन तयार करने का कारखाना है और रंगीन ऊनी चद्दरें तथा तख्ता चद्दरें बनती हैं जिसका मूल्य १०० रुपये से अधिक होता है। यहां रंगीन कम्बल भी बनाए जाते हैं। कहनुवां के निवासी सोने के तार की जरी का काम कपड़े पर करते हैं।

गुरदासपुर माधोपुर, सुजानपुर, नरोत, बटाला, चकदोदू आदि स्थानों पर रेशम के कीड़े पाले जाते हैं तथा रेश तयार किया जाता है और उससे कपड़ा बनाया जाता है। बटाला में अच्छे रेशमी इज़ार बन्द बनाते हैं। चकदोदू, सुखचक, नगरोटा, लग्गा और कसाना में डायोई रेशमी कपड़ा सादा और रंगीन तयार किया जाता है।

बहरामपुर और चिम्बास में कपड़े की छपाई का काम बहुत अच्छा होता है। मरारा, झबकारा में चारपाई के पेरुए अच्छे बनाए जाते हैं। चक अंधार, धारीवाल और जिले के विभिन्न गाँवों में में रंगाई का काम अच्छा होता है। दीना नगर, पठान कोट और गुरदासपुर में चमड़े का काम होता है। सन और मूंज से रस्सी तयार करने का काम जिले में खूब होता है। चम्ब से खस निकाल कर बाहर भेजा जाता है और उसी से खस का इतर तयार किया जाता है। सिरिस और बैर के वृक्षों से लाख मिलती हैं और इस जिले से प्रति वर्ष लगभग १००-मन लाख बाहर भेजा जाता है। लाख तयार करने का काम दीनानगर में खूब होता है। बटाला में दवातें तयार की जाती हैं।

गाँवों में ईख तथा गन्ने से गुड़ और शक्कर तयार की जाती हैं। सुजानपुर में चीनी बनाने का एक बड़ा कारखाना है। जिसमें लगभग ५०० कुली काम करते हैं। इस कारखाने में लगभग ५००० मन चीनी साल में तयार की जाती है। छिन्ना, बटाला और जैन्तीपुर में भी चीनी तयार करने का कारखाना है।

बटाला में लोहे के बेलन तयार करने के ९ कारखाने हैं इन कारखानों में लोहे के बेलन तथा कड़ाह तयार किये जाते हैं।

व्यापार तथा आने जाने के साधन

इस जिले से गुड़, चावल, तेलहन, माश, हड्डी, चमड़ा तम्बाकू आदि सामान बाहर से से भेजा जाता है। बटाला, सोहाल गुरदासपुर, दीनानगर, सरन और पठान कोट में सामान एकत्रित करने की मंडियां हैं और आयात-निर्यात के केन्द्र हैं।

बटाला नगर अपनी तहसील के समस्त व्यापार का केन्द्र है। यहां से समस्त तहसील के भागों को सड़कें तथा मार्ग हैं और यहां से चारों ओर पक्की सड़कें तथा रेलवे लाइने जाती हैं। गुरदासपुर तहसील का पश्चिमी तथा उत्तरी पश्चिमी भाग भी इसी स्टेशन द्वारा सामान बाहर भेजता है। गुरदास पुर के नहरी क्षेत्र का गेहूँ तथा गुर सोहाल स्थान पर आकर एकत्रित होता है। गुरदासपुर में माल खरीदने वाले व्यापारी जाते हैं और वहीं से सामान खरीदते हैं।

दीनानगर भी व्यापारिक केन्द्र है। सरना में नाज की बड़ी मन्डी है। डलहाजी, बलून बकलोह और धरमशाला स्थानों पर अयात का सामन एकत्रित होता है और वहां से सभी स्थानों पर भेजा जाता है। जम्मू जाने वाली सड़क से घी, चावल और भांग-बाहर भेजी जाती है। चम्ब वनों की लकड़ी रावी नदी द्वारा बाहर भेजी जाती है।

इस जिले में नार्थ वेस्टर्न रेलवे की अमृतसर पठान कोट शाखा, पठान कोट-नूरपुर शाखा का बड़ा हुआ भाग है। एक रेलवे लाइन अमृतसर से बटाला आती है। जिले में डेरा नानक बटाला, बटाला-श्रीगोविन्दपुर बटाला—कादियां, जफरवाल-गुरदासपुर, गुरदासपुर नौशेरा, गाँजी दूरंगल, शकरपुर-डेरा नानक, पठान कोट-माधोपुर, पठान कोट-डलहौजी आदि सड़कें प्रधान सड़कें हैं। डिस्ट्रिक्टबोर्ड के अधिकार में ३८ मील पक्की तथा ४२८ मील कच्ची सड़क है। रावी और व्यास नदियों द्वारा भी व्यापार होता है। इन नदियों में नावें चलती हैं। नदियों को पार करने के लिये घाट हैं। रावी नदी में बसोहली, श्री नगर, शाहपुर, वेहड़ी बुजुर्ग सुन्दर चक, मेला अखवाड़ा, गिदरी, जलाल, ट्रिम्मू

डोरंगल, डेरा पठानन, चन्दू बटाला, बलोकी चक, डेरा नानक आदि और व्यास नदी में काठगढ़, मियानपुर, पखोवल, नौशारा, मौली, बगारियां, मुल्लनवाल, भेट, श्रीगोविन्दपुर और बजेह आदि घाट हैं। जिले में ३२ डाक तथा तथा ११ तार घर हैं।

शासन

गुरदासपुर जिले का शासन लाहौर कमिश्नरी के कमिश्नर के अधिकार में हैं। डिप्टी कमिश्नर, जिला तथा सेशन जज, ३ सब जज और ३ छोटे कमिश्नर जिले का शासन करते हैं। अप्रैल से अक्तूबर तक डलहौजी का सब डवीजन अलग कर दिया जाता है और वहां का शासन एक सहायक कमिश्नर के हाथों में सौंप दिया जाता है।

जिला चार तहसीलों में विभाजित है। प्रत्येक तहसीलदार प्रबन्ध तहसीलदार के हाथ में है। तहसीलदार की सहायता के लिये नायब तहसीलदार कानूनगो, पटावारी और सहायक पटावारी रहते हैं। इनके अतिरिक्त प्रत्येक तहसील में एक दफ्तर का कानून गो रहता है। माल और झगड़े के मामले जिले का कलक्टर, जज, मुन्सिफ तथा आनरेरी जज करते हैं।

फतेहगढ़ और रांगरनंगल याल्लकों का प्रबन्ध कोर्ट आफ वार्ड्स के अधिकार में रहता है। जिले से सरकार को लगभग १५ लाख रुपये है। जिले में १८ थाने हैं जो चारों तहसीलों में बंटे हैं हैं। ये थाने गुरदासपुर, कालानौर रानियां, कहनुवां, दीना नगर, पठानकोट, डलहौजी, दुनेरा, नरोट, शाहपुर, कोट नैना, चमल शाह गरीब, बटाला शहर बटाला सदर डेरा नानक, फतेहगढ़ और श्रीगोविंदपुर में स्थित हैं।

शिक्षा

जिले में शिक्षा की बड़ी कमी है। पुरुषों के मध्य प्रत्येक हजार पीछे केवल ५१ व्यक्ति और स्त्रियों में प्रत्येक हजार पीछे केवल दो शिक्षित हैं। पठान कोट में पुरुष तथा बटाला में स्त्रियां अधिक शिक्षित हैं। शिक्षा के ध्यान से बटाला तहसील का नम्बर सब से ऊँचा है क्योंकि अधिकांश हाई स्कूल यहीं पर है। शक्करगढ़ तहसील शिक्षा में सब से पीछे है। जिले की प्रधान जातियों में हिन्दू जाति के लोग ही अधिक शिक्षित हैं।

साधारण रूप से जिले के सभी स्कूलों में उर्दू प्रधान भाषा है केवल कुछ लड़कियों के स्कूलों में गुरमुखी तथा नागरी प्रधान भाषा है। जिले में सभी प्रकार के कुल लगभग २०० स्कूल हैं जिनमें लगभग १५ हजार लड़के तथा लड़कियां शिक्षा प्राप्त करते हैं। यहां कुल तहसीलों में मिलाकर १० हाई स्कूल ६ ऐंग्लो वर्नाक्यूलर और ५ वर्नाक्यूलर हैं। केवल पठान कोट में लड़कियों के लिये लिये हाई स्कूल है।

नगर

गुरदासपुर जिले में नगर नहीं हैं। केवल गुरदासपुर और बटाला दो ही नगर हैं। बटाला नगर सब से बड़ा नगर है जिसकी जनसंख्या लगभग चालीस हजार है। यहां पर ५ हाई स्कूल, थाना, शफाखाना, स्पताल रुई के कारखाने, रेशम, चीनी और लोहा के कारखाने उन्नत पर हैं। रेलों का यह नगर केन्द्र है इसी कारण से व्यापार का भी केन्द्र हैं। यहां म्यूनिसपैलटी भी है। यहां पर ईसाई धर्म वालों का काफी प्रचार है।

पठान कोट नगर की संख्या लगभग १० हजार है। यहां पर रेलवे का टर्मिनस है। यहां से डलहौजी, धरमशाला, मन्डी और कुल्लू स्थानों को सड़कें जाती हैं यहां चावल, बांस, लोई और शाल का व्यापार होता है। नगर में एक हाई स्कूल, मिडिल स्कूल, अस्पताल, थाना आदि हैं।

गुरदासपुर की जन संख्या लगभग १२ हजार है। यह नगर अपने जिले का केन्द्र है और इसी कारण इस नगर को उन्नति भी बराबर होती जा रही है। पहले यह केवल एक छोटा सा गाँव थाना था। यहाँ गल्ले की एक बड़ी मन्डी है। नगर में कई एक कारखाने हैं। जिले की समस्त कचेहरियां यहां पर स्थित है। नगर में एक हाई स्कूल, थाना डाक-तारघर, अस्पताल आदि हैं।

सुजानपुर की जन संख्या लगभग ८ हजार है। यहां पर कपड़ा, रेशम दरी, क़ालीन आदि तयार करने के कारखाने हैं। यहां ऊन से सुन्दर बहुमूल्य कम्बल तथा दुशाले तयार होते हैं। जोड़ा भी अच्छे तयार किये जाते हैं। यहां चीनी का एक कारखाना तथा कोर्बोनिक एसिडगैस तयार करने के कारखाने हैं। यहां पर एक हाई स्कूल मिडिल स्कूल, थाना डाक-तार घर, अस्पताल आदि हैं।

बालून को मिला कर डलहौजी एक पर्वतीय सैनीटोरियम है। यहां अंग्रेजी सेना रहती थी। नगर की जनसंख्या लगभग ५ हजार है। गरमियों में जन संख्या बढ़ जाती है। यहां म्यूनिसिपैलिटी, हाई स्कूल, एंगलो वर्नाक्यूलर स्कूल, डाक-तार घर थाना और अस्पताल हैं।

कालानौर की जन संख्या ५ हजार से ऊपर है। यह गुरदास पुर से १५ मील की दूरी पर स्थित है। यह एक ऐतिहासिक स्थान है। यहा एक कसाई घर है और चमड़ा बाहर भेजा जाता है। नगर में स्कूल, थाना, स्पताल, डाक तथा तार घर आदि हैं।

डेरा नानक बटाला से १८ मील की दूरी पर स्थित है। यह सिक्खों का एक प्रधान तीर्थ स्थान है। यहीं पर गुरु नानक के दर्बार साहब हैं। यहाँ एक बड़ा मेला लगता है। यहाँ स्कूल, थाना, अस्पताल डाक-तार घर तथा म्यूनिसपैलिटी है।

दीनानगर पुराना है। इसकी जनसंख्या लगभग ५ हजार है। इसे अदीना बेग ने बसाया था। यहाँ पर स्कूल, अस्पताल, थाना डाक-तार घर हैं।

गुरगांव ज़िला

गुरगाँव का शुद्ध रूप गुरु गाँव है। बिगड़ कर यह गुर गाँव हो गया है। कहा जाता है कि महाराज युधिष्ठिरने इस ग्राम को अपने गुरु द्रोणाचार्य को दिया था। द्रोणाचार्य महाराज का सरोवर यहां सड़क के पश्चिम की ओर अब भी वर्तमान है। इसके अतिरिक्त यह भी कहा जाता है कि यहां पर गुरु द्रोणाचार्य ने कौरवों तथा पांडवों को धार्मिक शिक्षा यहीं प्रदान की थी।

सन् १८७२ और १८७६ ई० की नाप-जोख के अनुसार जिले का क्षेत्रफल १,९४६.८७ वर्ग मील है। यह २७°३९', और २८°३१' उत्तरी अक्षांशों तथा ७६°२१' और ७७°३५ पूर्वी देशान्तरों के मध्य स्थित है। पंजाब प्रान्त के दक्षिणी-पूर्वी कोण पर यह जिला स्थित है। इसके उत्तर-पूर्व में दिल्ली जिला, पूर्व में यमुना नदी जो इसे संयुक्त प्रान्त के बुलन्दशहर और अलीगढ़ जिलों से अलग करती है, दक्षिण में मथुरा जिला और भरतपुर राज्य, पश्चिम में अलवर राज्य स्थित हैं।

गुरगाँव तहसील जिले के उत्तरी भाग में और खिड़ी तहसील पश्चिमी भाग में स्थित हैं। यह दोनों तहसीलें बलुही हैं। पहाड़ियों के समीप की भूमि बहुत खराब है जहां नालों और कंदराओं का जाल बिछा हुआ है। पहाड़ियों से दूर कुछ भागों की भूमि अच्छी है जिसमें थोड़ा नमक मिट्टी में पाया जाता है। दूसरे स्थानों में नमक अधिक है। कुछ भाग उजाड़ हैं तथा बलुही पहाड़ियों से पूर्ण गुरगांव के दक्षिण पूर्व तथा दक्षिण-पश्चिम निचले प्रदेश वाले भागों की भूमि अच्छी है। वहां प्राकृतिक रूप से सिंचाई के साधन हैं। गुरगांव की सीमा पर नजफगढ़ झील है। यमुना के तट साधारणतया ऊंचे हैं पर पालवाल तहसील के उत्तर-पूर्व कोण पर यमुना की प्राचीन शाखा नहर लाइनों के मध्य नीचा प्रदेश है जहाँ सदैव बाढ़ आती है। है। यमुना और इस प्रदेश से पश्चिम की ओर धरती का एक पट्टी है। जो उत्तर-दक्षिण ३० या ३५ मील लम्बी और पूर्व-पश्चिम १५ या २० मील चौड़ी है। इस पट्टी में अच्छी नमकीन मिट्टी की तह है। यह पट्टी यमुना की ओर ऊंची और पूर्व तथा पश्चिम की ओर धीरे धीरे ढालू होती गई है।

यह पट्टी पालवाल, नूह तथा फीरोजपुर तहसीलों में फैली हुई है। अलवर राज्य और गुरगाँव के मध्य पहाड़ियाँ हैं। इन पहाड़ियों तथा इस पट्टी के मध्य नूह प्रदेश में एक नीचा मैदान है जिसकी मिट्टी अच्छी है पर पहाड़ियों के नीचे नूह के उत्तर-पूर्व और पालवाल के उत्तर-पश्चिम का प्रदेश बहुत बलुहा है नूह का वह भाग जो पहाड़ियों के ऊपर है वह एक ऊंचा प्रदेश है। इस प्रदेश के ढाल वाले भागों की भूमि कुछ अच्छी है। विशेषकर मध्यवर्ती तथा पश्चिमी भागों की मिट्टी अच्छी है। फीरोजपुर का कुछ भाग दो पहाड़ियों के मध्य एक घाटी बनाता है। इस घाटी की मिट्टी अच्छी है। कहीं कहीं इस घाटी में बालू आ गई है। पहाड़ी के समीपवर्ती भाग की भूमि खराब है। उत्तर की ओर जाकर यह घाटी नूह प्रदेश में लुप्त हो जाती है।

इस जिले की पहाड़ियां अरावली पर्वत श्रेणियों से सम्बन्धित हैं और दक्षिण-पश्चिम से उत्तर-पूर्व की की ओर फैली हुई हैं। यह पहाड़ियां जिले में एक विशेष स्थान रखती हैं। इन पहाड़ियों की एक श्रेणी फीरोजपुर तहसील के दक्षिणी-पश्चिमी कोण से नूह के सामने तक जिले की सीमा बनाती है। नूह के सामने से सीमा रेखा पश्चिम की ओर मुड़ जाती है जब कि पर्वतीय श्रेणी अपने मार्ग पर ही चली गई है। उसके पश्चात् यह श्रेणी गोलाकार रूप में पश्चिम की ओर घूम कर तीन प्रत्यक्ष शाखाएं बना कर समाप्त हो जाती है। इनमें से दो उत्तर की ओर और एक पश्चिम की ओर चली गई है। पश्चिम वाली शाखा के समानान्तर पूर्व की ओर एक दूसरी श्रेणी है। यह श्रेणी जिले की दक्षिणी सीमा से २५ मील उत्तर की ओर चलने के पश्चात् कटाव दार होती चली गई है। लगभग २० मील तक तो केवल यहां, वहाँ बिखरे पहाड़ी टीलों के सिवा श्रेणी का और कोई चिन्ह भी नहीं है। उससे चल कर यह पर्वतीय श्रेणी फिर उदय हो जाती है और जिले की उत्तरी-पूर्वी सीमा बनाती है और दिल्ली जिले में प्रवेश कर जाती है।

छोटी टूटी पहाड़ी श्रेणियां तथा विलग पहाड़ियां रिवाड़ी के दक्षिण और पश्चिम की ओर वर्तमान हैं। यह पहाड़ियां रोहतक जिले में भी चली गई हैं और रिवाड़ी के उत्तर-पूर्व, नूह के उत्तर-पश्चिम, फीरोजपुर तहसील के पूर्वी भाग में फैली हुई हैं। जिले की पहाड़ियों का संयुक्त क्षेत्रफल ११'३९७ वर्ग मील है। पहाड़ियों की ऊंचाई सब कहीं समान नहीं है। जैसे जैसे उत्तर की ओर पहाड़ियां गई हैं वैसे वैसे ऊँचाई कम होती गई है। दिल्ली और गुर गांव की मध्य वर्ती पहाड़ियां तीन मील चौड़ी हैं। मैदानी भाग में ऊंचाई ५ सौ से साढ़े सात सौ फुट तक है। मिछोली के ऊपर पहाड़ी की ऊंचाई समुद्र धरातल से १,२४७ फीट है। टांकरी की अकेली पहाड़ी सर्वोच्च है और समुद्र धरातल से २ हजार फुट ऊंची है।

पर्वतीय श्रेणियों के कारण जिले के अधिकांश भागों के दृश्य रमणीक हो गये हैं। यमुना नदी के अतिरिक्त जिले में कोई भी नदी ऐसी नहीं है जिसमें सदैव पानी रहता हो।

यमुना नदी इस जिले तथा पंजाब प्रान्त की पूर्वी सीमा बनाती है। पश्चिमी यमुना तथा आगरा नहरों के कारण शीतकाल में इस नदी में पानी बहुत कम हो जाता है। वर्षा ऋतु में नदी में भयानक बाढ़ आ जाया करती है। नदी के तट पर इस जिले के लगभग ३० गाँव हैं जिनमें से २० गाँवों पर बाढ़ का प्रभाव पड़ा करता है। जिले की खादर भूमि पर बाढ़ का बहुत कम प्रभाव पड़ा करता है। इसमें वर्षा तथा सोतों के पानी से खेती होती है। साधारण वर्षा वाले वर्षों में बाढ़ नहीं आती है। लोग बाढ़ चाहते भी नहीं हैं क्योंकि अधिक वर्षा होने पर जब बाढ़ आ जाती है तो फसल को बड़ी हानि होती है। खूँखार पशु उतर आते हैं जिससे गाँव के निवासियों को बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। इसके अतिरिक्त बाढ़ से बहुत पतली कछारी मिट्टी की परत बालू पर पड़ जाती है जिससे बाढ़ समाप्त होने पर वह सूख जाती है और उसमें कुछ उपज नहीं होती है।

जहर नाला दिल्ली जिले के चैंसा नामक गांव के समीप से यमुना नदी से निकलता है और घूम कर फिर पालवाल तहसील में यमुना से मिल जाता है। इस नाले से जो द्वीप बन जाता है उसकी खादर भूमि किसी काम की नहीं है। विनाशकारी होने के कारण ही नाले का नाम जहर रक्खा गया है। यह नाला संकरा तथा बहुत गहरा है। भीषण बाढ़ के समय इससे बड़ी हानि होती है। इस नाले के मुख पर बांध बना कर इसे रोकने का प्रयत्न किया गया था, पर बाढ़ आने पर बांध टूट गया और फिर बनाने का प्रयत्न नहीं किया गया।

यहां किसानों को खेती में बहुत अधिक परिश्रम करना पड़ता है और लाभ कम होता है। इसी कारण किसान खेती का काम छोड़कर बहुधा भाग जाते हैं। सदैव खतरा बना रहता है कि भूमि बिना जोते-बोये पड़ी रह जावेगी नदी के तट वाली भूमि में झाऊ, कासा आदि के वन हैं जिसमें जङ्गली सुअर तथा हिरण आदि रहते हैं। वहां खेती नहीं हो सकती है।

गुरगांव जिले की ५०० वर्ग मील भूमि ऐसी है जहां वर्षा का पानी ठहरता है। शेष लगभग १२०० वर्ग मील का पानी भूमि में नहीं रुकता है और वह जाता है। बाढ़ के कारण वर्षा का भी पानी उसी के साथ वह जाता है। नजफगढ़ झील में कसओटी, साहबी और उत्तरी गुरगांव के नदी नालों का पानी आता है। भरतपुर झील में दक्षिणी गुरगांव, बल्लभगढ़, मध्यवर्ती नूहवेलिन, लन्दोहा, दक्षिणी नूह और लुहिंगा घाटी का पानी आता है। नजफगढ़ झील में गुरगांव जिले के ७०० वर्गमील भूमि का पानी बहकर जाता है लगभग १००० मील का पानी भरतपुर झील में जाता है।

कसौटी नदी पहाड़ी है। यह दक्षिण से निकलती है और दक्षिण-पूर्व, पश्चिम को बहकर रिवाड़ी तहसील में दाखिल होती है। यह नदी अधिक वर्षा होने पर बहती है और अपने समीपवर्ती खेतिहर प्रदेश को लाभ पहुँचाती है। नंगल पठानी स्थान पर नदी के ऊपर रेलवे पुल बना है जिस पर होकर रिवाड़ी-फीरोजपुर रेलवे लाइन जाती है। उसके पश्चात् यह नदी रोहतक जिले में प्रवेश कर जाती है और फिर नजफगढ़ झील में गिरने के पहले साहिबी नदी से मिल जाती है।

कसौटी के समीप स्थानीय नदी नाले खोल की पहाड़ियों से आरम्भ होते हैं। यह पहले उत्तर, फिर पूर्व और फिर खलेता होकर उत्तर-पूर्व को चले जाते हैं।

खोल और खोरी पर्वतीय श्रेणियों के मध्य कई एक नदी नाले हैं जो बलौरी या उसके आगे तक जाते हैं। खोरी के पूर्व कुछ नदी-नाले हैं जो सहारन वास की ओर जाते हैं। रिवाड़ी के पश्चिम की ओर कोई नदी नाला नहीं है जिससे वहां का पानी वहीं की भूमि में रहता है।

रिवाड़ी में पूर्वी प्रदेश के वह प्रदेश का पानी साहिबी नदी में आता है। साहबी नदी जयपुर से निकलती है। यह एक बड़ी नदी है। इसकी पश्चिमी शाखा बांधी गई है पर इससे इसकी तेजी पर कुछ चौड़ी बलुही तली है। जैपुर में भीषण वर्षा होने पर नदी में प्रबल बाढ़ आ जाती है। १८४५ ई० तथा १८७० ई० में जयपुर में भीषण वर्षा के कारण नदी की बाढ़ से रिवाड़ी नगर डूब गया था। १८७३ ई० की बाढ़ तो लगभग आधी रात को आई थी और नगर में तीन फुट पानी भर गया था। यद्यपि बाढ़ का पानी कुछ घन्टों में ही आगे वह गया फिर भी नगर को उससे बहुत हानि हुई थी। पर जयपुर राज्य में बुचारा स्थान पर नदी में बांध बना देने के कारण भीषण बाढ़ का आना रोक दिया गया है जिससे नदी का पानी नदी से बाहर नहीं फैलता है।

इन्दोरी नदी अलवर राज्य से आरम्भ होती है। उसके पश्चात् धुर उत्तर को बहती हुई तारू परगना में प्रवेश करती है उसके पश्चात् पश्चिम को मुड़कर मुन्दसी, सोहना और नूह का पानी लेती है। इसमें पांच या ६ वह प्रदेशों का पानी नदी-नालों द्वारा आकर मिलता है। यह नदी नाले कहीं कहीं पर अधिक गहरे हैं। इन सबों का पानी लेकर इन्दोरी

नदी साहिबी में मिल जाती है। इन्दोरी नदी पटौदी राज्य में साहिबी से मिलती है उसके पश्चात् रेलवे पुलों होकर आगे बढ़ती है। यह पुल जटौली और खालोपुर के मध्य स्थित हैं। पटौदी के आगे चलकर साहिबी रोहतक जिलों में प्रवेश कर जाती है और चौड़े घुमाव के साथ उत्तर को घूम जाती है। इसकी एक शाखा और सीधे उत्तर को फरुख़ नगर के पश्चिम होकर चली गई है।

उत्तरी गुरगांव प्रदेश के दो भाग हैं। पहला वह पहाड़ी भाग जो दिल्ली को गुरगांव से अलग करता है दूसरे गुरगांव तहसील की मध्यवर्ती पहाड़ियों का उत्तरी ढाल है।

पहले में सब से प्रसिद्ध बादशाहपुर नाला है जो बल्लभगढ़ तहसील का पानी पहाड़ी कन्दराओं होकर लाता है और दिल्ली को गुरगांव से अलग करता है। पहले यह भुन्दसी घाटी होकर दक्षिण की ओर बहता था पर लगभग डेढ़ सौ वर्ष हुये घसेड़ा के बहादुरसिंह ने एक बांध बनवा कर इस का मार्ग बदल दिया था। जिससे अब यह वर्तमान मार्ग होकर ही बह रहा है और नजफगढ़ झील में गिरता है। दूसरे भाग में मनेसर और कासन खास नाले हैं जो उत्तर-पश्चिम की ओर बहते हैं और झील के पश्चिम कोण पर गिरते हैं।

दक्षिणी गुरगांव वाह प्रदेश-गुरगांव से लगभग साढ़े छः मील दक्षिण से भूमि ढालू होती गई है जिसका समस्त जल भरतपुर में आता है। दक्षिणी गुरगांव वाह प्रदेश में महेन्द्रवाड़ा, वालोज लन्दोहा मुख्य नाले हैं। इनमें सब से प्रसिद्ध लन्दोहा है। यह अलवर की दो नदियों के मिलने से बना है। फीरोज पुर की घाटी में बहने के बाद यह कोटला झील में गिर जाता है। इस नाले के पानी पर अधिकार सम्बन्धी फीरोजपुर तथा अलवर राज्य के जमीदारी में झगड़ा बना रहता है।

महेन्दवाड़ा नाला या नदी शक्ति शाली है। यह रोहतक की पहाड़ियों से आती है। इसमें सोहना घाटी का पानी आता है और इन्द्री पहाड़ी के पूर्व होकर बहता है। यहीं सैलानी नदी मिलती है जो बल्लभ गढ़ का पानी लाती है।

वालोज नदी अलवर राज्य से निकलती है और फीरोजपुर तहसील की पश्चिमी सीमा बनाती है और नगीना स्थान पर लन्दोहा से मिलती है। इस नदी से बहुत बालू बहकर आती है।

चन्दैनी झील, खालीपुर झील के १० मील पश्चिम की ओर स्थित है। यह नूह तहसील के उत्तर-पूर्व में है। नूह के उत्तर में संगोल उजीना झील है। जब इस झील में खूब पानी भर जाता है तो बहुत बड़े क्षेत्र में पानी फैल जाता है।

कोटला झील जिले की सब से बड़ी झील है। यह तीन मील लम्बी तथा सवा दो मील चौड़ी है यह नूह और फीरोजपुर में है। यह इन दोनों तहसीलों की सीमा पर अलवर पहाड़ियों के नीचे स्थित है। इन झीलों में चारों ओर का पानी आता है। ताओरू पठार के पूर्वी ढालों उत्तरी वाह सोहना से आता है। उत्तर-पूर्व की ओर महेन्द्र वाड़ा नदी आती है। दिल्ली गुरगांव सीमा से भी बहुत सी छोटी छोटी नदियां भुन्दसी और रोझका के मध्यवर्ती प्रदेश का पानी बहाकर झील में लाती हैं।

कोटला और नजफगढ़ के मध्य जल विभाग प्रदेश गुर गांव से सात मील की दूरी पर स्थित है। इस जलविभाजक प्रदेश की ऊंचाई खदाक स्थाने पर समुद्र धरातल से ७१६ फीट है। इसलिये इस जलविभाजक रेखा के दक्षिण का समस्त वर्षा का जल कोटला झील में बह कर आता है। सोहना और महेन्द्रवाड़ा नदियों का पानी इन्द्री पहाड़ियों के पूर्व तथा उत्तर-पूर्व सैलानी प्रवाह क्षेत्र के पानी से मिल जाता है। सैलानी नदी में दिल्ली प्रान्त के १०० मील का पानी आता है और खुतपुरी तथा सरसथल छोटी झीलों का भरता हुआ सैलानी में आ गिरता है। इस उत्तरी तथा उत्तरी-पूर्वी प्रवाह का कुछ पानी सीधा चन्दैनी झील में चला जाता है। इसके मार्ग में ही इन्द्री-चन्दैनी बेसिन पड़ता

हैं। खालीपुर और चन्दैनी बेसिनों की ऊंचाई समुद्र धरातल से ६२५ फुट है। चन्दैनी के भर जाने पर पानी उमड़ कर दक्षिण की ओर चलता है। पहले चन्दैनी अपना पानी कोटला झील में डालती थी जिससे कोटला में अधिक पानी हो जाने से बाढ़ के कारण बड़ी कठिनाई हो जाती थी पर चन्दैनी कटान के बन जाने से अब कठिनाई नहीं रह गई है पर फिर भी यदि कोटना में पानी नहीं समा सकता है और उमड़ आता है तो कटान बना कर पानी उजीना-संगेल के मैदान में फेर दिया जाता है जिसका धारतल चन्दैनी से नीचा है और समुद्र धरातल से केवल ६२० फुट ऊंचा है। कोटला झील में सब से प्रसिद्ध प्रवाह दक्षिण की ओर का है जो फीरोजपुर घाटी होकर आता है। इस बाह प्रदेश की मुख्य नदी लन्दोहा है जिससे अलवर पहाड़ियों का समस्त जल आता है। लन्दोहा की कुल लम्बाई लगभग २१ मील है। पहाड़ियों के पश्चिम बलोज और पूर्व बांगर नदियों का पानी भी कोटला में ही पहुँचता है। जब कभी वर्षा अधिक हो जाती है तो पानी की अधिकता से भरतपुर की सीमा तक के प्रदेश के सरोवर तथा तालाब और नदी नाले भर जाते हैं।

पानी के प्रवाह को रोकने के लिये समय समय पर बांध बनाये गये हैं या निचले प्रदेशों का पानी निकालने के लिये प्रवाह क्षेत्र बनाये गये हैं। उत्तरी गुरगांव प्रवाह नजफगढ़ झील का पानी बहाने में सफल नहीं हुआ है। जब कभी भी भीषण वर्षा हो जाती है तो बहुत सी भूमि समस्त साल जलमग्न पड़ी रहती है। पर पानी भरे रहने से लाभ भी हो जाता है। नीची भूमि में अच्छी मिट्टी पड़ जाती है जिससे खेती अच्छी होने लगती है दक्षिणी गुरगांव बांधों से यह लाभ हुआ है कि खलीलपुर झील कभी भी पानी से अब नहीं डूबती है चन्दैनी, कोटला और संगेल-उजीना झीलें साधारण वर्षों में पतझड़ काल आने तक में सूख जाती हैं। यद्यपि ये बांध अभी पूर्ण रूप से आवश्यकतानुसार नहीं बने हैं तो भी इनसे बहुत लाभ हुआ है।

इस जिले की भूरचना सिंध-गंगा के मैदान जैसी कछारी मैदानी है। पर इसमें पहाड़ियां हैं जिनकी बनावट प्रस्तरी भूत तथा पेननसुलर चट्टानों की है। यह परिवर्तन कालीन हैं और अरावली चट्टानों की भांति ही प्रतीत होती हैं। इनमें मध्यम श्रेणी का स्लेट वाला तथा चूने वाला पत्थर पाया जाता है। मिट्टी में सब कहीं चूना रेह, तथा कंकड़ है।

वनस्पति

जिले में आम, सुरेलान, विलायती बकायन, रुहीड़ा, ककेड़ो, लसोढ़ा, गूगल, करील, हिन्स, बखा, धौक, केंदू, ढाक, अमिल्तास, सिरिस, शीसम, इमली, विलायती बबूल, खांट, बबूल, खैर, जिन्बार या रौंज, नीम, बकाइन, खजूर, ताड़, बेर, झरबेरी, कदम, जाल या डोंगर, हिंगू, झाऊ, फराश, गूलर, पीपल, बार, फाफड़ी आदि के वृक्ष तथा पौधे पाए जाते हैं।

जिले में वन अधिक नहीं हैं। नूह जैसे निचले प्रदेश में वृक्ष बिलकुल नहीं हैं। रेवाड़ी में फराश बहुत पाया जाता है। कीकर का वृक्ष सब कहीं गाँवों में पाया जाता है। गुरगांव के दक्षिण-पश्चिम बहुत से गाँवों में कीकर बहुतायत से उगता है। पालवाल तहसील में कीकर लगाया जाता है और वहाँ उसके वृक्ष लकड़ी के लिये सुरक्षित रक्खे जाते हैं काबुली कीकर भी बहुत है। गाँवों के भीतर और पड़ोस में नीम, पीपल और बेर के वृक्ष खूब उगा करते हैं, खासकर निचले भागों में जहाँ की मिट्टी पलुही है जैसे सुल्तानपुर, सैलानी आदि में खजूर बहुतायत से उगता है पर इसके फल अच्छे नहीं होते हैं जिले के पूर्वी तथा दक्षिणी भाग में ताड़ी का वृक्ष होता है। पालवाल तहसील में वन कुछ अधिक हैं क्योंकि वहां के गाँवों के जाट निवासी कुछ भूमि वृक्षों के लिये अलग छोड़ देते हैं। ऐसे स्थानों को बनी या रिखियां कहते हैं। इन स्थानों पर करील, हीन या झोझार, जाल या डोंगर, रौंझ खैर आदि वृक्ष बहुतायत से उगते हैं। ढाक, गूलर, फाफड़ी और लसोढ़ा आदि के वृक्ष

भी पाए जाते हैं। पालवाल और होदल में कदम का वृक्ष साधारणतया सब कहीं पाया जाता है। कहीं कहीं बरवा और इमली के वृक्ष भी मिलते हैं। आम बहुत कम होता है। धकायन का वृक्ष साधारण रूप से सब कहीं मिलता है पर अमिलतास बहुत कम पाया जाता है। बेर के बाग नगरों के समीप फल के लिये लगाये जाते हैं पर देहात में भी यह सब कहीं उगता है। सड़कों के किनारे डिस्ट्रिक्ट बोर्ड की ओर से शीसम तथा सिरास के वृक्ष लगाए गये हैं। गुरगांव के समीप सड़क पर दोनों ओर विलायती धकायन के वृक्ष लगाए गये हैं। यह वृक्ष बहुत जल्दी उगता है। और बढ़ता है। इसमें श्वेत रंग के सुन्दर फूल होते हैं। पर्वतीय श्रेणियों पर धौक का वृक्ष खूब होता है। किसी समय में जिले की समस्त पहाड़ियां धौक के वन से पटी थीं। पर अब ऐसा नहीं है। गाँव वाले अपने समीप की पहाड़ी में धौक के छोटे वनों की रक्षा करते हैं जब वृक्ष कुछ बड़े हो जाते हैं तो उन्हें बेच डालते हैं। टांकरी पहाड़ियों पर गूगुल के वृक्ष मिलते हैं।

जिले में झड़बैरी के पौधे बहुतायत से उगते हैं। यह पौधा निचले प्रदेश में अधिक उगता है। ताओरू और रिवाड़ी के खेतों में सितम्बर और अक्तूबर मास में यह पौधा इतनी सघनता के साथ उग आता है कि पैर रखने का स्थान बाकी नहीं रहता है। यह पौधा बेकार होता है। इसकी पत्तियां झाड़ कर पशुओं को खिलाई जाती हैं। फल खाया जाता है या बैचुन बना कर नगरों में बेंच दिया जाता है। जड़ों का प्रयोग चमड़ा कमाने में होता है। मूंज का पौधा समस्त जिले में खूब होता है। मूंज से रस्सी, टोकरियां, चटाइयां आदि बनाने का काम होता है।

यमुना नदी के किनारे झाऊ खूब उगता है जिसकी डालियों से टोकरियां तयार की जाती हैं। पहाड़ियों के समीप वर्ती स्थानों में घास खूब उगता है इनके अतिरिक्त और भी भांति भांति की घासें तथा पौधे उगते हैं।

पशु-पक्षी

पहले यमुना नदी के तट पर तथा गुरगांव के समीप बाग पाए जाते थे पर अब नहीं पाए जाते हैं। पहाड़ियों पर कहीं कहीं तेंदुआ पाया जाता है। अलवर पहाड़ियों से यह जिले में बहुधा उतर आता है। पहाड़ियों के समीप वनों में बनबिलाव पाया जाता है। जरग, लोमड़ी, गीदड़ नेवला आदि भी बहुत हैं। पहाड़ी स्थानों में न्यूला की भांति लगभग उससे दो गुना बड़ा, काला-भूरे रंग का पशु पाया जाता है। होयाल, रिवाड़ी और गुरगांव में बन्दर पाए जाते हैं। भुन्दसी, सोहना के समीप नीची पहाड़ियों हर और यमुना के खादर प्रदेश में पाए जाते हैं। पहाड़ियों और निचले प्रदेशों में रीछ हिरण पाए जाते हैं। यमुना खादर तथा पालवाल तहसील में नील गाय मिलती हैं। जिले में भांति भांतिके सांप निचले तथा पहाड़ी प्रदेशों में पाए जाते हैं।

जिले की झीलों में जल-पक्षी बहुतायत से पाए जाते हैं। प्राकृतिक रूप से पक्षीगण पानी वाले स्थानों में अधिक निवास करते हैं। लगभग ६० भांति के तो ऐसे पक्षी पाए जाते हैं जिनका शिकार करने के लिये लोग जाते हैं। इनके अतिरिक्त और भी सैकड़ों भांति के पक्षी पाए जाते हैं। शीत काल में पक्षियों की बहुतायत हो जाती है।

झीलों, नदियों, नहरों में मछलियां भांति भांति की पाई जाती है जो भोजन सामग्री का काम देती हैं।

जलवायु तथा वर्षा

पञ्जाब के अन्य भागों की अपेक्षा इस जिले की जलवायु साधारण है। न तो गर्मियों में अधिक गरमी पड़ती है और न शीत काल में अधिक सर्दी पड़ती है। पहाड़ी श्रेणियों के समीप तथा फीरोजपुर में ग्रीष्म काल में अधिक गरमी पड़ती है। इन स्थानों के निवासी रात के समय खेतों में सोने के लिये चले जाया करते हैं।

पहले नूह आदि निचले प्रदेशों की जलवायु बहुत खराब थी और वहां के निवासी मलेरिया

ज्वर से बहुधा पीड़ित रहा करते थे, पर बांधों के बन जाने के कारण अब मलेरिया ज्वर की कमी हो गई है। जिले के ऊँचे टाओरू ऐसे स्थानों की जलवायु बड़ी स्वास्थ प्रद है। पालवाल, पूर्वी नूह फीरोजपुर की जलवायु भी बड़ी स्वास्था दायक हैं पर आगरा नहर के कारण इन स्थानों पर ज्वर का आक्रमण होने लग गया।

रिवाड़ी तहसील में वार्षिक वर्षा औसत से २२ इञ्च, पालवाल में साढ़े पच्चीच, नूह में २४ फ़ीरोजपुर में २२ और गुरगांव में साढ़े छब्बीस इञ्च होती है। जैसे मानसून पश्चिम की ओर जाते हैं वर्षा कम होती जाती है। वर्षा जून से सितम्बर मास तक होती है। शीत काल में वर्षा असामयिक तथा कम होती है। दहार, चिकनाट, फीरोजपुर, पालवाल के खादर प्रदेश, गुरगांव का साहिबी प्रदेश आदि अपनी रबी के लिये वर्षा पर अधिक निर्भर करते हैं।

लगभग १५ जून से वर्षा आरम्भ हो जाती है। कपास की खेती आरम्भिक वर्षा पर ही निर्भर करती है। प्रथम वर्षा अधिक न होनी चाहिये नहीं तो कपास के बीज बह जाने का भय रहता है। जुलाई और अगस्त मास में अच्छी वर्षा होने की आवश्यकता रहती है।

इतिहास

मेवात प्रदेश के मेवाती लोग आरम्भ काल से ही शरारती सिद्ध हुये हैं जब कभी भी केन्द्रीय सरकार किसी कारण से निर्बल सिद्ध होती थी तभी मेवात के निवासी इधर उधर उपद्रव करने लग जाते थे और लूट मार करके पहाड़ियों में जा छिपते थे। तैमूर के समय में बहादुर नाहर मेवाती सरदार ने खांजादा नामक वंश की नींव डाली थी। बाबर काल में हसन खां मेवाती प्रसिद्ध सरदार खांजदा वंश का था। इन लोगों के मरजाने के पश्चात् मेवात प्रदेश की स्वतंत्रता जाती रही। मेवात का प्रदेश अलवर, भरतपुर तथा गुरगांव जिलों में इस समय विभाजित है।

अकबर काल में गुरगांव का जिला दिल्ली तथा आगरा सूबा में सम्मिलित था जिसमें दिल्ली, रेवाड़ी सुहार या पहाड़ी तथा तिजारा सरकार और पालवाल, जासी, बहोड़ा, टाओरू, रेवाड़ी, सोहना, या लोहाना, होयाल, इन्दौर, उजीना, उमरी-उमरा पिनांगवां, बिसरू, भसोहरा, फमरावत, खानपुर साकरस, सनथ वाड़ी, फीरोजपुर, कोटला, घसेरा और नगीना दस्तूर, मोहाल या परगना थे।

समृद्ध मुगल साम्राज्य काल में गुरगांव जिले का नाम इतिहास के सम्बन्ध में कोई घटना नहीं घटी थी। पर मुगल साम्राज्य की अवनति होते ही गुरगांव जिले का नाम इतिहास में आने लग जाता वहां जो घटनायें घटीं उनका वर्णन इतिहास में और निवासियों की जबानी पता चलता है। आरम्भ काल में रावबहादुर सिंह जिले के मध्यवर्ती भाग में बहादुर गढ़ और फरुख नगर के बलोच सरदार उत्तर में और में भरतपुर के जाट शासक सूरजमल ने ख्याति प्राप्त की। औरंगजेब के समय में दहाना (बादशाहपुर) का बदगूजर राजपूत जिसका नाम हाथीसिंह था उसे औरंगजेब ने पकड़ रक्खा था। भरतपुर चुरामन ने औरंगजेब से उसके छुटकारे की वार्ता चलाई है इस पर वह इस शर्त पर छोड़ा गया कि वह संवलिया नामक प्रसिद्ध म्यो डकैत की हत्या करे। जब यह शर्त पूरी हो गई तो उसे घसेड़ा तथा दूसरे ११ और गांव मिले जिनमें नूह और मलाम भी सम्मिलित थे। हाथी सिंह के मरने पर उसका पुत्र रावबहादुर सिंह जायदाद का मालिक बना जिसने अपने शासन को बढ़ाया और इन्दौर, कोटला, घसेड़ा तथा सोहना पर शासन करने लगा। उसकी आय ५२ लाख की थी।

बहादुर सिंह ने मलहर राव सिंधिया के साथ संधि की जिससे वह आक्रमण कर सके। महाराज भरतपुर ने जयपुर के राजा सूरजमल को लिखा कि वह घसेड़ा पर आक्रमण करें जिससे वह आक्रमण न कर सके। एक दिन जब बहादुर सिंह यमुना के तट पर शिकार कर रहा था तो वह अचानक सूरजमल से उसकी भेंट हो गई। मिलते समय

उसके पास थोड़े से सैनिक थे। सूरजमल ने बहादुर को देख कर प्रसन्नता के साथ अभिवादन किया और उसकी प्रसिद्ध तलवार दे दी पर जब उसकी तलवार को माग सिंह ने जाट सरदारों के हाथ में दे दी तो उसे षड्यन्त्र का पता चला वह अपना जीवन बचाने के लिये घसेड़ा की ओर भागा। घसेड़ा में सूरज मल ने उसे घेर लिया युद्ध के पश्चात् किले पर जयमल का अधिकार हो गया। बहादुर सिंह और उसके सकुटुम्बी सभी मारे गये केवल उसका पौत्र भगवन्त सिंह बचा। जब बचने की आशा न रह गई तो बहादुर की स्त्रियों ने बारूद खाने में आग लगा कर प्राण त्याग कर दिये। घसेड़ा पर सूरजमल का अधिकार १७२७ ई० अर्थात् संवत् १८१० में हुआ था।

फरुख नगर में बलोच—इसके पूर्व जाट सरदारों ने जिले के दक्षिण तथा दक्षिण-पूर्व अपना अधिकार जमा लिया था और अपने आधिपत्य में लाने के लिये मियो जाति पर भीषण अत्याचार कर रहे थे। सूरजमल ने उत्तर की ओर विजय करने आरम्भ कर दी जिससे उसका सामना बलोच सरदारों से हो गया। बलोच सरदार फरुखनगर के थे। फरुखसियर बादशाह (१७१२ई०-१७१८ई०) ने दलेल खां नामक बलोच सरदार को कई एक बड़ी बड़ी जागीरें दी थीं। यह सरदार इस जिले के खुर्रमपुर गांव के एक जमीदार का लड़का था और बाद में इसे फौजदार खां की उपाधि प्राप्त हुई थी। लड़ाई में उसके चार ज्येष्ठ पुत्र मारे गये। उसकी मृत्यु के पश्चात् उसका सब से छोटा पुत्र कामगार खां और फिर उसका पुत्र म्यूज खां फरुख नगर का शासक बना। जब सूरजमल ने आक्रमण किया तो म्यूज खां को भरतपुर पकड़ कर ले गया जहां वह सूरजमल की मृत्यु काल (१७६४ ई०) तक कैद रहा। उसके पश्चात् जेलर की सहायता से वह मुक्त हो गया और फिर फरुख नगर का शासक बना। उसके बाद १८५७ ई० तक उसके वंशज फरुख नगर पर शासन करते रहे। सूरजमल की मृत्यु के पश्चात् जाटों की शक्ति क्षीण हो गई और थोड़े काल के लिये नजफ खां ने मुगल साम्राज्य के लिये जाट प्रदेश पर अधिकार जमा लिया था। पर १७८८ ई० में वह सम्राट से अलग हो गया और रेवाड़ी के समीप गोकुल गढ़ में सम्राट ने उसका घेरा डाल दिया जहां से वह कनौंड भाग कर गया और वहीं उसकी मृत्यु हो गई। उसके पश्चात् मरहठा (घोड़ा वालों) का अधिकार जिले पर रहा।

मरहठे और उनके फ्रांसीसी अफसर—मरहठा काल में इस प्रदेश का शासन सींधिया तथा फ्रांसीसी अफसरों के हाथों में रहा जिनकी राजधानी अलीगढ़ जिले के कोएल स्थान में थी। इन शासकों में मुख्य पीरू साहब, लुई साहब, जनरल पेरन और बीरक्विन थे। कहा जाता है कि ये फ्रांसीसी अफसर बड़े कड़े तथा निर्दयी थे।

इसी बीच रिवाड़ी परगने की राजनीति कुछ और ही रूप धारण कर गई थी औरंगजेब के समय में रिवाड़ी के बोल्नी गांव के नन्द राम नामक अहीर ने उन्नति की और सम्राट उससे प्रसन्न हो गये और उसे रेवाड़ी का शासक बना दिया। उसका ज्येष्ठ पुत्र राव बालकृष्ण १७२९ ई० में करनाल स्थान पर सम्राट के हेतु नादिरशाह से युद्ध करते हुये मारा गया था। दूसरे पुत्र राव गूजर मल को राव बहादुर की उपाधि मिली थी और वह पांच हजार सेना का सरदार बनाया गया था। नारनौल और हिसार के परगने उसे मिले थे। उसके काल में उसके वंश की शक्ति उच्चकोटि पर पहुँच गई थी। उसने गुगैरा और गोकुलगढ़ में किले बनाये थे। गोकुल गढ़ में मुद्रा ढाले जाते थे। उसका पुत्र भवानी सिंह तथा पौत्र राव दलेल सिंह अच्छे शासक न थे जिससे उनका मंत्री मित्र सेन (बहरोर निवासी) धीरे धीरे शासक बन गया। यद्यपि नाम मात्र उक्त वंश शासक बना रहा। राव दलेल सिंह संतान हीन ही छुटपन में ही मर गया और भवानी सिंह की विधवा स्त्री ने बौहरी वंश के हीरा सिंह नामक बालक को गोद ले लिया था। हीरा कुछ समय के पश्चात् मर गया और फिर रिवाड़ी के जौकी राम बक्काल ने राज्य छीन लिया

था उस समय वर्तमान प्रसिद्ध अहीर वंश के तेज सिंह नामक व्यक्ति उठ खड़ा हुआ। वह सूरजमल के वंश का था और रेवाड़ी के समीप मीरपुर गांव का निवासी था। उसने मरहठों से सम्बन्ध कर रक्खा। जब रामसिंह की मां ने उसको उसकाया तो उसने जौकी राम पर आक्रमण करके उसे मार डाला और राज्य पर अधिकार जमा लिया। उसने अपने चारों भाइयों को सीमावर्ती स्थानों पर रख दिया। कृष्ण सहाय लिसान में, रामवक्श धारूहेड़ा में, सवाय सिंह एसिया की गौरवास में और जीवाराम नगल पठानी में रख दिये गये थे। जिससे आक्रमण होने की सम्भावना जाती रही। बाद में उसने अंग्रेजों का साथ ग्रहण कर लिया था पर शायद पूर्णरूप से अंग्रेजों का साथी नहीं बना था। जिससे उसे यमुना के इस पार के केवल ५८ गांव इस तमरार में मिले थे।

रेवाड़ी के दक्षिण शाहजहांपुर परगना पर चौहान राजपूतों का अधिकार था। चौहान राजपूतों का कहना है कि पूरण के भाई गोविन्द राज ने परगना के समस्त नगरों तथा गांवों (टांकरी छोड़ कर) की नीव डाली थीं। यह नीमराणा के प्राचीन राजों का वंशज था। शाहजहांपुर से नीमराणा स्थान कुछ मील पश्चिम की ओर स्थित है। वहां के राजा अपने को महाराज पृथ्वी राज चौहान (दिल्ली के) का वंशज कहते हैं। इस समय वह अलवर महाराज के आधीन राजा या ताल्लुकेदार हैं। इलियट की ग्लासरी के अनुसार शाहजहांपुर का पहले नाम लोहान या शाहजहांपुर चौहाड़ा था। नीमराणा के राजाओं के अंतर्गत यह परगना उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम काल तक चौहानों के अधिकार में बना रहा। उसके पश्चात् जयपुर के राजा के अधीनस्थ हालीदास चौहान ने अपना अधिकार कर लिया था।

३० दिसम्बर सन् १८०३ ई० को अंजेन गाँव की संधि हुई उस संधि के अनुसार दौलत राव सीधिया ने गंगा, यमुना के द्वाब की समस्त भूमि तथा जयपुर, जोधपुर और गोहद के राणा के राज्य के उत्तर की समस्त भूमि अंग्रेजों को दे दी थी। इसमें बहोड़ा, झज्जड़, रेवाड़ी, टाओरू, फीरोजपुर झिरका पालवाल, नूह, सोहना, साकरस, होदल और हाथिन आदि सभी स्थान सम्मिलित थे। इस संधि के पश्चात् गुरगांव अंग्रेजों के आधीन आ गया और तब से वहां अंग्रेजी इतिहास का श्रीगणेश हुआ। इससे तात्पर्य यह निकला कि १८०३ ई० में गुरगांव भारत में मिलाया गया और वह इसका एक अंग बन गया।

उस समय गुरगांव जिले में ११ परगने थे। जिनके नाम झारसा, सोहना, नूह, हाथिन, पालवाल, होदल, पुनहान, फीरोजपुर, बहोड़ा, खेड़ी और शाहजहां पुर हैं। उस समय अंग्रेज यमुना नदी को भारतीय सीमा बनाना चाहते थे उसके आगे स्वतंत्र सिक्खानी राज्य स्थापित करना चाहते थे, इस लिये १८०८-१८०९ ई० में सर्व प्रथम सोहना, रेवाड़ी, बहोड़ा और नूह के परगने भारत (अंग्रेजी) में मिलाये गये। कुछ काल के लिये सोहना बहोड़ा और रेवाड़ी लार्ड लेक द्वारा महाराज भरतपुर को दे दिये गये थे। उसके पश्चात् नूह की भांति सोहना और रेवाड़ी अहीर राव तेज सिंह (रेवाड़ी के) को दिये गये और बहोड़ा उसके भाई राव बक्श सिंह को दिया गया। आखिरकार क्रेशर ने १८०९ ई० में इन्हें अंग्रेजी भारत में ही मिला लिया। १८१३ ई० में मोहम्मद खां अफ्रीदी की मृत्यु पर होदल खिला लिया गया। पालवाल नवाब मुर्तजा खां के अधिकार में जो पैंतालीस हजार सालाना अंग्रेजों को देता था १८१७ ई० में उसके मरने पर वह भी मिला लिया गया। हाथिन परगना ६० हजार सालाना पर फैजुल्ला बेग खां के अधिकार में था। १८२३ ई० में उसकी मृत्यु पर वह भी भी मिला लिया गया। यह सभी लोग इस जिले के निवासी न थे वरन् उन्हें सैनिक सेवा के लिये ये स्थान इनाम रूप में दे दिये गये थे।

शाहजहांपुर की जागीर हरनारायण हाल्दिया को १८०३ ई० में दी गई और १८२४ ई० में मृत्यु

होने पर वह भी भारत में मिला लिया गया। टाओरू भरतपुर के राजा को दिया गया था और १८२६ ई० तक भरतपुर के अधिकार में रहा। पुनहाना, फीरोजपुर और लाहाड़ू (छोटा राज्य) अलवर राजा के वकील अहमद बक्श खां को दिये गये थे। उसके पश्चात् उसका लड़का शम्शुद्दीन फीरोजपुर और पुनहाना का नवाब हुआ तथा लोहाड़ू का शासन भी शम्शुद्दीन को सौंप दिया गया। उसके भाई को पेंशन दे दी गई। शम्शुद्दीन ने अपने भाई को मरवा डाला, जिसके फलस्वरूप वह तथा मारने वाला दोनों ही फांसी पर लटका दिये गये और जायदाद भारत में मिला दी गई। १८३६ ई० में झरसा परगना भी मिला लिया गया जो बेगम समरू के अधिकार में था।

उसके पश्चात् १८५७ ई० तक जिले में किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं हुआ उस समय वर्तमान जिले से जिला भिन्न था। पाली-पालक पालवाल परगने दिल्ली में थे। उस समय जिले में सोहना, रेवाड़ी, पालवाल, नूह, पुनहाना, फीरोजपुर छः तहसीलें तथा झारसा, पाली, सोहना, टाओरू, रेवाड़ी, बहोड़ा, शाहजहांपुर पालवाल, नूह, हाथिन, पुनहाना, होदाल और फीरोजपुर परगने थे।

पहले रेवाड़ी के समीप भारवास जिले की राजधानी थी जहां एक मजबूत सेना रहती थी। अजमेर राज्य मिल जाने पर भारवास की सेना नसीराबाद भेज दी गई और वहां के सिविल अफसर गुरगांव भेज दिये गये। उस समय तक गुरगांव का जिला दिल्ली के रेजीडेंट के हाथ में था। १८१६ ई० में वह जिला दक्षिणी भाग के मुख्य सहायक कमिश्नर के हाथ में दे दिया गया। १८३२ ई० में यह उपाधि बदल कर कलक्टर और और मजिस्ट्रेट की कर दी गई।

१८५७ ई० में जब मेरठ के स्वतंत्रता प्रेमी सैनिकों ने अंग्रेजों के विरुद्ध युद्ध छेड़ा और दिल्ली पहुँचे। उस समय फोर्ड गुरगाँव का कलक्टर था उसने घुड़सवार सेना की सहायता से स्वतंत्रता प्रेमी सेना को पीछे हटा दिया। यह लोग तीसरी लाइट कैवेरी के सैनिक थे। पर जब सैनिकों को देश वासियों से भी सहायता मिल गई तो उन्होंने कलक्टर का डट कर सामना किया वह भागा। स्वतंत्र सेना सैलानी, पालवाल और होदाल उसका पीछा करती चली गई। वह १४ मई को होदाल पहुँचा था। १४ मई को वह मथुरा पहुँचा जहां से वह २० ता० को होदाल फिर लौटा। इस बार उसे भरत की सेना का सहारा मिल गया था। उसके साथ में कुछ अंग्रेज भी थे। पर बाद में जब भरतपुर और अलवर के सैनिक भी अंग्रेजों के विरुद्ध हो गये तो उसने २९ मई को होदाल फिर छोड़ दिया वह सौंधाद गाँव चला गया। उसके बाद वह पालवाल के लिये चल पड़ा उस समय उसके पास योरुपीय तथा भारतीय सैनिक तथा सहायक थे। यह लोग दिल्ली आदि से आ गये थे। ३० ता० को इन लोगों ने चएँना (चैंसा) स्थान पर यमुना नदी पार किया और बुलन्द शहर की ओर प्रस्थान किया पर बुलन्द शहर में भी स्वतंत्रवादियों का जोर देखकर दल मोहना चला गया जहां मीर हिदायत नामक हवलदार ने दल का स्वागत किया। उसे इस कार्य के लिये एक गांव की जागीर दी गई थी। ८ जून को फोर्ड महेना से सोहाना के लिये चल पड़ा। वहां वह ९ जून को पहुँचा और वहां उसे जयपुर की सेना कैप्टन एडेन की अध्यक्षता में मिली। यह सेना म्यों से लड़ती हुई टाओरू होकर आई थी। यही सेना पालवाल और होदाल गई और फिर पहली जुलाई को फोर्ड दिल्ली में ब्रिटिश सेना से जामिला जहां वह १३ अक्तूबर तक रहा।

इसी बीच म्यों लोगों ने सिर उठाया और टाओरू, सोहना, फीरोजपुर पुनहाना, पिनंगवां और नूह आदि स्थानों पर अधिकार प्राप्त कर लिया था। नूह स्थान पर खांजादों तथा म्यों लोगों में युद्ध हुआ। खांजादे मारे गये। खांजादे अंग्रेजों का साथ दे रहे थे। इसके पश्चात् इन स्थानों पर जाट, म्यो, रावत, पठान आदि जातियों में आपस में पुराने झगड़े आरम्भ हो गये। आखिरकार रावतों की

सहायता के लिये ब्रिटिश सेना पहुँच गई क्यों कि रावत लोग अंग्रेजों के सहायक थे। पर स्यों लोगों ने अंग्रेजी सेना को भी पीछे हटा दिया तथा अंग्रेजों के बहुतेरे रावत साथियों को मार डाला।

फीरोजपुर में चिर्कलोट वंश के दो चौधरी थे। यह वाझिनपुर के चांद खां और बुखारक के कबीर थे। जब खूसपुरी के निवासियों ने बदरपुर के लम्बरदार को मार डाला तो यह दोनों चौधरी एक दूसरे के विरुद्ध हो गये और मारे जाने वाले तथा मारने वालों के साथी बन गये। यह अहमद बक्श खां के समय की बात है। १८५७ ई० में झगड़ा पुनः छिड़ गया इस पर सभी चिर्कलोट तथा समीपवर्ती गांवों के लोग दो भागों में विभाजित हो गये। एक दल का सरदार चांद खां बना और दूसरे का सरदार कबीर बना था। कबीर ने अतेराना शम्शाबाद, शादीपुर अंक लीमपुर, चांतीपुर और भादरन गांवों को लूट लिया तो चांद खां ने अपने आदमियों को एकत्रित किया बुखारक गांव को जला दिया तथा इमाम नगर को लूट लिया। उसके पश्चात् दोनों दलों के लोग एकत्रित हुये और बदरपुर तथा बुखारक की सीमा पर ८ दिन तक युद्ध होता रहा पर फैसला न हुआ। लड़ाई में लगभग पचास या साठ आदमी मारे गये। भरतपुर के सरदार सूरज मल के समय में चांद खां और कबीर के पितामह म्यो में प्रतिष्ठित माने जाते थे इसलिये सूरज मल ने चांद खां और कबीर को हाशिर बुला भेजा। कबीर के पितामह ने निमंत्रण अस्वीकार कर दिया और भाग गया पर चांद खां के पितामह गये और उन्हें सजा मिली।

रेवाड़ी के राव तेजसिंह के तीन लड़के पूरण सिंह नाथूराम और जवाहर सिंह संतान हीन मर गया। पूरण के एक लड़का तुलाराम और नाथू के एक लड़का गोपाल था। १८५७ ई० तुलाराम और गोपाल देव अपने वंश के सरदार थे। वे अपने घरेलू झगड़ों में फँसे हुये थे। गदर होने पर तुलाराम ने झटपट रेवाड़ी और बड़ोदा के परगनों पर अधिकार जमा लिया और लगान वसूल करने लगा। उसने सेना बनाई, प्रबन्ध किया और देश की रक्षा मेवो से करता रहा। उसका चचेरा भाई उसके जनरल का काम करता रहा और उसने अंग्रेजों के साथ पत्र-व्योहार जारी रक्खा था। पर दिल्ली के हाकिमों के साथ उसका सम्बन्ध ठीक न था। जब दिल्ली से अंग्रेजी सेना रेवाड़ी की ओर आई तो वह और उसके भाई ने अंग्रेजों के पास जाने से इन्कार कर दिया और भाग खड़े हुये। उनकी जायदाद अंग्रेजों ने छीन ली। उनमें से एक काबुल में और बीकानेर में मर गया।

बहोड़ा में कुछ मेवों के गाँव थे। इन्होंने तुलाराम का शासन अस्वीकार किया था इसलिये उनके गांव लूट लिये गये थे और जला दिये गये थे। जाट लोग मेव लोगों के वैरी थे इस कारण वह तुलाराम के साथी बने रहे। पर जैसे ही तुलाराम भागा मेवों ने जाटों पर आक्रमण कर दिया। चौरासी में जाट एकत्रित हुये वहीं पर युद्ध हुआ। जाट हार गये और लगभग १११ जाट, अहीर तथा ब्राह्मण मारे गये। लगभग ८० मेव भी मारे गये।

१२ अक्तूबर को मिस्टर फोर्ड गुरगांव लौटे। शीघ्र ही झरसा, पालवाल और रेवाड़ी में शान्ति स्थापित हो गई। उसके पश्चात् मेवों पर अंग्रेज़ी सेना ने धीरे धीरे आक्रमण किया और उन्हें हराती हुई घसेड़ा, रूपराका और मङ्क स्थानों पर अधिकार कर लिया। जज्झर फरुखनगर के नवाब और बल्लबगढ़ के राजा फांसी पर अंग्रेजों द्वारा लटका दिये गये और उनकी जायदादें छीन कर ब्रिटिश भारत में मिला दी गई। तुलाराम, गोपालदेव की जायदादें और दूसरे अठारह गांव भी गुरगांव में मिला लिये गये। इस प्रकार गुरगांव का १८५७ ई० का इतिहास समाप्त हुआ। यह जिला सीमा प्रान्त से अलग कर के १८५८ ई० के आरम्भ काल में पञ्जाब में मिला दिया गया। संयुक्त प्रान्त का नाम ही पहले सीमा प्रान्त था।

१८६० ई० में कोट क़ासिम का परगना जो विप्लव के बाद गुरगाँव में मिलाया गया था जयपुर को दे दिया गया। उसके पश्चात् १८६१ ई० में

जिले का पुनर्निर्माण हुआ और जिला पांच तहसीलों में बांट दिया गया। १८६१ के अनुसार गुरगांव जिले में गुरगांव, रेवाड़ी, नूह, पालवाल, फीरोजपुर पांच तहसीलें और फरुख नगर, झांसी, सोहना, बहोड़ा, रेवाड़ी, शाहजहांपुर, नूह, हाथिन, टाओरू, पालवाल, होदाल, पुनहाना और फीरोजपुर परगने बने। पाली का परगना दिल्ली में मिला दिया गया।

गुरगांव में प्राचीन हिन्दू स्थानों के भग्नावशेष बहुत कम हैं शायद वे नष्ट कर दिये गये पर मुसलमानी समय के स्थान मिलते हैं।

पालवाल और सोहना के नगर प्राचीनता के ध्यान से देखने योग्य हैं। पालवाल में तेरहवीं शताब्दी की दो मसजिदें हैं और सोहना में चौदहवीं शताब्दी के आरम्भ काल की एक मसजिद है। इनके अतिरिक्त जिले के बहुत से गाँवों में विभिन्न स्मृतियाँ।

शायद कोटला की मसजिद गुरगाँव जिले में सब से अधिक प्रसिद्ध है। यह मुहम्मद शाह तुगलक के समय की बनी हुई है। यह इस समय गिरी दशा में है।

गुरगांव के प्राचीन कालीन मुसलमानी काल की मसजिदों तथा भवनों को देखने से पता चलता है कि वे हिन्दू काल की हैं और उन्हें तोड़ कर पुनः बनाने का प्रयत्न किया गया था।

फरुख नगर में फौजदार खां द्वारा १७३३ ई० का शीश महल तथा नौकरानियों का द्वारमार्ग देखने योग्य हैं उसी समय की बनी हुई एक मसजिद भी है।

सोहना में बारा-खम्भा और उसी से मिली हुई मसजिद है। यह १३०१ ई० के हैं। दरगाह नजामुल मुल्क तथा लाल मसजिद १४८१ ई० के बने हैं। यहीं पर कुतुब खां की मसजिद है जो सोहना नगर के केन्द्र में उष्ण सोते पर जो स्मृति बनी है वह भी देखने योग्य है। कहा जाता है कि यह स्मृति बहुत प्राचीन है। इसकी मरम्मत १७७४ ई० में रुस्तम खां पठान ने कराई थी।

सोहन नगर के पश्चिम की ओर दो गुम्बज हैं जिन्हें लाल व काला गुम्बज कहते हैं। यह कम्बोह लोगों के समय के हैं। इनके समीप भग्नावशेष (प्राचीन) है। यहीं पहाड़ी के ऊपर एक प्राचीन अधूरा बना हुआ क़िला है। फसेड़ा के बहादुरसिंह के पश्चात् जब भरतपुर के जाट सरदार ने नगर पर अधिकार जमाया था तो उसने इस क़िले को बनाना आरम्भ किया था। सूरज मल ने क़िले को समाप्त भी नहीं किया था तभी अंग्रेजों ने नगर पर अधिकार जमा लिया इसी कारण अधूरा बना पड़ा रह गया।

सोहना से साढ़े सात मील उत्तर की ओर भुंदरी स्थान है वहां पर पठान कला की एक दरगाह-मसजिद है जिसे कहते हैं मेवात के खान जादों ने बनवाया था।

नूह से चार मील दक्षिण मलाव के समीप कोटला में बहादुर खां नादिर की बनाई हुई एक मसजिद तथा मक़बरा है। इन भवनों में लाल तथा भूरा पत्थर बड़ी चतुरता से मिला कर लगाये गये हैं। द्वार मार्ग पर लिखित लेख से पता चलता है यह भवन १३६२–१४०० ई० में के मध्य बने। गाँव के समीप ही एक झील है जिसका वर्णन बाबर ने अपनी पुस्तक में किया है।

गुरगांव के स्टेशन के समीप अलीवर्दी खां की बनाई हुई एक मसजिद है। बेगम समरू की सेना के दो फ्रांसीसी अफसरों द्वारा लगाई हुई वाटिकाएं भी देखने योग्य हैं। फीरोजपुर में कई एक पुराने खंडहर है जो विशेष प्रतिष्ठा वाले नहीं हैं। यहां की जामा मसजिद, १८२४ ई० की बनी है।

पालवाल की जामा मसजिद स्तम्भ वाला बड़ा कमरा और बलुहे पत्थर वाले भाग सभी का सामान व पत्थर गोविंद साबाजी के हिन्दू मन्दिर को तोड़ कर लिया गया था और फिर उससे ये भवन बनाए गये थे। यह मसजिद इकराम वाली के नाम से भी प्रसिद्ध है और मेहराब की खुदावट से पता चलता है कि १२१० ई० में बनी थी।

गाजी शहाब उद्दीन की ईदगाह में केवल एक

दीवार है जिसके १५ भाग हैं और दोनों सिरों पर एक मीनार है। मध्यवर्ती भाग में १२११ ई० की तारीखें खुदी हुई हैं।

नहर के बाहर पूर्व की ओर रोशन चिरगाह का मक़बरा है। यह लाल पत्थर का बना हुआ है। यह १६६१ ई० में बनाया गया था। जब शाहजहाँ का महल बन रहा था तो भरतपुर से दिल्ली जाने वाली प्रत्येक पत्थर भरी गाड़ी से साधु एक पत्थर लेता था। इस प्रकार पत्थर एकत्रित करके उसने इसे बनवाया था।

रेवाड़ी में सय्यद इब्राहीम साहब की दरगाह सर्व प्रसिद्ध है जिनकी मृत्यु १०२६ ई० में हुई थी। लाल मसजिद लाल पत्थर की बनी है। इसके स्तम्भ आदि अकबर काल के हैं। यहां पर दो सरोवर भी देखने योग्य हैं। स्टेशन के समीप वाले सरोवर में तट पर सुन्दर हिन्दू छतरियां बनी हुई हैं। यहां दो सरोगी मन्दिर भी हैं।

जन संख्या

सामूहिक जन संख्या के हिसाब से समस्त पूर्वी तथा पश्चिमी पंजाब प्रान्त को मिला कर इसका सत्रहवां स्थान और गांवों की जनसंख्या के हिसाब से अठारहवां स्थान है।

रेवाड़ी तहसील में प्रति वर्ग मील में लगभग चार सौ. पालवाल तहसील में ५००, नूह तहसील में साढ़े चार सौ, फीरोजपुर तहसील में ४९०, और गुरगाँव तहसील में ३५२ व्यक्ति रहते हैं। यहाँ यह बात ध्यान देने की है कि देहात में जहां कहीं उपज अधिक होती है वहां की बस्ती भी सघन है। जहां उपज कम होती है वहां बस्ती कम है समस्त जिले की जन संख्या लगभग ८ लाख है।

रेवाड़ी तहसील की लगभग १ लाख ७५ हजार पालवाल की १ लाख ८० हजार. नूह की १ लाख ५० हजार. फीरोजपुर की १ लाख ४० हजार और गुरगांव तहसील की जन संख्या लगभग १ लाख ३० हजार है। जिले में ५०० जन संख्या के नीचे वाले लगभग ३० गांव, ५०० से २००० जन संख्या वाले ४६ गांव २००० से ५००० तक की संख्या वाले लगभग २५ गांव हैं। औसत से प्रत्येक गांव की जन संख्या लगभग ५७२ है।

रेवाड़ी, पहाड़, नूह, दहर, फीरोजपुर, चिकनोट और गुर गांव साहिबी क्षेत्रों की बस्ती सघन नहीं है। ये तथा पालवाल खादर बड़े कठिन प्रदेश हैं। पालवाल खादर में बस्ती सघन प्रतीत होती है क्योंकि अधिक खराब भूमि होने के कारण वहां लोग सामूहिक रूप से बस गये हैं। यहां प्रति वर्ग मील में २४३ व्यक्ति निवास करते हैं।

रेवाड़ी नगर एक बड़ा नगर है। उन्नीसवीं शताब्दी में यह एक समृद्धशाली नगर था जिससे लोग यहां आकर अधिक संख्या में बसते थे। उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम काल तथा बीसवीं के आरम्भ काल में यहां की जन संख्या में कमी होने लगी थी। पर अब यह नगर पुनः उन्नति करने लग गया है।

रेवाड़ी के पश्चात् पालवाल नगर आता है अब यह एक प्रसिद्ध कपास का केन्द्र बन गया है। आगरा नहर के बन जाने से इसकी और अधिक उन्नति होती जा रही है। १६०४ ई० से जी० आई० पी० रेलवे की शाखा लाइन द्वारा दिल्ली और बम्बई भारत के प्रधान नगरों से मिला दिया गया है जिससे इसकी जन संख्या तथा व्यापार में दिन प्रति दिन वृद्धि होती जा रही है। आगरा नहर से यहाँ स्वास्थ पर प्रभाव बहुत बुरा पड़ा था पर पानी निकालने का प्रबन्ध किये जाने से अब अवस्था संतोष जनक होगई है।

होदाल नगर भी दिल्ली-आगरा कार्ड लाइन पर स्थित है। यहां नहर से सिंचाई का भी साधन है। यह नगर भी धीरे धीरे उन्नति कर रहा है और जन संख्या बढ़ती जा रही है।

फीरोजपुर-झिरका नगर रेलवे से ३० मील की दूरी पर स्थित है पर व्यापार की वृद्धि होती जा रही है। यहां १९०६ ई० में कपास धुनने तथा दबाने का कारखाना मेसर्स स्पेंसर और को० बम्बई द्वारा खोला गया था। जो कारखाना काम कर रहा है। यह नगर नूह नगर से पक्की सड़क द्वारा मिला

हुआ है। जिससे नगर का व्यापार तथा बस्ती दिन प्रति दिन बढ़ रही है।

फरुख नगर की जन संख्या नमक के व्यापार बन्द हो जाने के कारण १८८१ तथा १८९१ के मध्य घट गई थी पर अब खेती के साधन सुगम हो जाने से पुनः धन-जन में वृद्धि होती जा रही है।

सोहना नगर प्राचीन काल में एक बड़ा उन्नतिशील स्थान था। बाद में इसकी अवनति हो गई पर अब फिर से इसकी उन्नति हो रही है। यहाँ १८८० ई० में भीषण हैजे की बीमारी हुई थी।

गुरगाँव जिले की राजधानी है जिससे इस नगर की उन्नति धन-जन से दिन-प्रति दिन बढ़ती जा रही है और अब यह पंजाब के प्रसिद्ध नगरों में गिना जाने लगा है।

हानि नगर पहले प्रसिद्ध था पर अब वह उतना प्रसिद्ध नहीं रह गया है। यह रेलवे लाइन से दूर स्थित है। नहर बनने और सिंचाई के साधन हो जाने तथा सड़कों के कारण नगर की स्थित अब फिर सुधर रही है।

रीति-रिवाज

गुरगांव के हिन्दू निवासियों के घरों में लगभग हमारे संयुक्त प्रान्त आगरा व अवध के हिन्दू रिवाज की भांति ही काम काज होते हैं। लड़के के जन्म से लेकर मरने के समय तक सभी संस्कार मनाए जाते हैं।

मुसलमानों के मध्य लड़के की उत्पत्ति के समय किसी भांति की भी घोषणा नहीं की जाती है, हां खान जादों के यहां लड़के की उत्पत्ति पर तावा बजाया जाता है और नातेदारों को गुड़ बांटा जाता है। ८ या दस दिन तक दिन में तीन बार नगाड़ा बजाया जाता है। जब बच्चा पैदा होता है तो काजी या मुल्ला साहब बच्चे के कान में अज़ान फूंकते हैं। पर राजपूत तथा मेव जाति के मुसलमान इस संस्कार को नहीं करते हैं। खानजादों के मध्य बच्चे की माँ जन्म के दिन से तीन दिन तक जल स्पर्श नहीं करती छठें दिन माता को स्नान कराया जाता है। कुछ लोगों के मध्य लपसी बांटने का रिवाज प्रचलित है। खानी-पीना तथा मिठाई आदि पड़ोसियों तथा रिश्तेदारों को बांटी जाती है।

मेव जाति बलोच लोगों के यहाँ बच्चे को लोहार पंजनी लाकर पैर में पहराता है जिससे बालक की रक्षा होती रहे। चमार लड़के को जूता लाकर पहराता है। पर रिवाज अधिकतर प्रथम बच्चे की उत्पत्ति पर होता है। तीसरे या छठें दिन बच्चे का नामकरण होता है। कभी कभी कुरान की पुस्तक खोल कर नामकरण होता है। नाम मुल्ला या घर का सब से बड़ा प्राणी रखता है। राजपूत मुसलमानों के यहाँ पंडित जी ही लड़के का नाम करण करते हैं।

धनी लोग अक़ीका संस्कार करते हैं यह संस्कार भिन्न भिन्न जाति के लोगों के मध्य विभिन्न समयों पर मनाया जाता है। इसमें लड़के के लिये दो बकरियाँ और लड़की के हेतु एक बकरी की कुर्बानी की जाती है। लड़कों का खतना लगभग १२ वर्ष की अवस्था में होता है।

हिन्दू लोगों के मध्य दो प्रकार की शादियों का रिवाज प्रचलित है। जिन लोगों में विधवा विवाह प्रचलित नहीं है उनके यहाँ ठीक उसी ढंग से व्याह होता है जैसे कि हमारे यहां सवर्ण जातियों में होता है पर जिन लोगों के मध्य विधवा विवाह होता है उनके यहां व्याह में कोई खास रिवाज प्रचलित नहीं है केवल दोनों ओर के लोगों में तय हो जाता है कि व्याह हो जाय उस निश्चय को कराओ कहते हैं।

मुसलमानों के मध्य निकाह करके व्याह होता है। जिस प्रकार हिन्दुओं के यहां भंवरी (अग्नि प्रदक्षिणा) व्याह में मुख्य संस्कार है उसी भांति मुसलमानों के यहां निकाह है। प्रथम शादी में हिन्दुओं की भांति संस्कार मनाये जाते हैं पर विधवा या दूसरी जाति की स्त्री के साथ व्याह करने में केवल निकाह पढ़ाया जाता है दूसरे संस्कार नहीं किये जाते हैं। हिन्दू तथा हिन्दू से मुसलमान बने हुये लोगों के मध्य अपने तथा माँ

के गोत्र वाली लड़की के साथ व्याह करने का रिवाज नहीं प्रचलित हैं।

व्याह के लिये अवस्था की कोई क़ैद नहीं है। मामूली तौर पर सात और पन्द्रह वर्ष के मध्य व्याह होता है। मुसलमानों के यहां कुछ और अधिक अवस्था हो जाने पर व्याह होता है। व्याह में पीली चिट्ठी, लगन तेल बान, नेवता, बरात, बरोथी, फेरी या भंवरी आदि मुख्य क्रियायें होती हैं।

यद्यपि मुसलमानों के मध्य बहु विवाह की प्रथा प्रचलित है। फिर भी चार स्त्रियों से अधिक स्त्रियाँ एक साथ रखने की धार्मिक नियम के अनुसार आज्ञा नहीं है हिन्दू लोगों के यहाँ स्त्रियों की संख्या पर कोई धार्मिक प्रतिबन्ध नहीं है तो भी सत्य यह है कि लोग एक ही स्त्री के साथ बिवाह करते हैं हाँ संतान न होने पर उस स्त्री की इच्छानुसार संतान दूसरी शादी हो जाती है। जाट और गूजर जाति के लोग एक से अधिक व्याह करते हैं। मुसलमान लौंग स्त्रियों को अपने धार्मिक नियम के अनुसार छोड़ देते हैं। पर हिन्दुओं के यहाँ विवाहित स्त्री को त्याग करने का कोई नियम नहीं है।

भाषा

मेवों लोगों की भाषा मेवाती है जो उत्तरी राजस्थानी भाषा की उप-शाखा है। अहीर लोगों की भाषा अहीर वाती है। यह भी राजस्थानी की उप-शाखा है। जाट लोगों की भाषा बृज भाषा है। यह भाषाएँ बृज-भाषा से मिलती जुलती हैं और इसी से निकली हैं अहीर-वाली भाषा मेवाती, चंगोरी और शेखवाती भाषाओं को मिलाती है। अहीराती में हूँ को सू कहते हैं। हीर सै का अर्थ वह अहीर है होता है। अकार शब्द को अहीराती में आ से उच्चारण करते हैं जैसे कंकड़ शब्द को कांकड़ कहते हैं बृज भाषा और दूसरी भाषाओं में अंतर यह है कि लकार का प्रयोग रकार से किया जाता है जैसे बादल को बादर बिजली को बिजरी चौपाल को चौपार किया जाता है। आ का उच्चारण आव का होता है। और इकार को अकार से मिला कर उच्चारण करते हैं जैसे मेवाती में बिल्ली और बृज बिल्लियां और बांदरी को बंदरिया कहते हैं। नाग-रिक शिक्षित मुसलमान लोग दिल्ली की उर्दू भाषा का प्रयोग करते हैं पर उनकी संख्या बहुत कम हैं।

यद्यपि सभी भाषाओं का व्याकरण एक है पर शांक में विभिन्नता है जैसे हवा को मेवाती में बाव, अहीरवाती में पौन और बृज में बियार कहते हैं। दीमक को मेवाती में दीमक अहीरवाती में दीवल और बृज उसक कहते हैं। इस प्रकार गांवों की भाषा में अन्तर पाया जाता है।

जाति और धर्म

लगभग समस्त फीरोजपुर तहसील, नूह के अधिकांश भाग और गुरगांव तथा पालवाल के कुछ गांवों में मेव लोगों की बस्ती है। फीरोजपुर, नूह के पश्चिमी भाग अलवर और भरतपुर के समीप मेवाती लोगों की बस्ती अधिक है। यह मेव जाति का देश कहलाता है।

इस जाति का इतिहास अज्ञात है। इनकी उत्पत्ति की खोज करना बहुत कठिनाई का विषय है। मेव लोग अपने को राजपूतों का वंसज कहते हैं और उनका कहना है कि कुतुबउद्दीन के समय में वह मेव बने थे। कुछ इतिहासकारों के अनुसार यह लोग आर्यों के पूर्व बसी जातियों के वंशज माने जाते हैं।

मेंव जाति के लोगों के कथनानुसार उनकी जाति १२ पालों अथवा बावन गोत्रों में विभाजित बलंत, रतावत, दखाल, लंदावत चिर्कलोट, डिमरोट दुलोट, नाइ, यंगलोट, दहंगल, कलेश या कलसारती बारह पाल हैं। पाल शब्द मेव जाति की उप-शाखा या पहाड़ी जाति के उप-शाखा के लिये प्रयोग होता है।

खांजादा जाति के लोग पहले अधिक प्रसिद्ध यह लोग अपने को यादव राजपूत कहते हैं। उनका कहना है कि उनके पूर्वज लक्ष्मण पाल और सुमित्र पाल भरतपुर में तहनगढ़ में निवास करते थे। फीरोज़शाह के समय में वह लोग मुसलमान बनाये

गये थे। लछमण पाल का नाम नादिर खां और सुमित्र का नाम बहादुर खां रक्खा गया था। उच्च वंश के होने के कारण उन्हें खांजादा फिर उपाधि दी गई थी और मेवात का राज दे दिया गया था। अब इन खांजादों के पास नूह और फीरोजपुर के पास केवल कुछ कुछ गाँव हैं। सोहना, भुन्दसी और कोटला में भी इनके चिन्ह पाए जाते हैं। जाट जाति इस जिले की एक मुख्य जाति है। जाट लोगों की बस्ती पालवाल, नूह के समीपवर्ती प्रदेश, बहोड़ा के दक्षिण तथा पूर्व और गुरगांव तथा रेवाड़ी तहसीलों के गांवों में है। यह लोग हिन्दू हैं। केवल दो छोटे ताल्लुकेदारियां मुसलमान जाटों की हैं। यह लोग ४ तालुकेदारी वाले मुसलमान जाट अपने को शेख कहते हैं दूसरे लोग मुल्ला कहलाते हैं। बहुत से मुल्ला जो मुसलमान बादशाहों द्वारा मुसलमान बना लिये गये थे अब फिर हिन्दू हो गये हैं और उनके साथ हिन्दू जाट समानस्थ से व्योहार करते हैं। वे अब हिन्दू जाटों से घुल मिल गये हैं। अब भी वह मुल्ला जाट कहलाते हैं पर उनका व्याह आदि सम्बन्ध हिन्दू जाटों से होता है। भट्ट लोगों का कथन है कि जाट जाति में ६ लाख गोत्र हैं। समा गोत्र वाले एक दूसरे के साथ व्याह करते हैं और एक ही भाषा का प्रयोग करते हैं। हिन्दू जाट लोग पञ्जाब के सिख जाटों के साथ व्याह आदि करते हैं। ग्रिफिन्स के पञ्जाब राजाओं की पुस्तक में लिखा है कि पटियाला के महाराज (सिक्ख जाट) की बहिन का विवाह भरतपुर के महाराज (हिन्दू जाट) के साथ हुआ था। गुरगांव जिले में जाट गोत्र के लोग इस प्रकार बसे हैं। (१) सरोत गोत्र वाले जिनके पास २४ गांव हैं जिसमें होदाल भी सम्मिलित है। रावत गोत्र के पास बहीन को मिला कर ८ पूरे गांव तथा २७ गाँवों का कुछ भाग है। (३) डोगर जाट के पास मंद्रकौल को मिलाकर १२ गाँव हैं। ४ तेवातिया जाटों के पास अलवलपुर को मिलाकर दो गांव (५) तांवर जाटों के पास पीरथला गाँव को मिलाकर ४ गांव हैं। (६) पोखवट के पास गनगौला को मिलाकर ५ गांव (७) कटामिया जाटों के पास गुरगांव को मिलाकर ४ गांव (८) रैबदार के पास मितनौल को मिलाकर ४ गांव हैं। यह अंतिम जाट गौत्र बड़ा बेवकूफ माना जाना जाता है। पालवाल के जाट भरतपुर के महाराज को अपना नेता मानते हैं।

रेवाड़ी में अहिरों की बस्ती अधिक है। गुरगांव के उत्तरी भाग में भी यह बहुत हैं। बहरोर, कनौंद नारनौल, कांती, मुदावर, कोट कासिम आदि परगने में भी पाए जाते हैं। यह लोग बड़े परिश्रमी मज़बूत तथा साहसी होते हैं।

पालवाल तहसील में ब्राह्मणों के गांव अधिक हैं। इनके अतिरिक्त दूसरी तहसील में भी कितने ही गांवों के वे हिस्से दार हैं। जब तक किसी तालुके या जमींदारी में कुछ भूमि के मालिक ब्राह्मण नहीं होते तब तक वह तालुका या जमींदारी (हिन्दू) धनी नहीं हो सकता। ऐसा हिन्दू लोगों का विश्वास है। गुरगांव और पालवाल में सारा ब्राह्मण पाए जाते हैं। भरद्वाज मदगल, कौशिक, वशिष्ठ मुनि, पाठिक, वाचिस, दिखोत काकनांग्य, लाथा जोशी आदि ब्रह्मणों के गोत्र हैं। गौड़ गौतम चौरासिया आदि प्रसिद्ध ब्राह्मण हैं। यह लोग समस्त जिले में फैले हुये हैं।

पांचों तहसीली में गूजर लोग पाए जाते हैं। परन्तु दिल्ली-गुरगांव सीमा पर वाले गाँवों के यह लोग मालिक हैं।

सोहना के चारों ओर और गुरगांव के उत्तर-पश्चिम चौहान राजपूत हैं। चौहान लोग रेवाड़ी के छुट-फुट गांवों में भी बसे हैं। इन लोगों का कथन है कि उनके पूर्वज झेलम से आकर यहां पन्द्रहवीं सदी में बसे थे।

गौरव लोग भी राजपूत हैं। यह लोग अपनी भाभी के साथ व्याह कर लेते हैं। यह लोग पालवाल तहसील में रहते हैं। इनमें से कुछ मुसलमान हैं और शेष हिन्दू हैं। धूसर लोग अपने को ब्राह्मण कहते हैं पर न तो उनका व्याह ब्राह्मणों के साथ होता है और न हिन्दू लोगों से वह दक्षिणा ही पाते हैं। धूसर लोगों का नाम धोसी से निकला है यह

एक चमटी नारनौल के पास पहाड़ी है। इसी पहाड़ी पर धूसरों के पूर्वज-पिता ने तपस्या की थी। हेमू नामक प्रसिद्ध व्यक्ति रेवाड़ी का ही धूसर था। गुड़गांव के बनियों में सब से प्रसिद्ध अग्रवाल हैं। यह लोग अपने को हिसार के राजा अग्रसेन का वंशज कहते हैं महाराज अग्रसेन के सोलह पुत्रों ने महाराज वासुक की अठारह सर्प पुत्रियों से विवाह किया था। अग्री लोग अपने को चित्तौड़ के राजपूत बत हैं। मल्लाह लोग अपने को आगरा के समीप रूनक के राजपूतों का वंशज कहते हैं।

अंध विश्वास तथा रीत-रीवाज

खेतिहर निवासियों के मध्य दो प्रकार के धर्म पाए जाते हैं। कच्चा धर्म तथा पक्का धर्म। कच्चा धर्म से अर्थ है कि गांव वाले देवी, देवता, पित्र, भूत और पिशाच आदि पूजन करते हैं। गाँव में एक चौरा भूमिया का बनाया जाता है जहां लोग पान फूल चढ़ाते हैं और आपत्ति आने पर प्रार्थना करते हैं चतुर्दशी के दिन गाँव वाले खास तौर पर प्रसाद चढ़ाते हैं। कुछ गाँवों में चनवाँद की पूजा होती है। वह खेड़ा देवता भी कहे जाते हैं। कुछ लोग चनवांद को भूमिया की स्त्री मानते हैं। चनवांद की प्रार्थना रविवार को की जाती है।

बीमारी के समय बुन्देला नामक देवता का पूजन होता है है। खासकर जब हैजे का प्रकोप या महामारी की बीमारी होती है तो बुन्देला हरदौल लाला की प्रार्थना तथा पूजा की जाती है। यहां तक कि लार्ड हार्डिंज की सेना में जब हैजा का प्रकोप फैला तो बुन्देला के नाम पर कुछ पशुओं का बलिदान हैजा की शान्ति के लिये किया गया। युवा अवस्था में जिन लोगों का देहान्त हो जाता है कहते हैं कि उनकी आत्माएँ भी प्रेत योनि होकर गांव में घूमा करती है। इसके अतिरिक्त जो व्यक्ति इच्छा-पूर्ति होने के पूर्व किसी घटना के कारण मर जाते हैं वह भी प्रेत-योनि में चले जाते हैं और प्रेत होकर वे घर में निवास किया करते हैं। ऐसी आत्माएँ "पितर" कही जाती हैं और उनकी ओर घर वालों को विशेष ध्यान देना पड़ता है। ऐसे लोगों की याद में किसी सरोवर अथवा तालाब के समीप चूल्हा रूप में चौरा बना दिया जाता है और वहीं पर प्रसाद तथा पान फूल चढ़ाए जाते हैं। कभी कभी पितर की आत्मा किसी के ऊपर उतर आती है और वह खेलने लगता है।

भूमिया की भांति कुछ गांवों में पत्थर वाली देवी की मूर्ति की स्थापना एक स्थान पर होती है। जब देवी की मनौती करने पर कोई बीमार व्यक्ति स्वस्थ हो जाता है तो स्वस्थ होने के पश्चात् उसे नगर कोट जाकर काँगड़ा में ज्वाला-मुखी देवी का दर्शन करना पड़ता है। वह अपने साथ देवी के किसी पुजारी भक्त को लेकर जाता है। उसके चले जाने पर उसके घर की स्त्रियां पत्थर वाली देवी स्थान का पूजन करती हैं। पञ्जपीर का भी एक स्थान गांवों में पाया जाता है। हिन्दू लोग इसे पाँडव (पाँचों) भाइयों की स्मृति मानते हैं। कहते हैं कि कभी कभी इन स्मृत-स्थानों पर आश्चर्य जनक प्रकाश अर्ध रात्रि के समय पर होता है। सती-स्त्रियों की भी पूजा गाँवों में प्रचलित है।

पलवल तहसील के रानवाड़ी नामक गांव में शेख अहमद चिश्ती की समाधि है। इस समाधि के अधिकांश मानने वाले हिन्दू हैं यद्यपि चिश्ती साहब मुसलमान थे। यहां के एक कानून गो वंश का कहना है कि उनके कोई पूर्वज चिश्ती साहब की समाधि पर बहुधा आया जाया करते थे। अंत में उसी समाधि पर उनका स्वर्ग वास हुआ मृत्यु हो जाने पर उनकी शव किसी भांति भी उठाए नहीं उठी थी अंत में शव की जब एक उंगली काट कर चिश्ती साहब की समाधि में गाड़ दी गई तो शव सरलता से उठा कर यमुना ले जाई गई।

गुड़गांव तहसील में गैरत पुरवास नामक मेव गांव में विलायत शाह और हशीम शाह की दो समाधियां हैं जिन्हें लोग बड़े आदर की दृष्टि से देखते हैं नूह तहसील में इन्द्री नामक गांव में कहते हैं कि होली के दिन होलिका-दहन वाले स्थान पर आश्चर्य-पूर्वक पांच उंगलियां आप से प्रकट हो

जाती हैं। लोगों ने रात दिन स्थान को ताक कर देखा कि पता चल जाय कैसे उपलियां आ जाती हैं पर आज तक वह ताड़ नहीं पाए कि कैसे वह प्रकट हो जाती हैं।

जिले में जादू, टोना आदि की भी कमी नहीं है। कहते हैं कि किसी गांव में एक ब्राम्हण था युवक तथा युवती की मृत्यु हो जाने पर उसके सिर की खोपड़ी अपने पास रख लेता था और इस प्रकार उसकी आत्मा को अपने अधिकार में रखता था। जब कोई उसके साथ दुर्व्यवहार करता था तो वह उसके यहां किसी को आत्मा को भेज कर उसे परेशान करता था। मजबूर होकर उस आदमी को ब्राम्हण के पास ,आना पड़ता था और ब्राह्मण को प्रसन्न करना पड़ता था। बालकों पर कुदृष्टि का प्रभाव शीघ्र पड़ता है। ऐसा विश्वास और स्थान के निवासियों की भांति इस जिले के निवासियां में भी प्रचलित है। इस लिये बालकों की बड़ी देख भाल करनी पड़ती है और कुदृष्टि लगने पर झाड़-फूँक करके उसकी रक्षा करनी पड़ती है। यंत्र-मन्त्र और तावीजों का भी रिवाज खूब प्रचलित है। बीमारी, महामारी, पशुओं की बीमारी आदि के समय में लोग यन्त्र तथा मन्त्रों का प्रयोग करते हैं। कहते हैं जानवरों की महामारी रोकने के लिये कई उपाय होते हैं उनमें से एक उपाय ब्राम्हणों को भोजन खिलाना और हवन करना है। कहा जाता है कि एक बार मथुरा जिले के तुम्हारा गांव का कोई व्यक्ति अपने बैलों को चरा रहा था। वह अपने ढाल तलवार लिये लेटा था जब कि उसने देखा कि महामारी बीमारी पशु रूप में उसके बैलों की ओर आ रही है। उसने अपनी ढाल सामने करके उसे रोका। महामारी ने जोर लगाया पर आगे न चल सकी इस पर शर्त तय हुई कि जहां कहीं वह व्यक्ति तथा उसके वंशज रहेंगे वहां पशुवों की महामारी वाली बीमारी न रहेगी और यदि होगी तो हट जावेगी। इस लिये जब किसी किसी गांव में ऐसी बीमारी होती है तो उस वंश के लोग बुलाए जाते हैं। वह गांव में आकर चारो ओर प्रदक्षिणा देते हैं और महामारी से कहते हैं कि अपनी शर्त मान रक्खे। ऐसे समय में ब्रह्मणों की सेवा भोजन आदि से की जाती है। ऐसा करने पर महामारी जाती रहती है।

सांप-बिच्छू के काटने और डंक मारने पर मंत्रों से झाड़-फूंक की जाती है और उसी से से लोगों का कल्याण भी होता रहता है।

व्यवसाय

गुरगांव जिले के निवासी निम्नांकित कार्यों में लगे हैं। समस्त जन संख्या के १-३१ प्रतिशत सरकारी नौकरी में, ६१-३१ प्रतिशत खेती में, ६-२८ प्रतिशत निजी नौकरियों में, १७-२० प्रतिशत कला-कौशल में, ४-४७ प्रतिशत व्यापार में, २-११ प्रतिशत लोग रोजगार में लगे हैं। इनके अतिरिक्त २-५१ *प्रतिशत-अप्रवीण मजदूर की हैसियत से काम* करते हैं। और २१ प्रतिशत लोग स्वतंत्र रूप से कार्यों में लगे हैं या किसी कार्य में नहीं हैं।

इससे भली भांति पता चल जाता है कि जिले की जन संख्या का लगभग दो तिहाई भाग खेती का रोजगार करता है। नगरों की जन संख्या का अधिकांश निम्न श्रेणी वाला भाग गांवों का है जो खेती पर ही निर्भर करता है। किसान लोग लगभग साल भर अपने कार्यों में व्यस्त रहते हैं।

घर भोजन तथा वस्त्र

शीतकाल में जिले के निवासी बाजरा, ज्वार और दालें खाते हैं। ग्रीष्म काल में जौ, चना, दूध मट्ठा साग आदि का प्रयोग होता है। ज्वार तथा बाजरे की पूड़ी को गस्सा कहते हैं। जौ की पूड़ी बनाई जाती है। जाट लोग तथा मेव इनका प्रयोग अधिक करते हैं।

रबड़ी—शीत काल में बाजरे का आटा और ग्रीष्म काल में जौ का आटा मट्ठा या मखनिया दूध में मिला कर धूप में रख दिया जाता है। सूख जाने पर नमक तथा मट्ठा फिर मिलया जाता है और फिर अग्नि पर पकाया जाता है। रात के समय यही नमक तथा दूध के साथ खाया जाता है सवेरे यह नमक और मट्ठे के साथ खाया जाता है। अहीर तथा राजपूत इसे पसन्द करते हैं।

महेरी-ज्वार बाजरा तथा जौ के आटे को मट्ठे में पकाकर बनाते हैं। मेव तथा खांनजादा इसे अधिक प्रयोग करते हैं। प्रातः काल किसान लोग संध्या समय या बचा हुआ भोजन करते हैं जिसे कलेवा कहते हैं।

दोपहर के समय ताजी रोटी, दाल, साग, तरकारी तथा चटनी आदि का सेवन होता है। संध्या समय, गस्सा या कलिया, रबड़ी या महेरी, ताजी रोटी, दूध, दाल, तरकारी आदि का सेवन होता है।

साधारण जमीदार लोग पगड़ी, कमरी, कुर्ता, धोती चद्दर और जूती का प्रयोग वस्त्र रूप में करते हैं। कुछ लोग पगड़ी के स्थान पर टोपी का प्रयोग करते हैं। कमरी को यहां बन्दी कहते हैं। इसे राजपूत तथा खान जादे पहिनते हैं।

मुसलमानों में स्त्रियां पायजामा (सुस्ती, छींट तथा लाल मुसलिन का) कुर्ता और ओढ़नी का प्रयोग करती हैं खानजादा स्त्रियां सीना बन्द का भी प्रयोग करती हैं। मेव स्त्रियां साधारणतया पेटी कोट, कुर्ता, लुगरा और सीना बन्द वस्त्रों का प्रयोग करती हैं। हिन्दू स्त्रियां गाढ़े रंग वाला लहँगा, आंजिया और ओढ़नी का प्रयोग करती हैं। जाड़े के दिनों में स्त्रियां कमरी, कुर्ती का प्रयोग आंजिया के ऊपर से करती हैं।

लोगों के घर साधारण कच्चे तथा पक्के बने होते हैं। देहडी से आगे गली होती है तब द्वार होता है उसके पश्चात् आंगन होता है। आंगन के एक ओर दालान तथा कोठरियां होती हैं। साधारण रूप से एक घर में दो या तीन बाखल या बगर होती हैं। इनमें चूल्हा तथा भोजन सामग्री का सामान रहता है। दीवारें मट्टी, कच्ची तथा पक्की ईंट और पहाड़ियों के समीप पत्थर की बनाई जाती हैं। छतें मट्टी तथा घास-फूस की बनती हैं। मेवात में घरों के ऊपर चौबारा होता है।

पशु एक अलग घर (चौहला) में रहते हैं। साधारण किसान के घर में चारपाई, गूदर, खटोला पीढ़ा पीढ़ी, चरखी (रुई धुनने के लिये), चरखा, कोठी (नाज रखने के लिये) कुठेल, चक्की, ओखली मूसल, पंखा (नाज) चूल्हा, हाड़ा, टोकरा टोकरी, खारी, चारी, कम्बल, पाल (भूसा लाने के लिये) सिल—बट्टा, चाकला या होसी, बेलना, चलनी, दरांत (छूरी-चाकू), अतेरां, तराजू, लालटेन, दीवा, डीवट आदि समान रहता है।

मुसलमान लोग प्रायः मिट्टी के बर्तनों का प्रयोग करते हैं। मिट्टी के अतिरिक्त चीनी तथा तांबे के बर्तनों का भी प्रयोग करते हैं। हिन्दू घरों में पीतल तांबा, कांसा, फूल आदि के बर्तनों का प्रयोग होता है। थाली, प्याले, कटोरे, तबाक रकाबी, आबखोरा, लोटा, बांटा, टोलनी, तावी, परात, कुन्डा, डोची, हांडी, कड़ाही, भारतिया (बटलोई) चिम्टा, सन्सी, डोल, घड़ा, मटका, गगरा आदि बर्तनों का प्रयोग होता है।

खेल

गेंडा-बट्टा या परक-चढ़ खेल में एक लड़का दूसरे की पीठ पर चढ़ता है और एक गेंद से खेलता है। यदि गेंद दूसरे किसी अन्य खेल वाले लड़के द्वारा पकड़ ली जाती है तो पकड़ने वाला सवारी करता है। यदि गेंद गिर जाती है तो घोड़ा बना हुआ लड़का अपने सवार को फेंक देता है और गेंद लेकर किसी खेलाड़ी को मारता है। जिसके गेंद लगती है वह घोड़ा बनता है और पहले वाला घोड़ा बना हुआ लड़का सवार बन जाता है। इसी प्रकार खेल चलता रहता है।

नून-शिकारी-इस खेल में नमक के चोर और चुंगी के सिपाही का काम करने का खेल होता है। भूमि पर बनाई गई क्यारियां नमक की कड़ाहियां मानी जाती हैं।

सुरांग लाल घोड़ी खेल में एक ओर के लड़के एक वृत में खड़े हो जाते हैं और विरोधी ओर के लड़के उनकी पीठ पर चढ़ जाते हैं। प्रथम सवार नीचे उतर कर चारों ओर दौड़ता हुआ यह कहता है।

सुराग लाल घोड़ी, तुम मुझसे क्यों न बोली, कुएँ में डोल, भराभर बोल, पीपल का पत्ता, होरा

दुपट्टा, कुएँ में लकड़ी, मैंने जानी ककड़ी, थाली में भाजी लोग, लुगाई राजी।

यह सभी एक सांस में कहा जाता है यदि वह सफल होता है तो ऐसा ही दूसरा करता है जैसे ही कोई लड़का असफल होता है वैसे ही दल बदल जाता है और सरदार घोड़े तथा घोड़े सवार बन जाते हैं।

नीली का असवार खेल में एक लड़का दूसरे की पीठ पर चढ़ता है। एक तीसरा लड़का पूँछता है तुम्हारी नीली घोड़ी का दाम क्या है? और वह जवाब देता है, ३६० रुपये। तब सवाल करने वाला लड़का कहता है वह तो एक कानी कौड़ी तब सवार कूद पड़ता है और उसे पकड़ने का प्रयत्न करता है जब तक वह उसे छूता नहीं है दूसरे लड़के बारी बारी से उसकी घोड़ी पर सवारी करते रहते हैं।

पत्थर खुड़की-खुड़का-एक लड़का दूसरे लड़के पर सवार होता है। सवार अपने हाथ में एक पत्थर लिये रहता है और घोड़ा अपनी आंख बन्द किये रहता है। तीसरा लड़का सवार के हाथ वाले पत्थर को छूता है। सवार घोड़े से पूँछता है किसने छुआ। यदि घोड़े ने सही लड़के को बतला दिया तो पत्थर छूने वाला लड़का घोड़ा बन जाता है और घोड़ा सवार हो जाता है नहीं तो छूने वाला सवार बनता है और खेल होता रहता है।

इनके अतिरिक्त कवड्डी, गुल्ली-डंडा, गेंद-डक्का समुद्र-थिट्टा चील-झपट्टा, आटी-पाटी आदि खेल बच्चे खेला करते हैं।

धार्मिक मेले

गुड़गांव जिले में बहुत से धार्मिक मेले होते हैं इनमें चेचक की देवी मसानी। (मसुरिया माई) का मेला प्रसिद्ध है। इनका मन्दिर गुड़गांव में है। सावन मास को छोड़ कर प्रत्येक मङ्गल को यहां मेला लगता है पर चैत मास में बड़े मेले होते हैं। कहते हैं कि मसानी नाम की पवित्र देवी थीं। यह दिल्ली जिले की केशोपुर की निवासिन थीं। लगभग तीन सौ वर्ष हुये उन्होंने गुड़गांव के निवासी सिंह नामक व्यक्ति को स्वप्न दिया कि वह केशोपुर छोड़ना चाहती हैं और उन्होंने आज्ञा दी कि मेरे लिये तुम अपने गांव में एक मन्दिर स्थापित करो। उन्होंने यह भी कहा कि मेरे मन्दिर पर जितना सामान चढ़ेगा उसके मालिक तुम हो। इसलिये सिंह ने शीघ्र ही मन्दिर बनवा दिया। धीरे धीरे देवी जी का मन्दिर बहुत प्रसिद्ध हो गया और बनारस तक उसकी ख्याति पहुँच गई। यहां के दर्शन से माता (चेचक) से मुक्ति मिलती है तथा माता के निकलने से जो कष्ट उत्पन्न हो जाते हैं उनका निवारण हो जाता है। साल में लगभग ५० हजार लोग दर्शन को आते हैं। अप्रैल या मई महीने में भीड़ अधिक रहती है। सोमवार का दिन विशेष महत्व का रहता है। सिंह के वंशज उस पर जो चढ़ता है पाते हैं। सालाना आयु लगभग ३० हजार रुपये है।

सोमवती अमावस्या पर सोहना स्थान पर मेला स्नान करने के लिये लगता है। वहां गंधक का एक चश्मा है।

रेवाड़ी तहसील में बरौसा स्थान पर भैरों जी के मन्दिर पर मेला होता है। यह मेला चैत सुदी एकादशी द्वादशी तथा तेरस को लगा करता है। दूर दूर से लोग मेले में आते हैं। गाँव के मालिक मन्दिर पर चढ़ा हुआ प्रसाद तथा धन पाते हैं। बैसाख की एकादशी पर भी मेला लगता है।

फीरोजपुर तहसील में खोरी शाह चोखा नामक गांव में मेवों का मेला शाह चोखा की समाधि पर लगता है। हिन्दू भी मेले में आते हैं।

इनके अतिरिक्त कासन स्थान पर भादों सुदी चतुर्दशी को, सोहना में सावन सुदी तीज को, इस्लामपुर में भादों नौमी को, बुधेरा में, चैत मास में बुधवार को, भुन्दसी में चैत सुदी छठ को, मुबारक पुर में चैत मास मङ्गलवार को, पल्ला में रबी-इल-अव्वल मास में; नूह में चैत द्वितीया छठ को,

स्वामी का बमेड़ा में कार्तिक पूर्णिमाशी को, उलावर में ईद के बाद तीन दिन, फीरोजपुर (झीर पर) फागुन सुदी चतुर्दशी को, महौली कुवार तथा चैत की अष्टमी को नगीना में माघ के मध्य में, खोड़ी में चैत तथा कुवार की षष्टी को, भाड़ावारी-बल्वाड़ी में चैत परीवा को, दरौली में भादों नवमी को, ईछापुरी में सावन तथा फागुन सुदी तेरस को, रेवाड़ी में तेज सिंह के तालाब पर सावन सुदी तीज को, सजवाड़ी में रबी-डल-अव्वल की ११ तथा १२ ता०, को बांसवां सियानी में पचगुन एकादशी को पालवाल में भादों सुदी पंचमी तथा षष्ठी को, गुखड़ी में जेठ सुदी एकादशी को, वंचारी में चैत द्वैज तथा भादों सुदी पंचमी को, अलावल पुर में फागुन चतुर्दशी तथा अमावश को, गुरांता में फागुन सुदी एकादशी को और होंदाल में माघ सुदी दूज और बैसाख सुदी दूज को मेला लगा करते हैं।

कृषि

गुरगांव जिले की भूमि खेती के अनुसार चिकनट, नरमट, मग्दा और भूर चार भागों में विभाजित है। चिकनाट दूसरे स्थानों पर डाकर या रोही कहलाता है। यह दहार, तथा साहिबी भूमि में पाई जाती है। वह नूह, फीरोजपुर और गुरगांव में वर्तमान हैं। इसे काफी नमी की आवश्यकता है इसे लिसे यह मिट्टी बड़ी बहुमूल्य है।

नरमट भूमि के लिये कम पानी चाहिये। चूंकि चिकनट की भांति इस भूमि में भी सभी उपज हो सकती है इस कारण यह भी बड़ी आवश्यकीय भूमि इस जिले में है। यह भूमि समस्त पालवाल तहसील, नूह के पूर्व और फीरोजपुर तहसील में पाई जाती है।

मग्दा मिट्टी नरमट से हल्की होती है और कम वर्षा काल में यह सर्वोत्तम सिद्ध होती है परन्तु इस भूमि में नरमट भूमि वाली अधिक मूल्यवान वस्तुएँ नहीं उत्पन्न होती हैं। भूर भूमि वाले अधिक मूल्य वाली फसलें उगती हैं।

जिले की समस्त कृषक भूमि का २९ प्रतिशत भाग चिकनट तथा नरमट मिट्टी का, ३१ प्रतिशत मग्दा का और ३४ प्रतिशत भाग भूर मिट्टी का है।

बिना सिंचाई वाली भूमि में खेती करने के लिये ध्यान रखना पड़ता है कि मिट्टी किस श्रेणी की है। उसमें कौन सी फसल उग सकती है। वहां वर्षा कैसी होती है। यदि चिकनट मिट्टी है तो खरीफ में उसमें जुवार और रबी में गेहूँ, या चना मिला कर (गुंहचनी) बोना पड़ता है। नरमट भूमि में खरीफ में कपास, जुवार, बाजरा, मूँग, अरहर, उर्द, तिल और रबी में जौ, चना या जौ चना मिलाकर बोया जाता है। मादा भूमि में खरीफ में बाजरा और रबी में चना होता है। भूर भूमि में बाजरा, मोथ गुवार बोये जाते हैं। रबी के लिये खरीफ की अपेक्षा अधिक भूमि का प्रयोग किया जाता है। दो फसली खेती केवल ३ प्रतिशत भूमि में होती है। जिले की समस्त जन संख्या के ६१ प्रतिशत लोग खेती पर निर्भर हैं। इस ६१ प्रतिशत लगभग ५ लाख आदमियों का ३२ प्रतिशत भाग तो पूर्णतया खेती पर निर्भर करता है और ६८ प्रतिशत भाग खेती तथा दूसरे कामों पर निर्भर करता है।

बाजरा, जुवार, कपास, मूँग, उरद, मोथ, अरहर, तिल, चना, गेहूँ, चौला, मसूर, ईख आदि की फसलें उगाई जाती हैं। एक एकड़ ईख की उपज में लगभग १०० रु० खर्च करने पड़ते हैं।

झीलों में थोड़ा धान उगाया जाता है। तेलहन (सरसों, तारा मीरा, तिल) आदि की भी उपज होती है। मिर्चा मसाल, सिंघाड़ा और साग-तरकारी भी उगाए जाते हैं।

अच्छी भूमि में खाद डालने की आवश्यकता नहीं पड़ती है। साधारण भूमि में हर दूसरे अथवा तीसरे साल खाद डाली जाती है। सिंचाई कुएँ तथा नहर से की जाती है। सिंचाई के साधन अच्छे होने के कारण उपज में वृद्धि होती है। किसान लोग गाय, बैल, बकरी तथा घोड़े पालते हैं और उनका व्यापार भी करते हैं। रेवाड़ी में

पशुओं का एक बड़ा मेला होता है जिसमें कई हजार पशु बिकने के लिये आते हैं। भूमि कर उत्तम, मध्यम तथा निकृष्ट भूमि के हिसाब से लगता है। अच्छी भूमि में अधिक लगान तथा खराब में कम लगता है।

खनिज सम्पत्ति

फीरोजपुर तथा पाटन उदैपुरी की पहाड़ियों में लोहा मिलता है। फीरोजपुर के नवाबों के समय लोहा निकाला जाता था और समस्त प्रदेश फीरोजपुर प्रदेश में २२ भट्टियां थीं। प्रत्येक भट्टी में १८ घंटे में २ मन लोहा तयार होता था पर जब से यह जिला ब्रिटिश भारत में सम्मिलित किया गया तब से लोहे का रोजगार बन्द कर दिया गया है।

फीरोजपुर के पूर्व तथा रेवाड़ी सड़क पर तांबा मिलता है। भुंदासी के समीप अबरक पाया जाता है। सोहना के समीप पेंसिल वाली धातु पाई जाती है। बालू में सोहना के समीप सोना पाया जाता है। खोल, माजरा-काल्की में सिलेट की खानें हैं यह पहाड़ियों पर पाई जाती हैं। फीरोजपुर तहसील में बसाई मिवो की पहाड़ियों से भी सिलेट निकाला जाता है।

रहता है। पर शीतकाल में ठंडी हवा चलने पर ताप कम हो जाता है। अंग्रेजों ने इसे लाभदायक जान कर अपने नहाने के लिये भी सरोवर बना लिया है योरुपीय सरोवर १८ फुट लम्बा, १६ फुट चौड़ा और लगभग ९ फुट गहरा है।

जिले के पूर्व एक गांव में गंधक निकाली जाती है। पालवाल और होदाल स्थानों पर नमक की भांति गंधक साफ करने के लिये मिट्टी की कड़ाहियां बनाई जाती हैं और उसमें गंधक वाली मिट्टी डाल दी जाती है और फिर उन्हें पानी से भर दिया जाता है। जब गंधक द्रव्य पदार्थ की दशा में एकत्रित हो जाती है तो उसे निकाल कर एक बड़े कड़ाहे में डाल कर उबाला जाता है। जब उबाल आ जाता है तो वह दूसरे कड़ाह में कर दी जाती है जिसमें १५ मन कच्ची गंधक डाली जाती है। तब मिला कर एक घंटे तक पकाया जाता है। इस तरह करने से नमक नीचे बैठ जाता है और गंधक ऊपर आ जाती है। उसके बाद गंधक को डिब्बों में निकाल लेते हैं ६ दिन में वह ठोस हो जाती है।

बढ़ई, चौलनी, फरुख नगर में स्टूल, कुर्सी तथा टोकरियाँ मूंज आदि से तयार की जाती हैं। पालवाल और होदाल में कपास साफ करने, धुनने तथा दबाने के लिये चार कारखाने हैं।

व्यापार

रेवाड़ी, गुरगांव, पालवाल, होदाल और कोसी व्यापारिक केन्द्र हैं और रेलवे लाइन पर स्थित हैं। सोहना, नूह, फीरोजपुर झिरका भी व्यापारिक केन्द्र हैं। रेलवे लाइनों के खुलने से प्राचीन व्यापारिक केन्द्रों को धक्का पहुँचा है और नये व्यापारिक केन्द्र बन गये हैं। रेवाड़ी से पगड़ी, जौ, तेलहन, दाल तथा बाजरा बाहर भेजा जाता है। रेवाड़ी का जौ अच्छा होता है इससे शराब तयार की जाती है इस लिये शराब तयार करने के लिये साल में यहां से तीन लाख मन जौ भेजा जाता है। बम्बई को तेलहन तथा गुजरात को बाजरा जाता है। गेहूँ, चावल, गुड़, नमक रुई तथा सूत बाहर से रेवाड़ी आता है। गुरगांव में भी लगभग रेवाड़ी की भांति ही व्यापार होता है। हां यहां से जौ कम मात्रा में बाहर जाता है।

दूसरे तीन तहसील से रुई, तेलहन और चना बाहर भेजा जाता है। रुई को छोड़कर और दूसरे सामान दूसरे स्थानों की भांति यहां भी बाहर से मँगाए जाते हैं।

आवा-गमन के साधन

इस जिले में राजपूताना-मालवा रेलवे, रेवाड़ी भटिंडा शाखा लाइन, रेवाड़ी-फुलेरा कार्ड लाइन और आगरा-दिल्ली कार्ड रेलवे लाइनें हैं। रेवाड़ी तहसील में रेलवे लाइन का अधिक भाग स्थित है।

इस जिले में १०३ मील पक्की तथा ५०० मील कच्ची सड़कें हैं। पक्की सड़कें गुरगांव से सोहना, सोहना से पालवाल, फरुख, नगर. पालवाल होदाल, दिल्ली से मथुरा, दिल्ली से गुरगांव, सोहना से नूह, फीरोजपुर से अलवर, नूह से फीरोजपुर, नूह से पालवाल, रेवाड़ी सर्कुलर रोड आदि हैं।

दिल्ली से रेवाड़ी और जयपुर को, रेवाड़ी से झज्झर को, गुरगांव से दिल्ली को, गुरगांव से बहादुर गढ़ को, सोहना से जटौली स्टेशन को, नूह से ताओरू को, नूह से हाथिद को, नूह से पुनाहाना को फीरोजपुर झिर्का से होदाल को दो सड़कें फीरोजपुर झिरका से तिजारा को और पालवाल से गुरवाड़ी घाट को कच्ची सड़कें गई हैं।

आगरा नहर में नावें चल सकती हैं। पर सरकारी नावों के अतिरिक्त दूसरी नावें चलने की मनाही है शेखपुर, सोलरा, भौलरा, गुरवाड़ी, सुलतानपुर, बलोचपुर, हसनपुर और मौहाजी में घाट हैं जहां नावों द्वारा नदी पार करने के साधन हैं।

शासन विभाग

गुरगांव जिले का शासन यहां के डिप्टी कमिशनर के हाथ में है जो कि सहायक एक्स्ट्रा (अधिक) कमिशनर कहलाता है। एक जिले का जज है, दूसरा कोष का मालिक और तीसरा मालगुजारी तथा लगान आदि का निरीक्षक है।

यह जिला दिल्ली कमिशनरी का अंश है। यहां का प्रधान, दिल्ली के कमिशनर के अधिकार में रहता है। प्रत्येक तहसील का भार एक तहसीलदार के ऊपर है। तहसीलदार की सहायता के लिये सहायक-तहसीलदार हैं। तहसीलदारों की सहायता के लिये कानून गो, नायब कानून गो और मुन्शी हैं। जिले में १७ कानून गो, २१२ पटवारी तथा २० सहायक पटवारी हैं। जिले में रेवाड़ी, पालवाल, नूह फीरोजपुर तथा गुरगांव पांच तहसीलें हैं।

जिले का डिप्टी कमिश्नर जिले के जज का काम करता है। जिला जज, खजाने के मालिक तथा मालगुजारी के अफसरों को प्रथम श्रेणी के जज के अधिकार प्राप्त हैं। तहसीलदार द्वितीय श्रेणी के

और नायब तहसीलदार तृतीय श्रेणी के जज माने जाते हैं।

जिले की पुलीस का प्रधान अफसर सुपरिटेन्डेन्ट कहलाता है। मेडिकल विभाग का प्रधान अफसर सिविल सर्जन होता है। कलक्टर की सहायता के लिये न्याय विभाग में अधिक सहायक कमिश्नर, मुनसिफ आदि हैं। इस जिले में अब भी गाँवों में पञ्चायतें स्थित हैं और गांव के प्रधान व्यक्ति गाँव के झगड़ों का न्याय पूर्वक निपटारा करने का प्रयत्न किया करते हैं। सरकार की सहायता के लिये गांवों में मुखिया तथा चौकीदार रहते हैं। गाँव में सरकारी सहायता के लिये ईमानदार और जेल दार रहते हैं।

शिक्षा के ध्यान से यह जिला बहुत पीछे है। जिले में उर्दू, हिन्दी (भाषा) और महाजनी भाषाएँ लिखी पढ़ी जाती हैं। नगरो में लोग अंग्रेजी की शिक्षा ग्रहण करते है। स्त्रियों की शिक्षा की बहुत कमी है जिले में लड़कियों की शिक्षा के लिये कुल १४ पाठशालाएं हैं। जिले में लड़कों की शिक्षा के लिये कुल लगभग १०० वर्नाक्यूलर प्राइमरी स्कूल हैं। नगरों में हाई स्कूल तथा, ऐंग्लो वर्नाक्यूलर मिडिल स्कूल है।

गाँवों में मुसलमानों के बीच मुल्ला लोग अरबी की शिक्षा तथा पंडित लोग संस्कृत, हिन्दी की शिक्षा और गुरु महाजनी की शिक्षाएँ प्रदान करते हैं।

दर्शनीय स्थान

रेवाड़ी–नगर उत्तरी अक्षांश २८ १२ तथा ७६ पूर्वी देशान्तर पर स्थित है। यह राजपूताना रेलवे पर दिल्ली से ५१ मील और गुरगांव २४ मील की दूरी पर है। यह नगर नीचे बचा है इसी कारण साहिबी नदी की बाढ़ से १८७३ ई० में नगर जल मग्न हो गया था यद्यपि नदी से ७ मील की दूरी पर स्थित है। नगर के पश्चिम की ओर की भूमि बड़ी उपजाऊ तथा कृपक है पर उत्तर तथा पूर्व की ओर वन हैं।

नगर के चारों ओर मिट्टी की दीवार बनी है। नगर के बाजार की गलियां संकरी हैं पर नगर के बीच होकर पूर्व से पश्चिम को एक चौड़ी अच्छी सड़क बनी है जिसके दोनों ओर सुन्दर दुकाने बनी हैं। उत्तर से दक्षिण को कई एक अच्छी सड़के बनी हैं जिनके सिरे पर सुन्दर द्वार हैं। इन द्वारों में जयपुर, कनौद, झज्जर, दिल्ली और तावरू को निकास वाले द्वार देखने योग्य हैं। प्रधान सड़कों के दोनों किनारों पर सुन्दर, विशाल पक्के भवन बने हैं जिनकी कला बड़ी सुन्दर है पर फिर भी नगर में कई एक कच्चे घरों वाले मुहल्ले हैं। प्रधान सड़कों पर रोशनी, सफाई नाली तथा चलने वाले मार्गों का समुचित प्रबंध है। पानी कुवों से मिलता है जो खारी हैं।

नगर गोलाकार सड़क से घिरा है जिस पर वृक्षों की पंक्तियां हैं। दक्षिण-पश्चिम की ओर सड़क पर राव तेजसिंह का बनवाया हुआ एक सुन्दर सरोवर है।

जिसके चारों ओर मंदिर तथा स्त्री और पुरुषों के नहाने के लिये अलग अलग घाट बने हैं। घाटों को जाने के लिये पत्थर की सीढ़ियां हैं। रेलवे स्टेशन के समीप एक दूसरा सुन्दर सरोवर है। नगर के समीप कई एक हिन्दू छतरियां बनी हैं। दो सुन्दर देखने योग्य मन्दिर हैं जिनमें से एक नगर के बाहर तथा दूसरा मध्य में बना हुआ है। दूसरे मन्दिर में एक बड़ी मीनार, सय्यद इब्राहीम साहब तथा बराह हजारी की समाधियां हैं। यह महमूद गजनी के समय का है। महमूद के सेनापति इब्राहीम ने खोल के किले में राजा आनन्द पाल को घेर कर परास्त किया था और कुछ समय तक रेवाड़ी में शासन किया था पर बाद में राजा अनंगपाल ने उसे हराया था और वह लड़ाई में मारा गया था। अंजन गांव की संधि के पश्चात् रेवाड़ी से ४ मील की दूरी पर भारतवास गांव में १८०३ ई० में कंटोनमेंट स्थापित किया गया था। बाद में यह नसीराबाद और फिर गुरगाँव हटा दिया गया।

रेवाड़ी नगर प्राचीन है। प्राचीन नगर वर्तमान से कुछ पूर्व की ओर स्थित था जिसे अब भी बूढ़ कहते हैं।

कहते हैं कि महाराज पृथ्वीराज के भतीजे और छत्रसाल के पुत्र राजा कर्मपाल ने इस नगर की नींव डाली थी वर्तमान नगर को १००० ई० में राजा रेव या रावत ने अपनी रेवाती के नाम पर बसाया। मुग़ल सम्राटों के समय में रेवाड़ी अपने ज़िले की राजधानी था। यह ज़िला एक नियत रक़म कर रूप में सम्राट को देता था और भीतरी मामलों में स्वतंत्र था। यहाँ के राजा मुटानी मुद्रा अलग चलाते थे। उन्होंने यहां से दो मील की दूरी पर गोकुल गढ़ नामक क़िला बनाया था। औरंगजेब काल में समीपवर्ती बोलनी गाँव के नन्द देव नामक अहीर, रेवाड़ी का गवर्नर बनाया गया था। उसके पश्चात् रेवाड़ी के ज़ोखी बक्काल ने राज्य पर अधिकार जमा लिया। उसे मीरपुर के तेजसिंह ने मार डाला। तेजसिंह गूजर वंश का ही था। इस परगने में अब भी अहीर वंश का नाम ही था। उसको लार्ड लेक द्वारा इस्तमरारी बन्दोबस्त में १८ गाँव मिले थे। १८०३ ई० के पश्चात् भरतपुर के राजा सूरज मल को रेवाड़ी दे दिया गया। उसके बाद रेवाड़ी तेजसिंह को दिया गया। रेवाड़ी में शान्ति स्थापना की और शासन प्रबन्ध ठीक से चलाने का विशेष प्रबंध किया। १८४७ ई० में तेजसिंह के पौत्र रावतुला राम ने रेवाड़ी का शासन भार संभाला। जब दिल्ली से उसके विरुद्ध सेना बढ़ी तो वह और उसका भाई जनरल गोपाल देव भाग खड़े हुये। बाद में वह मर गये। अंग्रेज़ों ने अपने चापलूस लोगों को वहां का हाकिम बनाया था।

रेवाड़ी के पीतल के बर्तन प्रसिद्ध हैं। यहाँ की पगिया समस्त भारत (विशेष कर राजपूताना) में जाती हैं।

गुरगांव

गुरगाँव अपने नाम के ज़िले की राजधानी है। यहाँ ज़िले के दफ्तर, योरुपीय बस्तियां, और सदर बाज़ार हैं। जैकम्बपुर में सरकारी नौकर रहा करते हैं इसे जैकम्ब नामक डिप्टी कमिश्नर ने बसाया था। गुरगांव २८°२७" उत्तरी अक्षांश तथा ७७°४' पूर्वी देशान्तर पर स्थित है। यह राजपूताना-मालवा रेलवे के गुरगाँव स्टेशन से ढाई मील की दूरी पर स्थित है। यहाँ की पक्की सड़क पर दोनों ओर जामुन के वृक्ष लगे हैं। पहले यहाँ सैनिक रहा करते थे। यह सैनिक सिरधाना की बेगम समरू के थे। यहां सिविल दफ़्तर भी था। १८२१ ई० में यह भारवास हटा दिये गये।

गुरगांव के स्टेशन के मध्य में एक सुन्दर पब्लिक वाटिका है। यहां से दिल्ली को सड़क तथा लाइन गई है। सोहना और रेवाड़ी सड़कों पर शीशम तथा नीम के वृक्षों की सुन्दर पंक्तियां हैं। यहाँ के प्रधान भवन ज़िला कचहरी, पुलीस दफ़्तर, जेल चर्च, अस्पताल, सेशन कचेहरी डाक बंगला, स्कूल, तहसील, डाकखाना, और दो सरायघर हैं। गुरगांव अपने वसंत ऋतु के सोते तथा जलवायु के लिये प्रसिद्ध है।

गुरगांव—मसानी का गांव स्टेशन से लगभग एक मील की दूरी पर स्थित है जहां शीतला देवी का मन्दिर है। यह मन्दिर बहुत प्रसिद्ध है। यहां प्रतिवर्ष पचास-साठ हज़ार यात्री आते हैं। यहां की सालाना आय (जो मन्दिर पर चढ़ता है) २० हज़ार है यह गुरगांव के लोगों को मिलता है।

सोहना

यह एक उन्नतिशील नगर है जो सुन्दर बनों के मध्य स्थित है। यह नगर पहाड़ी के नीचे और गुरगांव अलवर सड़क पर गुरगांव से १४ मील की दूरी पर बसा है। नगर २८°१४' उत्तरी अक्षांश तथा ७७° पूर्वी देशान्तर पर स्थित है इस नगर की गलियां संकरी और संकट पूर्ण पर पत्थर के चौकों से पक्की और सुन्दर बनी हैं एक पुरानी मसजिद थी जो अब विश्रामघर बना दिया गया है एक सुन्दर स्थान पर स्थित है। यहां स्कूल, स्पताल, थाना और डाकख़ाना हैं। वर्षा ऋतु में गरम के

ऊपर बाँध के कारण एक बड़ी झील बन जाती है इसका पानी सिंचाई का काम देता है। पहाड़ी पर महाराज भरतपुर का बनाया हुआ किला स्थित है। जब अंग्रेजों का अधिकार हुआ तो यह अधबना था अतः अब खंडहर रूप में है। इस नगर का नाम स्वर्ण (सोना) पर सोहना पड़ा है। प्राचीन काल में यहां शायद अधिक सोना प्राप्त होता था पर अब वर्षा ऋतु में जब नदियां पहाड़ के ऊपर से नीचे रेत बहाकर लाती हैं तो उसे में सोने के कण पाए जाते हैं। यह एक बड़ा ही प्राचीन नगर है। यहां कम्बोह, खानजादा और राजपूत बंशो का राज्य रह चुका है जिनके चिन्ह अब तक नगर के चारों ओर वर्तमान हैं। नगर के पश्चिम की ओर कम्बोह बस्ती थी। जिसके चिन्ह भग्नाशेषों, दो सुन्दर गुम्बदों (काले और लाल) आदि से मिलते हैं। उसके बाद खानजादे शासक बने। उन्नीसवीं सदी के अंत में भरतपुर के जाटों ने अधिकार जमा लिया। जब कि सूरजमल ने राव बहादुर सिंह (घसेड़ा का) को मार डाला था। उसके पश्चात् १८०३ ई० में अंग्रेजों ने अधिकार जमा लिया। १८५७ ई० में पुराने किले पर राजपूतों ने अधिकार जमा लिया था।

सोहना अपने उष्ण सोतों के लिये प्रसिद्ध हैं। यह पहाड़ी के नीचे स्थित है। उष्ण सोतों में गंधक मिली रहती है इसी कारण उष्णता रहती है। सोतों का जल ११५ से १२० अंश तक तापमय रहता है। इन सोतों में यात्रियों की और अधिक भीड़ रहा करती यदि पानी की अच्छाई लोगों को भली भांति मालूम होती।

सब से प्राचीन राजपूत वंश के अनुसार इस उष्ण सोते की कहानी इस प्रकार है। कहते हैं रत्नू नामक साधु ने जो पहाड़ी के नीचे एक चट्टान पर रहता था उसने पानी रखने के लिये एक सूराख बना लिया था एक दिन एक बाजरा एलाख सामान से लदे हुये बैल लेकर पहुँचा बाजरा का नाम छत्र-भोज था। वह बहुत थका मांदा था उसने साधु से कहा कि मेरे प्यासे पशुओं को पानी दीजिये मैं इसके बदले आपको बड़ा इनाम दूंगा। साधु ने पानी पीने तथा पिलाने की उसे आज्ञा दे दी। और कहा ईश्वर की कृपा से तुम और तुम्हारे पशु पानी पीकर मस्त हो जावेंगे। एलाख बैलों ने पानी पिया और जब तक सभी पानी पीकर मस्त नहीं हो गये पानी नहीं चुका। छत्र-भोज ने अपना सब सामान बेंच डाला और सारा धन लाकर साधु को दिया। साधु ने वहां एक बड़ा सरोवर उसी धन से बनवाने का संकल्प किया। जैसे ही प्रथम चट्टान हटाई गई एक उष्ण जल का सोता बह निकला तब से सोता अब तक बहता चला आ रहा है और कभी नहीं सूखा है।

साधु का बर्तन अब भी रक्खा है जो लगभग ३०० बर्ष पुराना है।

फरुख नगर

गुरगाँव के उत्तर-पश्चिम की ओर बलुहे प्रदेश में यह नगर बसा है। यह रोहतक सीमा पर राजपूताना-मालवा रेलवे के टर्मिनस से डेढ़ मील की दूरी पर है।

नगर अष्ट भुजाकार है। नगर के चारों ओर ऊँची दीवार है जिसमें चार बड़े द्वार हैं। इसे दलेल खां जिसे फौजदार खाँ भी कहते हैं ने बनाना आरम्भ किया था। यह बलोच सरदार था और नगर की नींव डाली थी। जाट लोगों ने बाद में आकर नगर पर अधिकार जमाया तो इसकी समाप्ति की। नगर में दो चौड़े बाजार हैं। यह दोनों एक दूसरे पर समकोण स्थित हैं। इनकी सड़कें सुन्दर और पक्की हैं और नाली, सफाई आदि का सुंदर प्रबंध है सड़कों के दोनों ओर सुंदर दुकानें लगी हुई हैं। गलियाँ तथा कचेहरियाँ संकरी और घुमावदार हैं। नये घर मिट्टी तथा घास-फूस के और पुराने ईंट-पत्थर के बने हैं। अब नगर गिरती दशा में है यद्यपि पहले बहुत अच्छी दशा में था दिल्ली द्वार, शीश महल बावली, डिसपेंसरी तथा विश्राम घर देखने योग्य हैं। पानी खारी है परन्तु जलवायु अच्छी है।

पास ही बलोच बस्ती है जो गोरी राजों के समय में आकर यहां बसी थी। इस बंश के फौज-दार खां नामक व्यक्ति को फरुखसियर ने यहाँ का

शासक बना दिया था उसी ने नगर की नीव डाली और नाम फरुख नगर रक्खा।

उसने दिल्ली द्वार बनाया और दीवार बनानी आरम्भ की और समीप वर्ती गाँवों के रहने वालों को नगर में आकर बसने के लिये लालायित किया। इसके बाद कामगार खाँ और फिर मूसे खाँ शासक हुये। १७५७ ई० में भरतपुर के राजा ने मूसे खां को परास्त किया। सूरज मल के मरने पर मूसे खां जेल से भाग निकला और जाटों को निकाल बाहर किया पर १८७५ ई० में रोहतक युद्ध में मारा गया उसके बाद उसका पौत्र मुजफ्फर खां ने २५ वर्ष तक राज्य किया। उसके वंश ने १८५७ ई० तक शासन किया। अंतिम शासक अहमद अली खां अंग्रेजों द्वारा फांसी पर लटका दिया गया था।

पालवाल

गुरगांव जिले में एक दूसरा बड़ा नगर है। यह दिल्ली से मथुरा जाने वाली ग्रांडट्रंक सड़क पर मैदान में दिल्ली से ३८ मील की दूरी पर स्थित है।

हिन्दू पंडितों के अनुसार यह नगर पांडव काल में इन्द्र प्रस्थ का एक अंग था। यहां से कुछ दूरी पर अहरवान गांव है कहते हैं यहां के भीटे तथा गांव उसी के काल के हैं। कहते हैं कि यह सब अवनति की दशा में थे पर विक्रमादित्य ने फिर से बसाया। सब से प्राचीन भाग में एक ऊँचा भीटा है। यह एक प्राचीन खंडहरों का भीटा तथा ढेर है। मुगल काल में यह प्रसिद्ध नहीं था। बाद में यहां जागीर रूप में कुछ शासक रहे फिर अंग्रेजों ने अधिकार कर लिया। यहां की नाज की मन्डी बड़ी तथा प्रसिद्ध है। यहां एक प्राचीन सराय है।

होडाल

दिल्ली से मथुरा जाने वाली सड़क पर होडाल का नगर दिल्ली से ५७ मील की दूरी पर और मथुरा से ३६ मील की दूरी पर स्थित है। मरहटों के समय में यह जनरल डुबोगनी की जागीर में सम्मिलित था। १८०३ में मुहम्मद खां को दिया गया। १८१३ ई० में अंग्रेजों के अधिकार में आया। होडाल के जाटों से भरतपुर के राजा सूरजमल का वैवाहिक सम्बन्ध था। उसी समय बड़े विशाल भवन नगर में बनाए गये। पर अब वहां खंडहर हैं और बन्दर रहते हैं। एक सरोवर है जिसके चारों ओर मन्दिर सीढ़िया, घाट आदि हैं एक सुन्दर प्राचीन सराय, बावली और प्राचीन सरोवर हैं। आध मील की दूरी पर पांडव वान नागक सरोवर है जहां राधा-कृष्ण की समाधि है यहां हिन्दू लोग बड़ी संख्या में तीर्थ यात्रा तथा दर्शन के हेतु आते हैं।

फीरोजपुर झिर्का

फीरोजपुर को ही साधारण तौर पर फीरोजपुर झिर्का कहते हैं झीर का अर्थ भूमि के भीतरी सोते का है। यह सोता मेवात की पहाड़ियों के एक घाट से कई सुराखों से होकर निकलता है, और फीरोजपुर से तिजारा होता हुआ रेवाड़ी जाता है। प्राचीन इतिहास में यह झार या झीर के नाम से प्रसिद्ध है। यह गुरगांव की दक्षिणी तहसील की राजधानी है। और एक उपजाऊ घाटी में स्थित है। यहां लन्दोहा सोते से पानी आता है। यह दो पहाड़ियों के मध्य गुरगांव-अलवर सड़क पर गुरगांव से अड़तालीस मील की दूरी पर स्थित है।

कहते हैं कि इस नगर की नीव फीरोज शाह बादशाह ने डाली थी। पुराने नगर को धूंद कहते हैं जो नगर के उत्तर में स्थित है। धूंद में प्राचीन भग्नावशेष हैं। नगर का प्राचीनतम भाग आयताकार है जिसके चारों ओर ऊँची दीवार है यहां के बाजार एक दूसरे के साथ समकोण बनाते हैं। बाजारों की सड़कें पक्की, साफ, पानी वाली तथा सुन्दर नालियों और पटरी पर वृक्षों से सुसज्जित हैं। तहसील मसजिद, सरावगी मन्दिर, टाउन हाल, स्कूल विश्राम घर नगर के मुख्य भवन हैं।

समीपवर्ती पहाड़ियों में लोहा पाया जाता है।

मरहठों के समय में यह नगर जान वैप्टिस्त के अधिकार में था। १८०१ ई० में लार्ड लेक ने इसे अहमद बख्श खां के अधिकार में पाया था।

और उसे जागीरदार बना दिया था। उसके लड़के शम्सुद्दीन को १८३६ ई में फांसी दी गई थी। तब से इस नगर पर ब्रिटिश शासन हो गया। वहां पहाड़ियों में एक सुन्दर कंदरा है जिसके भीतर होकर विजारा को सड़क जाती है। विजारा की बाबर की लिखी पुस्तक में बयान आया है। यहीं पर सोते का मन्दिर है जहां प्रति वर्ष हजारों हिन्दू यात्री दर्शन हेतु आते हैं।

नूह

नूह एक छोटा सा नगर है और अपने नाम की तहसील की राजधानी है। यह २८'२ उत्तरी अक्षांश तथा ७७ २ पूर्वी देशान्तर पर स्थित है। यह अलवर वाली सड़क पर गुरगांव से २८ मील की दूरी पर स्थित है। राव बहादुर सिंह घसेड़ा के समय में यह स्थान कम प्रसिद्ध था। यहां नमक बनाया जाता था। यहां नाज की एक मन्डी है। नगर की गलियां संकरी हैं।

तहसील, स्कूल, विश्राम घर, डिसपेंसरी और डाकखाना यहां के प्रसिद्ध भवन हैं। नगर के पश्चिम लाल-पत्थर का एक सुन्दर सरोवर है जिसमें एक सुन्दर छतरी है।

"भूगोल" का हमारा संसार-अङ्क

"हमारा संसार" उन बड़ी उम्र के लोगों के लिये लिखा गया है जिन्हें किसी स्कूल में नियमित रूप से भूगोल का ज्ञान प्राप्त करने का अवसर नहीं मिला है। इसे हम प्रौढ़ भूगोल कह सकते हैं। इस स्वाधीनता के युग में हमारे देशवासियों के लिये यह अत्यन्त आवश्यक है कि वे संसार के दूसरे देशों के विषय में शुद्ध और प्रामाणिक जानकारी प्राप्त कर सकें।

इस लड़ाई से पूर्व जब मैं अफ्रीका और योरुप की सैर कर के लौट रहा था, तब मैंने देखा कि रूसी ग्रेजुएट मास्को के अजायब घरों में रूसी किसानों को किस प्रकार साधारण ज्ञान की शिक्षा दे रहे थे। बाकू के अजायब घर में मजदूरों का ज्ञान बढ़ाने के लिये मिट्टी के तेल का उत्पत्ति-स्थान, ज्यालोजीकल सेक्शन (नक्शा) आदि समझाने का प्रयत्न अपूर्व ढंग से किया गया। कम पढ़े लिखे भारतवासी इस लड़ाई से दूसरे देशों में बड़ी रुचि लेने लगे। स्वाधीनता के आगमन से यह आवश्यक हो गया कि हमारे देश वासी संसार के दूसरे देश वासियों के सम्बन्ध में कामचलाऊ ज्ञान रख सकें। वे प्रत्येक देश का विस्तार, जनसंख्या, प्राकृतिक सम्पत्ति, रहन-सहन, कारबार, भारत से व्यापार आदि सम्बन्ध ठीक ठीक समझ सकें।

इसी आवश्यकता को ध्यान में रखकर "हमारा संसार" प्रकाशित किया गया है। इसमें बाल की खाल निकालने वाली भूगोल की पेचीदा बातें नहीं हैं। नामों के अनावश्यक बोझ को भी बचाया गया है। जहाँ कहीं पारिभाषिक शब्द आये हैं उनको भली भाँति समझा दिया गया है। जिस भाषा को अनपढ़ या कम पढ़े लिखे लोग समझते हैं उसी का अनुसरण कर के संसार के प्रायः प्रत्येक देश का मोटा ज्ञान समझाया गया है। मानवी रुचि का विशेष ध्यान रक्खा गया है। इसी दृष्टि से मोटे टाइप में यह अङ्क प्रकाशित किया गया है। इस अङ्क की उपयोगिता को बढ़ाने के लिये चुने हुये बड़े चित्र और विशेष नक़शे दिये गये हैं। हमारा विश्वास है "हमारा संसार" प्रौढ़ शिक्षा-प्रसार के लिये अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगा। इस विशाल और लोकोपयोगी अंक का मूल्य केवल ?॥) रु० रक्खा गया है। कागज़ की कमी से परिमित संख्या में ही यह अङ्क छापा गया है। अतः प्रौढ़ शिक्षा-प्रसार में हाथ बटाने वाले सज्जन पेशगी मूल्य भेज कर और "भूगोल" के ग्राहक बन कर अपनी प्रति सुरक्षित कर लें।

निवेदक—

रामनारायण मिश्र

जालन्धर

प्राकृतिक दशा

जालन्धर जिला जालन्धर राजा के नाम से बसाया गया है। जिसका इतिहास नीचे दिया गया है। यह जिला जालन्धर विभाग के अन्तर्गत आता है, जो ३०°५७° और ३१°३७° उत्तर और ७५°३' और ७६°१४' पूर्व पश्चिमी द्वाब अथवा व्यास और सतलज नदी के मध्य वाले प्रदेश में स्थित है। इसका सम्पूर्ण क्षेत्रफल १४३३ वर्ग मील है। दक्षिण में यह जिला सतलज नदी से घिरा हुआ है। यह नदी इसको लुधियाना और फिरोजपुर जिलों से अलग करती है। उत्तर-पश्चिम में कपूर्थला जालन्धर और व्यास के मध्य भागों में स्थित है। उत्तर-पूर्व की सीमा पर होशियार पुर स्थित है। परन्तु आजकल होशियार पुर की सीमा समाप्त हो गई है, क्योंकि कपूर्थला की फगवारा तहसील लगभग १५ मील जिले के अन्दर आगई है। इस प्रकार इस जिले का चित्र एक त्रिभुज के आकार का हो जाता है।

यह जिला चार तहसीलों में निभाजित किया गया है। जालन्धर तहसील इस जिले के उत्तरी भाग में स्थित है। शेष तहसीलें, नवा शहर, फिलौर और नकोदर जिले के दक्षिण में स्थित हैं। यह तीनों तहसीलें पूर्व से पश्चिम तक फैली हुई हैं और सतलज नदी के द्वारा सीची जाती है। जालन्धर शहर में सम्पूर्ण जिले का प्रधान कार्य्यालय है। यह समस्त विभाग का भी केन्द्र है जो ग्रांडट्रंक रोड, और नार्थ वेस्टर्न रेलवे पर लाहौर से ८१ मील दूर स्थित है।

पश्चिमी द्वाब का हिस्सा होशियार पुर में स्थित है। शेष भाग जालन्धर और कपूर्थला के अन्दर बसा हुआ है। पहाड़ियों के नीचे का सुन्दर प्रदेश अत्यंत रमणीक और चित्ताकर्षक है। इसी कारण पंजाब के सिक्ख इस भूमि को "पंजाब का बाग" कहते हैं। कहीं कहीं पर यह भूमि खेती करने के अयोग्य है परन्तु साधारणतया सम्पूर्ण प्रदेश एक सिरे से दूसरे सिरे तक हरे हरे खेतों से लहलहाता हुआ पाया जाता है।

जिले के मुख्य मुख्य प्राकृतिक भाग निम्न लिखित हैं।—

(१) सतलज का निचला भाग जिसके अन्दर नवाशहर और नकोदर का विभाग सम्मिलित है। फिलौर के १७ ग्राम इसके अन्दर सम्मिलित है। इस प्रकार यह विभाग कुल २४५ ग्रामों से मिलकर बना है।

(२) यह बीन सोते के ऊपरी भाग में स्थित है। इसके अन्दर धाइया की बेट भूमि, ढाक नवाशहर की रेतीली भूमि आती है। इसके अतिरिक्त १७ ग्रामों की बेट भूमि को छोड़कर समस्त फिलौर इसके अन्दर सम्मिलित है। नकोदर की मंजकी और धाइया की बेट भूमि भी इसी के अन्तर्गत आती है। इसमें कुल मिलाकर ५६६ ग्राम हैं।

(३) यह भाग बीन नदी के पश्चिमी भाग में ऊपरी जमीन पर स्थित है। यह भाग नकोदर के दोना गोलाकार घेरों और जालन्धर तहसील के समस्त भागों से मिलकर बना हुआ है। इस विभाग में कुल मिलाकर ५१५ ग्राम है।

जिले का ऊपरी और निचला भाग—

सतलज नदी लगभग समस्त भूमि को दो भागों में विभाजित करती है। एक निचली भूमि का देश और दूसरा ऊपरी भूमि का देश। निचली भूमि सर्वत्र बेट भूमि के नाम से प्रसिद्ध है, और ऊपरी भूमि का प्रदेश धा, या धाइया भूमि के नाम से प्रसिद्ध है। परन्तु यह नाम वहीं उपयुक्त किये जाते हैं। जहाँ ग्राम बेट भूमि के निकट स्थित होते हैं। कहीं-कहीं भूमि एक दम नीचे समकोण बनाती हुई चली गई है। कहीं पर यह भूमि क्रमशः नीची होती गई है। अतएव यह कहना कठिन है कि कहाँ पर कितनी जमीन नीची है। लेकिन २५ फीट की औसत असंगत नहीं कही जा सकती। नदी का तट कहीं कहीं पर काट दिया गया है। यह तट अक्सर धाग के द्वारा काटा जाता है। इसी कटे हुए तट से होकर ऊपरी भाग का समस्त पानी निचली भूमि में गिरता है। और वहां की सारी रेतीली मिट्टी निचली भूमि पर फैला देता है। कहीं कहीं पर इसी नाली

के द्वारा तट पर दलदल भी हो जाता है। कभी कभी इस भाग की नालियाँ एक दूसरे को काटती हुई बनाई जाती हैं। जिससे ऊपरी भाग की स्थिति जानने में बड़ी सरलता होती है। वहाँ पर मिट्टी से परिवर्तित हुए अच्छे और मजबूत कंकड़ भी पाये जाते हैं। तीनों तहसीलों में बेट भूमि एक सी नहीं पाई जाती। नदी जैसे जैसे अपने मार्ग को बदलती जाती वैसे वैसे भूमि की किस्मों का परिवर्तन होता जाता है। नवा शहर में बेट भूमि लगभग चार मील चौड़ाई पर स्थित है। फिलौर में केवल दो स्थलों को छोड़ कर शेष समस्त में बेट भूमि कहीं भी एक मील या डेढ़ मील से चौड़ी नहीं है। परन्तु नकोदर में नदी अपनी जगह से ८ मील हट गई है। अतएव इसकी चौड़ाई आजकल लगभग वही है जो पुराने समय में थी। इसकी चौड़ाई का औसत प्रत्येक स्थान पर लगभग बराबर है। सतलज के दाहिने सिरे के समस्त ग्राम आजकल जालन्धर जिले में सम्मलित हैं। यह सभी ग्राम सतलज के दक्षिणी भाग में फ़ीरोज़पुर की सीमा पर स्थित हैं।

इन तीन तहसीलों का ऊपरी भाग केवल नकोदर के पश्चिमी भाग को छोड़ कर लगभग सर्वत्र समतल है। यहाँ मिट्टी कई प्रकार की पाई जाती है। परन्तु जैसे जैसे हम पश्चिम की ओर जाते हैं, लगभग सभी भूमि मुलायम मिलती है। नवा शहर की भूमि प्रायः कड़ी है। परन्तु यहाँ पर भी पश्चिमी भाग के मध्य भाग में भूमि बलुही है। यह बलुही भूमि नौ मील लम्बी है और चार मील चौड़ी है। फिलौर में भूमि साधारणतया कुछ मुलायम है, परन्तु कड़ी भूमि की तहें अवश्य पड़ जाती हैं। उत्तरी-पूर्वी और दक्षिणी-पश्चिमी भाग दो रेगिस्तानी भाग पाये जाते हैं। परन्तु इनमें बालू बहुत खराब नहीं हैं। यह भूमि कृषी के योग्य है। इस भूमि की मिट्टी अधिक कठोर नहीं हैं। जो कुछ यहाँ पर कड़ी मिट्टी मिलती भी है वह प्रायः निचली भूमि में पाई जाती है. जहाँ बाढ़ अपनी मिट्टी फैला देती है। नकोदर के पूर्वी भाग की भूमि मुलायम और लाल रंग लिए हुए हैं। इसकी मिट्टी फिलौर की मिट्टी से कहीं अधिक हलकी और मुलायम है। पश्चिमी भाग में बालू अधिकता से पाई जाती है, और निचले प्रदेशों में बालू के बड़े बड़े भीटे भी पाए जाते हैं। इस प्रकार बीन नदी लगभग राज्य को दो भागों में भौगोलिक स्थिति के अनुसार विभाजित करती है। जिसमें कोई विशेष परिवर्तन नहीं होता।

ऊपरी भूमि के मुख्य भाग—

ऊपरी भाग मुख्यतया तीन विभागों में बांटा गया है। (१) ढाक प्रदेश, जो नवा शहर की पूर्वी सीमा से लेकर फिलौर के मध्य तक फैला हुआ है। अथवा वह भाग जो ग्रान्डट्रंक रोड के निकट तक स्थित है। (२) मंजकी प्रदेश, जो एक ओर ढाक से और दूसरी ओर बीन से घिरा हुआ है। (३) दोना विभाग, या बीन के पश्चिम का प्रदेश।

इस प्रदेश का ढाक प्रदेश नाम इसलिए पड़ा क्योंकि यहाँ पर ढाक के वृक्ष पहले बहुत अधिकता से पैदा होते थे। आजकल इसके बड़े बड़े जङ्गल कटा दिये गये हैं फिर भी थोड़े बहुत अवशेष वृक्ष इस कथन की पुष्टि करने के लिए काफी हैं। 'मंजकी' विभाग में मंज नाम की एक राजपूत जाति रहा करती थी। यह मंज जाति उस समय अपनी अत्यधिक उन्नति के लिये प्रसिद्ध थी, अतएव उसी के नाम पर इस स्थान का भी नाम मंजकी प्रदेश पड़ गया। यद्यपि आजकल यह मंजकी जाति किसी विशेषता के लिये प्रसिद्ध नहीं है। दोना शब्द का तात्पर्य यह है कि भूमि दो प्रकार की मिट्टी—बालू और शुद्ध मिट्टी के मिश्रण से बनी हुई है। परन्तु आजकल दोना भूमि उस भूमि के लिए प्रयुक्त किया जाता है जिसमें मिट्टी का अंश कम और बालू का अंश अधिक हो। नवा शहर में इसके दो भाग मान लिए गए हैं। धुर दक्षिण-पूर्व में जादल के निकट के आठ या दस ग्राम कांडो के नाम से प्रसिद्ध हैं। इस शब्द का अर्थ है कि वह देश जो पहाड़ियों के नीचे स्थित है, और सम्भवतः यह ग्राम गढ़शङ्कर के होशियारपुर तहसील के शिवालिक पर्वत वाली भूमि से क्रमशः सम्बन्धित है। इसके पश्चात बीन नदी के पास पास कई ग्राम फैले हुए दूर तक चले गए हैं।

इस भूमि को बीनहारा कहते हैं। परन्तु यह दोनों बीनहारा और कौंडी, प्रायः ढाक भूमि के अन्दर ही परिगणित की जाती हैं।

यद्यपि जालन्धर तहसील किसी नदी के निकट स्थित नहीं है, तथपि यहां पर हर प्रकार की सुन्दर और उपजाऊ भूमि पाई जाती है। यहां पर बेट भूमि की सभी प्रकार की मिट्टी पाई जातीहै जो लगभग नवा शहर और फिल्लौर की सब से उन्नम भूमि के समान उपजाऊ है। इस प्रदेश को सिरवाल अथवा सीरवाल प्रदेश कहते हैं यह जिले के उत्तरी पूर्वी भाग में स्थित है और इस भाग की कम से कम चौड़ई छः मील है। होशियारपुर जिले से बहुत से सोते इस भाग में बहते हैं जिसके कारण यहां पर बनावटी कमी करना असम्भव हो जाता है। केवल यहाँ वही फ़सल पैदा हो सकती है जो स्वभाविक रूप से विना अधिक परिश्रम के उत्पन्न हो जाती है। क्योंकि यह सोते सारे भाग को नम बना देते हैं। यद्यपि यह सोते केवल उसी समय बहते हैं। जब कि काफी वर्षा होती है। कुछ सोते नमकीन पन लिये होते हैं। वह सोते पहले तो उपजाऊ मिट्टी से भूमि को उर्वरा बना देते हैं जिसको छाल भूमि कहा जाता है, परन्तु कुछ दिनों पश्चात् यह भूमि पूर्ण रूप से बलुही हो जाती है। और एक दिन वह जाता है, जब कि यह भूमि खेती करने के सर्वदा अयोग्य हो जाती हैं परन्तु यह हानि जो जालन्धर की कृषी में होती है वह इसके लाभ हम से बहुत हैं। यही सोते वास्तव में सारे जालन्धर तहसील के भागों को उर्वरा बनाते हैं। जिससे काफी मात्रा में कृषी होती है।

सीरवाल ग्राम की भूमि बेट भूमि की विशेषता से पूर्णतया वंचित है। यह भूमि प्रायः दोना भूमि की श्रेणी में आती है यद्यपि यहां की भूमि अधिक कड़ी है। दोना प्रदेश के पश्चिम कीभूमिकहींअधिक मुलायम और बलुही हैं। पूर्वी भाग की जमीन दूसरी जमीनों की अपेक्षा अधिक उर्वरा और मुलायम है। जालन्धर की हर दिशा ओं में पानी की नालियां एक दूसरे को काटती हुई प्रवाहित की गई हैं। अतएव कई भाग के टुकड़े अधिकता से पाए जाते हैं। काली और भूरी मिट्टी के प्रदेश सीर-वाल प्रदेश को भी दो भागों में विभाजित करते हैं। इसके धुर उत्तर में य ५ ग्राम हैं जहाँ दलदल मिट्टी वाले प्रदेश अधिकता से पाए जाते हैं। सीरवाल और कर्तार पुर के मध्य में भूमि ढालू होती गई है जो पश्चिमी बीन के निचले प्रदेश की श्रेणी में आ जाती है। यहाँ की भूमि आधी बेट भूमि की श्रेणी में परिगणत की जाती है।

जिले का अधिकतर भाग सतलज के बेसिन में स्थित है। केवल उत्तर का थोड़ा सा भाग व्यास नदी के भाग शामिल हो जालन्धर तहसील के उत्तरी-पूर्वी सीमा के मध्य से यदि एक रेखा कपूर्थला की अन्तिम सीमातकखीची जाये, जो जालन्धर शहर केपश्चिम से होकर जाय तो यह रेखा करीब करीब दोनों नदियोंमें बेसिन को दो बराबर भागों में विभाजित कर देगी। एक सीधी नाली सतलज के आगे लाईजाय तो उसका कोई महत्व नहीं है। परन्तु यदि यही नाली जिले कीसीमा के बाहर लाई जाय तो यह दो तीन मील की भूमि नदी के किनारे से औरअधिक नीची हो कर जिले की पैदावार बढ़ाने में मदद करती है। रुपर पर्वत माला को छोड़ने के बाद सतलज नदीजिले के लमकपुर ग्राम में सबसे पहले प्रविष्ठ होती है। वहाँ से यह नदी पश्चिम की ओर बहती है। तत्पश्चत् यह नदी अलीवाल के युद्ध क्षेत्र में एक दम विरुद्ध फीलौर और नकोदर तहसील की सीमा से बहती हुई आगे बढ़ती है। इसके बादयह नदी उत्तर-पश्चिम की ओर बहती है। यहाँ पर ऐसा प्रतीत होता है मानों यह फिर अपने पुराने नकोदर तहसील की ओर जाना चाहती है। परन्तु एक चौथाई मील के पश्चात् ही यह दक्षिण-पश्चिम की ओर अपना रुख परिवर्तित कर देती है। इस दिशा में यह चार या पांच मील बहती है। इसके पश्चात यह फिर उत्तर पश्चिम की ओर अपना मार्ग बदल देती है और उसका यह मार्ग तब तक नहीं बदलता जब तक कि यह प्रान्त में व्यास नदी से जाकर नहीं मिल जाती। सतलज नदी व्यास से जिले के लगभग चार मील और आगे जाकर मिलती है। सत-

लज नदी का धरातल प्रायः बलुहा है, और इसमें बहुत थोड़े से द्वीप बनते हैं। इस नदी की चौड़ाई ५ फर्लांग से अधिक नहीं है। परन्तु बाढ़ के समय यह नदी भूमि का एक बहुत बड़ा भाग ढक लेती है। कुछ भाग तो यह नदी स्वयं ढकती है और कुछ भाग उसकी शाखाएँ भूमि को आवृष्ट कर लेती हैं। आजकल रापुर नहर के खुल जाने से नदी का बहुत सा पानी नहर में चला जाता है अतएव अधिक बाढ़ की सम्भावना नहीं होती। वर्ष में लगभग आठ महीने यह नदी सूखी रहती है। इस प्रकार इस नदी के आस पास की भूमि अधिक उर्वरा हो गई है। प्रायः सतलज नदी उथली और छिछली नदी है, फिर भी बहुत से स्थानों पर यह नदी छिछली है। जहाँ पर यह नदी छिछली है, जमीन का बहुत बड़ा भाग यह अपनी चौड़ाई के विस्तार से सींचती है। इस प्रकार निकटवर्ती ग्राम इसके जल से अत्यधिक लाभ उठाते हैं। अधिकतर यहाँ पर यात्री बेरी नामक नावों पर यात्रा करते हैं। यह नावें प्रायः जितनी लम्बी होती हैं उतनी ही चौड़ी भी होती है। इस प्रकार की नावें यात्रा की सुगमता के लिए प्रत्येक मुख्य सड़क के रास्ते पर पाई जाती हैं।

फिलौर तहसील उत्तम लकड़ी से परिपूर्ण है। इस लकड़ी का विक्रय प्रति वर्ष ६०,००० और ७०,००० रुपये का होता है। यह लकड़ी नदी में बहा दी जाती है। और मन्तव्य स्थान पर उतार ली जाती है। परन्तु इस नदी पर अधिक यातायात नहीं होता। वास्तव में यह नदी बहुत छोटी और दीन है। जब इसमें बाढ़ नहीं रहती तब इस नदी पर स्टीमर कम से कम फिलौर तक चलाए जाते हैं। परन्तु जब यह नदी बाढ़ के उन्माद में रहती है तब प्रायः अपने मार्ग को प्रतिवर्ष बदलती रहती है। परिणाम–स्वरूप नदी के इस रुख बदलने से निकटवर्ती ग्रामों को अकथनीय आपत्तियों का सामना करना पड़ता है। जब से भूमि की पैमाइश की गई है, तब से सतलज का एक स्वाभाविक कर्म हो गया है कि वह अपने मार्ग को नवाशहर में उत्तर से पूर्व की ओर और दक्षिण से पश्चिम की ओर बदले। फिलौर में यह नदी अधिकतर दक्षिण की ओर बहती है। केवल फिलौर के धुर पश्चिम में यह नदी अपनी पुरानी स्वाभाविक चाल से जाती है। नकोदर में यह नदी अधिकतर उत्तर की ओर बहती है। वर्तमान नदी का मार्ग सन् १८४६–४८ की अपेक्षा सीधा और सख्त हो गया है।

एक बार सतलज नदी अपने मार्ग को छोड़ कर पूर्व की ओर चली गई यह नदी फीरोजपुर ज़िले की मुक्तसर तहसील के बीच से बहती हुई गई थी। इसका यह मार्ग आज भी मुक्तसर शहर के उत्तर में प्रत्यक्ष रूप में दिखाई पड़ता है। इस प्रकार इस नदी का पुराना मार्ग, जो 'डन्डा' में नाम से प्रसिद्ध है मीलों नदी के बाईं ओर छूट गया 'डन्डा' नाम का प्रारम्भ 'ढ़ा' और 'ढाहा' नाम से हुआ है। 'डन्डा' के दक्षिण का देश आज भी 'उतार' के नाम से प्रसिद्ध है, और उत्तर का प्रदेश 'हितार के नाम से।

'उतार' का अर्थ है ऊपरी भाग 'हितार का अर्थ है निचला भाग या बेट भूमि। एक ग्राम में आज भी लोग एक राजा की कहानी कहते हैं जो सतलज नदी में एक परी की देख भाल किया करता था। और उस परी से नगर की रक्षा किया करता था। इसी प्रकार द्वाब में पुरानी व्यास नदी का महान तट उल्लेखनीय है। आइने अकबरी में जालन्धर द्वाब का तीन बार वर्णन हुआ है। पहला लाहौर सूबा, जिसको सरकार जालन्धर ने बनवाया था। इस द्वाब को आज लोग बेट या बेट जालन्धर के नाम से पुकारते हैं। दूसरा मुलतान का सूबा है। यहाँ पर चार द्वाबे में से एक द्वाबे का नाम द्वाबा बेट जालन्धर है। और तीसरा दीपालपुर सरकार में द्वाबा बेट जालन्धर है। सम्भवतः इन तीन द्वाबों का नामकरण पहले की प्रथानुसार हुआ जब कि सतलज और व्यास नदियाँ चिनाब नदी से मिलने के पश्चात् मुलतान में बहती थी। वास्तव में यह प्रथा उन दिनों का स्मरण दिलाती है। जब कि समुद्र शिवालिक पर्वत तक द्वाब से मिला हुआ था। उस समय जालन्धर को "समुद्र का पुत्र" कहा जाता था। आइने अकबरी में इन नदियों के संगम का वर्णन

किया गया है। उसमें यह लिखा हुआ मिलता है। सतलज नदी व्यास नदी से 'बाह फेरी' के स्थान पर और दूसरे स्थान पर यह नदी मुलतान में मिलती है। जिसका वर्णन हम आगे चल कर करेंगे। जनरल कनिघम का मत है कि सतलज और व्यास नदी १७९० ईस्वी के पहले हरीक स्थान पर नहीं मिलती थीं। उनका कथन है। "पहले कई शताब्दियों तक लगातार नदी का संगम भौंकी पंटन में, जो कासूर और फीरोज पुर के मध्य स्थित है, हुआ करता था।" किन्तु "व्यास नदी का पानी अब भी अपने प्रचीन मार्ग से प्रवाहित होता है।" इसी का वर्णन अबुल फजल इस प्रकार करता है "बारह कोस की दूरी पर फीरोजपुर के निकट व्यास और सतलज नदियाँ एक दूसरे से मिल जाती है। और यह नदियाँ जैसे जैसे आगे बढ़ती है चार सोतों में और विभाजित हो जाती हैं। जिनका नाम है दूर, हरे, डन्ड और नूरनी, यह सभी मुलतान के पास फिर मिल जाती है।" इसमें कोई सन्देह नहीं कि आज कल इसकी भौगोलिक दशा बड़ी सोचनीय हो गई है। परन्तु अबुल फजल का मन्तव्य केवल इस वर्णन से यह था कि किस प्रकार सिन्ध नदी पांचो पंजाब की नदियाँ-सतलज, व्यास, रावी, चेनाब और झेलम से मिलती है। वह रावी, चेनाव और झेलम नदी का सिन्ध नदी से 'उच' स्थान पर मिलने का साफ साफ वर्णन करता है। लेकिन वह व्यास और सतलज के बारेमें कुछ भी नहीं लिखता यदि सतलज और व्यास फीरोजपुर और कासूर के मध्य में मिलती है तो १२ कोस की दूरी जो लगभग ३० मील के बराबर होती है किस प्रकार समझाई जाय। यदि इसका मतलब यह समझा जाय कि यह दोनों नदियाँ १२ कोस तक बिना किसी दूसरा नाम ग्रहण किए बहती हुई चली गई तो यह तर्क वास्तव में असत्य और असंभव सिद्ध होगा और यदि यह माना जाय कि इन नदियों के संगम का स्थान केवल एक ही है, तो यह प्रश्न उठता है कि फीरोजपुर हरीक, और तिहार के मध्य का वह बड़ा भाग कहां है जहां यह नदियाँ मिलती है। सरकार जलन्धर में इसके लिये तनिक भी स्थान नहीं है। निसन्देह सन् १७९० में पानी धरमकोट से हो कर जाता था। परन्तु पानी को अधिक भाग में जाने में लिये सतलज के मार्ग को अपनाना पड़ा और नकोदर तहसील में एक बड़े तट पर यह नदियाँ मिल गई यह घटना बहुत सम्भव है। १९ वीं शताब्दी के अन्तिम चरण घटित हो गई। सम्भवतः आइने अकबरी में दो स्थानों का वर्णन सतलज की दो शाखाओं के अलग अलग वर्णन से सम्बन्ध रखता हो जिसमें से एक शाखा व्यास नदी से हरीक के स्थान पर मिलती है जिसकी लगभग दूरी बारह कोस है। और दूसरी धर्मकोट शाखा, जो कासूर और फीरोजपुर के मध्य में सोता भी से मिलती है। जहाँ तक चार शाखाओं का सम्बन्ध है जो मुख्य नदी से मिलती हैं उनके फिर विभाजित होने अथवा दो शाखाओं में परिवर्तित होने का आइने अकबरी में कोई वर्णन नहीं है। परन्तु यदि यह मान लिया जाय कि चार शाखाएँ जिसका कि वर्णन हम पहले कर आए हैं सत्य है तो जनरल कनिंघम के चारनु उजास का कथन तर्क की कसौटी पर ठीक नहीं उतरता। क्योंकि जनरल कनिघम के कथनानुसार चार शाखाएँ तब तक नहीं अलग होती जब तक सतलज और व्यास साथ साथ फिरोजपुर के प्रतिकूल १२ कोस तक नहीं बह जाती। अगर भी को हीं पूर्ण रुप से इन शाखाओं का संगम मान लिया जाय तो दक्षिण की ओर बढ़ने से हमें सब से पहले खानवा मिलता है। खानवा सबसे ऊपरी भाग में स्थित है। इसको लाहौर जिले की धारा भी कहते हैं। तत्पश्चात् फीरोजपुर से १२ मील दूर ६ या सात मील आगे चलकर सोहाग का ऊपरी भाग मिलता है। और अन्त में निचला सोहाग का भाग बीस मील और दक्षिण चलकर मिलता है। इसके पश्चात् मुलतान जिले तक कोई दूसरा वर्णन करने योग्य भाग नहीं मिलता। मुलतान जिले में भी कोई ऐसा उल्लेखनीय स्थान नहीं है। जनरल कनिघम 'हर' को 'पारा' के नाम से, हरी को 'रावी' के नाम से और नूरनी को 'सुकनाई' के नाम से सम्बोधित करते हैं। यह सभी स्थान व्यास नदी के

सूखे हुये भाग हैं। जहाँ पहले नदी बहा करती थी। इसके पश्चत् में जनरल कनिंघम 'ड ड' को 'धमक' या 'दनक' के नाम से सम्बोधित करता है। यह 'डाड' सतलज की प्राचीन धारा है। जो आगे चल कर 'भटियारी' के नाम से प्रसिद्ध होती है। 'पार' शाखा हरी के लिये उपयुक्त की मानी जा सकती है। यह शाखा वास्तव में व्यास नदी न होकर सतलज नदी है। जो सोहाग की एक शाखा कही जा सकती है। 'धमक' नाम भी उपयुक्त समझा जा सकता है। सम्भवत: यह नाम 'मान्टगोमरी धादर' लिया गया है जो 'टान्ड' के नाम से उपयुक्त किया हुआ प्रतीत होता है। इसके अतिरिक्त यह सोहाग की एक शाखा भी है। जो किसी समय एक प्रसिद्ध नदी थी। यदि हम भी के संगम को सत्य मान ले तो दूसरी दो रायें सत्य नहीं मानी जा सकती। यदि हरीक संगम उचित समझा जाय तो नूरनी प्राचीन व्यास 'बुधी' या 'बुरही प्रतीत होती है। बारी द्वीप में आज भी पुरानी नदियों के मुहाने को बुधा कहते हैं। लुधियाना के पास भी इस नदी को जो सतलज के पहले रास्ते से जाती थी। लोग 'बुध' कहते हैं। जहाँ 'हर' का सम्बन्ध है इस प्रकार का नाम कहीं भी नहीं पाया जाता। बारी द्वाब के निचले भाग में भी इस नाम का वर्णन नहीं किया जाता। यह सम्भव हो सकता है कि हर नाम का उपयोग जाति वाचक संज्ञा से व्यक्ति वाचक संज्ञा के रूप में किया जाता हो। क्योंकि पंजाबी भाषा में पर्वतीय झरने या सोते को हरद कहते हैं। प्राचीन प्रथानुसार सोहाग ही जालन्धर के पूर्वी भाग का सोता है। इस सोते को पर्वतीय शाखा भी मानते हैं। क्योंकि यह ऐसे स्थान से होकर बहता है जहाँ पानी बिलकुल नहीं बरसता। इस प्रकार 'हर' का नाम सम्भव है कि सोहाग के लिए उपयुक्त किया जाता हो। सोहाग का सोत द्वाब का सब से प्रसिद्ध सोत है परन्तु आज भी लोग इसके प्राचीन नाम से परिचित नहीं है। इस प्रकार चार शाखाओं की कोई आवश्यकता ही नहीं पड़ती। अतएव यदि यह कहा जाय की 'हर' 'हरी वास्तव में सोहाग नदी के भिन्न भिन्न नाम है तो असंगत न होगा। क्योंकि आइने अकबरी में एक स्थान पर 'सर हारी' का उपयोग किया गया है फिर भी यह वर्णन हमें और अधिक अनुसन्धान की ओर प्रेरित करते हैं। क्योंकि प्रत्येक स्थल पर हमें सन्तोषजनक घटनायें नहीं मिलती। उदाहरण के लिए नूरनी' 'नवाबीन' के लिए प्रयुक्त होता है। जो एक दूसरी सूखी शाखा है जिसका वर्णन मान्टगोमरी सेटिलमेन्ट रिपोर्ट में मिलता है। इस प्रकार सम्पूर्ण प्रश्न रहस्यात्मक प्रतीत होता है जिसके लिए अधिक अनुसन्धान की आवश्यकता है।

जालन्धर द्वाब की सिंचाई शिवालिक पहाड़ियों से होती है। शिवालिक पहाड़ियों की दो शाखाएँ अन्त में एक दूसरे से मिल जाती हैं। इनमें से एक शाखा को पूर्वी या सफेद बीन और दूसरी को पश्चिमी या काली बीन कहते हैं।

पूर्वी बीन—पूर्वी बीन शिवालिक के दक्षिण जालन्धर द्वाब का सब से बड़ा भाग सींचती है। यह सतलज से पांच मील की दूरी पर जालन्धर जिले में प्रविष्ट होती है। यहाँ से यह ३५ मील उत्तर पश्चिम की ओर बहती है। होशियार पुर की सीमा से इसका मार्ग साधारणतया एक सा हो जाता है। मालसियन के कुछ मील दक्षिण-पश्चिम यह शाखा नकोदर की बेट भूमि को सींचती है और करीब करीब उसी बेट के पश्चिमी भाग में बहती हुई आगे जाती है।

नहल के एक स्थान पर यह अपना मार्ग पूर्णतया बदल देती है और अपना मार्ग अधिकतर दक्षिण की ओर बनाती है। बीन नदी अपनी अन्तिम तीन मील की दूरी उस मार्ग से तै करती है जिस मार्ग से ६० वर्ष तक सतलज नदी बहती थी। अंत में यह सतलज से व्यास नदी के चार मील पहले ही मिल जाती है। पूर्वी बीन पहले बिल्कुल महत्वपूर्ण न थी। इस बीन का प्रथम भाग अधिकतर सूखा रहता है। जिसमें खेती की जाती है, और फ़सल उत्पन्न की जाती है। इसमें पानी प्राय: वर्षा ऋतु ही में रहा करता है। गौरा से, जहाँ महशंकर और जादला बीन मिलती है, पानी हमेशा पाया जाता है। यहां पर इसकी तह बड़ी कठोर और इसका पाट 'अत्यन्त

सकता है। अतएव यहाँ पर कठिनता से लोग इसको पार कर सकते हैं। इस नदी की यही दशा ग्रांड ट्रंक रोड तक बनी रहती है। ग्रान्ड ट्रंक रोड के पश्चात् इसकी तह बलुही हो जाती है। यहाँ से यात्री इसको सुगमता पूर्वक पार करते और यात्रा करते हैं। जब बीन नदी ढाक प्रदेश को पार करती है। तब इसकी चौड़ाई ऊपरी भाग में लगभग ४० गज हो जाती है। ऊपरी मैदान में यह काफी गहरी है। इसके किनारे काफी सुरक्षित हैं। परन्तु इन स्थानों पर ढाल होने के कारण इसकी चौड़ाई का अनुमान निश्चयपूर्वक नहीं बताया जा सकता कहीं कहीं पर इसके ढालू भाग को काटा भी गया है परन्तु अभी तक इसकी चौड़ाई में कोई विशेष अन्तर नहीं आया। जब यह मालसियन के निकट नकोदर में पहुँचती है तब इसकी चौड़ाई अत्याधिक बढ़ जाती है। कहीं कहीं पर इसकी चौड़ाई २०० गज तक हो जाती है। शरद काल में बीन की कम से कम गहराई १८ इंच होती है। वर्षा ऋतु में इसकी चौड़ाई अत्याधिक बढ़ जाती है अतः उस समय यह नदी पार करने के बिल्कुल अयोग्य हो जाती है। मुख्य मुख्य स्थानों पर सतलज नदी की तरह इस नदी पर भी फेरी बोटों का प्रबन्ध किया जाता है जिससे यात्री सुगमतापूर्वक यात्रा कर सकें। यद्यपि बोटों के स्थान निश्चित नहीं है परन्तु फिर भी जो स्थान निश्चित कर लिए गए हैं उनमें बहुत कम परिवर्तन होता है। फावड़ा और मंडी सड़क पर एक बड़ा सुदृढ़ लोहे का पुल बना हुआ है, परन्तु यह पुल जिले की ठीक अन्तिम सीमा पर बना हुआ है। ग्रान्ड ट्रंक रोड पर बना हुआ पुल सन् १८७८ में नदी ने तोड़ दिया था और उसी स्थान पर अब दूसरा नया पुल बनवाया गया है। इसी से कुछ गज दूर पर एक रेलवे पुल भी बना हुआ है जिसकी वही दशा हुई थी जो उस पुल की हुई। परन्तु अब उसकी मरम्मत करा दी गई है। इसकी चौड़ाई लगभग ३०० गज है और काफी सुदृढ़ बना हुआ है। अतएव अब इसके ध्वंस होने की सम्भावना नहीं की जा सकती। नकोदर और जालन्धर सड़क पर भी बीन को पार करने के लिए छोटे छोटे पुल बने हुए हैं। परन्तु बाढ़ के समय नदी इन पुलों के ऊपर से भी बहने लगती है। इसके पश्चात् डखनी पर जहाँ लाहौर से देहली जाने वाली सड़क बीन को पार करती है एक बहुत ही सुन्दर और सुदृढ़ पुल बनवाया गया है। बाबा साहब सिंह बेदी ने एक एक चन्द्राकार पुल इस नदी पर बनवाया था जिससे लोगों को यात्रा करने में सुगमता हो और फसलों को भी किसी प्रकार की क्षति न होने पावे। इस पुल को बनवाये हुए लगभग १२५ वर्ष हुए होंगे। उस समय दीवान मुखम चन्द की सेना फिलौर में पड़ी रहती थी अतएव उसके आने जाने में लोगों को अधिक कठिनता का सामना करना पड़ता था। वर्षा ऋतु में पानी काफी बढ़ जाता था। अतः इस पुल के बन जाने से सैनिकों के आने जाने और यात्रियों तथा कृषकों को व्यापार और कृषी में काफी सुविधा हो गई। आजकल नदी ने इसके एक किनारे का ध्वंस कर दिया है। इसके स्थान पर अब लकड़ी का पुल बना हुआ है। क्योंकि अब यह स्थान अधिक व्यापारिक यातायात के लिए प्रसिद्ध नहीं है. केवल पैदल चलने वाले यात्री ही इस पर यात्रा करते हैं।

पश्चिमी बीन—जालन्धर तहसील का उत्तरी पश्चिमी भाग पश्चिमी बीन सींचती है। यह नदी जिले के दो ग्रामों से होकर जाती है। इन ग्रामों का नाम कुदवाल और धीर पुर है, एक ग्राम कर्तारपुर से कुछ मील उत्तर पश्चिम की ओर स्थित हैं। यहां पर यह भाग लगभग उसी आकृति में दिखाई पड़ता है जिसमें पूर्वी बीन का मध्य भाग दीखता है। मुख्य बीन ठीक पश्चिम में बहती है और इसकी शाखाओं की कुल संख्या तीन है। सब से उत्तरी शाखा होशियारपुर की सीमा पर स्थित है। यह प्रायः धान के मैदान से होकर बहती है। बीच की शाखा इससे तीन या चार मील दूरी पर बहती है। इसका धरातल अधिकतर बलुहर और चौड़ा है। यह प्रायः वर्षा ऋतु में ही बहती है। यह शाखा भी दो और उपशाखाओं में विभाजित हो जाती हैं। यह दोनों उपशाखायें अच्छी कोटि में परिगणत की जाती हैं। क्योंकि वह स्रोत जो विभाजित नहीं होता वह

अपने स्थान पर ढाल के अतिरिक्त बहुत सा बालू एकत्रित कर देता है अतएव वह भविष्य को फसल के लिए अत्यन्त हानिकर सिद्ध होता है। सबसे दक्षिणी स्रोत ही जिले में सबसे अधिक लाभदायक है। यह उत्तरी सीमा के नीचे सात मील तक बहता है। इस स्रोत को 'किनराचों' कहा जाता है। कुछ मील पश्चात पूर्व में यह ढाल से सारी भूमि भर देता है। तत्पश्चात् यहां की मिट्टी कांकर से मिश्रित कठोर भूमि में परिवर्तित हो जाती है। यहाँ इस शाखा की चौड़ाई बहुत सकरी हो जाती है, जहाँ इसकी कुल गहराई छः फीट के लगभग हो जाती है। जब वर्षा ऋतु आती है तब इसका पानी तट में ऊपर उमड़ कर बहने लगता है। यह पानी सभी निचले मैदानों को आक्रान्त कर लेता है और मीलों दक्षिण-पश्चिम में पानी ही पानी दृष्टिगोचर होता है। स्थानों की भूमि पानी से आक्रान्त होने के कारण उपजाऊ शक्ति को खो बैठती है। आदमी बीमार और रोग ग्रस्त होने लगते हैं। बहुत से मनुष्यों की जाने भी चली जाती हैं। इसी प्रकार किंगरा चों से प्रभावित होने वाले कई ग्रामों का इतिहास है।

बेट नदी के पानी का मार्ग—बेट नदी का सबसे मुख्य भाग नवाशहर में पाया जाता है। इसको पूर्वी और पश्चिमी नेरी के नाम से पुकारा जाता है। इस शब्द का अर्थ अभी तक स्पष्ट नहीं हुआ है। यह कहा जाता है कि इस शब्द से 'नहर' शब्द का कुछ भी सम्बन्ध नहीं है। और नेरी शब्द 'नेर' (या नजदीक) शब्द का अपभ्रंस है। लेकिन यह अनुमान केवल काल्पनिक प्रतीत होता है। पूर्वी नेरी ग्रहशंकर बेट से की एक दूसरी शाखा से मिलकर जिले में प्रवृष्टि होती है। यह पहले निचले मैदान में बहती है। यह स्थान अत्यन्त दलदल और धान की उपज के लिए अत्यन्त प्रसिद्ध है। तत्पश्चात यह कड़ी और मटियार भूमि में बहती है और यह अंत में चाम्ब अर्थात् राइन के निचले मैदान में पहुँचती है। यहां पर इसका एक भाग सतलज के पुराने धरातल में प्रवाहित होता है जहाँ पर चौड़ी नदी का दक्षिणी किनारा अब भी स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है। 'नेरी' की शाखा १० गज से कहीं भी चौड़ी नहीं है। प्रायः पूरे वर्ष तक पानी रहता है क्योंकि इसमें नम स्थानों से पानी सर्वदा आया करता है। परन्तु जहाँ तक यहाँ की मिट्टी का सम्बन्ध है यह इस प्रकार बनी हुई है कि 'नेरी' को बिना किसी के सहारे के पार करना असम्भव हो जाता है। पश्चिमी 'नेरी" बनावटी है परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि यह पूर्वी 'नेरी' की एक उपशाखा है। यह 'राइन' के दलदल से होकर बहती है। और यहाँ पर दो शाखाओं में विभाजित हो जाती है। इसमें से पूर्वी शाखा करीब करीब दक्षिण की ओर बहती है। और सतलज में बैरसाल स्थान पर गिर जाती है। पश्चिमी शाखा कुछ मील चलकर मुख्य शाखा से गोपाल पुर में मिल जाती है। जब नदी का पानी कम होजाता है और उसका धरातल कुछ ऊँचा हो जाता है। तब पश्चिमी नेरी का पानी पूर्वी नेरी में चला जाता है। परन्तु जब सतलज में आ जाती है तब उसका पानी पश्चिमी 'नेरी' के द्वारा ही 'चम्ब' को फिर प्लावित कर देता है। प्रायः पश्चिमी 'नेरी' शुष्क रहा करती है। क्योंकि इसका धरातल दूसरे निचले धरातल से ऊँचा है। इसके अतिरिक्त इसका धरातल बलुहा है अतएव यह आसानी से पार की जा सकती है। यहाँ चोय-भारती एक दूसरी शाखा भी है जो केवल इसी जिले में बहती है। यह लगभग बनावटी शाखा है। यह शाखा शेदपुर की शाखा से निकलती है। यह बट के पश्चिम में बहती है और सतलज में नानगल के स्थान पर गिर जाती है।

भिलौर तहसील में भी नवाशहर की भाँति एक शाखा पाई जाती है और उसका भी नाम नदी फलौर नेरी है। यह सतलज से कारियाना स्थान के पास से निकलती है। और फिलौर नगर के पास तिहांग में गिर जाती है। यहाँ के निचले स्थन को सींचने के लिए एक धारा निकाली गई थी परन्तु यह धारा इच्छित उद्देश्य को सफल करने में असफल रही। फिलौर 'नेरी' भी केवल वर्षा ऋतु को छोड़ कर सारे वर्ष शुष्क रहती है। यह 'नेरी' 'नवाशहर' की नेरी से बहुत छोटी उल्लेखनीय है। नकोदर में बहुत थोड़ी शाखाएँ हैं। जो हैं भी वे बहुत छोटी हैं

जो लगभग वर्षा ऋतु को छोड़ कर सूखी रहती हैं। इसमें एक सतलज की शाखा है जो केवल वर्षा ऋतु को छोड़कर पूरे वर्ष तक सूखी रहती है। केवल व्यास नदी मिलने पर इसमें पूरे साल पानी पाया जाता है। इसके अतिरिक्त दो और शाखाएँ हैं जिनका नाम शाहक मालवाल और चोली है। यह शाखाएँ लुधियाना के एक दम दक्षिण में स्थित हैं। यह अन्त में मिल जाती है और व्यास नदी में जा गिरती है। इन शाखाओं में बहुत काफी बाढ़ आती है और यह अपनी बाढ़ से सारी निकटवर्ती भूमि को प्लावित कर देती हैं। इसके अतिरिक्त छोटी छोटी सतलज की शाखाएँ हैं जो नदी के निकटवर्ती देशों को सींचती हैं।

चम्ब या निचले नम मैदान—जलन्धर जिले में चम्ब या निचले नम मैदानों की प्रायः कमी है। जो मुख्य मुख्य चम्ब हैं भी अगर उनकी उपयोगिता को सोचा जाय तो उनमें किसी प्रकार की विशेषता नहीं पाई जाती। बहुत से दलदल और नम स्थान आज कल शुष्क होने लगे हैं। जालन्धर तहसील में कुछ ऐसे भी भाग हैं जहाँ पहले पानी ही पानी लहराता था परन्तु आज कल उसमें अच्छी अच्छी फसलें तैय्यार की जाती है और भूमि पूर्णतया समतल बन गई है। उदाहरण स्वरूप के लिये खरल कलान और चौलांग की भूमि जो एक दम उत्तर में स्थित है आज कल समतल मैदान के रूप में परिवर्तित करलिया गया है जिसमें किसी समय पानी ही पानी दिखाई पड़ता था। इसी प्रकार मसूरपुर के पश्चिम और अलावलपुर के कुछ उत्तर का मैदान है जिसमें आजकल पानी के स्थान पर मैदान हो गया है। इसी प्रकार धीरे धीरे सतलज की दूसरी शाखाओं का भी पानी नमक के रूप में परिवर्तित हो गया और नदियाँ सूख गई। इनका पानी 'घाच' के द्वारा शुष्क हुआ करता है जिसका वर्णन हम पहले कर आए हैं। इस प्रकार प्राकृतिक परिवर्तन के अनुसार 'चम्ब' धीरे धीरे समाप्त होती जा रही है और उनके स्थान पर सुन्दर कृषी होने लगी हैं जिसका अनुभव किसी ने पहले स्वप्न में भी न किया होगा। परन्तु इसका यह अभिप्राय नहीं कि इस समय कोई नम और दलदल भाग जिले में है ही नहीं। नवाशहर तहसील में रोहान नगर के दक्षिण और पूर्व में अब भी दलदली भाग पाए जाते हैं। सतलज नदी जब बाढ़ की अवस्था में आती है तो अपने पानी से इस स्थान को लबालब कर देती हैं। इसमें पानी दो 'नेहू' शाखाओं के द्वारा भी आता है इसके अतिरिक्त इसमें पानी वर्षा के द्वार तथा ऊपरी स्थान के सोतों के द्वारा भी आता है। अतएव इन स्थानों पर वर्ष भर पानी जमा रहता है। केवल मई और जून के माह में इसमें पानी की बड़ी बड़ी सोचनीय दशा हो जाती है। रोहन चम्ब का क्षेत्र वर्षा ऋतु में अधिक से अधिक ५०० एकड़ उस समय हो जाता है। इसका घेरा ८६४६ फीट और ३००० फीट के घेरे तक इसकी गहराई ५ फीट हो जाती है जो सम्भवतः बहुत असत्य नहीं है। इसके अतिरिक्त यहाँ छोटे छोटे चम्ब भी हैं। जो इसी तहसील में चरन मुजफ्फरपुर सोयता और गरूपार में पाए जाते हैं। फिलौर में एक लिहाँग की शाखा है जहां पहले सतलज बहा करती थी। इसका सम्पूर्ण क्षेत्रफल २५० एकड़ है अर्थात् ६५०० फीट लम्बी और १५०० फीट चौड़ी है। इसकी गहराई सात फीट है। यह प्रायः सतलज नदी के द्वारा नम बनी रहती है। इसके अतिरिक्त ऊपरी प्रदेश की जल शाखाएँ भी इसको दलदल और नम बनाए रखती है। यह पूरे वर्ष में कभी पूर्ण रूप से नहीं सूखती है। इस भाग की बहुत सी भूमि जुताई के काम आती है और उससे अत्यन्त सुन्दर फसल पैदा की जाती है। रोहान में कुछ चम्ब भूमि ऐसी है जो बिलकुल कृषी के काम नहीं आती है। परन्तु यह स्थान चरागाह के लिए अत्यन्त उपयोगी है। फिलौर तहसील के पश्चिमी भाग में पानी अधिक पाया जाता है। अजतानी के निकट एक बहुत बड़ा दलदली प्रदेश पाया जाता है। नकोदर में केवल एक ही दलदली भाग है जो वर्णन करने योग्य है। यह दलदल का भाग काँग साहिबू ग्राम के अन्दर पाया जाता है। यह पहले अगर बीन नदी की एक मुख्य शाखा नहीं तो एक भाग अवश्य था। लोहिन के पूर्व में भी एक बहुत

बड़ा भाग दलदल और पानी से भरा रहता है। यह नवानपिंड की सीमा पर स्थित है, परन्तु यह जिले की सीमा के अन्दर कठिनता से लाया जा सकता है। नकोदर के दक्षिण-पश्चिम की झील आज कल बिल्कुल शुष्क हो गई है। जालन्धर में सब से मुख्य दलदलीय भाग बुलहुवाल में पाया जाता है। यह कपूर्थला के करीब करीब ८ मील उत्तर पश्चिम में पाया जाता है। दूसरा इसी प्रकार का दलदल धोगरी में पाया जाता है। यह जालन्धर से लगभग उसी दिशा और उतनी ही दूरी में है जितना कि बुलहुवाल दलदल। कुछ दिनों पश्चात् कहा जा सकता है कि यह भाग कई मील और बढ़ जायगा परन्तु जहाँ तक अनुमान किया जाता है नदी की बाढ़ दिन प्रति दिन कम होती जा रही है। और इन भागों की सीमा अधिक निश्चित और दृढ़ हो गई है। अतः ऐसी सम्भावना बहुत कम पाई जाती है। ठीक यही अनुमान लेसरी वाला के दलदल के विषय में किया जा सकता है लगभग एक कील की दूरी पर धागरी के उत्तर-पश्चिम में स्थित है।

शाखाओं के भाग—यह छोटी छोटी शाखाएँ मुख्यतया तीन भागों में विभाजित की जा सकती हैं। प्रथम श्रेणी की शाखा 'चो' खाश में पाई जाती है। यह होशियारपुर जिले की शिवालिक पहाड़ियों से निकलती है। इसका तह बड़ा ही सुन्दर है। और यह अपने साथ कई प्रकार की नमकीन मिट्टी लाती है और उससे भूमि को उर्वर भी बना देती है। श्रेणी की वे शाखाएँ हैं जिनका धरातल कड़ी मिट्टी से बना हुआ है। इसकी गहराई लगभग उतनी है जितनी कि इनकी चौड़ाई होती है कभी कभी यह दलदल और कीचड़ उतने भयानक हो जाते हैं कि कि इनमें से होकर पार करना टेढ़ी खीर हो जाता है। तृतीय श्रेणी की भूमि द्वतीय श्रेणी से कुछ और खराब और निचली होती है। इसकी गहराई की कोई निश्चित सीमा नहीं है। गर्मी की ऋतु में इसकी भूमि करीब करीब उसी प्रकार हो जाती है जैसा कि शेष देश की भूमि। अतएव ग्रीष्म ऋतु में इस भूमि में कोई विशेपता नहीं पाई जाती। प्रथम श्रेणी की शाखा को सर्वदा 'चो' कहते हैं। द्वितीय श्रेणी की शाखा को भी 'चो' और कभी कभी 'चोई' कहते हैं। और तृतीय श्रेणी की शाखा को 'इरह', 'राव' या 'रोही' के नाम से पुकारते हैं।

मुख्यतया कुल ८९ 'चो' अर्थात् पर्वतीय शाखाएँ हैं। जिनका कि वर्णन पहले कर चुके हैं। यह सभी शाखाएँ होशियार पुर से जालन्धर में प्रविष्ट होती है। आठ शाखाएँ जालन्धर तहसील में प्रविष्ट होती हैं और एक नवा शहर तहसील में। नवा शहर तहसील में इनके द्वारा बहुत थोड़ा नुकसान होता है। परन्तु जालन्धर तहसील के सिरवाल सरकिल में इनके द्वारा सबसे अधिक नुकसान होता है। यह सरकिल जिले में अपनी अत्याधिक उर्वरता के लिए प्रसिद्ध है।

जालन्धर को 'पंजाब का बाग' कहा जाता है और वास्तव में यह कथन किसी भी प्रकार अतिशयोक्ति नहीं सिद्ध की जा सकती। तिस पर भी यह बाग पूर्ण रूप से अति उत्तम नही कही जा सकती। इस प्रदेश के ऐसे ऐसे बलुहर भाग पाये जाते हैं। जो किसी बुरे बालू के भाग की श्रेणी में रक्खे जा सकते हैं। उदाहरण स्वरूप जालन्धर नगर के पश्चिम एक ऐसा बालू का भाग पाया जाता है जो अपनी नापसन्दी के लिए प्रसिद्ध है। लोग इस भाग के लिये कहते हैं :—

"सारी खानदा, आधी खाएँ, साहू बागी भूल न जाएँ"

यह कथन इस बात की पुष्टि करता है कि भर पेट खाने के अतिरिक्त यदि किसी को आधा पेट भोजन मिले तो वह सन्तोप से रहे और 'साधू बागी' में न जाये। तहाँ पर वेट की भूरी भूमि भी पाई जाती है। इसी प्रकार सीरवाल में भी 'चो' के निकट बालू पाई जाती है। इसकी भी बालू भूरे रंग की होती है परन्तु नकोदर और पश्चिमी जालन्धर द्वाब में बालू लगभग ८ या १० फीट ऊँची एकत्रित हो जाती है। इसकी इतनी मात्रा सुनकर और इस तेजी से बालू को उत्पत्ति देखकर बिस्मय अवश्य होता है। यहाँ के कृषक इसे लगातार कृषि के

ध्वन्सात्मक कार्य को देखते हैं, परन्तु जब उनसे इसके विषय में कुछ खोज करने की बातें पूछी जाती हैं तो वे इसका कुछ भी उत्तर नहीं देते। अतएव निरीक्षक और अनुसन्धानकर्ता इन बातों में वैसे ही अनजान रहते हैं जैसे वे पहले थे। अतएव पीली और लाल बालू के कणों में किसी प्रकार का भी निश्चयपूर्वक सम्बन्ध नहीं स्थापित किया है। फिलौर में देश के ढालू स्थानों में बलुहर प्रदेश पूर्णतया समकोण बनाते हुये चले गये हैं। अस्तु बालू के इस तीव्र गति से बनने में कोई सन्देह नहीं है। अतएव इसकी प्रगति को रोकने की चेष्टा में निराशा ही दीख पड़ती है। नकोदर और शाहकोट के बीच में सीधी सड़क आज कल छोड़ दी गई है। और उसके अतिरिक्त एक नई सड़क मालसीयान से होती हुई बनाई गई है। क्योंकि बालू के बड़े बड़े भीटों ने पुरानी सड़क को पूर्ण रूप से ढक लिया है जिसके कारण सड़क गाड़ी चलाने के सर्वथा अयोग्य हो गई है।

जङ्गली पशु—जालन्धर जिला इतना अधिक कृषी के योग्य बना लिया गया है कि जंगली पशुओं की शरण के लिए अब कोई स्थान नहीं है। अतएव यहाँ पर जंगली जानवरों का प्रायः अभाव सा है। होशियारपुर की पहाड़ियों में कभी भेड़ियों के झुंड और लकड़बग्घे दिखाई पड़ते हैं परन्तु उनकी भी संख्या केवल नाम मात्र के लिये है। मनुष्यों का सबसे बड़ा शत्रु जंगली सुअर है। बेट भूमि में कहीं कहीं जहाँ जंगल अधिक घने और अधिक संख्या में है, वहाँ पर जंगली सुअर अधिकता से पाये जाते हैं। रात्रि में वे निकलते और फसलों को एकदम नष्ट कर देते हैं। कभी कभी तो उनका यह काम शरारतन हुआ करता है। वे जितना खाते नहीं उतना फसल को बरबाद करते हैं। इसी प्रकार के बहुत से जंगली जानवर, दलदल प्रदेशों से कपूर्थला में भी आ जाते हैं और वे निकटवर्ती ग्रामों की फसलों को विध्वंस कर देते हैं। यह जानवर गन्ना, मक्का और गेहूँ की अधिकतर हानि पहुँचाते हैं। इसी डर से बहुत से कृषक इन चीजों को नहीं बोते क्योंकि इस फसल के बोने में उनकी इतनी क्षति हो जाती है कि उनका बोने का खर्च ही नहीं पूरा होता। जालन्धर तहसील के उत्तर पश्चिम में, जहाँ दलदली भूमि पाई जाती है, जंगली जानवर अधिकता से पाए जाते हैं। कपूर्थला के राजा खरक सिंह इन जानवरों को शिकार के लिए सुरक्षित रखते थे। क्यों कि वे शिकार के अत्यन्त प्रेमी थे। कहा जाता है कि बाढ़ के समय यह सुअरें पहाड़ियों की ओर चली जाती हैं। और वर्षा ऋतु के समाप्त होते ही, यह फिर इन्ही भागों में आजाती हैं। परन्तु यह कुछ आश्चर्य जनक भी प्रतीत होता है। क्योंकि उनके विषय में यह भी कहा जाता है कि वे तैरना भी जानती हैं और वे अपने शिकार को पानी में तैरकर पकड़ लेती हैं। और कोई कारण नहीं वे ऐसा क्यों कर लेती हैं। जब कि वे प्रत्येक समय नदी के पास ही रहने में अभ्यस्त हो गई हैं। इस जिले में नीलगाय नहीं पाई जाती। खरगोश यहाँ पर बिल्कुल ही नहीं पाये जाते। शृंगाल कहीं कहीं पर पाए जाते हैं परन्तु उनको भी संख्या बहुत थोड़ी है, लोमड़ियाँ भी कहींकहीं दिखाई पड़ जाती है। लेकिन फिर भी शिकार के प्रेमियों को कुछ शिकार करने लिये जंगली जानवरों की आवश्यकता पड़ती है। वे प्रायः गोह का शिकार करते हैं। कुछ शिकारी कुत्ते भी पाए जाते हैं। जिनको शिकरी अपने साथ रखते हैं। और उन्हीं के सहारे जंगली जानवरों का शिकार करते हैं। इसके अतिरिक्त वे एक बड़ी छिपकली का भी शिकार करते हैं। इस छिपकली की खाल से बहुत सुन्दर जूते बनाए जाते हैं। यहाँ पर न्योले अधिकता से पाये जाते हैं साथ ही साथ चूहे भी अधिक संख्या में पाए जाते हैं जो खेतों में बिल बना कर रहते हैं।

जिले के कुछ अधिक हानिप्रद नहीं है। नदी और बीन के तट पर बतख और हंस चिड़िया पाई जाती हैं। यह चिड़िया न केवल बीन के पास पाई जाती है बरन् यह चम्ब और दलदल भागों में भी पाई जाती हैं। यहाँ पर चीलें भी पाई जाती हैं।

कुछ विशेष पक्षियों के अतिरिक्त यहाँ पर चम-गीदड़ भी है। जो प्रायः हिन्दुओं के ग्रामो में पाए जाते हैं। यहाँ कुछ प्रकार के अन्य पक्षियों के भी झुंड पर्वतीय प्रदेश से आ जाते है। तिलयार नामक एक पक्षी भी पाया जाता है जो छोटा होता है और उसकी पीठ का प्रथम भाग काला होता है।

सर्प भी इस जिले में अधिकता से पाए जाते यद्यपि इनकी संख्या दूसरे निकट वर्ती जिलों की अपेक्षा अत्यन्त थोड़ी है। यहाँ पर नाग भी पाए जाते हैं। यह कई किस्म के होते हैं। ताम्ब वैन्सी फुलसेरी, (२) मछलियाँ, (३) पदम, (४) गोगला-स,। इन सब का एक नाम 'खराया' है। इसमें सन्देह नहीं कि यह शब्द 'खरा' के लिए उपयुक्त होता है। एक बहुत बड़ा सर्प 'इमदरयाद' ढाक के भागों में पाया जाता है परन्तु इसके काटने से किसी प्रकार का विष नहीं फैलता और न मनुष्य मरता ही है। 'शैन' या 'गदेल' नाम के भी सर्प पाए जाते हैं इसके अतिरिक्त 'कलैश' हरेवा या टकवा और जैसरा या गुलदार सर्प पाए जाते हैं। परसर का मत है कि गुलदार सर्प पूर्णरूप से अनजान और अबोध होता हैं। उसके बढ़ने से किसी प्रकार की क्षति नही होती 'फिसी' सर्प वास्तव में अत्यन्त विषैला सर्प समझा जाता है। इसके उछलने की शक्ति बहुत प्रसिद्ध है। यह अपने उछल कर काटने के लिए प्रसिद्ध है। इसी प्रकार 'कुरून्दी' नामक एक संर्प पाया जाता है। जिसका पता भी परसर ने एक सर्प पकड़ने वाले से लगाया था। मि० परसल ने अपनी पुस्तक थनाटो फीडिया आफ़ इन्डिया में सारे सर्पों का नाम दिया है जिनके नाम से वे सर्प जिले में प्रसिद्ध हैं। यहाँ पर हानि कम पहुँचाने वाले सापों की संख्या बहुत अधिक है।

यद्यपि यहाँ पर बहुत से ऐसे भाग हैं जहाँ पर वृक्षों की अत्याधिक न्यूनता है। कहीं कहीं पर तो बिल्कुल ही नहीं पाये जाते। परन्तु जालन्धर जिले में वृक्षों की न्यूनता का अधिक अनुभव नहीं होता। जैसे ही नये कुओं का निर्माण होता है उसके चारों ओर किनारे किनारे वृक्षों के पौदे लगा दिये जाते हैं। ये वृक्ष मनुश्यों को ग्रीष्म की तप्त वायु तथा लू से बचाते हैं। जानवर भी इन्ही वृक्षों के नीचे थका-वट से परेशान होकर शान्ति लेते हैं। पर 'कीकर' ताली या शीशम के वृक्ष पाये जाते हैं। सम्पूर्ण जिले में कुल २७,००० कुएँ हैं अतएव अच्छे अच्छे वृक्ष और पौदे इनके किनारे अधिकता से लगाए गये हैं। कहीं कहीं पर घरों के निकट बहुत ही उत्तम श्रेणी के वृक्ष लगवाये गये हैं। सुविधा मिलने के अनुसार पेड़ तालाबों के किनारे भी लगाये जाते हैं। इन वृक्षों में प्रायः पीपल, बोर और पीलकिन ही ग्रामों के निकट लगाये जाते हैं। धे क का वृक्ष भी यहाँ पर कम नही पाया जाता। यह वृक्ष बहुत ही शीघ्रता के साथ बढ़ता है और यह घरों की छत बनाने के काम में लाया जाता है। बेर के वृक्ष अधिक तर सड़कों तथा पगडंडियों के किनारे किनारे लगे हुए हैं। बेर के वृक्ष यहाँ पर काफ़ी संख्या में पाये जाते हैं। यह प्रायः उन स्थानों पर पाये जाते हैं जहाँ पर भूमि मुलायम होती है। इसी प्रकार 'फुलाही' के वृक्ष प्रत्येक स्थानों पर पाये जाते हैं। 'ताली का वृक्ष इसी प्रकार अधिक संख्या में नहीं पाया जाता। निसंदेह 'कीकर' और 'ताली' केवल कुए के ही पास तक सीमित नहीं है। बेर और फुलारी के वृक्ष प्रायः हर स्थानों पर पाये जाते हैं। दक्षिण पूर्व के मैदानों में 'ढाक' जिसको 'चछरा' भी कहते हैं, अधिकता से पाए जाते हैं। परन्तु यह वृक्ष धीरे धीरे समाप्त किए जा रहे हैं। इसकी पत्तियाँ प्रायः उस समय उपयोगी सिद्ध होती हैं जब कि देश में जानवरों के खाने की कमी पड़ जाती है। उस समय इसी वृक्ष की पत्ती पशुओं की रक्षा करती है। खजूर के वृक्ष कहीं कहीं पर पाये जाते हैं परन्तु नवाशहर के धुर दक्षिण-पूर्व खजूर के वृक्ष अधिक संख्या में पाये हैं नकोदर के दक्षिण-पश्चिम, लोहियाना में भी खजूर अधिकता से पाया जाता है। कपूर्थला के निकटवर्ती ग्रामों में भी, जिनका मुख्य नाम अम्ब-गढ़ और भीका है, खजूर के वृक्ष पाये जाते हैं। 'फरवान' या फराश के वृक्ष यहाँ पर कहीं कहीं पाये

जाते हैं। परन्तु फिलौर के पूर्वी बेट भाग में तथा जालन्धर के कुछ ग्रामों की सीमा पर इन वृक्षों का अवलोकन हो जाता है। बबूल और बाना में वृक्ष यहां पर बहुत ही कम पाये जाते हैं। यह वृक्ष कहीं कहीं पर दिखाए पड़ जाते हैं परन्तु वे केवल नाम के लिये अँगुली पर गिने जा सकते हैं। बानों के वृक्ष प्रायः नदियों के तट पर पाये जाते हैं। कहा जाता है कि नदी इसके बीज जब कभी बहा लाती है तब तटों पर इसके वृक्ष उग आते हैं, परन्तु इसके वृक्ष बालू की राशि के मध्य में पाये जाते हैं। तूत या मलबरी के वृक्ष केवल सड़कों के किनारों को छोड़ कर कहीं नहीं पाये जाते। झाल के वृक्ष कठिनता से पाये जाते हैं, परन्तु झंड के वृक्ष इससे भी कठिनता से पाये जाते हैं वाटिकाओं के वृक्ष प्रायः उसी तरह पाये जाते हैं जैसे कि समस्त पंजाब में पाये जाते हैं। वन वृक्षों के लिये सुन्दर भूमि और जलवायु की आवश्यकता होती है। इन वृक्षों को अधिक देखने भालने की भी आवश्यकता नहीं होती। केवल आम ही ऐसा वृक्ष है जिसके लिये थोड़ी सी सावधानी और सेवा की आवश्यकता होती है।

आम के वृक्ष जालन्धर की अपेक्षा होशियारपुर में अधिकता से पाये जाते हैं। बहुत विस्तृत वृक्षों के समूह नवाशहर में पाये जाते हैं। यह भाग होशियारपुर का सीमा पर स्थित है। इस स्थान की मिट्टी कुछ मुलायम है और इस स्थान के फल साधारण तया एक दूसरे स्थानों के फलों से मिलते जुलते हैं। इनकी बनावट और आकृति में कोई विशेष अन्तर नहीं पाया जाता।

इस जिले की मुख्य मुख्य फलदार झाड़ियाँ 'करील', 'मल्ला', 'आक', 'दन्दातर', 'नागा', बसूती, जावाँ, 'मद्दा', 'चमार बूटी', चूरा फरोश, हरमल, बतूआ, पोली, पियाजी, लेई झाव, पिल्ची, बीला, जाल, 'करेली' और 'भालू' हैं। यह झाड़ियाँ प्रायः पहाड़ियों में तथा नदियों के तट पर पाई जाती हैं। इनके लिये कोई बहुत अच्छी और मुलायम मिट्टी की आवश्यकता नहीं पड़ती। यह ककरीली भूमि में अधिकता से पाई जाती हैं। इनकी ऊँचाई प्रायः १० या १२ फीट होती है। करील और मल्ला की यहां पर उतनी उपयोगिता नहीं है जितनी इनकी दक्षिण-पूर्व के प्रदेशों में होती है। दक्षिण-पूर्व में 'मल्ला' को 'झरबेरी' भी कहते हैं और वे लोग इसके फलों को खाते भी हैं।

घासें

जालन्धर जिले में कृषी की अधिकता से घास के मैदानों की अत्याधिक न्यूनता हो गई है। अतएव यहाँ के लोग घास की तरह तरह की किस्मों से उतना परिचित नहीं हैं जितना कि 'बार' भाग के लोग जालन्धर में केवल थोड़ी घासों को छोड़ कर प्रायः सभी घासों को बूटी के नाम से पुकारते हैं। वह बूटी जो अधिकता से ग्रामों के बीच नहीं पाई जाती उसको वे लोग जंगली बूटी के नाम से पुकारते हैं। इसमें सन्देह नहीं कि यहाँ पर पश्चिम की अपेक्षा घास कम पाई जाती तिसपर भी यहाँ घासों की कई किस्में पाई जाती है। 'सार' नामक एक प्रकार की घास लगभग १२ फीट ऊँची होती है। यह जालन्धर और नकोदर के बलुहर प्रदेश में बहुत अधिकता से पाई जाती है। इसके अतिरिक्त दूसरे भागों में यह कुछ न कुछ अवश्य ही पाई जाती है। कुछ लोगों का मत है कि 'सार' घास केवल ऐसी भूमि में उगती है जो नम हो और जहाँ पानी थोड़ी ही जमीन खोदने पर निकल आये परन्तु यह विचार पूर्ण रूप से सत्य नहीं माना जा सकता। यहाँ पर सफेद फूल वाली 'सार' अधिकता से पाई जाती है। इसके नये नये पौधों से कुर्सियाँ और स्टूल बनाए जाते हैं। इसके तने को 'कान' भी कहते हैं। इसी कान के ऊपरी छिलके से बहुत सुंदर सुंदर रेशे भी निकाले जाते हैं। इस रेशे को लोग कूटते हैं और मूंज की भाँति बना लेते हैं। और उससे रस्सियाँ इत्यादि भी बनाते हैं। इसके अतिरिक्त सार के पतले पतले भाग बना लिये जाते हैं। इसको लोग केन या बेंत कहते हैं। केन को भिगोकर मुलायम बना लेते हैं उससे अत्यंत सुंदर और मजबूत रस्सी तैयार करते हैं। यह रस्सियाँ शकर की मिलों में भी उपयुक्त होती हैं। फिर भी 'सार' की घास का विवरण ठीक

ढङ्ग से नहीं होता। और कहीं पर इसके रेशों को रुपये पर और कहीं इसको खेतों के बदले पर दिया जाता है। और इन खेतों में कृषी की जाती है। कृषक यदि खेत के बदले 'सार' के भाग को लेता है तो इसमें वह किसी प्रकार का अनुचित और हानि-प्रद कार्य नहीं करता। अच्छी, सुदृढ़ मूँज. के लिए खेतों का बदलना स्वाभाविक है। क्योंकि उससे उन्हें अधिक लाभ की आशा रहती है। परन्तु सम्भवतः सार का भविष्य अधिक उजला नहीं दिखाई पड़ता। 'बहिया' शकर की मील प्रायः इसके रेशों और केनों को बेकार तथा अनुपयोगी सिद्ध करती जा रही है। क्योंकि इस जिले में प्रायः सनों का प्रयोग अधिक होता है। परन्तु यदि इसके स्थान पर लकड़ी के मिल चलाए जायँगे तो निःसन्देह इन मूँज की रस्सियों की आवश्यकता बनी रहेगी।

'सार' घास से कुछ छोटी किस्म की एक घास भी होती है। उसे 'कहा' कहते हैं। यह निचले प्रदेशों में अधिकता से पाई जाती है। कहीं कहीं पर यह घास इतनी घनी हो जाती है, कि आसानी से पार करना भी कठिन हो जाता है। इसी घास को सम्भवतः देहली में 'कान्स' के नाम से भी पुकारा जाता है। यह जालन्धर के पश्चिमी दोना भाग के ग्रामों में पाई जाती है। कान्स प्रायः बालू मिली मिट्टी में उपजती है। यह घास १८ से २४ इंच की ऊँचाई तक बढ़ती है। 'सार' के पश्चात् गार्म ही सब से लम्बी घास होती है। यह घास अधिक कड़ी होती है। अतएव यह बहुत कम उपयोग में लाई जाती है। 'पलवान' घास लगभग दो फीट लम्बी होती है। यह घास प्रायः अच्छी भूमि में पाई जाती है अतएव लोग इस घास के भाग को अच्छी और उपजाऊ भूमि के रूप में यहाँ पर परिगणित करते हैं। परन्तु सबसे अच्छी घास 'खाबल' होती है। यह घास प्रायः उसी किस्म की होती है। जैसी उत्तरी भारत में दूब होती है यह घास भी उत्तम श्रेणी की भूमि में पाई जाती है। इसके अतिरिक्त 'चिम्बर' घास होती है जो सबसे खराब भूमि में उत्पन्न होती है। लेकिन 'बार' में इस कथन के प्रतिकूल लोग अपनी सलाहें देते हैं। इसके अतिरिक्त 'धमन' 'लम्ब' 'दाब' 'पन्नी' कसेल 'दीलों' सेगनी और मैना घासें होती हैं। इन सब में 'दाब' सबसे खराब घास होती है। इसका वन अत्यन्त कठोर होता है। यह प्रायः पूरे वर्ष भर हरी बनी रहती है। यह सम्पूर्ण जिले में पाई जाती है। यह घास सुखाने के बिलकुल ही योग्य नहीं होती। शेष घासें अच्छी होती हैं। वे या तो बेट भाग में या नाम स्थानों में पाई जाती हैं।

मछलियाँ

लुधियाना गज़टियर में सतलज की मछलियों की एक सूची दी गई है। मुख्य मुख्य मछलियाँ निम्न लिखित हैं। :— राहू, सानल, संगारी, मोरी, माली, पारी, दोला, झाली और घाग मछलियों का शिकार प्रायः वर्ष के हर प्रतिमास माह में किया जाता है। इसके लिए शरद् ऋतु सब से उत्तम और वर्षा ऋतु सब से खराब समझी जाती है। प्रायः इनके फसाने के लिए जाल प्रयोग में लाए जाते हैं। कटिया इसके लिए बहुत कम प्रयुक्त की जाती है।

जलवायु और वर्षा

मैदान की जलवायु प्रायः वर्ष भर सम रहती है। केवल जून के मध्य भाग से लेकर जुलाई तक, अगर वर्षा नहीं होती तो गर्मी काफी पड़ती है। यहाँ पर रात्रि में अधिक गर्मी बहुत कम पड़ती है। मार्च के अन्त से जुलाई तक गर्मी काफी पड़ने लगती है। यह गर्मी सितम्बर के मध्य तक रहती है। इस समय प्रायः बड़े बड़े भयानक तूफान और बवंडर आते हैं जिनको लोग 'अगथ' कहते हैं। इसके पश्चात् प्रातः काल में ठंडक पड़ती आरम्भ हो जाती है। और अक्टूबर के अन्त में शरद्ऋतु का आगमन होना शुरू हो जाता है। बड़े दिन अर्थात् दिसम्बर के अन्त में यहाँ पर लगभग हर वर्ष वर्षा होती है। परन्तु कभी कभी ऐसा भी होता है कि वर्षा नहीं भी होती। और यदि दिसम्बर में वर्षा नहीं होती तब जनवरी के अन्त तक वर्षा अवश्य हो जाती है। यहाँ पर

जंगल बहुत घने नहीं है। यह प्रायः फरवरी के दूसरे सप्ताह में उत्पन्न होते हैं। इसके पश्चात् बड़ी बड़ी हवाएँ चलने लगती हैं जो ग्रीष्म ऋतु के आगमन की सूचना देती हैं। इसके पश्चात् जैसे जैसे समय व्यतीत होता है जलवायु खराब होनी आरम्भ हो जाती है। मई तक धूल से भरी हुई हवाएँ चलने लगती है। कभी कभी यह पीले बालू के बवडंर भी लाती हैं. जिससे जलवायु अत्याधिक गर्म और असहनीय हो जाती है। कभी कभी ऐसी भी स्थिति आ जाती हैं कि तूफान और पानी क्रमशः एक के पश्चात् दूसरे को आना शुरू हो जाता है। यह घटना लोगों के लिए बड़ी ही आश्चर्य जनक सिद्ध हुआ करती है। यहां की नम जलवायु का एक सम्भवतः मुख्य कारण यह है कि यहाँ कृषि अधिक भागों में होने लगी है। जिले की एक चौथाई भाग से भी अधिक भूमि में कृषी की जाती है। गर्मी की ऋतु में भी यहाँ पर भूमि बंजर नहीं छोड़ दी जाती। इस ऋतु में भी बहुत से स्थानों पर कपास, केन और तरबूज के हरे हरे पौधे दिखाई पड़ते हैं। निःसन्देह यह भाग समस्त जिले की जलवायु को नम बनाए रहते हैं। यहाँ की हवा भी (दूसरे स्थानों से जो कृषी के योग्य नहीं बनाए गए हैं) अधिक ठंडी और नम रहती है।

जालन्धर नगर में एक पर्वनीय शाखा थी। इसके कारण वर्षा ऋतु में अधिक बाढ़ आ जाया करती थी और नगर में बीमारी फैलना आरम्भ हो जाती थी। परन्तु आजकल उसकी धारा को काट कीट पूर्वी बीन' से मिला दिया गया है। अतः नगर की जलवायु अब काफी स्वास्थप्रद हो गई है १९०१ तक के दस वर्षीय गणना में लोगों के उत्पन्न होने का अनुपात ४२ था और मृत्यु को अनुपात ३६ था। ऐसा प्रतीत होता है की मृत्यु की अधिकता की कमी ज्यादती पर निर्भर रहती है। सन् १८८१ से —९४ तक वर्षा का अनुपात कुल ४०" इञ्च था और इसी बीच में मृत्यु का भी अनुपात प्रति वर्ष ३६ ही रहा। परन्तु १८९५–९६ से लेकर १८९'—१९०० तक जब वर्षा का अनुपात २०" इञ्च हुआ तब इस बीच में मृत्यु की संख्या का अनुपात ३० हो गया। जिले में सबसे मुख्य स्वास्थ वर्धक स्थान शाहकोट, महत पुर, मलसिया नवाशहर और कर्तारपुर हैं। और सबसे अधिक जन संख्या फिलौर तहसील जनदियाला, बुन्दाला बिलगा बारापिंडे, रूरकाह ग्राम में पाई जाती है नकोलर तहसील के सरीह, शंकर, शाहकोट, बारा, गुन्नान नूरपुर, मालसियाना भरतपुर ग्राम में पाई जाती है। नवाशहर तहसील के फराल, जासो हरजारा, सरहाल, ग्राम में है। और जालन्धर तहसील के चित्ती लल्लियान, दुल्ली ग्राम में पाई जाती है।

प्लेग

इस जिले में तथा सम्पूर्ण पंजाब में प्लेग फैलने का इतिहास तब से आरम्भ होता है जब बँगा नवा शहर सड़क के निकट खतकरकलान नामक ग्राम इस बीमारी का शिकार हुआ कहा जाता है कि इस बीमारी को लाने वाला राम सरन एक ब्राह्मण था। वह हरिद्वार गया था। लौटते समय वह गंभीर बुखार का शिकार हुआ और यह घटना २८ अप्रैल सन् १८९७ में हुई थी। ब्राह्मण थोड़े ही दिनों के पश्चात् मर गया। परन्तु उस समय प्लेग का प्रादुर्भाव नहीं हुआ। प्लेग का आरम्भ सितम्बर के महीने से शुरू हुआ अक्टूबर में समस्त बंगा ग्राम इस भयानक बीमारी का शिकार हो गया और जुलाई तक लगभग ७० ग्राम जालन्धर में और १६ ग्राम होशियार पुर प्लेग की बीमारी के ग्रास बन गए। इस समय बहुत शीघ्रता से बीमारी को रोकने का प्रयन्त किया गया। इसके प्रयन्त में बीमारी से ग्रसित ग्रामों को प्लेग का टीका लगवाया गया। (२ ग्राम वालों को पूर्ण रूप से दूसरे ग्रामों में जाने से रोका गया और दूसरे भी ग्राम वालों पर यहा आने के लिए कठिन प्रतिबन्ध लगाया गया। बीमारी से पीड़ित लोगों से सम्बन्ध रखना बिलकुल हटा दिया गया।

इस उद्योग में पूर्ण रूप से यह प्रयत्न किया गया कि लगभग सभी लोगों को प्लेग का टीका लगवा दिया जाय। इस उद्योग में पहले लोग घबड़ाए और उन्होंने टीका लेने से इन्कार किया। ऐसी दशा में पुलिस के भय और दबाव से लोगों को दबाव के साथ टीका लेने के लिए बाध्य किया गया। होशियार पुर के महशङ्कर ग्राम में २८ अप्रैल सन् १८९८ ईस्वी में पुलिस को गोली भी चलानी पड़ी और बड़े प्रतिबन्ध से उनको प्लेग का टीका लगाने के लिए मजबूर किया गया। इसके पश्चात् फिर दोबारा ऐसा करने की आवश्यकता नहीं पड़ी और लोगों ने टीका ले लिया। थोड़े दिनों के बाद लोग टीके का महत्व समझने लगे और बीमारी भी शान्त हो गई। उस समय से आज तक इतनी भयङ्करता से प्लेग का आक्रमण नहीं हुआ, और प्लेग की वृद्धि भी बन्द हो गई।

सन् १९०० ईस्वी में शरद् काल के समय पुलीस का अधिक पहरा प्लेग ग्रसित ग्रामों से हटा लिया गया परन्तु जब जून १९०१ में प्लेग का बढ़ना शीघ्रता से आरम्भ हो गया तब भारतीय गवर्नमेण्ट प्लेग के रोकने के लिए स्वयं प्रयत्न शील हुई। १९०१ से १९०२ तक इस बीमारी की वृद्धि बहुत ही भयानक रूप से आरम्भ हुई। ऐसी दशा में पंजाब की गवर्न्मेन्ट ने एक प्रस्ताव पास किया। इस प्रस्ताव के अनुसार प्लेग से पीड़ित ग्रामों के सभी निवासियों को टीका लेना आवश्यक हो गया। इस कार्य के लिए ६ योरुपीय और दो नगर के डाक्टर नियुक्त किये गए और वर्ष भर में ८२,००० लोगों को प्लेग का टीका लगाया गया। अस्तु इस टीके से बीमारी की वृद्धि में काफी कमी पड़ गई। इस प्लेग का सम्पूर्ण विवरण कैप्टन जेम्स आई० एम० एस० की पुस्तक "रिपोर्ट आन दी आउट ब्रेक आफ प्लेग इन जालन्धर ऐण्ड होशियार पुर १८९७—९८ में मिल सकता है। इसके विषय में जनवरी १९०० में मैक-वर्थ एन्ग ने और १९०२ में सर चार्ल्स रिवाज ने दरबार भी किया। सन् १९०२ और १९०३ में प्लेग से ग्रसित लोगों की मृत्यु २१००३ तक पहुँच चुकी थी। और रोगियों की कुल संख्या ४५,६३४ थी।

इस जिले में वर्षा का अनुपात निम्नलिखित है। जालन्धर में कुल वर्षा अनुपात २८" इञ्च है। फिलौर में २३३/४" इञ्च है, नकोदर में इसका अनुपात २४३/४" इञ्च है तथा नवाशहर में २६१/२" इञ्च है। यदि सम्पूर्ण जिले का अनुपात लगाया जाय तो २२" इञ्च वर्षा गर्मी में होती है और ४" इञ्च वर्षा शरद् काल में हो जाती है। सन् १८७१ ईस्वी में, और सन् १८७८ ईस्वी में अधिक वर्षा के कारण जिले में काफी बाढ़ आ गई थी अतः इसके कारण देश की बहुत सम्पत्ति नष्ट हो गई और नदियों के तट पर के बहुत से ग्राम बह गए।

भाग—(ब)

इतिहास

प्राचीन काल में जालन्धर जिले की सीमा सम्पूर्ण उत्तरी द्वाब में रावी से लेकर सतलज नदी तक फैली हुई थी। जनरल कनिंघम का कथन है कि पद्म पुराण के एक उद्धरण के अनुसार जिले का नाम जालन्धर इस लिए पड़ा क्योंकि यहाँ पर एक जालन्धर नामक राक्षस रहा करता था। उस की मा का नाम गंगा नदी थी और उसका पिता समुद्र था। जालन्धर के विषय में कहानी इस प्रकार है :—

"उसके (जालन्धर राक्षस) जन्म होने पर पृथ्वी कांपने और रोने लगी। ब्रह्मा जी इस समय तपस्या में मग्न थे। उन्होंने जब यह उथल पुथल सुना तो वे अपनी तपस्या की मग्नावस्था से उठे और उन्होंने यह देखकर कि सम्पूर्ण संसार दुःख की इस वेदना में डूब जायगा, अपने हंस को मँगाया और उस पर आरूढ़ होकर समुद्र के पास पहुँचे......तब ब्रह्मा ने 'समुद्र से कहा', समुद्र तूने व्यर्थ में ही इतना और भयानक शब्द मचा रहा है। समुद्र ने उत्तर दिया 'हे देवों के देव, यह मैं शोर नहीं मचा रहा हूँ। यह मेरा पराक्रमी पुत्र है जो इतने भीषण और भयानक शब्दों से सम्पूर्ण संसार को कंपित कर रहा है।'......तब ब्रह्मा उस समुद्र के पुत्र के पास

गए तब पुत्र ने ब्रह्मा की दाढ़ी को इतने जोर से पकड़ लिया कि ब्रह्मा को छुड़ाना कठिन हो गया। इतने में समुद्र हँसता हुआ वहाँ पहुँचा और उसने अपने पुत्र के हाथ को छुड़ा दिया। ब्रह्मा समुद्र के बेटे की असीम शक्ति की प्रसंशा करता हुआ बोला 'इसके इस तीव्रता से दाढ़ी पकड़ने के कारण इसका नाम जालन्धर रक्खा जाय।', तत्पश्चात् इच्छानुसार ब्रह्मा ने उसको यह आशीर्वाद दिया 'यह जालन्धर अजेय होगा और इसको कोई भी देव पराजित नहीं कर सकेगा। इसके अतिरिक्त मेरी इच्छानुसार जालन्धर तीनों संसार का भोग करेगा।'

"जब वह लड़का बढ़ कर युवावस्था को प्राप्त हुआ तब शुक्र उसके पिता के सामने पहुँचे और समुद्र से कहा 'तुम्हारा पुत्र अपने पराक्रम के गुण से तीनों लोकों का भोग करेगा। अतः तुम जम्बूद्वीप से, जो कि पवित्र आदमियों के रहने का स्थान है। पीछे हट जाओ और उस पवित्र स्थान को अपनी लहरों से सुशोभित करते हुए वह स्थान जालन्धर के निवास के लिए खाली कर दो। ये समुद्र का स्थान इस युवक को राज्य करने के लिए उपयुक्त होगा। वहाँ से राज्य करते हुए वह अजेय और पराक्रमी राजा बना रहेगा।" शुक्र ने ऐसी बातें कही...... समुद्र उसी समय शीघ्रता से पीछे हट गया और ३०० योजन की लम्बाई में एक सुन्दर भूमि रिक्त हो गई। यही भूमि अब पवित्र जालन्धर के नाम से प्रसिद्ध है।"

सर अलेक्जेण्डर कनिंघम के कथन में सत्य का आभास अवश्य मिलता है। निःसन्देह पहले जहाँ जालन्धर बसा हुआ है समुद्र जालन्धर द्वाब में होशियारपुर के शिवालिक पर्वत मालाओं तक फैला हुआ था।

जालन्धर के विषय में कही हुई कहानी वास्तव में जालन्धर जिले से कोई सम्बन्ध नहीं रखती। स्थानीय पुराण के अनुसार जालन्धर अपनी स्त्री वृन्द की पवित्रता से अजेय हुआ। यह जालन्धर की अजेयता विष्णु भगवान के धोके से जीती गई। इसके जीतने के लिये विष्णु ने वृन्द के पति का वेष धारण करके वृन्द धोका दिया था। उसी समय शिवजी ने 'तितान' को पराजित किया और उसके शिर को काट डाला। परन्तु इतने पर भी उसका शिर बार बार उसके शरीर से जुड़ जाता था। इसी प्रकार शिवजी जितने बार उसके शिर को काटते थे उतने ही बार वह कटा हुआ सिर उसके धड़ से जुड़ जाता था। अन्त में शिवजी उस राक्षस को भूमि के अन्दर गाड़ने के लिए कटिबद्ध हुए। जिस स्थान पर उन्होंने उसको गाड़ा उसकी लम्बाई ४८ मील थी। आजकल यह स्थान अपनी प्रसिद्धता के लिए प्रसिद्ध है। इसको लोग जालन्धर तीर्थ के नाम से पुकारते हैं और यात्री इस स्थान का दर्शन करने आते हैं। परन्तु आजकल के पंडितों के कथनानुसार कोई मार्ग केवल काले सर को छोड़ कर व्यास के दक्षिण में नहीं जाता। कनिंघम सन् १८४६ के लौकिक वार्ता के अनुसार वर्णन करता है कि उस स्थान के मुख से आज भी आग निकलती है। इससे यह प्रत्यक्ष है कि वह स्थान ज्वालामुखी के तट पर स्थित है। इस स्थान का पिछला भाग जालन्धर के नीचे स्थित है और उसके अन्तिम भाग पर मुलतान है जहां पर प्राचीन काल में सतलज और व्यास नदियां मिलती थीं। इसके अतिरिक्त दूसरी कथा भी जालन्धर के प्रादिर्भाव के विषय में प्रचलित है। इस कथा को जनरल सौन्डर्स अबाट ने जो कांगरा के डिप्टी कमिश्नर के कनिंघम से बतया था। इस कथा का अभिप्राय यह है कि जालन्धर एक राक्षस था। वह यह उचित नहीं समझता था कि उसका द्वाब छिन्न भिन्न कर दिया जाय। ऐसी दशा में विष्णु उसके ऊपर अप्रसन्न हो गए और उसे मरवा डाला। उसी के नाम पर इस रियासत का नाम जालन्धर पड़ गया। आधुनिक पंडितों के कथनानुसार टिटन राक्षस का सिर नन्दकेश्वर महादेव के मन्दिर के अन्दर गड़ा हुआ है। यह मन्दिर जिन्द्रगाल स्थान पर बना हुआ है जो निरवाल नदी के तट पर स्थित है। इस स्थान और पालमपुर के बीच एक बड़ा रमणिक जंगल है जिसको वृन्दवान या 'वृन्दा का बन' कहा जाता है। इस वन का नाम करण जालन्धर के नाम

से हुआ है। राक्षस के सिर के लिए भी यह कहा जाता कि मुक्तकेश्वर मन्दिर के अन्दर गड़ा हुआ है। यह मुक्तकेश्वर मन्दिर सुनसोलग्राम में स्थित है। यह स्थान वैजनाथ से पाँच मील दूर उत्तर पूर्व में बसा हुआ है। नन्दकेश्वर में उसका एक हाथ रक्खा हुआ है। उसका दूसरा हाथ वैजनाथ में पाया जाता है। उसका पैर काले सर में पाया जाता है जो व्यास नदी के बाएँ तट पर स्थित है। जालन्धर के विषय में अधिक वर्णन "हिन्दू माइ थालोजी वैदिक और पौराणिक" में ३७८ पेज में पाया जा सकता है। इसके रचयता डब्लयू-जे, विलिकन्स हैं। मिस्टर परसर का कथन है कि जालन्धर की स्त्री के नाम पर खुदा हुआ सगरा भी इस बात का प्रमाण है कि जालन्धर ने जालन्धर नगर को बसाया था। उस सगरे का नाम पहले 'बरिन्दापार' था, परन्तु बाद में उसका नाम गुफर हो गया है। दूसरा कथानक रामचन्द्र के पुत्र लव के विषय में मिलता है। कहा जाता है लव ने जालन्धर को अपनी राजधानी बनाई थी। यह घटना उस समय की थी जब कि लाहौर नगर का निर्माण नहीं हुआ था।

जालन्धर के भागों के विषय में जो प्रचीन कथाएँ प्राप्त हैं वे अधूरी और असन्तोष जनक है। मुसलमानों के आक्रमण के पहले जो भी घटनाएँ हमें प्राप्त होती हैं वे प्रायः जालन्धर नगर के विषय में हैं। उस कथानक से जालन्धर प्रदेश से कोई प्रयोजन नहीं। कनिष्क और कुशान वंश के राजाओं के समय जालन्धर प्रदेश प्रसिद्ध था और वे राजा इस पर राज्य करते थे। कनिष्क का राज्य सम्पूर्ण उत्तरी भारत में काबुल से लेकर संयुक्त प्रान्त तक फैला हुआ था। उसने जालन्धर में बौद्धों की एक सभा भी की थी। यह घटना लगभग सन् १०० इस्वी में घटित हुई। इस सभा में यह निश्चय किया गया कि बुद्ध धर्म के सम्पूर्ण पवित्र लेखों और पुस्तकों का संकलन किया जाय और दूसरे धर्मानुयाइयों से समझौता किया जाय। इस समय बुद्ध धर्म की पवित्र पुस्तकें पाली और मगध भाषा में नहीं लिखी गई। अब वे संस्कृत भाषा में लिखी जाने लगी। परन्तु दक्षिणी भारत के लोगों ने इस सभा के सिद्धान्तों को स्वीकृत करने से इनकार कर दिया अस्तु जालन्धर की सभा के ही बुद्ध धर्म के अनुयायी दो भागों में विभाजित हो गए। एक उत्तरी भारत के बौद्ध और दूसरे दक्षिणी भारत के बौद्ध। इन भिन्न भिन्न समुदायों के भिन्न भिन्न मत भी हो गए।

जालन्धर का राज्य

इस घटना के अतिरिक्त जालन्धर का मुख्य इतिहास राजपूत राज्य की स्थापना से आरम्भ होता है। राजपूत राज्य की स्थापना की जो तिथि बताई जाती है वह पूर्ण रूप से काल्पनिक है। कहा जाता है कि महाभारत के समय में ससाराम एक राज्य था। वह सोम वंशी राज्य था और महाभारत में उसने दुर्योधन की ओर से पांडवों के विरुद्ध युद्ध किया था। अन्त में जब वह उस युद्ध से निवृत हुआ तब उसने जालन्धर द्वाब में एक महान् साम्राज्य स्थापित किया इस साम्राज्य की सीमा व्यास और सतलज नदी के अन्दर तक फैली हुई थी। इसके अतिरिक्त सभी पर्वतीय प्रदेश रावी से लेकर मन्डी और सुकत तक इस राज्य के अन्दर स्थित थे। इस सीमा के दक्षिण में धलोधर पर्वत था। इस राज्य का नाम जालन्धर या त्रिगारत्ता था। इस राज्य का नाम त्रिगत्ता इस लिए पड़ा क्योंकि यह स्थान तीन नदियाँ सतलज व्यास और रावी द्वाब में स्थित था। त्रिगत्ता का नाम महाभारत पुराण और राज तारागिणी था जो काश्मीर के इतिहास में पाया जाता है।

निःसन्देह जालन्धर राज्य की स्थापना बहुत पहले हुई है। जब चीनी यात्री ह्वानच्वाँग भारत में आया तब उसने जालन्धर राज्य का अवलोकन किया। उसका कहना है कि जालन्धर राज्य १६७ मील पूर्व से पश्चिम और १३३ मील उत्तर से दक्षिण की ओर फैला हुआ था। इस प्रकार जालन्धर राज्य में चम्बा, मन्डी, सुकत और सुताद्र (सरहिन्द) नामक पर्वतीय प्रदेश सम्मलित थे। उस समय जालन्धर राज्य का राजा उतीतो था। वह हर्ष वर्धन से, जो कन्नौज का राजा था, और

जिसका साम्राज्य समस्त उत्तरी भारत में फैला हुआ था, मित्रता का व्यवहार रखता था। वह हर्ष वर्धन को कुछ रुपए भी भेंट स्वरूप दिया करता था। जब चीनी यात्री आया था तब हर्ष ने उसे उतीत्तो के ही संरक्षता में रक्खा था। उसी ने उसे प्रयाग से पंजाब तक यात्रा कराई थी और मुख्य मुख्य स्थानों का निरीक्षण करवाया था। इस घटना के लगभग १७५ वर्ष पश्चात् सन् ८०४ ईस्वी में जय चन्द्र का नाम वैजनाथ मन्दिर में खुदा हुआ मिलता है। इससे यह प्रतीत होता है कि इस समय जयचन्द्र ही जालन्धर का राजा था। नवीं शताब्दी के अन्त में एक लेख मिलता है। इस लेख का लेखक कल्हन पंडित हैं। इस लेख के अनुसार यह मालूम होता है कि जालन्धर के राजा पृथ्वी चन्द्र को काश्मीर के राजा शङ्कर वर्मा ने पराजित किया था। उसके पश्चात् इन्दु चन्द्र अनन्त का समकालीन राजा हुआ। जिसने काश्मीर में १०२८ ईस्वी से १०८१ ईस्वी तक राज्य किया। यह घटना हमें काश्मीर के इतिहास कारों से प्राप्त होती है।

जालन्धर राज्य की राजधानी जालन्धर नगर है। इसके अतिरिक्त कागरा भी प्रमुख नगरों में था। परन्तु रहिमान अलबरूनी के लेखों को उचित मानते हुए रशीनउद्दीन दहमाल को जालन्धर की राजधानी निर्धारित करते हैं। दहमाल को वर्तमान काल में नूरपुर नाम से पुकारा जाता है। कनिंघम के सर्वे रिपोर्ट में जालन्धर के सर्वस्व राजाओं की एक लिस्ट मिलती है। उसके अनुसार जालन्धर अपने कागरा नामक दृढ़ किले को मुसलमानों के हाथ हार गया। इस समय मुहम्मद तुगलक राज्य कर रहा था। परन्तु चालीस वर्ष पश्चात् तैमूर ने आक्रमण किया। इसी समय जालन्धर के सम्राट को अपने राज्य की दशा को सुधारने का अच्छा अवसर मिला। वह मुसलमानी आधीनता से अलग हो गया और स्वतन्त्र होकर शासन करने लगा। इन्होंने अकबर के सिंहासनारूढ़ होने के पहले तक स्वतन्त्रता को आस्वादन किया। और अन्त में अकबर ने इस राज्य को जीत लिया और अपने राज्य में मिला लिया। इसी समय से यह राज्य फिर दिल्ली राज्य के आधीन एक परतंत्र रियासत के समान हो गया है। अंग्रेजी शासनकाल में भी यह रियासत अंग्रेजों के पूर्ण रूपेण अधीनस्थ थी। भारतीय गवर्नमेन्ट ने आजकल इसकी एक यूनियन बनाई है। जिसके अन्तर्गत वहाँ की प्रमुख प्रमुख रियासतें आती हैं। इस यूनियन का मन्तव्य यह नहीं है कि भारतीय गवर्नमेंट इन्हें अपने अन्तर्गत करना चाहती है। इस यूनियन का निश्चय पूर्वक मत केवल यह है कि समस्त मानव जाति सुख, शान्ति, कल्याण का रसास्वादन करती हुई स्वतन्त्र और मानवीय जीवन व्यतीत करे। यह आदर्श निःसन्देह महात्मा गान्धी के मानवीय सेवाओं का प्रसाद है।

जालन्धर पहले मुसलमानों के आधीन था। इस राज्य का सबसे प्रथम मुसलमान शासक इब्राहीम शाह था। वह गजनवी वंश का था। इस राज्य के विजय करने के पश्चात् उसने 'धनगान' प्रदेश को विजित किया। यह प्रदेश जालन्धर नदी के पार पर्वतीय भागों में पाया जाता है। इसी स्थान से कहा जाता है कि शत्रु रावी की ओर खदेड़ दिये गये थे। यह इतिहास हमें दीवानी शलमान से प्राप्त होता है। इस घटना से हमें प्रतीत है कि 'धनगान' का विवरण धमेरी किले के लिये प्रयुक्त किया गया है। जिसका नाम आजकल नूरपुर हो गया है। यह नाम नूरजहां के पश्चात् रक्खा गया था। फरिश्ता के लेखों से पता चलता है कि यह घटना ४७२ हिज्री, अर्थात् ११७९ ईस्वी की है उसमें कोई सन्देह नहीं कि यह राज्य उस समय दिल्ली साम्राज्य के अन्तर्गत था। और उस समय मुईजुद्दीन बहराम शाह दिल्ली के राज सिंहासन पर राज्य कर रहा था। उसका राज्यकाल १२४० से १२५२ ईस्वी तक माना जाता है। इसी समय 'धनगान' में एक कोलेज की भी स्थापना की गई क्योंकि सन् १२४६ ईस्वी में सुलतान नासिरुद्दीन ने यहीं पर इतुलजुहर समाप्त किया था। इसी समय से पुराने जालन्धर के भाग मुसलमानों के राज्य के अन्तर्गत रहे और वे लगातार इस पर शासन करते

रहे। यद्यपि पहले के मुसलमान शासक केवल पर्वतीय प्रदेशों पर ही अधिक शक्तिशाली रहे। इसी समय मुगलों के आक्रमण बराबर भारतवर्ष में हुआ करते थे। इस आक्रमण से क्षुब्ध होकर अलाउद्दीन ने मुगलों को रोकने के लिए उलूक खाँ और ज़फर खाँ को भेजा। उन्होंने मुगलों के नेता को सन् १२९७ में जालन्धर के निकट बुरी तरह से पराजित किया। खिलजी वंश के पश्चात् तुगलक वंशीय शासन का श्री गणेश हुआ। परन्तु इस शासन के अन्तिम काल में राज्य का प्रबन्ध बिल्कुल ढीला था। तैमूर के सन् १३९८ के अमानुषिक आक्रमण ने देश की शासन प्रणाली को और भी छोटे छोटे भागों में विभाजित कर दिया था। उस समय का भारतीय नकशा लड़कों के भी छोटे छोटे नकशे में भी परिवर्तित हो गया था। ऐसी सोचनीय परिस्थिति में सैयद वंश के अमीरों ने दिल्ली के राजसिंहासन पर अपना अधिकार स्थापित किया इसी समय मलिक तुघन ने सन् १४१६ में सरहिन्द के गवर्नर का बध कर डाला परन्तु उसको मलिक दौद और जिराक खाँ ने पहाड़ियों की ओर खदेड़ दिया। सन् १४१७ में वह एक बड़ी सेना लेकर फिर आ पहुँचा और उसने सरहिन्द पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया। जिराक खाँ को खिज्र खाँ ने फिर सरहिन्द की रक्षा के लिये भेजा। इस बार वह पहाड़ियों की ओर बढ़ा परन्तु वह पैल के स्थान पर हरा दिया गया। अब तुघन का लड़का जालन्धर के राज्य का अधिकारी मान लिया गया। तारीखे मुबारक शाही के अनुसार सन् १४१९ में तुघन जालन्धर के तुर्क वंश का राज स्वीकृत कर लिया गया, उसने सरहिन्द के गवर्नर सुलतानशाह लोदी और बहलोल लोदी को एक ऐसे व्यक्ति के विरुद्ध सहायता दी थी जो अपने को सरंग खाँ के नाम से घोषित करता था। उसने होशियार पुर के निकट बजवारा पहाड़ में विद्रोह का झंडा उठाया था। उस समय यह बजवारा का पहाड़ी प्रदेश जालन्धर राज्य के अंतर्गत था सन् १४२० ईस्वी में तुघान ने फिर खिज्र खां के विरुद्ध विद्रोह किया। उसने वीरता और तेजी से सरहिंद पर अधिकार कर लिया और ननसूर पुर तथा पैल के स्थानों तक अपना तूफानी दौड़ा किया और उन्हें अपने आधीन कर लिया। इस विद्रोह की चुनौती दिल्ली का शासक कब सहन कर सकता था। उसने शीघ्र ही मलिक खैरुद्दीन को तुघन के विरुद्ध युद्ध करने के लिए भेजा। खैरुदीन सामने गया और जिराक खां की सेना से मिला। तुघन इतनी विशाल सेना का सामना करने में असमर्थ था, अतएव वह पराजित हो कर भागा और लुधियाना के समीप सतलज को पार किया। इस समय जालन्धर नदी अधिक बढ़ी न थी। शाही फौज ने उसका पीछा किया। वह जसरथ खोखर के भागों की ओर भाग गया। अतः उसका राज्य जिराक खां को समर्पित कर दिया गया। इसी समय जसरथ खोखर ने जालन्धर पर फिर आक्रमण किया। ऐसी परिस्थिति में जालन्धर का गवर्नर जिराक खां जालन्धर किले की ओर प्रस्थान करने के लिए विवश हुआ। जसरथ ने नदी को पार करके पूर्वी बीन में अपनी सेना को नियुक्त कर दिया था। वह एक निपुण व्यक्ति था। शत्रु को धोका देकर विजित करने को वह अनुचित न समझता था। जब वह जिराक खां से बातें कर रहा था उसने अवसर पाकर उसे अपना बन्दी बना लिया। इसके पश्चात् उसने सरहिंन्द में सुलतान शाह लोदी को पराजित किया परन्तु इसी समय नये सम्राट् मुबारकशाह के आगमन ने जिराक खाँ को जसरथ के बन्दी गृह से छुड़ा दिया। जसरथ ने इसी समय नदी को पार किया और समस्त नावों को रोक कर आवागमन बन्द कर दिया जिससे कोई फौज वहाँ न आ सके। मुबारक की सेना वर्षा ऋतु तक वहीं रुकी रही। जब वर्षा समाप्त हुई तब उसका सेना ने नदी को पार किया। जसरथ पहले जालन्धर की ओर भागा। इसमें पश्चात् उसने व्यास नदी को पार किया। उसके पश्चात् रावी और चेनाब नदियों को पार करता हुआ तेलहर पहाड़ियों की ओर भाग गया। यह स्थान उसका सबसे सुरक्षित स्थान है। जिसको कहा जाता है कि जाम राय भीम ने शाही सेना की सहायता से विध्वंस किया। जब दिल्ली का सम्राट् फिर लौट गया तब जसखां ने विद्रोह का झंडा फिर ऊँचा

किया। उसने लाहौर के गवर्नर रायभीम के विरुद्ध फिर युद्ध छेड़ दिया। उसने सन् १४२८ ईस्वी में गवर्नर मलिक सिकन्दर तोहफा को अपनी ओर मिला लिया और कलानोर को मुक्त करने के लिए लाहौर की ओर बढ़ा। उसने व्यास नदी को पार किया और जालन्धर पहुँचा। परंतु वह दुर्भाग्यवश जालन्धर जीतनेमें असमर्थ था। अंत में बहुत वीरता से लड़ने के पश्चात् वह पराजित हुआ और फिर कलानौर की ओर लौट गया। १४३१ और १४३२ में उसने सिकन्दर को जालन्धर के पास बीन पर पराजित किया। उसने उसको अपना कैदी बना लिया और अंत में लाहौर पर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया। इसी समय देहली से एक सेना भेजी गई। उसने उसे पराजित किया और नसरत खाँ लाहौर और जालन्धर का गवर्नर नियुक्त किया गया। सन् १४३२ ईस्वी में जसरत ने फिर उस पर आक्रमण किया परंतु असफल रहा। सन् १४४२ ईस्वी में मुहर्रम के समय मलिक अल्ला दाद लोदी नसरत खाँ को छुड़ाने के लिए भेजा गया परन्तु जसरत ने उसे जालन्धर के स्थान पर हरा दिया और उसे पहाड़ी की ओर भगा दिया।

अब लहौर का शासन प्रबन्ध काबुल के गवर्नर शेख अली के हाथ में आ गया। शेख अली तैमूर के पोते शहरउल्ला के आधीन लाहौर का शासक नियुक्त किया गया था। परन्तु थोड़े ही दिन पश्चात् शहरउल्ला के स्थान मुबारक शाहने शाव्वाल का शासन प्रबन्ध अपने हाथ में लिया। उसने शहरउल्ला के गवर्नर शेख अली को पदच्युत कर दिया और उसके स्थान पर इमादुल मुल्क को लाहौर जालन्धर तथा दीपाल पुर का अध्यक्ष नियुक्त किया।

सन् १४४१ ईस्वी में मुहम्मदशाह ने बहलोल लोदी को लाहौर और दीपाल का गवर्नर स्वीकृत किया और उसे जसरत के विरुद्ध युद्ध करने के लिए भेजा। परन्तु बहलोल लोदी अपने मालिक का विश्वासनीय अध्यक्ष न सिद्ध हुआ जब वह जसरत के विरुद्ध युद्ध करने जा रहा था, उसने खोखरों के प्राधान से गुप्त सन्धि करली और राजद्रोह का झंडा खड़ा कर दिया इस समय उसका कोई न तो सामना करने वला था और न कोई उसके विद्रोह का दमन करने वाला था। अतएव वह स्वतन्त्र होकर राज्य करने लगा और अन्त में सन् १५४० ईस्वी में देहली का सम्राट बन कर बैठा।

बाबर के भारत पर चौथे आक्रमण के समय बहलोल लोदी ने दौलत खाँ लोदी को जालन्धर और सीतापुर जागीर के रूप में समर्पित कर दी। सन् १५२५-२६ में जब बाबरने अपना अन्तिम आक्रमण किया तब वह जालन्धर जिले के अन्दर नहीं प्रविष्ट हुआ। उसने व्यास नदी को इस लिए पार किया क्योंकि वह दौलत खाँ को पकड़ना चाहता था। और उसको, विद्रोह के लिए दण्ड देना चाहता था। इसी समय दौलतखां का पुत्र दिलावर खां बाबर से मिल गया जो सुलतान पुर और कौची से आरहा था। इन स्थानों को आजकल सम्भवत: कौज कहते हैं जो जालन्धर में मुसलमानी जाट ग्राम होशियार पुर की सीमा पर स्थित है।

सन् १५४० ईस्वी में शेरशाहने हुमायूं को राज्य से निर्वासित कर दिया था। बेचारा हुमायूं दुःख का मारा जालन्धर पहुँचा। जालंधर में उसका भाई हिन्दाल राज्य कर रहा था। परन्तु वह भी उस निर्वासित और लुब्ध राजकुमार को अफगानों ने शान्ति से न रहने दिया। जब हुमायूँ ने सुना कि अफगान उसका पीछा करते हुए चले आरहे हैं। और उन्होंने व्यास नदी को पार कर लिया है तब वह उस स्थान को त्याग कर अपना शरण स्थाल राजपूताना के मरु स्थानी प्रदेशों में खोजने के लिए विवश हुआ। सन् १५५५ ईस्वी में फिर हुमायूँ का रूठा हुआ भाग लौटा और वह देहली राज्यसिंहासन का अधिकारी बना। उसी समय बैरम खां को होशियार पुर जिले में अफगानों के विरुद्ध युद्ध करने के लिए भेजा बैरम खाँ को अपने उद्देश्य की पूर्ति में सफलता हुई और उसने जालन्धर तथा उसके निकटवर्ती प्रदेशों पर आधिपत्य स्थापित कर लिया इस विजय के पश्चात् वह सरहिन्द की ओर बढ़ा और सिकन्दर को वहाँ पर बुरी तरह से परास्त किया।

पहाड़ियों की ओर भाग गया। बैरम खाँ दूरदर्शी व्यक्ति था। उसने शाअबू माली को जालन्धर में भेजा, जिससे सिकन्दर सूर को फिर तैय्यारी करने और विद्रोह करने का अवसर न मिले। परन्तु वह वहाँ स्थायी रूप से रहने के अतिरिक्त लाहौर की ओर चला गया। इस प्रकार सिकन्दर सूर को अपनी सेना का फिर से पुनरुद्धार करने और अपनी शक्ति को संगठित करने का स्वर्ण अवसर प्राप्त हुआ। अब अकबर को बैरम खाँ के नेतृत्व में पंजाब भेजा गया। उसने सरहिन्द जाने के मार्ग में सुल्तानपुर, हरियाना और कलानौर स्थानों का निरीक्षण किया और उन पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया। अब सिकन्दर सूर को भाग कर कहीं दूसरे स्थान में शरण ढूढ़ने के अतिरिक्त दूसरा चारा न था। विवश होकर वह मानकोट की ओर भग गया। अब काँगड़ा के राजा पर भी अकबर का अधिकार निश्चय हो गया। इसके पश्चात् दिल्ली सम्राट ने अपना निवास स्थान कुछ दिनों के लिए जालन्धर को बनाया। यहीं पर जसरत खोखर का पोता कमाल खां उसके स्वागत करने के लिए प्रस्तुत था। अकबर ने भी उसके स्वागत को प्रसन्नता से स्वीकार किया। परन्तु पूर्व की बढ़ती हुई गम्भीर परिस्थिति ने अकबर को जालन्धर में अधिक दिनों तक न रहने दिया। उधर हेमू अपनी शक्ति शीघ्रता से बढ़ा रहा था और वह आसानी से अकबर को दिल्ली का सम्राट स्वीकार करने वाला न था। अकबर पूर्वी भारत की ओर गया। इसी बीच में सिकन्दर-सूर ने लाहौर के गवर्नर खिज्र खाँ को पराजित किया खिज्र खाँ की यह हार चमियारी स्थान पर हुई जो जालन्धर की सीमा के धुर उत्तर में है। इस परिस्थिति ने अकबर का ध्यान फिर उत्तर-पश्चिम की सीमा की रक्षा के लिए आकर्षित किया इस समय अकबर हेमू को पानीपत की द्वितीय लड़ाई में पूर्ण रूप से पराजित कर चुका था और उसने राज्य की पूर्वी सीमा को लगभग दृढ़ कर लिया था। अतः अकबर फिर उत्तर-पश्चिम की ओर बढ़ा। सिकन्दर सूर ने राजकीय फौजों का सामना किया। अन्त में हार मानकर वह मानकोट की ओर लौटने के लिए विवश हुआ। छः मास के पश्चात् मानकोट भी साम्राज्य की सीमा के अन्तर्गत शामिल कर लिया गया। सन् १५६० ईस्वी में बैरम खाँ के पतन के दिन आगए। अभी तक बैरम खाँ अकबर का अभिभावक था। अकबर उसका बहुत आदर करता था। और खान-खाना की पदवी से उसे आभूषित भी किया था परन्तु जब अकबर पूर्ण रूप से सम्राट हो गया और राज्य की शक्ति पूर्ण रूप से उसके हाथ में आ गई। तब बैरम खाँ और उससे अनबन हो गई। अब बैरम खां बहुत क्षुब्ध हो चुका था। उसने मक्का जाने की तैयारी कर दी। परन्तु आगे जाने पर कुछ घटनाएँ ऐसी हुई जिसने उसके चित्त की धारा को बिलकुल बदल दिया। उसने एक सेना एकत्रित की और जालन्धर पर आक्रमण करने की तैयारी कर दी। वह तिहारा के मार्ग से होकर जालन्धर की ओर बढ़ा तिहारा में उसके कुछ मित्र जिन्होंने बाला बेग के नेतृत्व में मुगल सेना का सामना किया और अन्त में उनको अब्दुल्ला खाँ ने पराजित किया। इसके पश्चात् बैरम खाँ को भी हार स्वीकार करनी पड़ी उसको अतगा खाँ ने गुनाचौर के स्थान पर हराया। परन्तु बैरम शीघ्र ही निराश होने वाला व्यक्ति न था। उसने व्यास के तट पर तिलवारा के किले पर आक्रमण किया और अंत में अकबर ने उसे बुरी तरह से हराया। अकबर के राज्य काल में जालन्धर उन शहरों में से एक था जहाँ पर राज्य के सभी सिक्के बनाए जाते थे। परंतु यहाँ पर केवल ताँबे के ही सिक्के बनाये जाते थे।

अकबर के शासन के पश्चात् जहाँगीर मुगल साम्राज्य का अधिष्ठाता हुआ परंतु उसके सिंहासन पर बैठने के थोड़े ही दिन पश्चात् उसके लड़के खुसरों ने सम्राट के विरुद्ध विद्रोह आरम्भ कर दिया। खुसरों ने आगरा को छोड़ दिया और दिल्ली होता हुआ लाहौर पहुँचा। उसने वहाँ पहुँच कर लाहौर पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया। परंतु इसी समय उसने सुना कि सम्राट की सेना सुल्तानपुर आ गई। अतएव उसने शीघ्रता से व्यास की ओर प्रस्थान किया। जब वह नदी के किनारे भैरवाल

स्थान पर पहुँचा तब उसको दुर्भाग्यवश सम्राट की सेना मिल गई जो वहाँ पहले ही पहुँच गई थी। अब दोनों सेनाओं में मुठभेड़ होना आवश्यक हो गया। अंत में खुसरों को बुरी तरह से हार स्वीकृत करनी पड़ी। जहाँगीर के समय में 'नूर महल' का फिर से निर्माण किया गया। कहा जाता है कि इसी महल में नूरजहाँ का बचपन व्यतीत हुआ था। और उसका पालन पोषण इसी महल में हुआ। यहीं पर नूरजहाँ ने एक धर्मशाला भी बनवाई। सन् १५८८ ईस्वी में गुरु अर्जुन ने कर्तारपुर नगर की स्थापना की। यह स्थान सिक्खों के गुरु का निवासस्थान था।

जब जहाँगीर का लड़का शाहजहाँ गद्दी पर बैठा तब उसने 'यवानी' में एक धर्मशाले की स्थापना की। इसके अतिरिक्त उसने दिल्ली से लाहौर तक एक पक्की सड़क भी बनवाई। यात्रियों की सुविधा के लिए उसने कुएँ भी बनवाये और सड़क के किनारे किनारे हरे भरे वृक्ष लगवाये। उसने एक एक मील पर पत्थर भी लगवाये जिससे यात्रियों को यात्रा करने में किसी प्रकार की असुविधा का सामना न करना पड़े। जहाँगीर ने अपने राज्य के प्रथम काल में जालन्धर को बसाने और उन्नतिशील बनाने के लिए बहुत काम किया। इसी समय अनेक ग्रामों का प्रादुर्भाव हुआ। जालन्धर और फागवारा नगर के पास बहुत सी बस्तियों का निर्माण किया गया। इसी समय उसने एक ग्राम और बसाया जो साहपुर के नाम से प्रसिद्ध है। आधुनिक फिल्लौर शहर की स्थापना शाहजहाँ के ही शासन काल में हुई। सबसे पहले जब शाहजहाँ ने फिल्लौर को देखा तब यह एक खंडहर मात्र था। उसी समय उसने दिल्ली से लाहौर जाने वाली सड़क पर एक सराय की नीव डाली। उसी समय से इस नगर की वृद्धि आरम्भ हो गई।

सत्रहवीं शताब्दी के अंत तक जालन्धर का प्रबन्ध पूर्ण रूप से देहली साम्राज्य से बना रहा। इस में सन्देह नहीं कि यह स्थान राज्य के विद्रोहियों का सबसे सुरक्षित स्थान था और अवसर पाकर राज्य के अभिलाषी व्यक्ति समय समय पर साम्राज्य के विरुद्ध विद्रोह कर बैठते थे। परन्तु यह इतिहास का विषय है। अतएव हम प्रत्येक विद्रोह के सूक्ष्म संकेत पर ध्यान नहीं दे सकते। सतलज के दक्षिण में सिक्खों का निवासस्थान है। वे भी साम्राज्य के विरुद्ध मौका पाकर विद्रोह कर बैठते थे। परन्तु द्वाब का निचला भाग प्रायः मुसलमानों से बसा हुआ है। अतः वे दूसरे सिक्खों तथा हिन्दू विद्रोहियों को बहुत कम ऐसा अवसर आने देते थे जब कि वे विद्रोह कर सकें। अतः इस द्वाब में विद्रोह बहुत कम हुआ करते थे। सन् १७०७ ईस्वी में मुगल साम्राज्य अन्तिम सम्राट औरंगजेब मर गया। इसके पश्चात् मुगल साम्राज्य का पतन आरम्भ हो गया। इसमें कोई सन्देह नहीं कि नादिरशाह के आक्रमण तक कोई भी ऐसा मुगल सम्राट न हुआ जो राज्य को दृढ़ता से केन्द्री भूत करता। मुहम्मद शाह के समय तक मुगल साम्राज्य की नाव किसी तरह बहती चली जारही थी। मुगल साम्राज्य के पतन का सबसे महान कारण औरंगजेब के नपुंसक उत्तराधिकारियों के अतिरिक्त, नादिर शाह का विध्वन्सकारी आक्रमण था। नादिरशाह के आक्रमण ने दिल्ली की सारी मर्यादा को नष्ट कर दिया और उसने मुगल बादशाह की एक प्रकार से रीढ़ तोड़ दी। इस समय साम्राज्य किसी तरह से चला जा रहा था और इसमें कोई सन्देह नहीं कि नादिर शाह के आक्रमण के पश्चात् यह बीस वर्ष तक और चला परन्तु यह अन्दर ही अन्दर खोखला और शक्ति हीन हो गया। राज्य के चारों ओर शत्रु अपनी धाक जमाए बैठे थे। इन शत्रुओं में एक सिक्खों की भी सेना थी जो दिल्ली के साम्राज्य की महात्वाकांक्षा में अपनी समस्त शक्ति केन्द्री भूत कर रही थी। सन् १७१६ ईस्वी में सिक्खों का नेता बन्दा था जिसको पंजाब के गवर्नर अब्दुल समद खाँ ने हराया था। इस समय उसकी सेना कुछ शक्ति हीन अवश्य होगई थी परन्तु फिर भी वह निराश होने वाला व्यक्ति न था। यह सिक्ख कौन थे और इनका प्रादुर्भाव कब हुआ? अब हम इस प्रश्न के ऊपर विचार

करेंगे।

सिक्खँ धर्म के प्रवर्तक गुरु नानक थे। यह वेदी खत्री थे। इनका जन्म १४६९ ईस्वी में हुआ था और ७० वर्ष की आयु में सन् १५३९ ईस्वी में इनकीमत्यु हो गई। इनका स्थान सिक्खों के दस गुरुओं में सब से पहला माना जाता है। गुरु नानक का कहना था कि उनके अनुयाइयों को राजनैतिक मामलों में बिल्कुल ही न पड़ना चाहिए परन्तु उनके तीन अनुयाई आनन्द. अमर दास, रामदास ने राजनैतिक मामलों में अत्याधिक भाग लिया। वे लोग आध्यात्मिक नेता था। उन्हें राजनैतिक मामलों में हस्तक्षेप करने की कोई आज्ञा न थी और न उन्हें ऐसा करना उचित ही था। परन्तु फिर भी सिक्खों के पांचवें गुरु अर्जुन ने अपनी एक दृढ़ टोली बनाई और उन्होंने १६०६ ईस्वी में राजद्रोही खुसरो को जहांगीर के विरुद्ध सहायता दिया। अन्त में वह किसी प्रकार कैद कर लिया गया और उसी वर्ष उसका अन्तकाल भी हो गया। अब अर्जुन के पश्चात् गुरु गोविन्द सिक्खों के नेता स्वीकृत किये गये। इस समय सिक्खों की दशा में काफी परिवर्तन होना आरम्भ हो गया था। उन्होंने एक दृढ़ सेना बनाया और वे उसके नेता हो गये। उसने नेतृत्व का पद जहांगीर के अन्दर स्वीकार किया था। जिसने उन्हें बन्दी भी बनाया था। बन्दी गृह में वह काफी दिनों तक पड़े रहे और इसी समय उसकी पंजाब के अफसरों से कुछ अनबन हो गई। अतएव जेल के पश्चात् उनका समस्त जीवन वहां के पदाधिकारियों से युद्ध करने में व्यतीत हुआ। सिक्खों ने उनके साथ पूरी स्वामीभक्ति का परिचय दिया और उनका युद्ध में मदद करते रहे। इस समय उनकी धार्मिक नेता होने में काफी प्रतिष्ठा भी बढ़ गई थी। इस प्रकार अर्जुन ने सिक्खों की एक धार्मिक संस्था की स्थापना की थी और हरगोविन्द ने उसे पूर्णरूप से दृढ़ और मजबूत बनाने का श्रेय प्राप्त किया। हर गोविन्द के अन्दर सिक्खों की जड़ मजबूत हो गई। वे अधिक आज्ञाकारी और दृढ़ प्रतिज्ञ व्यक्ति बन गये। अतएव भविष्य की राजनीति उन्होंने एक बड़ा भाग लिया और देश की आर्थिक तथा राजनैतिक परिस्थित पर अपना अस्तित्व स्थापित किया। हरगोविन्द ने सन् १६४५ ईस्वी में शान्ति के साथ स्वर्ग लोक को सिधारा। उसके पश्चात् उसका स्थान हरराय ने किया। उसने दारा शिकोह की ओर से मुगल साम्राज्य के उत्तराधिकार के निर्णय में भाग लिय। युद्ध के अन्त में शाहजहां राज्य च्युत किया गया और औरंगजेब राज सिंहासन का अधिकारी हुआ। उसके पश्चात् हरकिशन ने रहस्य का स्थान लिया। परन्तु थोड़े ही दिन पश्चात् उसकी मृत्यु होगई। अब गुरु तेग बहादुर सिक्खों का गुरु हुआ और उसने एक बेचैनी का जीवन भारतीय राजनीति में व्यतीत किया अन्त में वह सिक्खों का प्रसिद्ध गुरु स्वीकृत किया जाने लगा। मुगल साम्राज्य ने उसे अन्त में डाकुओं का सरदार घोषित कर दिया और सन् १६७५ ईस्वी में वह देहली में कत्ल किया गया। उसका उत्तराधिकारी गोविन्द सिंह था उसने नानक के सिद्धान्तों में परिवर्तन किया। उसने "पहल" का उत्साह मनाया और अन्त में सिक्खों की फौज को खालसा फौज में परिवर्तित किया। इसका तात्पर्य यह था ऐसे चुने हुये लोगों की संस्था हो जो अच्छी तरह से सिक्ख धर्म की रक्षा के लिए तन मन धन से तैयार रहे और उसके लिए कोई भी त्याग कर सके उन्हों ने जाति पाँति का भेद भाव बिल्कुल हटा दिया। युद्ध करना ही उनका सब से मुख्य ध्येय बतलाया गया। इस प्रकार उसने सिक्खों की एक दृढ़ सेना तैयार कर ली और मुगल साम्राज्य के विरुद्ध सन् १६९२में विद्रोह का झंडा ऊँचा किया। इस प्रकार वह दस वर्ष तक पूर्ण रूप से मुगलों के विरुद्ध युद्ध करने में लगा रहा उसने युद्ध में अत्याधिक सफलता भी प्राप्त की और लाहौर के गवर्नर तथा सरहिंद के गवर्नर से खुल्लमखुल्ला युद्ध किया। सतलज के दक्षिण में भी उसने युद्ध किया और मुगलों की सेना के छक्के छुड़ा दिये। परंतु सन् १७०५ और १७०६ ईस्वी में वह पूर्ण रूप से पराजित हुआ उसके दो लड़कों का मुगल बादशाह औरङ्गजेब ने मरवा डाला। गुरु गोविन्द सिंह दक्षिण की ओर भागा परंतु अंत में औरङ्गजेब के उत्तराधिकारी

बहादुर ने उसे पकड़ लिया और अपनी सेवा में रक्खा। दूसरे ही वर्ष उसको एक अफगान सरदार ने गोदावरी के तट पर मार डाला। वह गुरुओं में सबसे अंतिम गुरु माना जाता है परंतु उसके पश्चात् सिक्खों का राजनैतिक गुरु बंदा स्वीकृत किया गया। वह एक वैरागी था। जब वह सिक्खों का नेता बनाया गया तब सेना लेकर पंजाब की ओर बढ़ा। और सरहिंद के गवर्नर वजीर खां को पराजित किया अब सरहिंद उसके अधिकार में पूर्ण रूप से आ गया। उसको गोविंद सिंह के मारने वाले से बदला लेने का अवसर मिला उसने समस्त यमुना के पर्वतीय देश को रौंद डाला और जो भी अभागे उसके सामने आया उनको बुरी तरह से परेशान किया। इसके पश्चात् उसने जालन्धर द्वाब से होकर व्यास नदी को पार किया और सड़क पर जितने भी ग्राम मिले सब को बर्बाद कर दिया। इसके पश्चात् वह सतलज के दक्षिण की ओर लौटा। अन्त में सरहिंद के गवर्नर वजीर खाँ ने उसे पूर्वी पञ्जाब से वापस खदेड़ दिया। अब निराश होकर उसे रावी के तट पर शरण लेने के लिए विवश होना पड़ा। उसके स्थान पर इशा खां जालन्धर में नियुक्त किया गया। सिक्ख लोग सन् १७१२ ईस्वी तक शान्त रहे। इसी समय जब बहादुर शाह की मृत्यु हुई तब सिक्खों को अपनी शक्ति बढ़ाने का पूरा अवसर प्राप्त हुआ। वे अपनी महत्वाकांक्षाओं की तृष्णा को एक बार फिर शान्त करने का उपाय खोजने लगे। गुरुदास के निकट उन्होंने अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया और उसी स्थान पर अपनी सैनिक शक्ति का संगठन करना आरम्भ कर दिया। उन्हों ने लाहौर और सरहिन्द के गवर्नर के ऊपर आक्रमण किया और उन्हें पराजित किया परन्तु अन्त में जैसा कि पहले वर्णन किया जा चुका है अब्दुलसमद खां ने सिक्खों को पराजित किया। उसने सिक्खों के गुरू बन्दा को बन्दी बनाया जिसको अन्त में राजद्रोह का जुर्म लगा कर दिल्ली में मरवा दिया गया। इस प्रकार सिक्खों की शक्ति का पूर्ण रूपेण ह्रास हो गया।

परन्तु उनकी शक्ति का इस प्रकार जो ह्रास हुआ वह थोड़े ही समय के लिए था। मुगलों ने सोचा था कि अब सिक्ख भविष्य के इतिहास में कभी पैर न उठायेंगे। परन्तु उनकी यह धारणा असंगत थी। खालसा फौज अभी पूर्ण रूप से नपुंसक और मृतक नहीं हो गई थी। यह अभी तक अपने प्राचीन गौरव को विस्मृत नहीं कर चुकी थी। इसके रग रग में अपने दुःखों और यातनाओं के प्रतिशोध की ज्वाला अब भी जल रही थी। केवल वह किसी स्वर्ण अवसर की प्रतीक्षा में थी जब कि उसका वह स्वप्न पूरा हो और वह मुगल साम्राज्य का ध्वन्स करके अपना स्वतन्त्र राज्य स्थापित कर सके।

यह समय बहुत दूर न था। मुगल साम्राज्य अपने आन्तरिक विद्रोहों के कारण पूर्ण रूप से जर्जरित हो चुका था। मुगल साम्राज्य का वह वृक्ष जो वाह्य दृष्य से काफी बड़ा और सम्पन्न दिखता था उसके अन्दर ही अन्दर वैमनस्य और ईर्षा के कीटाणु लग गए थे जो उसे पूर्ण रूप से खोखला कर चुके थे। ऐसी दशा में मराठों के आक्रमण ने इसकी शक्ति को और भी क्षीण बना दिया। निसन्देह अब्दु समद खां और उसके पुत्र जकरिया खां जो खां बहादुर" के नाम से प्रसिद्ध था, दबे रहे उन्हों ने उसके समय में लूट पाट करने को भी अधिक साहस नहीं किया। परन्तु जब नादिरशाह के सन् १७३८—३९के आक्रमण ने देश में अराजकता स्थापित कर दी तब सिक्ख एक बार फिर हथियार लेकर जीवन—युद्ध में कूद पड़े। उन्हे पहले कुछ सफलता अवश्य मिली परंतु उन्हें अदीनावेग ने फिर पराजित किया। अदीनावेग उस समय जालन्धर द्वाब का गवर्नर और लाहौर तथा अमृतसर का नाजिम था। सिक्खों की यह पराजय एमीनावाद में जलियान वाला के पास सन् १७४३ ईस्वी में हुई। सिक्खों के मुख्य मुख्य नेता जैसे जस सिंह अहलुवालिया भी इस युद्ध में शामिल थे। दो वर्ष पश्चात् सिक्ख लोग फिर सतलज के दक्षिण में मुक्तसर स्थान के पास हराए गए। अतएव विवश होकर वे लोग पहाड़ियों की ओर भाग गए। परन्तु इस पराजय और परेशानी के अतिरिक्त अब

सिक्खों के भाग्य की धारा पलट चुकी थी। सन् १७४७ ईस्वी में सिक्खों ने अफगान आक्रमण कारी अहमद शाह के विरुद्ध मुगलों की सहायता की। अहमद शाह एक भयानक अफगान था। वह महत्वाकांक्षी था और भारतवर्ष पर वह लाहौर के गवर्नर शाह नवाज खां की सहायता से आक्रमण करना चहता था और भारत पर अपना आधिपत्य स्थापित करना चाहता था। परन्तु जब अहमद शाह ने आक्रमण किया तब शाह नवाज खां ने उसे मदद देने से इनकार की क्योंकि वह अपने भाई याहया खाँ (जो उस समय दिल्ली का विश्वासनीयः अफसर था) की मदद से विश्वास घात कर के राज्य लेना चाहता था। ऐसी दशा में अहमद शाह का शाह नवाज से युद्ध होना अनिवार्य हो गया। अन्त में शाह निवाज पराजित हुआ। अब अहमदशाह आगे बढ़ा उसके प्रतिपक्षी अदीना बेग और सिंह सरदार थे। अदीनाबेग और सिक्खों का अब मेल हो चुका था। अहमद शाह इन दोनों की फौज के विरुद्ध लड़ा परन्तु अन्त में पराजित हुआ। यह पराजय सन् १७४८ ईस्वी में हुई। वह फिर वापस लौटने के लिये विवश हुआ अब मीर मनू पंजाब का गवर्नर नियुक्त किया। गया। इसने सन् १७४८ से १७५२ ईस्वी तक राज्य किया। यह गवर्नर अपनी योग्यता के लिए प्रसिद्ध था। परन्तु वह वास्तव में अपनी व्यक्तिगत भलाई का आकांक्षी था, समस्त राज्य की भलाई का नकशा उसके सम्मुख न था। अतएव वह इसी व्यक्तिगत स्वार्थ की भावना से प्रेरित होकर किसी से भी मित्रता कर सकता था। निःसन्देह चाहे वह मित्र, देश का सबसे महान शत्रु ही क्यों न हो। इसी मन्तव्य को लेकर वह कभी भी सिक्खों का विरोध नहीं करता था और न उन्हें यही समझा सकता था कि साम्राज्य की स्वामिभक्ति में उनका भी कल्याण है।

हम पहले वर्णन कर चुके हैं कि सिक्खों ने अहमदशाह के विरुद्ध युद्ध किया। उन्होंने अहमद शाह को भारत में आगे बढ़ने से रोका और ऐसे अवसर पर उन्होंने मुगल गवर्नरों से मित्रता भी की परंतु इसका यह तात्पर्य नहीं कि सिक्खों ने मुगलों की ओर से विरोध और प्रतिशोध की भावना का एकदम परित्याग कर दिया। अतः मीर मन्नू जो उस समय पंजाब का गवर्नर था, सिक्खों से युद्ध करने के लिए विवश हुआ। इसी समय अहलूवालिया वंश की सेना ने अदीनाबेग के ऊपर होशियार पुर के निकट आक्रमण किया। सन् १७४८ ईस्वी में अहमद शाह ने फिर पञ्जाब पर आक्रमण किया। परन्तु इस बार भी उसे सफलता न मिली। तीसरी बार दुर्रानी राजा ने पञ्जाब के ऊपर आक्रमण किया। इसी समय मीरमन्नू पूर्ण रूप से दिल्ली साम्राज्य से अलग हो गया था और वह अपना स्वतंत्र राज्य स्थापित कर चुका था। अतएव वह दुर्रानी की फौज का सामना करने में असमर्थ था। उसने दुर्रानी की अधीनता सन् १७५२ में स्वीकार कर ली और अहमद शाह ने उसे पञ्जाब का अपना गवरनर नियुक्त किया। अदीना बेग ने देखा कि राजनैतिक दशा दिन प्रति दिन अवनतिशील होती जा रही है। अतः उसने अत्यन्त ईर्षालुनीति का अनुसरण करना आरम्भ किया। पञ्जाब में उसका सबसे मुख्य उद्देश्य सिक्खों को वश में रखना था। वह यह चाहता था कि राज्य की ऐसी नीति हो जिसके कारण सिक्खों की शक्ति कभी बढ़ने न पावे। उसने एकाएक सिक्खों के ऊपर आक्रमण किया और उन्हें मखोवाल नामक स्थान पर बुरी तरह से पराजित किया।

इस युद्ध में अदीनाबेग को रामगढ़ की सेना से काफी सहायता प्राप्त हुई थी। इस समय अदीनाबेग ने सिक्खों के साथ बड़ी उदारता भी दिखलाई और कितने ही सिक्खों को अपनी तरफ मिला लिया। मीर मन्नू सन् १७५२ में ही मर गया। अब उसकी स्त्री मुराद बेगम लाहौर की गवर्नर हुई। उसकी नियुक्ति अफगान बादशाह के द्वारा हुई थी। इस प्रकार अफगान बादशाह के अन्दर वह सन् १७५५ ईस्वी तक पंजाब का प्रबन्ध करती रही परंतु इसी समय उसके दामाद ने उसे धोखा देकर पकड़ लिया। उसका दामाद उस समय दिल्ली व वजीर था।

अफगानों के विरुद्ध दिल्ली के वजीर का साहस अहमदशाह न सहन कर सका। उसने भारत पर चौथी बार आक्रमण किया। इस आक्रमण के समय उसने नूरमहल को जीत लिया और यहाँ के सर्वत्र अबोध तथा निर्दोष व्यक्तियों को तलवार के घाट उतार दिया। अदीनावेग के ऊपर भी यह संदेह किया जा रहा था ,कि उसने दिल्ली के मन्त्री की सहायता की है। अतः भय से व्याकुल होकर अदीनावेग पहाड़ियों की ओर भाग गया वहां पर उसने सिक्खों को अफगानों के विरुद्ध लड़ने के लिये उत्साहित करना आरम्भ किया। इसी समय अहमद शाह ने अपना आक्रमण दिल्ली के ऊपर किया। उसने दिल्ली का विध्वंस कर दिया और उसे पूर्ण रूप से लूट लिया। लौटते समय उसने पंजाब को अपने आधीन किया और वहाँ पर अपने लड़के तैमूर को पञ्जाब का गवर्नर नियुक्त किया। इधर अदीनावेग सिक्खों से पूर्णतया सन्धि कर चुका था। उसने अहलुवालिया वंश के राजा जससिंह से मित्रता की बात की और उसी की सहायता से उसने सन् १७५६ इस्वी में जालन्धर पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया। अफगान सेनापति सरबुलन्द खाँ, जो पंजाब का अध्यक्ष नियुक्त किया गया था। बुरी तरह से पराजित हुआ। परंतु अभी अदीना की स्थिति पूर्ण रूप से सुरक्षित नहीं थी। जालन्धर पर अधिकार करने के पश्चात् तैमूर राजकुमार उसके रास्ते में एक विकट रोड़ा था। उसको हराना अदीना वेग के लिए कोई आसान बात न थी अतः जब उसने देखा कि ऐसे स्थान पर तलवार मनोवांछित उद्देश्य की पूर्ति में सफल नहीं हो सकती तब उसने कूटनीति का आश्रय लिया। उसने तैमूर राजकुमार को बहुत से रुपयों की भेंट की और उससे कहा कि मैं आपका अदना सेवक हूँ। राजकुमार तैमूर उसकी बात में आ गया। इधर मौका पाकर अदीनावेग ने उसकी सेना को बुरी तरह से पराजित किया। जब अदीनावेग काबुल लौट रहा था तब अहमदशाह ने कर्तारपुर पर धावा बोल दिया और उसे पूर्ण रूप से जला दिया। कर्तारपुर सिक्खों की एक पवित्र भूमि है जो जालन्धर से ९ मील उत्तर-पश्चिम की ओर स्थित है सिक्ख लोग अपनी पवित्र भूमि की इस प्रकार दुर्दशा कभी भी सहन न कर सकते थे। उन्होंने सन् १७५७ ईस्वी में बदवाघसिंह के नेतृत्व में प्रतिशोध की भावना से जालन्धर पर आक्रमण किया। इस युद्ध में अदीनावेग ने सिक्खों की सहायता की थी। इसमें संदेह नहीं कि इस आक्रमण से सिक्खों ने अहमद शाह से अपना बदला पूरा कर लिया परन्तु अदीनावेग सिक्खों की सहायता के अतिरिक्त भी अपनी स्थिति में कोई विशेष परिवर्तन नहीं अनुभव कर रहा था। अतएव उसने मराठों के नेता रघोबा से बात चीत की। मराठों की शक्ति उस समय सबसे बढ़ कर थी। उन्होंने शीघ्र ही अफगानों के छक्के छुड़ा दिये। अफगान लोग भाग गये और मराठों ने विजय की पताका समस्त पञ्जाब में फहरा दी। रघोबा ने अदीनावेग को सन् १७५८ ईस्वी में पञ्जाब का गवर्नर नियुक्त किया। परंतु सिक्ख कभी भी मराठों की आधीनता स्वीकार करने के लिए प्रस्तुत न थे। इसका सबसे बड़ा श्रेय अदीनावेग को था जो मराठों और सिक्खों के बीच मित्रता का बन्धन बांधे हुए था। सन् १७५८ ईस्वी में जब अदीना वेग की मृत्यु हो गई तब पञ्जाब के उत्तराधिकारी का प्रश्न उपस्थित हुआ। अदीना वेग ने दुर्भाग्यवश कोई भी पुत्र पञ्जाब के उत्तराधिकार के लिए न छोड़ा था।

दूसरे ही वर्ष अहमद शाह ने भारतवर्ष पर पांचवीं बार आक्रमण किया। उसने मराठों को पञ्जाब से भगा दिया और सन् १७६० ईस्वी में पानीपत के मैदान में उनको ऐसी बुरी तरह से पराजित किया कि उन्हें दूसरी बार पञ्जाब पर अधिकार करने की भावना को बिलकुल छोड़ देना पड़ा। इस विजय के पश्चात् उसने बुलन्द खां को लाहौर का गवर्नर बनाया और जैनखां को सरहिंद का गवर्नर नियुक्त किया। अन्त में वह फिर काबुल को लौट गया। इस समय सिक्खों की शक्ति फिर बढ़ने लगी। उन्होंने समस्त देश के ऊपर अपने किले बनाना आरम्भ कर दिये। जब उनकी शक्ति पूर्ण रूप से बढ़ गई तब उन्होंने पञ्जाब के सेनापति ख्वाजा उवेद को हरा दिया और उसे उसी शहर में

बन्द कर दिया। अहमद ने अबकी छठी बार सन् १७६२ ईस्वी में आक्रमण किया। उसने सिक्खों की फौज को सरहिंद के निकट बरनाल स्थान पर पूर्ण रूप से पराजित किया। ऐसी पराजय का अनुभव सिक्खों ने शायद ही कभी किया हो। इस युद्ध का नाम ही 'घालूधारा' पड़ गया। इस शब्द का सम्भवतः यह तात्पर्य है "जीवन की भयानक बर्बादी, कत्ले आम, और सत्यानाश।" 'घालू' का अर्थ 'घाल' है जो कि धारा से काटा जाता है और 'धारा' का तात्पर्य धारा से है, अर्थात् खून की धारा। परंतु जो कुछ भी हो, सिक्ख कभी भी अवसर पाकर चूकने वाले न थे। उनमें अदम्य उत्साह था। शौर्य्य था और वीरत्व सर्वदा उनकी नाड़ियों में प्रवाहित होता रहता था। अहमद शाह अपनी सन् १७६० की विजय के पश्चात् फिर काबुल लौट गया था इस समय उसने सादात खां को लाहौर का गवर्नर नियुक्त किया था।

सिक्ख अपनी सेना के साथ आगे बढ़े और दिसम्बर सन् १७६१ ईस्वी में उन्होंने जैन खां को सरहिंद के पास पराजित किया। इस विजय ने सिक्खों को पूर्ण रूप से स्वतंत्र बना दिया। यद्यपि सन् १७६४ ईस्वी में और दोबारा फिर सन् १७६७ ईस्वी में वह पंजाब में आया परंतु उसे किसी तरह की सफलता न प्राप्त हुई। वह अपनी शक्ति को लौटाने में भी पूर्ण रूप से असफल रहा। और जहां तक जालन्धर द्वाब का सम्बंध है यहां से अफगान राज्य का थोड़े दिनों पश्चात् नाम—निशान मिट गया। अब सिक्खों को अपनी शक्ति बढ़ाने का पूरा अवसर प्राप्त हो गया।

वास्तव में सिक्खों का सच्चा इतिहास सन् १७५९ ईस्वी से आरम्भ होता है जब अदीना बेग का स्वर्ग वास हो चुका था। जालन्धर राज्य के सरदारों का शासन सम्वत् १८१६ या सन् १७५९ ईस्वी से आरम्भ होता है। सिक्खों का संगठन पूर्ण रूप से भूमिपतियों के रूप में था। इस संगठित संस्था का सर्वेसर्वा वहाँ का सरदार होता था। उसके अधीन छोटे छोटे अमीर होते थे। यह अमीर राज्य के दूसरे अंगों का प्रबन्ध करते थे। साधारण सिपाहियों की भी देख रेख तथा उनकी नियुक्ति भी सरदार के हाथ में होती थी। अगर कोई देश जीत लिया जाता था तो उसको उसी अमीर के हाथ सौंप दिया जाता था, जो उस देश को जीतता था। यह प्रायः उस अमीर और उसकी सेवा के खर्च के लिए दिया जाता था। ऐसा प्रतीत होता है कि उस समय पैदल सेना की ओर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया जाता था। अधिकतर राज्य में हथियार वाले सैनिकों की ही प्रतिष्ठा की जाती थी। बड़े बड़े अमीर अपनी जागीर को कई भागों में विभाजित कर देते थे। इन बटे हुए भागों को अपने आधीन अमीर को दे देते थे। वे लोग भी उसे ग्रामों में बांट कर समस्त सैनिकों की जीविका के लिए उसे दे देते थे। इसी प्रकार के प्रबन्ध से अन्त में लोगों के 'पट्टीदारी, 'मिसिलदारी, 'ताबादारी, और 'जागीरदारी' नामक अधिकार हो गए। यह नहीं कहा जा सकता कि इस संस्था ने कब इस प्रथा की नींव डाली। सम्भवतः इसके कीटाणु पहले ही से देश में घुस गए थे। सबसे पहले जब संस्था के नेताओं ने विजय की और उन्होंने नए नए स्थानों को जीता तब उनके अन्दर उन पर आधिपत्य स्थापित करने की भावना हुई। आधिपत्य करने के पश्चात् संस्था के सब से बड़े नेता या सरदार ने खुश होकर उसे उनकी जीविका के लिए सदा के लिए दे दिया। सिक्खों में यह प्रथा जब वे पराधीन थे तब भी और जब वे स्वतन्त्र थे तब भी कायम थी। क्योंकि पहले सिक्खों की संस्था यातो सिपाहियों की थी या बदला लेने वालों की थी। अतएव लूटे हुए माल पर या जीते हुये देश पर उन सभी लोगों का समान अधिकार था। संस्था का सरदार भी उन्हें अधिक से अधिक सुविधा देने की कोशिश करता था जिससे संस्था की ओर उनकी सहानिभूति बनी रहे। धीरे धीरे यही जागीरें जो मुख्य मुख्य सरदारों को प्राप्त थीं एक सुसंगठित छोटे राज्य के रूप में परिवर्तित हो गईं और आपस के राज्यों में अब ईर्षा का भाव फैलने लगा। अब बड़े राज्य छोटे राज्य को हड़पने की आकांक्षा करने लगे।

अब जब सन् १७५६ ईस्वी में सिक्खोंको स्वतन्त्रता प्राप्त हुई तब उनको प्राजातन्त्रीय शासन बनाने और समस्त राज्यों को एक संस्था के अन्तर्गत लाने आदि समस्याओं का सामना करना पड़ा। उस समय साधारणतया कुल १२ मुख्य मुख्य संस्थाएँ यह थीं:--१ निकैसों की (२) निशानियों की (३) कन्हैयों की (४) सुकर चकियों की, (५) शहीदों (६) भगियों की, (७ फुलकियानों की, (८) अहलुवालियों की, (९) रामगढ़ियों की, (१०) फैजुल्ला पुरियों की, (११) करोरासिहयों की, (१२) दलवालों की। इन संस्थाओं की एक संयुक्त कमेटी बनाई गई थी। इस कमेटी के नियमानुसार कोई भी अपनी इच्छा से बाहर जा सकता था और स्वतन्त्रता से रह सकता था परन्तु जब तक वह संस्था में रहता था उसे संस्था के नियमों का पूरी तरह से पालन करना पड़ता था। उसे सरदार की आज्ञा को कभी उल्लंघन करने की आज्ञा न थी।

ऊपर लिखी हुई संस्थाओं में निकायस और निसानियां जालन्धर द्वाब से कोई सम्बन्ध नहीं रखती। कन्हैया संस्था का पहले ऊपरी द्वाब से सम्बन्ध था। उन्होंने उस समय रामगढ़ वालों को निकाल दिया। जिस समय इन दोनों का युद्ध चल रहा था तब सम्भवतः वे दोनों और शुक्रचारिया जालन्धर की ओर घुसे। अन्त में शुक्रचारियों का नेता रणजीत सिंह हुआ। वही सम्पूर्ण द्वाब का का नेता हुआ। परन्तु इस समय तक द्वाबे का इतिहास पूर्ण रूप से जालन्धर के इतिहास से बाहर रहा। शहीद संस्था का प्रादुर्भाव इस लिए हुआ क्योंकि उसका नेता मुसलमानों के युद्ध में मारा गया था। अतः युद्ध में शहीद होने के कारण उस संस्था का नाम ही शहीद पड़ गया। इन शहीदों में दीपसिंह का भी नाम प्रसिद्ध है। उसका सिर दिल्ली की सेना से लड़ते समय काट लिया गया था। परंतु कुछ लोगों का कथन है कि यह घटना सदा सिंह के साथ हुई थी। सदा सिंह सम्भवतः दीप सिंह का भतीजा लगता था। भंगी मिस्ल का जालन्धर से बहुत थोड़ा सम्बंध था। इसका नेता लेहना सिंह था। वह इसी जिले के एक ग्राम मुस्तापुर का रहने वाला था जो कर्तार पुर से चार मील उत्तर-पूर्व की ओर स्थित है। परन्तु वह केवल दस वर्ष की ही आयु में अपने घर से भाग निकला और अमृतसर जिले में पहुँचा। अतएव तभी से उसका सम्बन्ध जालन्धर जिले से छूट गया। 'फुलकियों का भी इस द्वाब से बहुत थोड़ा सम्बन्ध था। कहा जाता है कि फगवारा के चौधरियों को पटियाला का राजा बहुत मानता था और उनकी हर तरह से मदद करता था। और वास्तव में इन लोगों ने पटयाला राजा की वृद्धि के लिए बहुत से काम किए। झीन्द फुलकियान स्टेट को एक जागीर भी राज्य की ओर से मिली थी। इस जागीर को रणजीत सिंह ने सन् १८२६—१८२७ में दिया था। यह जागीर जालन्धर में थी और इसके देने का कारण फिल्लौर के सरदारों का राजा से वैवाहिक संबंध था। अलावल पुर का सरदार जालन्धर में अच्छी स्थिति में था और उसका सम्बन्ध नाभा से था। अन्यथा इस संस्था का कोई विशेष महत्व न था। शेष पांच मिस्लें इस द्वाब में काफी अधिकार रखती थी। इस द्वाब में बहुत सा भाग उनके अधिकार में था। अहलुवालिया वंश का राजा कपूर्थला का नायक था जिसका विस्तृत इतिहास 'पंजाब के राजाओं में दिया गया है। इनका राज्य प्रायः जालन्धर द्वाब के बाहर है अतः इसके इतिहास का अधिक वर्णन अपने विषय से बाहर की वस्तु होगी।

'राम गढ़िया का नेता साधारणतया जस सिंह माना जाता है। और इस में संदेह नहीं कि वह पहला नेता था जिसने इस संस्था को उन्नतिशील बनाया। वह जाति का बढ़ई था। परंतु सम्भवतः उसने बढ़ई का काम कभी नहीं किया। उसका कुटुम्ब लाहौर जिले का निवासी था। उसने पहले पहल अदीनाबेग के साथ सन् १७५२ ईस्वी में नौकरी करना आरम्भ किया। उसके साथ केवल तारासिंह को छोड़ कर संस्था के सभी नेता थे। वे सभी नेता उससे पूरी सहानुभूति और सद्भावना रखते थे। इन लोगों की संस्था ने उसी वर्ष अहलुवालियों, शुक्राचार्यों और कन्हैयों पर आक्रमण किया और

उन्हें मखोवल नामक स्थान पर पराजित किया। कहा जाता है कि अदीना वेग ने जससिंह को जालन्धर द्वाब का कुछ भाग दे दिया। उसी भाग का अंत में वह मालिक बन गया परन्तु चार वर्ष पश्चात् अदीनावेग को तैमूर राजकुमार ने जालन्धर के बाहर निकाल दिया। इस समय जस-सिंह ने अदीना वेग का साथ छोड़ दिया और उसने अमृतसर में एक किला बनवा लिया। उसने इस किले का नाम 'राम रौनी' रक्खा। परन्तु अदीनावेग जब फिर जालन्धर लौट कर आया तब उसने इस किले को ध्वंस कर दिया। थोड़े ही दिनों पश्चात् अदीना वेग की मृत्यु हो गई। अतः उसके मरने के पश्चात् जससिंह ने 'बारी द्वाब' में काफी भाग अपने अधि-कार में कर लिया। इसके पश्चात् उसने व्यास नदी को पार किया, और जालन्धर द्वाब के उत्तरी-पश्चिमी भाग का बहुत बड़ा भाग अपने राज्य में शामिल कर लिया। अब चौधरी और फगवारा संस्था के लोग जस सिंह का लोहा मानने लगे और उसे एक निश्चित कर भी देने लगे। इसी समय गढ़ दीवाल के सर-दार मसासिंह से उसकी मैत्री हो गई। मसासिंह दलावल संस्था का अनुयायी था। सन् १७७६ ईस्वी में अहलुवालियों, कन्हैयों और शुक्राचार्यों ने मिल-कर रमगढ़ियों के ऊपर आक्रमण किया उन्होंने इनको बुरी तरह से परास्त किया और जससिंह को सतलज के बाहर निकाल दिया। इस प्रकार उसने अपना सात वर्ष का जीवन बाहर व्यतीत किया। इस समय वह डाकूगिरी करके या किसी की नौकरी करके अपना काम चलाता था। सन् १७८३ ईस्वी में कन्हैयों की शक्ति इतनी बढ़ गई कि उनका शुक्राचार्यों से भिन्न भाव रखना असम्भव हो गया। अतएव शुक्राचार्यों ने काँगड़ा के राजा संसार चन्द से मित्रता कर ली और इन्होंने जससिंह को फिर वापस बुला किया। जस सिंह अपने राज्य के लिये लड़ा और अन्त में उसे अपने सम्पूर्ण राज्य पर अधिकार प्राप्त हो गया।

जससिंह सन् १८०३ ईस्वी में मर गया। उसके मरने के पश्चात् उसका लड़का जोधसिंह गद्दी पर बैठा। इसी समय लार्ड लेक होल्कर का पीछा करात हुआ द्वाबे में प्रविष्ट हुआ। जब वह द्वावे में प्रविष्ठ हुआ तब जोधसिंह ने उसकी पूरी सहायता दी। जोधसिंह की मृत्यु सन् १८१६ ईस्वी में हो गई उसके मरने के पश्चात् उसके सारे कुटुम्ब में कलह मच गई। ऐसी दशा में रणजीत सिंह को बुलाया गया। उसने आकर समस्त देश पर अपना आधि-पत्य स्थापित कर लिया। यह भाग प्रायः होशियारपुर जिले के दसूया तहसील में स्थित है। इसका कुछ भाग जालन्धर के ठीक उत्तर में भी पाया जाता है जिसका विस्तार में वर्णन आगे किया जायगा।

फैजुल्लापुरियों का निवास स्थान अमृतसर जिले में था। इन्हें सिंहपुरिया भी कहा जाता है। इस संस्था का प्रवर्तक कपूरसिंह था। उसका बसाया हुआ ग्राम फैजुल्लापुर था। इसी ग्राम के नाम से उस सारे वंश का नाम फैजुल्लापुर पड़ गया। इसी नाम को बदल कर उसने इसका नाम सिंहपुर रक्खा। कपूरसिंह पहले एक सरदार था। वह सन् १७३० ईस्वी में जालन्धर में निवास कर रहा था। इसी समय उसने अहलुवालिया वंश के जससिंह को अपनी संरक्षता में रक्खा। अन्त में इसने जससिंह को सिक्ख सेना का नेता भी नियुक्त करा दिया। अदीनावेग ने इसी समय सिक्खों को जालन्धर नगर पर अधिकार करने की सलाह दी। जससिंह कब ऐसे मौके को हाथ से जाने देता। उसने तुरन्त सन् १७५७ ईस्वी में जालन्धर पर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया। परन्तु अभी जससिंह का रास्ता एकदम साफ न था। उसके निकटवर्ती स्थानों में अफगानों का आधिपत्य था। और उन्होंने लगभग दो वर्ष तक देश की आन्तरिक दशा में उथल पुथल जारी रक्खी। ऐसी दशा में सिक्खों ने समझा कि अकेले अफगानो का सामना करना आसान नहीं है। उन्होंने विवश होकर खुशाल सिंह को अपना ओर मिलाया और उसको कुछ कर देने के लिए भी तत्पर हुए। इस सन्धि के अनुसार खुशालसिंह जस-सिंह की सहायता करने के लिए आया। उसको अफगान के बड़े नेता मियांशरफुद्दीन ने एक बस्ती का मालिक बना दिया। इसके अतिरिक्त उसने लाम्बरा के किले को भी, जो जालन्धर से सात मील

दक्षिण की ओर स्थित है, दे दिया।

इसके पश्चात् अहलूवालिया वंश वाले देश से निकाल दिये गए। उसके पश्चात् खुशालसिंह ने देश पर अपना आधिपत्य स्थापित किया और वहां के शासन को केन्द्रीभूत किया। उसी के समय उसके पुत्र बुद्धसिंह ने जालन्धर में एक किला भी बनवाया खुशाल सिंह की मृत्यु के पश्चात् उसका पुत्र बुद्ध सिंह ही राज्य का उत्तराधिकारी सन् १७९५ ईस्वी में स्वीकृत किया गया। परन्तु थोड़े ही दिन पश्चात् नए उत्तराधिकारी के ऊपर काले काले बादल उमड़ने लगे और उसके विपक्षी उसके राज्य का अन्त करने के लिए कटिबद्ध हो गए। सन् १८११ ईस्वी में दीवान मुखम चन्द ने रणजीत सिंह की ओर से जालन्धर पर आक्रमण किया। दीवान मुखम चन्द के सहायक रामगढ़िया और अहलूवालिया भी थे। इन लोगों की सयुक्त सेना ने बुद्ध सिंह को पूर्ण रूप से पराजित किया। अब बुद्ध सिंह को जान की रक्षा के लिए लुधियाना की ओर भागना पड़ा और अब जालन्धर अन्नदपुर पट्टी दीवान मुखम चन्द के अधिकार में आ गया। इस वंश का सतलज के दक्षिणी भाग में पूरा अधिकार हो गया और उसका कुछ भाग अब भी उसके अधिकार में है। इसके अतिरिक्त जालन्धर राज्य जिसके अन्तर्गत जालन्धर जिला, होशियार पुर जिला और दसूया तहसील हमेशा के लिए उसके हाथ से निकला गया। फैजुल्लापुरियों ने किस प्रकार जालन्धर राज्य पर अपना आधिपत्य स्थापित किया इसका विस्तृत वर्णन 'बारह मिस्ल' में मिलता है। परन्तु इसमें कुछ दृष्टान्त सत्य नहीं कहे जा सकते। इसके अनुसार फैजुल्ला पुरियों का अधिकार सन् १७५९ या ६० में हुआ जबकि सन् १७६२ ईस्वी में अहमद शाह दुर्रानी के आधिपत्य में सादत खाँ जालन्धर का गवर्नर नियुक्त किया गया था। परन्तु अफगानों का जालन्र पर आधिपत्य थोड़े ही समय के लिए था। इसी से इस दृष्टान्त के अनुसार कहा जाता है अदीना बेग की मृत्यु के पश्चात् उसके मन्त्री को जालन्धर का अधिकारी नियुक्त किया गया। उस मन्त्री का नाम दीवान विश्वम्भर दास था। वह थोड़े ही दिनों पश्चात् फैजुल्लापुरियों और जस सिंह के सैनिकों के विरुद्ध युद्ध करने लगा। अन्त में वह हरा दिया गया और जालन्धर जस सिंह के अधिकार में आ गया। जस सिंह ने अन्तिम कर अपनी इच्छानुसार खुशाल सिंह को सौंप दिया और स्वयं वहाँ से हट गया। अहलूवालियों की बस्ती शा कुली और बस्ती नौ बहुत दिनों के बाद प्राप्त हुई। ऐसा प्रतीत होता है कि फैजुल्लापुरियों ने जालन्धर में अपना अधिकार सन् १७६२ ईस्वी में स्थापित किया।

फैजुल्लापुरिया संस्था बाद में दो भागों में विभाजित हो गई। १) करोरा सिंहिया या कलिसयास (२) शाम सिंहिया। शाम सिंहिया का सम्बन्ध अम्बाला जिला से है अतएव उससे हमारा कोई विशेष सम्बन्ध नहीं है। परन्तु पहली शाखा जालन्धरद्वाब में स्थित है और उसका सम्बन्ध जिले के दक्षिण से भी है। करोरा सिंह ही इस संस्था का प्रवर्तक था। वह जाति का जाट था। वह पहले फैजुल्लापुरिया संस्था में था। कुछ दिनों पश्चात् वह स्वतन्त्र हो गया और उसने होशियारपुर जिले के हरियाना और समचौरासी स्थानों पर आधिपत्य स्थापित कर लिया। इसके अतिरिक्त उसका आधिपत्य जालन्धर के उत्तरी भाग में भी हो गया। अन्त में वह संयुक्त प्रान्त के अजीमाबाद स्थान पर मरा। उसके मरने के पश्चात् बघेल सिंह गद्दी पर बैठा। बघेल सिंह उस समय पंजाब लौट आया था और उसने फिल्लौर तहसील के दक्षिण-पश्चिम का भाग भी अपने अधिकार में कर लिया। यह भाग तलावन के नाम से प्रसिद्ध है। यह देश का एक भाग था जिस पर पहले मन्ज राजपूतों का अधिकार था। तलवान का एक भाग पहले नूरमहल के सरदारों से घिरा हुआ था। ये अहलूवालिया सरदारों के आधीन थे। इसका दूसरा भाग दलावल राजसंस्था के आधिपत्य से घिरा हुआ था। जब सन् १७६७ ईस्वी में अहमद शाह ने अपना अन्तिम आक्रमण जालन्धर गांव पर किया तब सिक्ख लोग पीछे हट गए। मियां महमूद खाँ ने इसको अच्छा अवसर समझ कर नूरमहल की सराय पर अपना

आधिपत्य स्थापित कर लिया अहमद शाह जब लौट गया तब सिक्ख फिर वापस लौट आए। सिक्ख लोग लगातार कई वर्ष तक नूर महल पर अधिकार करने की चेष्टा करते रहे। अन्त में सिक्ख लोगों ने उस पर अधिकार भी कर लिया मियाँ महमूद खाँ की मृत्यु के पश्चात् उसका सगा लड़का सिक्खों से सामना करने के लिये कटिबद्ध हुआ परन्तु उसके मन्त्री ने जो एक खत्री था, उसकी हृदय से सहायता न की। उसने अपनी हार्दिक सहानुभूति सिक्खों के साथ रक्खी। ऐसी स्थिति में बघेल सिंह से मदद करने की प्रार्थना की गई। परन्तु उसकी भी सेना भगा दी गई। इसके पश्चात् वह अन्त में केवल अपने भतीजे को भेजने के अतिरिक्त कुछ न कर सकता था। उसका भतीजा हमीर सिंह २०० घोड़ों के साथ राजपूतों मे आ मिला। राजपूतों ने इस समय १००० पैदलों की सेना एकत्रित कर रक्खी थी। इस युद्ध में हमीर सिंह सिक्ख प्रथानुसार एक दूत सन्धि के लिए भेजना चाहता था परन्तु उसी समय उसकी सेना पूर्ण रूप से पराजित की गई और भगा दी गई। वह स्वयं शत्रु के हाथ कैदी बन गया। सिक्खों ने बघेल सिंह का संकोच करके हमीर सिंह को बहुत सा रुपया उपहार स्वरूप दिया और उसे तलवान में भेज दिया। अन्त ३२ दिन की कठिन लड़ाई के पश्चात् युद्ध समाप्त हुआ। युद्ध समाप्त होने का मुख्य कारण खाने की समग्री का पूर्ण रूप से समाप्त हो जाना था। अतएव उन्हें अन्त में अपने को शत्रु की संरक्षता में समर्पण करना पड़ा। इसी समय बघेल सिंह आया उसने तुरन्त शमशाबाद के किले पर आक्रमण कर दिया। शमशाबाद का किला नूरमल सरदार दीवान सिंह के अधिकार में था। कठिन युद्ध के पश्चात् दीवान सिंह पराजित हुआ और किला बघेल सिंह के हाथ आ गया। तब उसने मियाँ महमूद खां से अपना निजी किला बनाने को भूमि मांगी। उसने किला के लिये तलवान को ही सबसे उपयुक्त स्थान बताया। राजपूत लोग इस विषय में कोई व्यक्तिगत राय नहीं दे सकते थे अतएव उन्हें बघेल सिंह के प्रस्ताव को स्वीकार करना पड़ा बघेल सिंह बड़े उत्साह और पौरुष से किले के निर्माण में कटिबद्ध हुआ। इसी के परिणाम स्वरूप किला केवल एक मास में बन कर तैयार हो गया। इसके पश्चात् उसने अधीनस्थ राजों के ऊपर अपना कर निश्चित कर दिया। अब उसे एक निश्चित रकम भेंट के रूप में आने लगी। अब उसने अपना ध्यान देहली की ओर आकर्षित किया और इस मन्तव्य से उधार बढ़ा कि उसे कुछ और देशों से कर वसूल करने का अवसर मिले। उसका एक आफिसर था जिसका नाम सुखूसिंह था। सुखूसिंह का निर्वाचन जिन्हे रोहतक और गोहना प्रदेशों को विजित करने और उसके शासन की देख रेख करने के लिये हुआ था। परन्तु थोड़े ही दिन के पश्चात् उसकी शक्ति बहुत बढ़ गई और उसने अपने को पूर्ण रूप से स्वतन्त्र घोषित कर दिया। बघेल सिंह "पुराना शृगाल" कम होशियार न था। उसने मीठी और चिकनी चुपड़ी बातें करके उसे फिर अपनी शक्ति के अन्दर कर लिया और अन्त में उसे अपना कैदी भी बना लिया। अन्त में दोनों में सन्धि हो गई। बघेल सिंह थोड़े ही दिनों पश्चात् मर गया। सुखू सिंह ही अब उसकी दो विधवाओं की संरक्षा करने के लिये तत्पर हुआ। तलवान के अधिकार के विषय में कभी कभी रानियों और सुखू सिंह में बातचीत भी हो जाती थी। अन्त में रणजीत सिंह ने तलवान, तथा और उनके अधीनस्थ देशों पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया। वह १८०९-१० में समस्त भाग का राजा स्वीकृत किया गया। बूढ़ी सरदारिन शीघ्र मर गई और छोटी सरदारिन रामकौर रक्षा के निमित्त लुधियाना की ओर भाग गई। विद्वान बघेल सिंह की मृत्यु की तिथि का निश्चय न कर सके। सम्भवतः वह यदि सन् १७८९ में नहीं मरा तो १९ वी शताब्दी के प्रथम चरण में अवश्य ही मर गया होगा। उसके मरने के पश्चात् कलसिया का जीत सिंह राज्य का उत्तराधिकारी हुआ। उसने ग्राम चौरासी और दूसरे ग्रामों को उत्तराधिकार के रूप में और पाया था।

इन ग्यारह संस्थाओं में कोई भी जालन्धर

द्वाब से पहले सम्बन्धित नहीं थी। परन्तु बारहवीं संस्था 'दलवान' की उत्तरी जालन्धर के दक्षिण पूर्व से ही हुई। 'दलवान' वंश वालो का राज्य व्यास और सतलज के संगम पर स्थित था। यह लगभग सभी संस्थाओं से शक्तिशाली थी कहा जाता है कि इस वंश के पास ७५०० से ६००० घुड़सवार थे। परन्तु सम्भवतः इतनी सेना बहुत अधिक है। इतनी सेना उसी ही समय तक थी जब तक इसके साथ दूसरी भी शक्तियाँ मिलकर युद्ध करती थी। शायद वे सब फैजा बाद में स्वतन्त्र हो गई थीं। परन्तु जैसा कि दलवाल लगभग वंश वालों का राज्य समस्त जालन्धर द्वाब में फैला हुआ था और उसके अन्दर होशियारपुर,फीरोजपुर,लुधियाना और अम्बाला भाग सम्मिलित थे, इतनी सेना कोई अधिक नहीं कहीं जा सकती। इस संस्था का नाम 'दाला' ग्राम से पड़ा। 'दाला' ग्राम कपूर्थला रियासत का एक भाग है और लुधियाना के कुछ उत्तर पूर्व में बसा हुआ है यद्यपि इस संस्था का नामकरण दाला ग्राम के ऊपर हुआ परन्तु इसकी उत्पत्ति कांग के पास हुई। काँग नकोदर तहसील में लुधियाना से तीन मील दक्षिण में स्थित है। इस संस्था का प्रवर्तक तारा सिंह गैबा था। वह बहुत गरीब आदमी था। उसका कार्य चरवाहें का था और वह बकरियां चराया करता था। उसकी बकरियों को नुजार डाकू सुलेमान ने चुरा लिए। अतः वह राजा को निश्चित लगान भी न दे सका। आर्थिक कठिनाइयों से परेशान हो कर वह 'दाला' गया और वहीं पर सिक्ख हो गया। इसके पश्चात उसने भी गुरदियाल से 'पहल' लिया और डाकू का जीवन व्यतीत करने लगा। वह स्वयं कांग जाट था परन्तु उसकी संस्था में कांग के अतिरिक्त कुछ बदेचा जाट भी थे जो भूंका से सम्बन्धित थे। जब उन लोगों को मन्झा ने असहाय छोड़ दिया तब वे कांग गिरोह में आ मिले। इन लोगों का नाम था, मान सिंह दान सिंह और सजन सिंह। अब जो नए लोग सिक्ख बनते थे उनका मुख्य उद्देश्य सरदार बनने का था। इसके अतिरिक्त उन्हें तलवार और घोड़े भी मिलते थे। अंत में इन्हीं सुविधाओं के दृष्टिकोण से लोग अधिक सिक्ख बनने लगे। पहले तारा सिंह के साथियों को ये सुविधाएँ पूर्ण रूप से प्राप्त न थी। इसका कारण केवल यही था कि उन लोगों के पास इन सामग्रियों का प्रायः अभाव था। परन्तु थोड़े ही दिनों के पश्चात् अहमद शाह के आक्रमण में तारा सिंह के साथियों का भाग उज्ज्वल कर दिया। उन्हों ने अहमद शाह की सेना से पूरी शक्ति से मुकाबला किया। सिक्खों ने इस युद्ध में इतना उत्साह दिखाया कि अफगान सैनिकों के पाँव उखड़ गए। वे लोग बीन नदी के पार भागे। ऐसी अवस्था में सिक्खों ने अफगानों के घोड़ों और अस्त्रों से अपने को अत्याधिक धनी बना लिया। इस प्रकार अब सिक्खों के पास युद्ध के अस्त्रों की कमी पूरी हो गई। अब तारा सिंह की शक्ति दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ने लगी। उसके गिरोह ने अमृत सर जाने की तैयारी कर दी। वह जाकर उन्हों ने अहलूवालियों और सिंह पुरियों से मैत्री स्थापित की उस समय यह लोग भी अन्य देशों के लूटने का ही काम करते थे। इस प्रकार सिक्खों ने अब सर हिन्द के 'मिरापुर' शहर को लूटा। उस लूट में तारासिंह को अत्याधिक लूट का सामन प्राप्त हुआ। इस लूट के सामान के साथ वह खुशी खुशी जालन्धर द्वाब लौट आया। सम्भवतः वह 'कसूर' की लूट के समय भी उपस्थित था। क्योंकि 'कासूर' को भी उसी वर्ष लूटा गया था जिसमें सरसिंद की पराजय हुई थी और जैन खाँ मारा गया था। कुछ लोगों का कथन है कि जैन खाँ को मारने वाला तारासिंह काकर था। जो इस संस्था का एक सैनिक था परंतु यह असंगत मालूम पढ़ता है। इसके पहले ही तारासिंह गैबा प्रसिद्ध सैनिक हो चुका था। सन् १७६० ईस्वी में उसने सतलज को पार किया था और फीरोज पुर जिले में धर्म कोट इलाके को जीता था। इस इलाके को उसने अपने ही लिए सुरक्षित रक्खा था। उसने फतेह गढ़ का भी इलाका बनवाया जो विशेष कर उसके चचेरे भाई धरमसिंह और कौरसिंह के निमित्त था। जब वह जालन्धर आया तब उसने दाकिनी को जीता था। उस समय

दाखिनी का अधिकारी जालन्धर का अफगान शर्फुद्दीन था। जिसका वर्णन पहले किया जा चुका है। इसके पश्चात् वह द्वाब के पूर्व की ओर बढ़ा। वहाँ पर उसने रोहान को जीता और उसी नगर में उसने अपना स्थाई निवास स्थान बना लिया। इसके पश्चात् वह फिर लौटा और उसने फिल्लौर के निकटवर्ती स्थानों को जीत लिया। यही प्रदेश अन्त में तारासिंह काकर के हाथ लगा। तारासिंह घेवा ने फिल्लौर के जीतने के पश्चात् 'दाखिनी' में गया। इस समय सुजान सिंह को नकोदर की लड़ाई में काम आ चुका था। ऐसी स्थिति में उसने पूरी शक्ति से दाखिनी पर आक्रमण किया और उसे अपने अधिकार में कर लिया। इस युद्ध में उसने बहुत सा भाग बदेचा को दिया जो बाद में शाहकोमु के सरदार और धनदोवल के नाम से नकोदर तहसील में प्रसिद्ध हुए। इसके अलावा उसने महत् पुर के भी स्थानों को भी जीत लिया और और तलवान के कोट बादल खाँ को ले लिया। परन्तु सम्भवतः कोतवादल खाँ अन्त में मिर्आँ महमूद खाँ के आधीन हो गया। सतलज के दूसरी ओर तारासिंह का अधिकारी लुधियाना जिले के कुछ भागो में था। इस भाग में गुमगरान का भी किला शामिल था। यह निश्चय पूर्वक नहीं कहा जा सकता कि यह भाग तारासिंह ने कब जीता। सम्भवतः यह भाग उसने सन् १७६१ ई० में सरहन्दि के युद्ध के बाद जीता। क्योंकि इसी समय उसका पराक्रम उन्नति की चरम सीमा पर था। और उसने समस्त राज्य की सीमा बढ़ाई थी। तारा सिंह के राज्य की सीमा जालन्धर जिला और घुमगराना तक सीमित थी। दूसरे स्थानों पर संस्था के सरदार पूर्ण रूप से स्वतन्त्र हो चुके थे दलवाला का महान सरदार तारासिंह फुल कियान कुटुम्ब से बहुत अधिक सम्बन्धित था। उसके लड़के का व्याह राजा अमरसिंह की लड़की बीबी चाँद कौर से हुआ था। फुलकियान कुटुम्ब का पटियाला के राज घरानों से प्रायः आन्तरिक द्वन्द्व चला करता था। केवल तारासिंह कभी इस 'तरफ' कभी दूसरी तरफ उनकी मदद करता था। सन १७७२ ई० तारासिंह के लड़के दसोधा सिंह अमर सिंह की सहायता के लिये एक बड़ी सेना के साथ आ पहुँचा क्योंकि अमर सिंह के चचेरे भाई हिम्मत सिंह ने उसके विरुद्ध विद्रोह कर दिया था। सन् १७७८ ई० में राजा को सियालवा के राजा हरीसिंह ने पराजित किया। हरीसिंह का सहायक जस सिंह रामगढ़िया भी था। ऐसी स्थिति में तारासिंह राजा की सहायता के लिए आ पहुँचा। उसका दूसरा सहायक जालन्धर द्वाब की बीबी राजिन्द्र थी। जो फिल्लौर की निवासिनी थी। हरी सिंह पहले 'दलवाल' संस्था में रहता था। परन्तु अन्त में उसने अपने को स्वतन्त्र घोषित कर दिया। अब तारासिंह को उससे बदला लेने में जरा भी संकोच न था। सन् १७७९ ई० में देहली कार्ट ने मालवा देश को फिर से अपने अधिकार में लाने का प्रयन्त किया। ऐसी परिस्थिति में तारासिंह ने खालसा के दूसरे नेताओं से मैत्री की जिससे वह सम्राट के मन्त्री मजदुदौला अब्दुला का सामना कर सके। परन्तु यह प्रयत्न अन्त में सफल न हो सका। सन् १७८१ ई० अमर सिंह की मृत्यु हो गई। उस समय सरदार महान सिंह ने राजा साहब सिंह के विरुद्ध विरोध किया। दलवाल के सरदार ने महान सिंह को सहायता दी। क्योंकि महान सिंह बीबी चान्द कोर का भाई था। दुर्भाग्य वश इसमें विद्रोहियों को सफलता न मिली और अन्त में महान सिंह को राजा के अधीन समर्पित करना पड़ा। सन् १७८८ ई० के लगभग सियालवा और पटियाला एक दूसरे के घनिष्ट मित्र हो गए। उन्हों ने मिल कर सिंह पुरियों के ऊपर आक्रमण किया क्योंकि वे सियालक भाग पर अधिकार करते हुए चले आ रहे थे।

परन्तु तारा सिंह इसके विरुद्ध था और उसने सिंह पुरियों पर किसी भी प्रकार की हानि पहुँचाने की नीति का विरोध किया। इस समय मलेर कोटला पटियाला की ओर था, जिसको तारा सिंह कभी भी भूल न सकता था क्योंकि उसने सन् १७६४ ई० में धार्मिक युद्ध में वेदी साहबसिंह की मदद की थी। उसने दुखी अफगानों के विरुद्ध भाषण भी

दिए थे। इस घटना को पटियाला भी नहीं भुला सकता था। अन्त में घूस और दूसरे बुरे उपायों से आक्रमणकारियों के हमले से देश की रक्षा की गई। इसी समय मराठों ने भी जालन्धर पर आक्रमण किया। वे लोग अन्त में मरदानः पुर में पराजित किये गए। मराठों को पराजित करने का श्रेय बीबी साहब कौर को है जिसने पटियाला की सेना का नेतृत्व किया था और जिसके सहायक तारासिंह सन् १७९९ ई० में सिक्खों सेना जार्ज टामस की सेना से भिड़ी हुई थी। जार्ज टामस का सब से मुख्य आफिस हिसार के हान्सी और जार्जगढ़ स्थान पर था। वह स्थान झज्जर तहसील के उत्तर-पश्चिम में स्थित थे। जार्ज टामस की सेना बहुत ही सुसज्जित तथा अत्याधिक संगठित थी। सिक्खों की सेना में वीरों की कमी न थी परन्तु संयम और नियंत्रण का सेना में अभाव अवश्य था। अतः सिक्खों का जार्ज टामस की सेना से विजयी होकर लौटना कोई आसान बात न थी। तारासिंह गैबा इस समय फुलकियानों की ओर से युद्ध कर रहा था। वह नारञ्वाल के युद्ध क्षेत्र में अपनी विशाल सेना के साथ सिक्खों की सहायता कर रहा था। यह युद्ध भींद और जार्ज टामस की सेनाओं में हो रहा था। इसके अतिरिक्त तारासिंह फरीद कोट की रियासत के आन्तरिक मामलों में भी भाग ले रहा था। यहाँ के राजकुमार चरतसिंह ने अपने पिता मोहरसिंह को कैद कर लिया था। तारासिंह के आग्रह से चरतसिंह ने अपने पिता को छोड़ दिया। परंतु अब इन छोटी छोटी संस्थाओं और रियासतों के अन्त होने का दिन अँगुलियों पर गिना जा सकता था। क्योंकि इस समय इन छोटी छोटी रियासतों में अत्याधिक वैमनस्य हो गया। सभी रियासतें एक दूसरे को हड़पने की प्रतीक्षा में थी आपस में शत्रुता, कूटनीति और धोके बाजी काफी मात्रा में बढ़ गई थी। ऐसी दशा में अत्यन्त पराक्रमी और शूर योद्धा रणजीत सिंह का उदय होता है। अब उसके लिए यह स्वर्ण अवसर था कि वह इन छोटी छोटी रियासतों को जीत कर अपना संगठित शासन बनावे। इसमें संदेह नहीं कि रणजीत सिंह ने इस परिस्थिति से काफी लाभ उठाया। रणजीत सिंह ने सब से पहले 'दलवाल' संस्था को जीतने की प्रतिज्ञा की। सन् १८०७ ई० में उसने सतलज नदी को पार किया। और अम्बाला जिले में उसने राजपूतों के नारायनगढ़ किले के ऊपर आक्रमण कर दिया। तारा सिंह घैबा ने उसका साथ दिया। परन्तु जाते समय वह रास्ते में ही बीमार पड़ गया और युद्ध के समय में उसका देहान्त हो गया। उसकी मृत्यु की खबर तब तक नही फैलाई गई जब तक कि उसका शरीर राहोन में शीघ्रता से ले जाकर जला नहीं दिया गया। इसके मृत्यु की प्रार्थना भी बहुत धीरे धीरे पढ़ी गई। उनको भय इस बात का था कि कहीं ऐसा न हो कि सिक्ख सेना रोहान पर आकर आक्रमण कर दे। इसी समय रणजीत सिंहने अपनी समस्त सेना के साथ रोहान पर जो उसके मित्र की भूमि थी, आक्रमण कर दिया। इस समय कनिंघम के कथनानुसार उसकी विधवा स्त्री रानी रतनकौर ने शत्रुओं का बहादुरी के साथ सामना किया। इसमें सन्देह नहीं रानी रतन कौर ने शत्रुओं का वीरता से सामना किया। रानी जिस समय शत्रु का सामना कर रही थी उस समय वह अत्यन्त प्रसन्न थी। प्रायः देखा जाता है कि उस समय लोगों का यह स्वभाव ही था। यहाँ की रानी भी इस गुण से वंचित न थी। उसने इस युद्ध के अतिरिक्त और भी कई लड़ाइयाँ लड़ी थी। परन्तु यह युद्ध राहौन और नवाशहर की रक्षा करने का एक बहाना मात्र था। रानी 'दलवाल' के अधिकृत स्थानों की अंत में रक्षा न कर सकी और वह अंत में शुक्राचारियों के नेताओं के आधीन हो गया। कहा जाता है कि तारा सिंह घैबा ९० वर्ष की आयु में मरा था। वह लगभग ४४ वर्ष तक 'दलवालो' की संस्था का नेता रहा। उसका स्वभाव सादा था। वह सरल और मनोहर चित्त का आदमी था। अपने व्यक्तिगत जीवन में वह बड़ा उदार और प्रसन्न चित्त था। परन्तु बारह मिस्ल के अनुसार उसके इन गुणों में कुछ सन्देह अवश्य होता है। उसने अपने जीवन का अत्याधिक भाग अपनी संस्था की रक्षा करने में बिताया। और कुछ दिनों के लिए वह सभी संस्थाओं

के सरदारों में प्रसिद्ध हो गया। कृषकों के साथ उसका व्यवहार मित्रता का था। वह हमेशा यही प्रयत्न करता रहता था कि वह कैसे कृषकों के अधिक से अधिक दुःखों को दूर कर सके। कहा जाता है कि कृषकों से लगान के रूप में पैदावार का एक पांचवां भाग लेता था परन्तु वास्तव में उनसे केवल पैदावार का दसवां भाग ही लेता। अपने गृह के मामले में वह बहुत दुखी रहता था। उसका दुःख प्रायः उन्हीं लोगों की तरह था जैसा कि दूसरे सिक्ख सरदारों का था। वह अपने दार्शनिक विचारों से ओत प्रोत था। और इस मामले में वह रणजीत सिंह से कहीं बढ़ कर था। अतः वह गृह जीवन के अवगुणों से कभी सन्तुष्ट न होता था। वह अत्यन्त बुद्धिमान, योग्य, साहसी, और वीर योद्धा था। उसका चरित्र लगभग उस समय के सभी सिक्खों से बढ़ कर था।

दलवाल संस्था के नष्ट होने के पश्चात् सन् १८११ ई० में फैजुल्लापुरियों ने अपने अधिकृत स्थानों को खो दिया। पाँच वर्ष पश्चात् सन १८१६ ईस्वी में रामगढ़ियों को छिन्न भिन्न कर दिया और उन्हें अपने भागों से वंचित होना पड़ा। सन् १८२५ ई० में फतेहसिंह अहलूवालिया सतलज के दूसरे पार भाग गया। अतः उसकी जालन्धर द्वाब की रियासतें हड़प कर ली गईं। परन्तु जब सन् १८२७ ईस्वी में वह लौटा और रणजीत सिंह से उसकी सन्धि हो गई। तब लगभग उसका सारा भाग लौटा दिया गया। सन् १८३६ ईस्वी में फगवारा भी राज्य में मिला लिया गया परन्तु शीघ्र ही वह वापस भी करा दिया गया। करोरा सिंहियों ने तलवान को खो दिया जिसका वर्णन पहले किया जा चुका है। जोध सिंह कलसिया सन् १८१८ ई० में मुलतान में मर गया। जब वह मुलतान में था तब उसने रणजीत सिंह से मित्रता की थी और उसके साथ देशों को विजय करने के लिए गया था। अन्त में उसके लड़के सरदार शोभासिंह के समय में सन् १८३१ ई० में उसका भी राज्य रणजीत सिंह ने अपने राज्य में मिला लिया।

परन्तु रणजीत सिंह द्वारा इन सभी संस्थाओं और रियासतों को राज्य में मिलाने के पहले ही अँग्रेज लोग जालन्धर द्वाब में आ गये थे। सन् १८०५ ई० में लार्ड लेक ने होल्कर का पीछा करते हुए जालन्धर में प्रवेश किया था। इसी पीछा करने में वह व्यास नदी तक पहुँच गया था। उसी वर्ष के अन्त में जब मराठों को किसी भी प्रकार की सिक्खों से मदद की आशा न रही तो उन्होंने अँग्रेजों से मित्रता कर ली और अपने घर को लौट गये।

यह पहले ही कहा जा चुका है कि सिक्ख केवल नाममात्र के लिये रणजीत सिंह के अधिकार में थे। इन लोगों का मुख्य नेता अहलूवालिया वंश के लोग थे। परन्तु कितना भी रणजीत सिंह इस मामले में शक्ति हीन रहा हो, इसमें सन्देह नहीं कि उसका शासन प्रबन्ध बहुत ही उच्च कोटि का था। उसने जो भूमि का प्रबन्ध किया, वह उस समय के इतिहास में एक गौरव की वस्तु थी। यद्यपि उसने बहुत से छोटे छोटे राजाओं की शक्ति को बिल्कुल समाप्त कर दिया था। परन्तु फिर भी वह उनके साथ किसी प्रकार का भी अत्याचार या ज्यादती न करता था। उसने सभी विजित राजाओं के राज्य उसको वापस कर दिए थे। वह केवल उन राजाओं से सेना के लिए आदमी और एक निश्चित कर लिया करता था। कभी कभी अवसर पड़ने पर उनसे सहायता भी लेता था। शेष देश या तो सिक्ख रियासात के अन्तर्गत छोड़ दिये गये थे जिससे उन्हें एक निश्चित कर देना पड़ता था। या वह नाजिम या गवर्नरों के आधीन थे। यह गवर्नर उस समय के शासक के द्वारा नियुक्त किया जाता था। उसका यह कर्तव्य होता था कि वह अपने अधिकृत देश का कर राज्य को दिया करे। जालन्धर द्वाब का सबसे प्रथम नाजिम दीवान मोहकम चन्द था। यह रणजीत सिंह की सेना का कमाण्डर इन चीफ था और इसकी वीरता का वर्णन एक पुस्तक में के बहुत ही सुन्दर ढंग से मिलता है। इन पृष्ठों पढ़ने से पता चलता है कि वह कितना योग्य, साहसी और दूरदर्शी सेना नायक था। जब उसने सेना से नौकरी छोड़ दी तब उसके लड़के मोती राम ने उसके रिक्त स्थान को पूरा

किया। वह तब तक उस स्थान पर काम करता रहा जब तक कि वह काश्मीर का गवर्नर नहीं नियुक्त किया गया। उसके काश्मीर में गवर्नर होने के पश्चात् उसका लड़का कृपा राम उसके स्थान पर जालंधर में नियुक्त हुआ। १८२६ ई० में कृपाराम की जामू कुटुम्ब के राजा ध्यान सिंह से अनबन हो गई। अतएव वह पेशावर के युद्ध में केवल ५० घुड़ सवारों के साथ उससे मिला। इस पर अप्रसन्न हो कर रणजीत सिंह ने उससे जालन्धर का राज्य छीन लिया। पहले उसने इस राज्य को फकीर अजीजुद्दीन को दे दिया उसके पश्चात् उसने इस राज्य को सरदार देश सिंह मजीथिया को दे दिया। डेढ़ वर्ष के अन्दर कृपा राम फिर रणजीत के पक्ष में आगया। अतः उसे काश्मीर का मालिक बना दिया गया। वह काश्मीर में १८३१ ईस्वी तक रहा। वहाँ पर फिर उसकी ध्यान चन्द से शत्रुता हो गई। इसी समय मोती राम भी जो जालन्धर में नियुक्त किया गया था, हटा दिया गया और उसका स्थान शेख गुलाम मुहीउद्दीन ने लिया। यह शेख गुलाम मुहीउद्दीन पहले मोतीराम के अधीन काम करता था। यह पहला गवर्नर था जो शेख के नाम से प्रसिद्ध हुआ। शेख अपनी कठोरता के लिए मशहूर थे। ये लोग जनता से कर बड़ी निर्दयता से वसूल करते थे। गुलाम मुहीउद्दीन काश्मीर में स्वयं जाकर कर वसूल करता था और जालन्धर में अपने उपप्रधान से कर वसूल कराता था। परन्तु इनके इस अत्याचार पूर्ण व्यवहार से जनता त्राहि त्राहि करने लगी। जगह जगह अशान्ति भी मचने लगी। ऐसी अवस्था में वह वापस बुला लिया गया उसके स्थान पर मिश्र रूप लाल जालन्धर और होशियार पुर के लिए नियुक्त किया गया। मिश्ररूप लाल से भी राजा ध्यान सिंह की न पटी। क्योंकि उसके अन्दर उसकी व्यक्तिगत कमजोरियां थी। परन्तु उसका टैक्स कुछ हलका होता था और वह सम्भवतः पंजाब के सभी सिक्ख गवर्नरों में सबसे कुशल गवर्नर था। उसका सबसे मुख्य दफ्तर होशियार पुर में था। सन् १८३९ ईस्वी में रणजीत सिंह की मृत्यु हो गई। इसके पश्चात जामू कुटुम्ब ने मिश्र के फिर से बुला लिया और गुलाम मुहीउद्दीन उस द्वाब में नियुक्त किया गया। सन् १८४१ ईस्वी में उसे जालन्धर की सेना के साथ जिसमें अधिकतर मुसलमान थे, काश्मीर में शान्ति कायम करने के लिये भेजा गया। उसके साथ जामू कुटुम्ब का राजा गुलाबसिंह भी था। काश्मीर में उसी समय सिक्खों ने विद्रोह और गदर मचा दिया। अब जालन्धर में उसके स्थान पर शेख इमामुद्दीन खां नियुक्त हुआ परन्तु थोड़े ही दिन पश्चात् उसने भी इसस्थान को छोड़ दिया और अपने एक सम्बन्धी को वहां नियुक्त कर दिया। इनका नाम शेख करमबख्श और सानी खां था। अब जालन्धर द्वाब का शासन इन्हीं लोगों के हाथ में था। इन लोगों ने यहां पर सिक्खों के पहले युद्ध तक राज्य किया। सिक्खों के प्रथम युद्ध के पश्चात् सतलज और व्यास का द्वाब अंग्रेजी राज्य में मिला लिया गया। शेखों का द्वाब में दूसरा शासन प्रबन्ध उतना ही अत्याचार पूर्ण और बर्बर था जितना कि पहला शेख शासन। यहां पर यह बात याद रखना चाहिए कि दीवान मोहकम चन्द पहले फैजुल्लापुरियों के राज्य में नहीं नियुक्त किया था। इस राज्य का प्रबन्ध सबसे पहले फखर अजीजुद्दीन के भाई नूरुद्दीन ने किया था। इस चालीस वर्ष के अन्दर जब कि जालन्धर द्वाब लगभग लहौर के राज्य के अन्दर था कोई ऐसी विशेष घटना नहीं हुई जिसका कि ऊपर वर्णन न किया गया हो। सिक्खों की पहली लड़ाई में कोई ऐसी वीरता की घटना नहीं हुई जिसका कि यहां उल्लेख किया जा सके। सरदार रणजोध सिंह मजीथिया की सेना द्वाब से हो कर जा रही थी तब वह अहलूवालिय सेना के सरदार से जा मिला। उन्हों ने सतलज को फिल्लौर के स्थान पर १७ जनवरी १८४६ ईस्वी में पार किया। पहले उनकी मुठभेड़ अंग्रेजों से बदोवल स्थान पर हुई जहाँ पर उन्हे क्षणिक सफलता प्राप्त हुई, परन्तु उन्हे सर हेनरी स्मिथ ने ११ दिन पश्चात् अलीवाल के स्थान पर पराजित किया। उसने सिक्खों को सतलज के पार तक भगा दिया जो तलवान से लगभग दो मील

दक्षिण की ओर स्थित है। इसके पश्चात् सिक्खों की सेना फिल्लौर में पहुची। वहां भी उनकी सेना पूर्ण रूप से पराजित की गई। इस युद्ध के पश्चात् अंग्रेजों की सेना सोवरॉंच की ओर बढ़ी। यहाँ पर ब्रिगेडियर व्हीलर ने सिक्खों का पीछा किया और नदी के पार तक चला गया। वह तालवान पहुँचा और फिल्लौर के ऊपर आक्रमण कर दिया। उसने फिल्लौर का किला शीघ्र ही जीत लिया। इस विजय का श्रेय मुख्यता चौधरी कुतुबुद्दीन को है। अन्त में कुतुबुद्दीन को अपनी इस सेवा के पुरस्कार स्वरूप पेंसिन मिली। थोड़े दिनों के पश्चात् उसे जागीर भी दी गई। यहीं पर आज उसी के नाम पर कुतुबीवाल ग्राम बसा हुआ है सन् १९०५ ई० तक उस चौधरी के ही लड़के फिल्लौर जेल के जेलदार थे। फिल्लौर के पश्चात अंग्रेजी सेना जालन्धर की ओर बढ़ी।

जालन्धर के जीतने के पश्चात् यह एक कमिश्नरी के रूप में बना दिया गया। इसका शासक लार्ड लारेंस नियुक्त किया गया। यह कमिश्नरी जालन्धर फिल्लौर नकोदर और कर्तार पुर के मेल से बनाई गई। जो जालन्धर जिले के अन्तर्गत आते हैं। आज भी जालन्धर एक बड़ा जिला है। परन्तु इसमें से नकोदर कर्तारपुर और फिल्लौर अब निकल गए हैं।

जालन्धर के कमिश्नर का सबसे बड़ा कर्तव्य था कि वह वहां के किलों के ऊपर पूर्ण रूप से निगरानी रक्खे। अंग्रेज लोग धीरे धीरे उन किलों को नष्ट भी करते जा रहे थे। जिससे वहाँ के विद्रोहियों को विद्रोह का अवसर न मिले। यह काम सिक्ख लोग कब सहन कर सकते थे। सरदार लेहना सिंह मजीथिया ने दरौली किले के गिराने की नीति को दो वर्ष तक स्थगित रखने का प्रयत्न किया। परन्तु लार्ड लारेन्स वहाँ पर गया और उसको किले में कोई परिवर्तन न मिला। अन्त में उसने अपना आदमी वहां पर नियुक्त किया। उसके लिए सरदारों को उनकी मजदूरी में अत्याधिक व्यय करना पड़ा। सम्भवतः ये सरदार भविष्य के सिक्ख युद्ध की प्रतीक्षा कर रहे थे जो कि अब बहुत दूर न था और अपनी शक्ति को फिर मजबूत करने का प्रयत्न कर रहे थे। सन् १८४८ ईस्वी में सिक्खों की दूसरी लड़ाई आरम्भ हो गई। इस युद्ध में जालन्धर द्वाब ने लड़ाई में कोई विशेष हाथ नहीं बटाया। केवल होशियारपुर जिले के पास ही कुछ युद्ध हुआ था। यदि "चार बाघी पंजाब" के ऊपर विश्वास किया जाय तो पता चलता है कि जालन्धर का एक निवासी ही इस दूसरे युद्ध की आग को भड़काने वाला था। उसी ने जालन्धर पर आक्रमण किया और समस्त पंजाब को अपने अधीन कर लिया। क्योंकि फिल्लौर का निवासी अमीर चन्द ही मिस्टर वान्स एगन्यू का मारने वाला था। उसने मिस्टर वांस एगन्यू को तब मारा था जब वह मुल्तान के किले का निरीक्षण कर रहा था। इस प्रकार सिक्खों का दो वर्ष तक जालन्धर द्वाब पर फिर अधिकार रहा। इसके पश्चात् यह द्वाब सन् १८६३ ईस्वी से पूर्ण रूप से अंग्रेजों के आधीन हो गया। इसका प्रबन्ध लाहौर के चीफ कमिश्नर के हाथ में आ गया। उसे रेजीडेन्ट, बोर्ड आफ एडमिनिस्ट्रेशन, लफ्टेनेन्ट गवर्नर इत्यादि भी कहते हैं। पञ्जाब के निवासी लड़ाई, झगड़े, लूट पाट से अभी तक बिलकुल परेशान हो गए थे। अब अँग्रेजों के आधिपत्य में आने पर उन्हें शान्ति से रहने का अवसर प्राप्त हुआ और उन्होंने शान्ति का जीवन व्यतीत करना आरम्भ कर दिया। सन् १८४८ का एक लेखक कहता है कि इस समय जालन्धर जिला लाहौर से कहीं अधिक सुरक्षित और शान्त है। इसी समय का दूसरा लेखक अपने व्यक्तिगत निरीक्षण के अनुसार लिखता है कि अब द्वाब में लोगों की जान और माल पहले से कहीं अधिक सुरक्षित है। सन् १८५२ ई० तक खालसा सेना भी पूर्ण रूप से अंग्रेजों के अधिकार में आ गई। और वह शान्ति के साथ रहने लगी। छोटे छोटे जिले और राज्य अब लोगों के ध्यान से हटने लगे। सारा राज्य अब केन्द्रीय शासन के अधीन हो गया। इस समय व्यापार की भी उन्नति होने लगी। सन १८५७ के गदर के समय तक राज्य के इतिहास में कोई भी ऐसी घटना न हुई जो विशेष उल्लेखनीय हो। अब जालन्धर जिला स्वाधीन भारत के पूर्वी पंजाब प्रान्त का अंग है।

अम्बाला

अम्बाला जिला २६-४६ और ३१-१२ उत्तरी अक्षांशों और ७६-२२ और ७१-२६ पूर्वी देशांतरों के बीच में स्थित है। अम्बाला जिला इसी नाम की कमिश्नरी का मध्यवर्ती जिला है। इसके उत्तर-पूर्व में हिमालय पर्वत, उत्तर में सतलज नदी, पश्चिम में पटियाला राज्य और लुधियाना जिला है। इसके दक्षिण में कर्नाल जिला और यमुना नदी है। इस जिले का क्षेत्रफल २५०० वर्ग मील है। इसके दक्षिण-पश्चिम में पटियाला राज्य का भाग घुसा हुआ है। यह भाग काफी दूर तक अम्बाला जिले को दो विषम भागों में बांटता है।

भूरचना—जिले का बहुत बड़ा भाग समतल मैदान में स्थित है। पूर्वी सिरे पर यमुना के किनारे का पहाड़ी भाग बन से ढका है। कोटाह परगना भी पहाड़ी है। यहां दो समानान्तर पर्वत श्रेणियां हैं। यहां से कुछ ही दूर घग्घर नदी नाहन राज्य से निकलती है। यहां दो पवित्र सरोवर हैं। एक के किनारे श्री कृष्ण जी का मन्दिर बना हुआ है। दोनों के बीच में एक पहाड़ी है। फिर भी दोनों में कुछ सम्बन्ध है। जब एक में पानी बढ़ता है तो दूसरे में भी पानी बढ़ जाता है।

मोरानी का किला और गांव अधिक पहाड़ी ऊंचे ढाल पर स्थित है। यहां से आगे पहाड़ियों के नीचे देखने पर जिले की भूमि समतल जान पड़ती हैं। फिर भी इसका ढाल दक्षिण-पश्चिम की ओर है। पहाड़ियों के पास नालों ने भूमि को गहरा काट दिया है -

सतलज और यमुना नदियां जिले की सीमा के पास बहती हैं। घग्घर नदी नाहन राज्य से निकलती है। यह नदी अम्बाला जिले को ऐसे भाग में पार करती है जहां इसकी भूमि अत्यन्त संकुचित हो गई है। अम्बाला जिले को पार करने के बाद घग्घर नदी पटियाला में प्रवेश करती है। अम्बाला शहर के पास यह फिर जिले में प्रवेश करती है। इसमे अधिक पानी नहीं रहता है। इसमें सब जगह पांज है अर्थात् इस नदी को बिना नाव के ही लोग पैदल चलकर ही पार कर जाते हैं। पर बाढ़ के दिनों में यह नदी ऐसी भयानक हो जाती है कि लोग इसमें नाव चलाने से डरते हैं। अधिकतर भागों में इस नदी का पानी सिंचाई के काम आता है। अम्बाला से शिमला को जाने वाली सड़क अम्बाला और कालका के बीच में नदी को पार करती है। सरस्वतीनदी भी नाहन राज्य की पहाड़ियों से निकलती हैऔर जढ बद्री से पास अम्बाला जिले में प्रवेश करती है।

यहां से कुछ मील आगे सरस्वती नदी बालू में लुप्त हो जाती है। पर तीन मील आगे भावन्तपुर गांव के पास यह फिर प्रगट हो जाती है। बलछपर के पास यह फिर लुप्त हो जाती है और पृथिवी के नीचे ही नीचे बहती है। इसके आगे यह फिर प्रगट हो जाती है। वह दक्षिण-पश्चिम की ओर बहती है और कर्नाल जिले को पार करने के बाद सरस्वती नदी पटियाला राज्य में घग्घर नदी में मिल जाती है। सरहिन्द नहर भी अम्बाला जिले के थोड़े से भाग को पार करती है।

अम्बाला जिले का दृश्य बड़ा मनोहर है। पहाड़ी भाग के नीचे लहरदार भूमि में ऊंचे नीचे टीले हैं। प्राय: समतल मैदान के दक्षिणी भाग में आबादी के समीप आम के बगीचे हैं। सूखे भागों में कीकर (बबूल) बहुत हैं। पीपल, सिरस, तूत, साल, फरू और ढाक भी बहुत है। कलेसर के बन में साल बहुत है। इसी जंगली भाग में भेड़िया और चीता पाया जाता है।

सरस्वती और घग्घर के बीच का प्रदेश आर्यों का आदि स्थान माना जाता है। यहां से आर्य-धर्म का विकास हुआ। सरस्वती के किनारे स्थान स्थान पर तीर्थ हैं। थानेश्वर के पास सरस्वती के जल से भरे हुये सरोवर में स्नान करने के लिये दूर दूर से यात्री आते हैं। यहीं महाभारत की वीर गाथाओं के क्षेत्र हैं। प्रसिद्ध चीनी यात्री

ह्वानसांग ने यहां के वैभवशाली सुघ्र राजधानी का वर्णन किया है। यह स्थान सम्भवतः वर्तमान जगाधरी से कुछ दूर सुग गांव के पास स्थित था। मुसलमानों के आक्रमण के समय तक यह हरा भरा बना रहा। अम्बाला जिले की भूमि को गजनी, गोरी आदि मुसलमान आक्रमणकारियों से अपार क्षति उठानी पड़ी। फीरोज शाह ने हिसार को पानी पहुंचाने के लिये यहां होकर एक नहर निकाली थी जो आजकल की पश्चिमी यमुना नहर के स्थान पर बहती थी। अकबर के समय में वर्तमान समय का अम्बाला जिला सरहिन्द के सूबे में शामिल था जब अफगानों के आक्रमण और मरहठों के प्रहार से मुगल साम्राज्य जर्जर होने लगा तब यहां सिक्ख राज्यों उदय हुआ। १८०८ ईस्वी में महाराजा रणजीत सिंह ने सतलज को पार किया। पर पटियाला, नाभा और झींद के सिक्ख राज्यों ने अंग्रेजों की शरण ली। अंग्रेजों ने इन सिक्ख राज्यों के सहयोग का स्वागत किया और १८०६ ईस्वी में महाराजा रणजीत सिंह से सन्धि कर ली। १८११ से अम्वाला में गवर्नर जनरल का एजेंएट रहने लगा। महाराजा रणजीत सिंह के मरने पर सिक्खों की दूसरी बड़ी लड़ाई में यहां के छोटे-छोटे सिक्ख सरदारों की जागीरें छीन ली गई। पर १८४७ में यहां प्रायः शान्ति बनी रही। आगे चल कर १८६८ ई० में अंग्रेज गवर्नर जनरल ने अफगानिस्तान के अमीर शेरअली का डराने के लिये अम्वाला में ही अपनी सैनिक शक्ति का प्रदर्शन किया था। भारत को स्वतन्त्रता मिलने पर पाकिस्तान से निर्वासित अनेक शरणार्थियों को अम्बाला जिले में शरण मिली।

कृषि—अम्बाला कृषि प्रधान जिला है। प्राय: १० लाख एकड़ भूमि खेती के काम आती है। लगभग २ लाख एकड़ भूमि ढोरों को चराने के काम आती है। प्राय: ३ लाख एकड़ ऊसर भूमि खेती के योग्य नहीं है। गेहुं, जौ, चना रबी की प्रधान फसलें हैं। धान, ज्वार, बाजारा, मक्का, माश (उर्द) मूंग, मोठ आदि खरीफ की फसलें हैं। यहां कपास और ईख भी होती है। कुछ खेत इतने अच्छे हैं कि उनमें वष में दो फसलें होती हैं।

यहां सिंचाई की बड़ी आवश्यकता है। अधिकतर भागों में कुओं से रहट द्वारा सिंचाई होती है। कुछ भूमि पश्चिमी यमुना नहर से सींची जाती है।

अम्वाला शहर—यह जिले का प्रधान नगर है यह नगर समुद्रतल से १०४० फुट की ऊंचाई पर स्थित है। यह शहर घग्घर नदी से ३ मील पूर्व की ओर है। कहते हैं इस नगर को चौदहवीं शताब्दी में एक अम्ब राजपूत ने बसाया था। इसी से इस का नाम अम्वाला पड़ा। १८२३ ईस्वी से अंग्रेजी गवर्नर जनरल का एजेंएट यहां रहने लगा। १८४३ ईस्वी में शहर से कुछ मील दक्षिण की ओर अम्वाला छावनी स्थापित की गई। १८४९ में जब पंजाब अंग्रेजों के पूर्ण अधिकार में आया तब अम्बाला शहर ही जिले की राजधानी बना। अम्वाला शहर के पुराने भाग में तंग गलियां हैं। नया भाग छावनी की ओर है। यहां चौड़ी सड़कें हैं। यमुना और सतलज के बीच में अम्वाला शहर की स्थिति व्यापार के लिये बड़ी अच्छी है। यहीं दिल्ली से आने वाली रेलवे ग्रांड ट्रंक रोड को पार करती है। यहां से एक लाइन शिमला को गई है। सहारनपुर से आने वाली दूसरी बड़ी लाइन अम्वाला होती हुई अमृतसर को गई है। अम्वाला शहर पास के अनाज के लिये एक बड़ी मंडी है। यहीं पहाड़ से हल्दी और सोंठ बिकने आती है। यहां स्कूलों में उपयोग होने के लिये वैज्ञानिक यन्त्र बनते हैं। कालीनें भी बनती हैं।

रूपर, जगाधारी, खिजराबाद, बूरिया और खरार दूसरे व्यापारिक केन्द्र हैं।

"भूगोल" का स्थायी साहित्य